नालन्दा-निबन्ध-प्रभा

अषष्ठम् परिवर्द्धित तथा संशोधित संस्करण

(दिल्ली, पंजाब, उत्तर प्रदेश, राजस्थान, मध्यप्रदेश, बम्बई, आंध्र प्रदेश,
मद्रास, मैसूर, उड़ीसा, बंगाल तथा बिहार के नवीन पाठ्य-
क्रमानुसार, मैट्रिक, हायर सैकेण्डरी (Preuniversity)
तथा रत्न, भूषण, प्रभाकर, प्रथमा तथा मध्यमा की
परीक्षाओं के लिए)

निबन्ध, पत्र लेखन, लोकोक्तियाँ, मुहावरे, व्याकरण, छन्द-अलंकार
तथा हिन्दी साहित्य का इतिहास

लेखक

श्री मधुर शास्त्री
प्रभाकर, साहित्यरत्न

ओंकार नाथ निराला

केदार नाथ गुप्त
एम. ए. बी. कॉम
प्रभाकर, साहित्य रत्न

साहित्य ज्ञान मंदिर

४०५६, नई सड़क, देहली-६

मूल्य : ४ रुपये ५० पैसे

प्रकाशक :
अम्बे प्रशाद शर्मा
साहित्य ज्ञान मन्दिर
नई सड़क, दिल्ली-६

मुद्रक :
कैलाश प्रिंटिंग एजेन्सी,
द्वारा, कपूर प्रेस, दिल्ली-६

राष्ट्रीय गान

जन-गण-मन अधिनायक जय हे,
भारत भाग्य विधाता ।
पजाब, सिन्धु, गुजरात, मराठा,
द्राविड, उत्कल वग ।
विन्ध्य, हिमाचल, यमुना, गगा,
उच्छल जलधि तरग ।
तव शुभ नामे जागे,
तव शुभ आशीष माँगे ।
गाये तव जय गाथा,
जन-गण-मगलदायक जय हे,
भारत भाग्य विधाता ।
जय हे, जय हे, जय हे,
जय जय जय जय हे ।

स्पष्टीकरण

(पहले इसे पढ़िये)

किसी भी पुस्तक के प्रारम्भ में भूमिका—लेखन का रिवाज है। मैं यद्यपि इस प्रकार के सभी रिवाजो को तोडने का ग्रर्मद हूँ, (यह वास्तविकता पुस्तक पढने पर सामने ग्रा जायेगी) परन्तु इस पुस्तक के बारे में कहना ग्रावश्यक हो गया है। क्योंकि यह समय ऐसा है—यहाँ किसी भी वस्तु की उपयोगिता ढोल बजाकर बतानी पडती है, कारण कि ग्रनुपयोगिता का भी बोल बाला है। बडे-बडे बाजारो ग्रौर छोटी-छोटी गलियों में पुस्तक-प्रकाशकों ग्रौर पुस्तक विक्रेताग्रो की दुकानो पर प्रत्येक विषय की ग्रनेक पुस्तके उपलब्ध हो सकती हैं। जहाँ ग्रभी विकसित सामान बहुतायत में हो वहाँ छाँटने की सुविधा तो हो सकती है परन्तु इतना समय ग्राज के ग्राहक के पास नहीं है। ऐसी स्थिति में स्पष्टीकरण ग्रावश्यक है।

ग्राज हम शिक्षापद्धति का जो रूप देख रहे हैं, वह यहाँ विवाद का विषय नही है, फिर भी इतना तो सर्वसम्मत है कि शिक्षा छात्र को ग्रातरिक ग्रौर बाह्य दोनों दृष्टि से समुन्नत तथा प्रत्युत्पन्नमति बनने मे समर्थ होनी चाहिए। इस गाइड, कुंजी ग्रौर प्रश्नोत्तरियो के युग मे छात्र की उर्वरा बुद्धि कुंठित हो गई है क्योंकि उसको सोचने के लिए बाध्य नहीं होना पडता। उपयोगिता के ग्रभाव मे मस्तिष्क निष्क्रिय हो गया है। वही घिसे-पिटे वाक्य, विचार ग्रौर भाषा छात्र को बाह्य रूप में सतोष प्रदान कर देते हैं। इस प्रकार की भीड में मैं भी विचार-समुदाय लेकर उपस्थित हुग्रा हूँ।

इस पुस्तक के पुनर्मार्जन के समय विचारो को प्रस्तुत करने की नई विधा, नई शैली ग्रौर नई ग्रभिव्यक्ति की ग्रोर मेरा ग्रधिक झुकाव रहा है। साथ ही न्यूनतम साहित्यिक, सामाजिक, राजनीतिक, गतिविधियो से भी छात्रो को परिचित कराना मैंने ग्रावश्यक समझा है। मैंने यही प्रयत्न ग्रधिक

किया है कि इस पुस्तक के द्वारा छात्रो के भावो का उन्मेप, विचारो का उत्कर्ष अभिव्यजन का परिष्कार और शैली रूप का परिमार्जन हो। यह तो मात्र पथ-प्रदर्शन है, चलना तो छात्र को स्वय ही है। यदि अनुकरण भी सही दिशा मे हो तो बुरा नही, जिस प्रकार छोटा बच्चा हाथ पकड कर चलना सीखता है और बाद मे स्वय चलने लगता है यही ध्येय मेरा है कि यह पुस्तक दीपक का काम करे और इस निबध प्रभा से अपनी बुद्धि की मौलिकता का उपयोग करे।

मुद्रक और प्रकाशको की कृपा से कही-कही शब्दो के शुद्ध-सौंदर्य में सकोच हो गया है-लेखक इसका उत्तरदायित्व भी पाठको पर छोडता है कि वे इस ओर भी ध्यान दें और अपनी योग्यता की परख करें।

पुस्तक-प्रकाशन मे इस सस्था के अधिकारियो ने धैर्य और योग्यता का परिचय दिया है। मैं उनके प्रति आभार प्रकट करता हूँ। यह साहस ही है कि छात्रो के लिए एक ही पुस्तक मे समस्त शिक्षोपयोगी सुविधाएँ जुटाकर एक साफ रूप मे प्रस्तुत कर देना।

पुस्तक मे नवीन से नवीन और प्राचीन से प्राचीन। विषयो तक का समावेश किया गया है। हो सकता है आज की घटना और विषय आने वाले कल के लिए प्राचीन हो जायें परन्तु जीवन तो इन्ही घटनाओ के सकलन का नाम है। एक घटना आगे घटित होने वाली घटनाओं के चित्रण मे सहायता दे सके, यही मेरा उद्देश्य है।

इन शब्दो के साथ अभयकर शकर से प्रार्थना है कि वह मेरे इस अकिचन-प्रयास को सफल करें। छात्र समुदाय लाभान्वित होकर विकसित हो, तभी मेरा परिश्रम सार्थक है।

सिद्धि साध्ये सतामस्तु,

१४, मिन्टो रोड,
नई दिल्ली।
२०-८-६७

विनम्र
मधुर शास्त्री

विषय-सूची

विचारात्मक निबन्ध

१	गुरुभक्ति	१
२	आदर्श शिक्षा प्रणाली	४
३.	लोक सेवा	८
४	विद्यार्थी जीवन और अनुशासन	११
५	विद्यार्थी और राजनीति	१५
६	शिक्षा मे खेलों का महत्व	१६
७	स्वाधीनता के सत्रह वर्ष	१६
८	स्वदेश के प्रति हमारा कर्तव्य	२२
९	हिन्दी शिक्षा के प्रसार के उपाय	२५
१०.	राष्ट्रभाषा का महत्व	२८
११	समाचार पत्रो से लाभ	३२
१२	सामाजिक उन्नति के साधन	३५
१३	ससार मे स्थाई शान्ति स्थापित हो	३९
१४.	ग्राम सुधार	४२
१५	ग्रामोद्योग तथा कुटी उद्योग	४६
१६	भारत की पर राष्ट्र नीति	४९
१७	भारत की अग्नि परीक्षा	५२
१८	चतुर्थ पचवर्षीय योजना	५७
१९	तटस्थ राष्ट्र सम्मेलन	५९
२०	भारत का स्वतन्त्रता आन्दोलन	६३
२१	अन्तराष्ट्रीय जगत मे भारत का स्थान	६७

२२. संयुक्त राष्ट्र संघ ... ७०
२३ भारतीय संविधान ... ७३
२४. काश्मीर की समस्या ... ७७
२५. भारतीय राज्यों की शासन व्यवस्था ... ८२
२६. पचायत राज्य में सहकारिता ... ८६
२७. सैनिक-सधियाँ और विश्व शांति ... ८६
२८. भारत की सैनिक शक्ति ... ६३
२६. भाषाई विवाद राष्ट्रीय एकता के लिए घातक ... ६६
३०. नदी घाटी योजना ... ६६
३१ भारत में बेकारी ... १०४
३२. बढ़ती जनसंख्या और परिवार नियोजन .. १०७
३३. नागरिक और नागरिकता ... १११
३४ तृतीय पचवर्षीय योजना ... ११४
३५. भारत और साम्यवाद ... ११८
३६ भारत और चीन का सीमा विवाद .. १२१
३७. सैनिक शिक्षा का महत्व .. १२४
३८. सहशिक्षा . १२७
४६. वैज्ञानिक शिक्षा ... १३१
४०. विद्युत और उसका प्रयोग ... १३५
४१. मानव की अंतरिक्ष यात्रा ... १३८
४२ विज्ञान के बढते चरण १४०
४३ राष्ट्रीय चरित्र . १४४
४४ भूकम्प का प्रकोप ... १४८
४५ प्रदर्शनी .. १५१

४६. भ्रष्टाचार या सदाचार	.	१५४
४७. ब्रह्मचर्य	. .	१५८
४८. जब आवै सन्तोष धन सब धन धूरि समान	...	१६२
४९. मित्रता	...	१६४
५० रामराजता में अराजकता	.	१६८
५१. भ्रष्टाचार एक कलक	...	१७०
५२ युवक-समारोह के आकर्षण	.	१७२
५३. जीवन का लक्ष्य	...	१७५
५४ राष्ट्रीय एकता	...	१७८
५५ दाशमिक और मीटर प्रणाली		१८१
५६ भारतीय सस्कृति	...	१८५
५७. आदर्श विद्या केन्द्र	.	१८८
५८. आदर्श समाज	...	१९१
५९ जीवन बीमा के लाभ	..	१९५
६० धर्म और विज्ञान	...	१९७
६१ भूदान यज्ञ	..	२०१
६२ ग्राम जीवन तथा नगर जीवन	.	२०५
६३ समय का सदुपयोग	...	२०८
६४ युद्ध के पक्ष में	..	२१३
६५ सहकारी पचायत योजना	...	२१५
६६ खाद्य समस्या		२१८
६७. फैशन का मनोविज्ञान		२२१
६८. त्रिभाष प्रस्ताव और हिन्दी	..	२२४

साहित्यक निबन्ध

६९. समाज और साहित्य	. .	२२९
७०. सम्पूर्ण हिन्दी की सक्षिप्त रूपरेखा		२३२

७१. हिन्दी साहित्य और मुसलमान साहित्यकार . २३८
७२ हिन्दी नाट्य साहित्य का विकास ... २४५
७३ हिन्दी उपन्यास का विकास . २५०
७४. हिन्दी कहानी की कहानी २५५
७५ महात्मा कबीर ... २५६
७६ कवि शिरोमणि गोस्वामी तुलसीदास २.२
७७ सूरदास २६६
७८ वर्तमान हिन्दी साहित्य की प्रगति २७०
७९ काव्य कला २७५
८० हिन्दी काव्य मे कृष्ण चरित्र २७९
८१ कुरुक्षेत्र २८८
८२ मेरा सर्वप्रिय ग्रन्थ– 'सूरसागर" २९५
८३ प्रेम योगिनी मीरा . २९८
८४. बाबू भारतेन्दु हरिश्चन्द्र ३०२
८५ श्री जयशंकर प्रसाद ३०५.
८६ राष्ट्र कवि मैथिलीशरण गुप्त . ३१०
८७ श्री सुमित्रानन्दन पंत ३१३
८८ महादेवी वर्मा ३१८
८९ सूर्य कांत त्रिपाठी "निराला" . ३२०
९० हिन्दी के महान उपन्यास कार प्रेमचन्द ३२५

विवरणात्मक निबन्ध

९१ श्री कृष्ण . ३३१
९२ महात्मा बुद्ध ... ३३४
९३. सम्राट अशोक . ३३८
९४. महाराणा प्रताप ... ३४०
९५ छत्रपति शिवाजी .. ३४३

९६. महारानी लक्ष्मी बाई ३४७
९७. रवीन्द्रनाथ ठाकुर ३५४
९८. महर्षि स्वामी दयानन्द सरस्वती ३५७
९९ लोकमान्य तिलक ३६१
१०० लाला लाजपतराय ३६५
१०१. क्रांतिदूत सुभाष चन्द्र बोस ३६८
१०२ महात्मा गाधी ३७१
१०३ सरदार वल्लभ भाई पटेल ३७४
१०४ भूतपूर्व राष्ट्रपति डा० राजेन्द्र प्रसाद ३७८
१०५ आदर्श महिला श्रीमति (एनी बेसेंट) ३८१
१०६ भारत का दार्शनिक राष्ट्रपति (डा० राधा कृष्णन) ३८६
१०७. शाति दूत जवाहर ३८९
१०८ जवाहरलाल नेहरू का राजनीतिक दर्शन ३९१
१०९ प्रधान मन्त्री श्री लाल बहादुर शास्त्री ३९८
११० भारत पाकिस्तान युद्ध ४००
१११ शास्त्री जी का अन्तिम शान्ति समझौता (ताशकद घोषणा) ४०४
११२ श्रीमती इन्दिरा गाधी ४०८
११३ वियतनाम की गुत्थी ४११
११४ भारतीय रुपये का अवमूल्यन ४१३
११५ डा० भाषा और भारत ४१९
११६ हमारी सेनायें ४२३

वर्णनात्मक निबन्ध

११७ रक्षाबन्धन ४३१
११८. विजयादशमी (दशहरा) ४३४
११९ रग रगीली होली ४३८

१२०.	दीपावली	...		४४१
१२१.	वसत	...		४४४
१२२.	उपवन की शोभा	...		४४७
१२३.	प्रात कालीन नदी तट का दृश्य	...		४५०
१२४.	रात्रि में आकाश विहार	...		४५४
१२५.	मेरी रेलवे यात्रा	...		४५७
१२६	एक ऐतिहासिक यात्रा (ताज महल)	...		४६१
१२७	एक साहस पूर्ण यात्रा	...		४६३
१२८,	एक दुर्घटना	...		४६७
१२९.	गणतत्र दिवस	...		४६९
१३०	पन्द्रह अगस्त	...		४७१
१३१.	बाल दिवस	...		४७३
१३२	विद्यालय मे पारितोषिक-वितरणोत्सव	...		४७५
१३३	मनोरजन के साधन	..		४७८
१३४	भारत की राजधानी दिल्ली	..		४८३
१३५.	रुपय की आत्म कथा	...		४८५
१३६	एक भयानक अग्नि-काण्ड	...		४८९
१३७	नारी और नौकरी	..		४९३
१३८	श्री नहरू की वसीयत	...	(क)	४९६
	पत्र लेखन कला			४९९
	प्रचलित मुहावरे	..		५२३
	व्याकरण-विभाग	.		५३७
	काव्य विभाग	.		५६८
	हिन्दी साहित्य का इतिहास विभाग			५८४

श्री गणेशायनम

गुरु ब्रह्मा, गुरु विष्णु गुरु देव महेश्वर
गुरु साक्षात् पर ब्रह्म तस्मै श्री गुरवे नम ।

गुरुभक्ति

बडी पुरानी कहावत है कि 'सेवा करे सो मेवा पावे' । वास्तव मे सेवा का गुण अत्यन्त महान् है, हमारे यहाँ प्राचीन साहित्य मे सेवाधर्म को बडा कठिन बताया गया है । प्राचीन युग मे छात्र अपने गुरु की सेवा करके फलवती विद्या प्राप्त करते थे । इस सेवा के पीछे सबसे बडी भावना भक्ति की रहती है ।

'धर्म की रसात्मक अनुभूति भक्ति' है । भक्ति हृदय का तरल गुण है । जिसे हम अपने से अधिक गुणी, विद्यासम्पन्न और ज्ञानवान मानते है उसी के सामने भक्ति से हमारा सिर झुक जाता है । भक्ति एक प्रकार से हार्दिक सम्मान अर्थात् हृदय के द्वारा हृदय के सम्मान का प्रदर्शन है । इस दृष्टि से गुरुभक्ति का महत्त्व अत्यन्त आवश्यक है ।

जीवन मे गुरुभक्ति की भावना अत्यन्त आवश्यक है । गुरु का जीवन मे कितना महत्त्वपूर्ण स्थान है, यह सत्य किसी से अपरिचित नही है । हमारा शैशव जिस माँ के सुकुमार दुलार की गोदी मे खेलता है उसे गति गुरु से प्राप्त होती है । गुरु के द्वारा जीवन मे जीने की सही शिक्षा प्राप्त होती है । यह अनुभव सही है कि जिन व्यक्तियो ने अपनी गुरुभक्ति से गुरु के हृदय को जीत लिया है उन्होंने ज्ञान का अमृत पिया है । पहले तो मनुष्य का जीवन ही कठिनता से मिलता है । मनुष्य जीवन पाने पर सच्चा गुरु बडी कठिनाई से मिलता है । सोचो तो वे कितने भाग्यहीन मनुष्य हैं जो अपने जीवन मे सच्चे गुरु की खोज नहीं करते और मिलने पर अपनी गुरुभक्ति से सच्चा ज्ञान प्राप्त नही करते ।

भण्डारी सरदारचंदजी जैन बुकसेलर्स
जोधपुर वालों की ओर मे सादर भेंट

भक्ति का सबसे निकटतम सहयोगी गुण विश्वास है। पवित्र भावना से मनुष्य जिस गुरु मे विश्वास के साथ भक्ति रखता है वह अपने जीवन मे अवश्य सफल होता है। भक्तिहीन हृदय ससार के किसी कोने मे और जीवन के किसी भी क्षेत्र मे सफल नही हो सकता। गुरुभक्ति तो इस प्रकार फल-दायिनो होती है कि मनुष्य किसी ओर भी असफल नही हो सकता भक्ति से विजित गुरु अपना सारा ज्ञान अपने भक्त विद्यार्थी को प्रदान कर देता है।

प्राचीन साहित्य मे गुरुभक्ति के अनेक उदाहरण प्राप्त होते है। छात्र विद्या के लिये आश्रमो मे जाते थे। गुरु की सेवा करते थे और गुरु उन्हे सच्चे हृदय से सच्ची शिक्षा देते थे। गुरु की आज्ञा का पालन करना विद्यार्थी का सबसे बडा कर्त्तव्य होता था। बडे से बडा कष्ट या हानि भी उठा कर विद्यार्थी गुरुभक्ति पर आँच नही आने देते थे। एकलव्य ने अपने गुरु द्रोणाचार्य को अगूठे की गुरु-दक्षिणा देने मे तनिक भी तो सकोच नही किया। उसी का परिणाम यह है कि आज एकलव्य एक आदर्श विद्यार्थी के रूप मे प्रसिद्ध है। एकलव्य का आदर्श आज समस्त विद्यार्थीवर्ग के लिये आदर्श है।

गुरुभक्ति केवल भावना पर ही नही, कर्त्तव्य पर भी आधारित है। रहन-सहन, चाल-चलन सभी मे गुरुभक्ति निहित है। गुरु के सद्‌गुणो को ग्रहण करना विद्यार्थी का कर्त्तव्य है और गुरुभक्ति का अग है। गुरु जिस ज्ञान द्वारा सच्चा जीवन देता है उसका मूल्य नही चुकाया जा सकता। धन, सम्पत्ति, ऐश्वर्य या समस्त जीवन भी ज्ञान का मूल्य नही, ज्ञान का मूल्य तो भक्ति है। भक्ति का सबसे बडा गुण यही है कि गुरु द्वारा दिये गए ज्ञान का सदुपयोग किया जाय।

गुरुभक्ति का जहाँ एक गुण गुरु से सद्‌गुण ग्रहण करना है वहाँ एक गुण यह है कि गुरु के दोष दर्शन न करना। महात्मा गाँधी ने अपनी आत्मकथा मे एक घटना लिखी है कि जब वे बहुत छोटे थे तो उनके स्कूल मे इन्सपैक्टर आया। इन्सपैक्टर ने पाँच शब्द लिखने को दिए। उनमे से एक शब्द 'कटल'

था। गांधी का यह शब्द गलत था। गुरु ने ठोकर द्वारा यह समझाने का प्रयत्न किया कि अगले बैठे विद्यार्थी की कापी मे नकल करके ठीक कर लिया जाय। गांधी जी इसका अर्थ नही समझे, क्योकि वे तो गुरु को इस रूप मे समझते थे कि गुरु किसी को नकल नही करने देंगे। अन्त मे गुरु ने अपने मन की बात बताई। गांधी जी ने लिखा है कि यह दोष होने पर भी उनकी गुरुभक्ति मे कमी नही हुई। क्योकि विद्यार्थी का काम गुरु के दोष देखना नही है। यदि गुरु मे कोई दोष मिलता भी है तो उसे कभी नही कहना चाहिये। गुरु निन्दा से बडा दोष और पाप ससार मे दूसरा नही।

आधुनिक युग मे शिक्षा के क्षेत्र मे जो अवनति देखी जा रही है उसका कारण गुरुभक्ति का अभाव ही है आज के विद्यार्थी गुरुभक्त नही कहे जा सकते। जैसे-जैसे समय बीतता जा रहा है वैसे-वैसे गुरुभक्ति की भावना कम होती जा रही है। बुद्धि ने ज्ञान नही, तर्क दिया है। आज का विद्यार्थी धन देकर विद्या खरीदने की भावना का आदी हो गया है और तर्क मे गुरु की आलोचना करता है कि आज के गुरु भी गुरु नही है। अभिप्राय यह है कि मनुष्य दूसरे कर्त्तव्यो का निर्णय करता है अपने कर्त्तव्यो का नही। आवश्यकता यह है कि विद्यार्थी अपने रूप मे सुधार लाएँ। जीवन मे जिस-जिस से लाभप्रद शिक्षा मिलती है वही गुरु है।

ससार मे जितने महापुरुष हुए हैं उनके जीवन चरित्र का अध्ययन करने पर गुरुभक्ति का महत्त्व स्पष्ट हो जाएगा। श्री स्वामी दयानन्द ने अपने गुरु की आज्ञा का पालन करने के निमित्त सन्यास लेकर देश-सेवा की। शकराचार्य आदि महानुभाव इस गुरु-भक्ति के प्रसाद से महान् दार्शनिक हुए। आज के बडे-बडे शिक्षाशास्त्री और सामाजिक नेता विद्यार्थी को गुरुभक्त होने की शिक्षा दे रहे हैं। गुरुभक्ति का महत्त्व इसीसे स्पष्ट हो जाता है।

किसी भी देश की उन्नति छात्रो पर निर्भर है। छात्रो की उन्नति ज्ञान पर निर्भर है, ज्ञान गुरुभक्ति के बिना प्राप्त नही हो सकता। आज के

छात्र का कर्त्तव्य है कि सद्भावना से गुरुभक्ति का पवित्र पाठ पढ़ें। राष्ट्र का जीवन सुखद और सफल बनाने के लिए आवश्यक है कि मनुष्य ज्ञानवान बने। गुरुभक्ति इस दृष्टि से सहायक होगी।

सारांश यह है कि गुरुभक्ति का महत्त्व विद्यालयो मे बताया जाय। सद्गुण और सद्व्यवहार के लिये क्रियात्मक रूप से गुरुभक्ति जीवन मे प्रतिफलित हो, ऐसा कार्यक्रम रखना चाहिये। यह शिक्षा बचपन से ही मिलनी चाहिए।



आदर्श शिक्षा-प्रणाली

मनुष्य की सर्वसुन्दर उन्नति के मूल मे शिक्षा का सबसे बडा हाथ रहा है। आज हम मनुष्य को जिन रूपो मे देख रहे हैं वह शिक्षा का परिणाम है और अशिक्षा का भी परिणाम है। जबसे भारतवर्ष को स्वतन्त्रता प्राप्त हुई है तब से शिक्षा-प्रणाली की समस्या भी एक नया रूप लेकर हमारे सामने आई है। क्योंकि देश की सांस्कृतिक और सभ्यता-सम्बन्धी उन्नति शिक्षा पर निर्भर है। इतिहास जानने वाले यह जानते हैं कि भारत की परतन्त्रता के मूल कारणो मे अशिक्षा भी है। अंग्रेजो ने अपने अधिपत्य की जडो को दृढ करने के लिये भारतीय भाषाओ के अध्ययन का बहिष्कार किया। यदि भारतीय भाषाओ को स्वीकार भी किया तो किसी स्वार्थ साधन के लिये। आज स्वतन्त्र भारत मे शिक्षा से अधिक शिक्षा-प्रणाली का महत्त्व है।

यदि प्राचीन भारतीय शिक्षा प्रणाली के इतिहास को देखें तो उसकी अपेक्षा आज मनुष्य के पास अधिक साधन हैं। ऋषि परम्परा मे विद्या का उपयोग और था। यह मानना होगा कि वह प्रणाली आदर्श होते हुए भी आज

के वातावरण मे लागू नही हो सकती । प्राचीन शिक्षा सीमित और गम्भीर होती थी । आज आवश्यकता है कि उस समय की शिक्षा-प्रणाली के उपयोगी गुण ग्रहण करें ।

आज समाज मे शिक्षा का अनिवार्य होना तो आवश्यक है ही साथ ही उसे सर्व-सुलभ भी होना चाहिए । शिक्षा प्रणाली पर विचार करते हुए विस्तृत रूप से उसके सभी पहलुओ पर विचार करना होगा । यह सौभाग्य की बात है कि पिछडी जातियो के लिए भी शिक्षा का प्रबन्ध हो रहा है और आए दिन यत्र-तत्र नए-नए स्कूल और विद्यालय खुल रहे है । इस दिशा मे यह ध्यान रखने की अत्यन्त आवश्यकता है कि शिक्षा वातावरण चाहती है । जब तक छात्र को सुन्दर और प्रेरणादायक वातावरण प्राप्त नही होता वह शिक्षा का पूरा लाभ नही उठा सकेगा । यह देखा जाता है कि शहरो की गन्दी गलियो मे स्कूल खुले हुए हैं । इससे छात्र के मस्तिष्क को वह खुली हवा नही पहुँचती जिससे उसका मस्तिष्क ज्ञान की थाह पा सके । जहाँ तक हो वहाँ तक स्कूल खुले वातावरण मे हो ।

शिक्षा-प्रणाली पर विचार करते समय बुनियादी शिक्षा को अधिक महत्त्व देना होगा । सदियो की कमी धीरे-धीरे दूर होगी । हमारा समाज बहुत समय से अशिक्षित है । आचार्य विनोबा भावे के शब्दो मे पहले आवश्यक है कि "प्रत्येक घर स्कूल हो" । क्योकि शिक्षा घर से प्रारम्भ होती है । हमारे समाज के जिस वातावरण मे बालक जन्म लेता है उसे सुधारना होगा । प्रारम्भ से ही बालक की प्रकृति को कर्म तथा उद्योग की ओर प्रेरित करना होगा ।

आदर्श शिक्षा-प्रणाली का सर्वप्रथम गुण होना चाहिए कि शिक्षा मातृभाषा मे दी जाए । भाषा ही वह साधन है जिसके द्वारा विचार ग्रहण किए जाते हैं । अपने देश और जाति के स्वाभाविक तत्त्व की छाप भाषा के द्वारा पडती है । आवश्यकता है कि इस ओर अधिक ध्यान दिया जाय । इस विषय मे जितनी अधिक रुचि होगी छात्र का तेज उतना ही बढेगा और शिक्षा का सही मूल्य ज्ञात होगा ।

यह सर्वविदित है कि विज्ञान उन्नति की ओर है। पदार्थ विज्ञान से लेकर मानव विज्ञान और मनोविज्ञान तक पहुँच गया है। मनोविज्ञान का क्षेत्र अत्यधिक विस्तृत हो गया है। प्राचीन आचार्यों ने कहा है —

आकार से, इशारे से, चेष्टा से, चाल और वोली आदि से मनुष्य के मन की इच्छाओ का ज्ञान प्राप्त किया जा सकता है।

आज शिक्षा के क्षेत्र मे मनोविज्ञान का अत्यधिक महत्त्व बढ गया है। प्राचीन काल मे शिक्षण-पद्धति का एक ही रूप था। सामाजिक व्यक्ति अपनी सतान के मन और उसकी प्रकृति से अपरिचित होकर अपनी इच्छानुसार शिक्षा दिलाते थे। इससे यह हानि होती है कि वालक की स्वाभाविक गति मन्द पड जाती है। सामाजिक लोग और अध्यापक उसे मन्द बुद्धि कहकर अपमानित करते हैं जिसका परिणाम यह होता है कि वालक के मन मे प्रतिशोध की भावना जन्म लेती है। प्रतिशोध और प्रतिकार दोनो मिल कर एक अजीव उत्तरदायित्वहीन असभ्य व्यक्तित्व को प्रकट करते हैं जो समाज के लिए वाद मे अहितकारी सिद्ध होते है। इन सव वातो को जानकर मनोवैज्ञानिक शिक्षा-प्रणाली पर अधिक जोर देना चाहिए।

आदर्श शिक्षा-प्रणाली के अनुसार विषयो के चुनाव मे स्वतन्त्रता होनी चाहिए। कुछ लोग इस विचार से असहमत होकर ऐसा सोचते हैं कि छात्र सरल विषय को चुनते है जिससे वे परिश्रम से वचें। इसके उत्तर मे फिर मुझे वही विचार दुहराना होगा कि प्रारम्भ मे वालक का स्वभाव श्रम और उसके लाभ की ओर उन्मुख होना चाहिए। जव किसी वालक को कठिन और सरल का भेद ज्ञात होगा तो वह अवश्य जीवन के क्षेत्र मे प्रत्येक स्थिति मे सरलता को अपनाएगा। यह सरलता व्यक्ति को अकर्मण्य और आलसी वनाती है। शिक्षा के क्षेत्र मे नए प्रयोग हो रहे हैं और शिक्षा शास्त्रियो ने यह सिद्ध कर दिया है कि कठिन से कठिन विषय को सरल वनाया जा सकता है [मेरा आशय कुजियो से नहीं है]।

विषय मे विविधता होनी चाहिए, अधिकता नही। प्राय देखा जाता है कि छात्र को एकदम इतने विषय पढा दिये जाते हैं कि उसको इतना समय नही मिलता कि वह सभी विषयो को पर्याप्त समय दे सके। इस दृष्टि से विषयो की उपयोगिता को ध्यान मे रखकर उनको अनिवार्य बनाना चाहिए। आजकल प्रवाह मे बहकर मनुष्य सब भूल जाता है। विज्ञान के युग की प्रधानता होने के कारण प्रत्येक माता-पिता अपने छात्र को वैज्ञानिक बनाने का लालच देता है। यह लालच बुरा नही है, बशर्ते कि बालक की बुद्धि और प्रकृति को जान लिया जाय।

आज की इस अन्धा-धुन्ध वैज्ञानिक शिक्षा के प्रति अभिरुचि बढती हुई देखकर यह अनुमान लगाया जा सकता है कि कला के प्रति उदासीनता का क्या कारण है ? वैज्ञानिक शिक्षा बुरी नही है। बुरी है वह प्रवृत्ति जो कि छात्रो को पथभ्रष्ट करती है। माता-पिता वैज्ञानिक शिक्षा को इसलिए महत्त्व देते हैं कि किसी प्रकार उनकी सन्तान अधिक रुपया प्राप्त कर सके। यह भीतरी बात यह है कि इस प्रवृत्ति ने देश और जाति की उन्नति मे असहयोग दिया है। ऐसे अयोग्य डिग्री प्राप्त इजीनियर स्वार्थ मे अन्धे होकर सरकार को धोखा देते हैं। आवश्यकता है कि आविष्कारक इन्जीनियर हो जिनसे देश को लाभ पहुँचे।

जिन कलात्मक विषयो की छात्र उपेक्षा करते हैं उन्हे उपयोगी बनाया जाय। इसके लिए सुयोग्य अध्यापको की आवश्यकता है। भारतीय शिक्षा विभागो के अधिकारियो को इस ओर ध्यान देना चाहिए। केवल डिग्री या पहुँच के आधार पर प्रत्येक को शिक्षक होना शोभा नही देता और यह प्रणाली देश और जाति के लिए अत्यन्त हानिकारक है। समाज का यह कर्त्तव्य है कि वह अध्यापको की सुख-सुविधाओ का ध्यान रखें। अध्यापको का कर्त्तव्य है कि वे बच्चो का मन कलात्मक और उत्तरदायित्वपूर्ण बनायें। स्वावलम्बन, उद्योग, परिश्रम, सत्य और वफादारी के महान् गुणो के प्रति रुचि उत्पन्न करें। इस प्रकार की व्यवस्था लाभदायक होगी पाठ्य-पुस्तको

का निर्माण अत्यन्त निष्पक्ष और हितकर होना चाहिए। इसके विषय मे अधिकारी विद्वानो का परामर्श आवश्यक है। शिक्षा-प्रणाली का आदर्श-सिद्धान्त होना चाहिए कि वह समाज को सभ्य नागरिक, देशभक्त और समाज सेवक दे, जो आत्मोन्नति बढाने मे सहायक हो।



लोक सेवा

भर्तृहरि ने अपने प्रसिद्ध ग्रन्थ नीतिशतक मे एक श्लोक लिखा है जिसका अन्तिम पद इस प्रकार है—

सेवा धर्म परम गहनो योगीनामप्ययम्य

सेवा धर्म अत्यन्त कठिन है। योगी भी इसका पार नही पा सकते। कवि की वाणी से यह स्पष्ट होता है कि ससार मे सेवा धर्म का पालन करना जितना महत्वपूर्ण है उतना ही कठिन भी है। सेवा के लिए प्राय लोग कह देते हैं, परन्तु सेवा करना सरल कार्य नही है।

सेवा धर्म का सीधा लक्ष्य परप्रीति है। परप्रीति से अभिप्राय है दूसरे को प्रसन्न करना। ससार को तो फिर भी दूर कहा जा सकता है जिस परिवार मे जन्म हुआ है उस परिवार के प्रत्येक व्यक्ति को प्रसन्न रखना बहुत कठिन है। कठिन क्या प्राय लोग इसे असम्भव मानते हैं। एक मनुष्य सभी को प्रसन्न नही रख सकता।

परन्तु यहाँ प्रश्न एक व्यक्ति का नही है। यहाँ समाज से सम्बन्ध रखने वाले प्राणी से है। प्रत्येक सामाजिक व्यक्ति सेवा भाव को अपनाए। ऐसी स्थिति मे समाज की उन्नति बहुत शीघ्र होगी।

लोक सेवा का सबसे महत्त्वपूर्ण अग त्याग है। बिना त्याग के सेवा नही हो सकती। जिस समय कोई व्यक्ति किसी की तन से, मन से या धन से

किसी भी प्रकार सेवा करता है उसमे त्याग की भावना अवश्य होती है। किसी के लिये कोई शरीर से परिश्रम कर साधन जुटाता है, कोई मन से किसी के लिए शुभ कामना करता है अथवा धन द्वारा किसी की आवश्यकता को पूरा करता है तो इसका अर्थ है उसने अपना कुछ दिया। दान की दृष्टि से समय, भावना या धन सभी महत्त्वपूर्ण है।

सेवा मे हित की भावना होती है। दूसरे का हित करना अथवा हित की इच्छा रखना सब से अधिक पुण्यकर्म माना गया है। वे मनुष्य ससार मे भाग्यवान हैं जो दूसरो का हित करते हैं। कुछ ऐसे भी नीच मनुष्य होते है जो दूसरे के हित की इच्छा नही रखते। इस दृष्टि से समाज मे तीन प्रकार के व्यक्ति मिलते हैं। सर्वप्रथम स्थान उन मनुष्यो का है जो अपना हित नष्ट कर दूसरो का हित करते हैं। दूसरे प्रकार के व्यक्ति वे होते है जो उसी स्थिति मे दूसरो का हित करते हैं जबकि उनके हित का नाश न हो रहा हो। ऐसे मनुष्य मध्यम श्रेणी मे आते है। नीच कोटि के वे मनुष्य होते हैं जो अपने हित के लिए दूसरे के हित का नाश करते हैं। हमारे समाज मे कुछ ऐसे भी मनुष्य मिलते हैं जो अपना हित सिद्ध न होने पर भी दूसरो के हित का नाश करते हैं। इनमे जो प्रथम हैं वे ही लोक सेवा के महान् आदर्श का सच्ची प्रकार पालन करते हैं।

भारतीय सस्कृति और सभ्यता सदा से लोक सेवा के महान् आदर्श को अपनाती रही है इस आदर्श को जीवन धर्म का रूप देने से तथा पुण्य-प्राप्ति का साधन बताने से समाज का महान् उपकार हुआ है। समाज मे दोनो प्रकार के वर्ग हैं धनी और निर्धन, शिक्षित और अशिक्षित। ऐसी अवस्था मे समाज का हितकारी व्यक्ति समाज के अन्य मनुष्यो का हित साधन करे यह उसका परम कर्त्तव्य है। क्योकि समय गतिवान है। समय की इस अनजानी और अनदेखी चाल को जानकर दूसरे के हित व सेवा मे जीवन व्यतीत करन वाले महामानव धन्य हैं।

समाज मे शान्ति और सुख का वातावरण उत्पन्न करने के लिए लोक

सेवा की भावना का विस्तार अत्यन्त आवश्यक है। आज भारतवर्ष मे प्रजातन्त्र राज्य है। सदियो की परतन्त्रता ने इस देश को असख्य अभाव दिए हैं। इसलिए जहाँ तक हो, जिस प्रकार भी हो इन अभावो को पूरा करना प्रत्येक व्यक्ति का कर्तव्य है। लोक सेवा आन्तरिक और बाह्य दृष्टि से इस समय अत्यन्त उपयोगी है।

लोक सेवा किसी विशेष वर्ग या व्यक्ति तक सीमित नही है। लोक सेवा का मार्ग समुदाय द्वारा अनुकरणीय है। उदाहरण के लिए छात्रो का कर्तव्य है कि वे अवकाश के दिनो मे अशिक्षित समूह वाले गावो मे जाए और शिक्षा प्रदान करें। लोक सेवा का यह मार्ग अत्यन्त ही प्रशसनीय है। समाज का शिक्षित होना देश की, जाति की और मनुष्य की उन्नति के लिए वहुत आवश्यक है देश और समाज ने इस दारुण दु ख का भयकर परिणाम भोगा है, लोक सेवा का यह अग है। जो जिस प्रकार लोक सेवा कर सकता है करे, यही मानव धर्म है।

जो सम्पत्तिशाली हैं वे निर्धन, असहाय छात्रो और परिवारो की सहायता कर लोक सेवा का सुन्दर उदाहरण प्रस्तुत करें। जव तक समाज मे त्याग की भावना उत्पन्न नही होगी तव तक लोक सेवा पूर्ण नही होगी। समाज की आर्थिक व्यवस्था को ध्यान मे रखते हुए यह सहयोग अपेक्षित है। धनवान व्यक्ति इस दृष्टि से सहायक सिद्ध होगे और पुण्य लाभ भी होगा।

जो साधारण नागरिक हैं उनका यह कर्तव्य है कि वे व्यवहारिक जीवन मे लोक सेवा का भाव अपनाएँ। ऐसी लोक सेवाकारिणी सस्थाएँ इस क्षेत्र मे पर्याप्त सफलतापूर्वक समाज कल्याण कर सकती हैं। आवश्यक है धार्मिक भावना जगाने की जिसमे लोक सेवा का भाव वढे। लोक सेवा को मानव जीवन का आदर्श मान कर चलना ही मानवता का उपकार करना है। दैविक, दैहिक और भौतिक सतापो को नष्ट करने का एकमात्र साधन लोक सेवा है। रामराज्य का स्वप्न भी तभी सत्य होगा जव मानव मात्र के सामने लोक सेवा का आदर्श होगा।

विद्यार्थी-जीवन और अनुशासन

वास्तविक दृष्टि से जीवन को विभागो मे नही बाटा जा सकता, फिर भी विद्यार्थी-जीवन का अत्यन्त महत्वपूर्ण स्थान है। बाहरी दृष्टि से यह सत्य है कि विद्यार्थी जीवन स्वच्छन्द होता है क्योकि उस जीवन मे विद्यार्थी का एक ही लक्ष्य होता है, ज्ञान प्राप्त करना ।

प्रश्न यह है कि क्या बन्धन हीनता व्यक्ति को उत्तरदायित्व हीन बनाती है ? नही, यह सत्य होते हुए भी कि विद्यार्थी जीवन सांसारिक विघ्न-बाधाओ तथा बन्धनो से मुक्त होता है, यह मानना पडेगा कि बन्धन हीनता ही सबसे बडा बन्धन है, क्योकि अनुशासन इस जीवन का प्राण है। अनुशासन से जीवन के क्रम का निर्माण है। यही क्रम जीवन मे विकास और गम्भीरता लाता है। यद्यपि अनुशासन तो आजीवन जीवन के विकास मे सहायक होकर सफल बनाता है और उद्देश्य सिद्धि मे उत्साह प्रदान करता है, फिर भी क्योकि इसका प्रारम्भ विद्यार्थी जीवन से होता है, इसलिए इसका महत्त्व इसी जीवन मे अधिक है।

यह अनुभव सिद्ध है कि जो स्वभाव प्रारम्भ मे पनपता है जीवन-पर्यन्त मनुष्य के सुख और दुख के लिए वही उत्तरदायी होता है। प्राचीन काल मे भी इसी अनुशासन को लेकर अनेक उपदेश दिए गए है। गुरुसेवा, बडो का आदर, माता-पिता के प्रति पूज्य भावना तथा छोटो के प्रति स्नेह प्रगट करना आदि सभी इस अनुशासन के अन्तर्गत आते है। इस अनुशासन की मात्रा को दृढ करने के लिए मातृऋण और गुरुऋण से उऋण होने के धर्म का विधान किया गया है। यह विधान इतना पवित्र और सत्य सकल्प से युक्त है कि सारा जीवन सयम और नियम की सुख शीतल छाया मे आत्मिक आनन्द प्राप्त करता हुआ व्यतीत होता है।

अनुशासन सर्वभौमिक है। ससार के किसी देश मे भी और किसी भी समय मे इसके प्रति अवहेलना को सहन नही किया गया। यह विद्यार्थी जीवन

का शृंगार है। यह अनुशासन उसके लिए वरदान बताया गया है। जिस समाज का प्राणी यह विद्यार्थी है उसके विकास और उन्नति का उत्तरदायित्व भी उसी पर निर्भर है। जिस विद्यार्थी को देश का सभ्य और सुयोग्य नागरिक होना है उसके लिए यह अनुशासन प्रथम मत्र है। अनुकरणीय कर्त्तव्य और गतव्य मार्ग है।

स्वेच्छाचारिता और उच्छृखलता को महत्त्व देने वाले लोग अनुशासन को बधन मानते हैं। ये व्यक्ति यह नही सोचते, कि एक सूत्र मे वह शक्ति नहीं होती जो क्रम और नियम से बधे हुए अनेक धागो के टुकडो के मिलने मे होती है। यही शक्ति जीवन को गति, प्राणो को बल, मन को उत्साह, चित्त को शान्ति देती है। जरा सोचें और एकबार जीवन मे अनुशासन को उतार कर देखें कि एक व्यक्ति का अनुशासित जीवन कितना मुदित और अन्य सामाजिक प्राणियो के द्वारा प्रशस्त होता है।

अनुशासन शब्द किसी एक व्यवहार तक सीमित नही है। गुरुओ को और पूज्य माता-पिता के अतिरिक्त सम्मानित व्यक्तियो को प्रणाम आदि करना अनुशासन के अग हैं। अनुशासन का व्यक्तिगत जीवन से भी घनिष्ठ सम्बन्ध है। चचल मन और साथियो का वातावरण भी प्रभाव डालता है। इस क्षेत्र मे भी अनुशासन सहायता करता है। असत्य और असयमित जीवन की चर्चा बहुधा विद्यार्थी के चित्त को अपनी ओर आकर्षित कर लेती है। विद्यार्थी की बात छोडिये, वह तो कई दृष्टियो से अनुभवहीन होता है हमने व्यक्तिगत जीवन मे बडे-बडे मनुष्यो को मिथ्याचरण की चहल-पहल मे रुचि लेते देखा है। साथ ही अशुभ और कपटाचरण करने वाले व्यक्तियो के साथ विद्यार्थी को विवशतावश करना पडता है उनसे अलग रहने के लिए मन को कठोर करना अनुशासन सिखाता है। जो विद्यार्थी इस प्रकार के अनुशासन का आदी हो जाता है वह अनेक उपहासो को असत्य समझकर उनसे पीछा छुडा कर आदर्श जीवन स्थापित करता और यही उसकी सबसे बडी विजय है।

अनुशासन का क्षत्र केवल विद्यालय नहीं है। अनुशासन का पाठ माता

की वात्सल्यमयी गोद और घर के धूल भरे आँगन से प्रारम्भ होता है। कुछ परिवारो मे सन्तान को लाड-प्यार के साथ अनुशासनहीनता दी जाती है। यदि छोटा वालक किसी अनुचित कार्य के लिये या हानिकारक वस्तु के लिये हठ करता है तो उसकी उस हठ को पूरा करने मे ही कुछ लोग लाड-प्यार समझते हैं, जव कि यह अनुशासन की दृष्टि से सबसे वडी कमी है। यह लाड-प्यार नही है, वल्कि इसके द्वारा वालक के मन मे अकुरित होने वाली अनुशासन-भावना को उत्पन्न होने से पहले ही उसकी मनोभूमि को ऊसर वनाना है। इसके लिए परिवार के व्यक्ति-यो का शिक्षित होना आवश्यक है। परन्तु इसका अर्थ यह भी नही है कि इस प्रकार निराश होना चाहिये। यही सोचते रहे कि पहले परिवारो को शिक्षित वनाया जाय। आवश्यकता यह है कि जहाँ तक हो वहाँ तक इन पारिवारिक व्यक्तियो मे भी अनुशासन की भावना उत्पन्न की जाय और उसका महत्व समझाया जाय। वहुत से ऐसे शिक्षित परिवार देखे गए हैं जो अनुशासन के महत्त्व को पहचानते है और अपनी सन्तान मे अनुशासन की भावना को विकसित करते हैं। वहुत से ऐसे शिक्षित परिवार देखे गये हैं जिनके बालक वडे असभ्य और अनुशासनहीन होते हैं। इसका अर्थ यह नही है कि अनुशासन का सम्बन्ध प्रकृति से है। कुछ परिवारो मे अनुशासन का भव्य स्वरूप स्वाभाविक होता है।

विद्यार्थी-जीवन को अनुशासन की शिक्षा माता-पिता की अपेक्षा गुरु से अधिक मिलती है। कारण यह है कि दिन भर के जीवन-क्रम मे गुरु के साथ सम्पर्क अधिक रहता है। माता-पिता के प्रति बालक अधिकार सम्पन्न होता है, और गुरु के प्रति कर्त्तव्य भावना से युक्त होता है। कई वार क्या अधिक बार माता-पिता की अपेक्षा गुरु की आज्ञा वालक शीघ्र मान जाते हैं। ऐसी अवस्था मे गुरु का स्वय भी अनुशासित होना अत्यन्त आवश्यक है। छोटे वालक अर्थात प्राइमरी के बालको को पढ़ाने वाले अध्यापको को अनुशासन मे रहना अत्यन्त आवश्यक है। क्योकि छोटे वालकोमे अनुकरण की प्रवृत्ति अधिक होती है। विद्यालय (कालेज) के जीवन मे आने तक विद्यार्थियो मे समझ

आ जाती है। प्रारम्भ से ही विद्यार्थी मे आत्मनिर्भर और आत्मविश्वास की भावना अनुशासन के क्रम मे उत्पन्न करनी चाहिए।

बहुत से विद्यालय अनुशासनहीनता के लिए प्रसिद्ध होते है। यह कोई अच्छी बात नही। बडे-बडे शिक्षा अधिकारियो तथा प्रधान आचार्यों का यह कर्त्तव्य है कि वे विद्यालय के जीवन की खोज करें। उन अभावो और दुर्बलताओ का पता लगायें कि वह कारण कौन-सा है जो छात्रो मे अनुशासन-हीनता को बढा रहा है। इसके लिये अध्यापको और प्रधान आचार्यो का यह कर्त्तव्य है कि नित्यप्रति के जीवन मे अनुशासन के महत्त्व पर प्रकाश डालें। धार्मिक शिक्षा की ओर रुचि उत्पन्न करें साथ ही विद्यार्थियो मे उत्तरदायित्व की भावना जागृत करें। क्योकि उत्तरदायित्वहीनता ही अनुशासन की भावना को नष्ट करती है।

अनुशासन को बढावा देने के लिये सरकार का ध्यान इस ओर आकर्षित करना चाहिए। अनुशासन पालन करने वाले छात्रो को प्रमाण पत्र और पुरस्कार मिले। देश जाति और समाज के निर्माण करने वाले भविष्य के द्रष्टा आज के बच्चे कल के नेता सबसे पहले अनुशासन का पाठ पढें। विद्यार्थी यह समझ ले कि जिस प्रकार जीवन का रहना आवश्यक है उसी प्रकार जीवन को सुरक्षित और आनन्दित करने के लिये अनुशासन आवश्यक है। उनमे यह विश्वास जमे कि जीवन का दूसरा नाम अनुशासन है। विद्यार्थी की अपनी सम्पत्ति ही अनुशासन है।



विद्यार्थी और राजनीति

विद्यार्थी शब्द का अर्थ है विद्या को ग्रहण करने वाला। विद्या शब्द का अर्थ है ज्ञान। ज्ञान की कोई सीमा नही है। मनुष्य एक जन्म तो क्या अनेक जन्मो मे भी ज्ञान का पार नही पा सकता। जब यह सत्य है तो फिर मनुष्य का कर्त्तव्य है कि ज्ञान के उस क्षेत्र मे प्रवेश करे जहाँ वह शान्ति और सुख प्राप्त कर सके। इस ज्ञान को प्राप्त करने का एक निश्चित समय है, अवधि है।

विद्यार्थी को राजनीति से सम्बन्ध रखना चाहिए अथवा नही ? यह प्रश्न काफी समय से लोगो के दिमाग मे घूम रहा है। कुछ लोगो का यह कहना है कि विद्यार्थी का क्षेत्र सीमित नही होना चाहिये। पिछला इतिहास इसका साक्षी है कि स्वतन्त्रता आन्दोलन मे लाखो विद्यार्थियो ने अपने नेताओ से प्रेरणा लेकर अध्ययन छोड दिया था और उस युद्ध मे कूद पडे थे।

इसमे कोई सन्देह नही कि ऊपर कही वात विल्कुल सत्य है। परन्तु मनुष्य की परिस्थितियाँ सदा एक सी नही रहती। वह ऐसा ही समय था, असहयोग था। आज भारत स्वतन्त्र है आज समय है सहयोग का। मेरे विचार मे अध्ययन का त्याग किसी भी अवस्था मे सहायक और उपयोगी नही हो सकता।

यह एक निश्चित सत्य है कि जब तक छात्र का मन और मस्तिष्क एकाग्र नही होगा तब तक वह सही शिक्षा और ज्ञान प्राप्त नहीं कर सकता राजनीति का क्षेत्र वाद मे प्रारम्भ होता है। ऐसी स्थिति मे अनेक प्रकार की उलझन ति विद्यार्थी को एकाग्र नही रहने देती। यह प्राय देखा गया है कि अनेक प्रतिभाशाली छात्र विद्यालय की आपसी राजनीति मे पड कर सही ढग से ज्ञान प्राप्त नही कर पाते। वे जिस श्रेणी मे उत्तीर्ण होने के योग्य होते हैं वह उन्हें नही मिलती।

राजनीति बुद्धि का खेल है । विद्यार्थी का हृदय और बुद्धि कोमल होते हैं । राजनीति की कठोर उखाड-पछाड विद्यार्थी के लक्ष्य को भुला देती है । यह तो इसी प्रकार है कि जैसे किसी दस बारह वर्ष के बच्चे पर असमय ही सारे परिवार का बोझ आ जाय । ऐसे लोग कभी पनप नही सकते । जिन लोगो ने समय के अनुसार राजनीति का क्षेत्र अपनाया है वे सफल रहे हैं ।

हमारे यहां राजनीति को अनेक रूप वाली कहा गया है । क्योकि राजनीति मे कभी-कभी असत्य आचरण का भी सहारा ले लिया जाता है । परन्तु विद्यार्थी का जीवन तो पवित्र और आदर्श युक्त होता है । इसलिए विद्यार्थी को राजनीति से अलग ही रहना चाहिये ।

मेरे इस कथन का यह अर्थ बिलकुल नही है कि छात्र को अपने देश की राजनीतिक गतिविधियो के बारे मे कुछ पता ही न हो, जो अक्सर आजकल देखा जाता है । नित्य-प्रति के समाचारो का ज्ञान रखना और उसे बढाना तो अत्यन्त आवश्यक है । परन्तु राजनीति मे सक्रिय भाग नही लेना चाहिये । इससे विद्यार्थी को समझने का समय मिलता है । विद्यार्थी का कर्त्तव्य है कि अपने समय और लक्ष्य के अनुसार पहले अध्ययन करे और फिर जिस ओर रुचि हो,काम करे । विद्यार्थी एक विद्यार्थी है राजनीतिक नेता नही । राजनीति के लिए और जीवन है ।



शिक्षा में खेलों का महत्त्व

आज के आगे बढते हुए सभ्य संसार मे कौन ऐसा प्राणी है जो स्वय आगे बढना नही चाहता ? हम समझते हैं कि प्रत्येक पुरुष व स्त्री अपनी उन्नति के लिए केवल आज ही से नही अपितु सृष्टि के आरम्भ से ही बड़ी खींचातानी करता रहा है । खींचातानी मानव प्रकृति का एक खेल है और खींचा-

तानी के खेल मे ही मनुष्य को ससार के वडे-वडे अनुभव प्राप्त होते रहते हैं, और होते रहेगे। हम अनुभवो को शिक्षा कहे चाहे ज्ञान परन्तु यह निश्चित है कि विना मेहनत, परिश्रम और विना उछल-कूद किये कोई भी मनुष्य इस ससार मे कुछ सीख नही सकता। शिक्षा मे खेलो का कितना महत्त्व रहा है यह विचारणीय विषय है।

जहा विद्वान पुरुषो की बुद्धि मे वडे-वडे जटिल और दार्शनिक विचार घूमा करते हैं वहाँ वालक के छोटे से मन मे खेल-कूद और विद्यालय का पाठ घूमा करता है। ससार का शायद ही कोई ऐसा स्कूल अथवा कालेज होगा जहाँ पढाई के साथ-साथ खेलो का प्रवन्ध न हो। फिर तो यह वात निर्विवाद रूप मे सिद्ध है कि शिक्षा-क्रम मे खेलो का होना अनिवार्य है और खेल अपना पूरा महत्त्व रखते हैं। हो सकता है कि कोई दीमक की तरह कुतर-कुतर कर खाने वाला कितावी कीडा इस वात को निरर्थक समझे परन्तु ससार के महापुरुषो की तसवीरें विद्यालय के मैदानो मे विद्यार्थियो के साथ खेल कूद करते हुए पहचानने को मिलती है।

खेल का जीवन के साथ वहुत गहरा सम्वन्ध है और जो मनुष्य खेल के प्रति प्रेम और शौक रखते हैं, जरा उनकी तसवीर, ढाचा और फोटो विल्ला देखिए चमकदार चेहरा, उभरी हुई छाती, शरीर के प्रत्येक अग मे स्फूर्ति और अजीव साहस का नज़ारा और झलक उसके चलने फिरने मे दिखाई पडती है। उसके हाथ मे हाकी, व क्रिकेट का वल्ला जितना सजता है, उतनी ही उस सुडौल शरीर वाले युवक के हाथ मे कितावे अच्छी लगती है। कहावत भी है 'Sound mind in a sound body।, खेल खेलने वाले मनुष्य मे कुछ कर डालने की शक्ति होती है ऐसा मनुष्य ही देश का निर्माता हो सकता है। जो आदमी खेल से घवराता है वह जोकर वन जाता है क्योकि उसकी हर अदा पर दुनिया हँसती है। झुकी हुई कमर, माथे पर झुर्रिया और लडखडाकर चलते देखकर उस आदमी पर हसी भी आती है और साथ ही दया

भी वह तो पृथ्वी पर बोझ बनकर ससार मे दु ख की ही उत्पत्ति करता है। वह देश का निर्माण नही करता अपितु समस्या बनकर देश की उन्नति मे बाधक होता है । ऐसे ही लोगो की बढोतरी के कारण ससार मे दिन प्रतिदिन नये-नये रोगो की उत्पत्ति हो रही है । देश-देश की सरकारो के सामने जगह-जगह वडे-वडे अस्पताल खोलने का प्रश्न ऐसे ही खेलो से भागने वाले लोग पैदा करते है।

यह पक्का विचार है कि शिक्षा के साथ-साथ ससार के सभ्य प्राणी यदि खेलो के महत्त्व को भली-भाति समझ लें और नियमित रूप से जैसे भोजन तथा जीवन की अन्य आवश्यकताएँ अनिवार्य हैं उतना आवश्यक खेल और व्यायाम को भी मान लें तो निश्चय ही, जैसे हवा के बिना जीवन का होना असम्भव माना जाता है । ठीक उसी तरह खेल और व्यायाम के विना जीवन मे सफलता, उन्नति प्राप्त नही होती दिखाई पडती । कोई भी विद्यार्थी तव तक पूर्ण शिक्षा प्राप्त नही कर सकता जब तक वह अपने शरीर को स्वस्थ और निरोग नही रखता । शरीर को स्वस्थ और निरोग रखने के लिए व्यायाम और खेल अनिवार्य हैं ।

यदि अध्यापक महोदय विद्यार्थियो को वरावर इस बात की प्रेरणा दे या ऐसे कार्यक्रम निश्चित करें जिनमे विद्यार्थियो को खेल खेलने से अन्य क्षेत्रो मे सफलता मिले तो अवश्य ही सामाजिक जीवन का स्तर सुदृढ बनेगा। खेल और शिक्षा दोनो मानव जीवन की प्रकृति और जिज्ञासा के रूप हैं। अस्तु खेल का और शिक्षा का जीवन मे साथ-साथ होना मनुष्य की विकसित अवस्था का प्रमाण है और हर प्रकार लाभप्रद है ।



स्वाधीनता के सत्रह वर्ष

गोस्वामी तुलसीदास कहते हैं —

"पराधीन सुख सपनेहु" नाही"

वास्तव मे पराधीन होकर मनुष्य सुख का अनुभव नही करता। पराधीन रहकर सुख स्वर्ग सब व्यर्थ है और स्वाधीन रह कर ससार का वडे से वडा दु ख भी बुरा नही लगता। मनुष्य अनादि काल से जीवन की स्वाधीनता को महत्व देता आ रहा है। आज हम चारो ओर विज्ञान की जिस चमक-दमक, कोलाहल और शोर-गुल को सुन रहे हैं तथा विज्ञान द्वारा सुलभ जिस सुविधा को प्राप्त कर रहे हैं वह स्वाधीनता प्राप्त करने के प्रयत्नो का ही परिणाम है। जव मनुष्य ने प्रकृति की पराधीनता को भी चुनौती देता है तो वाह्य पराधीनता उसे किस प्रकार स्वीकार हो सकती है। मनुष्य तो मनुष्य, पशु-पक्षी भी पराधीन नही रहना चाहते। जिन्हे हग पराधीन रखकर अपना शौक पूरा करते हैं वे हृदय मे अवश्य दु ख अनुभव करते है।

स्वाधीनता मानव जीवन के विकास का स्वप्न है। स्वाधीन रहकर ही मनुष्य जीवन का निर्माण करता है। इतिहास साक्षी है कि स्वाधीन रहकर ही मनुष्य ने कला साहित्य, दर्शन आदि का विकास किया है। स्वाधीनता के लिए ही मनुष्य लडा है। जहाँ वह सफल भी हुआ है और असफल भी। और तो और जो हवा विजली के पखे द्वारा प्राप्त होती है उसमे भी वह आनन्द नही है जो स्वच्छ पवन मे है। क्योकि विजली का पखा पराधीन है। इससे यह स्पष्ट है कि स्वाधीनता मे एक ऐसा आन्तरिक गुण होता है जो मानव को ही नहीं, पशु-पक्षी जड, चेतन सभी को प्रसन्न करता है।

इसी स्वाधीनता के लिए प्रत्येक देश के निवासियो ने प्रयत्न किए। भारतवर्ष भी अपनी कुछ भीतरी कमजोरियो के कारण एक लम्वे अर्से तक पराधीन रहा था। जव धीरे-धीरे स्वाधीनता की लगन लगी तव युद्ध छिडा। अनेक प्रकार के कष्ट सहने के वाद भारत को सन् १९४७ मे स्वतन्त्रता प्राप्त हुई।

अब भारतवर्ष को स्वाधीन हुए १७ वर्ष व्यतीत हो गए हैं। इन वर्षो मे अनेक समस्याएँ भारत के सामने आई। एक सीधी सी बात है कि हजार वर्ष के अभाव थोडे दिनो मे पूरे नही हो सकते। फिर भी यह कहने मे कोई सकोच नही कि भारत ने कई क्षेत्रो मे बहुत शीघ्र उन्नति की है।

इन वर्षों का सबसे महत्वपूर्ण अग पचवर्षीय योजनाए हैं। इन योजनाओ को पूरा करने के लिए यद्यपि विदेशो से ऋण भी लिया है फिर भी यह सतोष की बात है कि ऋण लेने से लाभ हुआ है। नदी घाटी योजना, बाध निर्माण आदि अनेक कार्य हुए हैं। भाखडा नाँगल बाँध बने हैं। इनसे भारतीय खेती बाडी को लाभ पहुँचा है और बिजली आदि को प्राप्त करने मे सहायता मिली है।

स्वाधीन होने के बाद छोटे बडे उद्योगो मे उन्नति हुई है। शिक्षा और व्यापार विज्ञान और निर्माण आदि क्षेत्रो मे नए प्रयोगो द्वारा कार्य हो रहा है। यद्यपि कई विचारको के अनुसार ये योजनाए सफल नही हुई है फिर भी किन्ही अशो तक सफल ही कही जाएँगी।

प्रथम पचवर्षीय योजना के पीछे रूस और अमेरिका की प्रेरणा थी। १९५२ से १९५६ तक प्रथम पचवर्षीय योजना की अवधि रही। इस पर २,२४२ करोड रुपये खर्च हुए। यह खर्च नदी घाटी योजना मे अधिक अन्न उपजाओ, शरणार्थियो की समस्या, खाद वितरण और भूमि की सिंचाई आदि की व्यवस्थाओ मे हुआ। १९५६ से दूसरी पचवर्षीय योजना का प्रारम्भ हुआ। इसमे खेती के सुधार, उद्योगो की स्थापना, व्यवसाय मे उन्नति, ग्राम क्षेत्र की उन्नति, परिवार नियोजन आदि कार्यक्रम लिये गए। इस व्यवस्था के लिए ५,६०० करोड से अधिक खर्च जो विदेशी ऋण और अतिरिक्त करो से पूरा हुआ। परन्तु यह योजना पूरी न हो सकी कारण कि देश पर और प्रकार की आपत्ति जैसे चीन और पाकिस्तान का सीमातिक्रमण, बाढ और सूखा आदि आ पडे। इससे सरकार का व्यय बढ गया। विदेशो से अन्न की सहायता लेनी पडी। इस योजना को पूर्ण सफलता इसीलिये न मिल सकी।

दूसरी योजना मे दुर्गापुर, भिलाई, राउरकेला मे इस्पात के विशाल कारखाने स्थापित किए गए। इस प्रकार अनेक क्षेत्रो मे सफलता मिली।

अब १९६१ से तीसरा पचवर्षीय योजना का आरम्भ हुआ है। परन्तु इस योजना को सफल बनाने के लिये आर्थिक मफलता की आवश्यकता है। सरकार इस ओर प्रयत्नशील है परन्तु अभी चीन से सीमा विवाद चल रहा है। इन दिनो प्रतिरक्षा पर अधिक व्यय हो रहा है। परन्तु इन सफलताओ के पीछे हमारा अपना भी चरित्र होगा तभी काम पूरा होगा।

आज भारत की जनता सन्तुष्ट नही है। मन्दान्ध नौकरशाही मे आपसी असहयोग है। अधिकारियो मे वेईमानी और चरित्रहीनता है इससे बहुत से काम जो आसानी से हो सकते हैं तथा जिन से भारत मे सुख और शान्ति का वातावरण उत्पन्न हो सकता है—नही हो पा रहा। इसके साथ यह भी कहना होगा कि इन आँकडो मे भी बहुत सी बातें वास्तविकता से दूर हैं। अभी कुछ योजनाएँ पूरी और कुछ अधूरी ही थी कि अचानक २७ मई १९६४ को प्रधान मत्री जवाहरलाल नेहरू का स्वर्गवास हो गया। उनके बाद श्री लाल बहादुर शास्त्री ने कार्यभार सम्भाला है और उन्होने योजनाओ की रूपरेखा के वारे मे वित्त मन्त्री से सुझाव मागे हैं।

इन सबके वावजूद यह एक निश्चित और निस्सदेह सत्य है कि स्वाधीन होने के बाद भारत ने कई रूपो मे सफलता प्राप्त की है। निश्चय ही भारत का भविष्य उज्जवल है।



स्वदेश के प्रति हमारा कर्त्तव्य

किसी राष्ट्रसेवी ने कितने मान से यह वाक्य कहा है —

"जननी जन्म भूमिश्च स्वर्गादपि गरीयसी"

'माँ और मातृभूमि स्वर्ग से भी श्रेष्ठ है'।

जिस मिट्टी की गोद मे जन्म किया दूध, पानी, अन्न, गर्मी, सर्दी, बरसात, सुख-दुःख लेकर हसे, रोये, खेले, कूदे उस मातृभूमि को पाकर जिस व्यक्ति का हृदय करुणा और श्रद्धा के आँसुओ से नही धुलता उस कृतघ्न मनुष्य को किस श्रेणी मे रखा जायगा यह कौन बता सकता है। देशभक्त वाल्टरस्कॉट ने अपनी एक कविता मे इस प्रकार विचार व्यक्त किये हैं —

Breathes there the man, with soul so dead
Who never to himself hath said,
This is my own, my native land,
Whose heart hath ne'er within him burned
As home his foot steps he hath turned,
From wandring on a foreign strand,
if such there breath, go mark him well,
For him no Ministral reptures swell,
High though his titles, proud his name,
Boundless his wealth as wish can claim,
Despite those titlies, power and pelf,
The wretch, concentredall himself,
Living, shall forfeit fair renown,
And doubly daying, shall go down,
To the vile dust from whence he sprung,
Unwept, unhonoured and unsung

समय सदा करवट बदलता है। इस सोने से भारत को ऐसी नजर लगी कि विदेशियो के कठोर हाथो ने इस अमृत फल को सारी शक्ति से निचोडा और रस पिया। भारतमाता अपने घर मे परदेशिनी हो गई। माता के साक्षी पुत्रो ने माँ के बन्धन तोड़ने के लिये प्राणो की बाजी लगा दी यहाँ अनेक

सस्कृतियाँ आई और भारतीय सस्कृति ने ऐसा सहेला गाँठा कि वे भी भारतीय सस्कृति का अटूट अग वन गई। ग्रीक, शक, हूण, यूनानी, अग्रेजी न जाने कितनी सस्कृतियाँ आई। भारत माता के पुत्र जागे। सूर और तुलसी ने उनके हृदय को जगाया तो भूपण कवि ने भुजाओ मे वीर रक्त का सचार कर दिया। भारतेन्दु, मैथिलीशरण गुप्त और दिनकर आदि ने 'भारत दुर्दशा' का वर्णन कर 'भारत भारतीय' द्वारा 'नगपति हिमालय' के सामने हार्दिक व्यथा प्रकट की।

हर काली रात के वाद प्रात काल की प्रभा मुसकराती है। सघर्षों के वाद परिणाम हुआ कि देश स्वतन्त्र हुआ। देश की स्वतन्त्रता वरदान वनकर उपस्थित हुई। इस वरदान मे देश की तीस करोड जनता की उन्नति छिपी हुई थी। हम एक नये प्रभात मे जागे हैं।

जहाँ प्रसन्नता आती है वहा उत्तरदायित्व भी साथ आते हैं। अव समय आ गया है कि हमे ज्ञान होना चाहिए कि हमारा स्वदेश के प्रति क्या कर्त्तव्य है। किमी भी स्वतन्त्र देश का नागरिक अपने देश के विकास मे सहयोगी नही है तो वह देशद्रोही और कृतघ्न है। अव व्यक्ति और समाज का प्रश्न नही है, अव समूचे राष्ट्र की लाज हमारे हाथ है। आज सारा ससार हमारी ओर आँख लगाए है। हमारी थोडी सी उदासीनता और आलस्य हमारे इतिहास पर काली स्याही विखेर सकता है।

हम स्वाधीन भारत के एक सच्चे नागरिक हैं। नागरिक होने के नाते इस देश की सामाजिक, राजनीतिक, वाहरी और भीतरी उन्नति और अवनति के लिए हम उत्तरदायी हैं। हमारा प्रथम कर्त्तव्य है कि अपनी प्राचीन सस्कृति की सेवा और त्याग के आदर्श को अपनाएँ। वैसे व्यक्ति का स्वार्थ नष्ट न होना चाहिए। परन्तु व्यक्ति के स्वार्थ की अपेक्षा परिवार की, परिवार के सुख की अपेक्षा समाज और समाज की अपेक्षा राष्ट्र की उन्नति को श्रेष्ठ समझना चाहिए।

हमारा कर्त्तव्य है कि जाति और वर्ण के वधनो को तोड कर मनुष्य को गले लगाएँ। धूल मे पडे फूल को उठा कर माला मे गूथे और हृदय पर

स्थान दें। मध्ययुग की अशिक्षित रूढिवादी परम्परा ने मानव के विकास में जो वाधाएँ उपस्थित की हैं उन्हे हटाएँ। मनुष्य का परखने का दृष्टिकोण आधुनिक हो। आधुनिक से अभिप्राय यह है कि आज के जीवन को देखते हुए यथासम्भव प्रगति और विकास मे सहयोग प्रदान करे।

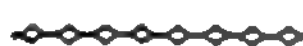
प्रत्येक मनुष्य का कर्त्तव्य है कि वह देखे कि कौन सी वह भावना है जो मनुष्य को मनुष्य से अलग कर रही है। यदि यह भावना सत्य से प्रेरित नही है तो कष्ट उठा कर भी उसका त्याग कल्याणकारी सिद्ध होगा। अभी हमारे देशवासी इस कष्ट को सहने के अभ्यासी नही है। हमे यह मानने में विलकुल सकोच नही होना चाहिए कि हमारा साथी हमारे प्रति वफादार नही है। ईमानदारी, जिम्मेदार और वफादारी का जो रूप आना चाहिए अभी हम उससे दूर हैं। आये दिनो प्रत्येक व्यक्ति अपने व्यक्तिगत जीवन मे यह अवश्य अनुभव करता है कि आज प्रयत्न करने पर भी असली वस्तु को पाना कठिन है। क्योकि ऐसा सोचने वाले स्वय ईमानदार नही है।

स्वदेश के प्रति कर्त्तव्य की रुचि मे अनेक नाम गिने जा सकते हैं। जीवन के अनेक रूप हैं। इस अनेकता मे जीवन का सौन्दर्य है। यह अनेकता मानवता का शृगार है। हमे किसी जाति की सभ्यता से चिडना नही चाहिए। सहनशीलता का गुण भारतीय सस्कृति का चिरप्रसन्न गुण है। जाति की एकता तभी हो जवकि सवका लक्ष्य एक हो। एक झण्डा, एक देशगीत, एक मानवीय स्वर होना चाहिए। महाभारत के प्रसग मे अर्जुन के मुख से कैसी राष्ट्रीय एकता की वात कहलाई गई है —

वय पंच, वय पच, वय पच, शत च ते।
अन्यै सार्कं विरोधे तु वय पचोत्तर शतम् ॥

हम पाच हैं। परन्तु शत्रुओ के सामने हम एक सौ पाँच हैं। आज हमारे देश को ऐसी एकता की आवश्यकता है। हम सारे आपसी विरोध छोडकर मानवता के मन्दिर मे आतमा का दीपक जलायें। चाहे पथ हमारे भिन्न हो परन्तु लक्ष्य एक ही हो। हम जिस रूप से अर्थात् धर्म, अर्थ, साहित्य

कला, विज्ञान किसी भी क्षेत्र मे रुचि रखने वाले हो हमारा कर्त्तव्य है कि देश की सेवा करें। बडे-बडे माहनुभाव तिलक, गोखले, महात्मा गाँधी, सुभाष और पटेल के मस्तिष्क मे देश की जो मूर्ति बसी हुई थी वही मूर्ति स्थापित करनी चाहिये। जनतन्त्र के युग मे चुनाव के समय ध्यान रखे कि कोई पाखण्डी और लोलुप व्यक्ति शासन का आधार प्राप्त न कर सकें। शिक्षा के क्षेत्र मे अध्यापको का कर्त्तव्य है कि सुयोग्य नागरिकता की शिक्षा दें। सारांश यह है कि मनुष्य को स्वदेश से प्रेम हो। सारा जीवन देश के अर्पण हो।



हिन्दी शिक्षा के प्रसार के उपाय

प्रत्येक राष्ट्र अपने साहित्य से गौरव को प्राप्त होता है। उस साहित्य से जोकि उस राष्ट्र की अपनी भाषा मे हो। सौभाग्य से यह अवसर हिन्दी को प्राप्त हुआ है कि आज वह राष्ट्रभाषा के रूप से स्वीकार करली गई है। इसको यह रूप इसके गुणो के आधार पर दिया गया है जिससे उसका प्रचार भी शीघ्र हो सके। हिन्दी के साथ राष्ट्रभाषा पद के लिए उर्दू के साथ-प्रचार अग्रेजी भी चुनाव मे खडी हुई है परन्तु हिन्दी की विजय निश्चित है।

केवल राष्ट्रभाषा होने तक ही गौरव नही है। अभी उसके लिए कई कठोर आवश्यक कार्य पडे हैं। उनमे सबसे पहला प्रश्न यह है कि हिन्दी का प्रसार किस प्रकार हो। वास्तव मे यह समस्या स्वभाविक भी है। क्योंकि हिन्दी अब किसी विशेष प्रान्त या समाज की निजी भाषा नही है वह सम्पूर्ण राष्ट्र की भाषा है उसका और उसके साहित्य का ज्ञान होना हर प्रकार अनिवार्य है। इस दृष्टि से इस ओर प्रयत्न भी हो रहे है।

भारतवर्ष के प्रत्येक विश्वविद्यालय के पाठ्य-क्रम मे हिन्दी को अनिवार्य-विशेष रूप मे स्वीकार किया जाय। इस दृष्टि से कितने ही विश्वविद्यालयो ने अपने पाठ्यक्रम मे हिन्दी को इस प्रकार की मान्यता दी है। इलाहाबाद और पजाब आदि विश्वविद्यालयो ने हिन्दी की प्रथक्-प्रथक् रूप से परीक्षाएँ चलाकर हिन्दी के प्रचार मे पर्याप्त सहयोग दिया है। शिक्षा विभाग इस ओर पर्याप्त ध्यान दे रहा है। इसके लिए आवश्यक है कि पाठ्यक्रम मे हिन्दी की जो पुस्तकें स्वीकृत हो वे सरल और हिन्दी साहित्य की ज्ञान-वर्धक हो। अभी शिक्षा-प्रणाली मे इस प्रकार के परिवर्तनो की आवश्यकता है कि छात्र की बुद्धि का विकास ध्यान मे रखकर पुस्तकें लिखी जायें।

भिन्न-भिन्न प्रान्तो के लिये हिन्दी का पाठ्यक्रम उसी दृष्टि से निर्णीत किया जाय जिससे इस भापा के प्रति रुचि जागृत हो। यद्यपि भाषा विज्ञान की दृष्टि से हिन्दी किसी प्रान्तीय भाषा से सम्बन्धित नही कही जा सकती। किसी भापा मूल रूप मे सस्कृत और सस्कृत की प्रधान पुत्री हिन्दी के सस्कार अवश्य मिलेंगे। इसलिए उन्ही सम्बन्धो का आधार लेकर साहित्य की रचना हो। यह सस्कार इस प्रसार मे अत्यन्त सहायक होगा। यह सस्कार प्रारम्भ से पडने चाहिये।

प्रत्येक प्रान्त मे हिन्दी साहित्य सम्मेलन जैसी सस्थाएँ स्थापित होनी चाहिएँ। इन सस्थाओ के द्वारा साधारण जनता के दैनिक व्यवहारो मे हिन्दी के प्रयोग पर बल दिया जाय। सामाजिक प्रत्येक कार्य अपनी प्रान्तीय भापा के साथ-साथ हिन्दी मे भी होना चाहिये। कला के सहारे हिन्दी भाषा का प्रचार सरलता से हो सकता है। क्योकि हम देखते हैं कि अन्य प्रान्तो मे हिन्दी बोली भले ही न जाती हो परन्तु उसे समझ प्राय अवश्य लेते हैं। इस दृष्टि से हिन्दी शिक्षा सरल हो सकती है। कलात्मक रूप से हिन्दी शिक्षा और भी सुगम होगी। प्राय यह देखा जा रहा है कि आज कल शिक्षा की दृष्टि मे रखकर जो प्रारम्भिक पुस्तकें छप रही हैं उनमे वे ही अधिक प्रचलित हैं जो कलात्मक हैं। बालक ऐसी पुस्तको को चाव से पढते हैं। हिन्दी की

शिक्षा के लिये मनोविज्ञान का अध्ययन आवश्यक है। इसलिए ऐसी ही शिक्षा-प्रणाली होनी चाहिए। प्रदर्शिनी आदि का आयोजन भी लाभदायक होता है, क्योकि इससे मानसिक और कलात्मक रुचि का विकास होता है।

भारत सरकार भी इस ओर ध्यान दे रही है। हिन्दी-शिक्षा के लिए नि शुल्क पढाने की व्यवस्था होनी चाहिए। अहिन्दी भाषी प्रान्तो मे तो और भी आवश्यक है। सरकारी कर्मचारियो को भी हिन्दी का ज्ञान होना आवश्यक ही नही, अनिवार्य कर देना चाहिए। सरकारी सभी कार्य हिन्दी मे होने चाहियें।

श्री पुरुषोत्तमदास टण्डन, गोविन्ददास आदि महान् पुरुषो ने इस ओर पर्याप्त कार्य किया है। राष्ट्रभाषा प्रचार समिति ने दक्षिण मे हिन्दी का पर्याप्त प्रचार किया है। अहिन्दी भाषी प्रान्तो से कई हिन्दी पत्र निकल रहे हैं उनमे कितने ही पत्र अपना महत्वपूर्ण स्थान रख चुके हैं। हिन्दी शिक्षा का प्रसार करने के लिए हिन्दी परीक्षाओ को भी मान्यता प्राप्त होनी चाहिए।

पिछले दिनो पजाब मे हिन्दी आन्दोलन चला। उससे यह स्पष्ट हो गया है कि अभी हिन्दी के प्रति लोगों मे उदासीनता है। हिन्दी शिक्षा के प्रसार का यह अभिप्राय बिल्कुल नही है कि और भाषाएँ विकसित न हो। अभिप्राय यह है कि प्रान्तीय भाषाओ को भी प्रधानता होनी चाहिए ताकि उसमे आदर्श साहित्य का निर्माण हो परन्तु हिन्दी को राष्ट्रभाषा का महत्व मिलना चाहिए। इससे यह भी लाभ होगा कि प्रान्तो मे पारस्परिक भेद-भाव नष्ट होगा। हिन्दी के सहारे एक प्रान्त दूसरे प्रान्त के सम्पर्क मे आएगा। विचार रहन-सहन, सस्कृति, सभ्यता आदि का परिचय भाषा के साहित्य मे मिलता है। इसलिए प्रत्येक प्रान्त मे हिन्दी शिक्षा का अनिवार्य होना आवश्यक है

साराश यह है कि हिन्दी शिक्षा की अनिवार्यता उसके प्रसार का मुख्य साधन है। जब हम और देशो की भाषा और सस्कृति का परिचय पाते हैं तो हमे यह गौरव अनुभव होता है कि भारत की हिन्दी एक ऐसी महत्वपूर्ण भाषा

है जिसका कि विदेशी भी अध्ययन करना चाहते है। विदेशो मे भी अनेक विश्वविद्यालयो मे भी हिन्दी एक विषय के रूप मे स्वीकृत है। हमे प्रसन्नता हुई कि रूस के सास्कृतिक प्रतिनिधि वारानिकोव ने जब हिन्दी मे सुन्दर भाषण दिया। इसलिए सर्वप्रथम यह आवश्यक है कि हम जनता मे हिन्दी शिक्षा के प्रति रुचि जागृत करें। हिन्दी को सरल और ऐसा बनायें जो किसी भी द्वेष से रहित हो। वह भारत की आत्मा को प्रकट करने वाली एक-मात्र भाषा है। राष्ट्रभाषा के साथ तो सोने मे सुगन्ध आ गई है। हिन्दी-शिक्षा आधुनिक शिक्षा प्रणाली का अनिवार्य और आवश्यक अग होना चाहिए। हिन्दी का प्रसार परस्पर के प्रेम और सहनशीलता से सम्भव है। जहाँ तक हो वहाँ तक इसको व्यापक रूप देना चाहिए।

यह सर्वथा सत्य है कि भाषा वही प्रसिद्ध और लोकप्रिय हो सकती है जिसमे दूसरी भाषाओ के शब्दो को पचाने की सामर्थ्य हो। इसलिए हिन्दी शिक्षा के प्रसार के लिए यह भी आवश्यक है कि हिन्दी का क्षेत्र सकुचित न हो। भाव यह है कि हिन्दी का ऐसा रूप हो जो सर्वसाधारण के लिये उपयोगी हो। यह नही भूलना चाहिए कि हिन्दुस्तान हमारा देश है और हिन्दी हमारी भाषा है।



राष्ट्रभाषा का महत्त्व

राष्ट्रभाषा किसी देश के इतिहास एव सस्कृति की वाणी है, जो वहाँ के जन-जन को अपना मनोहर सदेश सुना कर एक सूत्र मे बाँध देती है। वह सब भाषाओ की जो उस देश मे बोली जाती है प्रतिनिधि होती है, एव वहाँ की राष्ट्रीयता की प्रतीक होती है। यह राष्ट्रभाषा का प्रश्न जब भारत के स्वतन्त्र होने के पश्चात् उसके समक्ष आया तो उसने एक जटिल समस्या का रूप

धारण कर लिया। उस समस्या को सुलझाने के लिए कई लोगो ने उपयोगिता का प्रस्ताव रखा। इस चुनाव के मैदान मे हिन्दी, अग्रेजी हिन्दुस्तानी तथा अन्य भापायें समक्ष आयी। इन भपाओ मे हिन्दी का पलडा भारी था। हमारी सविधान सभा ने हिन्दी का सम्मान रखा और वही राष्ट्रभापा वनी।

लेकिन इस पद को प्राप्त करने के लिए उसे जिन-जिन सघर्षों का सामना करना पडा उनसे परिचित होना हमारे लिये अनिवार्य-सा ही है।

हिन्दी से पूर्व हमारे यहाँ अग्रेजी, उर्दू तथा फारसी आदि का प्राधान्य था। इन सब वातो से यह कह सकते है कि हो सकता है कि हिन्दी का विकास इसलिये कुछ रुका रहा हो, परन्तु तब भी हमे हिन्दी के कवि, साहित्यकार तथा रचनाएँ अत्यधिक मात्रा मे दृष्टिगोचर होती हैं। यह भी निश्चित है कि हिन्दी सर्वांगीण रूप से हमारे धर्म, सस्कृति, सभ्यता एव नीति की परिचायक है।

भारत जो कि विभिन्न भाषाओ का केन्द्र कहा जाता है वहाँ प्रादेशिक भाषाएँ भी प्रधानता रखती हैं और शेप छोटी-छोटी शाखायें कही जा सकती हैं। अग्रेजी जहाँ हमारे स्वाभिमान को ठेस पहुँचाती है वहाँ वीती दासता की याद भी दिलाती है। सस्कृतजन्य भाषाओ मे हिन्दी ही सबसे अधिक प्रिय एव प्रचलित है, जिसे भारत के करोडो लोग वोलते तथा समझते है। वैसे यदि न्याय पूर्वक देखा जाय तो वही भापा राष्ट्रभापा की अधिकारिणी है, जिसका कि प्रचार व्यापक हो।

यद्यपि सरलता की दृष्टि से भी देखा जाय तो हिन्दी बहुत सरल भाषा है। इसका उच्चारण भी सरल है। दैवी भापा सस्कृत की उत्तराधिकारिणी होने पर यह अपने आप समझ मे आने लगती है। यही कारण है कि अग्रेज भी भारत आने पर इसे जल्दी सीख सके। इन सव गुणो के साथ-साथ इसकी एक विशेषता यह भी है कि इसमे अन्य भापाओ के शव्द आसानी से समा जाते हैं, कौर जँचने भी लगते है, जवकि दूसरी भाषाओ मे ऐसा नही है।

देवनागरी लिपि का नाम जो हिन्दी को प्राप्त है वह भी एक आभूपण

के समान है। वह जितनी सरल है, उतनी वैज्ञानिक भी। देवनागरी मे जो हम बोलते हैं, वही लिख भी सकते हैं, अग्रेजी मे ऐसा नही। इसमे लिखना कुछ और बोलना कुछ और होता है। हिन्दी मे यह विशेषता है कि जो उच्चारण हम यहाँ करते हैं, वही हजार मील दूर पर भी होगा। परन्तु दूसरी भाषाओ मे ऐसा सम्भव नही। इसके साथ ही आज जितने साधन हिन्दी को प्राप्त है उतने और किसी भारतीय भाषा को नही। डाक, तार, प्रेस, सवाद-वहन, टाइप, शार्टहैंड, अक इन सब मे हिन्दी का प्रयोग खुला होता है। वास्तव मे राष्ट्रभाषा को इन वस्तुओ की जरूरत है कि व्यवस्था ठीक चल सके। सभी क्षेत्रो मे हिन्दी का प्रभाव बढता चला जा रहा है। शिक्षा-क्षेत्र मे हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग एव पजाब यूनिवर्सिटी की हिन्दी परीक्षाओ मे प्रतिवर्ष लाखो विद्यार्थी बैठते हैं इसीसे उसकी व्यापकता प्रकट होती है। विभिन्न वैज्ञानिक, सैनिक, मैडिकल आदि शब्दो के हिन्दी अनुवाद हो चुकने पर इसका महत्व बहुत बढ गया है।

अन्य क्षेत्रो की भाँति साहित्यिक क्षेत्र मे भी हिन्दी-भाषा किसी से कम नही है। इसका साहित्य एक ऐसे ढग से बना है कि वह मानव-जीवन के प्रत्येक पहलू पर प्रकाश डालता है। वीर रस के कवि "चद" और "भूषण" जहाँ मानव रक्त को अपनी कविता के प्रभाव से गर्म कर देते हैं वहा सूर, तुलसी, मीरा, विद्यापति, कबीर जैसे भक्त कवि अह की भावना को नष्ट करके विनीत भावना को लिए हुए आध्यात्मिक मार्ग दिखाते हैं। बिहारी केशव एव देव ने भी अपने रीति काव्यो द्वारा हिन्दी ससार का गौरव बढाया हैं। तथा सुधारवादी भारतेन्दु, प्रेमचद ने जनता को साहित्य द्वारा प्रकाश हैं। प्रसाद, द्विवेदी, निराला, सुदर्शन, पत, महादेवी, जैनेन्द्र जैसे विद्वानो ने आज हिन्दी साहित्य को विश्व साहित्य बना दिया है। इस महान् निधि ने हिन्दी को निर्विवाद रूप से राष्ट्रभाषा बना दिया।

कुछ लोगो का हिन्दी तथा हिन्दुस्तानी के प्रश्न को समक्ष रखते हुए यह विचार रहा है कि लिपि चाहे नागरी हो, परन्तु शेष एसी मिली-जुली हो जो हिन्दुस्तानी कहाए। परन्तु ऐसा करने मे भाषा की स्वाभाविकता नष्ट हो

जायेगी । आज सरल हिन्दी के नाम पर सरकार ने जो रुख अपनाया है वह वास्तव मे दासता और हमारी मानसिक दुर्बलता का सकेत है । आज की हिन्दी बगालियो एव मद्रासियो के निकट है, क्योकि वह सस्कृतमय है एव सस्कृत ही हिन्दी और अन्य भाषाओ को मिलाने वाली भाषा है । अत यह सिद्ध होता है कि शुद्ध और सरल सस्कृतनिष्ठ हिन्दी ही राष्ट्रभाषा होनी चाहिये ।

हमारे कुछ दक्षिण भारतीय भाई हिन्दी की बजाय अग्रेजी ही चाहते है । यह बात वास्तव मे उनकी दासता को प्रकट करती है । अग्रेजी किसी तरह हिन्दी से सरल नही । जो लोग केवल १५० साल से परिचित अग्रेजी सीख सकते हैं क्या ये सदियो से चली आई स्वकीय हिंदी भाषा नही सीख सकते ? हमे चाहिये कि हम शीघ्र ही राष्ट्रभाषा के स्थान पर हिन्दी को विराजमान कर सकें ।

हिन्दी राष्ट्रभाषा बन गई पर अब भी उसके अधिकार सम्पन्न होने मे काफी देर है । अदालतो, सरकारी कार्यों, व्यापार आदि मे अभी उसको पूरी मान्यता देनी है । ऐसा न हो कि कही अग्रेजी को निकालने मे १५ के बजाय तीस वर्ष लग जाएँ । प्रत्येक भारतीय का कर्त्तव्य है कि वह हिन्दी की प्राणपण से सेवा करें चाहे वह कोई भी भाषा-भाषी हो । हिंदी के राष्ट्रभाषा बनने पर भी शेष प्रातीय भाषाएँ ससम्मान जीवित रह कर विकास कर सकती है । हिन्दुस्तान हमारा है, हिन्दी हमारी भाषा है । यह प्रश्न भावना का है तर्क का नही, तथा फ्रांस की फ्रेंच, रूस की रशियन, इगलिस्तान की इगलिश, वैसे हिन्दी ही हिन्दुस्तान की राष्ट्रभाषा है ।

ससार की सबसे ज्यादा बोली जाने वाली बारह साहित्यक भाषाओ मे यूनेस्को ने हिन्दी को चौथा और बगला को आठवाँ स्थान दिया है । यूनेस्को के 'पुस्तको मे क्रान्ति' नामक एक प्रकाशन मे उन बारह भाषाओ की सूची दी गई है जिन्हे ५ करोड से ज्यादा अधिक व्यक्ति बोलते है । महत्त्व के आधार पर इन भाषाओ को निम्न क्रम दिया गया गया है । चीनी, अग्रेजी, रूसी, हिन्दी, स्पेनिश, जर्मन, जापानी, बगला, अरबी, फ्रेंच, पुर्तगाली, और इटालवी ।

समाचार पत्रों से लाभ

मनुष्य अपने जीवन तक कभी सीमित नही रहा। यह सदा अपने जीवन के अतिरिक्त आस पडोस, गाँव, नगर और देश-विदेश से परिचित होना चाहता है। प्राचीन युग मे इस प्रकार की सुख सुविधाएं मनुष्य को प्राप्त नही थी। उस समय मनुष्य केवल अपने ही सुख दु ख तक सीमित रहकर प्रयत्न करता रहा। विज्ञान के इस युग मे आज यह सुविधा भी मनुष्य को प्राप्त हो गई है। आधुनिक जीवन मे समाचार पत्र दैनिक जीवन का अग वन गया है। प्रात काल उठते ही हमारी आँखे समाचार पत्र खोजती हैं। हमारी प्रवृत्ति हो गई है कि हम सभी समाजिक, राजनीतिक, साहित्य और भी जीवन से सम्वन्ध रखने वाली गतिविधियो से परिचित होते हैं।

समाचार पत्र पढने वाले वहुत से इसके इतिहास को नही जानते होगे। थोडे से मूल्य मे एकदम सवेरे जिस समाचार पत्र को पढते हैं उसके पीछे कितने कष्ट हैं। शरीर को कटाने वाली सर्दी, जीवन को पिघलाने वाली गर्मी और मूसलाधार वर्षा मे हम अवाधगति से समाचार पत्र द्वारा अपनी जिज्ञासा शान्त करते है। इस प्रकार समाचार पत्रो के वारे मे पूर्ण रूप से जानकारी आवश्यक है।

जहाँ तक समाचार पत्र के इतिहास का प्रश्न है। ऐसा कहा जाता है कि सोलहवी शताब्दी मे चीन मे 'पेकिंग गजट' प्रकाशित हुआ। धीरे-धीरे विज्ञान के क्षेत्र मे उन्नति हुई और प्रेस की स्थापना हुई। थोडा-सा प्रेस का कार्य है। मुख्य और गौण समाचारो पर उसकी दृष्टि होती है। भारतवर्ष मे वडे-वडे सम्पादक हो गये हैं। आजकल के पत्रकार अपना कर्त्तव्य भूलकर व्यक्तिगत स्वार्थ और पार्टी-वाजी के कुचक्र मे फस गए हैं।

समाचार पत्र द्वारा जनता का अत्यन्त हित साधन होता है। प्रत्येक देश के समाचार पत्र वहाँ की जनता के प्रतिनिधि होते हैं। जनता मे विचारो को फैलाने के लिए समाचार पत्र सबसे अच्छा साधन है। एक व्यक्ति का कष्ट समाचार पत्र मे प्रकाशित होते ही सर्वसाधारण का कष्ट बन जाता है। जो विचार शासको तक पहुचाना चाहते हैं उसे पहुचाने के लिए समाचार पत्र का सहारा लिया जाता है।

जब तक भारत स्वतन्त्र नही हुआ था उस समय तक स्वतन्त्रता आन्दोलन को ऊँचे पैमाने पर ले जाने मे समाचार पत्रो ने पर्याप्त सहायता की। नेताओ के विचार जानकर जनता अपना कार्यक्रम बनाती थी। समाचार पत्र मे प्रकाशित लेख के आधार पर ही महात्मा तिलक को यातना सहनी पडी थी। इस प्रकार सबमे बडा लाभ यह है कि इन समाचार पत्रो के द्वारा विचारो का आदान-प्रदान होता है।

जनतत्र के युग मे समाचार पत्रो का और भी महत्व बढ गया है। जनता द्वारा जनता के लिए जनता के शासन मे इस बात की अत्यन्त आवश्यकता है कि जनता शासन की कमियो की पूर्णरूप से आलोचना करे। समाचार पत्रो को स्वतन्त्रता होती है कि वे सत्य के आधार पर किसी भी विचारधारा की आलोचना कर सकते हैं। जनता के जीवन के लिए समाचार-पत्र बहुत कुछ अशो तक उत्तरदायी हैं। क्योकि जनता के विचारो का प्रतिबिम्ब समाचार पत्रो पर पडता है और समाचार पत्रो के द्वारा फैलाए गए विचारो की छाया जनता के मन पर पडती है।

समाचार पत्र से लाभ यह है कि साधारण जनता का ज्ञान बढता है। क्योकि समाचार पत्रो मे राजनीतिक, सामाजिक और साहित्यिक चर्चा होती है। इसके द्वारा हमे आत्मिक, बौद्धिक ज्ञान और आनन्द की प्राप्ति होती है। कविता नाटक कहानियो के द्वारा मनोविनोद और आधुनिक साहित्य से परिचय होता है। इनके द्वारा समाज मे सुधार की भावना भी जागृत होती है।

समाचार पत्र के द्वारा हमारी कितनी ही आवश्यकताओ की पूर्ति हो जाती है। समाचार पत्रो मे हमारे दैनिक जीवन की आवश्यकताओ को पूरा करने वाली वस्तुओ के विज्ञापन प्रकाशित होते हैं। इनके द्वारा कभी-कभी बडी कठिनाइयाँ दूर हो जाती है। आजकल विवाह आदि के विज्ञापन भी प्रकाशित होते हैं जो सामाजिक सम्वन्धो के लिए वडे सहायक होते हैं। वस्तुओ के भाव द्वारा व्यापारियो को कई प्रकार की सरलता प्राप्त हो जाती है।

आजकल समाचार पत्र जीविका का साधन बन गया है। एक प्रकार से यह व्यापार हो गया है। कितने प्रकाशक अपना व्यापार वनाकर धनी हो गए है। समाचार पत्रो मे अनेक मनुष्य काम करते है। इससे उनकी जीविका चलती है। अव तो सरकार ने पत्रों मे काम करने वाले कर्मचारियो के लिए नियम वना दिए है जिनमे उन्हे वडा लाभ हुआ है।

इस समय बहुत से समाचार पत्र प्रकाशित हो रहे हैं। इससे लाभ यह है कि हम भिन्न-भिन्न विरोधी दलो के विचारो का ज्ञान सहज मे ही प्राप्त कर लेते है। विरोधी दल के बिना किसी शासक की गतिविधियो मे सुधार नही होता। प्राय प्रत्येक दल अपना पत्र रखता है। पत्र मे प्रकाशित विचारो के आधार पर दूसरे देश के वारे मे नीति निर्धारित करने मे सहायता मिलती है।

प्राय वहुत से लोग समाचार पत्रो के व्यसनी हो जाते हैं। वे इसके पीछे खाना पीना और आवश्यक कार्य भी छोड देते हैं। सच तो यह है कि व्यसन तो कोई भी वुरा है परन्तु समाचार पत्र द्वारा समाचार प्राप्त करने की भावना वुरी नही है। इसके लिए थोडा समय अवश्य देना चाहिए। हमारे समाज मे अव भी वहुत से ऐसे मनुष्य मिल जायेंगे "जिनहिं न व्यापै जगत-गति"। ऐसे सकीर्ण विचार वाले मनुष्यो के लिए समाचार पत्र सिवाय रद्दी के और कोई लाभ नही पहुँचा सकते।

शिक्षित समाज को समाचार पत्र अधिक लाभ पहुँचाते हैं। हमारे समाज मे अल्पज्ञ मनुष्य समाचार पत्र पढते-पढते लड पडते हैं। समाचार पत्र से लाभ उठाना चाहिए। दो, ढाई या तीन आने में हम समस्त विश्व के

समाचार प्राप्त कर लेते है। आज का जीवन सघर्ष की कहानी कह रहा है। विशाल जीवन के अनेक रूप हैं, अनेक समाज और जातियाँ हैं। विकासशील बुद्धि वाले मनुष्य का जिज्ञासु होना नितान्त स्वाभाविक है।

अत हमे समाचार पत्रो से अनेक प्रकार के लाभ होते हैं। परन्तु इनका मार्ग प्रदर्शन सत्य और कल्याणकारी होना चाहिये। एक वार महात्मा गाँधी ने समाचार पत्रो के वारे मे विचार प्रकट करते हुए लिखा था 'पत्रो की अकुशता जनता को ले डूबती है। ये समाचार पत्र कभी भी विषैले विचार भरकर लोगो को गुमराह कर देते हैं।" भाव यह है कि समाचार पत्रो का उद्देश्य जनता को लाभ पहुँचाने वाला होना चाहिए।



सामाजिक उन्नति के साधन

मनुष्य का जीवन दो वर्गों मे विभाजित है पहला व्यक्तिगत और दूसरा समाजगत। जहाँ तक व्यक्तिगत जीवन का प्रश्न है मनुष्य अपने लिये स्वतन्त्र है। वह स्वतन्त्र रूप मे अपने जीवन के लिये उत्तरदायी भी है परन्तु जब समाज का प्रश्न सामने आता है तो हम मनुष्य को स्वतन्त्र नही पाते। मनुष्य के जिस आचरण द्वारा समाज के जीवन पर प्रभाव पडता है वहाँ मनुष्य को वे आचरण करने होते है या वे आचरण करने चाहिएँ जिनके द्वारा सामाजिक उन्नति हो। समाज की उन्नति मे सहायक होना और सहयोग देना मानव का परमावश्यक कर्म है। यही नही साथ ही यह भी सोचना होगा कि सामाजिक उन्नति किन-किन उपायो से सभव है।

सामाजिक उन्नति के दो रूप हो सकते हैं एक तो रहन-सहन आदि और दूसरा विचार। जहा तक रहन-सहन आदि का सम्वन्ध है उसके लिये

आर्थिक उन्नति आवश्यक है। समाज की आर्थिक व्यवस्था ठीक रखने के लिये उद्योग और व्यापार की उन्नति आवश्यक है। यह विल्कुल सत्य है कि यदि समाज मे रोटी, कपडा, और मकान की व्यवस्था ठीक नही होती तो किसी भी प्रकार की उन्नति सर्वथा असभव है।

तात्पर्य यह है कि समाज मे रोटी, कपडा, और मकान की व्यवस्था सही रूप मे ठीक रखने के लिए आर्थिक व्यवस्था ठीक होनी चाहिए। इसके लिए सबसे पहले आवश्यक है कि सबको उनकी रुचि के अनुसार काम मिले। इससे लाभ यह होगा कि मनुष्य काम की भी इच्छा करेगा और समाज मे अपना स्थान ऊँचा बनाने के लिये वह अपने रहन-सहन के स्तर को ऊँचा उठायेगा।

कार्य के प्रति रुचि शिक्षा से वढती है। समाजिक उन्नति मे कई दृष्टि से शिक्षा का अत्यन्त महत्त्वपूर्ण स्थान है। पिछला इतिहास इसका प्रत्यक्ष साक्षी है कि सामाजिक उन्नति मे कमी इसीलिए आई कि शिक्षा का स्तर गिर गया, साथ ही सामाजिक लोग शिक्षा के महत्व को भूलते गए। परिणाम यह हुआ कि अशिक्षा वढती गई। इस अशिक्षा के कारण समाज के वृक्ष मे लगे हुए अवनति के घुन को भी लोग समझ न पाए। समाज का रूप विखरता चला गया। पारस्परिक कलह, द्वेष, ईर्ष्या, स्वार्थ आदि अनेक दुर्भावनाओ ने ऐसा विष वीज वोया कि आज तक उसका कुपरिणाम चैन की श्वास नही लेने दे रहा है।

आर्थिक सकोच के कारण समाज मे शिक्षा दिलाने के वारे मे लोग हिचकिचाने लगे। जो शिक्षा समाज का जीवन है उसी जीवन की जहाँ उपेक्षा हो, वहाँ उन्नति के केवल स्वपन ही देखे जा सकते हैं। इस प्रकार भौतिकदृष्टि से भी सामाजिक उन्नति के मूल मे आर्थिक सुदृढ व्यवस्था भवन की नीव की तरह महत्त्वपूर्ण है। कोरी श्वेत चादर मे लगे काले धव्वे की तरह इस आर्थिक अव्यवस्था ने इस भोले और नादान समाज पर राजनीतिक, धार्मिक और सामाजिक न जाने कितने अन्याय और अत्याचार के वज्र गिराये यह कौन नही जानता ?

आधुनिक समाज मे सबसे बडी कमी है कि आज का व्यक्ति केवल अपने तक सीमित रह गया है। ऐसे प्रयत्नो की आवश्यकता है कि मनुष्य व्यक्तिगत स्वार्थों मे लिप्त न रहकर सामाजिक उन्नति मे सहयोग देना अपना कर्त्तव्य समझे। कर्त्तव्य परायणता के प्रति रुचि, शिक्षा और साहित्य के द्वारा उत्पन्न की जा सकती है। सामाजिक उन्नति के लिए व्यक्ति का मन और हृदय पवित्रता से पूर्ण होना चाहिए। व्यक्ति का हृदय साहित्य से पवित्र होता है। इसलिए ऐसे साहित्य का निर्माण होना चाहिए जो मानसिक स्तर ऊँचा करे। यही नही केवल निर्माण द्वारा यह सभव नही है आवश्यकता है ऐसे सुन्दर साहित्य का प्रचार भी उसी ढग से हो। समाज मे गन्दे और सस्ते साहित्य का प्रदर्शन और प्रकाशन देखा जाता है जो युवक समाज के लिए हितकर नही है। इसके लिए आवश्यक है कि साहित्यिक पुस्तकें सस्ती हो। पाठ्यक्रम मे जो पुस्तकें निर्धारित हो उनके द्वारा छात्रो का हृदय सवर्धन हो सबसे अधिक बल जीवन चरित्रो पर देना चाहिए जिससे छात्र जीवन-पद्धति का निर्माण कर सकें क्योकि भविष्य की नीव स्थायी रखने वाला छात्र ही है।

समाज की उन्नति मे पुरुष और नारी दोनो का सहयोग आवश्यक है। आज की शिक्षा प्रणाली मे सुधार करते हुए नारियो को गृहकार्य मे निपुण होना अनिवार्य होना चाहिए गृहलक्ष्मी का रूप ही यदि नही है तो समाज की व्यवस्था सुदृढ नही होगी। व्यक्तियो के समूह का नाम समाज है। यदि व्यक्ति के परिवार मे शान्ति नही तो सामाजिक शान्ति कुछ अर्थ नही रखती। भारतीय सभ्यता का ज्ञान, आचार-विचार, रहन-सहन की दृष्टि से भारतीय नारी को इस स्वतन्त्र युग मे पाश्चात्य सभ्यता की नकल करने से रुकना होगा। यह गौरव उन्हें चिरकाल के बाद मिला है कि वे स्वतन्त्र देश की छाया मे पुरुष के कधे से कधा मिलाकर उन्नति के लिए प्रगतिशील हैं। इसलिए उन्हें गृह का रूप सौन्दर्य नही भूलना चाहिए।

कार्यशक्ति को बढाने के लिए मनोरजन आवश्यक है। कला के द्वारा मनुष्य के मन का सस्कार होता है। कला का उपयोग जीवन के लिए होना

चाहिए। कविता, नाटक, उपन्यास, कहानी, खेलकूद, वाद-विवाद, सगीत, प्रदर्शिनी आदि के द्वारा सामाजिक व्यक्ति के मन का सस्कार किया जा सकता है। इनके मूल्य मे उद्देश्य भी महान् होना चाहिए। सिनेमा इस दृष्टि से लाभ-दायक सिद्ध हो सकते हैं परन्तु यह कला का नही, व्यापार का क्षेत्र बन गया है। यही कारण है कि आज के बहुत कम चल-चित्र चरित्र का निर्माण कर पाते हैं। इसके साथ यह भी आवश्यक है कि व्यक्ति के पास समय हो कि वह पूर्ण मनोरजन कर सके। आज व्यक्ति के पास समय की कमी है इसलिए कि वह दिनरात परिश्रम कर जीवन को अधिकाधिक सुखी बनाना चाहता है। यह बुरा नही है। बुरा है यह कि व्यक्ति की आवश्यकताएँ इतनी बढ गई हैं कि उन्हें पूरा करने मे उसका सारा समय नष्ट हो जाता है। इसलिए व्यक्ति को अपनी इच्छाओ का क्षेत्र लम्बा नही करना चाहिए।

भारत कृषि-प्रधान देश है। इस देश की अपनी कुछ विशेषताएँ हैं। यहाँ का समाज एक दूसरी ही पद्धति का आदी रहा है। अन्न का उत्पादन करने वाले किसान नागरिक चमक-दमक से चौक कर अपना कर्त्तव्य भूलते जा रहे हैं। आवश्यक है कि ग्रामीण जनता को समस्त सुविधाए मिलनी चाहिएँ। प्रत्येक गाँव मे पाठशालाएँ, विद्यालय, बाग, सडक, प्रकाश, मनोरजन आदि की सुविधा हो। वैज्ञानिक वस्तुओ से उनका परिचय होना चाहिए। इस दृष्टि से भारतीय सरकार प्रयत्न कर रही है। श्रमदान आन्दोलन से भी पर्याप्त लाभ पहुँचा है। ग्रामीण लोगो के लाभ के लिए पचायतो का निर्माण और भी लाभदायक है। सहकारी कृषि समितियो के द्वारा भी लाभ पहुँचाया जा रहा है।

उपर्युक्त सारी बातो को ध्यान मे रखकर यदि विचार किया जाय तो सबसे बडी बात अब भी मेरे ध्यान मे यही है कि समाज मे सबका मुख्य कारण भावना है। जब तक सामाजिक व्यक्ति देश के प्रति, समाज के प्रति महत्व नही रखेगा तब तक सामाजिक उन्नति नही हो सकती है। छोटे-छोटे कार्यों मे व्यक्ति की भावना को परखने पर बडी निराशा होती है। सदियो की दासता

ने व्यक्ति के स्वाभिमान को छीन कर थोथा व्यक्तित्व दे दिया है। व्यक्ति के जीवन मे उत्साह, साहस, प्रसन्नता स्फूर्ति उत्पन्न करने की आवश्यकता है। लाभप्रद वस्तुओ की प्राप्ति मे कठिनाई न हो। प्रत्येक व्यक्ति ईमानदार, जिम्मेदार और वफादार हो। व्यक्ति को अपना जीवन ऊँचा उठाना चाहिये।



संसार में स्थाई शान्ति स्थापित हो।

प्रत्यक्ष और परोक्ष प्रमाणो के आधार पर यह निश्चित रूप से कहा जा सकता है कि अनादिकाल मे यह मानव इस जीवन को बाह्य और आन्तरिक रूप से सुख देने के लिये अनेक प्रयत्न करता चला आ रहा है। आन्तरिक सुख को पाने के लिए किए गये प्रयत्नो का परिणाम है कि जीवन का सच्चा सुख शान्ति मे है। शान्ति ही जीवन को प्रगति की प्रेरणा और विकासमय भविष्य के सुनहरे स्वप्न देती है।

आज के जीवन और पूर्व के जीवन मे इस प्रकार से तुलना की जाए तो निश्चय ही उस जीवन मे आनन्द का कोई रूप ऐसा अवश्य था जो मनुष्य को जीने के लिये लाचार नही करता था अपितु अधिक जीने की इच्छा उत्पन्न करता था। सभव है इसी युग मे मनुष्य ने इस प्रकार की इच्छा निम्नलिखित आदि मन्त्र मे की है

जीवेम शरद शतम् (हम सौ वर्ष जियें)

आधुनिक जीवन को गहराई से देखने पर यह तो निश्चित सत्य है कि मनुष्य को जीवन के बारे में सोचने का अवसर ही नही रह गया है। हम जिस दुनियाँ मे रहते हैं उसमे कितने लोग जीवन को भीतर की आँखो से देखते हैं? हम समझते हैं कि यदि आज मनुष्य जीवन का मूल्य समझना होता तो रोजाना के समाचार पत्रो मे हत्या के इतने समाचार नही छपते, जितने कि आज दृष्टिगोचर हो रहे हैं। ऊपर से देखने पर हमे लगता है कि मनुष्य वहुत

प्रसन्न है, क्योकि आज का युग बुद्धि को ही अधिक महत्व दे रहा है, हृदय को नही। बाहरी चमक-दमक और थोथे चने की तरह बजने वाले लोगो को हम सुखी समझते हैं परन्तु वह स्थायी नही है। इसलिये हमारे सामने यह प्रश्न अत्यधिक मूल्यवान होकर उपस्थिति होता है कि ससार मे स्थायी शान्ति कैसे स्थापित की जा सकती है ?

इस प्रश्न का सम्बन्ध किसी विशेष जाति, व्यक्ति, समाज या राष्ट्र से नही है। इसका सम्बन्ध सम्पूर्ण मानवता से है। हमारे सामाजिक और राजनीतिक जीवन मे सबसे अधिक विज्ञान का उपयोग ही रहा है। इस विज्ञान का विकास सही दिशा मे नही हुआ है। अभी मनुष्य की जीवन झोली इतना भारी बोझ सहने की अभ्यस्त नही है। यही कारण है कि विज्ञान के सुगधित पुष्प धूल मे मिलकर और बज्र बनकर हम पर गिर रहे हैं। जिस विज्ञान की सदुपयोगिता से जीवन स्वर्ग से अधिक सुखकर हो सकता था आज मनुष्य की स्वार्थ और व्यक्ति-सुख को प्रधान मानने वाली विचारधारा ने उसे नरक से भी अधिक दुखकर बना दिया है। आज मनुष्य, मनुष्य से, समाज, समाज से और राष्ट्र, राष्ट्र से भयभीत है। आज के मनुष्य का मन सदेह से और आशका से इतना कमजोर हो गया है कि वे एक दूसरे से गले मिल कर सुख दु ख की अपने पेट की बात नही कह सकते।

आये दिनो विज्ञान की सूचनाएँ एक ओर हमारे मनमे हर्ष की लहर दौडाती है कि आज मनुष्य चन्द्रमा के शीतल लोक का विहारी होने का स्वप्न देख रहा हैं। और दूसरी ओर ज्यो ही विनाशक अणु और परमाणु बमो की शक्ति का परिचय होता है तो हमारा जीवन क्षणिक सुख और जीवन से निराश हो जाता है। सारी मनुष्यता इन हिसक हथियारो की सहारक शक्ति से कांप उठती है। मनुष्य का हृदय धक्-धक् करने लगता है। चारो ओर मनुष्य किसी व्याकुल परिवर्तन मे श्वास लेने के लिये बेचैन दिखाई देता है। यहां हृदय के पनपने का अवसर ही नही मिलता। सोचता है जैसे कि आज का दिन सुख से बीते, कल का भरोसा नहीं।

रूस, चीन, अमेरिका आदि देशो मे एक ओर विज्ञान की सीमा बढ रही है और दूसरी ओर शान्ति स्थापित करने के लिए सभाए होती है। सयुक्त राष्ट्रसघ, सुरक्षा परिषद् और भी इसी प्रकार की अनेक सभाए हैं। जिनके द्वारा शान्ति के सन्देश प्रसारित किये जाते हैं। परन्तु आज प्रश्न यह है कि स्थायी शान्ति कैसे स्थापित की जा सकती है। इसके लिये सबसे पहले इस प्रकार के विज्ञान का विकास रुकना चाहिये। इस दृष्टि से भारतवर्ष ने 'पचशील' का विजय मन्त्र देकर अनोखे दर्शन को इतिहास मे नया पृष्ठ दिया है। रूस जैसे देश ने भारत के शान्ति दूत के सदेश को एक स्वर से स्वीकार किया है।

जब जीवन मे बुद्धि और हृदय का सतुलन हो जायगा तभी स्थाई शान्ति सम्भव है। बुद्धि जब प्रधान हो जाती है तो मनुष्य स्वार्थी व्यक्ति, प्रधान, जड और असामाजिक हो जाता है। यही कारण है कि आज के जनतन्त्र मे मनुष्य सत्य और शिव को भूल बैठा है। वह केवल नकली सुन्दरता के पीछे है। वह थोडे से मूल्य मे अपना जीवन बेच रहा है। इसके लिये दर्शन, साहित्य, कला, समाज, राजनीति सभी क्षेत्रो मे सत्य, अधिकार और कर्त्तव्य का ज्ञान होना आवश्यक है। ऐसे साहित्य का निर्माण होना चाहिए जो मनुष्य को परोपकार और सच्चरित्रता की ओर प्रेरित करे। ऐसे सगीत की आवश्यकता है जो जीवन के आकाश मे मीठे स्वर गुजा दे। इसी प्रकार राजनीति मे न्याय और अनुशासन का पूर्ण पालन हो। समाज मे दुख का कोई भी आर्थिक या सामाजिक रूप न हो सभी मनुष्य सभी के सुख-दुख मे समान रूप से सहयोगी हो। शिक्षा पवित्र सस्कारो के वरदान दे ताकि विश्व के सभ्य नागरिक के रूप मे मनुष्य की प्रतिष्ठा हो। जीवन का रथ सुहागिन मानवता के साथ सच्चे लक्ष्य की ओर बढे।



ग्राम-सुधार

एक बार गाँधी जी ने कहा था —

"भारत का हृदय गाँवो मे बसता है। गाँवो की उन्नति से ही भारत की उन्नति हो सकती है।"

हमारे ग्राम भारतवर्ष की आत्मा हैं। आत्मा की उन्नति को ही जीवन मानने वाला यह भारत जीवन के जुए मे जीत गया है आत्मा की स्वतन्त्रता को प्राप्त कर भारत उसके विकास के लिए प्रयत्न कर रहा है। लगता है जीवन की सुरक्षा के लिए ग्राम की उन्नति अनिवार्य है। वास्तव मे इस दिशा की ओर अब लोगो का ध्यान जोरो से जा रहा है। पिछले इतिहास को देखने से यह ज्ञात हो जाता है कि जितने भी सफल शासक हुए हैं उनकी सफलता का श्रेय ग्राम-सुधार को ही है। प्रत्येक इतिहास-प्रसिद्ध शासक ने ग्राम सुधार को ही महत्त्व दिया है। सुना जाता है कि प्राचीन राजा भिन्न-भिन्न रूप बदल कर ग्रामो की दशा देखते थे और उसमे सुधार लाने का प्रयत्न करते थे।

भारत के भाग्याकाश पर जब भी कभी युद्ध और क्रान्ति की घटाएँ छाई तो उसके परिणामस्वरूप शान्ति अथवा अशान्ति, सुख अथवा दु ख ग्रामो को ही सहने पडे हैं। अकाल, बाढ आदि प्राकृतिक कष्ट ग्रामो पर अधिक प्रभाव डालते हैं। ग्रामो के इस कष्ट का प्रभाव सारे देश पर पडता है। भारतवर्ष पर अनेक जातियो ने राज्य किए। प्रत्येक जाति के शासन सिद्धांत प्राय भिन्न ही रहे। ग्रामो का स्वरूप समान रहा। ये ग्राम समय की धूप-छाँह मे समान गति से श्वांस लेते चले आ रहे हैं। शासको मे सबसे अधिक मधुर व्यवहार करके शोषण करने वाली अंग्रेज़ जाति रही। आज हम जिस आर्थिक, न्याय और भी अनेक समस्याओ का समाधान करने मे समय लगा रहे हैं इसका बहुत क्या अधिकांश श्रेय अंग्रेजो को है।

स्वतन्त्र भारत मे ग्राम सुधार को महत्त्व दिया जा रहा है जो कि राष्ट्र की उन्नति की दृष्टि मे शुभ लक्षण हैं। मध्य युग की अव्यवस्था के कारण

हमारा ग्राम समुदाय अशिक्षित ही रहा। यही कारण है कि इस अशिक्षा ने समाज असभ्य और असस्कृत कर दिया। इसमे कोई सदेह नही कि सरलता और मनुष्यता के दर्शन ग्राम मे ही हो सकते है। कविवर सुमित्रानन्दन पत ने ग्राम जीवन पर अपने विचार प्रकट करते हुए कहा है —

मनुष्यत्व के मूल तत्व ग्रामो ही मे अन्तर्हित,
उपादान भावी सस्कृति के भरे यहाँ है अविकृत,
शिक्षा के सत्याभासो से ग्राम नही है पीडित,
जीवन के सम्कार अविद्यातम मे जन के रक्षित (ग्राम्या)।

एक घटना याद आती है कि जव शकराचार्य मडन मिश्र से शास्त्रार्थ करने गए थे तो ग्राम की स्त्रियो ने सम्कृत मे परिचय दिया। जव तक हमारे ग्राम शिक्षित और उन्नन नही हो जाते तव तक हम भारतवर्ष के उस सौदर्य के दर्शन नही कर सकते जो कि विश्व मे प्रसिद्ध रहा है। शिक्षा के द्वारा ही सस्कृति और सम्यता का विकास हो सकता है।

जव हम ग्रामो के शान्त और एकात जीवन पर रीझते है तव हमे वे दृश्य भी याद आते है कि छोटे-छोटे झोपडे, कच्ची मिट्टी के घर कैसे मनुष्य के रक्षक की रक्षा करते है। ग्राम की कीचड मे मानवता का खिलता हुआ कमल सारे देश मे अपनी सुगध फैलाता है। इस सुगधि पर से अन्याय, अन्ध विश्वास, शोषण आदि के वधन हटने चाहिएँ। इसके लिए अधिक से अधिक प्रयत्न करना होगा।

ग्राम सुधार की समस्या सरल नही है। युग-युग के अभावो को पूरा करना है। सुधार की दृष्टि से सर्वप्रथम प्रत्येक छोटे-वडे ग्रामो मे पाठशालाए खुलनी चाहिए इसमे यह सुधार होगा कि ग्रामवासी शिक्षित होंगे वे अपनी योग्यता का सदुपयोग और उसकी वृद्धि भी करेंगे। आज विज्ञान के युग मे वैज्ञानिक यत्रो के सही उपयोग से अधिक पैदावार होगी। इन यत्रों के उपयोग के लिए शिक्षित होना आवश्यक है।

ग्रामो की उन्नति कृषि की उन्नति मे है। जिस गोबर के उपले बना कर ईंधन बनाया जाता है यदि उससे खाद का उत्पादन हो तो कृषि मे दिन दूनी रात चौगुनी उन्नति हो सकती है।

आधुनिक कृषि विज्ञान के पडितो का कहना है कि रेशम के कीडे और मुर्गियो के पालन से भी उन्नतिपूर्ण परिवर्तन हो सकते हैं? क्योकि ग्रामो के वातावरण मे यह काम आसानी मे और बडे पैमाने पर हो सकता है।

जीवन के लिए बाहरी और भीतरी सभी प्रकार के सुधार आवश्यक हैं। ग्रामवासियो को यह सुविधाए मिलनी चाहिए जिससे वे नागरिक चमक-दमक से आकर्षित होकर अपना काम छोटा न समझें। इसके लिए उन्हे सुन्दर घर रहने के लिए मिलने चाहिए। शारीरिक-परिश्रम और स्वतन्त्र प्रकृति के वातावरण मे उनकी इच्छा भागने की नही होगी। ग्रामो मे पक्की सडकें छायादार वृक्ष और आने जाने के साधन आसानी से उपलब्ध होने चाहिए। इसका सबसे बडा लाभ यह होगा कि ग्राम नगर से दूर नही रहेंगे।

प्रत्येक ग्राम मे जनसख्या के आधार पर छोटे-बडे चिकित्सालय भी होने चाहिए। खुले मे रहने के साथ-साथ चिकित्सा की व्यवस्था उन्हें जीवन मे आनन्द प्रदान करेगी। चिकित्सालयो मे रोगियो को पूरी सुविधा मिले, दवाओ की कीमत कम हो और सहानुभूतिपूर्वक इलाज हो। चिकित्सा विभाग उन्हें सफाई का महत्त्व समझाए। धीरे-धीरे शिक्षा का स्तर बढेगा और ग्राम का रूप आदर्श होगा। निरोगिता उनके जीवन को उत्साहित करेगी।

छोटे-छोटे उद्योग धन्धो का प्रचार भी ग्राम सुधार का आवश्यक अग है। जब से भारत स्वतन्त्र हुआ है तबसे ग्रामोद्योग की ओर विशेष ध्यान दिया गया है। इससे जो लाभ हुआ है वह स्पष्ट है। हमारे देशवासी खादी ग्रामोद्योग भवन से स्वदेश निर्मित वस्तुए खरीदने मे गौरव अनुभव करते हैं। आवश्यकता है कि इसका स्तर बढाने मे और वृद्धि की जावे, इससे मूल्यो मे सुधार होगा।

ग्रामो मे सबसे अधिक आवश्यकता है ग्राम पचायतो की जो कि भारत सरकार द्वारा स्थापित की गई है। मुकदमे से ग्रामवासी सदा कर्जदार ही रहते हैं। घरेलू झगडो और छोटी-मोटी लडाइयो का फैसला ग्राम मे ही होना चाहिए। इससे न्याय के मिलने मे शीघ्रता और आर्थिक बचत होगी।

ग्रामोन्नति के लिए ऐसे प्रचार और शिक्षा की आवश्यकता है जो ग्रामवासियो की बुरी आदतें छुडाने मे सहायक हो। ग्रामवासी प्राय मदिरा पान, जुआ आदि मे समय नष्ट करते हैं और स्वास्थ्य भी। कलात्मक और आकर्षक ढग से इन कुरीतियो के बुरे परिणामो से इन सीधे और भोले लोगो को परिचित कराना चाहिए। एकता और सगठन का पाठ पढाना अत्यन्त आवश्यक है, इसके लिए दस्तकारी बहुत आवश्यक और रोचक है। खाली समय मे ऐसे उद्योग बडे लाभप्रद सिद्ध होगे।

कृषि के क्षेत्र मे सरकार द्वारा किसानो को सस्ते मूल्य पर क्षेत्र प्राप्त होने चाहिएँ। खाद और सिचाई के उचित साधन प्राप्त होने चाहिए जिससे अन्न के उत्पादन मे वृद्धि हो।

साराश यह है कि ग्राम सुधार की ओर पर्याप्त ध्यान देने की आवश्यकता है। शिक्षा केवल बालको के लिए ही नही बूढो के लिए भी होनी चाहिए। प्रौढ शिक्षा केन्द्र खुलने चाहिएँ। जब इस प्रकार की उपर्युक्त सभी सुविधाए प्राप्त होगी तो देश का रूप बदल जाएगा। न जाने कितनी समस्याएँ इस ग्राम सुधार मे छिपी हुई हैं। इस सुधार से न जाने कितने कष्ट स्वय दूर हो जाएगे। श्री सोहनलाल द्विवेदी के शब्दो मे —

है अपना हिन्दुस्तान कहाँ ?
वह बसा हमारे ग्रामो मे ....

सत्य हो जाएगा।





ग्रामोद्योग तथा कुटीर उद्योग

भारतवर्ष कृषि-प्रधान देश है। भारत की अधिकाश जनता ग्रामो मे रहती है। ग्रामो की अवस्था उद्योगो की दृष्टि से बहुत ही गिरी हुई है। स्वतन्त्रता के बाद भारत मे अपनी आर्थिक उन्नति के लिए छोटे-छोटे ग्रामोद्योगो और कुटीर उद्योगो को जो प्रोत्साहन दिया है वह सराहनीय है। कुटीर उद्योग के विकास को देखते हुए भारत बहुत पिछड़ा हुआ है। अमेरिका मे लगभग ३५ लाख से भी अधिक औद्योगिक सस्थाए है। ब्रिटेन मे ३० प्रतिशत छोटे-छोटे उद्योग हैं और जापान मे लगभग ६० प्रतिशत छोटे-छोटे उद्योगो द्वारा माल तैयार होता है।

भारत मे किसान अधिकतर बेकार रहते हैं। अत अवकाश का समय कुटीर उद्योगो तथा अन्य ग्रामोद्योगो मे लगाकर देश की आर्थिक अवस्था के सुधार मे बहुत हाथ बटा सकते हैं। अत फिस्कल कमीशन और प्लानिंग कमीशन ने कुटीर उद्योगों के विकास के हेतु सरकार को सुझाव दिए है। जिनके परिणामस्वरूप कुटीर उद्योगो का बहुत बडे पैमाने पर विकास होगा। देश का भविष्य ग्रामोद्योगो और कुटीर उद्योगो पर ही निर्भर है क्योकि मनुष्य की शक्ति का पूर्ण उपयोग इन छोटे-छोटे उद्योगो मे होता है। सरकार ने निम्नलिखित सस्थाओ का निर्माण कुटीर उद्योगो तथा ग्रामोद्योगो की उन्नति व प्रगति के लिए किया है।

(१) आल इण्डिया हैंडलूम बोर्ड (१९५२)
(२) आल इण्डिया हैंडीक्राफ्ट बोर्ड (१९५३)
(३) आल इण्डिया खादी एण्ड विलेज इन्डस्ट्रीज बोर्ड (१९५३)
(४) सेन्ट्रल सिल्क बोर्ड (१९५२)
(५) कोयर (जूट) बोर्ड (१९५४)
(६) स्माल स्केल इण्डस्ट्रीज बोर्ड (१९५५)

ये मस्थाएँ प्रत्यक्ष अथवा अप्रत्यक्ष रूप से सरकार की सहायता द्वारा १२ उद्योगो की उन्नति के लिये प्रोत्साहित करेंगी। जैसे (i) खेल का समान (ii) शीशे के वर्तन, (iii) जूते और चमडे का समान, (iv) ब्रुश वनाना, (v) चाकू कैंची उन्तरे इत्यादि, (vi) साईकिल के पुर्जे, (vii) लकडी और वढई का काम, (viii) ताले। (iv) लोहे व इस्पात के तार, (x) लोहे का काम, (xi) जरी का काम तथा (xii) कशीदाकारी का काम। इमी प्रकार मे अन्यान्य कुटीर व ग्रामोद्योगो द्वारा साबुन वनाना, मधु मक्खी पालन, हाथ का वना कागज, दियासलाई, गुड और खाण्ड, ऊनी माल की तैयारी होगी।

हैदरावाद मे फनीग्री तथा हिम्रो उद्योग करीमनगर और औरगावाद मे स्थित है, जिसमे ऐस्ट्रे, चूडियाँ, वटन, टोकरी, सिगरेट केम, फ्रेम आदि का निर्माण कार्य होता है। विहार मे सन् १६०८ से स्थापित शैल वटन का औद्योगिक केन्द्र है जिसमे चम्पारन जिले मे नदियो के किनारे जो शैल प्राप्त होता है उसका पूरा उपयोग होता है। काश्मीर मे गव्वा वनाने का काम, कढाई का काम, ऊनी वस्त्रो की वुनाई का काम, लकडी पर नक्काशी का काम छोटे-छोटे औद्योगिक केन्द्रो मे होता है जिसकी माँग भारतवर्ष की मन्डियो मे अत्यधिक है। राजस्थान मे रत्न जटित आभूषणो की कला-कृतियाँ केवल भारत मे ही नही अपितु ससार भर मे अपना सानी नही रखती। ट्रावनकोर-कोचीन मे (Coir) जूट का माल 'चटाइयाँ' फर्श और रस्सियाँ वडी मजवूत, सुन्दर और वहुत उपयोगी होती है। नारियल का तेल भी यहाँ के उद्योगो का उत्पादन है। यहाँ ४०० से अधिक औद्योगिक केन्द्र हैं जिनमे ३५,००० श्रमिक कार्य मे लगे है। नक्काशी वाले विक्री के वर्तन वनाना भी भारत का एक प्रसिद्ध हस्त-शिल्प है। उत्तर प्रदेश मे मुरादावाद के वर्तन, अलीगढ के ताले, कानपुर के जूते व चमडे का समान वनारस की साडियाँ और जडाऊ रेशमी वस्त्र वहुत अधिक प्रचलित हैं। इन कुटीर उद्योगो का उत्पादन वढ रहा है और माल की खपत भी ससार के वाजारो मे वढती जा रही है।

भारतीय सरकार ने कुटीर उद्योगो के विकास के लिये उद्योगो के सगठन और सहकारिता पर बल दिया है तथा उत्पादित वस्तुओ के विक्रय को प्रोत्साहित करने के लिये जगह-जगह बिक्री-केन्द्र तथा प्रदर्शिनियो का आयोजन किया है। इस समय कुटीर उद्योगो मे लगे व्यक्तियो के पास धन तथा सहयोग का अभाव है, जिनके कारण उत्तम किस्म का माल तैयार नही हो पाता। सरकार ने औद्योगिक सहकारिता के लिए एक फैडरेशन को नियुक्त किया है जो निम्नलिखित बातो की देख-भाल व व्यवस्था करेगा —

(१) कच्चा माल दिलाने की व्यवस्था।
(२) अच्छे औज़ारो को दिलाने की व्यवस्था।
(३) उत्पादन के ढग को सुधारने के लिए टैक्नीकल सहायता।
(४) नमूने तथा अच्छे डिज़ाइनो को दिलाने की व्यवस्था।
(५) किस्मो पर नियन्त्रण।
(६) देशी बाज़ारो मे माल के विक्रय की व्यवस्था।

इस प्रकार ग्रामोद्योग और कुटीर उद्योगो के विकास की रूप रेखा सहकारिता के आधार पर करने से धीरे-धीरे अत्यधिक सफलता मिल सकती है छोटे-छोटे ग्राम उद्योगो का भविष्य उज्जवल है और शीघ्रातिशीघ्र देश की अवस्था मे साधारण उन्नति लाने के लिए यह सर्वश्रेष्ठ उपाय है। अम्बर चर्खे के आगमन से कपडा उद्योग मे अलौकिक सफलता और जन सहयोग से उन्नति प्राप्त होने की सम्भावना है।



भारत की परराष्ट्र नीति

विश्व राजनीति का एक मोटा सिद्धान्त है कि अन्तरराष्ट्रीय क्षेत्र मे सभी देशो के अपने स्थायी हित होते हैं लेकिन स्थायी नीति नही होती। सभी देश अपने-अपने हितो की पूर्ति के लिए नीति को आवश्यक मोड देते रहते हैं। इस मोड को कूटनीतिक भाषा मे नीति-परिवर्तन नही कहा जाता, इसे कहा जाता है पुनर्मुल्यांकन। इस शब्द की आड मे कभी-कभी तो देश अपनी नीति को पूरी तरह ही बदल डालते हैं और दिखाते यही हैं कि नीति जैसी की तैसी है। इस सदर्भ मे सवाल यह है कि क्या भारत गतिशील है ?

जब से श्री ख्रुशोव को अपदस्थ किया गया है, तब से भारत सरकार के सभी स्तरो पर यही चर्चा है कि क्या रूस और चीन समझौता कर लेंगे ? क्या रूस चीनी आक्रमण के सदर्भ मे भारत को राजनीतिक और सैनिक सहायता बन्द कर देगा या कम करने के सवाल पर विचार करेगा ? यह बात जानने के लिए श्रीमती इन्दिरा गांधी को मास्को भेजा गया। रूसी नेताओ से इस बारे मे आश्वासन माँगे गये और आश्वासन मिलने पर उन्हे बडे पैमाने पर छपाया गया।

इस सबका अर्थ क्या यह नही है कि हमारे देश की चीन सम्बन्धी नीति श्री ख्रुशोव से बधी हुई थी ? और अब श्री ख्रुशोव के हट जाने पर हम भयभीत हो गये है ?

हमे शुरू से ही यह समझकर चलना चाहिए कि रूस और चीन दोनो ही कम्युनिस्ट देश हैं और दोनो के अपने हित है तथा हितो के लिए लाभदायक होने पर वे फिर एक हो सकते हैं। तो ऐसा काम क्यो किया जाय जिसमे रूस और चीन के मेल-मिलाप के बाद हमे किसी प्रकार की कठिनाई पैदा हो जाय। या हमारी नीति पर किसी प्रकार की आँच आ सके।

इस बात से इनकार नही किया जा सकता कि गत कुछ वर्षों से भारत की परराष्ट्र नीति इतनी गतिहीन हो गई है कि हम विश्व घटनाओ पर

प्रतिक्रिया के रूप मे ही उठते है । भाव यह है कि जब कही कुछ हो जाय तो हम उसकी प्रतिक्रिया के रूप मे जागते हैं और तब कुछ कहते या करते है। इस प्रकार हम अपने हाथ से पहले निकल जाने देते है । इससे राष्ट्रीय हितो को हानि पहुँचती है ।

चीन का सवाल ही लीजिए चीन ने भारत पर हमला किया और हमारे देश के बहुत बडे भाग पर कब्जा किया और अब उस क्षेत्र को दबाये बैठा है। अब हम इस इन्तजार मे बैठे है कि या तो कोलम्बो ताकतें कुछ रास्ता निकालें या चीन ही कुछ करे या कहे और तब हम उस पर अपनी प्रतिक्रिया दिखायें ।

कश्मीर का सवाल लीजिए रूस की सरकार कश्मीर पर हमारे साथ रही है और उसने इस मामले पर राष्ट्रसघीय सुरक्षा परिषद मे वीटो का प्रयोग करके हमे बचाया है । लेकिन यदि किसी कारण रूस अपनी नीति बदल दे और राष्ट्रसघ मे हमारे पक्ष मे वीटो का प्रयोग करने से इनकार कर दे तो हम डूब गये । आखिर यह कहाँ तक और कब तक सम्भव है कि रूस पाकिस्तान तथा पश्चिमी राष्ट्रो का विरोध सहकर हमारी सहायता इस बारे मे करता रहेगा ?

गोवा की बात लीजिए हमने सैनिक कार्रवाई करके गोवा के अपने भाइयो को पुर्तगाली दासता से मुक्त किया। पुर्तगाल इस मामले को राष्ट्रसघ मे ले गया। वहां रूस ने वीटो का प्रयोग करके गोवा को हमारे साथ मे रहने दिया, नहीं तो यदि वीटो का प्रयोग न होता तो गोवा आज राष्ट्रसघ के सरक्षण मे होता ।

कानूनी दृष्टि से गोवा का सवाल अब भी सुरक्षा परिषद की सूची पर जीवित है । कोई भी सदस्य देश इस सवाल को फिर उठा सकता है और तब यदि रूस पुनः वीटो का प्रयोग न करे तो हमे मजबूर होकर गोवा को राष्ट्र-सघ के सरक्षण मे सौंपना पड जायगा, क्योंकि बडे सिद्धान्तवादी होने के कारण हम राष्ट्रसघ के गलत काम की भी अवहेलना नहीं कर पायेंगे ।

तिब्बत की बात सुनिए चीन के प्रति अपार दोस्ती के उभार मे भारत ने तिब्बत मे अपने हितो को प्लेट मे रखकर पेकिंग के तानाशाहो को सौप दिया। ऐसा करते समय चाणक्य की यह बात भी भूल गये कि दो बडे देशो की सीमा के बीच मे तटस्थ प्रदेश रखो। इस भूल का परिणाम हुआ चीन द्वारा भारत की सीमा का अतिक्रमण। अब तिब्बत के बारे मे राष्ट्रसंघ मे प्रस्ताव पेश कर दिया गया है और शु है कि भारत सरकार ने प्रस्ताव का समर्थन करने का फैसला किया है।

भारत सरकार ने हाल मे श्रीलंका से प्रवासी भारतीयो के बारे मे एक समझौता किया है। इस समझौते को प्रधानमंत्री श्री लालबहादुर शास्त्री की महान सफलता कहा गया है कि बडी समस्याएँ सुलझाने की दिशा मे हमारी सरकार ने बडा सक्रिय कदम उठाया है।

यह सब कहने और लिखने वाले यह भूल गये कि यह समझौता करके हमारी सरकार ने एक ऐसा सिद्धान्त कायम किया है जिसके दूरगामी प्रभाव होगे। वह सिद्धान्त यह है कि "हम विदेशो मे बसे भारतीयो को भारत लौटाने की बात मानते हैं"। यह सिद्धान्त श्री नेहरू ने १७ साल मे कभी नही माना था, हालाकि विदेशो मे बसे भारतीयो को भारी कठिनाइयो का सामना करना पडा है।

आज उन देशो के कान खडे हो गये हैं जहाँ कि बडी संख्या मे भारतीय बसे हुए हैं। केन्या के एक मंत्री ने तो भारत श्रीलंका समझौते के दूसरे दिन ही कह दिया कि केन्या से भारतीयो को बुलाने के लिये दोनो देशो की सरकारो मे बातचीत होनी चाहिए। क्या मालूम कि कल दूसरे देश भी यही कहने लगें। जब भारत श्रीलंका मे प्रवासियो को लेगा तो फिर अन्य देशो से लेने को कैसे इन्कार करेगा। भय तो यह है कि कही अदूरदर्शिता के शिकार होकर हमे विदेशो मे बसे सभी ४० लाख भारतीय प्रवासियो को यहाँ न लाना पडे।

अगर श्री नेहरू श्रीलका मे बसे प्रवासी भारतीयो की वापसी का सिद्धान्त मान लेते तो शायद बहुत पहले ही समझौता हो जाता और सवा पाच लाख प्रवासियो को न लेना पडता, थोडे लेकर ही सन्धि हो जाती ।

विश्व राजनीति के इतिहास मे यह पहला मौका है जब किसी देश ने अपने मूल के प्रवासियो को अपने देश मे लौटाने का सिद्धान्त माना है। वैसे राजी से कोई भी प्रवासी अपने मूल देश मे जाता रहा है। इस सदर्भ मे पाकिस्तान से विस्थापित होकर भारत आने वाले हिन्दुओ से तुलना नही की जा सकती।

भारत श्रीलका समझौते पर टिप्पणी करते हुए एक पाकिस्तानी राजनयिक प्रतिनिधि ने कहा—श्रीलका से किये गये समझौते के आधार पर कश्मीर की समस्या हल हो सकती हे। जैसे श्रीलका से दो तिहाई प्रवासी भारत ले रहा है और एक तिहाई वहा बस रहे हैं, उसी तरह दो तिहाई कश्मीर पाकिस्तान को दे दे और एक तिहाई भारत अपने पास रख ले। समझौता हो जायगा ।



भारत की अग्नि-परीक्षा

हम यह सुनने के आदी हो गए थे कि "अहिंसा परमोधर्म" का महाभारत से महात्मा गाँधी तक हमारी परम्परा मे सर्वोच्च स्थान रहा है। इसलिए सस्कृति की ऐसी व्याख्या करने का प्रयत्न होता रहा जिससे देश भीतर से खोखला पड गया क्योकि इससे धीरे-धीरे ऐसी जडता आती गई जिससे अहिंसा के नाम पर अपनी कायरता और कापुरुषता को दबाने का प्रयत्न किया गया है ।

अभी तक उपलब्ध प्रमाणो के आधार पर यह कहा जा सकता है कि वर्धमान महावीर और गौतम बुद्ध के श्रमण और भिक्षु धर्म के प्रचार के पहले भारत पर कोई विदेशी आक्रमण नही हुआ था। फारस मे हखामनी वश का सस्थापक सम्राट कायरस सभवत पहला व्यक्ति था, जिसने ५४० ई० पू के आसपास भारत पर आक्रमण किया यद्यपि उस समय भारत अनेक जनपदो और महाजनपदो मे वटा हुआ था, पर पराक्रमी कायरस को बुरी तरह से हराकर अपने बचे-खुचे पाच-सात सैनिको के साथ भागना पडा। इसी प्रकार से लगभग ३२५ ई० पू० जब सिकन्दर ने हमला किया था तब वह मालव और क्षुद्रक गणराज्यो के हाथ ऐसा घायल हुआ कि अपने देश वापस न लौट सका। उसकी मृत्यु के वाद जब उसके सेनापति सेल्यूक्स ने अपने सम्राज्य की सीमा भारत की ओर वढाने का प्रयत्न किया तो भारत के पराक्रमी सम्राट चन्द्रगुप्त मौर्य के हाथो उसकी वडी बुरी हार हुई और उमे न केवल अपने राज्य के वहुत बडे हिस्से बल्कि अपनी वेटी को भी चन्द्रगुप्त को देना पडा।

ई० पू० छठी शताव्दी से ईसा की पाँचवी शताब्दी तक हमारे इतिहास मे विदेशियो को खदेड निकालने के जो प्रमाण मिलते हैं, जो ज्वलत गाथायें हमे आज भी प्रेरणा देती हैं, उसके पीछे तक्षशिला विश्वविद्यालय की शिक्षा प्रणाली की वह असीम शक्ति है जो जीवन से पलायन नही वल्कि उससे लोहा लेने की दृष्टि देती है। इसी के कारण वैद्य जीवक मनुष्यो के साथ-साथ राष्ट्र के रोगो के चिकित्सक हो सके और चाणक्य भाषा के साथ-साथ समाज और राज्य को भी निर्दोष वना सके।

इतिहास से मालूम होता है कि नालन्दा विश्वविद्यालय मे दस हजार मे अधिक विद्यार्थी थे। आज भी दुनियाँ के किसी देश मे इतना वडा स्नातकोत्तर आवासीय विश्वविद्यालय नही है। लेकिन केवल १८ सवारो ने उमे पस्त् कर दिया। क्योकि ? तक्षशिला और नालन्दा के इस अन्तर को हमे पहचानना है और इसी परख प्रकाश में हमे आज अपना मार्ग ढू ढना है।

यदि अहिंसा का अर्थ नालन्दा की परम्परा है तो या तो हमे अपना मार्ग बदलना होगा, या अहिंसा की परिभाषा बदलनी होगी। अहिंसक होने पर भी गौतम बुद्ध और उनके शिष्यो ने कौशल नरेश विरुधक के द्वारा कपिलवस्तु गणराज्य पर किये गए आक्रमण का विरोध किया था, स्वामी विवेकानन्द आजीवन भास्वर स्वर मे पौरुष और जागरण का सन्देश देते रहे और 'एकला चलोरे' के दृढव्रती नायक महात्मा गाँधी मरते दम तक बाहर-भीतरी दुर्बलताओ से लडते रहे। जीवन कर्म है और कर्मण्यता ही पौरुष है। जो अहिंसा कर्म से पलायन सिखाये, उसे कोटिश नमस्कार।

'कर्मण्यैव अधिकारस्तै'—कर्म ही तुम्हारा अधिकार है—ऐसा गीता मे कहा है। फिर हम कर्मण्यता से क्यो भागे ? यदि कर्मण्यता हमे सघर्ष की ओर ले जाती है तो हम शान्ति का मोह क्यो पाले ? जाने-अनजाने हमने जो चूक की उसी के कारण एक राष्ट्र के रूप मे हमे अपमानित होना पडा है। इस कलक को धोने के लिये हमे अपनी परम्परा की जीवन्त शक्तियो को पहचानना होगा, उसका सग्रह करना होगा जो व्यक्ति या राष्ट्र अकारण अपमान को पी जाता है, उससे बडा पापी और कोई नही है। कौरवो ने जब पाण्डवो के शान्ति प्रस्ताव को ठुकरा दिया तब श्रीकृष्ण अपनी बुआ कुन्ती से मिलने उनके घर गये। जब श्रीकृष्ण ने कुन्ती को सारी बाते बतायी तब कुन्ती ने अपने पुत्र धर्मात्मा युधिष्ठर को यह सदेश देने के लिए कहा—"जैसे वेद के अर्थ को न जानने वाले ऋगवेद पाठी की बुद्धि केवल मन्त्रो का लगातार पाठ करने से नष्ट हो जाती है वैसे ही तुम्हारी बुद्धि भी शाँति धर्म को ही देखती है।" अत हमे अपने दृष्टिकोण को बदलना ही होगा। भारत ने न तो कभी अपनी सीमा के बाहर पैर फैलाया और न कभी वह अपनी ओर बढाने वाले पजे को काटने मे हिचका। भारतीय इतिहास ऐसी घटनाओ मे भरा पडा है जब युद्ध मे पीठ दिखाने वाले पति या पुत्रो को हमारी वीरांगनाओ ने लोहा लेने के लिये मजबूर किया।

राम के चरित्र से दूसरा सकेत यह मिलता है कि शक्ति न तो अपने आप अच्छी है, न बुरी, शक्ति का अच्छा या बुरा होना उसके सदुपयोग या दुरु-

पयोग पर निर्भर करता है। ब्राह्मण वशी रावण शक्ति के दुरुपयोग के कारण राक्षस कहलाया। लेकिन प्रश्न है कि शक्ति के विना क्या शक्तिशाली आक्रमण कारी के दुराचार से रक्षा सम्भव है ? रावण की शक्ति से राम की शक्ति प्रवलतर होने के कारण ही अन्याय से रक्षा सम्भव हो सकी। अत शक्ति की उपेक्षा के दर्शन को भारतीय परम्परा सर्वथा भ्रांतिपूर्ण मानती आयी है। विश्व की परिस्थतियो मे अभी तक कोई ऐसा वुनियादी हेर-फेर नही हुआ है जिसके कारण भारत को अपनी परम्परा वदलनी पडे। अणु युद्ध के विनाशकारी परिणाम भय के वावजूद यह स्थिति कभी आएगी या नही, यह कहना कठिन है। लेकिन क्या वन्दूको और तोपो के आविष्कार के वाद से लाठी या छुरे से मनुष्य की हत्या करना रुक गया है या ऐसी हत्या को अव अपराध नही माना जाता ?

मुझे ऐसा लगता है कि हम जैन वौद्ध धर्म के आविर्भाव के वाद से इस भाँति के शिकार हो गये हैं कि विद्या और अविद्या मे घोर विरोध है। चू कि विद्या और अविद्या मे अविरोध मानने वाली ही नही वल्कि इन्हे परस्पर पूरक मानने वाली वैदिक सस्कृति भी विद्या को महत्वपूर्ण स्थान देती थी, इसलिये जव जैन वौद्ध धर्म के अविर्भाव के वाद से दोनो मे विरोध माना जाने लगा तव अविद्या गौण हो गई और उसके साथ-साथ हमारा जातीय शौर्य भी क्षीण पडता गया। लेकिन ईशा वास्योपनिपद के ग्यारहवे मन्त्र मे यह विल्कुल निभ्रन्ति शव्दो मे कहा गया है कि "जो विद्या और अविद्या दोनो को साथ-साथ जानता है वह अविद्या से मृत्यु को जीतता है और विद्या से अमृत प्राप्त करता है"।

रोग-शोक-भूख-अन्याय आदि से वचने के लिये अविद्या की साधना आवश्यक है और इस आवश्यकता की पूर्ति के वाद ही विद्या की साधना से अमृत की प्राप्ति असभव है। यदि धनुर्धर राम यज्ञ की रक्षा नही करते तो विश्वामित्र की तपस्या कैसे पूर्ण होती ? प्रधान मन्त्री श्री नेहरू जी ने वैज्ञानिक सस्थाओ और निर्माण योजनाओ को देव स्थान कहा था और हमारा यह

निर्माण यज्ञ तभी पूरा होगा जब चीनी राक्षसो से इसकी रक्षा का हम समुचित प्रबन्ध कर सकेंगे।

रह-रहकर मन मे यह प्रश्न उठता है कि एक स्वतन्त्र राष्ट्र के रूप में आखिर भारत का उदय पुन क्यो हुआ ? हमारे इतिहास मे विद्या और अविद्या का सघर्ष जैसा प्रबल रहा है वैसा ही आज विश्व मे प्रजातन्त्र और साम्यवाद का है। क्या भारत ने जिस प्रकार से विद्या और अविद्या के रहस्य को कभी पाया था उसी प्रकार से क्या वह प्रजातन्त्र और साम्यवाद के रहस्यो को भी हस्तगत कर सकेगा ? साधना कठिन है, राह रपटीली है पर तलवार की धार पर चलने जैसे कठिन कार्य को जिस भारत ने साधा है वह सभव है इस साध्य कार्य को भी कर सके।

आज हमे आवश्यकता है भ्रांति को दूर कर अपने दृष्टिकोण को बदलने की और अपनी जीवन्त परम्परा को पहिचानने की क्योकि दृष्टि-दोष से सब दूषित हो जाता है। 'कुछ बात है कि हस्ती मिटती नही हमारी' उक्ति यदि अब तक सत्य रही तो भविष्य भी हमारा ही है, क्योकि कविवर दिनकर के शब्दो मे —

जिसका सारा इतिहास तप्त जगमग है,
वीरता-वह्नि से भरी हुई रग-रग है,
जिसके इतने बेटे रण झेल चुके हैं,
शूली, किरीच, शोलो से खेल चुके हैं,
उस वीर जाति को बन्दी कौन करेगा ?
विकराल आग मुट्ठी मे कौन धरेगा ?

परशुराम की प्रतिक्षा आज घर-घर मे हो रही है। कौन कह सकता है कि किसी झोपडी मे अवतरण भी नही हो चुका है।



चतुर्थ पंचवर्षीय योजना

भारत की स्वतन्त्रता के वाद प० नेहरू की पचवर्षीय योजनाओ पर विचारको ने अपने-अपने ढग से विचार प्रकट किए हैं। यह तो सत्य ही है कि इन योजनाओ से जो स्वप्न देखा गया था वह सम्यक रूप से पूर्ण नही हुआ। इस अपूर्णता के पीछे कई रहस्य भी हैं। अव जब कि प० नेहरू हमारे वीच नही हैं तव एक प्रश्न स्वाभाविक रूप ही उभरता है कि क्या पचवर्षीय योजनाओ की शृ खला चलेगी ? या टूटेगी।

इन योजनाओ का विषय विचारार्थ है इसलिए वित्तमन्त्री के विचार जानना आवश्यक है।

वित्तमत्री श्री कृष्णमाचारी ने पिछले दिनो राज्यसभा मे कहा था कि चौथी योजना बनाने के लिए काफी काम किया गया है, किन्तु अभी तक हम किसी ठोस निश्चय पर नही पहुँचे हैं। शायद तव तक किसी ठोस निर्णय पर पहुँचा भी नही जा सकता जव तक अपने साधनो का पूरा जायजा न ले लिया जाय। चौथी योजना के आकार के वारे मे अब तक जितनी तरह की वातें कही गयी हैं, उनसे योजना आयोग तथा सरकार के विचारो मे अस्पष्टता का पता चलता है। यह आश्चर्य की वात है कि जिन पर योजना वनाने और उसे क्रियान्वित करने की जिम्मेदारी है, वे स्वय अभी किसी ठोस नतीजे पर नही पहुचे। सम्भवत योजनाओ मे प्राथमिकताओ के वारे मे भी सरकार की ओर से यह वात कही जा चुकी है कि विकास की नीति को मन्द करने, योजना के आकार मे कटौती करने अथवा योजना सम्वन्धी नीतियो आदि मे फेर वदल करने का न तो कोई इरादा है और न ऐसा करना उचित ही होगा।

योजना के आकार के वारे मे अव तक जो कुछ कहा गया है, उसको मुख्यत तीन श्रेणियो मे रखा जा सकता है। एक मत यह है कि अगर राष्ट्रीय आय मे ६-७ प्रतिशत वार्षिक की वृद्धि करनी है, तो चौथी योजना २ खरव २० अरव से लेकर २ खरव ४० अरव रुपये तक की वनानी होगी। दूसरे पक्ष

का कहना है कि वृद्धि का यह लक्ष्य २ खरब से लेकर २ खरब १० अरब रुपये तक खर्च करके पूरा किया जा सकता है। एक तीसरा मत उनका है, जिनकी राय के अनुसार चौथी योजना १ खरब ८० अरब रुपये से अधिक की नही होनी चाहिए। प्रायोगिकी आर्थिक अनुसधान की राष्ट्रीय परिषद् ने तो १ खरब ९२ अरब रुपये की एक 'आदर्श योजना' तैयार की है। उसका कहना है कि इससे राष्ट्रीय आय मे प्रति-वर्ष ६ ४ प्रतिशत की वृद्धि की जा सकती है।

आकार को छोटा करने का समर्थन करने वालो का तर्क है कि योजना का खर्च यदि दो अरब या उससे अधिक रहा तो इसका देश की आर्थिक स्थिरता पर प्रतिकूल प्रभाव पडेगा। लेकिन, साथ ही दूसरा मत यह है कि राष्ट्र की रक्षा और आर्थिक विकास की जो गुरुतर जिम्मेदारी आ पडी है, उसे उठाना ही होगा। तीसरी योजना का अनुभव यह रहा कि राष्ट्रीय आय मे प्रतिवर्ष दो-ढाई प्रतिशत की ही वृद्धि हो सकी। आय अब जिस वृद्धि की अपेक्षा की जाती है, उसको प्राप्त करने के लिए विभिन्न कारणो को ध्यान मे रखते हुए योजना का आकार सवा दो खरब के आसपास या उससे कुछ अधिक ही रखना होगा।

योजना आयोग और सरकार ने योजना के आकार पर कितना विचार किया, उसमे लाभ तो हुआ किन्तु परेशानी की बात यह है कि इससे प्राथमिकताओ की बात पीछे पड गई। योजना का आकार जितना महत्वपूर्ण है, उतना ही महत्वपूर्ण यह है कि चौथी योजना के दौरान विभिन्न क्षेत्रो की प्रगति और उत्पादन के लक्ष्यो को स्पष्ट किया जाय। इस मुद्दे पर विचार करने का नतीजा यह होगा कि प्राथमिकताओ के अनुसार ही योजना आकार छोटा या बडा रखना होगा। तीसरी योजना के अनुभवो से प्रकट है कि कृषि के क्षेत्र मे कुछ कमी रह जाने के परिणाम स्वरूप, जिस योजना को उच्चाभिलाषी कहा गया था, उससे अर्थतन्त्र को वह गति प्राप्त न हो सकी, जिस की योजना तैयार करते समय आशा की गयी थी। चूकि आयोजक अब

चौथी योजना की रूपरेखा तैयार करने मे व्यस्त है, और उस पर मत्रिमण्डल मे और राष्ट्रीय विकास परिषद मे विचार हो रहा है, अत यह वात स्पष्ट हो जानी चाहिये कि आगामी लक्ष्य, नीति और प्राथमिकताए क्या होगी। उसीके अनुसार विकास का कार्यक्रम तैयार किया जाना चाहिये। इस वात पर भी ध्यान देना जरूरी है कि साधनो का पूरी तरह उपयोग हो। चू कि राष्ट्रीय साधन और विदेशी सहायता की सम्भावनाएँ सीमित है, इसलिये योजना को सफल वनाने के लिये यह जरूरी होगा कि उसकी क्रियान्विति के साथ-साथ अधिक साधन उपलब्ध होते चले और विकास की गति तेज होती जाए। इस तरह का लचीला दृष्टिकोण अपनाने से न केवल विवादो का अन्त होगा वरन योजना को वस्तुवादी और गतिशील भी वनाया जा सकेगा।



तटस्थ राष्ट्र सम्मेलन

काहिरा नगर मे नील नदी के और विश्व के महान आश्चर्य पिरामिडो की छाया मे विश्वविद्यालय हाल मे विश्व के तटस्थ राष्ट्रो का द्वितीय महासम्मेलन हुआ था। दुनिया के लगभग आधे देशो के राज्याध्यक्ष इस सम्मेलन मे विश्व की समस्याओ का हल ढूढने मे लगे हुए थे। कहा गया है कि दुनिया मे अव तक कोई ऐसा सम्मेलन नही हुआ, जिसमे इतने देशो के राज्याध्यक्षो ने भाग लिया हो।

तटस्थता की नीव स्वर्गीय श्री जवाहरलाल नेहरू ने डाली थी और अव तटस्थता का पौधा वढकर विश्व का सवसे वडा पेड होता जा रहा है। यह वात इस सम्मेलन ने मानी तभी तो प्राय सभी नेताओ ने श्री नेहरू को श्रद्धाञ्जलि अर्पित की और सम्मेलन के मच पर केवल श्री नेहरू का चित्र लगाया।

सम्मेलन की अब तक की कार्रवाई से स्पष्ट है कि श्री नेहरू की अनुपस्थिति मे भी भारत तटस्थ राष्ट्रो का नेतृत्व कर रहा है। इस दृष्टि से यह सम्मेलन भारत के लिए सफलता की निशानी माना जायेगा।

सम्मेलन की तैयारी के लिए पहली अक्तूबर तक तटस्थ राष्ट्रो के परराष्ट्रमत्रियो की बैठकें हुईं। परराष्ट्रमत्रियो ने दो मुख्य समितिया वनायी राजनीतिक समिति और आर्थिक समिति। दोनो मे ही भारत को रखा गया। इन दोनो समितियो की कार्रवाई का जो व्योरा अव तक प्राप्त हुआ है उसके अनुसार दोनो समितियो ने भारत को प्रमुख मान लिया। यह भी एक तथ्य है कि भारतीय सुझाओ के आधार पर ही आधिकाँश प्रस्ताव तैयार किये गये हैं। काहिरा की रिपोर्टों से एक बात और स्पष्ट हो जाती है कि भारतीय प्रतिनिधिमण्डल काफी तैयारी के साथ काहिरा गया था और भारतीय सुझाव काफी सूझबूझ के साथ तैयार किये गये थे।

भारत की पहली सफलता यह है कि भारतीय परराष्ट्रमत्री का यह प्रस्ताव। सर्वसम्मति से स्वीकार कर लिया गया कि जम्विया को सम्मेलन का सदस्य जाय। उत्तरी रोडेशिया अव जम्विया गणराज्य के नाम से इस महीने की २४ तारीख को पूर्ण आजादी प्राप्त करने वाला है। पहले निश्चय के अनुसार जम्विया एक प्रेक्षक की हैसियत से सम्मेलन मे भाग लेने वाला था लेकिन भारत ने यह प्रस्ताव किया कि जम्विया चूकि इसी महीने पूर्ण आजादी प्राप्त करने वाला है इसलिए उसे पूर्ण सदस्य के रूप मे ही क्यो न वुलाया जाय। अफ्रीकी देशो ने भारत के इस रुख की काफी सराहना की थी।

कागो के प्रतिनिधित्व के सवाल पर भी भारत ने अफ्रीकी देशो की राय का पूरा समर्थन करके अफ्रीकी देशो के दिल जीते हैं। अफ्रीकी देश यह नही चाहते कि कागो के प्रधान मत्री श्री शोम्वे इस सम्मेलन मे आयें, क्योकि श्री शोम्वे को पश्चिमी देशो का पिट्ठू माना जाता है। इसलिए परराष्ट्र मत्रियो की ओर से कागो के राष्ट्रपति श्री कसाव्रुवू को यह तार भेजा गया कि वे स्वय काहिरा सम्मेलने मे भाग लें और श्री शोम्वे को न भेजें।

भारत ने सम्मेलन मे जो दस सूत्री प्रस्ताव पेश किया है, वही आमतौर से बहस का आधार रहा है। इस प्रस्ताव मे सभी ऐसी बातें आ गयी जो तटस्थ राष्ट्रो के लिए आवश्यक थी।

भारतीय प्रस्तावो मे तटस्थता, शान्तिपूर्ण सहअस्तित्व और विश्व शान्ति पर विशेष जोर दिया गया। इनमे उपनिवेशवाद तथा सम्राज्यवाद की निन्दा की गई और कहा गया कि विभाजित देशो को शान्तिपूर्ण तरीके से एक कर दिया जाना चाहिए तथा उपनिवेशवादियो की इस चाल का विरोध करना चाहिए कि किसी देश का विभाजन किया जाय।

तटस्थ राष्ट्र सम्मेलन पर चीन की छाया इन्दोनेशिया की मार्फत पड रही है। तीन साल पहले वेलग्रेड मे होने वाले प्रथम तटस्थ राष्ट्र सम्मेलन मे भी इन्दोनेशिया ने ऐसा ही रुख अपनाया था, लेकिन श्री नेहरू ने मजबूती से उसका विरोध किया था और पूर्ण सफलता प्राप्त की थी।

चीन के इशारे पर इन्दोनेशिया ने यह प्रस्ताव रखा था कि तटस्थ राष्ट्र सम्मेलन मुख्य समस्या उपनिवेशवाद और साम्राज्यवाद को माने। जबकि भारत का कहना है कि मुख्य समस्या विश्वशान्ति है। भारत का विचार है कि उपनिवेशवाद तो समाप्त हो ही रहा है और जो देश पराधीन रह गये है वे भी आजाद होने जा रहे हैं और जल्दी ही हो जायेंगे। वेलग्रेड सम्मेलन मे भी यही बात श्री नेहरू ने कही थी।

लेकिन इसका मतलब यह नही कि भारत उपनिवेशवाद का समर्थक है। भारत तो सभी देशो की आजादी के पक्ष मे है और सभी पराधीन देशो की आजादी मे सहायता करता रहा है और करता रहेगा।

इन्दोनेशिया का कहना है कि तटस्थ राष्ट्रो के यत्न से विश्व के दो सैनिक गुटो मे युद्ध का खतरा टल गया है इसलिए तटस्थ राष्ट्र अब अपना ध्यान मुख्य रूप से उपनिवेश तथा साम्राज्यवाद के खिलाफ दें। इसका मतलब है कि अमरीका, ब्रिटेन आदि देशो को शत्रु घोषित कर दिया जाय।

भारत इस विचार का विरोध करता है और कहता है कि किसी देश को शत्रु घोषित न किया जाय तथा मुख्य समस्या विश्व शान्ति को हल करने मे लग जाया जाय ।

यहाँ रूस-चीन विवाद को समझ लेना आवश्यक है । रूस विश्व शान्ति तथा सहअस्तित्व के पक्ष मे है । लेकिन चीन कहता है कि जब तक अमरीका जैसे साम्राज्यवादी देश है, तब तक सहअस्तित्व की बात कहना फिजूल है । बस यही बात इन्दोनेशिया की है हालाँकि वह दूसरे ढग से कही गई है ।

इन्दोनेशिया इस बात को नही समझना चाहता कि विश्व शान्ति के लिये यह जरूरी है कि शान्तिपूर्ण सहअस्तित्व की नीति पर चला जाए । शायद चीन की तरह वह भी तथाकथित उपनिवेशवादियो और साम्राज्यवादियो के खिलाफ लडाई छेडने की नीति मानता है तभी तो उसने मलयेशिया को उपनिवेशवाद का गढ कह कर उसके खिलाफ युद्ध शुरू कर रखा है । लेकिन यह नीति तटस्थता से मेल नही खाती । तभी तो तटस्थ राष्ट्र उसकी इस नीति का समर्थन नही कर रहे ।

अब तक की रिपोर्टों के अनुसार इन्दोनेशिया का समर्थन क्यूबा, गिनी और अल्जीरिया कर रहे हैं ।

सयुक्त अरब गणराज्य और यूगोस्लाविया ने भारत की बात को समझा है इसलिए उन्होने समझौते का मार्ग निकालने का यत्न किया है ।

इसी बीच पेकिंग के तानाशाही ने भारत को बदनाम करने का यत्न किया है । उपनिवेशवाद के खिलाफ लडाई को तटस्थ राष्ट्रो की सबसे प्रमुख समस्या न मानने पर भारत को उपनिवेशवादियो का पिट्ठू पेकिंग रेडियो अपने प्रचार मे कहता रहता है ।काहिरा मे हो रहे तटस्थ राष्ट्रसम्मेलन मे निम्नलिखित ५८ देश भाग ले रहे है ।

एशिया महाद्वीप मे भारत, श्रीलका, बर्मा, अफगानिस्तान, नेपाल, कम्बोदिया, लाओस, इन्दोनेशिया, कुवैत, ईराक, जोर्डन, लेबनान, सऊदी अरब,

सीरिया, यमन । अफ्रीका महाद्वीप से—सयुक्त अरव गणराज्य, सूडान, इथियोपिया, सोमाली गणराज्य, केन्या, तागानिका, मलावी, जम्विया, वुरुण्डी, कांगो गणराज्य (लियोपोल्डविले), अगोला, कैमरून, नाइजीरिया, दहोमे, घाना, तोगो लाइवीरिया, सियराल्योन, गिनी, सैनेगल, माली, मारातानिया, मोरक्को, अल्जीरिया, ट्यूनीसिया, लिविया, नाइजर, चाद, केन्द्रीय अफ्रीका सघ । यूरोप महाद्वीप से—यूगोस्लाविया और साइप्रस । पश्चिमी गोलार्ध से—क्यूवा ।

सम्मेलन मे ४७ देशो के प्रतिनिधि हैं तथा ११ देशो के प्रेक्षक है—यूरोप से फिनलैन्ड, पश्चिमी गोलार्ध से वेनेज्वेला, ब्राजील, मेक्सिको, वोलिविया, चिली, अर्जेन्टीना, उरुग्वे, तोवागो-त्रिनिडाड, जमेका, जजीवार ।



भारत का स्वतन्त्रता-आन्दोलन

किसी भी लक्ष्य को प्राप्त करने के लिये जो कष्ट मनुष्य सहता है लक्ष्य प्राप्ति के वाद अगली पीढी उन कष्टो की महिमा न भूल जाय इसलिए इतिहास उठाया जाता है । इस दृष्टि से हम अपनी उन दुर्वलताओ को दूर करें जिन से हम परतन्त्र हुए । क्योकि धर्म के झगडो मे रह कर और विदेशी शासन के प्रभुत्व को मान कर भारतवासियो ने अपनी राष्ट्रीयता की ओर ध्यान नही दिया था । व्रिटिश सत्ता स्थापित करने मे भारतीय स्वय जिम्मेदार थे क्योकि अग्रेजो ने भारतीय वुद्धि और वल के योग मे ही अपना प्रभाव भारत मे वढाया था । अग्रेजो ने आरम्भ मे ही भारत मे 'विलगाव करो और शासन करो' की नीति को अपनाया और भारतवासी उसके शिकार वने ।

देश मे नमक कानून लागू होने पर असन्तोष की लहर फैल गई। जिसके फलस्वरूप गाँधी जी ने देशव्यापी नमक कानून भग का आन्दोलन चलाया। जिसका नेतृत्व स्वर्गीय सरदार वल्लभ भाई पटेल ने किया। देश के वडे-वडे नेता वन्दी बना लिए गए। अन्तत गाँधी-इरविन समझौता हुआ और आन्दोलन समाप्त कर दिया। मदनमोहन मालवीय, महात्मा गाधी और सरोजनी नायडू द्वितीय गोलमेज कान्फ्रेंस मे लन्दन गये। परन्तु अग्रेज शासको का मन पवित्र न था। अत कोई समझौता न हो सका।

सन् १९३७ मे १९३५ के अधिनियम के आधार पर प्रान्तीय सरकारो की स्थापना हुई, परन्तु अग्रेजी सरकार ने प्रान्तीय सरकार की अवज्ञा करके द्वितीय महायुद्ध मे भारतीय सेनाओ को लडने भेज दिया। अत विरोध-स्वरूप काग्रेस मन्त्रिमण्डल ने त्यागपत्र दे दिए। सन् १९४२ मे क्रिप्स महोदय एक योजना लेकर भारत आये, परन्तु समस्त भारतीय जनता ने क्रिप्स का विरोध किया। उसी वर्ष बम्वई के कॉग्रेस अधिवेशन मे महात्मा गाधी के "करो या मरो" और "अग्रेजो भारत छोडो" के प्रस्तावो के फलस्वरूप भारतीय जनता मे क्रान्ति की लहर फैल गई। और समस्त देश मे अराजकता फैल गई। जगह-जगह तोड फोड और अग्निकाण्ड हुए, जिनके दवाने के लिए हवाई जहाजो द्वारा बम वर्षा कर समाप्त करने तक की स्थिति पैदा हो गई। अग्रेजा सरकार की जडें हिल गई।

उन्ही दिनो अमर सेनानी सुभाषचन्द्र वोस अग्रेजी सरकार को चकमा देकर देश से निकल गए और उन्होंने विदेशो मे रहने वाले भारतीयो का सगठन कर सुदृढ आजाद हिंद सेना का निर्माण किया तथा अग्रेजो पर आक्रमण करके उनके छक्के छुडा दिये। दुर्भाग्य से जापान एटम बम के विस्फोट से आतकित होकर हौसला छोड बैठा अत आजाद हिन्द फौज को भी पीछे हटना पडा। परन्तु अग्रेज अपनी स्थिति और भारतीय जनता की सुदृढ जागृति से परिचित हो चुके थे। उन्हे हर समय डर रहने लगा। निदान सन् १९४५ ई० मे एक शिष्टमण्डल भारत को स्वतन्त्र करने का विचार लेकर आया, किन्तु

कुछ अनावश्यक शर्तों के कारण वह असफल रहा पुन प्रयास हुआ, भारत और पाकिस्तान के रूप मे विभाजित करके। यह स्वतन्त्रता सर्वदलीय नेताओ ने मान ली।

१५ अगस्त सन् १९४७ ई० को भारतीय स्वतन्त्रता का प्रथम दिनस घोषित हुआ और समस्त जनता ने हर्षोल्लास के साथ स्वागत किया। साथ ही एक अत्यन्त भयानक दृश्य उपस्थित हुआ कि जो भारतीय और पाकिस्तानी जनता के बीज साम्प्रदायिक विद्वेप का घृणास्पद रूप था। लोगो ने सभी को सहन किया और मातृ-भूमि की श्रद्धा प्रकट की। भारतीय स्वतन्त्रता इतने कडे सघर्पो के पश्चात प्राप्त हुई। जिनमे वीर भगतसिह, चन्द्र शेखर आजाद जैसे सहस्रो मा के लालो ने अपनी आहुति दी।

भरतीय रक्त और वलिदानो मे हमारी स्वतन्त्रता, अकुरित, पल्लवित और पुष्पित हुई है जो अमर रहेगी।



अन्तर्राष्ट्रीय-जगत में भारत का स्थान

राष्ट्रीयता और अन्तर्राष्ट्रीयता शब्द आज के युग मे वहुत प्रचलित हो रहे है। अनेक समस्याएँ इन्ही शब्दो से सम्बन्धित है। अत उक्त विपय का निरूपण करने मे पूर्व यह जान लेना परमावश्यक है कि इसके वास्तविक अर्थ क्या हैं। कुछ समय पहले 'अन्तर्राष्ट्रीयता' शब्द को कोई समझता न था। केवल राष्ट्रीयता का ही भाव था जिससे लोगो का अपने राष्ट्र मे प्रेम हुआ करता था अर्थात मनुष्य जिस देश या राष्ट्र मे उत्पन्न हुआ है उसी के हित मे अपना जीवन लगाना उसका कर्त्तव्य होता था। यही भावना 'राष्ट्रीयता' कहलाती है। किन्तु आधुनिक युग मे विश्व के सभी राष्ट्र एक दूसरे के इतने सन्निकट आगये है कि केवल अपने राष्ट्र के विपय मे ही सोचकर, चुप्पी साधकर वैठ जाना सम्भव नही रहा है।

अब 'राष्ट्रीयता' का क्षेत्र छोटे दायरे से बढ कर विश्व की विशाल सीमाओ को छू रहा है। देश प्रेम के साथ-साथ विश्व प्रेम की दुहाई दी जा रही है। सभी मानव पारिभाषिक रूप से केवल अपने ही देश का अपने को नागरिक नही मानता अपितु विश्व का नागरिक समझता है इसी प्रकार प्रत्येक राष्ट्र विश्वभर के राष्ट्रो की इकाई है। इसी को हम इन शब्दो मे कह सकते हैं, "कि जिस प्रकार बहुत से व्यक्ति एक राष्ट्र मे रहते हैं, ठीक उसी तरह विभिन्न राष्ट्र समूचे विश्व मे रहते हैं, अर्थात एक राष्ट्र विश्वपरिवार का एक सदस्य है"। यही भावना अन्तर्राष्ट्रीयता कहलाती है। हर एक राष्ट्र अपने ही लिये नही अपितु विश्व के लिये जीवित रहता है।

भारतवर्ष यद्यपि आदिकाल से 'विश्वबन्धुत्व' का समर्थक रहा है। तथापि परतन्त्र अवस्था मे अन्तर्राष्ट्रीय जगत मे भारत का स्थान नगण्य हो गया था, किन्तु स्वतन्त्रता प्राप्त कर लेने के बाद फिर से अन्तर्राष्ट्रीय जगत मे महत्त्वपूर्ण स्थान प्राप्त कर रहा है। भारत चाहता है कि वह अकेला ही विकास के क्षेत्र मे अग्रसर न हो बल्कि सभी पिछडे हुए राष्ट्र समान रूप से विकास करें। भारत परतन्त्र अवस्था मे भी इस बात की घोषणा करता रहा है। उस अवस्था मे चाहे उसका मूल्य कुछ भी न रहा हो किन्तु अब पूर्ण स्वतन्त्र होने के बाद उसकी बात ध्यान से सुनी जाती है। इसका एक मात्र कारण यही है कि भारत की नीति स्वार्थ से प्रेरित नही है अपितु सदा न्याय-सगत रहती है। विश्व-शान्ति न्याय और स्वतन्त्रता भारत की विदेश नीति की आधारशिलाए हैं। इसी आधार पर हमने इन्दोनेशिया की स्वतन्त्रता का समर्थन किया, कोरिया के युद्ध को रोकने का प्रस्ताव रखा और मिस्र पर युद्ध के मडराते हुए भयकर बादलो से विश्व को सावधान किया। केवल आत्मिक बल, शान्ति और अहिंसा पर अपूर्व विश्वास रखने के कारण भारत किसी गुट विशेष का चालित यत्र नही है। वह निष्पक्ष नीति से अन्याय का खडन करता है। साथ ही साथ केवल परोपदेश मे ही कुशल नही अपितु उस पर स्वय आचरण करके दिखाता है। 'गोवा' की समस्या इसका ज्वलन्त उदाहरण है।

मानवता के नाम पर पुर्तगाल से भारत की गोवा मे स्वतन्त्रता की अहिंसात्मक माँग सराहनीय है। आगे चलकर उसकी विजय हुई।

आजकल 'सयुक्त राष्ट्रसघ' एक सस्था है जो 'अन्तर्राष्ट्रीयता' का समर्थन करती है। भारत भी उसका एक सदस्य है। यद्यपि इस सस्था के उद्देश्य वडे उदार और सद्भावनापूर्ण है, किन्तु कुछ स्वार्थी और सकीर्ण विचारधाराओ वाले राष्ट्रो की प्रवलता और अधिपत्य के कारण वह पूर्ण सफल नही हो रही है। वहाँ भी निकृष्ट स्वार्थपरता का वातावरण फैला हुआ है। 'अमेरिका और रूस' का पारस्परिक सघर्ष ससार की शान्ति मे प्रवल वाधक के रूप मे उपस्थित हुआ है। उनका दवाव ससार के अनेक राष्ट्रो पर है। अभी हाल ही मे राष्ट्रसघ के सदस्य देशो मे काश्मीर समस्या पर जो भेद-भाव की नीति दिखाई उसमे स्पष्ट हो जाता है कि इन दो वडे राष्ट्रो ने अपने स्वार्थो को पूरा करने के लिए कैसा ढग अपनाया हुआ है। साथ ही इन दो गुटो मे मिलकर अन्य देश केवल इनकी हा मे हाँ मिलाना ही अपना कर्त्तव्य समझते हैं। किन्तु भारत दोनो के निकट रहते हुए भी अपनी स्वतन्त्र निष्पक्ष नीति का प्रसार करता है। यह भारत की एक अनुपम नीतिज्ञता है। भारत विश्व को युद्ध के भीषण परिणामो से सावधान करता हुआ सभी समस्याओ को शांति से सुलझाने के सिद्धान्त पर वल दे रहा है। कुछ राजनीतिज्ञ इस सम्मान का श्रेय प० नेहरू को देते है। किसी हद तक यह ठीक भी है। परन्तु हम देखते हैं कि वर्तमान स्थिति मे भी भारत अपना स्थान सुरक्षित रख रहा है।

इन्ही सब कारणो से आज भारत एशिया का साथ दे रहा है। किन्तु वह दिन दूर नही जब समस्त विश्व भारत की इस विशिष्टता को ध्यान मे देखेगा और भारत द्वारा प्रतिपादित मानवहित आदर्शवाद को अपना कर शान्ति के चिर-स्वप्न को साकार होते देखेगा। इस प्रकार अन्तर्राष्ट्रीय क्षेत्र मे भारत अपना आकर्षक और उन्नत स्थान निर्धारित करता जा रहा है। विश्व की आँखें इस ओर लगी हैं।

संयुक्त राष्ट्रसंघ

आज विश्व के इतिहास के जो पृष्ठ लिखे जा रहे है वह बडी ही विचित्र घटनाओ से युक्त है। आज का सामाजिक और राजनीतिक जीवन सघर्षों का केन्द्र वन गया है। इन सघर्षों की समाप्ति के लिए भी प्रयत्न किये जा रहे हैं। मनुष्यमात्र अपनी अर्जित शक्ति की वृद्धि चाहता है और उसकी अधिक से अधिक सीमा वढकर सर्वशक्तिमान् वनने की इच्छा आज प्रवल होती जा रही है। यही भावना किसी भी देश के वारे मे कही जा सकती है। इतिहास के अनेक युद्ध और सघर्ष इसी विचार की पुष्टि करते है।

जव हम पिछले इतिहास पर दृष्टि डालते है तो अनेक महायुद्धो के भीपण चित्र सामने आते हैं। जिनसे समाज और राजनीति के क्षेत्र मे भारी उथल-पुथल रही। इनमे भी कुछ ऐसे युद्ध हुए जिन्होने विचारो की दिशा ही मोड दी। विगत वर्षो मे महायुद्ध हुए उनमे सन् १९३९ के महायुद्ध ने विश्व की वर्तमान गति-विधि पर वहुत प्रभाव डाला है। यह द्वितीय महायुद्ध के नाम से पुकारा जाता है। इस युद्ध मे विषैली गैसो, वमो, और तोपो का भीपण प्रयोग हुआ जिनके परिणामस्वरुप सारी मानवता चीख उठी। इस महायुद्ध मे हुए भीपण नर-सहार को देखकर ससार के देश भयभीत हो गए। इस भय ने मानव को विवश कर दिया कि वह इन युद्धो का सदा-सदा के लिए अन्त कर दे। मानव का मस्तिष्क अनेक सहारक अस्त्र-शस्त्र का निर्माण कर रहा है। यदि यह मार्ग न रोका गया तो सृष्टि का प्रलय शीघ्र और अवश्य-म्भावी है।

२६ जून १९४५ मे पचास देशो के प्रतिनिधि अमेरिका के 'सांफ्रासिस्को' नामक नगर मे एकत्र हुए और इन शान्तिप्रिय प्रतिनिधियो ने सयुक्तराष्ट्र सघ की स्थापना की। इसका नाम रक्खा गया सयुक्तराष्ट्रसघ अर्थात् विश्व के देशो की सम्मिलित पचायत। इसका जन्म विश्व के लिए कल्याण-कारी क्षणो मे हुआ है।

सयुक्त राष्ट्रसघ का प्रधान कार्यालय अमेरिका मे वना। इसके भिन्न-भिन्न अ ग हैं जिनमे सभी राष्ट्रो के प्रतिनिधि लिए जाते हैं। यह एक ऐसी संस्था जन्मी, एक ऐसा सगठन हुआ जहाँ पहली वार ससार के राष्ट्रो को एक साथ वैठकर विश्व की समस्याओ पर मिलकर विचार करने का सामूहिक रूप से अवसर मिला। इस सघ का सवसे वडा उद्देश्य यह है कि जो समस्यायें या पारस्परिक मतभेद और लडाई-झगडे युद्ध के द्वारा दूर किए जाते थे, वे परस्पर विचार-विनिमय करके विना युद्ध के ही दूर हो जाएँ। ससार के सभी राष्ट्रो की परस्पर शत्रुता नष्ट करके प्रेम वढाना—इस सघ के प्रतिनिधियो का उद्देश्य है—जो वहुत कुछ अशो मे सफल भी हुआ है। राष्ट्रो के वीच किसी भी अन्तर्राष्ट्रीय विवाद का खडा होना सम्भव है। परन्तु उन विवादो को शान्तिपूर्ण ढग से सुलझाने के लिए इस सघ का प्रादुर्भाव हुआ। इससे दो वडे लाभ होने की आशा हुई है—पहला लाभ यह है कि सभी राष्ट्र परस्पर प्रेम से रहे और शान्ति स्थापित हो, जिससे शान्त मानव विश्व के कल्याण के लिए सोच सके, दूसरा लाभ यह हुआ कि राष्ट्रो की सामाजिक और आर्थिक स्थिति को विकास की ओर ले जाने के प्रयत्न हुए। इस कार्य की सफलता के लिए सयुक्त राष्ट्रसघ के विभिन्न कार्यालय और शाखाएँ यत्र-तत्र कार्य कर रही हैं। तीसरा लाभ जो देश किसी से इस आधुनिक दौड मे पीछे रह गए हैं उन्हे गति की ओर ले जाने की सोत्साह प्रेरणा देता है। ये प्रतिनिधि इस प्रकार गतिविधियो का सचालन करते है।

'सयुक्त राष्ट्र सघ' का कोई निश्चित क्षेत्र नही है। इसका कार्य सर्वतोमुखी है। कोई भी राष्ट्र हो—उसके सांस्कृतिक, वैज्ञानिक, औद्योगिक, कृषि सम्बन्धी, पुनर्निर्माण आदि किसी भी लोक कल्याणकारी कार्य मे सयुक्त राष्ट्रसघ पूरी दिलचस्पी से काम लेता है।

इस सघ से पहले लीग ऑफ नेशन्स की स्थापना हो चुकी थी—परन्तु उसके कार्यक्रमो मे कुछ ऐसी कमिया दृष्टिगोचर हुई कि राष्ट्रसघ की स्थापना हुई। इस सघ मे सवसे वडी वात यह है कि प्रत्येक राष्ट्र का

प्रतिनिधि स्वतन्त्र रूप से मत दे सकता है। इसकी कई शाखाएँ हैं। जनरल एसेम्बली, सुरक्षा परिषद्, सार्वभौम न्यायालय अथवा अन्तर्राष्ट्रीय न्यायालय, ट्रस्टीशिप कौंसिल और साधारण असेम्बली आदि शाखाओ मे अन्तर्राष्ट्रीय समस्याओ का समाधान किया जाता है। सुरक्षा परिषद् मे ग्यारह सदस्य होते हैं पाँच स्थायी और छ अस्थायी। अमेरिका, रूस, चीन, फ्रास और ब्रिटेन ये स्थायी सदस्य हैं। इनके विशेषाधिकारो को वीटो अधिकार कहते हैं। यह अन्तर्राष्ट्रीय न्यायालय दूसरे देशो के झगडो का निपटारा करके अन्तिम निर्णय देता है। ट्रस्टीशिप कौंसिल पराजित राष्ट्रो की देखभाल करती है। इस कौंसिल का एक भाग सचिवालय न्यूयार्क मे है।

सयुक्त राष्ट्रसघ ने अपने जीवन के १९ साल पूरे करके २० वें साल मे प्रवेश कर रहा है। २४ अक्तूबर १९४५ को जब इसका पहला जलसा हुआ था, तब इसके सदस्य राष्ट्रो की सख्या ५० थी। आज सदस्य देशो की सख्या बढकर ११३ तक पहुँच गयी है। इनमे से आधे से अधिक देश एशिया और और अफ्रीका के हैं। सयुक्त राष्ट्रसघ की स्थापना के लिए जब पाँच बडे देशो—अमरीका, ब्रिटेन, रूस, फ्रास और चीन ने डम्बर्टन ओक्समे बैठकर विचार किया था, तब यह स्वीकार किया गया था कि दुनियाँ के सभी देशो की ऐसी मिली-जुली सस्था होनी चाहिए जो राष्ट्रो की काफी समस्याओ पर मिल बैठकर विचार करे।

सयुक्त राष्ट्रसघ ने विश्व शान्ति के लिये अब तक जो काम किया और नये-नये आजाद देशो की तरक्की मे वह जिस तरह सहायक हो रहा है, उसका ब्योरा बहुत लम्बा है। लेकिन इसका मतलब यह नही कि सयुक्त राष्ट्रसघ को नाकामयाबी नही मिली। दक्षिण अफ्रीका आज भी रगभेद की नीति पर चल रहा है। सयुक्त राष्ट्रसघ मे यह मामला १९४६ से ही पेश है। बृहत्सभा की बैठक मे हर साल यह सवाल उठाया जाता है, पर दक्षिण अफ्रीका टस से मस नही हुआ। अगोला और मोजाम्बिक मे पुर्तगाली साम्राज्यवाद तरह-तरह के अत्याचार कर रहे हैं।

राष्ट्रपति डा० राधाकृष्णन ने सयुक्त राष्ट्रसघ दिवस के मौके पर अपने सन्देश मे एक बार कहा था कि अब समय आ रहा है कि सयुक्त राष्ट्रसघ को दुनियाँ भर के लिए कानून वनाने, विश्व सरकार को चलाने और शान्ति वनाये रखने के लिए पुलिस की हैसियत से काम करने के अधिकार दिये जायें । जैसे-जैसे समय गुजरता है सयुक्त राष्ट्रसघ के क्रियाकलाप उभरकर सामने आते जा रहे हैं ।

विश्व शान्ति और जन-कल्याण की जितनी समस्याएँ आज हैं मानव इतिहास मे शायद इतनी पहले कभी नही रही । विज्ञान और टेकनालॉजी ने शक्ति के इतने स्रोत खोल दिये है कि दुनियाँ की शक्ल वदल देना आसान हो गया है । लेकिन साथ ही विश्व विनाश का भी जवर्दस्त खतरा पैदा हो गया है । मानव ने तरक्की तो की है, लेकिन वह अपनी कमजोरियो से अव तक छुटकारा नही पा सका । जव तक दुनियाँ मे भूख, गरीवी, रोग, निरक्षरता, भेद-भाव है, तव तक अशान्ति का खतरा भी वना रहेगा । इन खतरो को सयुक्त राष्ट्रसघ और उसकी सहायक सस्थाओ को मजवूत वनाकर ही टाला जा सकता है । यदि ऐसी सस्थाए शान्ति के प्रभाव मे आकर अपना कर्तव्य भूल वैठी, तो निश्चय ही मानव के लिए सिद्ध इनकी निरर्थकता इनके अस्तित्व को खतरे मे डाल देगी । आज की स्थिति मे यह अत्यन्त आवश्यक हो गया है ।



भारतीय संविधान

आज से कुछ वर्ष पूर्व हमारा भारत परतन्त्रता मे जकडा हुआ था । अंग्रेजी साम्राज्यवाद के आधीन रहने के कारण भारत का अपना स्वतन्त्र अस्तित्व नही था । इसका भाव यह था कि हम ब्रिटिश पार्लियामेंट के

अनुसार निर्मित सविधान के अन्तर्गत अपना जीवन क्रम चला रहे थे। एक समय आया—हमारा चिरप्रतीक्षित स्वप्न १५ अगस्त की पहली स्वर्णकिरण के साथ साकार हुआ। इस स्वप्न की धूमिल रूपरेखा का स्पष्ट चित्र १९४९ ई० मे सामने आया। स्वतन्त्र मानव पक्षी को जग मुक्त स्वर्ण-विहान मिला तो उसके हृदय सागर की हिलोरें आकाश को चूमने लगी, परन्तु उत्तरदायित्व का भार साथ मिला भारत स्वाधीन राष्ट्र घोषित हो गया। स्वाधीन राष्ट्र का अपना सविधान होता है। भारतीय जनता को भारतीय विधान-परिषद् द्वारा नवीन विधान मिला। गणतन्त्र दिवस का मूल्य सामने आया। सारे भारत ने घी के दीप जलाए—क्योकि वह राष्ट्र का अपना विधान था, उसे अपने विधान और अनुशासन सूत्रो की व्याख्या पाकर अपार प्रसन्नता हुई। तभी हर वर्ष १५ अगस्त को सभी प्रदेशो की राजधानियो मे वहा के राज्यपाल, मुख्य मन्त्री व अन्य उच्च अधिकारी सैनिक परेड से सलामी लेते हैं तथा नए झण्डे का अरोहण करते हैं।

१५ फरवरी, १९४९ को विधान परिषद् की प्रथम बैठक हुई इसमे विधान के रेखा-चित्र प्रस्तुत किए गए। एक वर्ष के सतत् परिश्रम के पश्चात् २६ जनवरी १९५० को विधान लागू कर दिया गया। इस विधान को रूप देने मे तीन वर्ष का समय लगा, परन्तु भारतीय सविधान विश्व मे अपना एक महत्वपूर्ण दृष्टिकोण रखता है। डा० अम्बेदकर की प्रधानता मे विधान की रचना हुई। भारत के सामाजिक, आर्थिक, धार्मिक, और राजनीतिक जीवन के प्रति स्वतन्त्रता का दृष्टिकोण रखते हुए नवीन विधान को जन्म दिया गया। यह घोषणा डा० राजेन्द्रप्रसाद ने की।

यह विधान २२ खण्डो मे विभाजित किया गया, जिसमे ३९५ धाराएँ है और ९ परिशिष्ट हैं। विधान के विस्तार का सबसे बडा प्रमाण यह है कि अपने समय मे परिषद् को लगभग ढाई हजार सशोधनो पर विचार करना पडा है। इस भारतीय सविधान की रूप रेखा समानता, उदारता और भ्रातृत्व जैसे उच्च आदशो के आधार पर प्रस्तुत की गई है।

इस सविधान मे मुख्य बातें यह हैं—

१—धर्म, जाति कुल आदि के भेद-भाव को ध्यान मे न रखकर सभी भारतीय नागरिको को समान अधिकार प्राप्त होगे। ऊँच-नीच गरीब-अमीर सभी सविधान की दृष्टि मे समान होगे।

२—धार्मिकता की दृष्टि से सभी स्वतन्त्र होगे। प्रत्येक नागरिक अपना धर्म अपनी इच्छानुसार रख सकेगा।

३—शिक्षा-व्यवसाय और सम्पत्ति मे सभी समान अधिकारी है।

४—२१ वर्ष के सभी पुरुषो-स्त्रियो को मताधिकार प्राप्त होगा।

५—किसी भी प्रकार की छुआछूत नही रहेगी। साम्प्रदायिकता अवैधानिक मानी जायगी।

६- जीवन-रक्षा और मत प्रकाशन आदि का सभी को अधिकार होगा।

७—प्रत्येक व्यक्ति को आजीविका के साधन सुलभ होगे। १४ वर्ष से कम आयु के व्यक्ति को कल-कारखानो मे नही लिया जायेगा आदि।

इस प्रकार सविधान मे भारतीय जीवन को सर्वस्वतन्त्र और सुखी बनाने का आयोजन हुआ, इसकी कुछ और मुख्य विशेपताएँ ये है। इस विधान मे समस्त राज्य व्यवस्था को तीन अगो मे विभाजित कर दिया है। (१) शासन व्यवस्थापना मे न्याय-प्रधान और उपप्रधान का पद पचवर्षीय (२) राष्ट्र-पति की शासन-सुविधा के लिए मन्त्रिमण्डल। (३) प्रधान मत्री की नियुक्ति राष्ट्रपति द्वारा।

राज्य सघ की एक परिषद् होगी। इसमे दो विधायक सभाएँ होगी—राज्य परिषद् तथा लोक-सभा। राज्य सभा के सदस्यो की सख्या २५० और लोक-सभा के सदस्यो की सख्या ५०० से अधिक नही होगी। राज्य परिषद् कभी भग न होगी, वरन् उसके एक तिहाई सदस्य प्रत्येक दो वर्ष के बाद पृथक कर दिए जायेंगे। उपराष्ट्रपति राज्य परिषद् का प्रधान होगा।

सारा राष्ट्र विविध राज्यो मे विभक्त होगा प्रत्येक राज्य के लिए एक राज्यपाल और उसकी सहायता के लिए एक मन्त्रिमण्डल होगा। व्यवस्थापक

मण्डल मे दो सभाएँ होगी। जिन्हे विधान परिषद् तथा विधान मण्डल कहा जायगा। राज्यो मे न्याय के लिए उच्च न्यायालय रहेगे।

इस विधान मे अभी कुछ अधूरापन है। सर्वप्रथम तो प्रत्येक व्यक्ति को मताधिकार देकर उचित नही किया गया। क्योकि आज भारतीय जनता मे शिक्षा की बहुत कमी है। इसलिए उन्हे मतदान का मूल्य ज्ञात नही। कुछ चाँदी के टुकडो पर मत खरीदने के अनेक उदाहरण मिलते हैं। जिनका परिणाम यह होता है कि अयोग्य व्यक्ति विजयी हो जाते हैं। यही अयोग्य व्यक्ति शासन के प्रवन्ध मे अनेक बाधायें उपस्थित कर देते हैं। जनता को अनेक कष्टो का सामना करना पडता है। दूसरी बात यह है कि लोक-सभा के निर्माण के बाद राज्य सभा की आवश्यकता नही थी। इस सभा से जनता पर व्यर्थ का भार आ पडता है। वह धन जो इस सभा पर व्यय किया जा रहा है अनेक दूसरी लाभकारी योजनाओ पर व्यय किया जा सकता था। इस प्रकार विधान केवल राम-राज्य की कल्पना मात्र बनकर रह गया है। अभी उसमे सुधार की आवश्यकता है। इम विधान मे श्रम का सही मूल्य नही आँका गया। इसीलिए वास्तविक अर्थ मे देश मे साम्राज्यवादी व्यवस्था स्थापित नही हो सकी। अत सरकार को इन सुधारो पर ध्यान देते हुए विधान को सैद्धान्तिक न रखकर क्रियात्मक रूप देना चाहिए जिससे जनता राम-राज्य के स्वप्न को साकार होता देख सके। सविधान का स्वरूप आवश्यकता के अनुसार परिवर्तित होता रहता है। देश का विशाल सविधान धीरे-धीरे अनेक रूपो से पूर्णता प्राप्त कर रहा है।



काश्मीर की समस्या

काश्मीर भारत की स्वर्ग भूमि है। इस प्रदेश का इतिहास, भूगोल की दृष्टि से बहुत महत्वपूर्ण है। भौगोलिक दृष्टि से इसकी सीमा नेपाल, रूस, पाकिस्तान और भारत से मिलती है। इस प्रदेश का वर्णन सस्कृति साहित्य मे बडे आदर और गौरव के माथ किया गया है। महाराजा अशोक के राज्यकाल मे इस प्रदेश की बहुत उन्नति हुई थी। इसके बाद काश्मीर के इतिहास ने अनेक उत्थान-पतन देखे। अन्त मे इसे मुगलो से छीनकर महाराजा रणजीत सिंह ने गुलाबसिंह को दे दिया और तभी से यहाँ डोगरा नरेशो का राज्य रहता आया है।

भारत से अंग्रेजो ने पलायन किया, परन्तु जाने से पहले वे अपनी कूट-नीति के बीज इस देश मे फिर भी छोड गये। जिसके कारण रियासतो की समस्या उत्पन्न हुई। सरदार पटेल ने अपनी कुशाग्र बुद्धि से इस समस्या को सुलझा डाला और अनेक रियासतो को भारत सघ मे मिला लिया, परन्तु १५ अगस्त, १९४७ को काश्मीर के महाराजा हरिसिंह ने 'यथास्थिति' रहने की घोषणा की। अर्थात वह उस समय न तो भारत मे मिलना चाहते थे और न पाकिस्तान मे, वे तटस्थ रहने के इच्छुक थे। इस स्थिति को देखकर पाकिस्तान ने कुछ कबालियो को काश्मीर पर आक्रमण करने की प्रेरणा दी। इन कबालियो ने बडी ही तीव्रगति से काश्मीर को घेर लिया और निरीह प्रजा पर अनेक अत्याचार करते हुए श्रीनगर की ओर बढने लगे। काश्मीर नरेश की थोडी सी सेना उस टिड्डी-दल का मुकाबला न कर सकी। जब यह कबायली दल श्रीनगर से केवल २० मील दूर रह गया, तब वहाँ के राजा को होश आया और उसने काश्मीर रक्षा के लिए शेख अब्दुल्ला को जेल से रिहा करके भारत सरकार के पास भेजा। लेकिन भारत-सरकार की शर्त यह थी कि पहले काश्मीर का भारत मे विलय होना आवश्यक है। शेख अब्दुल्ला उसी रात को आवश्यक कागजो पर महाराजा के हस्ताक्षर करवा कर प्रात

चार बजे वापिस लौटे और भारतीय सेना वायुयानो से काश्मीर की ओर उड चली। जिस समय भारत के सात वीरो को लेकर पहला वायुयान पहुँचा, उस समय कबायली श्रीनगर से केवल दो मील दूर रह गये थे। इन सात वीरो ने उन अत्याचारियो की बढती हुई बाढ को एक दम रोक दिया। उसके बाद दो-दो मिनट पर भारतीय वायुयान वहा पर पहुँचने लगे और शत्रुओ का डटकर मुकाबला किया। इन वीरो ने आगे बढते कबालियो को पीछे धकेलना शुरू किया और अनेक स्थानो को उनके हाथ से छीनकर उन पर पुन अपना अधिकार कर लिया। इस प्रकार श्रीनगर तो बच ही गया, साथ ही कुछ समय बाद जम्मू को भी अपने अधिकार मे कर लिया। इस पराजय को देखकर पाकिस्तान ने अपनी सुरक्षित सेना को आगे बढाया। परन्तु उसको भी इसी प्रकार मुह की खानी पडी। अनेक पाकिस्तानी अफसर गिरफ्तार कर लिए गए और बहुत-सी सैनिक सामग्री भारतीय सेना के हाथ लगी।

इस गम्भीर समस्या को सुलझाने के लिए यह प्रश्न सयुक्त राष्ट्रसघ मे पेश किया गया। पहले तो पाकिस्तान ने इस सम्बन्ध मे स्पष्ट इन्कार कर दिया कि हमारा इस लडाई से कोई सम्बन्ध नही है। परन्तु जब अनेक ऐसे प्रमाण उपस्थित किये गए, जिनसे उसकी सेनाओ का युद्ध मे भाग लेना प्रमाणित हो गया, तो उसने काश्मीर मे जनमत का प्रश्न रखा। उसका विचार था कि मुस्लिम बहुप्रदेश होने से इस प्रकार काश्मीर पाकिस्तान को मिल जायगा। परन्तु भारत ने पाकिस्तानी सेना के काश्मीर से हट जाने के बाद ही जनमत लिया जाना स्वीकार किया। अन्त मे सयुक्त राष्ट्रसघ की ओर मे कई कमीशन आये और चले गये, परन्तु प्रश्न हल न हो सका। केवल इतना ही सम्भव हुआ कि दोनो देशो मे युद्ध विराम हो जाये और इस प्रश्न को शान्ति से सुलझाया जाए।

सयुक्त राष्ट्रसघ के इस प्रयत्न से काश्मीर मे अस्थायी युद्ध-विराम तो हो गया, परन्तु शेष समस्या ज्यो की त्यो है। भारतीय नीति शान्ति की नीति

है इससे भारत अव तक काश्मीर मे जनमत द्वारा ही वहा की जनता का भाग्य निर्णय चाहता था। परन्तु स्थिति अब भिन्न हो गई है। अत भारत अव जनमत सग्रह के पक्ष मे नही है। उधर पाकिस्तान काश्मीर मे जनमत-सग्रह के लिये शोर मचा रहा है। कुछ समय पूर्व भारत का दौरा करते हुए जव रूसी नेता काश्मीर गए थे, तव उन्होने कहा था—"भारतीय गणतन्त्र के एक राज्य के रूप मे काश्मीर के मसले का फैसला काश्मीर जनता स्वय पहले ही कर चुकी है। यह जनता का निजी मामला है।" रूसी नेताओ का यह कथन पूर्णत सत्य है। परन्तु करांची मे हुए सीएटो सम्मेलन के समय और उनके वाद से तो पाकिस्तान काश्मीर के सम्वन्ध मे ऐसी वातें कर रहा है, मानो भारत ही काश्मीर के प्रति अपराधी है। ब्रिटेन के परराष्ट्र मन्त्री श्री लायड ने दिल्ली पत्रकार सम्मेलन मे स्वीकार किया था कि सीएटो-सम्मेलन मे काश्मीर का मामला नही उठाना चाहिए, परन्तु पाकिस्तान ने अपने इन मित्रो पर दवाव डाला और इस दक्षिण-पूर्वी एशियाई सधि-सगठन के सदस्यो ने काश्मीर मे यथाशीघ्र जनमत-सग्रह का प्रस्ताव स्वीकार किया। पाकिस्तान इस समय अमेरिकन-शस्त्र-सहायता के वल पर अपने मे एक नई शक्ति अनुभव करता है। पाकिस्तान के नेता इस समय काश्मीर को जनमत-सग्रह की अपेक्षा सैनिक वल से हथिया लेने पर अधिक वल दे रहे है। पाकिस्तानी समाचार पत्र 'जिहाद' के नारे लगाकर इस प्रश्न पर पाकिस्तानी जनता को उत्तेजित कर रहे है।

परन्तु भारत के प्रधान मन्त्री श्री नेहरू ने लोक-सभा तथा दिल्ली के रामलीला मैदान मे हुई एक सार्वजनिक सभा मे कहा था कि काश्मीर मे युद्ध विराम के वाद जो पिछले वर्षो मे घटनाएँ घटी है, उनके कारण अव काश्मीर मे पच-निर्णय अथवा जनमत सग्रह का कोई प्रश्न ही नही रहा। उन्होने कहा कि जनमत सग्रह के लिये काश्मीर से पकिस्तानी सेनाओ का हटाना आवश्यक था। काश्मीर के भाग्य का निर्णय वहाँ की विधान सभा ने वहुमतसे भारत मे मिलने का निर्णय कर दिया है। आज काश्मीर भारत की सहायता से अपने

विकास कार्यों मे लगा हुआ है। वहा के भूमि-सुधारो, महान विकास योजनाओ और उसकी सुख-समृद्धि को देखकर पाकिस्तान अधिकृत आजाद काश्मीर जनता भी इस भाग मे आने को लालायित है। नेहरू जी ने अपने वक्तव्य मे कहा कि जब सन् १९४७ मे काश्मीर का मामला कुछ सुलझने पर था और पाकिस्तान के प्रधान मन्त्री से समझौते की बातें चल रही थी, तभी अमेरिका ने पाकिस्तान को सैनिक सहायता देकर एक नई परिस्थिति पैदा कर दी और बाद मे दक्षिण पूर्वी एशियाई सगठन सधि तथा बगदाद सधि मे पाकिस्तान का शामिल होना हमारे लिए विचारणीय प्रश्न हो गया। इन सब परिस्थितियो से भारत उदासीन नही रह सकता था। भारत के लिये अब यह आवश्यक हो गया है कि काश्मीर से पाकिस्तानी सेनाओ के हट जाने की माग करे। यह तो सभी को मालूम है कि काश्मीर मे पाकिस्तान एक आक्रामक के रूप मे है। काश्मीर पर उनका अधिकार न तो न्याय-सगत है और न ही नैतिक दृष्टि से उचित। सयुक्त राष्ट्र सघ के १६ अगस्त १९४९ के प्रस्ताव मे भी यह स्वीकार किया गया था कि काश्मीर से पाकिस्तानी सेनाओ को हट जाना चाहिए।

५ जनवरी, १९४९ मे पाकिस्तान ने काश्मीर-आयोग के सामने अपनी सेनाओ को काश्मीर से हटाना स्वीकार किया था। केवल सुरक्षा के लिए थोडी सी सेना को छोडकर भारत को भी वहाँ से अपनी अधिकांश सेना को हटा लेना चाहिये। राज्य की सुरक्षा के लिये भारत की कुछ सेना का काश्मीर मे रहना आयोग ने स्वीकार किया था। काश्मीर जनमत सग्रह के लिये तैयार था। परन्तु इस प्रस्ताव के अनुसार आज तक भी पाकिस्तान ने वहाँ से अपनी सेना नही हटायी है। ऐसी स्थति मे भी पाकिस्तान काश्मीर मे जनमत सग्रह और पचनिर्णय की माँग करके ससार को ऐसा दिखा रहा है मानो वह लोकमत का सबसे अधिक समर्थक हो।

शान्ति नीति के नाम पर भारत ने काश्मीर का मामला सयुक्त राष्ट्र सघ मे भेजकर गलती की थी और इस गलती को सुधारने का प्रयत्न जनसघ

के नेता श्री श्यामा प्रसाद मुखर्जी ने किया। इसके लिये उन्होने काश्मीर जेल मे अपना बलिदान भी दे दिया परन्तु यह भूल फिर भी न सुधरी और उसी का परिणाम आज भारत भोग रहा है।

पाकिस्तान काश्मीर की समस्याओ को बलपूर्वक सुलझाने के लिए भारत पर अनेक प्रकार से सैनिक और आर्थिक दवाव डाल रहा है। सीमान्त झगडे, बगदाद तथा सीएटो जैसी सैनिक सगठन सधिया और अमेरिकन शस्त्रो का सग्रह पाकिस्तान के इसी प्रकार के प्रयत्न हैं। परन्तु इस सम्वन्ध मे भारत के प्रधान मन्त्री श्री नेहरू ने लोक सभा मे रक्षा-मन्त्रालय के लिये की गई आर्थिक माँगो के समय वहस का उत्तर देते हुए कहा कि यह ठीक है कि पाकिस्तान को काफी वडी मात्रा मे फौजी सहायता मिल रही है। इससे तथा पाकिस्तान के रवैये से भारत के लोगो मे यह सन्देह और भय होने लगा है कि कही पाकिस्तान भारत पर हमला न कर दे। इस परिस्थिति के भय से घवरा कर अपनी औद्योगिक नीति को नही छोड देना चाहिये। हम समय आने पर अपनी रक्षा मे पूर्ण समर्थ हैं। इस प्रकार यदि पाकिस्तान केवल अमेरिकन हथियारो की सहायता से या सीएटो-सधियो अथवा सीमान्त झगडो से भारत को भयभीत करके काश्मोर पर अपना अधिकार करना चाहता है तो यह उसका केवल भ्रम है। काश्मीर पर आक्रमण भारत पर आक्रमण समझा जायगा और भारत इस प्रकार के आक्रमण से अपनी रक्षा करने मे हर प्रकार से समर्थ है।

अव न्याय-सगत वात यही है कि पकिस्तान विना किसी सघर्ष के मित्रता पूर्वक काश्मीर की समस्या को हल करले और भारत के 'पचशील' आधार पर सधि करके शाँति के साथ अपने देश की जनता की उन्नति मे लग जाए, क्योंकि दोनो ही देशो की जनता सुख, शान्ति और समृद्धि की इच्छुक है, और उसके लिये उपर्युक्त मार्ग ही उचित है।

इस समस्या के समाधान के लिये सयुक्तराष्ट्रसघ मे रूस ने कई वार

'वीटो' का प्रयोग किया है। 'वीटो' एक प्रकार का विशेषाधिकार है। रूस ने इस प्रयोग से यह सिद्ध किया है कि वह अन्याय और पक्षपात को सहन नही कर सकता।



भारतीय राज्यों की शासन व्यवस्था

जनवरी १९५६ का वर्ष देश के विविध भागो मे एक तूफान लेकर आया। उस समय भाषा के आधार पर राज्यो के पुनर्गठन प्रश्न को लेकर देश मे जो तूफान उठा, उसे देखकर तो ऐसा मालूम होता था, मानो इस देश के नेताओ ने निश्चय कर लिया हो कि भारत की एकता रहे या न रहे, परन्तु उनके अपने प्रान्तो की एक इच भूमि इधर से उधर नही जाने देंगे। बगाल, विहार, गुजरात तथा पजाव आदि प्रान्तो मे उठे आन्दोलन को देखकर कोई यह नही कह सकता था कि इन प्रान्तो के रहने वाले किसी एक ही देश के निवासी है। यह ठीक है कि राज्यो की इस पुनर्गठन योजना से देश की कुछ भूमि यहाँ से उठाकर कही वाहर नही भेजी जा रही थी, फिर भी न जाने क्यो इन प्रान्तीय नेताओ ने जनता को इस प्रकार उत्तेजित किया ? जो प्रश्न शान्ति से आपस मे विचारविमर्श मे हल हो सकता था उसी के लिये कुछ नेताओ ने वम्वई की गलियो मे सुलझाने की घोषणा करके देश के सामने एक सकट पैदा कर दिया।

यह ठीक है कि भाषा के आधार पर प्रान्तो का विभाजन भी अपना औचित्य रखता है। अग्रेजो ने भारत का जिस प्रकार प्रान्तीय विभाजन किया था, वह न तो देश की भौगोलिक स्थिति के आधार पर था और न भाषा या सस्कृति के आधार पर ही। उन्होने तो केवल अपने शासन, मोर्चेवन्दी और आर्थिक लाभ की दृष्टि से ही देश के प्रान्तो का विभाजन किया था। उनके

सामने जनता की इच्छा का कोई प्रश्न न था अपितु अपनी शासन-व्यवस्था का प्रश्न था। इसका परिणाम यह हुआ कि एक ही प्रान्त मे विभिन्न भाषा-भाषी लोग एकत्र हो गये। इससे सामाजिक उन्नति मे बाधा तो अवश्य पडती है, परन्तु अग्रेजो को यहाँ की जनता की उन्नति की चिन्ता न थी। देश के नेताओ ने प्रान्तो के पुनर्गठन का प्रश्न उठाया और १९२१ मे काग्रेस ने इस सम्बन्ध मे एक प्रस्ताव पास किया। १९४७ मे भारत के स्वतत्र होने पर यह प्रश्न विशेष रूप से सामने आया और जयपुर काग्रेस अधिवेशन मे भाषा के आधार पर प्रान्तो के निर्माण पर बल दिया गया। इसके बाद तो अनेक प्रान्तो मे यह आन्दोलन जोर पकडता गया। आन्ध्र प्रान्त के निर्माण के लिए वहा के एक नेता श्री रामुलु रेड्डी ने तो अनशन करके अपने प्राण भी त्याग दिए। इस बलिदान से वहाँ की जनता उत्तेजित हो उठी और सरकार को आन्ध्र-प्रान्त का भाषा के आधार पर निर्माण करना पडा। आन्ध्र-प्रान्त के इस निर्माण को देखकर अन्य प्रान्तो मे भी इस सम्बन्ध मे आदोलन प्रारम्भ हो गए। पजाब मे पजाबी भाषा के लिए अकाली नेता मास्टर तारासिंह व दिल्ली को महा-दिल्ली बनाने के लिए चौधरी ब्रह्मप्रकाश का नेतत्व सामने आया। इसी प्रकार गुजरात, महाराष्ट्र, कर्नाटक, बगाल और बिहार मे भी भाषा के आधार पर प्रान्तो के गठन की माँग की जाने लगी। सरकार ने आन्दोलन को देखकर सन् १९५३ मे एक आयोग की नियुक्ति की, जिसको यह देखना था कि देश की एकता और सुरक्षा तथा सामाजिक और आर्थिक उन्नति के लिए किस प्रकार भाषा के आधार पर देश का पुनर्गठन सम्भव है। इस आयोग मे देश के तीन निष्पक्ष और विद्वान व्यक्ति थे, जिनमे अध्यक्ष श्री सैयद फजलअली और सदस्य के रूप मे डा० हृदयनाथ कुजरू और श्री के० एम० पणिक्कर थे। यह आयोग देश के सभी भागो मे गया और जनता तथा नेताओ के विचार सुने। अन्त मे बडी सोच समझ के बाद इस आयोग ने अपने सुझाव सरकार के सामने रखे।

इस आयोग ने अनेक महत्वपूर्ण प्रश्नो को अपने सामने रखते हुए स्पष्ट किया है कि देश की सामाजिक और शासन सम्बन्धी सुविधाओ को छोड

कर केवल भाषा के आधार पर प्रान्तो का पुनर्गठन करना उचित न होगा। केवल भाषा को ही आधार मान कर शेष सभी राजनीतिक, आर्थिक और शासन सम्बन्धी सुविधाओ को भुला देना राष्ट्रीय एकता के लिए हानिप्रद है। साथ ही साम्प्रदायिक आधार पर भी इस प्रश्न को सुलझाने का प्रयत्न करना सविधान के सिद्धान्त के विरुद्ध है। यदि 'एक भाषा एक राज्य' के सिद्धान्त को स्वीकार कर लिया गया, तो एक ही प्रान्त मे अनेक भाषा-भाषी लोग रहते हैं, उनके लिए भी यह एक समस्या सिद्ध होगी। अत यह सिद्धान्त भी उचित नही। राज्यो के पुनर्गठन के समय साम्प्रदायिक और प्रान्तीयता की भावनाओ को भी बल न पकडने दिया जाय, क्योकि इससे भी देश की एकता और राष्ट्रीयता पर आघात होगा। प्रान्तो की आत्म-निर्भरता तथा शासन व्यवस्था को भी देखना आवश्यक है। यदि कोई प्रान्त स्वय अपने साधनो के बल पर अपना विकास नही कर सकता, तो वह सदा केन्द्र के लिए भार-स्वरुप बना रहेगा। साथ ही प्रान्तो की सीमाए इस प्रकार निर्धारित हो कि शासन करने मे किसी प्रकार की असुविधा न हो। (क), (ख) तथा (ग) के रूप मे राज्यो का वर्गीकरण समुचित नही है। 'ग' श्रेणी के राज्य समाप्त हो और 'ख' श्रेणी राज्य 'क' श्रेणी के राज्य के समान हो। सुरक्षा और आर्थिक दृष्टि से 'ख' श्रेणी के कुछ राज्य, जिनकी शासन-व्यवस्था उचित नही है, पास के दूसरे प्रान्तो मे मिला दिए जाएँ और जिनके लिए यह सम्भव न हो, उन पर केन्द्रीय शासन रहे। इस प्रकार समस्त प्रान्तो का विभाजन दो रूपो मे रहे। एक (क) ऐसे राज्य जो भारतीय सघ के अग हो और दूसरे (ख) राज्य जिन पर सीधा केन्द्र का शासन हो, इस प्रकार १६ प्रान्तो का निर्माण होना चाहिए। आयोग ने इस नये प्राती की जो रूप रेखा दी, वह इस प्रकार थी—मद्रास, केरल, हैदराबाद, आन्ध्र, बम्बई, विदर्भ, मध्य प्रदेश, राजस्थान, पजाब, उत्तर प्रदेश, विहार, पश्चिमी बगाल, आसाम, उडीसा तथा जम्मू कश्मीर। दिल्ली, मणीपुर और अण्डमान निकोबार को केन्द्रीय शासन के अन्तर्गत रखा गया। महादिल्ली, पजाबी भाषी पजाब तथा हरियाणा प्रांतो की मांगो को

स्वीकार नही किया गया। इन प्रान्तो के वर्गीकरण मे उत्तर प्रदेश, उडीसा तथा काश्मीर मे किसी प्रकार का परिवर्तन नही किया गया।

इस प्रकार कुछ प्रान्तो को छोडकर शेप प्रान्तो मे काफी काट-छाँट की गई है। वम्वई मे राज्य पुनर्गठन आयोग की विज्ञप्ति पर प्रतिक्रिया हुई और जब वम्वई नगर को शासन केन्द्र ने अपने आधीन करने का निश्चय किया तो सयुक्त महाराष्ट्र के समर्थको ने आन्दोलन किया और उस आन्दोलन ने हिंसात्मक रूप धारण कर लिया जिसको शान्त करने के लिए पुलिस को गोली तक चलानी पडी इसी मतभेद के कारण केन्द्रीय वित्तमन्त्री श्री देशमुख ने मन्त्रिमण्डल से त्याग पत्र दे दिया। अन्त मे वम्बई और गुजरात के अनेक नेताओ की इच्छा को मान्यता दी गई और वम्बई को द्विभापी राज्य घोपित कर दिया गया।

भारतीय ससद् ने राज्य पुनर्गठन की प्रस्तावना को १ नवम्बर, सन् १९५६ से एक विधेयक का रुप दिया और चौदह राज्यो का पुनर्गठन कर दिया। जम्मू तथा कश्मीर, पजाब, राजस्थान, उत्तर प्रदेश, विहार, पश्चिमी वगाल, मध्य प्रदेश, आसाम, उडीसा, वम्वई, मैसूर, आन्ध्र, मद्रास और केरल राज्य। इनके अतिरिक्त हिमाचल प्रदेश, मनीपुर, त्रिपुरा, अण्डमान-निकोवार तथा राजधानी दिल्ली केन्द्र द्वारा प्रशासित होगे। इस राज्य पुनर्गठन तथा शासन व्यवस्था से कुछ लोग असन्तुष्ट हैं परन्तु उन्हे केवल प्रान्तीयता के आधार पर विचार न कर उन्हे विशाल हृदय का परिचय देते हुए समस्त भारत की उन्नति प्रगति और विकास के लिए विचार करना चाहिए।

आज हमे न तो वग-माता का दर्शन करना है और न महाराष्ट्र-माता का हमे तो भारत माता के दर्शनो की आवश्यकता है। भारत विशाल देश है वगाल, महाराष्ट्र, उडीसा गुजरात, पजाव आदि उसके प्रदेश अगमात्र हैं। इनके समुच्चय का नाम ही भारत है। भारतवासी होने से सभी प्रान्त हमारे रहेगे। यदि प्रान्त का कोई भाग इधर या उधर जाता है तो इससे वह देश से बाहर तो नही जाता वह रहेगा तो भारत का ही अग। इसलिए हमे केवल

भारतवासी ही होना चाहिए। भारत है तो सभी प्रान्त है, यदि भारत ही नहीं, तो प्रान्तो का भी अस्तित्व नही।

शासन व्यवस्था के सूत्रो का भी सब प्रबन्ध ठीक है। प्रान्तीय सरकारें शासन व्यवस्था को ठीक रखने के लिए केन्द्र से सलाह भी करती हैं। केन्द्र भी आर्थिक तथा अन्य प्रकार की सहायता और सुविधा जुटाकर प्रान्तो की कठिनाइयाँ दूर करता है। इस प्रकार भारतीय राज्यो की शासन व्यवस्था दिन पर दिन ठीक होती जा रही है। धैर्यवान और ईमानदार होने की आवश्यकता है।



पंचायत राज्य में सहकारिता

भारतीय आर्थिक परिस्थिति अब समाजवादी नीति के अनुसार ढल रही है। स्थिति मे सहकारिता के विकास की आवश्यकता है और अवसर भी है। सहकारिता का विकास एक प्रकार से राष्ट्रीय अयोजन के महत्वपूर्ण अग को पुष्ट करना है। द्वितीय पचवर्षीय-योजना मे सहकारिता का प्रारूप अत्यन्त महत्वपूर्ण ढग से अपनाया गया है। सहकारिता का विकास उसी स्थिति मे सम्भव है, जबकि सहकारी सगठन की टुकडिया छोटी हो। जब यह स्थिति छोटे रूप मे रहेगी तो दूसरो को जानने पहचानने मे सरलता होगी। इसी सरलता और विशेष परिचय से विश्वास को भी स्थान मिलेगा। इस आधार पर कृषि के लिये धन व्यवस्था, माल की तैयारी और बिक्री, सब प्रकार के ग्रामीण उत्पादन, सहकारी वस्तु भण्डार तथा करीगरो का सहकारी-सगठन इस सहकारी आन्दोलन के लिए लाभप्रद सिद्ध होगे।

द्वितीय पचवर्षीय योजना मे "ग्राम-ऋण-सर्वेक्षण" के आधार पर सहकारिता के विकास के कार्यक्रम तैयार किये गये हैं। इसमे यह होगा कि

उचित ब्याज पर ऋण की व्यवस्था होगी। सहकारी-सगठन का मुख्य क्षेत्र ग्राम है। इसमे तीन बातें मुख्य हैं—ऋण का प्रबन्ध, ग्राम के प्रत्येक परिवार को ऋण चुकाने के योग्य बनाना, गाँव की आर्थिक व्यवस्था का सुधार। इसका अर्थ यह है कि गाँव के समस्त परिवारो की आवश्यकताओ को पूरा करने के लिए सगठन की नितान्त आवश्यकता है। इस सगठन का उद्देश्य यह होगा कि ग्रामीणो की सेवा हो, भूमि तथा अन्य साधनो का विकास हो जिससे सामाजिक उन्नति हो सके। इस उन्नति का अभिप्राय ऐसे समाज की स्थापना से है जिसमे सभी वर्गों को समान अवसर प्राप्त हो। न केवल गावो की आर्थिक व्यवस्था को सुधारना, अपितु उसका पूर्ण विकास करना है। इस समानता को लाने के लिये सबसे पहले भूमि के स्वामित्व का भेद मिटाना आवश्यक है। जब सबके पास अपनी भूमि होगी तो लोग बडी रुचि से काम करेंगे।

गाव की अर्थ-व्यवस्था तभी ठीक होगी, जबकि भूमि तथा साधनो के विकास के साथ-साथ रोजगार के नये अवसर जुटाये जाएँ। जहा तक भूमि का सम्बन्ध है—इसके तीन रूप अपनाये जा सकते हैं। कुछ तो ऐसे किसान होंगे जो अपनी जोत मे खेती करेंगे। कुछ किसान अपने हितो को ध्यान मे रखते हुए अपनी इच्छा से जोतो को एकत्र कर सहकारी खेती करेंगे, कुछ जमीन पूरे गाँव की होगी। भावना यह रहेगी कि समस्त ग्रामीण उसे सहकारी ढग से प्रयोग मे लायें। कृषि के लिये ऋण उपज की बिक्री तथा अन्य काम-काज सहकारी नीति के आधार पर होने से उत्पादन मे भी इस सहकारिता का हाथ रहेगा। एक समय वह आयेगा कि ग्राम सम्बन्धी सभी काम—जैसे कृषि, ग्राम-उद्योग, बिक्री और ग्राम-व्यापार आदि सहकारिता से होगे।

पहली योजना मे Reserve Bank of India के प्रयत्न से खेती के ऋणो की सरकारी व्यवस्था सगठित करने के लिये अनेक महत्वपूर्ण कार्य किये गए। इस सहकारी व्यवस्था के अन्तर्गत इस समय २२ राज्य सहकारी बैंक, ४९९ केन्द्रीय बैंक तथा बैंक सघ, १२६,९५४ प्रारम्भिक ऋण समितियाँ

और ९ केन्द्रीय तथा २९१ भूमि वन्धक वैंक हैं। प्रारम्भिक स्तर पर ३०,३०६ कृषि समितिया, ८३८९ गैर किसानी ऋण समितिया और २१,१३० अन्य समितियाँ है। इन सहकारी सस्थाओ के पुनर्गठन का आधार यह है कि सरकार भी इसमे हिस्सेदार है। अन्य राज्य सरकारें इस रिजर्व बैंक से सहायता ले सकती हैं। जिससे लाभ यह होगा कि वे बडी-बडी ऋण समितियो सैण्ट्रल वैंको राज्य सहकारी बैंको और भूमि गिरवी रखने वाले सैण्ट्रल वैंको का हिस्सा पूंजी मे हो सकता है।

सहकारिताके विकास कार्यक्रम के मुख्य लक्ष्य निम्नलिखित हैं —

ऋण	
वडी समितियो की सख्या	१२,००० करोड रुपये
छोटी अवधि के ऋण का लक्ष्य	१५० करोड रु०
मध्यम अवधि के ऋण का लक्ष्य	५० करोड रु०
लम्वी अवधि के ऋण का लक्ष्य	२५ करोड रु०
बिक्री और विधियाँ	
विक्री समितियो की सख्या	१, ७००
चीनी के कारखाने	३६
कपास ओटने की मशीने	७७
अन्य कार्यों की समितियाँ	११२
गोदाम और भण्डार	
केन्द्रीय और राज्य निगमो के गोदाम	३५०
विक्री समितियो के गोदाम	१,७००
वडी समितियो के गोदाम	५,०००

ऊपर जिन विकास कार्यक्रमो की सूची दी गई है, उसे पूरा करने के लिये सरकार ने रिजर्व वैंक के अतिरिक्त ४८,००,०० ००० रुपया सुरक्षित कर दिया है। खाद्य एव कृपि-मन्त्रालय ने इस ग्रामीण ऋण सर्वेक्षण की सुविधा के लिये कानून का मसविदा तैयार कराया है। सरकार ने यह व्यवस्था की है कि २० लाख से २५ लाख टन अनाज सुरक्षित रखा जा सके। इसके

साथ ही केन्द्रीय गोदाम निगम के अन्तर्गत १०० वडे-वडे गोदाम वनाए जायेंगे—जिनमे प्रत्येक मे लगभग १० हजार से २० हजार टन तक अनाज सुरक्षित रखा जा सके। गोदामो के लिये स्थान की व्यवस्था हो गई है। २५० गोदामो का निर्माण हो जाने पर अनाज की व्यवस्था हो जायगी।

इस प्रकार सहकारिता योजना दिनो-दिन विकास के पथ पर है। हमारा विश्वास है कि इस सहकारी योजना से न केवल ग्रामीण अर्थ-व्यवस्था की ही उन्नति होगी, अपितु नगर मे रहने वाली जनता के भी वहुत से दु ख दूर हो जायेंगे। इसमे समस्त भारतीयो को सहयोग देना चाहिये।



सैनिक-संधियाँ और विश्व-शान्ति

एक शताब्दि के अन्दर ही ससार दो भयानक विश्व-युद्धो के परिणाम भुगत चुका है, फिर भी ऐसा ज्ञात होता है, मानो युद्ध-पिपासि की प्यास इतने धन-जन का वलिदान लेकर भी अभी तक शान्त नही हुई है और इसीलिए आज भी वडे-वडे राष्ट्र किसी भावी युद्ध की आशका से अनेक सैनिक तैयारियो और सन्धियो मे लगे हुए हैं। इन सैनिक तैयारियो और सधि-सगठनो का उद्देश्य वताया तो यह जाता है कि इस प्रकार की तैयारियो से युद्ध की सम्भावनाओ को रोकना है, वास्तव मे इस प्रकार की सैनिक सधियो से कुछ समय के लिये युद्ध को टाला तो जा सकता है परन्तु सदा के लिये रोका नही जा सकता। यह परम सत्य है कि भय से भय उत्पन्न होता है और भय ही युद्धो का कारण वनता है। इन सन्धियो से ससार मे गुटवन्दियाँ पैदा होती हैं, जिससे युद्ध की आशका दूर होने की अपेक्षा अधिक निकट आती है।

आज ससार मुख्य रूप से तीन भागो मे वटा हुआ है। एक भाग मे तो साम्यवादी रूस, चीन और उनके समर्थक राष्ट्र हैं, दूसरा गुट अमेरिका,

ब्रिटेन तथा फ्राँस और उनके समर्थको का है तीसरे समूह मे वे राष्ट्र आते हैं जो अपने को तटस्थ कहते है और इन दोनो दलो से पृथक् रहकर अपनी स्वतन्त्र नीति का निर्माण करते हैं। इस समूह मे भारत, वर्मा, लका तथा मिस्र आदि देश है। इस तीसरे दल का विचार है कि ससार से युद्धो का भय सैनिक सन्धियो से नही, परस्पर के सहयोग और मित्रता के सम्बन्धो से ही दूर हो सकता है।

अमेरिका और उसके मित्रराष्ट्र साम्यवाद से घबराकर ससार मे अपना सैनिक प्रभुत्व फैलाने का प्रयत्न कर रहे है और इसी प्रयत्न मे उन्होने एशिया मे कुछ ऐसी सैनिक सन्धियाँ की है जिससे विश्वव्यापी तीसरे युद्ध का भय यूरोप की अपेक्षा एशिया मे अधिक बढ गया है। इनमे से उत्तर अटलाँटिक सन्धि-सघ (नाटो), मध्य-पूर्वी रक्षा सघ (मीडो) तथा दक्षिणी-पूर्वी एशिया रक्षा सघ (सीटो) प्रमुख हैं।

इसमे से उत्तर अटलाँटिक सन्धि का स्पष्ट ही उद्देश्य रूस के प्रभाव को रोकना है। अमेरिका को भय है कि रूस का प्रभाव यदि इसी प्रकार बढता रहा तो यह साम्यवाद का भूत कही सारे यूरोप को ही अपने अधिकार मे न कर ले। इस 'नाटो' सन्धि के अन्तर्गत सयुक्त राज्य अमेरिका, कनाडा तथा यूरोप के अनेक राज्य आ गए हैं। यूनान और टर्की भी इसमे सम्मिलित हैं। टर्की यद्यपि यूरोप मे नही, एशियाई देश है फिर भी अमेरिका ने रूस को चारो ओर घेरने के लिए ही टर्की को उस सन्धि मे सम्मिलित किया है। इस नाटो सन्धि के सबसे कमजोर स्थान टर्की और यूनान ही हैं। अमेरिका ने इन दोनो को इस सन्धि मे सम्मिलित कर लिया, परन्तु उसकी इस अदूरदर्शिता से ही ब्रिटेन को काफी कठिनाई का सामना करना पड रहा है। साइप्रस मे ८० प्रतिशत यूनानी है और २० प्रतिशत मुसलमान। ये लोग यूनान मे सम्मिलित होना चाहते हैं परन्तु अग्रेज इसे स्वीकार करने को तैयार नही। साइप्रस निवासियो ने इस सम्बन्ध मे एक अहिंसक आन्दोलन प्रारम्भ किया। ब्रिटेन ने इस आन्दोलन को कुचलने के लिये फील्डमार्शल जनरल हार्डिंग को

साइप्रस का गवर्नर वनाकर भेजा और इसने पहले तो वहाँ के नेता आर्चविशप मैकारिओस से सन्धि करने का प्रयत्न किया। पर जब वह सफल न हुआ, तो उसे निर्वासित करके अन्यत्र भेज दिया। अपने नेता के इस निर्वासन से साइप्रस के लोग और भी उत्तेजित हो उठे और उनके विरुद्ध आन्दोलन अधिक उग्र हो गया। इस प्रकार स्वय इस सधि से ही सदस्यो मे एक गहरा फूट चल रही है। हो सकता है साइप्रस के इस सघर्ष को लेकर ही 'नाटो' की यूनान और टर्की वाली यह कडी जल्दी टूट जाय।

इसी प्रकार की दूसरी सन्धि मध्य-एशिया-रक्षा-सन्धि-सगठन है। सक्षेप मे इसी का नाम 'मीडो' है। इस सन्धि मे ईरान, ईराक, पाकिस्तान, तुर्की और ब्रिटेन सम्मिलित हैं। यद्यपि मध्यपूर्व मे पाकिस्तान का कोई सीधा सम्बन्ध नही है, फिर भी पाकिस्तान अपनी सैनिक शक्ति का प्रवल वनाना चाहता था, और अमेरिका तथा ब्रिटेन के समर्थन और सहायता को वह आवश्यक समझता था इसलिये वह सघ मे मिल गया है। इस सन्धि को सफल वनाने मे अमेरिका और ब्रिटेन विशेष चिन्तित हैं क्योंकि मध्य पूर्व मे ब्रिटेन का प्रभाव समाप्त होता जा रहा है और अमेरिका उस स्थान पर अपना प्रभाव वढाने के लिये विशेष आतुर है। इस सन्धि की योजना वनाते समय अमेरिका ने कल्पना की थी कि इसमे सभी अरव राज्य सम्मिलित हो जायेंगे परन्तु ईराक के सिवाय कोई भी दूसरा अरव राज्य इसमे नही मिला। इज़राईल की स्थापना मे सहयोग देकर अग्रेजो ने अरव राज्यो मे अपना प्रभाव खो दिया। श्याम और अदन मे तो इस सन्धि के विरुद्ध ऐसा जन-आन्दोलन प्रारम्भ हुआ कि अदन के शाह को विवश होकर अपनी सेना से मि० ग्लव को हटाना पडा। यदि किन्ही दवावो के कारण अदन के शाह इस मीडो या वगदाद सन्धि मे सम्मिलित हो जाते, तो उन्हे जनता के वहुत उग्र विरोध का सामना करना पडता। इस प्रकार अमेरिका और ब्रिटेन को इस वगदाद सन्धि से भी काफ़ी असफलता का मुँह देखना पडा है।

अमेरिका सोचता है, रूस के वढते प्रभाव को यदि रोकना है तो अधिक से अधिक देशो के साथ सैनिक सन्धियाँ करके उनको अपने साथ वाँध लेना

चाहिए। इसलिये उसने एक और सन्धि का जाल बिछाया है, जिसे 'दक्षिण-पूर्वी एशिया-सन्धि-सघ या 'सीएडो' कहा जाता है। अमेरिका को आशा थी कि इस सन्धि मे एशिया के काफी देश सम्मिलित हो जाएँगे, परन्तु पाकिस्तान फिलिपाइन और थाइलैंड के अतिरिक्त अन्य कोई भी एशियाई देश इसमे नही है। यद्यपि इस सन्धि का सम्बन्ध केवल एशियाई देशो से ही अधिक है। फिर भी फ्रांस, ब्रिटेन, न्यूज़ीलैंड, आस्ट्रेलिया और अमेरिका भी इसमे सम्मिलित हैं।

इस प्रकार उचित-अनुचित का विचार किये बिना जो राष्ट्र निरन्तर इस प्रकार के सैनिक सन्धियो के सगठनो की रचना करते हैं वे युद्ध के वातावरण को और भी अधिक निकट लाते हैं। कराची मे 'सीटो' राष्ट्रो का सम्मेलन हुआ और उसकी समाप्ति के बाद ही पाकिस्तान का भारत के प्रति व्यवहार वदल गया और उसने भारत की सीमाओ पर सैनिक हमले शुरू कर दिये। काश्मीर के प्रश्न को लेकर पाकिस्तानी नेता तलवार की बातें करने लगे। उधर अरव राज्यो मे भी बगदाद सन्धि के कारण काफी असन्तोष दिखाई दे रहे हैं।

स्पष्ट है कि इन 'सीएटो' या 'नाटो' सन्धियो से अथवा अणुबमो के परीक्षणो से ससार मे शान्ति स्थापित नही हो सकती। अमेरिका अपने हथियारो और डालरो से दूसरे कमज़ोर राष्ट्रो पर प्रभाव डालकर आखिर कब तक अपना प्रभाव बनाए रख सकेगा? उचित तो यही था कि विश्व-शान्ति का सच्चा मार्ग ढूढा जाता और उसी का अनुसरण किया जाता। 'पचशील' सिद्धान्तो के आधार पर यदि आज ससार के सभी राष्ट्र यह स्वीकार करलें कि 'जीओ और जीने दो,' तो फिर इन सन्धियो की आवश्यकता ही क्या रह जाएगी? इन सैनिक सन्धियो से विश्वास किया जाता है कि कोई भी राष्ट्र युद्ध के लिए आगे बढने का साहस न कर सकेगा। परन्तु यह कोरी कल्पना ही है। आज जो ससार के सिर पर सकट के बादल छाए है, उनमे इन सगठनो का भी बहुत बडा हाथ है। जब एक राष्ट्र दूसरे पर विश्वास न करके

उसके प्रत्येक कार्य को सन्देह की दृष्टि से देखता है तो वह अपने को उससे भी अधिक सबल बनाने के लिए ऐसी सन्धियो का आश्रय लेता है। अनेक वार ससार के शान्ति प्रिय नेताओ ने शस्त्रीकरण और सैनिक सगठनो के विरुद्ध आवाज उठायी, परन्तु साम्यवादी रूस और चीन तथा पूँजीवादी अमेरिका और ब्रिटेन के दोनो विरोधी दलो मे जो अविश्वास पैदा हो गया है वह ससार को जबरदस्ती युद्ध की भयानक दलदल की ओर घसीटता ले जा रहा है। इसलिए यदि उससे किसी प्रकार बचा जा सकता है, तो वह मार्ग केवल सहअस्तित्व, भ्रातृत्व की भावना और दूसरो को सन्देह की दृष्टि से न देखना तथा किसी के घरेलू मामलो मे हस्तक्षेप न करना आदि हैं जो पचशील के सिद्धान्त है, उन्ही पर चलना विश्वशान्ति का सबसे श्रेष्ठ मार्ग है। लेकिन सन्धियाँ तो ससार के लिए सदा भयानक ही रहेंगी।



भारत की सैनिक शक्ति

किसी भी देश की सुरक्षा का अधिक भार उसकी सैनिक शक्ति पर है। भारत इस शक्ति को कई प्रकार से सचित कर रहा है। अपनी ओर से और विदेश से भी उसे सहायता प्राप्त हो रही है इस सम्बन्ध मे रक्षामत्री श्री चह्वाण ने देश की रक्षा व्यवस्था को मजबूत बनाने के लिए विदेशो से मिलने वाली मदद का जो व्योरा दिया है, उससे एक बार फिर यह बात साफ हो गयी है कि पूर्व और पश्चिम दोनो ही भारत की तटस्थता की नीति का आदर करते है और यह स्वीकार करते है कि भारत सरकार जिन नीतियो पर चल रही है, उनको विश्वव्यापी महत्व दिलाने तथा देश की आजादी और अखण्डता की रक्षा के लिए हर सम्भव सहायता दी जानी चाहिए। रूस और अमरीका की जिम्मेदारिया विश्वव्यापी है। फिर भी उन्होने भारत को

सहायता देने मे जिस उदारता का परिचय दिया और बिना किसी शर्त के सहायता देना स्वीकार किया, उससे स्पष्ट हो जाता है कि उन्हे भारत की शक्ति क्षमता और विवेक पर पूरा विश्वास है।

श्री चह्वाण के इस बयान से कि भारत की रक्षासम्बन्धी पचवर्षीय योजना और उसकी जरूरतो पर प्रकाश पडता है इससे यह सकेत भी मिलता है कि देश को अपनी आजादी की रक्षा के लिए कितना त्याग करना होगा। इससे कुछ नई आशकाएँ भी उठती हैं, जिनको सरकार को समझने और उनके कारण पैदा होने वाली विषम परिस्थितियो का सामना करने को अभी से तैयार होने की भी चेतावनी मिलती है।

अमरीका, ब्रिटेन, सोवियत सघ, कनाडा आस्ट्रेलिया युगोस्लाविया आदि देश भारत की रक्षा व्यवस्था को सुदृढ बनाने मे सहायक हैं। यह सहयोग जितना व्यापक और विशद है उससे समस्या की गम्भीरता और महत्त्व को आका जा सकता है। इससे यह अनुमान भी लगाया जा सकता है कि गुटो से बचे और तटस्थ देशो की भी राय मे भारत की रक्षा व्यवस्था को मजबूत बनाना और उसकी सीमाओ पर जो खतरे पैदा हुए अथवा हो सकते हैं उनका सामना करने के लिए इस देश को पूरी तरह तैयार करना कितना जरूरी समझा गया है। भारत के ४८ करोड लोगो की आजादी को एक नये सैनिकवादी विस्तारवादी ताकत के हमलावर इरादो से बचने के लिए दुनिया के करोडो लोग और दर्जनो देशो की सरकारे जो त्याग कर रही हैं यह देश और यहाँ की जनता उनकी कृतज्ञ है। लेकिन जैसा श्री नेहरू ने कहा था और प्रकारान्त से जिस बात को रक्षा मत्री श्री चह्वाण ने कहा है कि देश की रक्षा की जिम्मेदारी देशवासियो को ही उठानी होगी।

श्री चह्वाण के प्रति सारा देश आभार प्रकट करेगा कि उन्होने भारत रक्षा व्यवस्था को आधुनिकतम बनाने के लिए पूर्व और पश्चिम से प्रभूत सहायता प्राप्त की है। उन्होने भारत की नीतियो के बारे मे अगर कही कुछ भ्रांति पैदा हो गई थी, उसे बखूबी दूर कर दिया है। उनकी प्रशसा इसलिए

भी की जायगी कि उन्होने रक्षा के सवाल को उसके सम्पूर्ण रूप मे देश के सामने रख दिया है, जिस पर अब सबका बारीकी से विचार करने की जरूरत है ।

रक्षा मत्री ने वताया है कि सवा आठ लाख थल सेना, अतिस्वन विमानो के ४५ स्क्वाड्रन, राडार, सचार, सडक और परिवहन व्यवस्था के सुधार तथा भारत की नौसेना को आधुनिकतम वनाने के लिए वर्तमान सैनिक व्यय मे करीव दस-वारह फीसदी की वृद्धि करनी होगी । रक्षा के लिए आज जितनी विदेशी मुद्रा दी जाती है, उससे करीव तीन गुना अधिक विदेशी मुद्रा की दरकार होगी । रक्षा मत्री के प्रयत्नो के परिणामस्वरूप रूस और अमरीका ने जितनी सहायता का आश्वासन दिया है, वह करीव एक अरब रुपये के आस-पास है । इन दोनो वडे देशो तथा ब्रिटेन ने भविष्य मे भी सहायता जारी रखने का वचन दिया है । ब्रिटेन ने मझगाँव मे छोटे जगी जहाजो के निर्माण के लिए ऋण देने का एलान किया है और सम्भवत श्री चव्हाण की ब्रिटेन यात्रा के वाद और अधिक सहायता का वचन मिले । लेकिन, इस सबके वावजूद देश के अर्थतन्त्र पर जो दवाव पडेगा, सरकार को उसके प्रति अभी से जागरूक होने की जरूरत है । रक्षा मत्री देश की रक्षा व्यवस्था को मजबूत करने और बाहरी दुश्मनो का सामना करने मे वडी तत्परता से जुटे है, किन्तु इनके सारे प्रयत्न तभी सफल होगे जव देश के भीतरी दुश्मनो से भी सावधान रहा जाएगा ।

रक्षा मत्री ने जो वयान दिया है, उससे कुछ पिछली कमजोरियो का भी पता चलता है । लगभग दस वर्ष पूर्व सरकार को एक रिपोर्ट मिली थी, जिसमे सीमा पर सडकें और सचार व्यवस्था को मजवूत करने के वारे मे कुछ सुझाव दिये गये थे । मिग विमान वनाने के वारे मे रूस से जो पिछला समझौता किया गया, वह भी कुछ दृष्टियो से अपूर्व था । श्री चव्हाण ने अव पिछली कमजोरियो को दूर करने तथा स्थल एव नभ सेना को शीघ्रता से आधुनिकतम शस्त्रास्त्रो एव साधनो से सज्जित कर देने का एलान किया है । उन्होने

भारतीय जल सेना की ओर भी ध्यान दिया है। रूस से जो सहायता मिल सकती है, उसके तकनीकी और वित्तीय पहलुओ पर विचार हो रहा है। आशा की जाएगी कि यह कार्य जल्दी ही पूरा कर लिया जायगा और रक्षामंत्री ब्रिटेन यात्रा के बाद नौसेना के लिए आवश्यक साज-सामान जुटाने के बारे मे किसी ठोस कार्यक्रम का एलान कर सकेंगे।



भाषाई विवाद राष्ट्रीय एकता के लिए घातक

भाषा मनुष्य के विचारो को प्रकट करने का सरल और स्वाभाविक साधन है। प्रत्येक देश की अपनी भाषा होती है। साथ ही देश के अन्तर्गत क्षेत्रीय जनसख्या और बस्तियो के आधार पर प्रान्तीय भाषायें विद्यमान होती हैं। हमारे देश भारत मे हिन्दी देश की राष्ट्र भाषा है और सविधान द्वारा मान्य १४ प्रान्तीय भाषाएँ हैं। वैसे तो और भी भाषाएँ हैं जो भारत मे बोली जाती हैं। परन्तु १४ भाषाओ का प्रचलन प्रान्तीय क्षेत्रो के अनुसार सर्वाधिक है। बगला, मद्रासी, गुजराती, मराठी, हिन्दी, उर्दू पजाबी इत्यादि मुख्य हैं।

भारत मे राज्यो का पुनर्गठन भाषा के सामजस्य एव राष्ट्रीय एकता के आधार पर हुआ है। देश मे हिन्दी राष्ट्र भाषा है और धीरे-धीरे समस्त भारत मे अपना प्रभाव जमा रही है। कुछ स्थानो पर हिन्दी को बलपूर्वक लादने के प्रयत्नो के फलस्वरूप कुछ असतोष सा अनुभव हुआ है जिसके कारण कई प्रान्तो मे भाषाई विवाद उपस्थित होने लगे हैं। पजाब और दक्षिण भारत के प्रान्तो मे प्रातीय भाषा की सुरक्षा और उन्नति के लिए आन्दोलन का सा रूप बना और हिन्दी भाषा के समर्थको ने इस प्रकार की भावुकता का विरोध किया जिस कारण देश की राजनीतिक और राष्ट्रीय एकता पर प्रभाव पड रहा है।

राष्ट्रपति डा० राजेन्द्रप्रसाद ने २५ मई, १९५७ को देश की जनता को भाषाई विवाद के सम्बन्ध मे एक चेतावनी दी और स्पष्ट किया कि सभी क्षेत्रीय भाषाओ को स्वतन्त्र रूप से विकसित होने दिया जाये। उन्होंने खेद प्रकट किया कि भाषा के प्रश्न को लेकर विवाद उठाए जाते हैं। उनसे भारतीय सस्कृति को चोट पहुँचती है। यदि किसी क्षेत्र विशेष के लोगो को अपनी भाषा के विकास के लिये पूरी स्वतन्त्रता न दी गई तो राष्ट्रीय एकता खतरे मे पड जाएगी। उनका विचार है लोग अपनी भाषा से प्रेम करते हैं। उन्हे अपनी योग्यतानुसार उसे विकसित करने की पूरी स्वतन्त्रता होनी चाहिए। सविधान मे इस वात का स्पष्ट उल्लेख है कि हिन्दी राष्ट्रभाषा होगी किन्तु क्षेत्रीय भाषाओ का राजकीय स्तर पर प्रशासनिक व अन्य कार्यों के लिए प्रयोग किया जायेगा।

भारत की यह विशेषता रही है कि यहाँ छोटी-छोटी जातियो को भी अपने सांस्कृतिक एव भाषाई विकास की पूरी स्वतन्त्रता रही है। यही कारण है कि यहाँ भिन्न-भिन्न प्रकार की सस्कृतियाँ एव भाषाएँ विद्यमान हैं। किन्तु इन विभिन्नताओ के पीछे एक ऐसी एकता है जो शासन एव शासको मे हुए परिवर्तनो के अनन्तर भी उसी प्रकार चली आ रही है। वर्तमान शासन मे भारत सम्पूर्ण सगठित है और हर सम्भव उपाय से इस एकता व सगठन को स्थिर रखना हमारा कर्त्तव्य है। एक भाषा को गिराकर दूसरी भाषा को उठाना भारतीय सस्कृति के विरुद्ध है।

पजाव जैसे प्रान्त मे यदि हिन्दी-पजावी भाषा के आधार पर विवाद उपस्थित किया जाये तो यह अनुचित दिखाई पडता है क्योकि पजावी भाषा-भाषी लोगो को पजावी विकसित करने के साथ-साथ हिन्दी के राष्ट्रीय गौरव को भी पहचानना चाहिए और साथ ही क्षेत्रीय भाषा को वैज्ञानिक एव टैक्नीकल साहित्य के स्तर के योग्य वनाने का प्रयत्न करना चाहिए। जिससे स्वाभाविक रूप से प्रान्त के अन्तर्गत उस भाषा की मान्यता वहुत हो जाये। प्रत्येक प्रान्त के रहने वाले व्यक्ति को दूसरे प्रान्त की भाषा का

सम्मान और आदर करना सच्ची राष्ट्रीयता का प्रमाण होगा। केवल सकीर्णता प्रकट करके अपने प्रान्त की ही भाषा को देश मे सर्वश्रेष्ठ मान लेने से प्रश्न सुलझना कठिन होगा।

भारत के कुछ प्रान्तो मे राष्ट्रभाषा के साथ प्रान्तीय भाषा का बहुत साम्य है और प्रत्येक व्यक्ति साधारण से प्रयत्न से दोनो भाषाओ को समझ सकता है। उत्तर प्रदेश इस का प्रतीक है यदि इस प्रकार से ही अन्य प्रान्तो के लोग भी अपनी प्रान्तीय भाषा के साथ राष्ट्रभाषा की सामीप्य और साम्य करने की चेष्टा करें तो निश्चय ही बहुत लाभदायक होगा और समस्त देश एकता के सूत्र मे बधेगा। साथ ही जिस साहित्य का राष्ट्र भाषा मे सृजन होगा वह समस्त देश के लिए सार्थक, सारपूर्ण और महत्वशाली सिद्ध होगा, इसके साथ-साथ प्रान्तीय भाषाओ के विकास का प्रभाव राष्ट्रभाषा पर पडेगा और प्रान्तीय भाषाओ के शब्द भण्डार से वह समर्थ हो (Lanuga Indica) जाएगी। अगामी दस पन्द्रह वर्षों मे ही इस प्रकार के ढग से हमारे देश की सभी भाषाए उन्नति करेंगी तथा राष्ट्रभाषा हिन्दी का वैज्ञानिक व टैकनिकल साहित्य बडा गौरवपूर्ण और महत्वशाली बनेगा।

वर्तमान अवस्थाओ मे भाषाई विवाद उपस्थित करके कुछ लोगो ने निश्चय ही अदूरदर्शिता का परिचय दिया है और उनकी नासमझी राष्ट्रीय एकता के लिए किसी भी समय घातक सिद्ध हो सकती है। अत भविष्य मे लोगो को अपने स्वार्थों को भुलाकर देश-हित को सामने रखकर प्रान्तीय और राष्ट्रभाषा के विकास तथा उन्नति के लिए कार्य करना चाहिए।



नदी घाटी योजना

हमारा देश कृषि-प्रधान देश है। इस देश की आर्थिक अवस्था कृषि पर निर्भर है। इस कृषि को वढाने के लिए सिंचाई की व्यवस्था आवश्यक है। सिंचाई-व्यवस्था आज की वह समस्या वन गई है, जिस पर भारत का भविष्य निर्भर है। कोई युग था, जवकि यहाँ के कृषक वर्षा पर निर्भर रहते थे। वर्षा तो किसी के नियम मे वधी नही—इसलिए कभी-कभी वर्षा का कुप्रभाव भी हो जाता है—'का वर्षा जव कृषि सुखाने' और कभी न चाहने पर भी वर्षा बहुत हो जाती है। आज के वैज्ञानिक युग मे यह असम्भवनही रह गया है।

पचवर्षीय योजना मे नदी घाटी योजना को वडा महत्वपूर्ण स्थान दिया गया है। प्रथम पचवर्षीय योजना मे जिस सिंचाई योजना को वनाया गया था, उसकी अपेक्षा अब आवश्यकताएँ और वढ गई है। जिस समय सिंचाई योजना आरम्भ हुई थी, उस समय की भूमि दो प्रकार की थी—(क) पहली वह भूमि जहाँ सरकारी नहरें और तलाव थे—जिनसे वारह महीने सिंचाई होती थी। (ख) दूसरी वह भूमि जहाँ निजी तौर पर सिंचाई की व्यवस्था करनी पडती थी या सिंचाई का प्रवन्ध कम था। पहले वर्ग मे लगभग २६० लाख एकड भूमि थी और शेष क्षेत्रो मे २२० लाख एकड भूमि थी। जव देश का वटवारा होगया तो सिंचाई साधन के लिये ११० करोड मूल्य लगाया गया।

पहली पचवर्षीय योजना मे ७०२ करोड रुपये से सिंचाई योजना का कार्यक्रम वनाया गया। दूसरी योजनामे ३६३ करोड रुपये का कार्यक्रम वनाया गया। सव योजनाओ को मिलाकर देखने से यह निष्कर्ष निकलता है कि वहुउद्देश्यीय सिंचाई योजनाओ पर कुल ७१ करोड रुपये का व्यय होगा। इस व्यय से लाभ यह होगा कि भारत की ३ करोड ७२ लाख एकड भूमि की सिंचाई सुविधापूर्ण और सरलता से हो सकेगी। परन्तु यह सव एक साथ

नही होगा । पहले अयोजन मे ७० लाख एकड के लगभग, दूसरे आयोजन, मे एक करोड ४५ लाख एकड भूमि मेऔर शेष तीसरे आयोजन मे समाप्त होगी ।

अव हमे सिचाई की दर पर भी दृष्टि डालनी चाहिये । सिंचाई की दर देश के प्रत्येक हिस्से मे अलग है । इसके लिये भी सरकार ने उचित व्यवस्था की है । सरकार की नहर-प्रणालियो और बहुद्देश्यीय बडी और वीच की सिचाई योजना से ७॥ से ८ करोड एकड भूमि मे सिचाई की सुविधाएँ प्राप्त की जा सकती है । आज विज्ञान ने अनेक ढगो को जन्म दिया है । एक समय था जवकि सिचाई द्वारा ही कृषि-उत्पादन को सफल समझा जाता था, परन्तु आज विज्ञान ने सूखी खेती के ढग भी निकाले हैं । अव छोटी सिंचाई योजना के विकास के लिये और सूखी खेती के ढग को अपनाने के सम्बन्ध मे अधिक ध्यान की आवश्यकता है ।

सिचाई से केवल अनाज का उत्पादन ही नही और कृषि-अर्थ-व्यवस्था के विभिन्न अगो मे सुधार होगा । अनाज के साथ पशुओ के लिये चारा मुर्गी-पालन केन्द्र, मछली पालन केन्द्र इत्यादि की व्यवस्था भी आवश्यक है । इस आयोजन के पूर्ण सफल हो जाने पर ग्रामीणो की आय अगले १० वर्षों तक दुगनी हो जायेगी । दूसरी ओर इस आयोजन पर जितना खर्च होगा, उससे अधिक लाभ होगा । इस असफलता के लिये चतुर इजीनियरो की आवश्यकता है, जो योजना को विस्तारपूर्वक तैयार कर योजना से सम्वन्धित कामो पर विचार करें और जिस खर्च का अनुमान लगाया है, उसका अनुमान कर उसे विभिन्न भागो मे वाटे । इसके लिये जनता के सहयोग की आवश्यकता है । यह आवश्यक है कि योजना को कार्यान्वित करने से पहले जनता मे उत्साह पैदा करना चाहिये ताकि वह सिचाई सुविधा के लिये तैयार हो जाये ।

नदियो का फालतू पानी व्यर्थ ही समुद्र मे चला जाता है जो वाढ के रूप मे जीवन और सम्पत्ति की वहुत हानि करता है । अत इस वात की चेष्टा की गई है कि उस पानी का सिचाईके लिये उपयोग किया जाय ।

कुछ नए कार्य प्रारम्भ किये गये हैं, जो नवीन योजनाये बनायी जा रही हैं वे बहुउद्देश्यीय या बहुमुखी योजनाओ के नाम से प्रसिद्ध हैं, जिसका कार्य मिचाई करना, विद्युत उत्पन्न करना, बाढ रोकना, मनोरजन के साधन प्रदान करना, नौका विहार करना, मछली मारना आदि हैं ।

बगाल-बिहार सरकार ने भारत सरकार की सहायता से एक नयी योजना आरम्भ करदी है, जिसे (Multipurpose Damobar Valley Development Project) कहते है। इसमे दमोदर घाटी पर बाघ बनाया जा रहा है। जो तीन कार्य करेगा—बाढ रोकना, सिंचाई करना तथा, जलविद्युत उत्पन्न करना इस योजना से विविध लाभ स्पष्ट किए गए है। U S A Teners valley Authority ने हमारे देश मे इस नई योजना की प्रेरणा दी है। इस योजना को पूरा करने का समय Damodar Valley Authority को सौंप दिया गया है। इस योजना से लगभग ८ लाख एकड भूमि की मिचाई के लिये साल भर तक पानी मिलता रहेगा। इससे बिजली पैदा की जायगी तथा दामोदर घाटी मे जो प्रतिवर्ष बाढ आती है उसको भी रोका जा सकेगा। इस योजना से तीन लाख किलोवाट बिजली पैदा की जायगी। इस पर ५५ करोड रुपया व्यय किया जायगा तथा सात बाँध बनाये जा सकेंगे। (१) नैय्यर बाँव, (२) सोनारपर (३) बोपोरा (४) कोनार, (५) तिलैया, (६) देवल वाडी और (७) माइथान ।

इस योजना के अन्तर्गत सतलज नदी पर ६८० फीट ऊँचा भाखडा नामक गाव मे एक बाँध बनाया गया है। इस योजना मे ३५ लाख एकड भूमि की सिंचाई की जायगी। भाखडा बाध से ८ मील दूर (नीचे) ९० फीट ऊँचा एक नगल नामक बाध बनाया गया है। इससे पजाब, राजस्थान, दिल्ली तथा उत्तर प्रदेश को लाभ होगा ।

महानदी पर सम्बलपुर से १ मील उत्तर की ओर हीराकुण्ड नामक बाँध बनाया गया है, यह बाव साढे तीन मील लम्बा १२५ फीट ऊँचा है। इस

पर १६ करोड रुपया व्यय होने का अनुमान है। इस योजना से ३ लाख २१ हजार किलोवाट विद्युत शक्ति प्राप्त होगी। इसके अतिरिक्त महानदी पर दो बाँध टिकारा पारा और नारम नामक स्थानो पर बनाये जायेंगे। इस योजना द्वारा ११ लाख एकड भूमि की सिंचाई होगी। यहाँ की शक्ति 'जमशेदपुर' के कारखानो के काम आयेगी। इस बाँध से न केवल महानदी की बाढ को रोका जा सकेगा, बल्कि महानदी मे सरलतापूर्वक नौका-विहार हो सकेगा।

नैपाल राज्य मे छतरा दर्रे मे कोसी नदी मे एक बाँध बनाने की योजना है जो ससार मे सबसे ऊँचा बाँध होगा। ससार मे सबसे ऊँचा बाँध सयुक्त राज्य अमेरिका मे कालेरेडो नदी पर बोल्ड नामक बाँध है, जिसकी ऊँचाई ७२६ फीट है। परन्तु कोसी नदी पर जो बाध बनाया जायगा उसकी ऊँचाई ७५० फीट होगी, यह बाँध १५ वर्ष मे तैयार होगा। जिसमे एक अरब रुपया खर्च होगा। तैयार होने पर १८ लाख किलोवाट बिजली शक्ति प्रति घण्टा प्राप्त होगी। इसका प्रयोग बिहार, पश्चिमी बगाल तथा पूर्वी उत्तर प्रदेश आदि राज्यो मे होगा।

इस योजना मे बिहार, उत्तर प्रदेश तथा विन्ध्य प्रदेश राज्यो की सरकारें सयुक्त रूप से सम्मिलित हैं। मिर्जापुर जिले मे सोन की सहायक नदी रीहन्द पर पिप्री नामक बाध बनाया जायगा इसकी ऊँचाई ६०० फीट होगी। इस योजना द्वारा १५० हजार किलोवाट शक्ति उत्पन्न की जायगी, जिसका उपयोग दक्षिणी-पूर्वी उत्तर प्रदेश, पश्चिमी बिहार,तथा विन्ध्य प्रदेश तथा रीवाँ के क्षेत्रो मे होगा।

तुगभद्रा योजना—यह हैदराबाद तथा मद्रास राज्य की सम्मिलित योजना है। बिल्लारी जिले मे मल्लापुरम स्थान पर तुगभद्रा नदी मे ८,०००२ फुट लम्बा और १६० फुट ऊँचा बाँध है। इसके द्वारा १ लाख, ५५ हजार किलोवाट शक्ति उत्पन्न होती है।

इस योजना को पूरा करने के लिये लगभग १२ वर्ष लगेंगे। यह योजना मद्रास राज्य मे गोदावरी नदी पर बनायी जा रही है। नदी के मध्य मे एक

पहाडी टीला है जिसके दोनो ओर ४०० फीट ऊँचा एक वाध वनाया जायगा और दाएँ-वाएँ नहरें निकाली जायेंगी। वन जाने पर एक लाख किलोवाट विद्युत शक्ति प्राप्त होगी। जिसका उपयोग विशाखापट्टम और गुण्टूर जिलोमे होगा।

नैय्यर योजना—उत्तर प्रदेश की सरकार ने गढवाल जिले की नैय्यर नामक नदी पर नरौरा के निकट एक बाँध वनाने की योजना वनाई है। इस वाध की ऊँचाई ६०० फीट होगी।

शारदा योजना—उत्तर प्रदेश मे शारदा नदी मे शक्ति प्राप्त की जायगी इसके द्वारा ४१,००० किलोवाट विद्युत उत्पन्न होगी जिसका उपयोग नैनीताल, पीलीभीत, शाहजहाँपुर तथा खीरी जिलो मे होगा।

योजना आयोग ग्रामीण विकास और सामाजिक परिवर्तन के लिये सवसे अधिक महत्व राष्ट्रीय विस्तार सेवा आन्दोलन को देता है। अभी हमारे देश मे वहुत से ऐसे व्यक्ति हैं जिन्हे इस योजना के महत्व का पता नही। हमारा यह सवसे पहला काम है कि ग्रामीणो को अधिक से अधिक सिचाई के तरीको को सिखायें। प्रत्येक गाँव मे नहरो का निर्माण होना चाहिये। परन्तु यह सव होगा सहयोग के आधार पर। विशाल योजना के अधार पर भाखडा, नागल और हीराकुण्ड की योजना इस कार्यक्रम का अच्छा और सफल रूप है। अभी आवश्यकता है कि सगठित रूप से कार्य करे और समय तथा शक्ति का उपयोग करें।

अव प्रश्न वाढ-सुरक्षा का भी उठता है। वाढ सुरक्षा कार्यक्रमो के वारे मे सवमे पहली वात तो यह है कि हमे यह समझना चाहिये कि वाढ से किस प्रकार रक्षा हो सकती है? नदी और घाटी योजना के साथ उसमे आने वाली वाढ की रोक थाम व्यवस्था भी होनी चाहिये। इस प्रकार एक ओर निर्माण होने वाले लाभ और उससे सम्भावित हानिया भी हमारे लिये विचारणीय हैं। इस तरह हम कृषि उत्पादन और उससे सम्वन्धित अन्य अगो के विकास मे सहयोग प्राप्त कर उन्नति की ओर वढ सकेंगे।



भारत में बेकारी

भारत मे वेकारी तो क्षय रोग की भाँति फैली हुई है। स्वतन्त्रता आई पर साथ वेकारी भी लेती आई। आज देश मे फैला भ्रष्टाचार छल-कपट उसी देवी की देन है, क्योंकि मन खाली बैठता है तो अवश्य बुरे कार्यों की ओर लग जाता है। कहा भी है—भूखा मरता क्या न करता। जने यह वेकारी, हमारे किन कर्मों का फल है और कब दूर होगी ? वास्तव मे वेकारी, समस्या के रूप मे तब खटकने लगती है जब उसके कारण असतोष बढता है। वेकारी और देशो मे भी है, लेकिन जो कमाल उसने भारत मे कर दिखाया है शायद और कही नही। यह सब हमारी विचित्र समस्याओ के कारण ही हो। परिश्रम और धन का व्यय कर, पढ लिखकर भी हमारे नवयुवको जब काम दिलाऊ कार्यालयो मे प्रात ८ बजे से लम्बी पक्तियो मे वेकारो की सूची मे नाम लिखाने के लिए खडे होते हैं, तो यह सच है कि वहाँ खडे-खडे वे अपने भाग्य को ही कोसते रहते है। इन्ही कारणो से देश के भीतर दिन प्रतिदिन होती हुई आत्महत्याएँ वढती चली जा रही हैं। तभी हिन्दी के कवि नीरज ने भी कहा है —

तन की हवस मन को गुनहगार वना देती है,
वाग के वाग को वीमार वना देती है।
भूखे पेट को देश-भक्ति सिखाने वालो,
भूख इन्सान को गद्दार वना देती है ॥

अव हमे सोचना है कि वेकारी का मूल कहाँ और हल कहाँ है। वास्तव मे विदेशी राज्य इसके वहुत बडे सहायक बने हैं। गत एक हजार वर्ष से तो, वे यहाँ लूट-खसोट करते रहे। जिसमे हमारी धनसम्पदा क्रमश देश मे वाहर जाती रही। हमारा व्यापार नष्ट हो गया और हमारे श्रमिक, कारीगर वेकार हो गये। कर कम होने के कारण वाहर की वस्तुएँ मडियो मे सस्ती

विकती थी, जिससे हमारे व्यापार ठप्प हो गये। अग्रेजो ने तो यहाँ तक किया कि हमारे वह उत्कृष्ट कारीगर जो ढाके मे वारीक-से-वारीक मलमल वुनते थे, सुन्दर कालीन और कम्वल वनाते थे, उनके हाथ ही कटवा दिए। पाँच-पाँच तोले की साडी हमारे देश मे वनती रही है। परन्तु जो भाग्य मे होना था वह हुआ।

वेकारी का कारण वढती हुई जनसख्या है। साधन और प्रदेश तो वही हैं पर खाने और भोगने वाले अधिक हो गए। इसलिए ऐसी परिस्थिति मे तो बेकार वढेंगे ही। यह एक ऐसा विघान है उस विधाता का जिसको रोकने की क्षमता उसी मे है।

आश्चर्य तो यह है कि पढे-लिखे लोग भी इस देश मे वेकार मिलते हैं। इस कारण शिक्षा-पद्धति गलत है। हमारी शिक्षा अग्रेजो ने ऐसी बना दी कि वह क्लर्क और वावू ही पैदा करती है। टैक्नीकल शिक्षा के लिये उपयुक्त साधन न होने के कारण विद्यार्थी आत्म निर्भर नही हो पाते। जो इस दिशा मे जाते हैं वे वहुत ही कम होते हैं। हमारे प्रधान मन्त्री नेहरू भी कहते थे कि--हमे बी० ए० नही चाहिएँ, वैज्ञानिक चाहिएँ। आजकल के पढे-लिखे नवयुवक वडा काम इसलिए नही कर सकते कि वे उसे जानते नही और छोटा काम इसलिए नही करते कि वे वावू है। वस वे बीच मे ही लटक जाते हैं, और वेकारो मे नाम लिखा देते हैं।

भारत प्रारम्भ से ही एक आध्यात्मिक देश रहा है। इसके सन्यासी और कलाकार समाज पर निर्भर रहते थे, या उन्हे राज्य का आश्रय प्राप्त हो जाता था। परन्तु आजकल अध्यात्म के नाम पर पाखण्ड वढ गया है। जिसका फल यह हुआ कि इमसे कला का आदर नही रहा। वेकारी के कारण लोग कला से विमुख होते जा रहे है। सत्य पालन तो फिर एक दूर की वात है।

भारत एक कृषि-प्रधान देश है और अधिक जनता ग्रामो मे ही वसती है, किन्तु आज कई मजवूरियो के कारण लोग गाँव छोडकर नगरो की ओर

भागे जा रहे हैं, और वे नगरो पर बोझ हो जाते है। हमारी सरकार को चाहिए कि वह अपनी पचवर्षीय योजना को सफलतापूर्वक चलाए और ग्राम, विकास की ओर ध्यान दे ताकि लोग ग्रामो मे बसे और मेहनत से कार्य करें, जिससे फिर हमारी मातृभूमि शस्यश्यामला (हरी भरी) हो जाए।

भारत का विभाजन भी वेकारी का कारण हुआ, क्योकि लाखो आदमी शरणार्थी हो गए। अच्छी भूमि नो पाकिस्तान मे रह गई और भारत मे दरिद्रता बढने लगी। असमान वितरण भी इसका कारण है, कोई मनुष्य आवश्यकता से अधिक पा जाता है तो कोई वेकार रह जाता है। भ्रष्टाचार वेईमानी भी इसके कारण हैं या एक प्रकार से यह सब चीजें अन्योन्याश्रित भी है। आज तो विदेशो से भी भारतीय निकाले जा रहे हैं जो भागकर भारत आ रहे है और यहाँ एक नई समस्या बना रहे हैं।

वस्तुत इस वेकारी के रोग को दूर करने का जी जान से प्रयत्न करना होगा, अन्यथा यह वडे भयकर परिणाम दिखाएगी, हो सकता है कि कभी कोई उथल-पुथल हो जाय। भूख से व्याकुल आदमी तो कुछ भी करने पर उतारू हो जाता है। सरकार का कर्त्तव्य है कि वह छोटे-मोटे उद्योग-धन्धो को प्रोत्साहन दे ताकि छोटे-कारखानेदार वडी मिलो के सामने ठहर सकें। साथ ही हम इसमे और वडे कारखानो का बहिष्कार भी नही कर सकते। ग्रामोद्योगो का विकास किया जाए तथा अधिक से अधिक लोग वहाँ बसाए जाए। शिक्षा निःशुल्क कर दी जाए। उसमे दस्तकारियाँ, टैकनिकल, वैज्ञानिक शिक्षा दी जाए एव लोग रुचि से स्वदेशी धन्धो मे उन्नति कर सकें। इसके साथ-साथ जनता का भी यह कर्तव्य है कि वह वेकारी निवारण मे सरकार को सम्पूर्ण सहयोग दे। वह स्वदेशी वस्तुओ का प्रयोग करे, स्वदेशी वस्तुए भी सस्ती होनी चाहिएँ। लोग पचवर्षीय योजना के पूर्ण होने मे सहायता दें। ऐसा होने पर भारत के नौनिहाल और नौजवानो मे से एक भी वेकारी का शिकार न होगा एव "वापू" के स्वप्नो का "रामराज्य" भी साकार हो सकेगा।

प्रत्येक व्यक्ति को स्वय सोचना चाहिए कि मैं वेकार होकर देश के लिए वोझ न वनू। वेकारी पाप है। पाप समझ कर ही मनुष्य इससे वच सकता है। इसलिये यह आवश्यक है कि इस राष्ट्रीय कलक को धोने का प्रयत्न किया जाय। यह प्रयत्न सामूहिक लगन, ईमानदारी पूरे वल से होना चाहिए तभी देश के गौरव को वढाने के लिए इस वेकारी को नष्ट किया जा सकता है।



वढ़ती जनसंख्या और परिवार नियोजन

समय के अनुसार ससार की आवश्यकताएँ और विचारधाराएँ वदलती रहती हैं। एक समय था जव ससार के सभी देशो मे अकेले रहने की अपेक्षा विवाह करके परिवार का सृजन करना वहुत महत्वपूर्ण समझा जाता था। ओलीवर गोल्ड स्मिथ ने इस विचारधारा की पुष्टि इस प्रकार की है कि—

'I am ever of opinion that the person who marries and brings up a family, does more service to the country than the man who takes of population and remains single'

मानव शक्ति को सर्वोत्तम शक्ति मानकर अत्यधिक सन्तान उत्पति का विचार चलता रहा है। किन्तु यह वात सर्वमान्य है कि परिस्थितियाँ भिन्न नही रहती है। आज ससार की परिस्थितियाँ भिन्न है और वढती हुई जनसख्या स्वय एक समस्या वनती जा रही है। विस्तृत परिवार के भोजन, कपडे, मकान और शिक्षा का उचित प्रवन्ध कठिन होता जा रहा है। आज यह वहुत वडी समस्याओ मे से एक है। इस समस्या को उचित रूप से सुलझाने तथा प्रत्येक परिवार अपने को प्रसन्न तथा सविकसित रखने के लिये अपने परिवार को सीमित रखे जिससे यह समस्या उग्र रूप न धारण कर वैठे। इस

समस्या पर समस्त ससार की वढती जन सख्या का अध्ययन करके सयुक्त राष्ट्रसघ ने २७ मई, १९५७ को एक विज्ञप्ति प्रकाशित की है। जिनका सार इस प्रकार है—विश्व मे प्रतिमिनिट १७० वच्चे पैदा होते हैं और लगभग ९० व्यक्ति मरते हैं। अर्थात् लगभग ८० नए बढ जाते है।

राष्ट्रसघ के आँकडा कार्यालय ने २०० से अधिक देशो व क्षेत्रो की जनगणना के वाद ७५० पृष्ठो की जनगणना वार्षिक पुस्तिका प्रकाशित की है, जिसमे उपर्युक्त तथ्य बताये गये है।

इस पुस्तिका के आधार पर विश्व की २ अरब ७० करोड जनसख्या मे प्रतिदिन १ लाख २० हजार व्यक्तियो की वृद्धि हो रही है। राष्ट्रसघ के विशेपज्ञो का मत है कि यदि इसी गति से वृद्धि जारी रही तो विश्व की जन-सख्या इस शताब्दी के अन्त तक दुगनी हो जायेगी।

मनुष्यो की सख्या इतनी द्रुनगति से क्यो बढ रही है इसका मुख्य कारण यह है कि मनुष्य का जीवन अब पूर्व की अपेक्षा अधिक लम्बा हो गया है। इसका कारण देशो मे सफाई व चिकित्सा की व्यवस्था का सुधार है।

जनसख्या मे सर्वाधिक गति से वृद्धि दक्षिणी अमरीका के देश मे हो रही है उन देशो मे जनसख्या मे प्रति वर्ष ४४ लाख की वृद्धि होती है। एशिया मे प्रतिवर्ष लगभग २ करोड ४० लाख व्यक्ति बढते जाते हैं।

विश्व के सर्वाधिक जनसख्या वाले देश चीन मे ५८ करोड २६ लाख और भारत मे ४० करोड ६८ लाख से अब ४४ करोड जनसख्या है। रूस तीसरे नम्वर पर तो आता है लेकिन वहाँ १९३९ के वाद कभी जनगणना नही हुई।

आजकल प्रत्येक देश मे परिवार-नियोजन के प्रश्न को अत्यधिक महत्त्व दिया जा रहा है क्योकि यह प्रश्न सामाजिक, आर्थिक, राष्ट्रीय और अन्तर्राष्ट्रीय दृष्टि से वहुत ही महत्वपूर्ण है। हमारे देश मे तो भी प्रथम पचवर्षीय योजना के अन्तर्गत पैंसठ लाख रुपये की राशि परिवार नियोजन के लिए

रखी गई थी उसके फलस्वरूप देश मे अनेक कल्याण केन्द्र, प्रशिक्षण केन्द्र, परिवार-नियोजन, केन्द्र स्थापित किये गए तथा ऐसीसामिग्री प्रकाशित करवा कर बाँटी गयी, जिससे परिवार नियोजन और बढती जनसख्या के दोप को लोग समझें। विद्वान लोगो ने तो इस समस्या का अनुमान अब से डेढ वर्ष पहले ही लगा लिया था। इगलैंड के प्रसिद्ध अर्थ-शास्त्री थामस माल्ट ने इस सिद्धान्त को लोगों के सामने रखा था कि जितनी खाद्य समग्री की उत्पत्ति मे वृद्धि होती है उससे कई गुणा वृद्धि जनसख्या मे होती है। समय-समय पर होने वाले प्राकृतिक प्रकोपो के द्वारा बढती हुई जनसख्या मे रुकावट हो सकती है। इसके साथ समय-समय पर होने वाले महायुद्धो के कारण भी विश्व की जनसख्या पर अत्यधिक प्रभाव पडा है। परन्तु विश्वशान्ति की कल्पना को कार्यरूप देने के कारण इस बढती जनसख्या का कैसा उग्र हो जायगा अनुमान लगाना कठिन है। इसलिए राष्ट्रीय और अन्तर्राष्ट्रीय दृष्टि-कोण से परिवार नियोजन का बहुत महत्व है।

प्रो० कार के विचार और अनुमान के अनुसार विश्व की जनसख्या एक प्रतिशत प्रति वर्ष के हिसाब से बढ रही है और शताब्दी के अन्त तक यदि यही गति रही तो निश्चय ही यह शतप्रतिशत बढ जाएगी।

परिवार नियोजन से क्या अभिप्राय है यह जान लेना आवश्यक है। मनुष्य ससार मे अपने को प्रसन्न और विकिसित रखने के लिये अपनी आय बढाता है और अपने जीवन स्तर को ऊँचा उठाता है। परन्तु जब परिवार मे बच्चो की अधिकता हो जाती है तो वह व्यक्ति अपने स्तर को ऊँचा उठाने मे असमर्थ होता है वह अपनी शिक्षा और योग्यता मे भी पीछे रह जाता है। एक विद्वान का निर्णय है कि विवाहित चार बच्चे वाले व्यक्ति का जीवन स्तर अविवाहित व्यक्ति के जीवन स्तर से पाँचवा भाग होता है। इसका अर्थ यह नही कि मनुष्य अविवाहित ही रहे परन्तु अपने परिवार की सख्या नियोजन करके व्यवस्था करे।

व्यक्तिगत रूप से आपस मे बात-चीत करके, आम सभाओ द्वारा, आकाश वाणी द्वारा दूसरा तरीका लिखित रूपसे लोगोके पास अपनी विचारधाराओ को

पहुँचाना (इसमे पुस्तके पैम्फलैट्स, पत्रिकाएँ, पत्र व्यवहार, अखबार इत्यादि) तीसरा तरीका प्रदर्शन का है जिसमे पोस्टर्स, चार्टस, मोडल्स, म्यूजियम एव प्रदर्शनी आदि मुख्य हैं। उपयुक्त साधनो मे से कई एक विषय की सफलता मे अधिक अच्छे सिद्ध होगे।

इस वात की नितान्त आवश्यकता है कि अवस्थानुसार वच्चो को प्रजनन की शिक्षा देनी चाहिए। अन्य विकसित एव उन्नत देशो मे और भी पर्याप्त प्रयत्न किए जा चुके हैं। शिक्षण सस्थाओ मे इस विषय की आवश्यक शिक्षा का उचित प्रवन्ध है। हमारे देश मे भी योजना प्रायोग ने इस वात पर विशेप जोर दिया है कि गुप्त रोगो की समस्या को हल करने के लिये वचपन मे प्रजनन शिक्षा की नितान्त आवश्यकता है। यदि परिवार नियोजन को सफल वनाना है तथा भारत को स्वास्थ्य एव अन्य सम्वन्धित समस्याओ पर विजय प्राप्त करनी है, तो वच्चो की प्रजनन एव सैक्स सम्वन्धी शिक्षा पर ध्यान देना परम आवश्यक है। इस वात पर विचार किया गया है कि इस विपय की शिक्षा वच्चो को किस भाँति दी जाय। वहुत से लोगो का दृष्टिकोण है कि इस प्रकार की शिक्षा घर मे माता पिता द्वारा होनी चाहिए और यदि माता-पिता द्वारा नही दी जाती है, तो अध्यापक, नर्स, डाक्टरो द्वारा दी जानी चाहिये। इस ओर पर्याप्त समय लगेगा कि माता-पिता अपनी जिम्मेदारी समझें तथा वच्चो को वचपन से ही इस विषय का ज्ञान कराते रहे। अत यह जिम्मेदारी अध्यापको पर अधिक आती है। इस वात की भी नितान्त आवश्यकता है कि अध्यापको को इस जिम्मेदारी के लिए उचित प्रशिक्षण दिया जाय जिससे वे अपना कार्य पूर्णरूप से कर सकें।



नागरिक और नागरिकता

आज जब कि भारत को स्वतन्त्र हुए १८ वर्ष हो रहे हैं तब भी हम अभी उस लक्ष्य को प्राप्त नही कर पाए है जहाँ हमे पहुँचना था। जब हम अपनी उन न्यूनताओ की खोज करते हैं तो हमारे सामने कई समस्याएँ उभर कर सामने आती है। इनमे सबसे बडी समस्या शिक्षित समाज की है।

किसी भी देश की भीतरी और बाहरी दोनो प्रकारकी उन्नति तभी सभव है जब हृदय और बुद्धि को बराबर खुराक मिले। अभी हम मात्र नगर मे रह वहाँ की चमक-दमक के प्रति लालायित रहते है। गाँवो की दशा देखकर थोडा दुखी हो लेते हैं। सच्चे सुख और शान्ति की आवश्यकता दोनो ही अनुभव कर रहे है यह सत्य है। अभी हम नाम के नागरिक हैं, दूसरे शब्दो मे स्वतन्त्र देश के नागरिक है सभ्य नागरिक नही है। हमें नागरिकता के शुद्ध अर्थों का ज्ञान भी नही है।

जो लोग किसी शहर या नगर मे रहते है, प्राय वही स्वय को नागरिक समझते हैं। वास्तविकता यह है कि ऐसे लोग नागरिक होते हुए भी सभ्य नागरिकता के गुणो से विहीन हैं। नागरिकता का ज्ञान जिस देश के निवासियो को हो जाता है वह देश अप्रत्याशित रूप से उन्नति होता है। जिन विदेशी शस्त्रो और उनके विज्ञान से हम प्रभावित होते है वहा हमे उनकी नागरिकता के गुणो से प्रभावित होना चाहिये। और ता और हमे अभी उठना-बैठना, चलना, बात करना, कपडे पहनना और खाना तक नही आया। नागरिकता का यह बाह्य पहलू है। हम बडे-बडे शिक्षित (डिग्री वाले) लोगो के अनागरिक व्यवहार नित्य अनुभव करते हैं। नगर के लोगो से जहाँ यह आशा की जाती है कि लोग सभ्य होंगे वहाँ ही आप बस मे चढते समय उनका रूप (कुरूप) देख सकते हैं। जहा पेशाब घर बने हुए हैं वहाँ भी आस-पास के स्थानो पर इन शिक्षित नागरिको की सभ्यता देखी जा सकती है। जहा

पेशाबघर आस-पास नही वहाँ तो आप चाहे पुलिस बैठा दीजिये वह भी पुलिस वालो को बातो मे लगाकर या बीडी पिलाकर अपना वना लेगा और अपनी सुविधा के अनुसार स्थान का उपयोग कर लेगा।

सार्वजनिक स्थानो की दुर्दशा का तो रहना ही क्या ? प्रत्येक प्रकार की अस्वास्थ्यकारी गदगी वहाँ देखी जा सकती है। यही नही सूचना का दुरुपयोग होते भी देखा जा सकता है। कूडे के स्थान पर कूडा न फैंक कर आख बचा कर इधर-उधर गदगी फैलाने मे आज हमारे देश का कथित नागरिक बिल्कुल लज्जित नही होता। यदि आप उसके इस स्वभाव की ओर सकेत कर देंगे तो गालिया खाएँगे और सभावना यह भी है कि बालक मार खाकर, घर लौटे।

जरासी कोई बात हो जाने पर भीड का इकट्ठा हो जाना नितान्त स्वभाविक है। लगता है जैसे लोगो के पास समय ज्यादा है जबकि स्वतन्त्र देश के नागरिक को अपना समय बिलकुल व्यर्थ नही खोना चाहिये। नागरिक का प्रत्येक क्षण मूल्यवान है वह राष्ट्र की सम्पत्ति है, धरोहर है। विदेश से हम यह शिक्षा लें तो हमारा लाभ होगा हम अनुकरण करते है। कपडो का जब कि हम उन कपडो को रखने का सलीका नही जानते। दूसरे के दुख मे हमारा कलेजा नही पसीजता। हमे मात्र अपनी जेब प्यारी है जिसे भारी करने के लिये हम बडी से बडी हानि राष्ट्र को पहुँचा सकते हैं। नए नागरिको पर स्वतन्त्र भारत का उत्तरदायित्व है।

नगरो मे पढने वाले छात्र जिन उदडताओ का प्रदर्शन करते हैं। बसो मे टिकट न लेना, सुन्दर बनाने वाली वस्तुओ का दुरुपयोग करना, अमूल्य समय को सिनेमा और क्लबो मे नष्ट करना, वासना को उत्तेजित करने वाले साधनो मे रुचि लेना ये सभी नागरिक चरित्र की राष्ट्रीय सभ्यता के सर्वथा प्रतिकूल है। नगरो मे यह दशा बहुतायत रूप से पाई जाती है। इसके लिए आवश्यक है कि हम इन नए नागरिको के हृदय मे नागरिक प्रतीति (Civic sence) उत्पन्न करें।

नगर के साथ-साथ गांवो की भी बुरी दशा है। एक तो पर्याप्त रूप से सारे गांवो मे पाठशालाओ और विद्यालयो की कमी है दूसरे वहाँ लोगो मे जागृति उत्पन्न करने के साधन भी उपलब्ध नही हैं। कहा जाता था कि नगर मे रहने वाले लोग चालाक होते हैं, गाँव मे रहने वाले सीधे और ईमानदार होते हैं परन्तु अब अधिकतर देखा जारहा है कि गाँव के लोग हठी और अधिक वेईमान होते जा रहे हैं। घी दूध आदि मे पवित्रता वहाँ भी नही पाई जाती। अशिक्षा और अज्ञान ने भोलेपन की बजाय उन्हे धूर्त बना दिया है। किसान और मजदूर अब नगरो की ओर दौड़ रहे हैं। अनाज, घी और दूध की कमी के पीछे ऐसे ही कारण हैं।

इन बातो को ध्यान मे रखते हुए यह अत्यन्त आवश्यक हो गया है कि हम लोगो मे यह भावना भर जाय कि यह देश हमारा है। घर से ज्यादा देश प्यारा है। हमारा प्रत्येक आचरण देश की स्थिति पर प्रभाव डालता है। भारत जैसे देश ससार मे बहुत कम हैं जहा प्रत्येक उन्नति की सभावनाए हैं। ज्ञान, विज्ञान, भक्ति, पवित्रता, धर्म, शिक्षा आदि सभी क्षेत्रो मे जहा जीवन का सत्य, शिव और सुन्दर रूप निखर सकता है सभी की शक्ति इस महान् गौरवशाली राष्ट्र मे है। इसके कण-कण मे हमारी प्राचीन सास्कृतिक सम्पत्ति का ऐश्वर्य हस रहा है।

आवश्यकता है हम राष्ट्र मे त्याग और परामार्श की भावना का स्वस्थ वातावरण उत्पन्न करें। ऐसे वातावरण मे मनुष्य की प्रतिभा कुठित न हो। हमारी असभ्यता पर परदेशी व्यग्य न करे। हमारे आचरण, सभ्यता और सर्वागीण सौन्दर्य से ससार ईर्ष्या करे। व्यक्ति के स्वभाव और आचरण मे आश्चर्यजनक परिवर्तन होना चाहिए। व्यक्ति से समाज और समाज से राष्ट्र का जन्म होता है। इसलिए स्वतन्त्र देश के स्वतन्त्र एव सभ्य नागरिक को नागरिकता का पूर्ण ज्ञान होना चाहिए। तभी इस देश का प्राचीन इतिहास अपनी इस नई करवट मे नई श्वास लेगा और एक नए शुभ प्रभात मे अपनी अलसाई आँखो को खोलेगा।

तृतीय पंचवर्षीय योजना

भारत की स्वतन्त्रता को सुदृढ बनाने के लिए प० नेहरू ने पचवर्षीय योजनाओ की जो रूपरेखाएँ प्रस्तुत की थी वे सभी किसी न किसी रूप मे सफल रही है। कारण यह है कि भारत सदियो की परतन्त्रता के अभावो को समाप्त करने के लिये प्रयत्नशील तो है परन्तु एक दम इतना बडा कुआ कैसे पट सकता है। प्रथम योजना मे (१९५२ से १९५६) २,२४८ करोड रुपये व्यय हुए। प्रथम योजना की प्रेरणा रूस और अमेरिका से मिली थी। योजना की अवधि से पहले ही काम पूरे हो गये और द्वितीय योजना बनी। इसमे धन की कमी पडी। द्वितीय योजना मे ४,२५६ करोड का अनुमान हुआ। इसके लिये विदेशी सहायता ली गई। यह योजना आकस्मिक कारणो से पूरी न हो सकी। फिर भी भिलाई, दुर्गापुर और राउरकेला आदि के कारखानो का निर्माण इस दिशा मे सफल प्रयत्न है।

१९६१ से तीसरी पचवर्षीय योजना आरम्भ हुई है। इसके उद्देश्य निम्नलिखित थे।

(१) अगले पाँच वर्षों मे राष्ट्रीय आय मे पाँच प्रतिशत से अधिक वृद्धि।

(२) अन्न की दृष्टि से आत्म-निर्भरता।

(३) कच्चे माल का उत्पादन देश की आवश्यकता के अतिरिक्त निर्यात के योग्य करना।

(४) इस्पात, बिजली तेल, ईंधन के उद्योग बढाना और भारी मशीनो के कारखाने स्थापित करना।

(५) श्रम शक्ति का उपयोग एव रोजगार की व्यवस्था।

(६) धन और आय की विषमता दूर करके न्यायोचित वितरण।

तीसरी योजना का एक बडा उद्देश्य यह भी है कि रोजगार और प्रति व्यक्ति आय इस प्रकार बढ जाए कि आगे लोग व्यवसाय मे बचत का रुपया

स्वय लगाते रहे। यह खेती और उद्योगो की उन्नति पर निर्भर है। अत दोनो प्रकार की उन्नति पर पूरा ध्यान देने का निश्चय किया गया है। इससे अधिक से अधिक लोगो को काम मिल सकेगा। देश मे समाजवादी अर्थव्यवस्था स्थापित करने के लिए आर्थिक विषमता दूर करना आवश्यक है। अत अधिकाधिक आर्थिक प्रगति के द्वारा पिछले वर्ग को ऊँचा उठाना आवश्यक है। सन् १९६६ तक देश की जनसख्या अडतालीस करोड हो जाने की सभावना है। अत परिवार नियोजन के प्रयत्नो के साथ-साथ उस स्थिति का सामना करने के लिये तेजी से आर्थिक उन्नति करना भी आवश्यक है। एक करोड साठ लाख टन पैट्रोलियम का उत्पादन भी इस योजना का लक्ष्य है, योजना मे खेती और सामुदायिक विकास के लिए १,०२५ करोड और सिंचाइ आदि के लिये ६५० करोड रुपये निश्चित किए। निजी तौर से भी ८०० करोड रुपये लगाये हैं। विभिन्न उत्पादनो का लक्ष्य इस प्रकार रखा गया है।

अन्न	१०००—१०५० लाख टन
तिलहन	९२-९५ ,, ,,
गन्ना (गुड के रूप)	९०-९२ ,, ,,
कपास	७२ ,, ,,
पटसन	६५ ,, गाँठ
इस्पात	६०९ लाख टन
खाद	१० ,, ,,
कोयला	९,७०,००,००० ,, ,,

इसके अतिरिक्त देश मे उद्योग, विजली और यातायात के विकास के लिये १,५०० करोड सरकारी क्षेत्र मे, १००० करोड निजी क्षेत्र मे लगाये जाने का अनुमान लगाया गया। भारी मशीनें तैयार करने के लिये कारखाने स्थापित किए। छोटे और ग्रामोद्योगो की उन्नति पर विशेष ध्यान देने का निश्चय किया गया। ३६० उद्योगपुरियाँ बसाईं। विजली का उत्पादन १,१८,००,००० किलोवाट हुआ। अणु शक्ति से तीन लाख किलोवाट विद्युत

का उत्पादन होगा । रेलगाडियो के माल ढोने की क्षमता २३ करोड ५० लाख टन की गई । १,२००मील लम्बी नई लाइनें बिछाई, पक्की सडको की लम्बाई १,६४, ००० मील हुई । जहाज भी ११ लाख टन के हो जाने की सम्भावना रही ।

सामाजिक सेवा—

छः से ग्यारह वर्ष तक के बच्चो के लिये नि शुल्क और अनिवार्य शिक्षा की व्यवस्था न होकर आठवी तक हुई । स्कूलो के छात्रो की सख्या १९६६ तक छ करोड हुई । इसी प्रकार विज्ञान और शिल्प शिक्षा मे पर्याप्त विकास हुआ अस्पतालो, डाक्टरो, सतति निरोध केन्द्रो की सख्या बहुत बढी है। नगरो, देहातो मे सफाई, पीने के पानी की व्यवस्था और गाँवो को सडको द्वारा रेलवे स्टेशनो से मिलाने की दिशा मे अधिकाधिक कार्य हो रहा है । स्कूलो के भवन निर्माण पर भी ध्यान दिया जा रहा है ।

इस योजना पर कुल व्यय १०,२०० करोड हुआ, जिसमे ६,२०० करोड सरकारी क्षेत्र मे तथा ४००० करोड रुपया निजी क्षेत्र मे होने का अनुमान लगाया गया था । २०० करोड रुपया जो कि सरकार द्वारा निजी क्षेत्र को सहायतार्थ दिया जायगा पृथक है । वैसे सरकारी क्षेत्र मे कुल खर्च ७,२५० करोड सम्भावित थे । सरकारी क्षेत्र मे होने वाले व्यय मे ३,६०० करोड रुपया केन्द्र और ३,६५० करोड रुपया राज्य द्वारा करना निश्चित हुआ । इस व्यय का विभाजन इस रूप मे रहा—

(१) कृषि और छोटी सिचाई योजना	६२५ करोड
(२) सामुदायिक विकास और सहकारिता	४०० करोड
(३) बडी और मध्यम सिंचाई	६५० ,,
(४) बिजली	९२५ ,,
(५) ग्राम और लघु-उद्योग	२५० ,,
(६) उद्योग और खनिज	१५०० करोड़
(७) परिवहन व सचार	१४५० ,,

(८) सामाजिक सेवा	१२५० ,,
(६) स्थायी कोष	२०० ,,
	कुल ७२५० ,,

इतने धन को जुटाने का कार्य कठिन है। उसके लिये निम्न व्यवस्था की गई है —

(१) राजस्व से आय	३५० करोड
(२) रेलो से आय	१५० ,,
(३) सरकारी उद्योगो से आय	४४० ,,
(४) सार्वजनिक ऋण	८५० ,,
(५) अल्प बचत	५५० ,,
(६) भविष्य निधि से प्राप्तव्य धन	५१० ,,
(७) विदेशी सहायता	२,२०० ,,
(८) घाटे की अर्थ व्यवस्था	५५० ,,
	५६०० ,,

शेष अर्थ राशि जुटाने के लिए १६५० करोड रुपये के अतिरिक्त कर का भार जन-साधारण के लिए असह्य। तथापि देश के भविष्य के लिए जनता तो त्याग करेगी ही, सरकारी अधिकारियो की फिजूलखर्ची एव प्रशासन के व्यय भार को कम करने की भी आवश्यकता है। अब चतुर्थ पचवर्षीय योजना की तैयारी है। विकास परिषद् की बैठक ने अभी पूर्ण निश्चय नही किया है। सितम्बर १९६५ तक परिषद् पूर्ण रूपरेखा प्रस्तुत करेगी। वैसे इस योजना मे सुरक्षा व्यवस्था को अधिक महत्व दिया गया है।



भारत और साम्यवाद

भारत इस समय स्वाधीन राष्ट्रो मे एक ऐसा राष्ट्र है जिसमे शेर-वकरी एक घाट पर पानी पीते है। यहाँ जितनी स्वतन्त्रता काँग्रेसी को है उतनी ही साम्यवादी को भी और उमी प्रकार के साधनो का साम्प्रदायवादी भी आनन्द पूर्वक उपयोग करते हैं। प्रेस, प्लेटफार्म, भाषण स्वतन्त्रता आदि की सुविधा भारत के सभी राजनीतिक दलो को समान रूप से प्राप्त है।

यह सब होने पर भारत के सम्वन्ध मे विदेशियो की निरन्तर यही जिज्ञासा वनी रहती है कि भारत किस विचारधारा की ओर अग्रसर हो रहा है।

इस सम्वन्ध मे भारत की नीति विल्कुल स्पष्ट है। यद्यपि जिस नीति की राष्ट्र नेताओ ने वार-बार घोषणा की उस पर भारत नही चल सका। इसका सवसे प्रमुख कारण भारत सरकार का बहुत समय बाद पराधीनता से मुक्त होना है। जिस देश को वहुत समय तक सर उठाने का भी अवसर न मिला हो वह स्वाधीन होने पर वहुत समय तक समर्थ राष्ट्रो की पक्ति मे गर्व के साथ खडा हो जाय यह सुयश भारत को ही मिला है।

आज भारत समाजवादी पद्धति का समर्थक है। इस पद्धति का देश के अनेक मान्य नेताओ ने विरोध भी किया है। इस पद्धति के सम्वन्ध मे सिद्धान्तवादी दृष्टिकोण से विचार न करके यदि यह कहा जाय कि भारत का लक्ष्य है क्या ? सव सुखी हो, सवको उन्नति का अवसर मिले, यह कामना भारतीय सविधान मे लोक कल्याणकारी मान्यताओ के रूप मे की गई है। यदि यही लोक कल्याणकारी गगा का प्रवाह देश मे व्याप्त हो जाय तव समाजवाद साम्यवाद आदि से वढकर एक ऐसा आदर्श उपस्थित कर सकता है जिसके लिए शव्दकोप मे कोई नया शव्द खोजने पर भी नही मिलेगा।

साम्यवाद (कम्युनिजम) एक क्रान्तिकारी विचारधारा है। जिसका लक्ष्य है कि पू जीवादी व्यवस्था का पूर्ण अन्त करके सर्वहारा वर्ग का शासन

स्थापित किया जाय। एक प्रकार से साम्यवाद समाजवाद की उग्र विचार-धारा है। इस विचारधारा का विश्वव्यापी प्रभाव है। कही अल्पमत मे कही बहुमत मे। कुछ राष्ट्र इस विचारधारा के प्रमुख समर्थक हैं। उनमे सोवियत रूस का स्थान सर्वप्रथम है। साम्यवाद का सबसे अधिक प्रचार रूस के प्रयत्नो से ही हुआ है। उसके बाद उसी मार्ग पर अग्रसर चीन है। कुछ देशो मे समाजवादी विचारधारा का चलन है और कुछ मे राजतन्त्र आदि के रूप मे शासन है। सारे ससार मे इन दिनो अधिनायकता (डिक्टेटरशिप) का अन्त हो चला है।

साम्यवादी एक ऐसे वर्ग-निर्माण की कल्पना करते हैं जिसमे सबके पास समान अधिकार तथा सुख के साधन हो। साम्यवादी विचारधारा का विशेष प्रभाव भारत मे इसलिए दिखाई देता है कि जनसाधारण को आवश्यक सुख-सुविधायें नही मिल रही। देश मे भ्रष्टाचार और घूसखोरी का बोलबाला है। बेकारी और बेरोजगारी के कारण अनेक नौजवानो को काम नही मिलता और वे बेकार घूमते हैं। इस कारण जनसाधारण के असन्तोष को साम्यवादी विचारधारा का रूप दे दिया जाता है। पर वास्तव मे हीगल, मार्क्स और लेनिन की विचारधारा के आधार पर भारत मे साम्यवाद का प्रचार कम नही है। यदि रोजी-रोटी की भारत मे पूर्ण व्यवस्था हो जाय तो इस भूमि मे साम्यवाद की जड तनिक भी नही जम सकती।

मार्क्स की विचारधारा ने शोषित वर्ग मे एक चेतना अवश्य फैला दी, किन्तु कोई भी राष्ट्र अथवा उसमे रहने वाला सभ्य नागरिक अशान्ति, तनाव और हिंसा की भावना का समर्थन नहीं कर सकता। मार्क्स की विचारधारा ने सर्वहारा समाज मे शोषण करने वाले वर्ग के प्रति असहयोग की भावना के साथ-साथ हिंसापूर्ण नीति का भी बीजारोपण किया है। इसके अतिरिक्त बीसवीं सदी मे औद्योगिक क्रान्ति ने और मालिक मजदूरो के तनावपूर्ण सम्बन्धो ने साम्यवाद की भावना को बढने मे बल दिया। मार्क्स की विचार-धारा मे कोई व्यक्ति अधिक व्यक्तियो के सुख का स्वय केन्द्र बनकर शोषण

करे इसका विरोध किया गया। इसके लिए शासन तथा आर्थिक साधनो के उद्योगो पर समाज के प्रतिनिधियो का अधिकार हो और उसके द्वारा सबको समान रूप से जीने का अवसर मिले यह कार्य सुचारु रूप से तभी सम्भव हो सकता है जब राष्ट्रीय सम्पत्ति का समान वितरण हो।

साम्यवादी विचारधारा के परीक्षण का श्रीगणेश सोवियत सघ में अक्तूबर क्रान्ति के रूप मे हुआ। रूस मे १९१७ मे जारशाही के विनाश के बाद जो क्रान्ति हुई तब लेनिन के नेतृत्व मे कम्युनिज्म की स्थापना हुई।

साम्यवादी विचारधारा का उद्भम समाजवाद से हुआ है। समाजवाद के बाद उग्र विचारधारा के लोग साम्यवादी कहलाये। रूस मे सोशलिस्ट पार्टी मे १९०३ मे बोलशेविक (उग्र) तथा मैंनसेविक (नर्म) दो दल हो गये। १९१७ मे बोलशेविक (उग्र साम्यवादी) विचारधारा का प्रसार तेजी से होने लगा। लेनिन ने बोलशेविक दल का नाम कम्युनिस्ट रखा। कम्युनिस्ट शब्द का मार्क्स और ऐंजलस ने १९४८ मे अपने घोषणा पत्र मे उल्लेख किया है।

साम्यवादी विचारधारा का सारे ससार पर विशेष प्रभाव है। एक प्रकार से कूटनीतिक राजनीति मे आज ससार मे दो विचारधारा बन गई हैं। एक साम्यवादी प्रभाव की है और दूसरी उसके विपरीत। एक तीसरी विचारधारा भारत की है जो शान्ति, ऐक्य स्थापना तथा सहअस्तित्व के आधार पर चल रही है। इसके विपरीत रूस, चीन तथा अन्य कुछ राष्ट्र साम्यवादी विचारधारा से प्रभावित हैं किन्तु उनकी विचारधारा भी कही-कही विचित्र दीख पडती है। उदाहरण के लिये चीन साम्यवादी होने पर भी भारत की सीमा पर अतिक्रमण करने मे कोई हानि नही मानता। हजारो वर्ष की भारत के साथ मैत्री की उसने जरा भी चिन्ता नही की।

भारत साम्यवादी है या नही, इस पर विचार न करके साम्यवादी विचारधारा के प्रभाव से भारत की किस प्रकार रक्षा की जा सकती है यह प्रश्न विशेष रूप से विचार करने योग्य है। भारत धार्मिक, आध्यात्मिक एव

सास्कृतिक परम्परा का प्राचीनतम सभ्य और साम्कृत देश है, पर अव धीरे-धीरे उन गुणो से हीन हो रहा है। अत पहले जैसा भारत वनने और जनसाधारण को जीवन के विकास के लिए अवसर मिलने पर भारत को साम्यवादी विचारधारा से सुरक्षित रखा जा सकता है। राजा, महाराजा मिटाकर यदि भारत मे चन्द पूँजीपतियो का प्रभुत्व रहा और शासन क्रम मे लालफीताशाही, नौकरशाही एव अन्य दुर्गुण विद्यमान रहे तव भारत भी साम्यवाद का पुजारी वन जायेगा।



भारत और चीन का सीमा विवाद

अभी उस घटना को अधिक समय नही वीता जव चीन के प्रधान मन्त्री श्री चाऊ-एन-लाई तथा कई अन्य प्रमुख नेता भारत की राजधानी दिल्ली मे पधारे थे और यहाँ की जनता ने उनका हार्दिक स्वागत किया था। हिन्दी-चीनी भाई-भाई का नारा अभी भी हमारे कानो मे गूँज रहा है। परन्तु इस समाचार ने विजली के करेण्ट की तरह हमे धक्का पहुँचाया है कि चीन भारत की परम्परागत सीमाओ को स्वीकार करने को तैयार नही। वह भारत की सीमा पर सेना एकत्र कर रहा है, तथा फौजी अड्डो के निर्माण मे व्यस्त है।

१५ अगस्त १९४७ को भारत स्वतन्त्र हुआ और उसके दो वर्ष वाद चीन स्वतन्त्र हुआ। भारत सरकार ने तुरन्त नव-चीन सरकार को मान्यता प्रदान करदी। इतना नही भारत ने समय-समय पर चीन की साम्यवादी सरकार को सयुक्त राष्ट्रसघ मे प्रतिनिधित्व दिलाने के लिये भी प्रयत्न किये। इसकेलिए भारत को अनेक शक्तिशाली राष्ट्रो के विरोध का सामना करना पडा। भारत और चीन के प्रधान मन्त्रियो ने पञ्चशील के सहअस्तित्व के सिद्धान्तो को भी स्वीकार किया।

सन् १९५६ मे भारत की सरकार को कुछ ऐसे नक्शे मिले जिनमें भारत के उत्तर-पश्चिम, उत्तर और उत्तर पूर्वी कुछ क्षेत्र चीन के दिखाये गये, थे। भारत सरकार ने इस बारे से चीन सरकार का ध्यान आकर्षित किया तो चीन सरकार ने कहा कि हम इस समय अन्य समस्याओ मे व्यस्त हैं इस कारण नक्शो मे परिवर्तन करने का समय नही है। बाद मे इन पर विचार कर लिया जायेगा।

भारत सरकार ने नक्शो की घटना को साधारण भूल समझकर अधिक जोर नही दिया। परन्तु अक्तूबर १९५७ के आसपास भारत सरकार को पता चला कि चीन ने तिब्बत मे मैंहचेंग से गरथोट तक सडक बनाई है। सरकार को सन्देह हुआ कि यह सडक कही भारतीय क्षेत्र मे होकर तो नहीं बनाई गई। उसने एक पुलिस दल उस क्षेत्र मे जाँच करने के लिये भेजा। चीन ने हमारे सिपाहियो को वन्दी बना लिया और महीनो तक उनका कुछ पता ही न चल पाया। सितम्बर १९५८ मे भारत सरकार को यह निश्चिय हो गया कि सडक अक्साई चिन (भारतीय क्षेत्र) से होकर निकाली गई है। यह निश्चय होजाने पर भारत सरकार ने चीन सरकार को एक विरोध पत्र भेजा। इस बारे मे प्रधान मन्त्री श्री नेहरू ने भी चीन के प्रधान मन्त्री श्री चाउ-एन लाई को एक पत्र लिखा था।

दोनो ओर से पत्रो का आदान-प्रदान हुआ। चीन के प्रधान मन्त्री श्री चाऊ ने कहा कि चीन मेकमोहन रेखा को स्वीकार नही करता। उनका तर्क यह था कि मार्च १८१४ के शिमला सम्मेलन के निश्चयो को चीन सरकार ने कभी वैध नही माना।

भारत के ९०,००० वर्ग किलोमीटर क्षेत्र पर चीन सरकार अपना दावा करती है। इसमे से लगभग ३३,००० वर्ग किलोमीटर क्षेत्र लद्दाख प्रदेश का है। चीन ने जो सडक तिव्वत मे वनवाई है उसका १८० किलोमीटर भाग 'अक्साई चिन' मे है, जो कि भारतीय क्षेत्र है।

इस प्रकार के दावे के अतिरिक्त सुना यह भी गया है कि चीन ने पश्चिमी तिव्वत मे राकेट तथा वहुत सी वख्तरवन्द गाडियो को भेज दिया है।

वताया जाता है कि १८ हवाई अड्डे भी वना लिये है। ल्हासा तक रेलवे लाइन वनाने के लिए भी चीनी प्रयत्नशील है। इस स्थिति से भली प्रकार यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि चीना लद्दाख मे आगे वढ सकते हैं अथवा भूटान मे घुस सकते हैं।

सीमा विवाद को निबटाने मे चीन का रुख पूर्णतया अमैत्रीपूर्ण रहा है। यद्यपि चीन के प्रधान मन्त्री चाऊ-एन-लाई वार्ता के लिये दिल्ली भी आए परन्तु उन्होने समस्या के समाधान की दिशा मे कोई उल्लेखनीय वात नही कही। चीन द्वारा भारत के सैनिको को पकडना और उनके साथ ववंरतापूर्ण व्यवहार करके भी उस पर किसी प्रकार का खेद न प्रकट करना अनुचित ही कहा जा सकता है।

इससे भी बढकर चीन एवरेस्ट पर भी अपना दावा करने लगा है। उस की ईमानदारी मे सदेह उत्पन्न होना स्वभाविक है। लगता है सीमा विवाद उसकी विस्तारवादी नीति का परिणाम है।

भारत और चीन की सरकारो के हृदय मे मत-भेद है और इससे सारी उत्तरी सीमा पर तनाव पैदा हो गया है। चीन की कार्यवाही से नेपाल, सिक्कम और भूतान मे चिन्ता व्याप्त होगई है। भारत को सतर्क रहने की आवश्यकता है। सीमावर्ती स्थानो मे हवाई अड्डो की वात तो दूर भारत ने अभी तक मोटर सडको और रेल लाइनो का भी विकास नही किया। चीनी इरादो को देखते हुए यह अत्यन्त आवश्यक है कि भारत अपने रक्षाकार्य को प्राथमिकता दे। कुछ दिनो तक तो यह स्थिति रही कि सीमा पर चीनी आक्रमण के समाचार भी कई दिनो वाद मिलते थे। सीमा से सरकार का रातदिन सम्पर्क वना रहना आवश्यक है और सीमावर्ती चौकियो तक यातायात की उचित व्यवस्था भी होनी चाहिए।

भारत और चीन पडोसी देश हैं और इनकी मैत्री हजारो वर्ष पुरानी है आज दोनो देशो के लिए यह नितान्त आवश्यक है कि वे अपने निर्माण कार्यों मे जुटें। इस प्रकार के विवाद को अधिक वढाना और झगडना किसी के

भी हित मे नही हो सकता । यह अधिक व्यवहारिक है कि सीमा की स्थिति को यथापूर्वक रहने दिया जाय ।

इस विवाद को पारस्परिक सद्भाव और शान्तिपूर्ण वार्ता द्वारा हल किया जाना आवश्यक है भारत और चीन जैसे बडे राष्ट्र आपसी विवाद को निवटा कर शान्तिपूर्ण सहअस्तित्व और सहयोग से काम करें। दोनो राष्ट्रो की मैत्री से विश्व शान्ति को वल मिलेगा और वे अपनी उन्नति तथा विकास की दिशा मे अग्रसर हो सकेंगे । यद्यपि प्रधान-मन्त्रियो की वार्ता असफल होने से इस दिशा मे वडी निराशा हुई है, फिर भी यह आशा करनी चाहिए कि अभी शान्तिपूर्ण समझौते के लिए द्वार वन्द नही हुआ । इस दिशा मे चीन को विचार करना चाहिए और भारत की सीमा से अपनी सेनाओ को हटा लेना चाहिए ।



सैनिक शिक्षा का महत्व

यू तो ससार के समस्त तटस्थ राष्ट्र विज्ञान की सहायता से मानव मस्तिष्क के भयकर और विनाशकारी आयोजनो को देखकर चारो ओर से एक स्वर मे नि शस्त्रीकरण पर वल दे रहे हैं, परन्तु फिर भी विद्यालयो मे सैनिक शिक्षा का महत्व घटाया नही जा सकता। कारण यह है कि सैनिक शिक्षा किसी भी राष्ट्र को शक्तिशाली वनने के लिए अत्यन्त आवश्यक है। सैनिक शिक्षा का महत्व किसी दूसरे राष्ट्र को हानि पहुँचाने अथवा उस पर वल प्रयोग कर अपने आधीन करने की प्रवृत्ति नहीं है। इस शिक्षा का महत्व आत्मरक्षा मे है। भौतिक और आकस्मिक विपत्तियो से सावधान रहकर अपनी सुरक्षा करना भी स्वतन्त्र राष्ट्र के सभ्य और उन्नतिशील नागरिको का परमधर्म है। क्योकि राजनीति को हमारे नीति शास्त्रो मे "वेश्या" वतलाया

गया है। जिस प्रकार एक वेश्या अपनी ओर ग्राहको को आकर्षित करने के लिए अनेक रूप धारण करती है, उसी प्रकार राजनीति किसी भी समय किसी भी आकस्मिक रूप से अपनी नीति मे परिवर्तन कर सकती है। ऐसी स्थिति मे राष्ट्र का अपनी सुरक्षा के लिए शक्तिशाली होना अत्यन्त आवश्यक है।

नई शिक्षा प्रणाली मे 'सैनिक शिक्षा' को महत्व देकर स्वतन्त्र भारत की सरकार ने अत्यन्त योजनाबद्ध, उत्साहपूर्ण और दूरदर्शी कदम बढाया है। प्राचीन इतिहास इस बात का साक्षी है कि सामान्य जनता सैनिक जीवन से सर्वथा अपरिचित रही है। आवश्यकता पडने पर बलपूर्वक अशिक्षित और निरीह जनसमुदाय को सेना मे भरती करने के अनेक उदाहरण मिलते हैं। ऐसी स्थिति मे केवल सख्या बढाने की भावना को सतोष प्राप्त हो सकता है, किन्तु सैनिको मे उत्साह, साहस, राष्ट्र-भक्ति, बलिदान की भावना आदि उस थोडे से प्रशिक्षण से सर्वथा असम्भव है। इन सब कारणो को दृष्टि मे रखते हुए निश्चित ही सरकार को किसी न किसी ऐसी योजना को कार्यान्वित करना आवश्यक था जिससे कि राष्ट्र किसी भी विपत्ति को देख कर अपने देशवासियो को असहाय अनुभव न करे।

भारत के शिक्षा शास्त्रियो ने केवल बाहर की ही नही, अपितु अपने भीतर की दुर्बलताओ को ध्यान मे रखकर माध्यमिक एव उच्च माध्यमिक विद्यालयो मे ए० सी० सी० तथा उच्चतर विद्यालयो और महाविद्यालयो मे एन० सी० सी० का प्रशिक्षण प्रारम्भ किया। सोलह वर्ष के ऊपर के छात्रो के लिए सैनिक शिक्षा को अनिवार्य बनाकर इन दूरदर्शी शिक्षाशास्त्रियो ने एक महान् राष्ट्रीय आवश्यकता की पूर्ति की है इसमे कोई भी सदेह नही। सैनिक शिक्षा प्रदान करने वाले अध्यापक निश्चित केन्द्रो मे नियमित रूप से कुछ समय तक प्रशिक्षण प्राप्त करते हैं। वे अध्यापक अपने छात्रो को सैनिक शिक्षा प्रदान करते हैं। वे छात्र शिक्षाकाल मे नियमित रूप से सैनिक जीवन व्यतीत करते है। इसके लिए न केवल विद्यालयो मे अपितु दूर-दूर पर्वत प्रदेशो अथवा और एकांत स्थानो मे कैम्प लगाकर छात्रो को समस्त सैनिक जीवन की कठिनाइयो

से परिचित कराने की योजना बनाई जाती है। उन कठिनाइयो पर विजय प्राप्त करने की उत्साहपूर्ण प्रेरणा दी जाती है और साहसपूर्ण ढग से प्रयत्न करना सिखाया जाता है। सफल छात्र-सैनिक अपनी योग्यता के आधार पर प्रमाण-पत्र प्राप्त करते हैं जो उनके भविष्य की उन्नति मे सहायक सिद्ध होते हैं।

यहाँ यह स्वाभाविक प्रश्न है कि छात्रो पर शिक्षा का भार अधिक होते हुए भी इस नवीन भार की क्या आवश्यकता है। शिक्षा युग की माँग को देखते हुए इस प्रश्न का उत्तर हमारे उपर्युक्त कथन से प्राप्त हो जाता है। साथ ही आये दिनो भारतीय युवको मे उच्छृखलता, असभ्यता, चरित्रहीनता, अनुशासनहीनता आदि के कुलक्षण पाये जा रहे हैं। इसका प्रत्यक्ष प्रमाण हमे सिनेमाघरो, रेलवे स्टेशनो, सामाजिक उत्सवो, सार्वजनिक मार्गों आदि मे देखने को प्राप्त होता है। इस दृष्टि से सुधार की आवश्यकता है। इस सुधार के लिए अनिवार्य सैनिक शिक्षा रामवाण सिद्ध होगी, इसमे कोई सन्देह नही।

जैसा कि पहले कहा गया है कि ससार की विषम परिस्थितियो को देखते हुए यह असम्भव नही कि भारतवर्ष के पडोसी देश किसी भी समय विश्वास-घात कर सकते हैं। ऐसे विस्फोटक वातावरण मे भारत का प्रत्येक नागरिक यदि प्रशिक्षित सैनिक होगा तो हमारा राष्ट्र कितने ही प्रकार के भय और आशकाओ से मुक्त हो सकता है। भारत का भविष्य शक्तिशाली नवयुवको के उज्ज्वल चरित्र पर निर्भर है। यह विश्वास है कि इस सैनिक शासन मे उस भयकर वर्बरता तथा हिंसक अन्यायपूर्ण नीति का दर्शन नही होगा।



सहशिक्षा

सहशिक्षा का तात्पर्य है, छात्र-छात्राओ का एक ही साथ पढना। सहशिक्षा के सम्बन्ध मे विद्वान लोग एक मत नही है। भारत मे वर्तमान सहशिक्षा का रूप यूरोपीय सभ्यता की देन है। यूरोप मे सबसे पहले स्वीटज़र लैंड मे सहशिक्षा का प्रचलन हुआ और इसके बाद इगलैंड, अमेरिका तथा फ्रास आदि देशो मे भी इसका प्रचलन हो गया। इसके बाद धीरे-धीरे अग्रेजो ने अपनी एक अनुपम भेंट के रूप मे यह सहशिक्षा भारत को भी अर्पित कर दी। इस प्रकार सहशिक्षा का प्रचलन उन्नीसवी सदी मे हुआ। इस समय तक देश मे स्त्री-शिक्षा का भी पूरा प्रचार नही था और इसलिए जब सहशिक्षा की योजना जनता के सामने आई तो, जनता मे इसका विरोध भी पाया गया और समर्थन भी, फिर भी यह योजना किसी न किसी रूप मे देश मे प्रचलित हो ही गई।

सहशिक्षा के समर्थन मे अनेक तर्क दिये जाते हैं। कहा जाता कि प्राचीन भारत मे भी सहशिक्षा का प्रचलन था। आश्रमो और गुरुकुलो मे कुमारो के साथ ही ऋषि-कन्यायें भी पढती थी। उस समय इस सहशिक्षा के कारण ही देश मे एक पवित्र वातावरण था। लोगो का आचरण उच्च था। वाल्मीकि के आश्रम मे आत्रेयी भी अन्य कुमारो के साथ पढ़ती थी। कण्व के आश्रम मे शकुन्तला और उसकी सखियाँ भी थी। अत चरित्र निर्माण की दृष्टि से सहशिक्षा एक आवश्यक कदम है।

दूसरा तर्क यह है कि आज भारत निर्धन देश है, फिर भी शिक्षा देना तो आवश्यक है। इसलिए शिक्षा योजना को सफल बनाने के लिये यह आवश्यक है कि छात्र-छात्राओ का अध्ययन एक साथ हो, जिससे अलग-अलग विद्यालय खोलने के खर्च को बचाया जा सके। यदि दोनो वर्गों के लिए इन्जीनियरिंग कालेज और मेडिकल कालेज खोले जायें, तो धन का अपव्यय होता है साथ ही इन दोनो कक्षाओ मे लडकियो की सख्या भी कम रहती है। थोडी सी छात्राओं के लिए इतनी वडी सख्या मे प्रवन्ध करना धन का अप-

व्यय ही तो है। इन विषयो के पढाने मे पुरुष वर्ग का अनुभव अधिक होता है, अनुसन्धानशाला और पुस्तकालय की सुविधा दोनो के लिए एक साथ की जा सकती है। इसलिए सहशिक्षा से एक प्रकार से धन की बचत करके उसे दूसरी योजनाओ मे लगाया जा सकता है।

सहशिक्षा से तीसरा लाभ यह है कि आज के विद्यार्थियो को एक साथ रहने से उनके स्वाभाविक गुणो का विकास होता है। जब लडके-लडकिया साथ-साथ पढते है तो उनमे विनय, शिष्टाचार, आचरण की शुद्धता तथा एक दूसरे के साथ रहने के प्रति सहृदयता और सहानुभूति के भाव जागृत होते हैं। लडकियो मे साहस, व्यवहार-कुशलता, वीरता और देश-प्रेम की भावना उत्पन्न होती है। इस प्रकार दोनो ही दल एक दूसरे के गुण लेकर समाज का नव निर्माण करने मे सहायक होते हैं। एक स्वस्थ वातावरण पैदा होता है। परस्पर के मिलने से उनमे एक दूसरे के प्रति अकर्पण कम होता है, जिससे कामवासनाओ की विकृत-भावनायें उद्दीप्त नही होती। इस प्रकार समाज का जीवनस्तर ऊँचा होता है। यदि एक वस्तु को गोपनीय रूप मे रखा जाता है, तो उसके प्रति देखने वालो का आकर्षण वढता है। इसी प्रकार यदि लडकियो को लडको से दूर परदे मे रखने का प्रयत्न होता है, तो दोनो के ही मन मे एक दूसरे के प्रति गहरा आकर्पण होता है और उससे सामाजिक जीवन मे अनेक विपम परिस्थितियाँ पैदा होती हैं।

सहशिक्षा से चौथा लाभ यह है कि लडके-लडकियाँ एक-दूसरे के स्वभाव मे परिचित हो जाते हैं। यह परिचय उन्हे अनेक वार अपना सच्चा जीवन साथी खोजने मे सहायक होता है। ऐसी अवस्था मे यदि दोनो ही पक्ष अपने को एक दूसरे का साथी वना लेते हैं, तो दहेज प्रथा आदि अनेक सामाजिक कुरीतियाँ स्वय ही नष्ट हो जाती हैं। इस सहशिक्षा से दोनो वर्गों मे शिक्षा के क्षेत्र मे आगे वढने की प्रतिद्वन्दिता भी वढती है, जिससे एक दूसरे से आगे वढने की भावना से उन्नति का सुअवसर मिलता है। साथ ही एक दूसरे को देखकर स्वच्छता और वेशभूषा का भी दोनो को ध्यान रहता है। आज का

युग समानता का युग है। नारी पुरुष के समान ही जीवनक्षेत्र मे समानता के अधिकार मागती है। स्वतन्त्र भारत के सविधान मे नारी के इस अधिकार को स्वीकार किया गया है। परन्तु यह तभी सम्भव है, जब शिक्षा काल मे ही दोनो को साथ रहने का अवसर दिया जाए, एक दूसरे के सम्पर्क मे अधिक बाधा न डाली जाए।

इस प्रकार सहशिक्षा के समर्थक इससे और भी अनेक आकर्षक लाभ बताते हैं। परन्तु इसके विपक्ष मे भी अनेक ऐसे तर्क हैं, जिनकी उपेक्षा नही की जा सकती। इन विपक्षियो का सबसे पहला तर्क यह है कि लडके और लडकियो के अध्ययन के विषय समान नही होते। दोनो के भावी जीवन क्षेत्र भिन्न होते हैं।

लडकियो के लिए गृह-विज्ञान, शिशुपालन तथा आरोग्य-शास्त्र आदि का अध्ययन आवश्यक है, जबकि यह विषय लडको के लिए विशेष लाभप्रद नही। दूसरी ओर लडको को इतिहास जैसे रूखे विषय पढने पडते हैं। यदि लडकियो को ग्रीस रोम, फ्रांस और इग्लैण्ड के इतिहास रटाये जायेंगे, तो उनके भावी जीवन मे वे क्या उपयोगी हो सकते हैं? यदि उनके जीवनोपयोगी विषय न पढा कर अन्यान्य विषय पढाये जायेंगे, तो उनकी यह शिक्षा एक प्रकार से अधूरी ही रहेगी। ऐसी अधूरी शिक्षा से न तो समाज का कोई लाभ होगा और न विद्यार्थी का। अत ऐसी सहशिक्षा का कोई प्रयोजन नही।

सहशिक्षा इस प्रकार समाज के पतन की एक मुख्य भूमिका बन जायेगी। कहावत प्रसिद्ध है कि आग और घी का वैर है। यदि आग और घी को पास-पास रखा जाय, तो अवश्य ही घी पिघल जायेगा। नारी और पुरुष का आकर्षण स्वाभाविक है। सहशिक्षा एक दूसरे का परिचय कराने मे सहायक सिद्ध होगी। परन्तु इसका क्या प्रमाण है कि यह परिचय केवल यही तक सीमित रहेगा। क्या एक दूसरे का सौंदर्याकर्षण उन्हे अपनी ओर आकर्षित नही करेगा? क्या उसके आन्तरिक भाव इससे आगे न बढेंगे? क्या दर्शन के बाद स्पर्श प्राप्ति आलिगन की प्रवृत्ति उनके मन मे न आयेगी? सहशिक्षा-

केन्द्र उस समय क्या व्यभिचार केन्द्र न वन जायेंगे ? आज भी जहाँ इस प्रकार की शिक्षा प्रचलित है, वहाँ आये दिन गान्धर्व-विवाह और स्वेच्छाचारिता की घटनायें होती रहती हैं। जहाँ बडे-बडे तपस्वियो के लिए भी 'कामिनी' सवसे भयानक वस्तु हैं, वहाँ आज के नवयुवक के लिए तो वह आकर्पण साधारण वस्तु नही। देश मे अनेक सहशिक्षा केन्द्र खोले गये, परन्तु उनमे वहन-भाई के सम्वन्धो की अपेक्षा तो प्रेमी-प्रेमिका के गठ-जोडे ही अधिक वने। इससे सहशिक्षा समाज के पतन मे पूरी सहायक वनती है।

जहाँ तक प्राचीन काल की सहशिक्षा का सम्वन्ध है, उसमे भी सत्य तो यह है कि कुमारियो के अध्ययन का कही उल्लेख नही मिलता। आत्रेयी भी वाल्मीकि के आश्रम मे प्रौढावस्था मे ही ज्ञान तत्व सीखने गयी थी और जव कमार कुमारो के साथ उनकी शिक्षा न चल सकी, तो उसने आश्रम छोड दिया। प्राचीन मनीषियो ने तो स्वय लिखा है कि ब्रह्मचर्यावस्था मे नारी का दर्शनमात्र भी पतन का कारण होता है। जव सहशिक्षा मे अधिकतर एक दूसरे का साथ रहेगा, तो परिणाम कैसा होगा।

जहा तक धन की वचत का लाभ है, वहाँ तक चारित्रिक पतन सवसे वडी हानि है। भारत गर्म देश है। यहाँ यौवन का उभार शीघ्र होता है। दूसरे ठण्डे देशो मे जहाँ २० वर्ष की अवस्था एक साधारण सी अवस्था होती है, वहाँ भारत मे इस अवस्था के युवक-युवतियाँ दो-दो वच्चो के माँ वाप वन जाते है। इस अवस्था मे धन के लाभ की जगह चरित्र पतन समाज की सवसे वडी हानि है। अध्यापक वर्ग दोनो की उपस्थिति मे सभी विपय स्पष्ट रूप से नही समझा सकता। सहशिक्षा से नारी के स्वाभाविक धर्म कोमलता और लज्जा नष्ट हो जाते हैं। लडको मे लडकियो के साथ रहने से नारीत्व की भावना पैदा होती और लडकियो मे पुरुपत्व की। यह जीवन के लिए स्वाभाविक नही। साथ ही सहशिक्षा से दाम्पत्य जीवन भी कोई सफल जीवन नहीं होता। अनेक ऐसे उदाहरण हैं, जिनमे ऐसे प्रेम-विवाह असफल ही होते हैं। साथ ही इस देश मे जहाँ सहशिक्षा प्रचलित की गई, वहा भी लडके-लडकियो पर अनेक ऐसे प्रतिवन्ध रहते हैं, कि इस योजना का मूल उद्देश्य ही नष्ट हो

जाता है । एक ही कमरे मे दोनो की क्लास कुछ अन्तर रखकर लगाई जाती हैं, दोनो ही एक दूसरे से बोल नही सकते । तव इसका परिणाम यही होता है कि दोनो ही तरफ एक आकर्षण वढना है और छिप-छिपकर मिलते हैं ।

इस प्रकार इस योजना मे जहा अनेक लाभ हैं, वहाँ इसमे अनेक दोष भी होते हैं । अत इस देश मे यह योजना अभी प्रयोग रूप ही समझनी चाहिए । इसकी सफलता तभी सम्भव है, जव चारित्रिक दृष्टि से उन्नत और पवित्र वातावरण वन जाए । जव तक नैतिक स्तर उन्नत नही होता, तव तक सहशिक्षा की योजना को लागू करना देश के लिए शुभ न होगा । उच्च शिक्षा के लिए तो यह विलकुल ही अनुपयुक्त योजना है । अत ऐसे महान् प्रयोग सावधानी के साथ करना ही श्रेयस्कर होगा ।



वैज्ञानिक शिक्षा

समय के परिवर्तन के साथ विचार भी वदल जाते हैं । विचारो के अनुसार ही शिक्षा-पद्धति का रूप वदलता है । आज हमारे समाज मे सवमे अधिक वल वैज्ञानिक शिक्षा की ओर दिया जा रहा है । उसका कारण यह है कि यह युग विज्ञान का कहा जाता है । एक युग था कि मनुष्य आध्यात्मिक शिक्षा को महत्त्व देता था । धीरे-धीरे वैज्ञानिक आविष्कारो ने मनुष्य की वौद्धिकता को वढाया । जैसे-जैसे मनुष्य की आवश्यकताएँ वढी वैसे-वैसे आविष्कार हुए । यह विज्ञान का मवमे अधिक प्रभावशाली गुण रहा कि उसने जीवन मे अपना अत्यधिक महत्त्वपूर्ण स्थान वना लिया है ।

प्राचीन सस्कृत ग्रन्थो के अनुसार तो विज्ञान एक विशेष प्रकार के ज्ञान के लिए प्रयुक्त होता था । परन्तु आजकल विज्ञान अत्यन्त व्यापक शब्द हो गया है । अग्रेजी मे साइन्स व हिंदी मे विज्ञान हो गया और अव यह विषय

के रूप मे स्वीकृत है। वैसे तो विज्ञान की अनेक शाखाए और उपशाखाएँ हैं परन्तु प्रधान रूप से रसायन शास्त्र (Chemistry) और भौतिक विज्ञान (Elementary Science) विज्ञान के अन्तर्गत आते हैं। इन दोनो वैज्ञानिक भेदो ने आश्चर्यजनक उन्नति की है। वैज्ञानिक शिक्षा के अन्तर्गत यही नहीं और भी ऐसे विषय हैं जो स्वतन्त्र रूप से विकसित हो रहे हैं।

वैज्ञानिक शिक्षा के अन्तर्गत सबसे अधिक उन्नति वनस्पति शास्त्र (Metal Science) प्राणिशास्त्र (Physiology) भूगर्भशास्त्र (Geology) आदि ने की है। प्राय प्रत्येक विश्वविद्यालय मे विज्ञान के सभी विषय वडी योग्यतापूर्वक पढाए जाते हैं। इन सब विज्ञानो का मूल भूत एक सिद्धांत है विकासवाद जिसे (Evolution) कहते हैं। डार्विन आदि विशेष व्यक्तियो ने इसे महत्व प्रदान किया है।

जहाँ तक वैज्ञानिक शिक्षा की उपयोगिता का प्रश्न है यह तो सत्य है कि इसने एक नवीन विचारधारा को जन्म दिया है और साथ ही सभी क्षेत्रो मे विज्ञान का अत्यधिक प्रभाव पडा है। मनुष्य के दैनिक जीवन मे जिन सुविधाओ को हम देख रहे है वे सभी इस वैज्ञानिक शिक्षा के परिणाम हैं। इसमे कोई सन्देह की बात नही कि इस शिक्षा से बुद्धि का विकास हुआ है। परन्तु हमारे सामने यह प्रश्न है कि शिक्षा का वास्तविक उपयोग क्या है? यदि हम केवल भौतिक सुविधाओ को लक्ष्य मे रखकर शिक्षा देते हैं तो ठीक नही है। वैज्ञानिक शिक्षा का न केवल हमारे देश मे अपितु विदेशो मे भी विकसित रूप देखने मे आ रहा है। जिसका परिणाम यह है कि आज चन्द्रलोक की यात्रा के प्रवन्ध किये जा रहे हैं।

वैज्ञानिक शिक्षा सरलता की ओर भी मनुष्य को प्रेरित कर रही है। अध्ययन के क्षेत्र मे वैज्ञानिक पद्धतियो द्वारा अनेक सरल उपायो की खोज हो रही है। मनोविज्ञान ने इस दृष्टि से जाने कितनी असुविधाओ को दूर कर दिया है यह सत्य भी है कि शिक्षा मनोवैज्ञानिक ढग से न होने के कारण व्यक्ति की स्वाभाविक प्रतिभा को प्रकाश नही मिलता। प्राय माता-पिता समय की

प्रकार को ध्यान मे रखकर वालक की मौलिक (Basic) प्रवृत्तियो को बिना समझे शिक्षा दिलाते है। इस प्रकार के प्रयत्न शुभ परिणाम प्रदान नही करते। ऐसे छात्रो की प्रतिभा कुण्ठित हो जाती है।

एक युग था कि शिक्षा प्राप्त करने के लिए साधना और मानसिक परिश्रम करना पडता था। आज हम देखते हैं कि छात्र को अनेक विषय पढने पडते हैं और सभी विपयो का वैज्ञानिक शिक्षण होता है। यह तो अच्छा ही है कि छात्र अधिक से अधिक विषयो का ज्ञान प्राप्त करें परन्तु कुछ विषय तो इस प्रकार अनिवार्य हैं और कुछ अनिवार्य होने चाहिएँ जिससे कि छात्र अपने देश की सास्कृतिक और धार्मिक परिस्थिति को पूरा जाने। वैज्ञानिक शिक्षा का अर्थ सकुचित नही होना चाहिए।

वैज्ञानिक शिक्षा को दृष्टि मे रखते हुए वेसिक शिक्षा और प्राइमरी शिक्षा के क्षेत्र मे विशेष उन्नति हुई है। वालको के वौद्धिक विकास के लिए नये यत्र, पुस्तकें और ऐसे खेल जिनसे बुद्धि पर वल पडे तथा उसका विकास हो आदि का दिनोदिन प्रचार हो रहा है। परन्तु आवश्यकता यही समाप्त नही हो जाती। जैसा कि ऊपर कहा गया है कि वैज्ञानिक शिक्षा का अर्थ सकुचित रूप से ग्रहण नही करना चाहिए। अभिप्राय यह है कि शिक्षा का ढग एकागी नही होना चाहिए। कर्त्तव्य यह है कि जिससे छात्र का आध्यात्मिक विकास भी हो। इससे लाभ यह होगा कि विज्ञान का विकास मानवता की उन्नति मे सहयोगी सिद्ध होगा।

विज्ञान निरन्तर प्रगतिशील है। इस प्रगति के साथ-साथ विज्ञान का क्षेत्र अत्यन्त व्यापक होता जा रहा है। अभी विज्ञान ने धर्म के क्षेत्र का स्पर्श नही किया है। आज के वैज्ञानिक ईश्वर की विद्यमानता मे कोई विशेष रुचि नही रखते। परन्तु आज हम जिस स्थिति से निकल रहे हैं उसमे मनुष्य का आत्मा के गुण और सौन्दर्य के प्रति विश्वास तथा जिज्ञासा का भाव आवश्यक है। यह तो सभी मानते है कि व्यक्ति मे वह ईमानदारी, व फादारी और जिम्मेदारी

नही मिलती जो इस समाज के लिए अत्यन्त आवश्यक है। इन मनोविकारो का उत्तरदायित्व किस पर है ? इस प्रश्न का समाधान शिक्षा और विशेष रूप से वैज्ञानिक शिक्षा मे छिपा है। आवश्यकता है उस शिक्षा की जो मनुष्य मे प्रारम्भ से मानवता के प्रति विश्वास उत्पन्न कर दे।

वैज्ञानिक शिक्षा के परिणाम से सारा ससार चमत्कृत है विज्ञान के वढते हुए चरण विनाश के पथ पर न वढें यह एक सामूहिक प्रयत्न का विषय है। प्राय ससार के आधुनिक महापुरुष विश्व-शाति मे विज्ञान के सत्य-सहयोग की माँग कर रहे हैं। यह भी अटल सत्य है कि मानव को एक दिन हृदय की प्यास को बुझाना होगा। शताब्दियो के मनन-चिंतन का परिणाम दर्शन है। दर्शन सर्वथा निर्मूल हो जाय यह असम्भव है। यह एक स्वाभाविक सत्य है कि मनुष्य एक अग के विकास मे सलग्न रहकर दूसरे आवश्यक अग की उपेक्षा अधिक दिन तक नही कर सकता।

साराश यह है कि वैज्ञानिक शिक्षा का विकास तो आवश्यक है परन्तु इसकी दिशा सही रूप मे आत्मा के सत्य की खोज हो। देश जाति की उन्नति के लिए शिक्षा और विशेषतया वैज्ञानिक शिक्षा अनिवार्य है। वैज्ञानिक शिक्षा का सही विकास तभी माना जायेगा जवकि छात्र का मनोवैज्ञानिक अध्ययन सर्वांगीण होगा। छात्रो की रुचि अध्ययन की ओर वढे। विषयो मे सरलता के साथ-साथ कलात्मक आकर्षण भी हो। वैज्ञानिक शिक्षा का सवसे वडा ध्येय जीवन की रक्षा है। आज मैकाले के वे शब्द कि "मेरा उद्देश्य शिक्षा से केवल यही है कि भारत मे अधिक से अधिक क्लर्क पैदा हो" अव सर्वथा सारहीन हो गए हैं। छात्रो का दृष्टिकोण व्यापक होना चाहिए। इसके लिए वैज्ञानिक शिक्षा का सवसे पहला पाठ सिखाता है कि व्यक्ति मे प्रारम्भ से महत्वाकाक्षा जगनी चाहिए। मानव स्वावलम्वन (Self dependence) का महत्व समझे। यदि वैज्ञानिक शिक्षा का सही अर्थ लिया जायेगा तो निश्चय ही वेकारी का भयकर राक्षस मनुष्य की प्रतिभा को निगल नही सकता। चरित्र निर्माण, सम्यता और सस्कृति के प्रति प्रेम भावना इस वैज्ञानिक शिक्षा का

मुख्य उद्देश्य होना चाहिए। मानसिक, शारीरिक और आत्मिक शक्तियो के विकास की आवश्यकता है। शिक्षा का वैज्ञानिक ढग समय और परिस्थितियो के आधार पर स्त्री और पुरुषो को समान रूप से मिलना चाहिए। दस्तकारी, व्यायाम आदि का होना भी आवश्यक है। इस प्रकार वैज्ञानिक शिक्षा का प्रसार मानव मात्र को मानवता का पवित्र पाठ पढायेगा और विश्व एक नवीन प्रभात मे स्वप्न साकार कर सकेगा ।



विद्युत और उसका प्रयोग

इस नानारूपवाली प्रकृति मे मनुष्य के लिए क्या कुछ नही छिपा पडा है। यह मनुष्य की अपनी बुद्धि पर निर्भर है कि वह उसका किस प्रकार उपयोग करे। चाहे वह उसका सदुपयोग करे अथवा दुरुपयोग। कहा गया है कि सागर के हृदय मे भी ज्वालामुखी धधकता है। सुना ही गया था, देखा पहले किसी ने भी नही था। धीरे-धीरे मनुष्य की बुद्धि धुए की खोज मे निकल पडी। आज हम जिसे विद्युत् अर्थात् बिजली कहते हैं वह उसी धुएँ की जननी आग है। जो सागर के हृदय मे जलती है।

विज्ञान के पहले भारतीय दर्शन मे नौ द्रव्य माने गए हैं जिनमे अग्नि को भी एक द्रव्य के रूप मे स्वीकार किया गया है। यही वह तत्त्व है जिससे हम गर्माहट और प्रकाश प्राप्त करते है। आज विज्ञान के रूप को चमक इसी विद्युत् (बिजली) ने दी है। विद्युत् का आविष्कार देखकर आज यह कल्पना सरलता से की जा सकती है कि एक दिन ऐसा भी आयेगा जबकि मनुष्य इस सपूर्ण अधकार पर विजय पा लेगा। उस समय रात का नाम ही सभव न रहेगा। कुछ नही कह सकते भविष्य के अनदेखे सपनो के बारे में।

वास्तव मे विज्ञान ने भौतिक सुविधाओ की दृष्टि से मानव का बडा उपकार किया है। क्या वह युग होगा कि जब ज्योति अधकार की दासी थी। हवा का झोका हत्यारा होता होगा और धूल कफन बन उसे ढक लेती होगी। मनुष्य ने अन्धकार को हराया है। आँधी और तूफान अब कुछ नही बिगाड सकते। चाँद को बादल ढक लेते हैं पर विद्युत् चमकती रहती है।

नगर की जगमगाहट मे बिजली अग-प्रत्यगो का सौन्दर्य किसी भी मन को विना ललचाए नही रहता। किसी भी धार्मिक त्योहार, राष्ट्रीय पर्व, नेताओ के जन्म दिवस या विशेष भाषणो के अवसर पर बिजली का इन्द्रधनुषी सौन्दर्य का रस पान किया जा सकता है। बिजली का प्रयोग सारे विज्ञान मे शरीर और प्राण की तरह है। बिजली निकाल लेने पर विज्ञान का भवन ढह जाएगा।

इस प्रकार सबसे अधिक लाभदायक प्रयोग बिजली का प्रकाश के रूप मे हुआ है। यह प्रकाश भी मनुष्य ने बाँध लिया है। उसने इच्छा के अनुसार प्रकाश की सीमा करली है। जब जहाँ जितना जी चाहे प्रकाश ले सकते हैं। दैनिक जीवन मे सिनेमा मे तो सबसे अधिक प्रकाश की शक्ति का सौन्दर्यपूर्ण दर्शन हो सकता है। नाटको मे प्रकाश के माध्यम से भावो के अनुकूल प्रकाश का उपभोग किया जाता है। इस प्रकार हम देखते हैं कि प्रकाश जीवन के लिए कितना आवश्यक है।

जिन वस्त्रो को पहनकर हम सुन्दरता की पूजा करते है वह जिन मिलो से आते है वह सब विजली की कृपा से। विजली द्वारा चलाई गई मशीनो से मनुष्य मात्र के लिए वस्त्रो का निर्माण होता है। इस दृष्टि से कलात्मक नवीनता भी विजली द्वारा प्रदान की गई है। जरा सोचें कि विजली ने हमारे जीवन की सुरक्षा के लिए क्या रूप नही रखे।

प्रात काल की प्रसन्नता के साथ आँख खुलते ही हमारे कानो मे रेडियो से वन्दना की सगीतमय ध्वनि जैसे जीवन की प्रत्येक श्वांस को सगीतमय बना देती है। आकाशवाणी की सहेली विजली पृथ्वी पर भी वाणी का सौंदर्य

बढ़ा रही है । बिजली के द्वारा आविष्कार किया हुआ यह यत्र मनुष्य को एक अजीब आश्चर्य मे डाल देता है । हमे आश्चर्य होता है कि सजय ने धृतराष्ट्र को सारे महाभारत के युद्ध का आँखो देखा हाल कैसे कहा, इसी तरह सुनाया होगा । यह विश्वास अभी-अभी आकाशवाणी, दिल्ली द्वारा उद्घाटित टेलिवीजन ने और भी दृढ कर दिया । इस आविष्कार ने मनुष्य की जिज्ञासा की प्यास के साथ आँखो की त्यास भी बुझा दी । हम अपने प्रिय कलाकार, साहित्यकार नेता आदि सभी को देख सकते हैं । यह आविष्कार सिनेमा के आविष्कार से दो चरण आगे है ।

देखने और सुनने के अतिरिक्त एक प्यास और थी कि मनुष्य अपने सुख की बात कैसे कहे । टेलीफोन के द्वारा हम अपनी यह इच्छा भी पूरी कर सकते हैं । टेलीफोन के क्षेत्र मे बिजली ने बडी उदारता का वर्ताव किया है । हम यहाँ बैठे हजारो मील दूर के व्यक्ति से बातचीत कर सकते हैं । अब हम अपना सन्देश कौआ, कबूतर और हस के द्वारा भेजने की आवश्यकता अनुभव नही करते ।

जीवन का कोई ऐसा क्षेत्र नही है जिसमे बिजली का महत्त्वपूर्ण उपयोग न होता हो । प्रकाश के अतिरिक्त बिजली के प्रताप द्वारा भी मानवीय जीवन को अनगिन सुविधाएँ प्राप्त है । समय और असमय बिजली मनुष्य की इच्छाओ को पूरा करती है । हीटर, प्रैस आदि विज्ञान द्वारा आविष्कार की गई वस्तुएँ हमारे भोजन और वस्त्र आदि के सुन्दर उपयोग मे अत्यन्त ही सहायक सिद्ध हुई है ।

साराश यह है कि ऊपर बिजली के द्वारा प्राप्त होने वाली जो सुविधाएँ गिनाई गई है वे अभी थोडी है । बहुत से जाने अनजाने ऐसे क्षेत्र है जहाँ बिजली का कोई भी महत्वपूर्ण उपयोग होता है । बिजली का यहाँ तक महत्व बढ गया है कि मृत्यु के समय भी उसका सहयोग प्राप्त होने का विचार है । सुना जाता है कि श्मशान मे लकडी से नही, बिजली से मनुष्य का शरीर जलाया जाएगा । यद्यपि गहराई से सोचने पर यह बात विचित्र प्रतीत होती

है परन्तु है काम की। इस दृष्टि से मनुष्य को आर्थिक बचत भी होगी। मृत्यु के समय भी तो अर्थ का महत्व हो गया है। इसको भी साधन द्वारा पूरा किया जा रहा है।

अभिप्राय यह है कि बिजली हमारे जीवन की ऐसी साथिन हो गई है कि हमारे आन्तरिक और बाह्य दोनो के विकास के लिए किए गए प्रयत्नो में हमारी सहायता करती है। समय की बचत, धन की बचत, और शक्ति की बचत से हमारे जीवन को पुष्ट बनाने के प्रयत्नो मे हमारी सहायता करती है। इसके उपयोग मे मनुष्य को ध्यान रखना चाहिए, क्योकि इसके एक हाथ मे अमृत है तो दूसरे मे विष भी है। यह जीवन दे सकती है और मृत्यु भी।



मानव की अंतरिक्ष यात्रा

आजकल विज्ञान ने चारो ओर धूम मचादी है। मनुष्य अब प्रत्येक रहस्य जनना चाहता है। सूर्य, चन्द्रमा आदि ग्रहो और उपग्रहो तक पहुँचने का प्रयत्न हो रहा है।

अतरिक्ष यात्रा के लिये सबसे अधिक महत्वपूर्ण वस्तु राकेट है। सैकडों वर्ष पूर्व रॉकेट केवल अतिशबाजी की वस्तु थी। प्रथम विश्व युद्ध के समय अमेरिकन युवक एच० गोहार्ड ने रॉकेट का अध्ययन किया अन्य वैज्ञानिकों का भी इस ओर ध्यान गया। उसके बाद बडे और तीव्र गति वाले रॉकेट बनने लगे। आक्रमण मे भी वे अधिक ऊचाई तक जाने लगे। वैज्ञानिको और विचारको ने यह सोचा कि इनकी सहायता से मनुष्य आकाश की यात्रा कर सकता है, वह चाँद तथा अन्य ग्रहो तक पहुँच सकता है।

द्वितीय महायुद्ध समाप्त होने पर चन्द्रमा की यात्रा करने के विचार ने फिर जोर पकडा। रॉकेट पर खोज का कार्य तीव्रगति से होने लगा।

पृथ्वी हर वस्तु को अपनी ओर खीचती है। इसकी आकर्षण शक्ति को गुरुत्वाकर्षण शक्ति कहते हैं। यदि यह शक्ति न हो तो पृथ्वी पर जीना दूभर हो जाये। हम सीधे खडे न रह सकें, जो वस्तु ऊपर को उछाल दें वह फिर लौटकर नीचे ही न आये। गुरुत्वाकर्षण शक्ति न हो तो सूर्य, चन्द्रमा तथा अन्य ग्रह अपनी जगह पर टिके नही रह सकते।

परन्तु यही गुरुत्वाकर्षणशक्ति आकाश यात्रा मे वहुत वडी वाधा है। जो लोग पृथ्वी से दूर जाने की सोचते हैं उन्हे पृथ्वी की गुरुत्वाकर्षण शक्ति को नष्ट करना आवश्यक है। इसको नष्ट करने के लिए वस्तु को कम से कम २५,००० मील प्रति घण्टा की चाल से फैंकना होगा, जवकि शक्तिशाली वन्दूक से भी गोली की अधिकतम चाल १८०० मील प्रति घण्टा होती है। और केवल रॉकेटो द्वारा ही यह चाल प्राप्त की जा सकती है। किसी भी रॉकेटमे जव तक ईंधन जलता रहता है उसकी चाल वढती रहती है। परन्तु एक ही रॉकेट मे इतना ईंधन नही भरा जा सकता कि उससे २५,००० मील प्रति घण्टा की गति प्राप्त की जा सके। यदि रॉकेट के लगभग सारे ही शरीर मे ईंधन भरा जाय तभी वह १००० मील प्रति घन्टा की गति प्राप्त कर सकता है। इसके लिये उसके साथ एक अन्य रॉकेट जोड दिया जाता है। जब पहले रॉकेट का इधन समाप्त हो जाता है तो दूसरा छोटा रॉकेट गति देना आरम्भ करता है। इस प्रकार कई-कई मजिल के रॉकेट अधिकतम गति प्राप्त कर सकते हैं।

रॉकेटो की सहायता से अन्तरिक्ष यात्रा मे पहले वैज्ञानिक वहाँ के वातावरण की जानकारी प्राप्त कर लेना चाहते हैं। वायुमण्डल का घनत्व, ताप, आँधी तथा अल्टा वायलेट विकिरण और कास्मिक किरणो की तीव्रता आदि की जानकारी वडी आवश्यक है। ऐसी ही अनेक वातो की जानकारी प्राप्त करने के लिये वैज्ञानिक २०० मील ऊपर की परिधि पर घूमने वाले छोटे-छोटे उपग्रह या कृत्रिम चाँद वहाँ भेज रहे हैं। इनमे वैज्ञानिक यन्त्र तथा रेडियो उपकरण होते हैं। जो वहाँ की अवस्थाओ के सम्वन्ध मे रेडियो सकेत भेजते रहते हैं। ये उपग्रह कुछ समय तक वहा चक्कर लगाते रहते हैं, फिर गिरकर वायु की रगड से जल जाते हैं, अथवा विनष्ट हो जाते हैं।

अब दिन पर दिन अन्तरिक्ष यात्रा मे नए प्रयोग हो रहे हैं। अब तक तो गागारिन, शैपर्ड, ग्लेन, कार्पेंटर, शीरा, मेजर कूपर और मेजर वेलेरी आदि पुरुष वर्ग ही अन्तरिक्ष की यात्रा करता रहा। परन्तु अब उस इतिहास मे एक महिला का भी नाम जुड गया है। इस ससार प्रसिद्ध महिला का नाम है वेलेन्तिना तेरेशकोवा।

यह साहसी महिला प्रारम्भ मे टायर बनाने वाले कारखाने मे आजीविका कमाती थी। फिर उसने ट्रैक्टर चलाए। इसी बीच इस महत्वाकाक्षिणी नारी ने १६५६ से इस प्रकार की उडान के लिए प्रशिक्षण लेना आरम्भ किया, पेराशूट से उतरने का अभ्यास किया। इसने यह जानना चाहा था कि पुरुष और नारी की शारीरिक रचना मे फर्क होने के कारण अन्तरिक्ष मे उस पर कितना और कैसा प्रभाव पडता है। इसके अपूर्व साहस के कारण १६ जून १९६३ को इसे चुना गया और प्रात काल वोस्तोक ६ नामक अन्तरिक्षयान से उडान की। इस महामानवी ने पृथ्वी के ४८ चक्कर लगाए।

अभी पिछले दिनो साहसी अन्तरिक्ष यात्री ने अन्तरिक्षयान से बाहर निकलकर अन्तरिक्ष मे तैरने का साहस किया है। उसने अन्तरिक्ष के अत्यन्त आकर्षक और विचित्र अनुभव प्रस्तुत किए हैं। वास्तव मे अब वह दिन दूर नही है कि मनुष्य प्रकृति के अन्तर्पट को खोलकर उसके सारे रहस्यो को जान लेगा और उससे आन्तरिक आनन्द का लाभ उठायेगा।



विज्ञान के बढ़ते चरण

विज्ञान के क्षेत्र मे दिनो दिन नई प्रगति हो रही है। जीवन का कोई क्षेत्र ऐसा नही है जहा नए अनुसधान या नई खोज न हो रही हो। उदाहरण के लिए कुछ आकर्षण इस प्रकार है —

लेसर

परमाणु-विज्ञान के आधार पर इस प्रकाश के क्षेत्र मे कुछ अकल्पनीय और चमत्कारी आविष्कार हुए हैं। 'लेसर' नामक यन्त्र ऐसी ही चमत्कारी वस्तु है। लेसर नामक के वैज्ञानिक की खोज से इसका सम्बन्ध और बैटरी वाले छोटे टार्च के आकार के इस यन्त्र के केन्द्र पर सूर्य की सतह से भी अधिक चमकदार, प्रकाश उत्पन्न होता है।

लेसर रेडियो-तरगो की लम्बाई तथा प्रकाश के बीच की खाई पर सेतु-निर्माण का काम किया है। इसके द्वारा सौरमण्डल के ग्रहो से ही नही अतरिक्ष के सुदूर छोरो पर स्थिति नक्षत्रो और निहारिकाओ नक्षत्र-पु जो) से आने वाली रेडियो-तरगो को भी ग्रहण किया जा सकता है। साथ-साथ इसके द्वारा हम पृथ्वी मे प्रकाश की किरणें इन दूरस्थ पिण्डो एव पु जो तक भेज सकते हैं। उनसे टकराकर वापस आने वाली रश्मियो से उनके सुस्पष्ट चित्र खीचे जा सकेंगे।

लेसर की सबसे बडी विशेषता यह है। इसके द्वारा रश्मि-पु ज को इस प्रकार अ तरिक्ष की गहराइयो मे भेजा जा सकता है कि वे आगे बढते हुए फैलती न जाँय। आमतौर पर प्रकाश रश्मियो का पथ आगे की ओर विस्तृत होता चलता है। साधारण प्रकाश, जो ढाई लाख मील दूर स्थित चन्द्रमा तक पहुँच ही नही सकता, यदि पहुँच भी जाय तो उसकी पट्टी २५ हजार मील चौडी होगी, जबकि लेसर की रोशनी फैलकर दस मील चौडी पट्टी बना पाएगी। ये अप्रसरणशील रश्मियाँ अपनी तीव्रता के कारण अत्यधिक ऊष्मा उत्पन्न करती हैं। सकरी पट्टी से प्रकाश को असीम दूरियो तक भेज सकने के कारण ही लेसर स्पष्ट और सूक्ष्म तसवीरें लेने मे सहायक होता है। अब आखिर सोचें तो सही कितना विस्मयकारी होगा करोडो मील दूर के ग्रह-नक्षत्रो के अज्ञात धरातल का साक्षात् चित्र।

लेसर के रश्मि-पथ के विस्तृत न होते जाने से रश्मियो के कपन की तीव्रता भी प्राय ज्यो-की त्यो बनी रहती है। चू कि प्रकाश का रग रश्मियो

के इस कपन पर ही निर्भर है, अत लेसर द्वारा फैंकी गई रोशनी दूरी तय करने पर भी रग नही वदलती। जवकि सामान्य प्रकाश रश्मियो के साथ ऐसा ही होता है। नियन मर्करी या सोडियम-स्रोतो से भी ऐसा ही 'एकरग' (मोनोमेट्रिक) प्रकाश नि सृता होता है। लेसर इन सवसे दस लाख गुना शुद्ध एक रग प्रकाश देता है।

लेसर का प्रकाश ऊष्मा उत्पन्न कर सकने के कारण पदार्थों को कीटाणु रहित कर सकता है। अत जीव-विज्ञान और चिकित्सा के क्षेत्रो मे भी इसके अनेक उपयोग सम्भव हैं। क्या आश्चर्य यदि लेसर और मेसर विज्ञान जगत मे एक नई क्रान्ति ला दें।

सूक्ष्म-दर्शक यत्र

जापान मे ट्रांजिस्टरो का जन्म हुआ। आज भी इनसे चालित सूक्ष्म रेडियो रिकार्डर एम्पलीफायर इत्यादि सव वही वनाये जाते हैं। और अव डाक्टरो को मानव शरीर के भीतर का 'आखो देखा हाल' वतलाने वाला एक ऐसा अद्भुत सूक्ष्म यन्त्र जापान मे ही निर्मित किया गया है। जिसका आकार 'सल्फा' की गोली के वरावर है।

रोगी गोली के आकार के इस यन्त्र को निगल लेता है। उसमे दवा न होकर एक ट्रांजिस्टर, कु डली तथा धारित्र रहते हैं जिनको वाहरी रेडियो द्वारा नियत्रित किया जाता है। फिर वाहरी रेडियो सकेतो द्वारा भीतरी का यन्त्र चालू कर दिया जाता है और वह लगभग एक दो वाट की शक्ति किलोसाइकिल के कपन पर वाहर खवरें भेजता है। इन खवरो मे तापमान का व्यौरा, अम्ल अथवा तेजाव की पेट मे दशा, रक्तचाप, तथा ऐसी ही अन्य सूचनाएँ होती हैं।

छोटी गोली के भीतर लगे यन्त्र डाक्टरो को रोग के कारणो का पक्का ज्ञान प्रदान करते हैं। वाद मे गोली अपने-आप शरीर से मल के द्वारा वाहर निकल जाती है। आवश्यकता पडने पर उसको विशेष विधियो द्वारा कई-कई सप्ताह तक भीतर वनाये रखा जा सकता है।

उपवन के लिए विज्ञान

दस वर्ष के भीतर ही हमारे आपके लिये यह सभव हो जायगा कि हम अपने घरो के बगीचो मे सुन्दर मखमली घास के लॉन एक ऐसे नये सरल तरीके से लगा सकें जिससे उसे बार-बार मशीन से कटवाने का झन्झट न रहे। इसका श्रेय गिबुरेलीन नामक हार्मोन को प्राप्त होगा। हार्मोन व नस्पतियो तथा जीवो के उत्पादन तथा प्रजनन पर विशेष प्रभाव डालने वाले तत्व है। आजकल इन हार्मोनो को प्रयोगशाला मे कृत्रिम रूपसे निर्मित कर उनके जरिये अगो की वृद्धि सम्बन्धी रोक-थाम भी प्रचलित हो चुकी है।

घास के डठलो का बढना उसके भीतर निर्मित होने वाले हार्मोन गुबुरेलीन पर ही निर्भर है। इधर इसके असर को दूर करने वाले एक ऐसे हार्मोन को भी ढूढ निकाला गया है, जिसके द्वारा पेडो के तने का बढना भी रोका जा सकता है। घास को काटना-छाँटना न पडेगा। फलो के वृक्षो को छोटा रख कर ही फल प्राप्त किया जा सकेगा। अत एक ही भूखण्ड पर अधिक सख्या मे वृक्ष लगाये जा सकेंगे तथा नवीन नस्लो को जन्म दिया जा सकेगा।

यह हार्मोन वृक्ष के तने के कोषो की वृद्धि मे सहायक होता है। यह सूर्य के प्रकाश के असर को भीतरी कोषो तक पहुचाने से रोकता है। सूर्य का असर इस प्रकार कम होने पर कोष कडे नही पडते और बढ सकते हैं, जबकि सूर्य का प्रकाश पडने पर ये कडे पड जाते है और इनकी बाढ रुक जाती है।

वाध

मिस्र का आस्वान वाँध तो स्वय इन्जीनियरी का एक महान चमत्कार है ही, इसने एक अन्य अद्वितीय चमत्कार को भी जन्म दिए जाने की भूमिका तैयार कर दी है। इस वाध से पानी को रोक कर जो विशाल सागर निर्मित होगा, उसमे उसी स्थान के मिस्र के तमाम पुरातन सांस्कृतिक भग्नावशेप— पुरानी इमारतें, मन्दिर, फैरो राम्जेस की विराट आकृतियां आदि जल-मग्न हो जाएँगी। इतिहास के इन अवशेपो को जल समाधि से वचाने के लिए

अनेक सुझाव प्राप्त हुए किन्तु मिस्र-सरकार ने ४० करोड रुपये की एक योजना स्वीकृत की ।

उक्त योजना के अनुसार फैरो के पूरे के पूरे मन्दिर को नीव तथा चट्टानो सहित कांक्रीट के एक ७३४ फुट लम्बे और १४५ फुट चौडे बक्स में वन्द कर दिया जायगा, और फिर उस सम्पूर्ण बक्स को मोटर उठाने मे काम आने वाले जैको के सिद्धान्त पर बने २०जैको की १४ पक्तियो द्वारा २०३ फुट ऊँचा उठाया जायगा और पर्वत के ऊपर स्थापित कर दिया जायगा। इस सारी योजना द्वारा ८० लाख मन का वजन उठाया जायगा—इतना गुरुभार जितना कि आज तक किसी मानवीय प्रयत्न द्वारा कभी उठाया नही जा सका है। यह योजना दो वर्ष मे पूरी होगी। इसके पूरे होने के राम्जेस की मूर्ति मदिर के वाहर आस्वान वाघ पर वैसी ही वैठी दिखेगी, जैसी वह आज नील नदी पर दृष्टि डालती हुई दिखती है ।

यह कार्य जितना कठिन है, उससे अधिक भयकर है। चट्टानें अनेक स्थानो पर कमजोर हो गई हैं और उनमे दरारे भी पड गई हैं। इन्ही पर मूर्तियो और मन्दिरो का भार है। अत इन्हे पहले सुरगें और तहखाने वनाकर सुदृढ वनाना आवश्यक होगा जैक एक वार मे सारी चट्टान को एक इन्च का दशमांश ऊपर उठायेंगे तथा हर एक फुट के वाद उसके नीचे कांक्रीट के खभे वनाए जाते रहेगे ।



राष्ट्रीय चरित्र

चरित्र शब्द अत्यन्त व्यापक है। जव हम चरित्र शब्द का प्रयोग करते है तो हमारे मस्तिष्क मे समस्त मानवीय गुणो का समूह चक्कर लगाने लगता है। चरित्र के आधार पर ही मनुष्य का मूल्य का आंका जाता है। चरित्र ही है

जो इस विचित्र ससार मे अपना महत्व स्थापित करता है। मनुष्य के चरित्र से ही समाज और राष्ट्र का निर्माण होता है। राष्ट्र निर्माण से ही विश्व मे सभव स्थान प्राप्त कर सकता है। यदि यह चरित्र न हो तो मनुष्य और पशु मे अन्तर ही क्या है। साधारण जीवन के दैनिक कृत्यो के रूप मे चरित्र स्पष्ट होता है। इसी चरित्र का प्रभाव व्यक्ति, परिवार, समाज, और राष्ट्र मे व्यापक होकर प्रभाव डालता है। इसकी परिणति विश्व मे हो जाती है।

महान् आत्माओ ने जीवन को सरल, सुखी और उच्च बनाने के लिए ही ऐसे नियमो की खोज तथा निर्माण किया है। इन नियमो के पालन से मनुष्य अपने उद्देश्य मे सफल होता है। हमारा प्राचीन इतिहास इन्ही नियम पालको और चरित्रवान् महामानवो की सुकर्म कथाओ से कृत-कृत्य हुए हैं और पुराणो मे इन्ही की पुण्य गाथाए सुरक्षित हैं।

यो हम अनेक व्यक्तियो को देखते है जो भौतिक दृष्टि से व्यक्तिगत जीवन को सुखी बनाने के लिए अनेक पाप, पुण्य मे जैसे चोरी, हत्या, कालाबाजारी, आयकर न देना आदि करते हैं। इन कर्मो से कमाया हुआ धन जिसे हम काला धन (Black money) कहते हैं उसके उपयोग से बना रक्त ईमानदार, वफादार और जिम्मेदार नही हो सकता वैसे कहने के लिए व्यक्ति अपने व्यक्तिगत चरित्र के लिए उत्तरदायी होता है, परन्तु व्यक्तियो के समूह से समाज और समाज से राष्ट्र निर्माण होता है। अत व्यक्ति के जीवन मे राष्ट्र का जीवन समाहित है। व्यक्ति की चारित्रिक उन्नति मे राष्ट्र की उन्नति सन्निहित है। आचरण की उज्ज्वलता को ही सच्चरित्रता कहते हैं। राष्ट्र की उन्नति, गौरव और महत्व इसी सच्चरित्रता मे सुरक्षित है। जैसे दुश्चरित्र व्यक्ति का समाज मे स्थान नही होता वैसे ही चरित्र भ्रष्ट राष्ट्र का विश्व मे कोई स्थान नही होता। उसमे सभ्यता के दर्शन नही होते। उसे मान, आदर, यश और सुख प्राप्त नही होते।

चरित्र के दो रूप हैं—पहला शरीर का सयम, दूसरा व्यवहार। सयमी। मनुष्य सीमा तक शरीर की आवश्यकता को पूरा करता है। ऐसे मनुष्य

स्वस्थ रहकर शारीरिक सुख प्राप्त करते हैं। अपनी पत्नी के प्रति प्रेम अनुराग होना अन्य नारीमात्र के प्रति माता बहिन की दृष्टि रखना चरित्र का महान् गुण है। इस चरित्र का व्यक्ति, समाज, राष्ट्र के स्वास्थ्य पर अत्यधिक प्रभाव पडता है। स्वस्थ मस्तिष्क मे ही अच्छे विचार जन्म लेते हैं। दुश्चरित्र व्यक्ति कभी अच्छे विचारो को आदर नही देता।

चरित्र का दूसरा रूप व्यवहार है। इसी व्यवहार का राष्ट्रीय चरित्र के साथ गहरा सम्बन्ध है। स्वतन्त्र राष्ट्र मे इस राष्ट्रीय चरित्र का अत्यन्त महत्व है। स्वतन्त्र तथा प्रजातन्त्र राष्ट्र का चरित्र ही उसे उन्नत बना सकता है। राष्ट्रीय चरित्र का सबसे बडा गुण यह है कि इसमे व्यक्ति यह अनुभव करता है कि उसका प्रत्येक व्यवहार, प्रत्येक कर्म उसके राष्ट्र का व्यवहार और कर्म है। उसमे उसका अपना कुछ भी नही है। व्यक्ति स्वय राजा है स्वय प्रजा है। जैसा राजा वैसी प्रजा कहावत भी इसी चरित्र मे चरितार्थ होती है।

हम अपने व्यवहारिक जीवन मे देखते हैं कि परिवार का बडा जब गम्भीर, त्यागी, न्यायप्रिय और अनुशासित होता है तो परिवार के सभी सदस्य उसी प्रकार चलते हैं। आज हमारा भारत स्वतन्त्र है। स्वतन्त्र एव प्रजातन्त्र राष्ट्र के हम नागरिक हैं तो हमारा चरित्र राष्ट्रीयता के सच्चे अर्थो मे प्रकट होना चाहिए।

राष्ट्रीय चरित्र का सबसे पहला गुण है विधान का पालन। यदि हमे कोई वस्तु पक्तिबद्ध होकर मिलती है तो हम किसी अनुचित प्रकार से वस्तु लेने की चेष्टा न करें। हमे जो वस्तु जितने दामो मे मिलने का विधान है हमारा राष्ट्रीय चरित्र सिखाता है कि उसे प्राप्त करने के लिए सम्बन्धित अधिकारी को लालच न दें। क्योकि जितनी मात्रा मे हमारे लिए वह वस्तु निश्चित है उससे अधिक लेने का अर्थ है कि किसी दूसरे सज्जन का भाग लेना। आर्थिक अथवा किसी अन्य विवशतावश वह हमारी तरह अधिक वस्तु प्राप्त करने मे समर्थ नहीं

है तो इसका यह अभिप्राय नही कि हम उसकी विवशता से लाभ उठाए । राष्ट्रीय चरित्र की गिरावट के कारण ही रिश्वतखोरी पनपती है ।

यदि कोई यात्री बिना टिकट यात्रा करता है और सोचता है कि उस अकेले से क्या अन्तर पडता है तो यह अनुचित है । न जाने ऐसे कितने 'अकेले' लोग राष्ट्रीय आय को हानि पहुँचाते हैं । वह आय जो समूचे राष्ट्र की आवश्यकताओ को पूरा करती है ऐसे लोग उस आय के प्रति गद्दारी करते है । जो लोग अनेक अनुचित साधनो से धन कमाते है और उस आय पर निश्चित कर नही देते, उस कर नियम से बचने के लिए अनेक अनुचित उपाय अपनाते हैं वे राष्ट्रीय चरित्र की दृष्टि से कितने हीन हैं ? यह राष्ट्रीय चरित्र के महत्व को समझने वाले ही जान सकते हैं ।

राष्ट्रीय चरित्र का सम्बन्ध छोटी से छोटी और बडी से बडी वस्तु और आचरण से है । उदाहरण के लिए कोकाकोला २५ पैसे मे मिलता है परन्तु गर्मियो मे कभी-कभी न होने पर दुकानदार ३५ पैसे मे बेचते हैं यह राष्ट्रीय चरित्र के विरुद्ध है । जैसे वर्षा मे, या रात्रि मे सवारी का दाम बढ जाना, बस मे बिना टिकट लिए यात्रा करना, जनता को धोखा देना, किसी मजबूरी से लाभ उठाना आदि राष्ट्रीय चरित्र के विरुद्ध हैं । इसमे दोनो ओर से राष्ट्रीय चरित्र का पालन होना चाहिए । किसी चल-चित्र पर अधिक भीड हुई कि राष्ट्रीय चरित्र तो खतम हुआ । ऐसे अनेक उदाहरण स्वतन्त्र राष्ट्र मे पाए जाते हैं । जिससे राष्ट्रीय चरित्र का ह्रास हुआ है । आवश्यकता इस बात की है कि हम अपने राष्ट्रीय चरित्र मे सुधार करें ।

यह सत्य है कि हजारो वर्षो की परतन्त्रता का अभिशाप इतनी शीघ्रता से समाप्त नही हो सकता, परन्तु राष्ट्रीय चरित्र के जागरण के लिए सामाजिक और राजनीतिक स्तर पर महान् प्रयत्न और निरन्तर प्रयत्न करते रहना होगा । दिन पर दिन अत्याधुनिकता के नाम पर हमारा युवक सम्प्रदाय जिस फैशन परस्ती की ओर बढ रहा है—इसमे जागरूक रहकर हृदय परिवर्तन करना होगा । आज अनेक पश्चिमी देश भी इस परम्परा मे तग आ गए हैं ।

यह अनुकरण की पद्धति राष्ट्रीय चरित्र के विरुद्ध है। हमे स्वाभिमान, भारतीय संस्कृति, सभ्यता और गौरव को यह पहचानना होगा। हम दूसरे की वस्तु के प्रति लालायित क्यो रहे? जब हमारा राष्ट्रीय चरित्र ऊँचा होगा तो हमारा अन्तर्राष्ट्रीय चरित्र इतिहास मे स्थान प्राप्त करेगा। भारतवर्ष फिर से उसी गौरवशाली परम्परा का अग्रदूत बनकर भटके हुए जनमानस को सत्य शिवम् और सुन्दरम् का विश्वव्यापी सन्देश दे सकने मे समर्थ होगा। जो नई पीढी आ रही है उसी के कन्धो पर यह भार है। नई पीढी जिस स्फूर्ति के साथ और उत्तरदायित्व के साथ इस महान् राष्ट्र की रचना के स्वप्न देख रही है उसी का इतिहास लिखने के लिए समय की कलम तैयार बैठी है।



भूकम्प का प्रकोप

भूकम्प, भूडोल, भूचाल या जलजला जमीन के हिलने के नाम है। पौराणिक कथा प्रसगो के अनुसार यह विश्वास किया जाता है कि पृथ्वी बैल के सीग पर अथवा शेषनाग के फन पर स्थित है। जब वह सीग या फन बदलता है तो जमीन हिलने लगती है। परन्तु भूगर्भ-शास्त्रियो तथा वैज्ञानिको का मत इससे बिल्कुल भिन्न और मस्तिष्क की खोज पर निर्भर है। भूचाल पहाडो के घटने-बढने के कारण आता है। प्रत्येक भूचाल के पश्चात् किसी भी पहाड की ऊँचाई या तो बढ जाती है अथवा घट जाती है। ज्वालामुखी विस्फोटन के कारण भी बहुत भयानक भूकम्प आता है इसकी व्यापकता इतनी है कि शायद ही पृथ्वी का कोई ऐसा कोना हो जहाँ भूकम्प के झटके अनुभव न किए जाते हो। भूकम्प का कारण यह भी माना गया है कि वर्षा का अत्यधिक पानी पृथ्वी की किसी दरार मे होकर पृथ्वी के गर्भ मे समाता रहता

है और नीचे पृथ्वी की गर्मी से उसकी भाप बनती जाती है। जब भाप वाहर निकलने के लिए राह ढूंढती है और पृथ्वी के गर्भ मे जगह-जगह कमजोर धरातल की खोज मे इधर-उधर वढी गति के साथ जाती है और पृथ्वी के अन्य पदार्थों को पिघला कर अपने साथ मिला लेती है और जहाँ धरातल कमजोर होता है भाप वहाँ जोर मारती है और जमीन को फाड डालती है जिसके कारण पृथ्वी हिल उठती है और झटका वहुत दूर-दूर तक अनुभव होता है। वह भाप अपने साथ लावा, आग, रेत, हवा, पत्थर और विविध प्रकार के पदार्थ लेकर निकला करती है और ज्वालामुखी पर्वत के रूप मे वह विस्फोट होता रहता है।

भारत के कागडा जिले मे सन् १९०५ मे ज्वालामुखी पर्वत का विस्फोट हुआ था जिसके कारण लगभग ४० हजार व्यक्ति मारे गये थे। इसके कुछ वर्ष वाद बिहार के कटक मे सहसा १९ जनवरी सन् १९३४ को दोपहर वाद २॥ वजे सारा उत्तरी भारत भूकम्प के झटको से हिल उठा अटक से कटक तक सारा धरातल काँप उठा। विहार के ६ जिले विल्कुल तवाह हो गये। नेपाल भी इस हानि से न वच सका। कितने ही स्थानो पर पृथ्वी मे वडी-वडी झीलें और दरारें पड गई। सैकडो एकड भूमि मे रेगिस्तान वन गया। हज़ारो घर गिर पडे। मुगेर और दरभगा मे अभूतपूर्व हानि हुई। कितनी ही जगह रेलो की पटरी पृथ्वी मे धस गई। इस भूकम्प से हिमालय की ऊचाई कई सौ फीट वढ गई। वीस सहस्त्र से भी अधिक व्यक्ति मुगेर और दरभगा शहरो मे पृथ्वी के गर्त मे समा गये। धन-जन हानि इतनी थी कि उसका अनुमान नही लग सकता।

देश अभी उस हानि से सतोष की सास भी न लेने पाया था कि डेढ वर्ष वाद २९ मई सन् १९३६ की रात को ३ वजे क्वेटा शहर भूचाल के कारण गर्क हो गया। ७० मील के घेरे मे एक भी मकान शेष न वचा। केवल दो वडे-वडे झटको से ही मकान ईंटो के ढेर हो गये और जो शेष वचे उनकी अवस्था अव गिरें-गिरे वाली थी। हजारो आदमी सोते-सोते दवकर मर गये।

यह बात पता लगी कि भूकम्प से एक दिन पहले शहर मे एक भी पक्षी नही रहा था। ससार मे शायद ही कभी पहले इतना विनाशकारी भूकम्प आया हो जैसा क्वेटा के भूचाल ने दृश्य उपस्थित किया था।

जापान भूकम्पो का देश है वहाँ तो नित्यप्रति भूचाल के झटके लगते ही रहते हैं क्योकि जापान ज्वालामुखी पर्वत श्रेणी शृखलाओ पर स्थित बताया जाता है। इसी कारण वहा पर मकान पत्थर, चूने, ईट इत्यादि के नही हैं। लकडी के सुन्दर और मजबूत मकान बनाकर जापान के लोग रहते है। ससार के सभी देशो मे समय-समय पर इसी प्रकार भूकम्प के धक्के होते रहते हैं। पाम्पेआई नगर के समीप ज्वालामुखी विस्फोट से समस्त नगर मीलो ऊची ज्वालामुखी लपेटो मे भस्मीभूत हो गया और भूकम्प के धक्को से नष्ट-भ्रष्ट हो गया। कुछ वर्ष पूर्व टर्की मे भूकम्प ने बडा भयकर दृश्य उपस्थित किया जिसमे कई सहस्त्र व्यक्ति दबकर मर गये। उत्तरी भारत के दिल्ली प्रान्त के आस-पास अक्टूबर मास सन् १९५६ मे एक मिनट से भी कम समय के हल्के परन्तु आतककारी झटको ने मनुष्यो के मुख से त्राहि-त्राहि और राम-राम शब्द निकलवा दिए। हजारो मकानो को क्षति पहुची और कई स्थानो पर अत्यधिक भीषणता अनुभव की गई। नई दिल्ली मे नवनिर्मित रिजर्व बैक के भवन मे दरारें पड गईं। जिससे लाखो रुपये द्वारा बनाए गए इस भवन की आयु अल्प हो गई।

घमड क्षण भर मे नष्ट हो जाता है। वह असहाय निर्बल और किम्कर्त्तव्य विमूढ हो जाता है। परमात्मा की वनाई सृष्टि मे भूकम्प एक दैविक आपत्ति के रूप मे प्रकट होते है। ईश्वर मे प्रार्थना है कि इस प्रकार के अतककारी कृत्यो से मानव की रक्षा करे



प्रदर्शनी

मानव की यह स्वाभाविक प्रवृत्ति है कि जिन चीजो का निर्माण करता है उन्हे दूसरो को दिखाता है। इस जिज्ञासा के कारण ही ससार मे दिन प्रतिदिन नये-नये आविष्कार और कला-कौशल के नमूनो की उत्पत्ति व प्रदर्शन होता रहता है। वर्तमान युग मे सुचारु व्यवस्था करके साधारण और विस्मयजनक वस्तुओ का प्रदर्शन ससार के सभी सभ्य देशो मे समय-समय पर होता रहता है। प्राचीन काल मे मेलो का रूप प्रदर्शिनी के लक्ष्य को पूरा करता था। वृहत् योजना वनाकर अन्तर्राष्ट्रीय महत्व की प्रदर्शिनियो का प्रचलन अव हुआ है। हमारे देश मे भी स्वतन्त्रता प्राप्ति के उपरान्त पिछले दस वर्षो मे कई ऐसी ही प्रदर्शनियाँ हुई है।

प्रदर्शनी का रूप सवमे पहले ग्यारहवी शताब्दी मे मिस्र मे प्रारम्भ हुआ और आधुनिक ढग की प्रथम प्रदर्शनी सन् १८५१ मे इगलैंड मे हुई। उसके पश्चात् यूरोपीय देशो मे प्रदर्शनी का सर्वाधिक प्रचार हुआ। भारत मे भी अग्रेजी राज्य के समय कई वहुत महत्त्वपूर्ण प्रदर्शनिया हुईं। सन् १९३९ मे नई दिल्ली मे एक रेलवे तथा औद्योगिक प्रदर्शनी हुई।

ससार की प्राचीन वस्तुओ का प्रदर्शन किसी भी देश के सग्रहालय मे स्थायी रूप से होता ही है। परन्तु नई आविष्कृत, उपयोगी और अलौकिक वस्तुओ की उपयोगिता और महत्त्व को वताने के लिये प्रदर्शनी के अतिरिक्त

अन्य कोई ढग नही है। देश की सरकार द्वारा नियोजित प्रदर्शनी देश के उद्योग-धन्धो की उन्नति मे अत्यन्त सहायक सिद्ध होती है।

भारतवर्ष मे हुई कुछ प्रदर्शनियो के विवरण से यह सिद्ध हो जायेगा कि व्यापार और व्यवसाय के लिए प्रदर्शनी बहुत महत्त्वपूर्ण प्रभाव रखती है। भारत सरकार की ओर से १९५६ मे एक वृहत् अन्तर्राष्ट्रीय प्रदर्शनी का आयोजन नई दिल्ली के प्रदर्शनी मैदान मे हुआ। ससार के सभी प्रमुख देशो के उद्योग सम्बन्धी कक्ष स्थापित किए गये। जिनमे छोटी-छोटी बारीक से बारीक चीज़ से लगाकर भारी से भारी वस्तुओ के निर्माण के प्रदर्शन की बहुत ही सुन्दर व्यवस्था की गई थी। अमेरिका के कक्ष मे अणुशक्ति के प्रयोग और उपयोग का बहुत ही सुन्दर प्रदर्शन था। रूस के कक्ष मे वहा की सभी प्रकार की उत्पादित वस्तुओ का प्रदर्शन तथा इस्पात की बनी बडी-बडी मशीनो के कार्य राकेट आदि बहुत ही आश्चर्यजनक थे। चीनी गणतन्त्र के कक्ष मे कला-कौशल के अलौकिक नमूनो का प्रदर्शन व निर्माण सराहनीय था। मिस्र ईराक, ईरान, टर्की, जर्मनी जापान, इगलैंड, पोलैंड, आस्ट्रेलिया, इटली, फ्रांस आदि सभी देशो ने उस औद्योगिक प्रदर्शनी मे भाग लिया। भारत ने भी उस प्रदर्शनी मे प्रथम पचवर्षीय योजना के अन्तर्गत हुए उत्पादन और उद्योगो के बारे मे सविस्तार परिचयात्मक प्रदर्शन किया। देश के कोने-कोने से असख्य लोगो का तांता उस प्रदर्शनी को देखने के लिए लगा रहता था। प्रदर्शनी का समय पहले लगभग एक मास के लिए ही था, परन्तु लाखो रुपया व्यय करके व्यवस्था की गई इस प्रदर्शनी के महत्त्व को सारे देश ने भली-भांति समझा और आग्रहपूर्वक अवधि बढवाई। इसी प्रकार भारतीय रेलवे ने शताब्दी मनाकर रेलवे के भारत मे प्रचलन से लेकर अब तक हुए अनेकानेक परिवर्तनो का प्रदर्शन किया, तथा भिन्न-भिन्न प्रकार की रेलगाडियो तथा इजनो आदि की बनावट व रूप का प्रदर्शन बहुत ज्ञानवर्धक सिद्ध हुआ। इसी प्रकार कला-कौशल प्रदर्शनी का आयोजन हुआ। खादी व ग्रामोद्योग प्रदर्शनी का उद्घाटन देश मे राष्ट्रपति के कर कमलो द्वारा हुआ।

इस प्रकार की प्रदर्शनियो का स्पष्ट और प्रत्यक्ष प्रभाव होता है। लोगो मे ज्ञान की वृद्धि होती है और अन्य देशो की अपने देश से तुलना करने मे एक निश्चित धारणा वनती है। अपनी आवश्यकता की वस्तुओ तथा मशीनो इत्यादि की पूर्ण जानकारी हो जाती है। केवल थोडे से पैसे खर्च करके मशीनो पर अन्यान्य वस्तुओ के परीक्षण देखकर अपना मत निर्धारित करके अपने व्यवहार तथा व्यवसाय की उन्नति के लिए खरीद की जा सकती है। वर्तमान औद्योगिक प्रदर्शनी मे आया हुआ माल और मशीनें सभी भारत मे खप गई। व्यापारियो न उन्हे खरीद लिया। व्यापारी तथा उद्योगपति भी प्रदर्शनियो मे भाग लेकर अपनी स्थिति को जान पाते हैं, तथा अपनी उन्नति और प्रगति के सम्वन्ध मे आधुनिकतम रीति से कार्य और व्यवस्था करके लाभ प्राप्त करते हैं।

भारतवर्ष ने जो प्रदर्शिनी का आयोजन किया उनमे देश की जनता को अत्यधिक लाभ हुआ और लोगो की जानकारी वढी। ससार मे भारत का स्थान कहाँ है इस प्रकार का निश्चय करने मे वहुत सहायता मिली। दूसरे देशो मे भारत को ससार का वहुत वडा व्यापारिक केन्द्र मानकर अपने-अपने देश के उद्योग व धन्धो के प्रभाव को जमाने का यत्न किया। चीन और रूस का नाम इस दृष्टि से विशेष महत्त्व रखता है। भारतीय जनता ने यह अनुभव किया कि चीन गणतन्त्र ने वहुत ही अल्प समय मे आश्चर्यजनक उन्नति की है। आशा है कि निकट भविष्य मे ससार के किसी अन्य देशो मे होने वाली प्रदर्शनी मे भारत भाग लेकर इसी प्रकार का भाव ससार के लोगो मे उत्पन्न करेगा।



भ्रष्टाचार या सदाचार

इससे सभी परिचित हैं कि आज सारा भारतवर्ष भ्रष्टाचार से पीडित है। इसके लिए सरकार के कुछ ईमानदार और जिम्मेदार व्यक्तियो ने सदाचार समिति की स्थापना की है और आचार सहित तैयार की पिछले दिनो राजधानी दिल्ली मे सदाचार समति ने एक प्रदर्शनी लगायी जो मामूली नुमइश की तरह नही। इसमे यह दिखाया कि वाजार से खाने-पीने की जो चीजें हम लेते हैं, वे प्राय शुद्ध नही होती। यह प्रदर्शनी जहाँ गृहणियो को वाजार मे सामान खरीदते समय सावधान रहने की चेतावनी देती है। वहा आम जनता या जिसमे मिलावटी चीजो को वेचने वाले दूकानदार भी शामिल हैं, उनका ध्यान भी आकर्षित करती है कि वे क्या कर रहे हैं। उनका यह काम कितना सामाज-विरोधी है ?

शुद्ध दूध प्राप्त करना असम्भव नही, तो कठिन अवश्य हो गया है। एक ही हालत मे यह मुमकिन है, जब घर मे गाय-भैंस रखी जाय। लेकिन बडे शहरो मे यह सम्भव नही है। गाँवो मे लोग पशु पालते हैं। पर वहाँ शुद्ध दूध के वजाय पाउडर बनाकर वेचना अधिक फायदामन्द समझते हैं। इसलिये शुद्ध दूध को आज सही अर्थों मे अमृत को सज्ञा दी जा सकती है। दूध सवा रुपया या डेढ रुपये किलो विक रहा है। इसलिये चाय का रिवाज और बढ गया है। चाय की पत्तियो मे पुरानी उवली हुई पत्तिया, पिसी हुई गुठलियाँ, वुरादा, तिनके चने एव दालो के छिलके और ऐसी वहुत-सी चीजें मिल सकती हैं जो ताजगी देने के वजाय वीमारी ही दे सकती हैं।

वाजार से जो गेहू का आटा आता है उसमे इमली के चीयो का आटा, जौ का आटा, खडिया मिट्टी का चूर्ण, पिसी हुई सूखी रोटी और इसके साथ सफेद मुलायम पत्थर का सफूफ मिला हुआ रहता है। वेसन मे मक्का और मटर का आटा तो मिला ही होता है, अगर किसी पीली लकडी का वारीक वुरादा मिला हुआ हो तो आश्चर्य नही होना चाहिये।

शुद्ध घी के नाम पर जो घी बाजार मे विकता है, उसका नाम भी शुद्ध की तरह अमृत रख दिया जाय तो ज्यादा मुनासिब होगा क्योकि दूध तो खोजबीन के बाद चाहे शुद्ध मिल भी जाय, किन्तु घी का मिलना टेढी खीर है आज जो शुद्ध घी के नाम पर विकता है उसमे वनस्पति तेल, चर्वी, महुआ, नारियल और मूगफली के तेल, उवली हुई शकरकन्दी और आलू भी मिले हुए रहते हैं। ताजा मक्खन के नाम से जो नवनीत बिकता है, उसमे मारगरीन, वनस्पति तेल, सस्ती चर्वी मिली हुई हो तो कोई ताज्जुब नही।

पिछले दिनो गुजरात मे मूगफली का तेल न मिलने के कारण बडा रोप था। यह मूँगफली का तेल सरसो के शुद्ध तेल मे आसानी से मिल जाता है, इसके अलावा सरसो के शुद्ध तेल के रूप मे विकने वाले तेल मे मशीन का, अलसी का और तारामीरा का तेल मिला होना एक तरह से मानो अनिवार्य होगया है।

कहावत है कि घुटा हुआ सन्यासी और पिसी हुई दवा का क्या पता ? जिस समय कहावत बनाई गई होगी उस समय शायद आज की जैसी परिस्थितियाँ नही होगी, वरना दवाओ की जगह पिसे हुए मसाले का नाम लिया गया होता। पिसे हुए मसालो को लीजिये तो हल्दी मे पीली मिट्टी, लाल मिर्च मे लाल मिट्टी और चावल का छिलका, हीग मे गोद, काली मिर्च मे पपीते के वीज, पिसे हुए धनिये मे घुली हुई लीद नमक मे सफेद पत्थर आदि न जाने क्या-क्या मिला होता है।

प्रदर्शनी मे दिखायी जाने वाली ऊपर की चीजो मे मिलावट के प्रदर्शन से जहा गृहणियाँ सावधान होगी, वहा डर है कि कही पैसा पैदा करने के लोभियो को ऊपर के फार्मूलो से और अधिक मिलावट करने की प्रेरणा न प्राप्त हो जाय। यदि उन्हे कोई प्रेरणा प्राप्त भी हो तो यह हो कि राष्ट्र के गिरते हुए स्वास्थ्य के लिये वे जिम्मेदार हैं। उन्हे यह राष्ट्र-विरोधी कार्य नही करना चाहिए। पैसा तो शुद्ध चीजो के वेचने मे भी प्राप्त हो जायगा।

आजके दूकानदार हस्तकला विशारद भी है। मतलब यह है कि वह मिलावट की चीजो को पूरा तोलते भी नही। किलो कहकर सेरभर देना तो

आज ईमानदारी मे शामिल हो गया है। उपरोक्त प्रदर्शनी मे दूकानदारी की इस दस्तकारी का प्रदर्शन भी है। अपने प्रकार की यह नुमाइश क्या हमारे राष्ट्रीय नैतिक चरित्र पर प्रकाश नही डालती ? इस प्रश्न को गम्भीरता पूर्वक सोचना समझना होगा, अब दूसरे ढग का भ्रष्टाचार देखिये।

आचार सहिता

केन्द्र सरकार ने मन्त्रियो के लिये एक आचार-सहिता स्वीकार की है। जिसके अनुसार मन्त्रियां पद ग्रहण के समय अपने देने-पावनेका ब्यौरा देना होगा, उन्हे कुछ विशेष व्यापार सम्बन्ध खत्म करने होगे तथा कुछ मामलो मे वे अपने परिवार के सदस्य के कार्यों के लिये भी जिम्मेदार होगे। दुनिया के अन्य लोक-तन्त्रीय देशो मे भी कुछ ऐसी परम्पराएँ हैं। जिन देशो मे नही हैं, वहाँ राजनीतिक क्षेत्र मे भ्रष्टाचार खत्म करने के लिये या तो ऐसी व्यवस्थाएँ की जा रही हैं अथवा उनकी आवश्यकता महसूस की जा रही। भ्रष्टाचार विरोध के वारे मे सुझाव देने के लिए नियुक्त सतानम समिति के सामने जिन लोगो ने गवाहियाँ दी थी, उन्होने भी यह स्वीकार किया था कि जब तक राजनीतिक क्षेत्र मे भ्रष्टाचार दूर नही होता, तव तक प्रशासन से भ्रष्टाचार दूर करने की तमाम कोशिशे वेकार ही साबित होगी।

जिम्मेदार व्यक्तियो द्वारा पिछले लगभग दस साल से यह कहा जा रहा है कि

भ्रष्टाचार मन्त्रि स्तर तक फैला हुआ है। सरकार के जिम्मेदार,नेताओ ने इस तरह की वातो का समय-समय पर खण्डन भी किया, किन्तु वाद की घटनाओ से इन सदेशो की पुष्टि हुई। दास आयोग की रिपोर्टसे कुछ तथ्य सामने आये। कुछ अन्य राज्यो के मुख्यमन्त्रियो तथा मन्त्रियो के सम्बन्ध मे भी जांच जारी है। हो सकना है वहुत से आरोप निराधार हो और राजनीति मे "व्यक्तित्व-विनाश"का जो नया दौर चल पडा है, उसके अनुरूप से ही इस तरह के प्रचार को हवा दी जा रही हो, फिर भी ऐसी व्यवस्था की आवश्यकता से इन्कार नहीं किया जा सकता, जिसके आधीन मन्त्री तथा उनसे सवन्वित व्यक्तियो की ईमानदारी के प्रति आम जनता को आश्वस्त किया जा सके।

मन्त्रियो के बारे मे अब जो आचारसहिता तैयार की गई, है उसे यद्यपि सभी दृष्टियो से पूर्ण नही माना जा सकता, क्योकि शासक दल की गुटबदियो और गुटो मे समझौता कराने के उद्देश्य से विरोधियो को भी मन्त्रि पद देने का एक परिणाम यह है कि मुख्यमन्त्री द्वारा किसी मन्त्री के खिलाफ कोई फैसला किये जाने पर उसे गुट की प्रतिष्ठा का सवाल बनाया जाय और रोग का इलाज होने के बजाय गुटबन्दी तथा 'व्यक्तिव-विनाश' का रोग और उग्र रूप से भडक उठे तथापि इससे एक स्वस्थ वातावरण बनेगा और ऊचे पदो पर बैठे राजनीतिक नेताओ के प्रति विश्वास जगेगा। कहा गया है कि केन्द्र तथा राज्यो मे क्रमश प्रधानमन्त्री और मुख्यमन्त्री जिम्मेदार होगे और मामले तथा परिस्थिति के गुण-दोष पर विचार करके ही यह फैसला करेंगे कि अगली कार्रवाई के लिये कौनसा तरीका अपनाया जाय। सतानम समितने इस सम्बन्ध मे सुझाव रखा था कि ससद या विधान सभा के दस सदस्यो की शिकायत पर मामले को जांच के लिये नियुक्त किसी उच्च अधिकार प्राप्त सस्था को सौप दिया जाय कुछ देशो मे यह कार्य खुफिया विभाग द्वारा कराया जाता है। यहाँ भी एक आध मामले मे यही हुआ है सहिता मे जाँच के बारे मे कोई स्पष्ट सकेत नही है। यह तो ठीक है कि सरकार प्रत्येक शिकायत या आरोप पर न तो ध्यान दे सकती है, और न ऐसा करना उचित ही होगा, क्योकि तब शिकायत करना या हस्ताक्षर आन्दोलन चलाना भी उसी बुराई का एक अग बन जायगा जिसकी चर्चा ऊपर की गई है। किन्तु इसमे भी इन्कार नही किया जा सकता कि जनता को जहाँ सदेह हो, उसके निवारण की कोई स्पष्ट व्यवस्था होना लाभदायक ही सिद्ध हो सकता है।

आचार सहिता का एक और पहलू भी विचारणीय है। पिछले दिनो एक राज्य के मुख्यमन्त्री ने कहा था कि मन्त्री के सम्बन्धियो को रोज़ी-रोजगार की सुविधाओ से वचित कर देना न्यायसगत न होगा। आचार सहिता पर अमल करते समय यह ध्यान भी रखना होगा कि मन्त्री होना स्वय एक 'बाधा' न बन जाय। यह बात स्पष्ट करनी होगी कि किस कार्य को भ्रष्टाचार की श्रेणी मे रखा जाय और किसे जीवनयापन के लिए सामान्य व्यवस्था एक अग

समझा जाय'। क्योकि सही या गलत 'भ्रष्टाचार' की बात को इतना अधिक तूल दे दिया गया है कि पद के लिये उम्मीदवार प्रत्येक व्यक्ति के वैध कार्य और व्यापार को भी सदेह की दृष्टि से देखने लगा है। शास्त्री-सरकार और विशेपकर स्वराष्ट्र मन्त्री श्री नन्दा भ्रष्टाचार को मिटाने और भ्रष्ट लोगो को कठोर दण्ड देने पर कटिवद्ध हैं, इसके लिये उनकी प्रशसा की जायगी, किन्तु अव यह भी उन्ही की जिम्मेदारी है कि भ्रष्टाचार की झूठी आंधियो को भी वढने देने से पहले ही रोकें। भ्रष्टाचार के झूठे आरोपो का प्रचार स्वय वहुत वडा भ्रष्टाचार है।

अन्त मे यह अवश्य कहना होगा कि जनता अव अपनी दुर्बलता को धीरे-धीरे पहचान रही है। निकट भविष्य मे वह अवश्य ही कोई ऐसा नया मोड देगी जो इस वर्तमान से सर्वथा ही पृथक होगा और भ्रष्टाचार के पांव उखड जायेंगे।



ब्रह्मचर्य

मनुष्य का चरम उद्देश्य जीवन को सरल और सरस वनाना है। यह सरलता और सरसता जीवन के दो प्रकार के अगो से सम्बन्धित है। शरीर और आत्मा इस जीवन के दो प्रधान अग है। भारतीय जीवन की मर्यादा अपने आप मे अत्यन्त सात्विक और आत्मिक सत्व सम्पन्न है। जव हम भारतीय जीवन के नियमो पर दृष्टिपात करते है तो एक सुचारु व्यवस्था के दर्शन होते हैं। हमारे भारतीय ऋषियो ने जीवन को चार वर्गों मे विभाजित किया है—ब्रह्मचर्य, गृहस्थ, वानप्रस्थ और सन्यास। यह जीवन रचना भारतीय आदर्श की द्योतक है और इतनी महान् है कि विश्व इसके सम्मुख श्रद्धावनत है। हमारे पूर्वजो ने कुछ ऐसी मूलभूत सास्कृतिक आधार शिलाओ पर इस भारतीय समाज के भवन की नीव रखी है कि इस पर आधारित यह भवन चिरकाल से अक्षुण्ण उसी तरह स्थित है।

यो तो हमारे पूर्वज ऋपियो ने जीवन को सम्पूर्णता की दृष्टि से देखा फिर भी उसका ध्यान मानव जीवन की व्यक्तिगत सुचारु व्यवस्था की ओर अधिक गया। इस सत्य से तो सभी परिचित हैं कि सामाजिक विकास का मूल व्यक्तिगत जीवन मे उच्चता का निर्माण है। इन ऋपियो और राष्ट्र निर्माताओ की दिव्य-दृष्टि मे सारे जीवन की रेखा खिच गई। इसलिए तो मानव जीवन की समस्त आयु को व्यतीत करने का एक सुचारु क्रम निर्धारित किया। इसी क्रम का सकेत हम ऊपर कर आये है।

ब्रह्मचर्य का काल प्रारम्भिक जीवन से २५ वर्ष तक होता है। इस काल मे ब्रह्मचारी के लिए जिस कठोर तपस्या का विधान है, उससे प्राय सभी शिक्षित जन परिचित है। यह वह काल है, जिसमे प्राणी इन्द्रियो को अपने वश मे करके विद्या का गहन ज्ञान प्राप्त करता है। इन्द्रियो का सयम एक विशेष अर्थ मे प्रयुक्त होता है। मनुष्य मे प्राकृतिक इच्छाओ का जन्म स्वाभाविक है। परन्तु यह अवस्था ऐसी होती है, जब प्राणी समस्त सासारिक विषय सुख और ऐश्वर्य सुख से विमुख होकर एकाग्रमन से ज्ञान सचय करता है। यदि कोई इस प्रकार का सयम नही रखेगा, तो निश्चय ही उसे ज्ञान की बहुलता और गम्भीरता से निराश होना पडेगा। 'वीर्य' बल और ओज का प्रतीक है। उसकी रक्षा से मनुष्य मे बल सचित होता है। इसी बल से ओज और आत्मविश्वास जागृत होता है। मनुष्य मे वह शक्ति तभी आती है, जब मनुष्य समस्त सासारिक इच्छाओ और वासनाओ से दूर एकान्त-साधना करता है। यही कारण है कि हमारी प्राचीन शिक्षा-व्यवस्था जगमगाते नगरो से दूर वन के किसी एकान्त स्थान मे होती थी। वैज्ञानिक दृष्टि से भी शारीरिक चेष्टाओ का ब्रह्मचर्य से अटूट सम्बन्ध है। बुद्धि की तीव्रता ब्रह्मचर्य से सम्बन्धित है। जो प्राणी जितना अधिक इसकी रक्षा कर सकता है, उसकी बुद्धि उतनी ही तीव्र और कुशाग्र रहती है। ओजस्वी ललाट चक्षुओ की चमक, शारीरिक गठन और व्यवहारिक सौन्दर्य इसी ब्रह्मचर्य पर आधारित है।

'ब्रह्मचर्य' शब्द रूढ हो गया है। परन्तु ऐसा नही है—यदि जीवन का कोई भी अश इस सयम से युक्त है, तो वह जीवन ब्रह्मचारी ही कहा जाएगा। प्राचीन युग मे ब्रह्मचर्य का अत्यन्त महत्व था। किसी वस्तु की अनुपस्थिति मे यदि सयम है तो वह महत्वपूर्ण होते हुए भी उससे कम है, जो वस्तु की उपस्थिति मे सयम का पालन करे। उदाहरण के लिए हम महात्मा गाँधी को ही लें। महात्मा गाधी ने जिस ब्रह्मचर्यव्रत का पालन किया, वह वास्तव मे अनुकरणीय है। इससे वाल ब्रह्मचारी का और भी अधिक महत्व है। शरीर से सम्वन्धित इच्छाओ का दमन ही ब्रह्मचर्य है। इसकी शक्ति महात्मा गाँधी मे वहुत थी। कहते हैं एक बार हँसी-हँसी मे उनके मुख से निकल गया कि मैं विना नमक खाये रह सकता हूँ। 'वा' के प्रतिरोध पर भी गाँधी जी ने कुछ समय तक नमक न खाने का व्रत रख लिया और उसे पूर्ण किया। इस प्रकार ब्रह्मचर्य का एक यह भी स्वाभाविक गुण है।

हमारे दार्शनिको, साहित्य निर्माताओ और महापुरुषो ने ब्रह्मचर्य का महत्त्व मुक्तकठ से गाया हैं और उसकी उपादेयता का वर्णन किया है। ऐसे अनेक उदाहरण हैं, जिनमे ब्रह्मचर्य के बल से महान् कार्य किया गया। इस उक्ति से ब्रह्मचर्य का महत्व और भी उचित सिद्ध होता है।

ब्रह्मचर्येण तपस्या देवा मृत्यु मपाघ्नत।

देवता अमर कहे जाते है। इसी ब्रह्मचर्य के महत्व से उन्हे अमरत्व मिला है। महावली भीष्म की कहानी से कौन अपरिचित होगा ? भीष्म ने अपने इस ब्रह्मचर्य के वल से 'इच्छा मृत्यु' का वरदान प्राप्त किया था। इस वीर्य रक्षा से ही मनुष्य अतुल मेधावी, ओजस्वी और महामना वनता है।

ससार के जितने महान् कार्य हुए हैं, वे ऐसे ही ब्रह्मचारियो द्वारा हुए हैं। समाज की जिस व्यवस्था और राष्ट्र की जिस महानता के आज हम गुण गा रहे हैं, वे उन ब्रह्मचारियो के यश और तप का फल है। जो प्राणी विषय-वासना के लोलुप और कामी हुये है, उन्होंने जीवन के प्रत्येक क्षेत्र मे पराजय का मुख देखा। उन्हें हमारे महर्षियो ने 'पृथ्वी पर भार' ही कहकर पुकारा है। ऐसे कामी-पुरुषो के द्वारा कोई महान् कार्य सम्पन्न नहीं हुआ है। इसके

विपरीत ब्रह्मचर्य धारण करने वालो के अनेक उदाहरण प्रस्तुत किए जा सकते हैं, जिनमे उन ब्रह्मचारियो ने अपना जीवन तो पवित्रतम् बनाया ही साथ ही लोकजीवन को भी कल्याण-मार्ग दिखाया। यदि हम भीष्म के जीवन को प्राचीन कहकर भुलावें भी, तो भी आज के युग मे उत्पन्न महर्षि दयानन्द सरस्वती के कार्यों की कौन उपेक्षा कर सकता है ? महर्षि दयानन्द ने भारतीय समाज के आडम्बर का और पाखड का घोर विरोध किया, वह अपने इसी ब्रह्मचर्य के बल पर। इस व्रत के द्वारा व्यक्ति मे अपूर्व कर्त्तव्य शक्ति और सात्विकता जन्म लेती है, जिसका सामना भौतिक शक्तियाँ नही कर सकती। हम समझते हैं कि महात्मा गाँधी इस ब्रह्मचर्य के बल पर विश्ववद्य बापू के रूप मे वन्दनीय और प्रसिद्ध हुए। इससे भी सभी परिचित हैं कि इससे पहले गाँधी जी का जीवन अत्यन्त कामुक और विलासी था।

जब हम आज के जीवन पर दृष्टिपात करते हैं, तो ब्रह्मचर्य का नितान्त अभाव पाते हैं। आज के प्राणी का प्रारम्भिक जीवन शुद्ध और सात्विक छाया मे न पल कर विलासिता की छाया मे पलता है। शिक्षा का प्रसार अधिक होते हुए भी आज का विद्यार्थी चरित्रवान् नही है। यही कारण है कि आज के विद्यार्थी के मुख पर वह लालिमा नही है—वह ओज और तेज नही है, इस प्रसग मे वेवडक वनारसी की यह उक्ति बिल्कुल सार्थक है—जिसमे विद्यार्थी का चित्र है—

देखिए यह सीन कितना ग्रैंड है।
देह है या साइकल का स्टैंड है।
देह इनकी होय चाहे इण्डियन।
मान्इड लेकिन मेड इन इगलैंड है।

वास्तव मे ब्रह्मचर्य का आदर्श आज के विद्यार्थी वर्ग मे नही है। जबकि वह आज के इस निर्माण के युग मे अत्यन्त आवश्यक है। राष्ट्र की समुन्नति के लिए चरित्र निर्माण आवश्यक है। परन्तु इस भौतिक वातावरण मे—जबकि प्रत्येक विद्यार्थी सिनेमा देखना अपने जीवन का आवश्यक अग मान

वैठा है—किस प्रकार चरित्र-रक्षा सभव है ? जिस तरुण समाज पर भविष्य की धुरी स्थित है—भला इन दुर्बलताओ से कैसे अपने उत्तरदायित्वो को निभा सकेगा ?

इसलिए यह निश्चित है कि यदि समाज को उच्च निर्माण की ओर ले जाना है और मानव को वास्तविक जीवन के लक्ष्य पर पहुँचाना है तो चरित्रनिर्माण आवश्यक है। उसके लिए ब्रह्मचर्य का व्रत पालन आवश्यक है। हमे विश्वास है कि वह समय आएगा जव ससार का प्रत्येक प्राणी इस ब्रह्मचर्य के महत्व को समझेगा। अभी वह दिन दूर है, जव मानव मृत्यु को चुनौती देगा। ईश्वर से प्रार्थना है कि मानव को सद्बुद्धि दे और इस सात्विक व्रत पालन की ओर प्रेरित करे।



जव आवै सन्तोष धन सब धन धूरि समान

ससार मे प्रत्येक मनुष्य अपने जीवन को सुखी वनाने के लिए वडे-वडे प्रयत्न करता है, इतने प्रयत्नो के वाद भी उसे सुख नही मिलता। दिन पर दिन उसकी लालसाएँ और इच्छाएँ वढती जाती हैं। जव ये इच्छाएँ पूरी नही होती, तो मनुष्य को और भी कष्टो का सामना करना पडता है। हम देखते हैं कि मनुष्य अपनी इच्छाओ मे किसी प्रकार की कमी नही करता, ससार की चमक-दमक को देखकर उसकी इच्छाएँ और भी अधिक वढती है।

प्राचीन समय मे, जवकि मनुष्य के पास साधन भी थोडे थे, उस समय वह सुखी रहने की कोशिश करता था इसका एकमात्र कारण यह था कि मनुष्य को जो कुछ साधन प्राप्त होते थे, वह उन्ही मे प्रसन्न रहता था। यह प्रसन्नता उसे सतोष से मिलती थी। जो व्यक्ति इस सतोष का सहारा नही लेते, वह सदा दुखी रहते हैं, क्योकि लालच उन्हे सदा ही दुखी वनाता

रहता है। यदि हम अपने जीवन से सतोष को अधिक स्थान दें, तो निश्चय ही हमे दु ख और कष्ट का मुख नही देखना पडेगा।

मनुष्य को चाहिए कि वह सतोष को अपना स्वभाव वनालें। सतोष से अधिक सुख ससार मे कही नही मिल सकता। यह सभी जानते है कि इस ससार मे हम जो कुछ देख रहे हैं, उसे एक न एक दिन नष्ट हो जाना है। उस नष्ट होने वाली वस्तु के प्रति इतना लालच केवल अज्ञान ही कर सकता है क्योकि आज हमने जिस वस्तु को पाने के लिए इतना परिश्रम किया फिर भी हमारे पास न रह सकी, तो उसके प्रति इतना लालच क्यो ?

सतोष से आदमी की सभी दुर्वलताए दूर हो जाती हैं। जो मनुष्य सतोष रखते हैं उनमे आत्म-विश्वास जागता है और आत्म विश्वास सफलता की कुञ्जी है। यह तभी हो सकता है, जवकि मनुष्य सन्तोष को अपना प्रधान गुण मानकर चलें।

— यह ठीक ही कहा है सन्तोष जैसे धन के सामने और सव धन धूल के समान है। क्योकि जो आदमी सतोषी स्वभाव का होगा, वह कभी किसी के सामने झुकेगा नही। उसकी आत्मा मे एक प्रकार का वल आ जाता है। हम देखते हैं कि जो व्यक्ति सतोषी स्वभाव के होते है, उन्हे सव प्रकार के सुख मिलते हैं। सतोषी का अर्थ यही है कि मनुष्य हर दशा मे खुश रहे। जव मनुष्य हर दशा मे खुश रहेगा तो, उसे ससार की विपत्तिया सता नही सकती। सतोष हमे त्याग का पाठ पढाता है। इस प्रकार जो व्यक्ति सतोषी है, उसके सामने ससार की सभी सम्पत्ति धूल है। इसलिए व्यक्ति को अपने सतोष जैसे महान गुण को अपनाना चाहिए।

सतोष का अर्थ यह नही है कि मनुष्य जिस स्थिति मे है उसी स्थिति को अपना अन्तिम लक्ष्य मानकर वैठ जाय और उन्नति की चेष्टा न करे। प्राय सतोष का अर्थ कुछ तर्कशील ऐसा ही लगा लेते हैं। परन्तु ऐसा नही है।

सतोष की वास्तविक स्थिति यह है कि मनुष्य अपने जीवन मे सद्‌गुणो का सचय करे। वह सुख प्राप्त करने की चेष्टा और प्रयत्न करे। जिसमें

उसके सुखमय जीवन मे किसी प्रकार की बाधा न पडे। हम देखते हैं कि असतोषी व्यक्तियो के पास अपार धन होता है, परन्तु फिर भी दुखी रहते हैं। इसका कारण एकमात्र यही है कि उन्हे किसी वस्तु को प्राप्त करने की सदिच्छा नही होती। सतोष से व्यक्ति कभी अवनति की ओर नही जायगा। और यदि कोई वस्तु उसे प्राप्त नही होती तो दुख नही होगा। हमारे प्राचीन ऋषि-मुनियो ने इस लिए इस सतोष को एक प्रकार का तप माना है। क्योकि सांसारिक प्राणी सतोषी नही रहते जिनमे यह गुण है, वह अवश्य 'स्थिति-प्रज्ञ' है। गीता मे श्रीकृष्ण ने स्थिति-प्रज्ञ को महान बताया है। यह तभी हो सकता है, जब व्यक्ति सतोषी हो। हमारा सस्कृत और हिन्दी साहित्य इस सतोष जैसे महान गुण की प्रशसा से भरपूर है। यह दोहा कितना सुन्दर है—

गोधन, गजधन, वाजिधन और रतनधन खान।
जब आवे सतोष धन सब धन धूरि समान॥

इस प्रकार सतोष का अर्थ यही है कि अपने परिश्रम और प्रयत्नो से जो प्राप्त हो, उसी मे प्रसन्न रहना सतोष है। सतोष ही मनुष्य का सबसे बडा खजाना है—

सतोष एव पुरुषस्य परं निधानम।



मित्रता

मित्रता एक पवित्र भाव है। ससार मे सब कुछ मिल सकता है परन्तु सच्चा और स्वार्थहीन मित्र मिलना अत्यन्त दुर्लभ है। जिस व्यक्ति को इस ससार मे मित्र रत्न मिल गया, समझो उसने अपने जीवन मे एक बहुत बडी निधि पा ली। मनुष्य जबसे ससार की जीवन यात्रा प्रारम्भ करता है तो उसे

सबसे बडी कठिनाई मित्र खोजने मे होती है। यदि उसका स्वभाव कुछ विचित्र नही है तो लोगो से उसका परिचय बढता जाता है और कुछ ही दिनो मे यह परिचय मित्रता का रूप ग्रहण कर लेता है। परन्तु यही वह समय है जब मनुष्य को सावधान रहने की आवश्यकता है। जिस व्यक्ति को मित्र बनाया जाता है उसका प्रभाव अपने जीवन पर भी पडता है और यही प्रभाव मनुष्य के जीवन को बना और बिगाड सकता है। यह वह समय होता है जब मनुष्य का स्वभाव बडा कोमल और कच्चा होता है और मनुष्य का मन कच्ची मिट्टी के समान होता है जिससे कोई भी वस्तु बनाई जा सकती है।

मित्रता का वास्तविक अर्थ है, 'दो तन एक मन'। अर्थात जिस अवस्था मे आकर दो व्यक्ति अपने-अपने स्वार्थों का त्याग करके दूसरे के लिए अपने को पूर्णतया समर्पण कर देते हैं, तब सच्ची मित्रता होती है। मनुष्य को ऐसे मित्र कभी नही चुनने चाहिये जो उनसे अधिक पक्के विचार के हो क्योकि ऐसी अवस्था मे मनुष्य को उसके विचार मानकर चलना पडेगा। साथ ही उन व्यक्तियो की मित्रता तो और भी हानिकारक है, जो हर अवस्था मे हमारी ही बात को स्वीकार कर चलते हैं। इस अवस्था मे मनुष्य को न तो सहारा ही रहता है और न कोई दवाव ही। इसलिए ऐसे व्यक्ति को मित्र रूप मे चुनना चाहिए जो न हम से दबता हो और न दबाता हो।

प्राय मनुष्य जब किसी की मीठी बातें सुनता है या उसका हसमुख चेहरा देखता है तो उसे मित्र रूप मे स्वीकार कर लेता है। परन्तु मित्रता का अर्थ बहुत गहरा है। एक सच्चा मित्र इस ससार मे हमारा सबसे बडा रक्षक होता है विपत्ति मे हमारी रक्षा करता है निराशा मे उत्साह देता है, जीवन को पवित्र कराने वाला, दोषो को दूर करने वाला और माता के समान प्यार करने वाला होता है। इसलिये इस प्रकार का स्वार्थहीन व्यक्ति ही हमारा सबसे बडा सहायक है। ऐसे व्यक्ति को ही हमे अपने मित्र के रूप मे स्वीकार करना चाहिए। जो व्यक्ति अपने मित्र के दु ख मे दु खी नही होते, उनके दर्शन मे भी महापाप होता है। अत सच्चा मित्र वही है जो—

निज दुख गिरिसम रज के जाना ।
मित्र के दुख रज मेरु समाना ।।

अर्थात जो व्यक्ति अपने बडे-वडे दुखो को भी धूल के समान समझता है और और अपने मित्र के साधारण दु ख को महान समझता है वही सच्चा मित्र होता है। जिसके मन मे लेन-देन के व्यवहार के समय किसी प्रकार की शका उत्पन्न नही होती और अपनी शक्ति के अनुसार हर प्रकार की सहायता को तत्पर रहता है, ऐसा व्यक्ति ही मित्रता का सच्चा अधिकारी होता है। जो व्यक्ति सामने कुछ और पीठ पीछे कुछ हो ऐसे व्यक्ति की मित्रता का सर्वथा परित्याग कर देना चाहिए। 'कपटी मित्र शूल सम' होता है, उसका चित्त 'अहिसम' अर्थात् काले सर्प के समान होता है। सो ऐसे शूल और सर्प को दूर से ही छोड देना चाहिए। जिस व्यक्ति मे सच्चा आत्मवल हो, शुद्ध हृदय वाला हो, परिश्रमशील और कोमल स्वभाव का हो वही सच्चे मित्र पद का अधिकारी होता है। मित्र ही उत्थान व पतन का कारण होताहै। मित्रता जीवन और मरण दोनो मे साथ देती है। एक मित्र कोई भूल करता है तो दूसरा भी करता है, एक सत्य और न्याय का मार्ग ग्रहण करता है तो दूसरा भी उसी पथ पर चलता है। इस प्रकार दोनो मित्र मिलकर जीवन सग्राम मे आगे वढते है।

यह आवश्यक नही कि समान स्थिति वाले व्यक्ति ही मित्र वन सकते हैं। अनेक वार ऐसे भी अवसर आये है जवकि असमान स्थिति वालो में भी गहरी मित्रता हो जाया करती है। आर्थिक स्थिति, स्वभाव या आचरण की समानता भी मित्रता के लिए कोई आवश्यक नही हैं। राम और लक्ष्मण दोनो ही के स्वभावो मे महान् अन्तर था। राम कोमल स्वभाव के थे और लक्ष्मण उग्र स्वभाव के फिर भी दोनो का आदर्श प्रेम था। दुर्योधन और कर्ण दोनो के स्वभावो मे अन्तर होते हुए भी गहरी मित्रता थी। जो गुण हमारे पास नही हैं उसी को पूरा करने के लिए हमे मित्र की आवश्यकता होती है। निर्वल मनुष्य वलवान् को, धीर व्यक्ति उत्साही को अपना मित्र वनाता है।

चन्द्रगुप्त ने चाणक्य को और अकबर ने वीरबल को अपनी कमी को पूरा करने के लिए ही मित्र बनाया था।

ससार मे इस पवित्र भाव का पूरी तरह पालन करना आवश्यक है। जितनी शीतलता मित्र शब्द से प्राप्त होती है उतनी किसी दूसरे उपाय से नही। कहा भी है—

किं चन्दनै सकर्पूरैस्तुहिनै किंच शीतलै ।
सर्वे ते मित्रगात्रस्य कलाँ नार्हन्ति पोडशीम् ॥

अर्थात् चन्दन, कपूर, हिम और अन्य शीतल पदार्थों से क्या लाभ, क्योकि यह सब तो मित्र के शरीर की सोलहवी कला के समान भी शीतल नही। मित्र शब्द अमृत के समान है जो आपत्ति और शोक के समय मे रक्षा करता है। जो सुख एक बार मित्र के शरीर स्पर्श से होता है वह अमृत के सागर से भी प्राप्त नही हो सकता। अत ऐसा पवित्र भाव के प्रति जो विश्वासघात करता है, वह ससार मे हिंसक प्राणियो से भी भयानक है। ऐसे विश्वासघाती व्यक्ति की मित्रता सदा त्याज्य होती है।

स्कूल और कालिजो मे अनेक मित्र मिल सकते हैं परन्तु यह तो केवल पान, सिगरेट तक के साथी होते है, ऐसे साथियो की मित्रता केवल सन्ध्या की धूप के समान होती है जो क्षण-क्षण मे घटती जाती है और अन्त मे समाप्त हो जाती है। ऐसे मित्रो के सामने केवल अपने सुख आराम के अतिरिक्त और कोई उद्देश्य नही होता। अत सच्ची मित्रता सूर्य के समान होती है जो उदय और अस्त दोनो ही अवस्था मे लाल, (अर्थात् मधुर) रहती है। जिस व्यक्ति को ससार मे सच्चा सुख और सकट के समय के लिए सच्चे सहायक की आवश्यकता है, उसे सावधानी के साथ ही मित्र का चुनाव करना चाहिए। दुष्टो की मित्रता दोपहर की धूप के समान होती है, जो प्रारम्भ मे महान् और मध्यान्ह मे समाप्त हो जाती है तथा सत्पुरुष की मित्रता दिन के प्रात के समान होती है जो पहले थोडी और बाद मे बढती जाती है। अत जो व्यक्ति अपनी कल्याण कामना करता है जो उसे बहुत खोज के बाद ही अपनी मित्रता का पात्र चुनना चाहिए।

रामराजता में अराजकता

गाधी जी ने राम राज्य का स्वप्न देखा था, स्वप्न का पूरा होना तो दू. आज अराजकता फैलती जा रही है। यह सत्य है कि—देश दिन-पर-दिन व्यापक होती जा रही अशान्ति के वीच खडा है। खाद्य-सकट, महगाई, वाढ-प्रकोप, छात्र-उपद्रव आदि व्यापक अशान्ति के ही प्रसग हैं। किन्तु इन सवसे कही अधिक अशान्ति का जिम्मेदार स्रोत यदि कोई है तो वह है देश की राजनीति का वातावरण। राजनीति अपने-आप मे निरन्तर ऐसी उलझती जा रही है कि लोकतन्त्र के लिए वह भयकर खतरा वन गई है।

सामान्यत राजनीति लोकतन्त्र का साधन-मात्र है। लोकतन्त्र के तकाजे राजनीति के ही माध्यम से अपनी पूर्ति प्राप्त करते है। यदि राजनीति का सिर्फ यही दायित्व रहे तो परेशानी की गु जाइश नही रहती, किन्तु स्थिति अक्सर ऐसी रहती नही है। राजनीति प्रमुख हो जाती है और लोकतन्त्र पीछे ढकेल दिया जाता है। ऐसी स्थिति मे जीवन-मुल्यो का ही ह्रास नहीं होने लगता है, वैचारिक भ्रांति और अस्पष्टता को भी फलने-फूलने का मौका मिलता है। फलत एक प्रकार की सर्वांगीण अराजकता देश मे फूट पडती है। लोकजीवन को द्रोह के अ धड झकझोरने लगते हैं।

आज देश मे इसी प्रकार की अराजकता प्रमुख होती जा रही है। स्पष्टत राजनीतिक दलो पर ही इसका सारा दोष है। क्या यह सच नही है कि आज देश के किसी भी राजनीतिक दल के सामने कोई निश्चित उद्देश्य नही है, मजिल पर गतिशील रखने वाला कोई ध्रु व तारा नही है? अन्य राजनीतिक दलो के साथ कांग्रेस पार्टी भी इस मुल्याकन मे शामिल है।

स्वतन्त्रयता-सग्राम के समय काग्रेस के सामने स्वतन्त्रता-प्राप्ति का एक जीवत लक्ष्य था—सार्थकता का एक मिशन था। उसकी सिद्धि के वाद लक्ष्य की जो रिक्तता उसके सामने आयी उसे पाटने का अभी तक कोई प्रयत्न नही हुआ है। हाँ, प्रतिकूल दिशा मे इतना जरूर हुआ है कि राष्ट्रीय लक्ष्य की

ख़ोज के वजाय अक्सर वैयक्तिक लक्ष्य को ही प्राथमिकता दी जाने लगी है। फलत रिक्तता की खाई और चौडी होने के साथ-साथ कलुषित होती जा रही है।

यह देश का सद्भाग्य है कि चोटी के नेताओ मे आज भी काफी नि स्पृह-नि स्वार्थ देशसेवी मौजूद है, किन्तु उनकी सख्या कितनी है और वे अपने-जैसे कितने लोकसेवक नि स्वार्थ देश प्रेम की प्रेरणा मे ढाल रहे हैं? यह प्रश्न किसी भी रूप मे सुखकर नही कहा जा सकता।

लोकतन्त्र केवल प्रशासन-मात्र ही नही है, अपनी आतरिक स्फूर्ति मे वह एक आन्दोलन है, कभी समाप्त नही होनेवाला अभियान है। गाँधी जी ने इसको स्पष्ट करते हुए कहा था कि केवल शासन मे ही केन्द्रित हो गया लोकतन्त्र उस जलाशय की दुर्गति प्राप्त कर लेता है जिसे निरन्तर नए पानी का प्रवाह प्राप्त नही होता है। लोकतन्त्र की नसो मे लोकास्था का प्रवाह निरन्तर दौडते रहना चाहिए। किन्तु यह तभी हो सकता है जव शासन गौण और लोक-सम्पर्क मुख्य हो।

गाँधी जी की इस चेतावनी का उल्लघन आज हमारे राजनीतिक जीवन को काफी दडित कर रहा है। उद्देश्य का अभाव भी इसी उल्लघन उपेक्षा का दुष्परिणाम है। उद्देश्य की स्फूर्ति जन-सम्पर्क मे जागती है, पार्लमेट की वहस मे या दफ्तर की फाइलो मे नही।

क्या देश के राजनीतिक दल सामने मुँह फाडे खडी अराजकता को अनुभव कर रहे है? यदि हाँ, तो क्या उन्होने उसको जन-जीवन से दूर खदेडने की योजना वनाई है? यदि नही, तो क्या वे यह भी जानते है कि इस अराजकता के सामने देश की ही नही, उनकी सुरक्षा भी खतरे मे है? न जाने कौन सी ऐसी सहनशीलता है जो सहे जा रही है—वरना—

आँख नीची है हृदय के प्यार की,
वस प्रतीक्षा है किसी अ गार की।



सन्तानम समिति ने इस सम्बन्ध मे जो सुझाव रखा था उसका यह संशोधित रूप होगा। लेकिन जो भी व्यवस्था कायम की जाए आरोपो की जाच में विलम्ब न होना चाहिए। दास आयोग की नियुक्ति से जो स्वस्थ परम्परा कायम हुई है, यह अटूट रहनी चाहिए। आरोपो की जाच के लिए जो भी प्रणाली अपनाई जाये वह शुद्ध ईमानदारी पर और जिम्मेदारी पर आधारित हो। जनता जब ऐसे परिणाम देखेगी तो उसमे उस न्याय के प्रति निष्ठा जागेगी जो आज उसके लिए अविश्वास का पात्र हो गया है।



युवक-समारोह के आकर्षण

भारतीय त्योहार अतीत से नाता जोडने के एक प्रबल साधन है। वे कब और क्यो आरम्भ हुए। जिन भावो और अर्थों को लेकर उनका प्रचलन हुआ, उसकी आज क्या आवश्यकता है और यदि है तो क्या वे उस उद्देश्य की पूर्ति करते हैं ? कई बार आश्चर्यजनक तथ्य सामने आते है। हिन्दुओ के पूजा-पाठ मे नारियल और केले को बहुत ही महत्वपूर्ण स्थान दिया गया है। यह अकारण ही नही है। आधुनिक गवेषणा जो इस सम्बन्ध मे हुई है उसमे प्रकट है कि इन फलो मे बहुत ही पौष्टिक तत्व विद्यमान हैं। तब लगता है, कि हमारे पूर्वजो ने अकारण ही इन फलो का इतना ऊचा स्थान नही दिया था।

कई त्योहार कितने मीठे लगते हैं अर्थपूर्ण भी। दीपावली को ही लीजिये हर वर्ष जब अन्धकार अपनी चरम सीमा पर होता है, तब यह आलोक देने आती है, उद्योग मे असीम विश्वास पुनर्जीवित करने। प्रश्न आज आलोक से लाभ उठाने मात्र का नही, आलोक उत्पन्न करने का है। यदि हम ऐसा कर

सकें, अपना मार्ग स्वय निर्धारित एव प्रशस्त कर सके तो हम स्वय ही नही, आगे आने वाली पीढियाँ भी हम पर गर्व कर सकेगी। दीवाली हमारा राष्ट्रीय पर्व है। इस दिन लक्ष्मी की पूजा की जाती है। इसलिये हमे आत्मालोचन करना होगा कि हमने राष्ट्रीय सम्पदा का कितना विकास किया और भविष्य मे हमारी योजनायें क्या है। यदि हम ऐसा नही कर सकते तो हम लक्ष्मी पूजा के वास्तविक अधिकारी नही हो सकते।

विद्यार्थियो मे प्रचुर-मात्रा मे राष्ट्रीय एव सामाजिक जागरुकता रहे, इस बात को दृष्टि मे रखते हुए विश्वविद्यालयो मे युवक समारोह का जो कार्य क्रम बनाया है, उसने काफी लोकप्रियता पायी है। इन कार्य-क्रमो का मुख्य उद्देश्य सभी वर्ग के युवको-युवतियो को एक प्लेटफार्म पर लाने के साथ-साथ उन मे पायी जाने वाला सृजनात्मक शक्तियो को उचित वातावरण तैयार कर उन्हे उचित आकृति एव रूप देना भी है ताकि वह निर्माण क्षेत्रो मे अधिक सुवेदनशीलता के साथ मानवीय माध्यमो द्वारा राष्ट्र की सेवा करने योग्य बन जाय।

पजाब विश्वविद्यालय ने जालन्धर के लायलपुर खालसा कालेज मे क्षेत्रीय के पश्चात विश्वविद्यालय स्तर पर ११वें युवक समारोह का आयोजन किया। इस समारोह मे सारे पजाब के कालेजो की ५२ टीमो ने भाग लिया। प्रथम दिन नृत्य और सामूहिक नृत्य की प्रतियोगिताएँ हुई। कार्यक्रम चण्डीगढ होम साइन्स कालेज की छात्रा कु० ढिल्लो के आकर्षक भारत नाट्यम से प्रारम्भ हुआ। नृत्य मुद्राओ की सफलता से अकन कर कुमारी ढिल्लो ने अपनी मजी हुई कला का परिचय दिया। लुधियाना की सुमन शारदा तथा भटिण्डा की सरोज शर्मा के कत्थक नृत्य के उपरान्त भिवानी की कुमारी अलका का नृत्य सराहनीय रहा।

सामूहिक नृत्यो मे नाहन (हि प्र) की टीम ने सही अर्थो मे लोक-नृत्य प्रस्तुत किया। लायलपुर खालसा कालेज का भगडा और लुधियाना के गवनमेंट गर्ल्स कालेज की कुमारी रमा कपूर के नेतृत्व मे प्रस्तुत किये गये सामूहिक नृत्य विशेष रूप से उल्लेखनीय है।

सन्तानम समिति ने इस सम्बन्ध मे जो सुझाव रखा था उसका यह सशोधित रूप होगा। लेकिन जो भी व्यवस्था कायम की जाए आरोपो की जाच मे विलम्व न होना चाहिए। दास आयोग की नियुक्ति से जो स्वस्थ परम्परा कायम हुई है, यह अटूट रहनी चाहिए। आरोपो की जाच के लिए जो भी प्रणाली अपनाई जाये वह शुद्ध ईमानदारी पर और जिम्मेदारी पर आधारित हो। जनता जव ऐसे परिणाम देखेगी तो उसेमे उस न्याय के प्रति निष्ठा जागेगी जो आज उसके लिए अविश्वास का पात्र हो गया है।



युवक-समारोह के आकर्षण

भारतीय त्योहार अतीत से नाता जोडने के एक प्रबल साधन है। वे कव और क्यो आरम्भ हुए। जिन भावो और अर्थो को लेकर उनका प्रचलन हुआ, उसकी आज क्या आवश्यकता है और यदि है तो क्या वे उस उद्देश्य की पूर्ति करते है ? कई वार आश्चर्यजनक तथ्य सामने आते हैं। हिन्दुओ के पूजा-पाठ मे नारियल और केले को वहुत ही महत्वपूर्ण स्थान दिया गया है। यह अकारण ही नही है। आधुनिक गवेषणा जो इस सम्वन्ध मे हुई है उससे प्रकट है कि इन फलो मे वहुत ही पौष्टिक तत्व विद्यमान हैं। तव लगता है, कि हमारे पूर्वजो ने अकारण ही इन फलो का इतना ऊचा स्थान नही दिया था।

कई त्योहार कितने मीठे लगते हैं अर्थपूर्ण भी। दीपावली को ही लीजिये हर वर्ष जव अन्धकार अपनी चरम सीमा पर होता है, तव यह आलोक देने आती है, उद्योग मे असीम विश्वास पुनर्जीवित करने। प्रश्न आज आलोक से लाभ उठाने मात्र का नही, आलोक उत्पन्न करने का है। यदि हम ऐसा कर

सकें, अपना मार्ग स्वय निर्धारित एव प्रशस्त कर सकें तो हम स्वय ही नही, आग आने वाली पीढियाँ भी हम पर गर्व कर सकेंगी। दीवाली हमारा राष्ट्रीय पर्व है। इस दिन लक्ष्मी की पूजा की जाती है। इसलिये हमे आत्मालोचन करना होगा कि हमने राष्ट्रीय सम्पदा का कितना विकास किया और भविष्य मे हमारी याजनाये क्या है। यदि हम ऐसा नही कर सकते तो हम लक्ष्मी पूजा के वास्तविक अधिकारी नही हो सकते।

विद्यार्थियो मे प्रचुर-मात्रा मे राष्ट्रीय एव सामाजिक जागरुकता रहे, इस वात को दृष्टि मे रखते हुए विश्वविद्यालयो मे युवक समारोह का जो कार्य क्रम वनाया है, उसने काफी लोकप्रियता पायी है। इन कार्य-क्रमो का मुख्य उद्देश्य सभी वर्ग के युवको-युवतियो को एक प्लेटफार्म पर लाने के साथ-साथ उन मे पायी जाने वाला सृजनात्मक शक्तियो को उचित वातावरण तैयार कर उन्हे उचित आकृति एव रूप देना भी है ताकि वह निर्माण क्षेत्रो मे अधिक सवेदनशीलता के माथ मानवीय माध्यमो द्वारा राष्ट्र की सेवा करने योग्य वन जाय।

पजाव विश्वविद्यालय ने जालन्धर के लायलपुर खालसा कालेज मे क्षेत्रीय के पश्चात विश्वविद्यालय स्तर पर ११वें युवक ममारोह का आयोजन किया। इम समारोह मे सारे पजाव के कालेजो की ५२ टीमो ने भाग लिया। प्रथम दिन नृत्य और सामूहिक नृत्य की प्रतियोगिताएँ हुई। कार्यक्रम चण्डीगढ होम साइन्स कालेज की छात्रा कु० ढिल्लो के आकर्षक भारत नाट्यम से प्रारम्भ हुआ। नृत्य मुद्राओ की सफलता से अकन कर कुमारी ढिल्लो ने अपनी मजी हुई कला का परिचय दिया। लुधियाना की सुमन शारदा तथा भटिण्डा की सरोज शर्मा के कत्थक नृत्य के उपरान्त भिवानी की कुमारी अलका का नृत्य सराहनीय रहा।

सामूहिक नृत्यो मे नाहन (हि प्र) की टीम ने सही अर्थो मे लोक नृत्य प्रस्तुत किया। लायलपुर खालसा कालेज का भगडा और लुधियाना के गवर्नमेंट गर्ल्स कालेज की कुमारी रमा कपूर के नेतृत्व मे प्रस्तुत किये गये सामूहिक नृत्य विशेष रूप से उल्लेखनीय है।

समारोह के दूसरे दिन शास्त्रीय गायन और वादन का कार्यक्रम जालन्धर की तरुण मित्र और कुमारी सर्वजीत का सितार-वादन, फीरोजपुर के सुभाष खन्ना का तबला वादन तथा नाभा के राजकीय कालेज का वादयवृन्द सराहनीय रहा। गायन मे जालन्धर की कुमारी आशा मित्रा और फीरोजपुर की कुमारी सविता खन्ना ने गायन विद्या मे अपनी पूर्ण निपुणता का परिचय देकर प्रशसा पाई।

नाटको के पूर्वाद्र्व मे होशियारपुर ने "हम भी इन्सान हैं" मलेरकोटिला ने "अधेरे साये" चण्डीगढ विश्वविद्यालय क्षेत्र ने "हसरत" तथा पठानकोट ने रमेश मेहता के "अण्डर सैक्रेटरी" प्रस्तुत किया। विदिया की भूमिका मे कुमारी प्रवेश तलबाड, मगू की भूमिका मे नागेश "होशियारपुर" तथा कहानी लेखिका राज की भूमिका मे अमरजीत "चण्डीगढ" का अभिनय उल्लेखनीय रहा। एक बीमार कहानी लेखिका, जो कि मृत्यु शैया पर है, की भूमिका मे कुमारी अमरजीत ने सफल अभिनय कर दर्शको को रुला दिया।

नैनीताल मे हर वर्ष की भाँति इस वर्ष भी शरदोत्सव धूमधाम से मनाया गया। साँस्कृतिक सस्था 'उतरांचल' द्वारा शैले हाल मे त्रिदिवसीय अखिल भारतीय नाटक समारोह का आयोजन किया गया जिसका उद्घाटन विधायक श्री देवेन्द्रसिह मेहरा ने किया। समारोह के अन्तर्गत आठ एकाकी प्रस्तुत किये गए।

शरदोत्सव के एक मुख्य कार्यक्रम के रूप मे अखिल भारतीय वाद-विवाद प्रतियोगिता लिक थियेटर मे आयोजित की गयी। नैनीताल की कुमारी विमला शाह को प्रतियोगिता मे प्रथम पुरस्कार मिला लखनऊ के श्री प्रताप सिह गुप्ता दूसरे स्थान पर आये और तृतीय पुरस्कार नैनीताल की कुमारी वीना को प्राप्त हुआ। ये सभी पुरस्कार "भारत सरकार को चीन सरकार से राजनैतिक सम्बन्ध विच्छेद कर लेने चाहिये" विषय पर वाद-विवाद प्रतियोगता मे दिये गये। नैनीताल के देवसिंह बिष्ट राजकीय महाविद्यालय को चल वैजयन्ती प्राप्त हुई।

इण्टरमीडिएट प्रतियोगिता वाले युवक युवतियो के वाद-विवाद का विषय था। "समाज के सन्तुलित विकास के लिये सहशिक्षा आवश्यक रूप से दी जानी चाहिये" जिसमे नैनीताल के राजकीय इण्टर कालेज के एक छात्र को प्रथम पुरस्कार मिला। दूसरा व तीसरा पुरस्कार थारु स्कूल खटीमा व राजकीय स्कूल नैनीताल के छात्रो को दिया गया। इस प्रतियोगिता की पार्वतीय चल वैजयन्ती राजकीय इण्टर कालेज नैनीताल को प्राप्त हुई।

जीवन का लक्ष्य

मनुष्य का जीवन अपने आप मे एक रहस्य है। आशा और निराशा, हास और आँसू की द्वन्द्वात्मक स्थिति मे मानव किंकर्तव्यविमूढ हो जाता है। बडे-बडे महान् पुरुषो ने इस रहस्य का मर्म समझकर मानव को प्रेरणा दी है कि वह जीवन को व्यर्थ न खोकर लक्ष्य की खोज करे और लक्ष्य की प्राप्ति करे। इस लक्ष्य को पहचानने मे हमे असुविधा इसलिए होती है कि हम जीवन के महत्त्व को समझने के लिए प्रयत्न नही करते।

संसार मे असख्य प्राणी है। इन प्राणियो मे मानव-जीवन सबसे श्रेष्ठ है। मानव एक प्रकार से सृष्टि का शृ गार है। उसमे बुद्धि देने की शक्ति है और बुद्धि लेने की क्षमता। जिसने इस कठिन मानव जीवन की दुर्लभ प्राप्ति का महत्व समझ लिया, वह अवश्य ही इसका मूल्य समझकर इसे व्यर्थ नही जाने देगा। वह समझेगा कि संसार मे प्रत्येक वस्तु किसी न किसी उद्देश्य से जन्म लेती है। मनुष्य का जीवन भी किसी उद्देश्य की पूर्ति के लिए मिलता है। अब हमे यह सोचना चाहिए कि वह कौन-सा उद्देश्य और लक्ष्य है। जिसके लिए हमे मानव जीवन मिलता है।

जीवन का क्षेत्र विस्तृत है। हमारे अनेक धिचार हैं। निरन्तर परिवर्तनो के कारण विचारो मे अनेकरूपता आती है। परिवर्तन ने जीवन को द्वन्द्व के दलदल मे फसा दिया है। इस परिवर्तन की व्यस्तता मे अपने लक्ष्य को याद रखना और उसकी प्राप्ति के लिए प्रयत्नशील रहना मनुष्य का धर्म है।

सवसे बडी कठिनाई मनुष्य के लक्ष्य-चुनाव मे आती है क्योकि जो अवस्था लक्ष्य-चुनाव की होती है, वह इतनी कोमल होती है कि उसमे दृढता नही आ पाती। यह सभी जानते हैं कि प्राणी स्वभाव से सरलता की ओर झुकता है। यह भी सत्य है कि प्रत्येक वस्तु पहले सरल लगती है फिर कठिन। उस अपरिपक्व अवस्था मे वह सरलता की दृष्टि से अपने लक्ष्य की खोज किए बिना ही चल देता है। एक वह क्षण आता है, जबकि चौराहे पर वह खडा होता है। यहाँ उसकी बुद्धि की परीक्षा होती है। जिसमे यह बुद्धि होगी, वह निश्चय ही अपने लक्ष्य के चुनाव मे सफल होगा।

लक्ष्य-विहीन जीवन की गति नष्ट हो जाती है। क्योकि जव हमारा कोई लक्ष्य ही नही, तो हम चले कहाँ के लिए? केवल उदास होकर वैठ जायेंगे। इस वैठने का नाम मृत्यु है—एक कवि ने कहा है—

हो गया जो थिर कभी, पाषाण कहना चाहिए।
एक गति मे जीव को, इसान कहना चाहिए॥

प्रगतिशीलता ही जीवन है। यह प्रगति तभी सम्भव है, जबकि जीवन का लक्ष्य हो—यह लक्ष्य कैसा और क्या होना चाहिए? यह प्रश्न अवश्य ही कठिन है। क्योकि जीवन के अनेक लक्ष्य हो सकते हैं। परन्तु यह तो मानना पडेगा कि व्यक्ति का लक्ष्य पहचानना आवश्यक है। इसके लिए सवसे वडी आवश्यकता है—अपनी प्रकृति और कार्यक्षमता पहचानने की। मानो हमने लक्ष्य इतना ऊँचा खोज लिया, परन्तु हममे सामर्थ्य नही है। ऐसी अवस्था मे प्राणी धोखा खाता है। अपनी शक्ति को पहचानकर लक्ष्य चुनना चाहिए, कहा है—

अपनी पहुँच विचारिकै करतब करिये दौर
तेते पाँव पसारिये जेती लाँबी सौर। —(वृन्द)

लक्ष्य कोई भी हो—उसका उद्देश्य महान् होना चाहिए। लक्ष्य ऐसा होना चाहिए जिसके मिलने पर हम मानवता की किसी प्रकार रक्षा कर सकें। जिसने हमें जीवन दिया है, उस चैतन्य की छटा कण-कण में है। हमारा लक्ष्य यह है कि जिन्हें वह छटा दृष्टिगत नहीं है, उन्हें दिखावें। केवल अपने ही जीवन को सुखी बनाने का नाम मानवता नहीं है। गुप्त जी ने कहा है—

मनुष्य है वही कि जो मनुष्य के लिए मरे,
यही पशु प्रवृत्ति है कि आप-आप ही चरे।

इस चेतनता का इतिहास बड़ा विस्तृत है। अपने जीवन में दूसरों के जीवन को सरल बनायें, यही जीवन का लक्ष्य है। यदि आप जीवन में किसी जीवन को सरल बना सकें और उसके साथ चल सकें तो निश्चय ही जीवन का लक्ष्य मिल गया—उस कलाकार की पंक्ति इस रूप में कितनी मार्मिक है—

दो कदम किसी के साथ चल लिया,
समझ लिया कि आदमी महान् है।
साँस भर किसी के साथ जी लिया,
समझ गया कि जिन्दगी विहान है।

एक दिन वृक्ष मुझे बता गई कि आदमी दुलार के समीप है।

भाव यह है कि जीवन आँख-मिचौनी नहीं है। सफलता प्राप्त करने के लिए जीवन के लक्ष्य का महत्त्व समझो और इस जीवन-चादर पर किसी प्रकार का काला दाग न आने दो। कबीर के शब्दों में इस जीवन-चादर को 'जतन से ओढ़े'-तभी उस महान् लक्ष्य की प्राप्ति होगी। जीवन के लक्ष्य के प्रति भिन्न-भिन्न संकेत महापुरुषों और चिन्तकों ने दिए हैं। एक नवीन कवि की पंक्ति में उनका लक्ष्य देखिए—

एक फूल झर गया जमीन पर, कह गया कि देह नाशवान है।
मगर, जियो जहाँ सुगन्ध दे सको, विश्व को नवीन रूप दो, विधान है।

फूल की तरह मरना और जीना ही जीवन का लक्ष्य है। भर्तृहरि ने कहा है—

कुसुमस्तवकस्येव द्वे वृत्ती तु मनस्विन,
देवालये समर्प्येत वशीर्येत वनेऽथवा।

हमारे विचार मे जीवन का लक्ष्य सदुद्देश्य होना चाहिए। यह लक्ष्य लोककल्याण-कामना से प्रेरित होना चाहिए। हमारा जीवन ससार की मानवता की रक्षा मे लीन हो जाए यही महान् लक्ष्य है। इस लक्ष्य की पूर्ति के लिए प्रत्येक कठिनाई का सामना करना चाहिए। सघर्षो मे हम अपना सुन्दर लक्ष्य न भूलें—यही मनुष्यता है और मानव का कल्याण करें—यह है जीवन का लक्ष्य।



राष्ट्रीय एकता

मनुष्य सामाजिक प्राणी है। समाज समुद्र के समान है और व्यक्ति एक बूद है। बूद से ही समुद्र का निर्माण होता है। परन्तु बूद का अस्तित्व समुद्र मे है और समुद्र की विशालता बूद से है। इसी प्रकार मनुष्य अकेला नही रह सकता। जिस दिन वह जन्म लेता है, उस दिन से लेकर मृत्यु पर्यन्त अर्थात् शरीर के भस्म होने तक वह समाज पर निर्भर है। इसलिए वह समाज से अलग रहकर किसी प्रकार सफलता प्राप्त नही कर सकता।

जीवन को जब हम जरा समीप से देखते है तो लगता है कि यह जीवन कितने तत्वो की एकता मे बना है। किसी एक तत्व के पृथक् होते ही सारा मेल विगड जाता है। शरीर की ऊपरी आवश्यकताओ को पूरा करने के लिए माता-पिता, बन्धु-बांधवो का सहारा लेते हैं। इनमे सहयोग है—एक ऐसी माला है जो कही समाप्त नही होती, कही गाठ नही टूटती। जिस दिन यह

गाठ टूट जाय, उमी दिन यह समाज रूपी माला टूट जाए। जिम व्यक्ति को जीवन मे इस एकता के आधार पर जितना सहयोग मिला, वह उतना ही उन्नत हो गया। मनुष्य का प्रत्येक क्षण दूसरे की आवश्यकता अनुभव करता है। जिम व्यक्ति के जीवन मे जितने ही अधिक हितैषी और मित्र है, वही इस जीवन के सघर्ष मे जीतते हैं, अन्यथा फिर पराजय और कष्ट ही इनके परम साथी हैं।

एकता का अर्थ है सघ और सघ का अर्थ है समूह अर्थात् जहाँ वहुत से व्यक्ति मिलकर एक उद्देश्य की सफलता के लिए प्रयत्न करें। एकता वही होती है—जहाँ विचार, इच्छा, क्रिया और उद्देश्य समान हो। यह एकता जहाँ होगी, वहाँ सफलता चरण चूमती है। विजयोल्लास चन्दन लगाता है, और स्फूर्ति प्रकाश का किरीट पहनती है। ससार के जितने वडे काम है, इसी एकता के जीते-जागते सफल परिणाम हैं। हम दूर क्यो जायें, आज हम जिस स्वतन्त्रता की छाया मे हस खेल कर अपना सुखमय जीवन विता रहे है, यही एकता का प्रवल प्रमाण है। परतन्त्रता अकेलेपन अर्थात् एकता के अभाव का दुष्परिणाम है। यदि पहले से यह एकता हम भारतीयो मे होती तो क्या सदियो तक हम परतन्त्र रहते ? नही, यही एकता थी जिसने वडी से वडी सत्ता के पैर कँपा दिये।

यह एकता केवल मनुष्य जाति मे ही नही पाई जाती, अपितु पशु-पक्षियो, यहाँ तक कि जड प्रकृति मे भी पाई जाती है। एक जाति के पशुओ को सेना किसे परास्त नही कर सकती ? किसी एक पशु को सताने पर सव मिलकर किस प्रकार आन्दोलन करते हैं—वह सर्वविदित है। कभी एक फूल के खिलने से भी मधुमास का स्वागत कोई करता है। एक तारे के निकलने पर भी कोई उसे रात कहता है। इस प्रकार हम देखते है कि एकता मे ही शक्ति है। जव एकता होती है तो थोडे से साधन भी पूर्ण सफलता प्रदान करते है। नीतिशतक मे भर्तृहरि ने कहा है—कि धागे का वैसा कोई महत्व नही, परन्तु जव धागे वहुत से मिल जाते हैं, तो उससे वलवान हाथी

भी बाँधा जा सकता है। इसी प्रकार हम एक डोरे को तोड सकते हैं, परन्तु जब कोई डोरे मिल जाते हैं तो हम नही तोड पाते। एकता की यही शक्ति है—जिस पहाड को देखकर भय लगता है, उसे ही एकता क्षण भर मे छिन्न-भिन्न कर देती है। वडे-वडे पुल, बाँध, सडकें, भवन, दुर्ग तथा अनेकानेक दर्शनीय स्थान एकता के स्पष्ट प्रमाण है।

इतिहास उठाकर देखिए, जो जाति परस्पर मे जितनी सुसगठित रही वही ससार मे सब जगह बलवती और विजयिनी सिद्ध हुई। जहाँ यह एकता नही है, वहा फूट, ईर्ष्या, द्वेष और कलह जन्म लेते है। इससे जाति की चित्त-वृत्ति खराब हो जाती है। स्वार्थ बढ जाता है। इसका प्रभाव यह होता है, कि जाति अवनति की ओर जाती है। जहाँ एकता है, वहाँ जीवन के सभी अगो की दृष्टि से सदा उन्नति होती है।

आज के सामाजिक विकास के लिए राष्ट्रीय एकता अत्यन्त आवश्यक है। आज हम एक ऐसे युग मे पाँव रख रहे हैं, जहाँ अनेक विपत्तियो की आशका है। उसके लिए एकता की नितान्त आवश्यकता है। जहाँ एकता है वहा विपत्तिया भी आते डरती है। ठीक ही कहा है—सघे शक्तिः कलौयुगे।

इसी एकता को महत्त्व देते हुए पिछले दिनो भारत के प्रधान मन्त्री श्री नेहरू ने राष्ट्रीय एकता पर वल देते हुए कहा था कि "न केवल किसी विशेष जाति या समाज के लिए अपितु समस्त मानवता के हित के लिए राष्ट्रीय एकता परम आवश्यक है। जब तक राष्ट्रीय एकता की भावना मनुष्य मे नहीं आयगी तब तक कल्याण नही होगा। आए दिनो छोटी-छोटी समस्याओ को जन्म देकर अनशन इत्यादि करना राष्ट्रीय एकता मे वाधक है। राष्ट्र ही महान् है इसको शक्तिशाली, सुदृढ और उन्नतिशील बनाने के लिए राष्ट्रीय एकता का मूल एव पवित्र मन्त्र पढना होगा।"



दाशमिक और मोटर प्रणाली

ससार के सभी देशो मे विचार विनिमय और वस्तु विनिमय के लिये कोई न कोई माध्यम अवश्य है। परिणाम स्वरूप ससार मे अनेक भाषाएँ और सिक्का प्रणालियाँ प्रचलित है। सिक्का प्रणाली के इतिहास और प्रचलन पर दृष्टिपात करने से पहले यह कहना आवश्यक है कि वस्तु—विनिमय के लिए मनुष्य को सिक्का प्रचलन से पहले बहुत अधिक कठिनाई और असुविधा रहती होगी। एक वस्तु को प्राप्त करने के लिए अपनी वस्तु देना आवश्यक था। जिसके लाने और ले जाने मे बडी कठिनाई होती थी। जैसे-जैसे लोग सभ्य हुए अपने व्यापारिक क्षेत्र मे सुविधा की आवश्यकता अनुभव करने लगे।

भारत मे सिक्का प्रणाली और भारतीय मुद्रा का इतिहास विशेष रूप मे अंग्रेजो के आगमन से ही गिना जाता है। जब ईस्ट इण्डिया कम्पनी ने व्यापार शुरू किया और बाद मे भारतीय इलाको को जीतना शुरू किया उस समय उत्तरी भारत मे सोने और चाँदी दोनो के सिक्के समान रूप मे प्रचलित थे। सोने के सिक्को के साथ चाँदी के सिक्के भी चलते थे, पर साधारणतया दोनो मे आपसी बदल की दर कानूनी तौर से निश्चिय नही थी और बदल की दर निश्चित की भी नही जा सकती थी क्योकि सब राजा और सरदार तथा कभी-कभी सूबेदार भी अपने-अपने सिक्के चलाते थे। दक्षिणी भारत मे सामान खरीदने और मूल्य आँकने के लिये आमतौर से सोने के सिक्को का चलन था एक खोज से पता चला है कि उस समय अलग-अलग वजन के ९९४ किस्म के सोने और चाँदी के सिक्के प्रचलित थे। इनमे धातु की शुद्धता का परिमाण भी अलग-अलग था। अंग्रेजो ने भारत मे एक प्रकार की सिक्का प्रणाली का प्रचलन किया जो रुपए, आने और पाइयो के अनुमान मे गिना जाता था।

अब तक यह सिक्का प्रणाली प्रचलित थी। परन्तु सन् १९४८ मे भारतीय विज्ञान कांग्रेस ने दाशमिक प्रणाली के महत्त्व को समझा और उसी वर्ष विधान सभा मे भी सिक्को के दशमीकरण करने के बारे मे एक विधेयक पेश किया गया। तब से जनमत उत्तरोत्तर दाशमिक सिक्के अपनाने के पक्ष मे

होता गया और १९५५ मे भारत सरकार ने इस सम्बन्ध मे ससद मे एक विधेयक पारित किया जिसके अन्तर्गत भारत सरकार को दाशमिक सिक्के चालू करने का अधिकार मिल गया। जिसके परिणाम स्वरूप अप्रैल, १९५७ से ये नए सिक्के कानूनी बन गए। इस प्रश्न पर भारत सरकार पिछले दस वर्ष से विचार कर रही थी योजना आयोग, राज्य सरकारो और रिजर्व बैंक ऑफ इण्डिया से परामर्श करके भारत सरकार ने काफी सोच विचार के बाद यह फैसला किया। बहुत से देशो ने दाशमिक प्रणाली को अपनाया है। यहा तक कि एशिया के कई देश दाशमिक सिक्के अपना चुके हैं।

इस नई प्रणाली के अन्तर्गत रुपये का मूल्य और नाम वही रहेगा। अठन्नी और चवन्नी का मूल्य भी नही बदलेगा। रुपए को सौ समान भागो मे बाँटा गया है और प्रत्यक भाग पैसा कहलाता है। पहले रुपए के ६४ पसे और १९२ पाइयाँ होती थी। शुरू मे इस नए ढग के पैसे को "नया पैसा" कहा जाता था कुछ अवधि के बाद "नया" विश्लेपण हटा लिया गया। "पैसा" भारतीय मुद्रा की सबसे छोटी इकाई है। अन्य सिक्के हैं २, ३,५, १०, २५ और ५० पैसे।

दाशमिक प्रणाली दुनियाँ भर मे सिक्को की सरलतम प्रणाली के रूप मे स्वीकार की गई है। इससे हिसाब-किताब जल्दी और आसानी से हो सकता है। दाशमिक सिक्को मे कुछ ऐसी विशेपताएँ है जो अन्य सिक्को मे नही पाई जाती। सबसे पहले सन् १८६७ मे भारत मे सिक्का प्रणाली चालू करने का प्रयत्न किया गया। सन् १८७१ मे एक अधिनियम भी बनाया गया परन्तु विविध कारणो से उसे क्रियान्वित न किया जा सका। अब भी श्री राजगोपालाचार्य ने अपने वक्तव्य मे दाशमिक सिक्का प्रणाली का प्रचलन हेय सिद्ध किया है।

दूसरे देशो मे दाशमिक मुद्रा प्रणाली के प्रचलन का इतिहास इस प्रकार है कि विश्व मे लगभग १८० देशो मे मुद्रा का प्रचलन होता है जिनमे से १०५ देशो ने दाशमिक सिक्का प्रणाली अपनाई हुई है। अमेरिका ने सर्वप्रथम (सन् १७८६ और १७९२ मे) दाशमिक प्रणाली अपनाई और डालर को

इकाई माना । जल्दी ही (सन् १७९९ और १८०२ मे) फ्रान्स ने यह प्रणाली अपने यहा चालू कर दी और उसकी प्रणाली को लैटिन सघ के देशो ने (१८६५)मे अपना लिया । दाशमिक प्रणाली अपनाने वाले कुछऔर देशो के नाम और कोष्ठक मे अपनाने का सन् इस प्रकार है—जर्मनी (१८७३) डेनमार्क, नार्वे, स्वीडन और आइसलैंड (१८७५), आस्ट्रिया-हगरी (१८७०-फिर १८९२ मे विकसित) और रूस (१८९३ और १८९७), लैटिन अमेरिका के देशो और जापान (१८७१) ने भी इसी मार्ग का अनुसरण किया ।

जिन देशो ने यह प्रणाली नही अपनाई उनमे ब्रिटेन सर्व प्रमुख है । वहा दाशमिक प्रणाली के लाभ सर्वत्र स्वीकार किए जाते हैं पर उसे अपनाने मे कई व्यवहारिक कठिनाइया है । मुख्य कठिनाई यह है कि वहाँ हिसाव-किताव करने मे स्वचालित मशीनो का व्यापक प्रयोग होता है । ये सव मशीनें पुरानी मुद्रा प्रणाली पर आधारित हैं । नई प्रणाली के अपनाने से सव पुरानी मशीनें वेकार हो जायेंगी । इसी कारण वहा दाशमिक प्रणाली न अपनाई जा सकी । ब्रिटेन के इस अनुभव से हमे एक चेतावनी मिलती है कि भारत मे मुद्रा सुधार करने का सवसे उपयुक्त समय यही है । भारत औद्योगिक उन्नति के युग मे प्रवेश कर रहा है जिसमे अगले दस-पन्द्रह वर्षों मे ही भारत की अर्थ-व्यवस्था काफी जटिल हो जाएगी । यहा भी हिसाव-किताव भी हजारो लाखो मशीनो का प्रयोग होने लगेगा । भारत मे अभी तक स्वचालित मशीनो या सिक्का डालने पर काम करने वाली मशीनो की सख्या काफी कम है । वैज्ञानिक यन्त्र वनाने वाले उद्योग भी अभी शैशव अवस्था मे ही हैं । यदि फिलहाल कुछ समय के लिए यह प्रणाली लागू करना स्थगित कर दिया गया तो चालू प्रणाली के अनुरूप वहुत अधिक मशीनें आदि वन चुकेंगी और उनको वदलने मे अव से कही ज्यादा खर्च होगा ।

दाशमिक प्रणाली के लिये आवश्यक सिक्के अलीपुर (कलकत्ता) और वम्बई की दो वडी टकसालो और हैदरावाद की छोटी टकसाल मे ढाले जाते हैं । भारत जैसे वहु जनसख्या वाले देश मे यह कार्य वहुत विशाल पैमाने

पर होगा और हाल मे प्राप्त सूचना के अनुसार प्रतिदिन उत्पादन लक्ष्य निश्चित करके शीघ्रातिशीघ्र इस कार्य को सुगमतापूर्वक कार्यान्वित किया जा रहा है। नि सन्देह इस सक्रमण काल मे कुछ कठिनाइयाँ और रुकावटें आयेंगी पर आशा की जाती है कि सरकार और जनता के सहयोग से अवश्य ही सफलता प्राप्त होगी।

सिक्का प्रणाली मे सुधार और परिवर्तन का प्रभाव प्रत्येक व्यक्ति पर आ पडेगा। इसलिए इसका महत्त्व वहुत अधिक है। सुधार की मफलता के के लिए जरूरी है इस योजना को और इसकी समस्याओ को अच्छी तरह समझा जाए तथा इस परिवर्तन को सुगम और सरल बनाने के लिए इससे सम्वन्धित प्रत्येक व्यक्ति सहयोग दे। जनता मे दाशमिक प्रणाली अपनाते समय अनावश्यक रूप से घवराहट न फैले इसके लिए यह आवश्यक है कि जनता इस सुधार को समझे।

सिक्का मे जिस प्रकार दाशमिक प्रणाली अपनाई गई है उसी प्रकार नाप और तोल मे भी यही प्रणाली अपनाई है। नाप के लिए जो नया चार्ट अपनाया है उसकी सूची इस प्रकार है—

10 किलो मीटर	=	1 सैंटीमीटर
10 सैंटी मीटर	=	1 डैसी मीटर
10 डैसी मीटर	=	1 मीटर
10 मीटर	=	1 डेका मीटर
10 डेका मीटर	=	1 हैक्टो
10 हैक्टो मीटर	=	1 किलो

स्वी

भी

जा

10 मिली ग्राम	=	1 सैंटी ग्राम
10 सैंटी ग्राम	=	1 डैसी ग्राम
10 डैसी ग्राम	=	1 ग्राम
10 ग्राम	=	1 डेका ग्राम
10 डेका ग्राम	=	1 हैक्टो ग्राम
10 हैक्टो ग्राम	=	1 किलो ग्राम

इस प्रकार दाशमिक प्रणाली का दिनो दिन प्रचार हो रहा है।



भारतीय संस्कृति

ससार मे प्रमुख रूप से दो सस्कृतियो का प्रचलन है। एक पूर्वीय सस्कृति और दूमरी पश्चिमीय सस्कृति। पूर्वीय सस्कृति का इतिहास अत्यन्त प्राचीन है और रोम, मिस्र तथा भारतवर्ष इस सस्कृति के मुख्य देश हैं। एक प्रकार से समस्त एशिया खण्ड पूर्वीय सस्कृति का समर्थक और प्रेरक है, जबकि यूरोप पश्चिमी सस्कृति को जन्म देकर ससार मे भौतिक सिद्धान्तो के महत्त्व को प्रकट करता है। पूर्वी और पश्चिमी सस्कृति मे विल्कुल भिन्न-भिन्न दृष्टि-कोण हैं। पूर्वी सभ्यता का आध्यात्मिक विचारधारा को लेकर ससार मे सुख और शांति का सृजन करने का दावा करती है। जबकि पश्चिमी सभ्यता भौतिक सुखो की प्राप्ति के लिए ही है।

भारतवर्ष की सभ्यता और सस्कृति के आधार आत्मिक सुख पर निर्भर हैं। भारतीय सस्कृति द्वारा ससार मे ऐसे आदर्शों की रचना हुई है जिनके द्वारा एक ऐसा पवित्र सस्कार ससार मे प्रचलित हुआ जिसके कारण ससार मे भारतवर्ष का नाम वडी श्रद्धा के साथ लिया गया और एक ऐमा समय आया जब भारतवर्ष को ससार ने देवताओ का देश कहकर पुकारा। भारतीय सस्कृति

के मूल सिद्धान्त "परोपकाराय सता विभूतय" तथा "वसुधैव कुटुम्बकम्" की भावना से भरे पडे है। भारतीय संस्कृति मे शरीर के सुख के लिए अधिक महत्त्व नही है, परन्तु आत्मा की उन्नति और शान्ति के लिए आध्यात्मिक त्याग अपनाया गया और जिसके द्वारा ससार को ऐसा मार्ग दिखाया गया जिसकी छाया मे रहकर ससार ने सुख और शान्ति की सांस ली थी।

सर्वे भवन्तु सुखिन सर्वे सन्तु निरामया ।
सर्वे भद्राणि पश्यन्तु मा कश्चिद् दु खभाग्भवेत ॥

इस प्रकार के सिद्धान्तो के कारण ही भारतवर्ष जगत्-गुरु कहलाया था पिछले २०० वर्षों से भारतवर्ष की सभ्यता और सस्कृति मे एक परिवर्तन-सा होता चला गया। जिस कारण आज विश्व मे भारत का स्थान नगण्य है। अपनी प्राचीन सभ्यता और सस्कृति को निर्जीव मानकर भारतीय जनता ने अपने आप को भुलावे मे डाल लिया है और अपने उन आदर्शों को खो दिया है जिनके कारण भारतीय लोगो का प्रभाव ससार मे अद्वितीय था। यदि हम अपने पूर्वजो के जीवन का अध्ययन करे, तो पता लगेगा कि भारतीय लोगो की आयु, बल, यश, बुद्धि, वीरता, कला सब कुछ अनन्त थे और सादा जीवन तथा उच्च विचार का महान् आदर्श अपनाकर वे ससार मे सुख और शान्ति की स्थापना करते थे।

आज के युग मे अनुकरण और अर्थ का महत्त्व इतना अधिक हो गया है कि मनुष्य के जीवन मे अत्यधिक बनावट आ गई है और वह अपने सभ्य ढग से अपने भौतिक उपभोगो के लिए प्रयत्न करता है ससार की इस दौड-धूप के वातावरण मे अविश्वास और स्वार्थ बढ रहा है जिनके कारण दु ख तथा दरिद्रता बहुत अधिक होती जा रही है। हमे अपनी प्राचीन सभ्यता और सस्कृति को पुन जीवित करने की आवश्यकता है। जिससे हमारा देश अपने उस गत गौरव को प्राप्त कर सके जिसके बल पर उसने ससार पर अपना प्रभाव जमाया था। भौतिक-बन्धनो से मुक्ति प्राप्त हो और जीव परमात्मा को पाकर परम ब्रह्म हो जाए।

भारतीय सम्कृति का साहित्य वहुन प्राचीन है और वेद, पुराण उपनिपद आदि ऐसी अनेक पुस्तकें हैं जिनसे भारतीय सस्कृति की परम्परा और इतिहाम का पता चलता है। भारतीय सस्कृति की विचारधारा लेकर जिस सम्यता का भारत मे प्रचलन हुआ उस सम्यता की धारा को वदलने मे इतिहास का वहुत वडा हाथ है। जैमे-जैसे विदेशी शासको ने भारत पर अपना आधिपत्य जमाया वैमे-वैसे ही भारतीय सस्कृति और सम्यता की सरिता मे उथल-पुथल और परिवर्तन हुए। फिर तो भारतीय सम्कृति और सम्यता के सिद्धान्त इनने पुराने और दृढ मिद्ध हुए कि इन सव परिवर्तनो से भी पूर्णतया इमे नहीं मिटा पाये।

सम्यना, सस्कृति का सम्वन्ध जलवायु से होने के कारण मानव-प्रकृति वदलती है। इसी प्रकार भारतीय दार्शनिक और आध्यात्मिक स्वभाव भारत के लोगो मे पाया जाता है। वे भौतिक समस्याओ को उतना महत्वपूर्ण नही मानते जितना कि यूरोपादि देशो मे माने जाते हैं। परन्तु अव धीरे-धीरे भारतीय सस्कृति पर पश्चिमी सम्यता का प्रभाव वढता जा रहा है, और भारत इस वैज्ञानिक युग मे भौतिक सिद्धान्तो की प्राप्ति के लिए उसी दृष्टिकोण से सोचने लगा है। जिसमे यूरोपीय देश सोचते हैं। अव तक के इतिहास और घटनाओ से हम यह अनुभव कर सकते हैं कि भारतवर्ष की सम्कृति आज विदेशो को प्रभावित कर रही है परन्तु अपने देश मे ही भारतीय सम्कृति का ह्रास हो रहा है। आज विज्ञान का युग है और इस विज्ञान के युग मे प्राचीन सम्यता के रूप व रग को नई सम्यता के ढाँचे मे ढालकर उपस्थित करना आवश्यक है। तभी देश की उन्नति हो सकेगी, तथा उन महानतम आदर्शों का पुन प्रभाव वढ सकेगा जिनके कारण ससार सुख और शाँति की साँस लेता था। कवि इकवाल की इन पक्तियो मे कितना हृदयग्राही भाव है—

यूनानो मिश्र रूमा सव मिट गये जहाँ से।
वाकी मगर है अव भी हिन्दोस्ताँ हमारा॥



आदर्श विद्या केन्द्र

भारत की स्वतन्त्रता के आगमन से प्राचीन इतिहास ने एक आश्चर्य-जनक करवट बदली और भारत परतन्त्रता के बन्धन काटकर सबल और समर्थ बनने के लिए पूर्ण साहस के साथ खडा हो गया । देश का बच्चा बच्चा अपनी तथा अपने देश की उन्नति के लिए और आगे बढने के लिए कमर कसकर तैयार है । देश को सुखी, समृद्धिशाली और आदर्श शिक्षा केन्द्र बनाने के लिए दिन और रात एक करके नई से नई योजनायें बनाई जा रही हैं और कार्य हो रहे हैं ।

किस प्रकार की शिक्षा हो और किस प्रकार के शिक्षा केन्द्र हो यह समस्या सबसे अधिक महत्वपूर्ण है । बडे-बडे विचारक, अनुभवी विद्वान लोग इस विषय के सम्बन्ध मे अपने क्या विचार रखते है और क्या नही, उन सब पर टीका टिप्पणी करना ठीक नही है । परन्तु यह निश्चय-पूर्वक कहा जा सकता है कि इस समय जो देश के विद्यालयो के रूप हैं वे इतने समर्थ नही कि उनमे शिक्षा पाकर लोग देश के भावी विराट रूप को प्रत्यक्ष करने के योग्य बन सकें । आज के विद्यालयो मे तो केवल लार्ड मेकाले के ढाँचे में ढालकर बाबू और क्लर्क ही तैयार किए जा सकते है । आज की शिक्षा प्रणाली के विद्यालय देश मे ऐसे ज्ञान का निर्माण करने की क्षमता नही रखते जिनमे शिक्षा पाकर देश पर अपना शीश बलिदान करने वाले देश भक्त, मानवता को जीवित रखने के लिए जीने वाले सच्चे सेवक, देश तथा समाज की समस्याओ पर धीरता, वीरता और गम्भीरता के साथ विचार करने वाले कर्मठ बन पायें । आज के विद्यार्थियो का जीवन आकाश बेल की भांति और बालू पर बने मकान की तरह लक्ष्यहीन और निकम्मा साबित होता है । "देश पर भार बनकर जीने मे पाप है" यह उन लोगो के मन मे कभी नही आ पाता । विद्यालयो मे कहीं अंग्रेजी का समर्थन है, कहीं धर्म का विरोध और कहीं व्यापार के लिए भाग दौड हो रही है ।

आज के विद्यालयों के विस्तार और कार्य को देखकर शिक्षा और शिक्षा केन्द्र का क्या उद्देश्य है यह बात कल्पना और विचार से बाहर की-सी बात प्रतीत होती है, क्योंकि पढाई के उपरान्त किस व्यवसाय मे मनुष्य अपने जीविकोपार्जन के साथ-साथ अपने जीवन के उज्ज्वल भविष्य की समस्या को सुलझाये । विद्यार्थी को प्रारम्भिक व माध्यमिक कक्षाओ मे कोई ऐसा सकेत या प्रेरणा देने का स्रोत नही जिससे कि वह ठीक प्रकार अपने पाठ्यक्रम व लक्ष्य को समझकर आगामी जीवन के बारे मे कोई स्पष्ट मार्ग निर्धारित कर सके ।

विद्यालय को हम साधारण रूप से विद्या प्राप्त करने का केन्द्र ही मानते है । वास्तव मे बात भी यही है, क्योकि ससार भर के महापुरुषो के जीवन इस बात के प्रमाण हैं कि उन्होने विद्यालयो मे सही शिक्षा प्राप्त कर ससार के सामने प्रतिभा और योग्यता के अनुसार तरह-तरह के आविष्कार और निर्माण के कार्य किये । उनकी योग्यता और प्रतिभा का विकास करने का श्रेय विद्यालयो की शिक्षा-पद्धति को ही है । मनुष्य स्वय ज्ञानवान पैदा नही होता उसमे केवल प्रतिभा और योग्यता होती है परन्तु विद्यालयो के सस्कार उस व्यक्ति को महान् बना देते है । विद्यालय के पाठ्यक्रम और अध्यापको के उपदेश व्यक्ति के मार्ग और लक्ष्य को निर्धारित करने मे अधिक सहायक होते हैं।

जब हम यह मानते है कि मनुष्य और देश की उन्नति प्रेरणा तथा नवनिर्माण मे विद्यालयो का हाथ अत्यन्त महत्वपूर्ण है तो यह भी बहुत आवश्यक है कि विद्यालय किन आदर्शों को लेकर चलें जिससे अधिक से अधिक ज्ञान रचना का कार्य सम्पन्न हो सके ।

पहले जमाने मे हमारे देश मे नालन्दा और तक्षशिला जैसे विश्व विद्यालय और शिक्षा केन्द्र थे, जहाँ ससार भर के देशो के विद्यार्थी और अध्यापक सरस्वती की आराधना करते हुए आध्यात्मिक व भौतिक ज्ञान के महान् आदर्शों की स्थापना किया करते थे ।

उस ज्ञान के अमृत को पाकर ससार सुख और शान्ति के वातावरण मे भरा रहता था। परन्तु मनुष्य की स्वार्थी और जघन्य प्रेरणाओ ने युद्धो की विभीषिकाओ के अन्तर मे उन आदर्श विद्यालयो को लुप्त कर दिया। केवल उनकी याद बाकी है। सुना जाता है मीलो तक प्राकृतिक सुरम्य स्थली मे सहस्त्रो की सख्या मे विद्यार्थी रात-दिन ज्ञानार्जन की साधना मे लगे रहते थे। स्वर्गीय आदर्शो की प्रतिष्ठापना करने वाले उन विद्यालयो की स्मृति आज भारतीय इतिहास के पृष्ठो मे धु धली हो चली है।

हमने वर्तमान युग के शान्ति निकेतन जैसे आदर्श विद्यालय के वातावरण के बारे मे और वर्धा आश्रम के शिक्षा केन्द्र के बारे मे सुना है। गुरुकुलो के बारे मे भी सुना है और साथ ही बढती हुई आवश्यकता के कारण शिक्षा केन्द्रो को कारखाने के समान अलग शिफ्टो मे कार्य करते देखा है। प्रश्न उपस्थित होता है कि इन सब तरह के विद्यालयो मे किस विद्यालय को हम आदर्श विद्यालय कहे।

जिस विद्यालय के द्वारा पूर्वीय और पाश्चात्य सभ्यताओ के सघर्ष के बीच अपने सभी कार्यों और विचारो मे समन्वय कर नवीनतम ढग मे जन-जीवन और देश की सुख शान्ति की खोज हो। सामाजिक और नैतिक उन्नति के लिए सन्तुलित दृष्टि पैदा करने का लक्ष्य आये।

जिन विद्यालयो मे सस्कृति, सभ्यता, सदाचार के आदर्शो को लेकर प्रकृति के सुरम्य और स्वच्छन्द वातावरण मे कार्य करने की व्यवस्था हो। देश के लिए आदर्श नागरिक, कर्मठ कार्यकर्त्ता एव भावी सेनानी उत्पन्न करके सामाजिक, सास्कृतिक, राजनीतिक और कलात्मक शक्तियो का विकास करने की क्षमता हो। मनोविज्ञान और वैज्ञानिक खोज व आविष्कारो से देश की समृद्धि और वैभव के भावो को कार्यरूप मे परिणत करने का आत्मविश्वास जहाँ पैदा हो। देश की भावी पीढ़ी केवल अपनी जीविका के लिए ही नही अपितु आध्यात्मिक, बौद्धिक, शारीरिक, भौतिक शिक्षाओ का समन्वय करके देश के अन्दर प्रतिभावान, विचारशील, फौलाद जैसे बलिष्ठ और शक्तिशाली व्यक्तियो का निर्माण कर सके।

आदर्श विद्यालय केवल कल्पना की बात नही हमारे देश ने तक्षशिला, नालन्दा, शान्तिनिकेतन, वर्धाश्रम जैसे आदर्श विद्यालयो को जन्म दिया है और ससार मे विद्या तथा ज्ञान का प्रकाश फैलाया है। आशा है निकट भविष्य मे देश के भावी कर्णधार आदर्श विद्यालयो मे शिक्षा प्राप्त करके देश के गौरव को उज्ज्वल करेंगे। स्वत त्र भारत मे हम फिर उन आदर्श विद्यालयो के दर्शन करें जहाँ द्रोण, चाणक्य, व्यास आदि का मूर्तरूप विद्यमान हो।

आज हम देख रहे है कि नए-नए विद्यालय और विश्वविद्यालय खुल रहे हैं। यह निश्चय ही एक शुभसकेत है। आवश्यकता इस बात की है कि हमारी शिक्षा प्रणाली आदर्श मानव को जन्म दे। विश्वविद्यालय से निकलकर मनुष्य के मस्तिष्क मे विश्वकल्याण की व्यवस्था हो। तिलक, गाँधी और नेहरू के सपनो का भारत जगत-गगन मे सूर्य बनकर प्रभासित हो।



आदर्श-समाज

प्रत्येक राष्ट्र और समाज का आदर्श एक न होने पर भी यह सर्वथा सत्य है कि प्रत्येक सास्कृतिक और मभ्यतात्मक नीति के पीछे मानव के कल्याण को ही सर्वाधिक महत्व दिया जाता है। यद्यपि आदर्श शब्द सार्वभौमिक (Uiversal) होता है फिर भी प्रत्येक राष्ट्र और समाज के आहार, व्यवहार, रहन,-सहन, जलवायु, आचार,-विचार कुल मिलकर एक नही होते। इसी दृष्टि से यह भी कहा जा सकता है कि आदर्श भी इसलिए भिन्न-भिन्न होते हैं। इस भिन्नता को स्वीकार करते हुए भी सामाजिक व्यक्ति का इतना व्यापक दृष्टिकोण अवश्य होना चाहिए कि वह किसी भी राष्ट्र और समाज के कल्याणकारी आदर्श को अपनाने मे सकोच न करे।

'आदर्श' शब्द अत्यन्त प्राचीन है। यह जिससे पहले प्रयोग मे आता है उसके प्रति भक्तिमय श्रद्धा तथा अनुकरण की भावना हृदय मे जागृत होती है। आदर्श सामान्य यथार्थ से उत्कृष्ट होता है। यथार्थ सत्य का रूप होने पर भी कटु हो सकता है परन्तु आदर्श की महत्ता उसके मधुर रूप मे ही है, भले ही उसके लिए कितने ही कष्ट उठाय जाएँ। यथा यदि शरीर है तो आदर्श आत्मा है। आदर्श मे आध्यात्मिकता का संयोजन होता है।

आदर्श-समाज पर विचार करते समय हमारा ध्यान उन आदर्श सामाजिक गुणो की ओर आकर्षित होता है जो मानव को शारीरिक, मानसिक, आत्मिक और सामाजिक दृष्टि से सुखी तथा शान्त बनाते है। जिस समय प्राणी का जीवन आकर्षक हो उस समाज की जीवन पद्धति आदर्श कही जायेगी आकर्षक से मेरा अभिप्राय इस जीवन से है जिसमे जीने की इच्छा, आशा, उत्साह, विश्वास, निर्भयता, कर्त्तव्यपरायणता, मित्रता और परोपकारिता आदि गुण विद्यमान हो।

समाज एक रूप नही है। समाज का सम्बन्ध राजनीतिक, धर्म, साहित्य, अर्थ आदि से अत्यन्त घनिष्ठ है। एक प्रकार से ये समाज के मूल आधार है। समाज को सुदृढ और अनुशासन मे रखने के लिए राजनीति के नियमो का पालन करना आदर्श समाज की पहली शर्त है। राजीनीति के द्वारा न्याय-अन्याय तथा सत्य-असत्य की शुद्ध परख की जाती है। सत्य के लिए पुरस्कार और असत्य के लिए दण्ड का विधान होता है। प्रजातन्त्र मे राजनीति का स्वरूप गम्भीर हो जाता है क्योकि वहा जनता द्वारा, जनता के लिए जनता पर शासन होता है। समाज द्वारा निर्वाचित व्यक्ति सामूहिक विकास के लिए दण्ड विधान करते हैं। शुद्ध प्रजातन्त्र का रूप वहा विकसित होता है जहा वर्गहीन समाज हो। "वीरागना के समान अनेक रूपोवाली" राजनीति की अन्तरात्मा भेद रहित और साम्यमुलक होनी चाहिए। आदर्श समाज वह है जहाँ व्यक्ति राजनीति मे विश्वास और नियम-पालन को जीवन-कर्म समझ कर पालन करता है।

धर्म का क्षेत्र अत्यन्त व्यापक है। व्यक्ति अपने व्यक्तिगत आचरण मे स्वतन्त्र है परन्तु यदि उसका समाज पर कुप्रभाव पडता है तो उसके लिए वह उत्तरदायी है। आदर्श समाज मे धार्मिक स्वतन्त्रता की सबसे बडी विशेषता यह होती है कि भिन्न-भिन्न धर्म परस्पर सहानुभूतिशील और सहनशील होते है। जिस प्रकार अनेक धाराएँ समुद्र मे मिलकर एक रूह हो जाती हैं उसी प्रकार भिन्न-भिन्न धर्म समाज के हित की दृष्टि से एक होते है। धार्मिक पारिवार की एकता अत्यन्त आवश्यक है।

विचार अव्यक्त होते हैं। इन अव्यक्त विचारो को भाषा द्वारा व्यक्त किया जाता है। यही भाषा साहित्य को जन्म देती है। प० महावीर प्रसाद द्विवेदी ने अपने निबन्ध मे साहित्य को महत्ता पर प्रकाश डालते हुए कहा है, "कोई भी जाति या समाज अत्यधिक उन्नत होने पर भी यदि अपना साहित्य रखती तो उसका रूपवती भिखारिणी की तरह समाज मे सम्मान नही होता" आदर्श समाज का साहित्य भी आदर्श होता है। साहित्य के द्वारा समाज को उन्नति के मार्ग पर लाने मे सर्वाधिक सहायता मिलती है। साहित्य समाज को सस्कृत और परिष्कृत करता है। आदर्श समाज का प्राण साहित्य है। बडे-बडे उन्नति राष्ट्र और समाज साहित्य से ही विश्व मे सम्मानित हुए हैं। इसलिए आदर्श समाज का हृदय साहित्य है। यह साहित्य मानव-जीवन को आदर्श पालन, उन्नत और विकास की प्रेरणा दे, यही इस साहित्य का आदर्श है।

आदर्श-समाज की सुव्यवस्था के लिए आर्थिक-व्यवस्था का ठीक होना अत्यन्त आवश्यक है। जीवन की वाहरी आवश्यकताओ की पूर्ति के लिए अर्थ-व्यवस्था का सुचारु रूप से विवरण आदर्श समाज की पूर्ति के लिए अनिवार्य है। यह सर्वथा यथार्थ है कि रोटी, कपडा और मकान के अभाव से सामाजिक जीवन मे अशान्ति फैलती है। यही अशान्ति धीरे-धीरे विद्रोह का रूप धारण कर लेती है। ऐतिहासिक क्रान्तियो के मूल मे यही अशांति पनपी है यह तभी होता है कि जव श्रम-विभाजन नही होता। एक व्यक्ति विना परिश्रम के अपार सुख प्राप्त करता है और दूसरा अपार परिश्रम करने पर भी जीवन को जीवित रखने के साधन नही जुटा पाता। श्रम और धन का असमान वितरण ईर्ष्या और द्वेश को जन्म देता है।

किसी भी समय आसानी से किसी भी जरूरी खर्च समझ कर निकलवाई जा सकती है और खर्च की जा सकती है।

आसानी से निपटारा और लेनदारो से वचाव—बीमे की रकम को लेनदारो से वचाने के लिए बीमा एक आसान तरीका है। वह यह है कि व्यक्ति अपने अभीष्ट को उत्तराधिकारी के नाम वह रकम कर सकता है। इससे लाभ यह है कि मत्यु के बाद वह जिसको चाहता है उसी को वह रकम मिल सकेगी।

इच्छानुसार रकम का विभाजन और लाभ—कई वार ऐसा देखा जाता है कि व्यक्ति जिस उद्देश्य से बीमा कराता है उस व्यक्ति की मत्यु के वाद रिश्तेदारो की नासमझी या स्वार्थ के कारण उससे उस व्यक्ति का परिवार पूरा और ठीक लाभ नही उठा पाता। दूसरी वात यह भी है कि एक दम इकट्ठी रकम मिल जाने पर परिवार भी उसे ठीक ढग से खर्च नही कर पाता। समुचित उपयोग न होने से परिवार ज्यो का त्यो कष्ट मे रहता है। ऐसी स्थिति मे यह लाभ है कि व्यक्ति इसका प्रवन्ध भी कर सकता है। यह उस व्यक्ति की इच्छा पर निर्भर है यदि चाहे तो वह अपनी सारी रकम को मासिक भाग के रूप मे करा सकता है। साथ ही वह व्यक्ति उस रकम को जमा भी करा सकता है। वह रकम निश्चित समय पर व्याज सहित निगम से प्राप्त कर सकता है।

बीमे का व्यापारिक महत्व भी है—यदि व्यक्ति यह अनुभव करता है कि वह बीमे की रकम अदा नही कर सकता तो वह अपनी पालिसी का अधिकरण करा सकता है और रुपया नकद ले सकता है। यदि कोई अस्थायी समस्या उपस्थित हो जाय तो वह किसी बैंक के पास या बीमा कम्पनी के पास पॉलिसी गिरवी रख सकता है और रुपया उधार लेकर अपना काम पूरा करा सकता है।

टैक्स से बचाव भी होता है। भारतीय आय कर अधिनियम के अनुसार कर देने वालो पर अपनी आमदनी के अनुसार कुछ हिस्से पर टैक्स

नही लगता यदि वह रकम प्रीमियम के रूप मे देता है। इसमे उस व्यक्ति को लाभ यह होता है कि वह कम प्रीमियम देकर पूरा लाभ उठाता है।

सपत्ति कर—जैसा कि ऊपर वताया गया है कि जीवन वीमा मत्यु के वाद धन प्राप्ति का अच्छा साधन है और वहुत से धनिक सपत्ति कर देने के लिए इसका सहारा लेते है।

इस प्रकार हम देखते है कि यह जीवन वीमा एक प्रकार का अनुबन्ध है जिसके अनुसार वीमा कम्पनी किसी वीमा कराने वाले को निश्चित समय के पश्चात् या उससे पहले उसकी मत्यु होने पर उसके उत्तराधिकारी को एक निश्चित राशि देने का प्रण करती है। इसीलिए प्रत्येक व्यक्ति को जीवन बीमा कराना चाहिये।



धर्म और विज्ञान

आज मनुष्य के जीवन मे धर्म और विज्ञान का सघर्ष है। प्रश्न यह है कि कौन सच्चा पथ है और आज की शिक्षा हमे क्या देती है तथा क्या देना चाहिये ? शिक्षा का उद्देश्य मानव को सच्चा धार्मिक वनाना है।

विद्यार्थी जीवन मनुष्य के जीवन का वह काल है, जिसके सस्कारो की अमिट छाप उसके भावी जीवन मे भी लगी दीखती है। फूल खिलने के पूर्व कच्ची कली है अर्थात् विद्यार्थी जीवन मे जैसी शिक्षा उनको दी जाती है। वह जीवनपर्यन्त उन्ही सस्कारो और आदर्शों को अपने जीवन मे प्रतिविम्बित करता है। धर्म की शिक्षा के विना शरीर और बुद्धि का पूर्ण विकास नही होता।

धार्मिक शिक्षा का अर्थ पाखण्ड और पापाचार आदि नही। धार्मिक शिक्षा के न होने के कारण ही विद्यार्थी-वर्ग तथा व्यापारी-वर्ग मे हमे

अनुशासनहीनता तथा अनैतिकता के अभद्र दर्शन होते है। यदि मनुष्य को बचपन मे सदाचार तथा धर्म की शिक्षा मिल जाती है तो वह अपने भावी जीवन मे दुश्चरित्र और अनैतिक जीवन का पथिक कैसे हो सकता है? बचपन के सस्कारो की अमर छाप उसको आत्मा तथा आन्तरिक हृदय को शुद्ध बना देती है, इससे उस बालक का हृदय कभी भी अनैतिकता की ओर नही जा सकता। बाल्यकाल के सस्कारो का अत्यधिक महत्व तथा प्रभाव होता है।

किन्तु कुछ लोग कहेंगे कि धार्मिक शिक्षा मे साम्प्रदायिकता बढेगी जो कि देश के लिए अहितकर है। हमारा देश धर्मनिरपेक्ष है। हमारे विधान के अनुसार किसी भी तरह का धर्म प्रचार सरकार का कर्तव्य नही है। तो फिर भारत जैसे धर्म निरपेक्ष राज्य मे धर्म की शिक्षा कैसे सम्भव हो सकती है? ठीक है कि हमारा देश धर्मनिरपेक्ष है, इसका अर्थ धर्म विरोधी नही। इसका अर्थ तो केवल इतना ही है कि सरकार किसी धर्म विशेष का अथवा उसके अनुयायियो को विशेष सुविधा अथवा अधिकार नही देगी। अत स्कूल मे धार्मिक शिक्षा देना कोई अहितकर बात नही। दूसरी बात यह है कि हिन्दू धर्म कोई साम्प्रदाय नही है। वह तो अत्यन्त व्यापक दर्शन है, जो कि प्रत्येक मानव को समुचित धर्म अथवा सामान्य कर्त्तव्य का ज्ञान कराता है और उसको मानव जीवन मे कार्य रूप मे परिणत करने के लिए प्रेरित करता है। ऐसे मानव धर्म की शिक्षा देश के सभी मतावलम्बी यथा सम्प्रदायो के लोगो को लाभ ही पहुचायेगी हानि नही।

प्राचीन काल मे शिक्षा धर्म से भिन्न नही थी। हर विद्यार्थी को चाहे वह किसी भी विषय का हो, धर्म ज्ञान आवश्यक था। वास्तव मे किसी भी जाति या समाज की सस्कृति का सम्बन्ध उसके धार्मिक विचारो के साथ अटूट रहता है। यदि वह जाति अपनी प्राचीन सस्कृति को खो देती है, तो उसके अतीत इतिहास का समस्त गौरव नष्ट हो जाता है। उसने जो अब तक सग्रह किया था, उसके बिना वह कब तक इस ससार मे अपना अस्तित्व रख सकेगी।

प्राचीन काल मे हिन्दू समाज इसीलिए गौरवशाली था कि उस समाज का विद्यार्थी अपने धर्म को जानता था। उसमे धार्मिक शिक्षा ने देश भक्ति मानव के प्रति प्रेम, आदर तथा अपने कर्त्तव्यो का महत्व भर दिया था। वह इसी धार्मिक शिक्षा से महान था। उसे गुरुकुलो मे पढाया जाता था कि ससार मे अपने धर्म से वढकर अन्य कोई वस्तु नही। वह जानता था, ससार का यह जीवन कुछ कर्त्तव्यो के पालन के लिए है। इसी से उस समय का विद्यार्थी राष्ट्र की एक महान विभूति था, राजा लोग भी इन स्नातको के सामने सिंहासन को छोडकर नीचे आ खडे होते थे। आज हमारे समाज के पतन का सबसे मुख्य कारण अपने धर्म मे श्रद्धा न होना है। आज का विद्यार्थी अपने गुरुजनो का आदर करना नही जानता क्योकि उसे यह वताया नही जाता कि धार्मिक दृष्टि से गुरु का क्या महत्व है और यही कारण है कि आज अध्यापक वर्ग को अपमान अपने इन्ही शिष्यो के हाथो से सहना पड रहा है। आज हम शिक्षा से धर्म का वहिष्कार कर रहे है परन्तु ससार के कुछ साम्यवादी देशो को छोडकर अन्य कौन ऐसे देश है, जहा धार्मिक शिक्षा नही दी जाती। ठीक है, हम धर्म का अर्थ केवल काल्पनिक पवित्रता न मानें, केवल मूर्ति पूजा और भूत प्रेतो से भय स्वीकार न करें। जिस सच्चे धर्म का मानव-समाज के कल्याण से सम्बन्ध है, उसकी शिक्षा हमे स्कूलो मे देनी चाहिए।

प्रत्येक धर्म मे कुछ न कुछ न कुछ विशेषताएँ है, समाज के कल्याण की भावनाए है। जैन और वौद्ध धर्म हमे अहिंसा का पाठ पढाते है, त्याग की भावना भरते हैं, सिक्ख धर्म वीरता साहस और देश-भक्ति का प्रतीक है, हिन्दू धर्म की तो विशेषताएँ ही अनेक है। तव आज की शिक्षा मे यदि इन भावनाओं को स्थान नही दिया जाता, तो फिर अधूरी शिक्षा देने से क्या लाभ ? आज की धर्मनिरपेक्ष शिक्षा के परिणाम हम वहुत देख चुके। आज की शिक्षा मे विज्ञान को अधिक महत्व दिया जा रहा है। इससे छात्रो का मस्तिष्क बुद्धि प्रधान हो गया है तर्क के कारण हर अनुचित कार्य को भी तर्क की तराजू पर तोलते हैं। भाव यह है कि विज्ञान के साथ धर्म होना चाहिए ?

राष्ट्रीय धन का अपहरण, सामाजिक दुराचार, चोरी-डाके तथा अन्य अनेक सामाजिक तथा नैतिक पतन यह सब ही तो धर्म निरपेक्ष शिक्षा के परिणाम हैं। प्राचीन धार्मिक शिक्षा कहती थी, पर द्रव्य च लोष्ठवत् और आज पढाया जाता है कि 'सर्वेगुणा कांचनमाश्रयन्ति' ससार के सभी गुण सोने मे हैं अत जैसे भी सम्भव हो, सोना एकत्र करो। केवल वैज्ञानिक होने से इस प्रकार के भाव जागते हैं। कितना अच्छा हो कि धर्म और विज्ञान साथ-साथ चलें। भारत की उन्नति, यश और प्रगति इसी मे ही है। आज का विद्यार्थी भी अपनी इसी शिक्षा का अनुकरण करता है और परिणाम होता है, लाखो-करोडो रुपये का गबन। यह सब क्यो ? केवल इसलिए कि विद्यार्थी को कभी भी यह नही सिखाया गया कि राष्ट्र धन देव-मन्दिर का चढावा है, जिसको खाना पाप ही नही घोर पाप है। विद्यार्थी जब पाप पुण्य की परिभाषा ही नही जानता तो राष्ट्र को भी क्या समझ सकेगा ?

भारत जैसे धर्म-प्रधान देश मे धर्म की अवहेलना उचित नही। धर्म के अभाव से ही हम इस स्थिति को पहुँचे हैं। ऐसी स्थिति मे धर्म की शिक्षा तो विद्यालयो मे अनिवार्य होनी ही चाहिए। अन्यथा, भारत की सहायता, उसकी महान सस्कृति, जिसको ऋषि-मुनियो से अत्यधिक परिश्रम तथा तपस्या के बाद सचित किया है, व्यर्थ ही नष्ट हो जायगी।

भारत मे स्वतन्त्रता-सूर्य के उदय होने पर भी धार्मिक शिक्षा का अभाव ग्रहण की भाति स्पष्ट दीखता है। कलक को अति शीघ्र दूर करना चाहिए और भारत के सभी विद्यालयो मे धार्मिक शिक्षा अनिवार्य करनी चाहिए। जिससे प्राचीन गुरुकुलो की शिक्षा की भाँति भारतीय नवयुवको का सर्वांगीण विकास हो सके। यही भारत की पूजी है। यदि भारत का नवयुवक अथवा आने वाली पीढी जो कि हमारे आधुनिक नेताओ के पश्चात सभी दायित्व अपने ऊपर लेगी, वह अत्यधिक सुचरित्र सुसस्कृत तथा शिक्षित नही हुई तो भारत की स्वतन्त्रता किसी भी खतरे मे हो सकती है और हमारा परिश्रम व्यर्थ चला जा सकता है। आज धार्मिक शिक्षा का अत्यन्त महत्व है, क्योकि भारतीयो को इसी से अपने कर्त्तव्यो का ज्ञान होगा।

भूदान-यज्ञ

आज भारतवर्ष मे सर्वत्र भूमिदान-यज्ञ की चर्चा है। सबकी दृष्टि इस ओर लगी है। वस्तुत भूमिदान एक सर्वोतम दान है। साँसारिक अन्याय सम्पत्तियाँ नष्ट हो जाती हैं, किन्तु भूमि चिरकाल तक जीवन के सवहनार्थ फल देती रहती है। आज भूमिदान की प्रवाहित धारा को देख कर यद्यपि बहुत से लोग आश्चर्य मे पड जाते हैं, किन्तु यह प्रथा हमारे यहाँ प्राचीन काल से चली आ रही है। महाराज बलि ने आदर्श भूमिदान किया था। आज इस यज्ञ के प्रवर्त्तक आचार्य विनोबा भावे है। 'भूदान-यज्ञ' वास्तविक लोक कल्याण की रूपरेखा है। इसमे दी हुई भूमि रूपी आहुति आत्म-सम्मान और कृतज्ञता की विचारधारा से परे रखकर विशुद्ध लोक-कल्याण की उदात्त भावना जन-जीवन को शुद्ध करती है।

हमे यह बात अब सोचनी है कि आज के युग मे 'भूमिदान-यज्ञ' के समारम्भ की आवश्यकता क्यो पड गई। वस्तुत यदि ध्यानपूर्वक देखा जाय तो ससार मे भगवान ने भूमि, जल, धूप, आकाश आदि पदार्थ सबको समान रूप से उपयोग करने के लिए उत्पन्न किए है। इन पर किसी विशेष देश, समाज अथवा व्यक्ति का अधिकार सर्वथा अन्याय है। परन्तु स्वार्थी समाज अथवा व्यक्ति इस प्रकार कभी नही सोचता। वह अपनी कूटनीतियो या बल प्रयोग द्वारा दूसरो के स्वरो के स्वत्वो का अपहरण कर लेता है। परिणामस्वरूप इस युग मे ऐसा ही हुआ है, कुछ लोग ज़मीदार बन गए—(भूमि के मालिक) और कुछ बेचारे अपने अधिकार से वचित रह गए, बिल्कुल शोषित। एक मानव दूसरे मानव पर शत्रुता का व्यवहार करने मे नही चूकता। अमीरी और गरीबी के आधार पर दो वर्ग बन गए। परन्तु सदा अत्याचार और अन्याय नही चल सकता। शोषित समाज मे अपने अधिकारो की प्राप्ति के लिए सुप्त चेतना जागी और दुनिया के कुछ हिस्सो मे सशस्त्र रक्त क्रांतियाँ हुई। लोगो ने अपने अधिकार प्राप्त किए। किन्तु यह रक्त क्रांति एक वृद्धि-शील मानव के लिए अशुभ है, जो बात सीधे ढग से, शान्ति से सुलझाई जा

सकती है, उसके लिए खून की नदिया केवल प्रतिशोध के लिए ही वाह दी जाएँ, यह उचित मालूम नही देता। रूस और चीन मे ऐसी ही रक्त क्रातियाँ हुई है।

भारतवर्ष ससार मे सदा नवीन आदर्श स्थापित करता रहा है। इस समय मे भी ऐसा ही आदर्श उपस्थित करने जा रहा है। सन्त विनोवा के मानस से निकली यह पवित्र यज्ञ की भागीरथी विश्व मे छाए हुए कल्मप को धोने जा रही है। स्पष्ट है कि जिस समस्या को सुलझाने के लिए मनुष्य ने रक्त की होली खेली उसी को भारत हृदय-परिवर्तन द्वारा सुलझाने मे लगा हुआ है।

सन्त विनोवा के इस विषय पर विचार बडे सुन्दर और हृदयग्राही हैं। वह अपने भाषणो मे जव यह कह सकते है कि भूमि माता है—हम उस के पुत्र हैं और माता का कोई मोल नही होता। माता सभी पुत्रो की समान वत्सला है जो अपने वन्धुओ के भाग पर अधिकार जमाए है, उन्हे उनके अधिकार स्वत ही भ्रातृत्व के नाते प्रदान कर देने चाहिए तव अनेक जमीं-दार अपने अकिंचन बन्धुओ को समभागी बनाने के हेतु यज्ञ मे श्रद्धा से आहु-तिया चढाने के लिए तत्पर हो जाते हैं।

वर्तमान भूदान-यज्ञ का इतिहास १४ अप्रैल, सन १९५१ से प्रारम्भ होता है। तलगाना मे कुछ साम्यवादियो ने उपद्रव किए, जिन्हे सरकार ने शक्ति ने दवा दिया परन्तु यह विद्रोह की आग अन्दर ही अन्दर सुलगती रही। इसी सम्वन्ध मे विनोवा भावे ने तैलगाना की यात्रा की तव एक दिन जब वे पोचमपल्ली गाँव मे प्रार्थना सभा मे अपना भाषण दे रहे थे, उनके पास कुछ हरिजन आए और अपनी विषम परिस्थितियो का वर्णन करते हुए उनसे कुछ थोडी-सी भूमि पा जाने की प्रार्थना की, जिससे वे हरिजन अपने परिवार का पालन पोषण कर सकें। विनोबा जी ने सभा मे जनता से भूमि माँगी और उन्हे १२,००० एकड भूमि मिल गई। उस प्राप्त भूमि का बटवारा उसी गाँव के भूमिहीनो को कर दिया। आगे चले तो फिर उसी प्रकार भूमिदान

की माँग और बटवारा होता चला। इस प्रकार यह महायज्ञ प्रारम्भ हो गया। यह एक अहिंसात्मक क्राँति है। इससे राम-राज्य की कल्पना जनता के सामने साकार हो उठी सराज मे एक बडी खाई के काटने का सफल सूत्र जनता के हाथ मे आ गया। इसी आधार को लेकर 'सर्वोदय समाज' की स्थापना की गई और जनता ने इस महान कार्य मे सहयोग दिया। विभिन्न प्रान्तो से काफी भूमि इस समाज को मिली।

वास्तव मे जल, वायु और भूमि पर प्रत्येक व्यक्ति का सामान अधिकार है। यदि भूमि पर कुछ व्यक्ति अपना अधिकार जमाकर बैठ जाएँ, तो यह समाज के लिए सबसे बडा अभिशाप है। दूसरे देशो मे जो बडी-बडी रक्त क्रान्तिया हुई, उनके मूल मे मुख्यत भूमि समस्या ही थी। भारत को यदि इन रक्त क्राँन्तियो से बचाना था तो आवश्यक था कि जनता के सामने कोई उचित योजना रखी जाती। यह भूमिदान एक ऐसी ही योजना है, जिसमे समस्त समाज की कल्याण-कामना निहित है। इस योजना मे कुछ व्यक्ति 'दान' शब्द पर आपत्ति करते है, इस शब्द की व्याख्या करते हुए विनोवा जी ने कहा है—

भूमिदान-यज्ञ मे 'यज्ञ' शब्द आता है उससे परहेज करने की आवश्यकता नही। दान सम्विभाग —दान यानी सम्यक् विभाजन, यह है शकराचार्य जी की 'दान' शब्द की व्याख्या। उसी अर्थ मे हम इस शब्द का अर्थ करते हैं। जिसको जमीन मिलेगी वह मुफ्त खाने वाला नही है। वह जमीन पर मेहनत मशक्कत करेगा, अपना पसीना उसमे मिलायेगा, तब खा सकेगा। इसलिए उसे दीन बनने की आवश्यकता नही है। उसका अपना अधिकार उसे दिला रहे है।

आचार्य भावे ने भारत के भूमिहीन कृपको की हालत देखकर १९५७ तक लगभग ५ करोड भूमि का एक विराट सकल्प किया। इसकी प्राप्ति के लिए अनेक लोग लग गए। साथ ही साथ आचार्य ने भी समस्त भारत मे भ्रमण करना प्रारम्भ कर दिया। १३ नवम्बर १९५१ को वे दिल्ली भी गए

सकती है, उसके लिए खून की नदिया केवल प्रतिशोध के लिए ही बाह दी जाएँ, यह उचित मालूम नही देता। रूस और चीन मे ऐसी ही रक्त क्रातियां हुई है।

भारतवर्ष ससार मे सदा नवीन आदर्श स्थापित करता रहा है। इस समय मे भी ऐसा ही आदर्श उपस्थित करने जा रहा है। सन्त विनोवा के मानस से निकली यह पवित्र यज्ञ की भागीरथी विश्व मे छाए हुए कलमष को धोने जा रही है। स्पष्ट है कि जिस समस्या को सुलझाने के लिए मनुष्य ने रक्त की होली खेली उसी को भारत हृदय-परिवर्तन द्वारा सुलझाने मे लगा हुआ है।

सन्त विनोवा के इस विषय पर विचार वडे सुन्दर और हृदयग्राही हैं। वह अपने भाषणो मे जव यह कह सकते है कि भूमि माता है—हम उस के पुत्र है और माता का कोई मोल नही होना। माता सभी पुत्रो की समान वत्सला है जो अपने वन्धुओ के भाग पर अधिकार जमाए हैं, उन्हे उनके अधिकार स्वत ही भ्रातृत्व के नाते प्रदान कर देने चाहिए तव अनेक जमीं-दार अपने अकिंचन वन्धुओ को समभागी बनाने के हेतु यज्ञ मे श्रद्धा से आहु-तिया चढाने के लिए तत्पर हो जाते है।

वर्तमान भूदान-यज्ञ का इतिहास १४ अप्रैल, सन १९५१ से प्रारम्भ होता है। तलगाना मे कुछ साम्यवादियो ने उपद्रव किए, जिन्हे सरकार ने शक्ति ने दवा दिया परन्तु यह विद्रोह की आग अन्दर ही अन्दर सुलगती रही। इसी सम्बन्ध मे विनोबा भावे ने तैलगाना की यात्रा की तब एक दिन जब वे पोचमपल्ली गाँव मे प्रार्थना सभा मे अपना भाषण दे रहे थे, उनके पास कुछ हरिजन आए और अपनी विषम परिस्थितियो का वर्णन करते हुए उनसे कुछ थोडी-सी भूमि पा जाने की प्रार्थना की, जिससे वे हरिजन अपने परिवार का पालन पोषण कर सकें। विनोवा जी ने सभा मे जनता से भूमि मांगी और उन्हे १२,००० एकड भूमि मिल गई। उस प्राप्त भूमि का बटवारा उसी गाँव के भूमिहीनो को कर दिया। आगे चले तो फिर उसी प्रकार भूमिदान

की माँग और बटवारा होना चला। इस प्रकार यह महायज्ञ प्रारम्भ हो गया। यह एक अहिंसात्मक क्रांति है। इससे राम-राज्य की कल्पना जनता के सामने साकार हो उठी समाज मे एक वडी खाई के काटने का सफल सूत्र जनता के हाथ मे आ गया। इसी आधार को लेकर 'सर्वोदय-समाज' की स्थापना की गई और जनता ने इस महान कार्य मे सहयोग दिया। विभिन्न प्रान्तो मे काफी भूमि इस समाज को मिली।

वास्तव मे जल, वायु और भूमि पर प्रत्येक व्यक्ति का सामान अधिकार है। यदि भूमि पर कुछ व्यक्ति अपना अधिकार जमाकर बैठ जाएँ, तो यह समाज के लिए सबसे बडा अभिशाप है। दूसरे देशो मे जो बडी-बडी रक्त क्रान्तिया हुई, उनके मूल मे मुख्यत भूमि समस्या ही थी। भारत को यदि इन रक्त क्राँन्तियो से बचाना था तो आवश्यक था कि जनता के सामने कोई उचित योजना रखी जाती। यह भूमिदान एक ऐसी ही योजना है, जिसमे समस्त समाज की कल्याण-कामना निहित है। इस योजना मे कुछ व्यक्ति 'दान' शब्द पर आपत्ति करते हैं, इस शब्द की व्याख्या करते हुए विनोवा जी ने कहा है—

भूमिदान-यज्ञ मे 'यज्ञ' शब्द आता है उससे परहेज करने की आवश्यकता नही। दान सम्विभाग —दान यानी सम्यक् विभाजन, यह है शंकराचार्य जी की 'दान' शब्द की व्याख्या। उसी अर्थ मे हम इस शब्द का अर्थ करते हैं। जिसको जमीन मिलेगी वह मुफ्त खाने वाला नही है। वह जमीन पर मेहनत मशक्कत करेगा, अपना पसीना उसमे मिलायेगा, तब खा सकेगा। इसलिए उसे दीन बनने की आवश्यकता नही है। उसका अपना अधिकार उसे दिला रहे हैं।

आचार्य भावे ने भारत के भूमिहीन कृषको की हालत देखकर १९५७ तक लगभग ५ करोड भूमि का एक विराट सकल्प किया। इसकी प्राप्ति के लिए अनेक लोग लग गए। साथ ही साथ आचार्य ने भी समस्त भारत मे भ्रमण करना प्रारम्भ कर दिया। १३ नवम्बर १९५१ को वे दिल्ली भी गए

और उस समय तक आपने लगभग १६,४३३ एकड भूमि की प्राप्ति कर ली थी। आपने उत्तर प्रदेश मे भी खूब भ्रमण किया। वे अनेक जिलो मे गए। १६५३ मे आपने काशी मे प्रवेश किया। इस वीच तक आपने १०२३६१ एकड भूमि प्राप्त कर ली थी। मध्य भारत सरकार ने लगभग दो लाख एकड भूमि दान मे दी है। परन्तु जो सबसे बडा दान प्राप्त हुआ है वह विहार मे राँका के राजा का था। राँका के राजा ने १,७२००१ एकड भूमि दान की है। इस यज्ञ मे जितनी भूमि एकत्र हुई है उसमे अव तक केवल ५५,८८५ एकड भूमिहीन कृषको को दी गई है। उन लोगो को भूमि के अतिरिक्त खेती के औजार, वीज एव वैल भी दिए जाते हैं। जिससे ये लोग वहुत जल्दी ही कृषि कार्य को कर सकें।

इस आन्दोलन से भारत के लगभग ५ करोड भूमि-हीनो की कठिनाइयाँ दूर हो सकेंगी। इस यज्ञ से सरकार का धन-भार नही बढ सकता। इसका कारण यह है कि सरकार को जमीन का मुआवजा नही देना पडता है। जितने भी भूमिहीन कृषक है उन सवको भूमि देकर उनकी दशा को ठीक किया जा सकता है। इससे हमारे देश की बेकारी की समस्या को भी दूर किया जा सकता है। जितने भी देश के गृह उद्योग हैं उन सभी को इस आन्दोलन से बल की प्राप्ति होगी। इस आन्दोलन की सफलता का सबसे ताज़ा प्रमाण विनोबा की पाकिस्तान यात्रा है। वहाँ भी उन्हे सफलता मिली है। यह विश्व के सामने सत्य का उदाहरण है।

इस प्रकार इस शब्द मे जो एक दीनता की भावना दिखाई देती है, वह दूर हो गई। इस दान मे दाता और लेने वाला दोनो ही आनन्द प्राप्ति के भागी वनते हैं। साथ ही भूमि पर केवल उसी का अधिकार है जो परिश्रम करता है, हल जोतता है और देश का सच्चा अन्नदाता है। साथ ही इस यज्ञ की यह शर्त भी है कि दुःखी मन से दिया गया भूमि-दान ग्रहण नही किया जाता, जो सद्भावना से दान प्राप्त होता है उसी को ग्रहण किया जाता है। इसमे जीवन वटोरने की कामना भी नही है। यहाँ तो साम्ययोग और सर्वोदय की भावना काम करती है।

सारांश यह है कि भूमि-दान गाधी जी के जीवन की पूर्ति है। जनतन्त्र के युग मे यह यज्ञ वास्तव मे एक महत्त्वपूर्ण प्रयोग है। इसने वह काम कर दिया है, जो कानून से भी यकायक नही होता। इसमे सहानुभूति और सहयोग की भावना है।

अपूर्व साधना और त्यागशीलता के परिणाम-स्वरूप काफी सफलता भी मिल रही है। कितने ही ग्राम परिवार भाँति बन गए हैं।

सारा भारत अपना कर्तव्य समझता हुआ इस यज्ञ को सफल बनाएगा तथा समूचा राष्ट्र एक परिवार बनकर विश्व के सम्मुख महान् आदर्श उपस्थित करेगा।



ग्राम जीवन तथा नगर जीवन

विश्व विभिन्नताओ का भण्डार है, कही धूप है तो कही छाया है। कही मगल है तो कही जगल है। कही गाव है तो कही नगर। गाव मे जितनी सावारणता तथा गरीबी देखने को मिलती है, नगरो मे उतनी ही चहल-पहल तथा आकर्पण मिलता है। गाँव मे कच्चे घर, टूटी झोपडियाँ तथा सीधे-सादे लोग दिखाई देते हैं। शहर मे बडे-बडे मकान, लम्बी-लम्बी चौडी-चौडी सडकें और अनेकानेक चतुर-चालाक लोग दिखाई देते हैं। शहर वाले समझते है कि गाव नरक है और गाव वाले समझते हैं कि शहर ठगो का अड्डा है, किन्तु बात ऐसी नही है दोनो मे ही अपनी विशेपताएँ है। गाव प्रकृति देवी की गोद मे बसे हुए प्रतीत होते हैं। मानो सुख के सागर मे नहा रहे हो। साधारण मनुष्य तो गाव के जीवन मे प्रभावित होते है किन्तु बडे-बडे कवि भी गावो के गुण गाते हुए देखे जाते हैं। प्रेमचन्द ने तो अपने उपन्यासो का क्षेत्र ही गांव चुना और जीते-जागते कितने ही चित्र प्रस्तुत किए। सुमित्रानन्दन पन्त गाव के कूडे करकट तक की सराहना करते हैं—

कुडा-करकट कक्रर पत्थर।
सब कुछ सार्थक सब कुछ सुन्दर।

गाव के जीवन मे अपने कुछ विशेष आकर्षण है। प्रकृति का जो मनोरम रूप गाव मे देखने को मिलता है अन्यत्र कही नही। लहलहाते हुए खेत, खुली हवा, कल-कल वहती हुई सरिता भला किस हृदय को द्रवीभूत नही कर देते। प्रात काल मे पक्षियो का कलरव, साय को उनका घर लौटना, ऊषा की लाली, गोधूलि का दृश्य जितना मनोमुग्धकारी गाँव मे होता है भला वह नगर मे कहाँ है ?

प्रत्येक मनुष्य अपने जीवन मे शान्ति चाहता है। शान्ति के विना वह अपने जीवन का कोई महान् उद्देश्य पूर्ण नही कर पाया। सच्ची शान्ति यदि कही मिल सकती है तो केवल ग्राम मे। गाव के एकान्त वातावरण मे कैसा भी अशान्त चित्त व्यक्ति हो अपने सब दुख भूल जाता है और फिर से गड्ढे से निकल कर अपने को पहाड की चोटी पर समझने लगता है। गाँव मे तो मानो प्रकृति का सौन्दर्य ही बिखरा पडा है। जिनका उपभोग कर ग्रामीण मनुष्य स्वस्थ तथा प्रसन्न चित्त रहते हैं। ये स्वभाव के भोले-भाले, चरित्र के दृढ तथा छल-कपट से दूर होते है। उनका पारस्परिक प्रेम वसुधैव कुटुम्वकम् का स्मरण करा देता है।

यदि गाव मे कुछ दोष न होते तो वास्तव मे जिस वस्तु को हम स्वर्ग कहते हैं, वह यही गाँव होते। किन्तु ग्राम के जीवन मे जहाँ इतनी अच्छाइयाँ है वहाँ कुछ वुराइयाँ भी हैं। गाँव मे शिक्षा का अभाव, स्वच्छता का कुप्रबन्ध, रहन-सहन का स्तर निम्न होना तथा अन्य असुविधायें ऐसी हैं जिन्होने गाँव के मुख पर कालिमा पोत रखी है किन्तु यह वुराइयाँ धीरे-धीरे हटाई जा सकती हैं। एक पाश्चात्य विचारक का कहना है कि—

"नगरो मे मनुष्य भिन्न प्रकार के कार्य व्यापार तथा पेशे अपना सकता है। स्कूल, अस्पताल, डाक, तार, रेल, टेलीफोन आदि लाभकारी वातो का आनन्द वह नगर मे ही उठा सकता है। जीवन मे उन्नति करने के अनेकानेक

अवसर नगर मे मिल जाते है । इसके अतिरिक्त नगर मे सफाई, सुरक्षा तथा प्रकाश आदि का समुचित प्रबन्ध होता है जिससे मनुष्य सुख तथा आराम का जीवन व्यतीत कर सकता है मनोरजन के जितने भी भिन्न-भिन्न साधन नगर मे मिल सकते हैं वह अन्यत्र नही ।"

इन सब बातो के होते हुए भी नगर के जीवन मे कुछ दोष है । मशीनो की गडगडाहट, मोटरो की घो-घों तथा पो-पो और मनुष्यो की चीख-पुकार कानो के पर्दों की जो खबर लेती हैं इसे कोई नगर का रहने वाला ही बता सकता है । गन्दी हवा, मलमूत्र की बदबू, चिमनियो का धुआँ मनुष्य के जीवन को गर्दो-गुब्बारो से भर देते हैं । मनुष्य भी बड़े ४२०,झूठे, स्वार्थी तथा मनुष्यता से हीन होते है ।

उपन्यास सम्राट प्रेमचन्द जी ने यह ठीक कहा है कि ग्राम निवासी प्रकृति की गोदी मे खिले उस फूल के समान है जो कडी धूप मे भी खिला रहता है तथा नगर निवासी उस गुलदस्ते के फूल के समान है जिसे धूप, गर्मी तथा हवा का पल-पल डर बना रहता है ।

प्राय ऐसा होता है कि गाँव तथा नगर के निवासी एक दूसरे को बुरा समझते हैं । ऐसा भाव मन मे न होना चाहिए और यह समझना चाहिए कि हम सब एक देश के नागरिक है । एक माता के पुत्र है और सब एक साथ ही उन्नति की ओर बढ़ेंगे ।

इन गाँवो की नगरो से तुलना करते हुए एक विचारक ने तो यहाँ तक कहा है कि गाँव तो ईश्वरकृत है और नगर मनुष्यकृत । यह बात कुछ अशो तक उचित भी है । क्योकि मनुष्य ने अपनी कला का जितना उपयोग नगरो के निर्माण मे किया है उतना गाव मे नही । जिस समय हम किसी नगर को देखते है तो मनुष्य के जादू भरे हाथो की प्रशसा किए बिना नही रह सकते । आज के युग ने कितनी उन्नति की है इसका अनुमान हम गाँव को देखकर नही लगा सकते बल्कि नगर के दर्शन करते ही हम सब कुछ समझ जायेंगे । समय के रेत पर विज्ञान अपने चरण-चिन्ह छोडता जारहा है । उसकी झलक

हमे केवल नगरो मे ही मिल सकती है गाँवो मे नही। मनुष्य के उपयोग के लिए भिन्न-भिन्न प्रकार के जितने साधन नगर-मे हैं, उतने गाव मे कहा?" ससार की दौड मे भारत का पीछे रहने का एक मात्र कारण यही है कि इसमे ग्रामीण जनता अधिक है और वह सब अशिक्षित तथा असभ्य।

है अपना हिन्दुस्तान कहाँ
वह बसा हमारे गाँवो मे।

इस प्रकार हम देखते हैं कि ग्राम और नगर दोनो ही अपनी विशेषताएँ और कमियो को लिए हुए हैं। सच तो यह है कि यदि गाँव की दशा की ओर हम समस्त भारतवासी ध्यान दें और नगर जीवन की सभी उचित सुविधाएँ ग्रामवासियो को दें तो निश्चय ही ग्राम समूह पुन भारत को नवयौवन प्रदान कर सकता है।



समय का सदुपयोग

एक मूर्तिकार ने मूर्ति बनाई और दर्शको के देखने के लिए उसे बाजार के चौक मे रख दिया। देखने वालो की एक बहुत बडी भीड एकत्र हो गई। जब मूर्ति के ऊपर से पर्दा हटाया गया तो लोगो ने देखा कि उसका मुख बालो से ढका है और सिर का पीछे का भाग बिल्कुल गजा है। जब मूर्तिकार से इसका रहस्य पूछा, तो उसने बताया कि यह समय की मूर्ति है। जो व्यक्ति इसके आते ही सामने के बाल पकड लेता है, तो यह उसके बस मे हो जाता है और यदि एक क्षण की भी देर हुई तो यह आगे निकल जाता है। और फिर गजा होने के कारण पीछे से नही पकडा जा सकता।

वास्तव में जीवन की सफलता का रहस्य इसी मे है कि समय को उसके आगे के बालो से पकड कर वस मे कर लिया जाए। जो व्यक्ति समय के इस मूल्य को नही जानता, वह अपने जीवन में कभी सफल नही हो सकता चाहे उसके पास कितनी ही बड़ी सामर्थ्य क्यो न हो। समय

के मूल्य को पहचानना ही समय का सदुपयोग है। प्रत्येक व्यक्ति के जीवन मे ऐसी घडियाँ आती हैं, जिन पर उसके भाग्य का वनना-विगडना निर्भर करता है। यदि मन जरा-सा हिचकिचाया या डरा तो जीवन का सब कुछ समाप्त हो जाता है। समय किसी के साथ नही चलता, वह अपनी गति से सदा आगे वढता रहता है। समय का ठीक उपयोग हमारे जीवन की सफलता की कुंजी है। यदि हम अपने जीवन के वीतने वाले इन एक-एक क्षणो का ठीक से उपयोग कर सकें तो ससार का वडे से वडा कार्य भी हमारे लिए सरल और सुलभ है। ससार के जितने भी महान व्यक्ति हुए हैं उन सवने पहले समय के मूल्य को पहचान कर ही आगे कदम वढाया था और अन्त मे महानता के उच्च शिखर पर चढने मे सफल हो गए थे। नेपोलियन की महान् विजय के मूल मे समय का ही हाथ रहता था। अर्थात् वह अनुकूल समय को पहचानता था और कभी भी आलस्य मे उसे हाथ से नही जाने देता था। पाँच मिनट के मूल्य को न पहचानने के कारण ही अस्ट्रेलिया वाले नेपोलियन के सामने हार गए थे। वाटर लू के युद्ध मे नेपोलियन की हार का मुख्य कारण पाँच मिनट ही थे। उसके साथी ग्रूशी के आने मे पाँच मिनट की देर हो गई थी और इसी विलम्ब ने नेपोलियन को वन्दी वनवा दिया।

काम को समय पर करना ही समय का सदुपयोग है। जो काम एक वार दूसरे समय के लिए छोडा, वह सदा के लिए गया। यदि आज के काम को आज ही कर दिया जाए तो, कल और आगे वढने का अवसर मिल सकता है। जिसके करने मे आज आनन्द प्राप्त होता है, उसी काम को कल करने मे आनन्द नहीं, दुःख ही प्राप्त होगा। वर्तमान सवमे उत्तम घडी है, भूतकाल मर चुका और भविष्य का अभी कुछ पता नही। तव सवसे वडा सहायक मानव जीवन के लिए वर्तमान ही है। वहुत से लोगो ने आज का काम कल पर छोडा और पीछे रह गए। उनने पीछे रहने वाले समय के साथ साथ चलते रहे और आगे निकल गए। एक खरगोश और कछुए मे दौड लगाने की शर्त हुई। दोनो ने दौड प्रारम्भ की एक ही छलांग मे खरगोश आधे रास्ते

पर पहुच गया और बाकी मार्ग पूरा करने का काम आगे के लिए छोडकर कुछ देर के लिए पेड की शीतल छाया मे आराम करने के लिए लेट गया। नींद आई और मीठे सपनो मे खो गया। जब नीद खुली तो देखा कि कछुआ अभी भी वहाँ तक नही पहुँचा था। उसने अव दूसरी वार छलांग लगाई और अपने निश्चित स्थान पर पहुँच गया। परन्तु जव वहाँ पहुँचा, तो उसकी लज्जा का कोई अन्त न रहा, उस धीरे-धीरे घिसटने वाले कछुए ने समय के साथ-साथ चलकर विना एक क्षण भी आराम किए उस तेज चलने वाले खरगोश को हरा दिया। समय के सदुपयोग का यह उदाहरण कितना सुन्दर है।

आज का दिन घूमने मे खो दो, कल भी वही बात होगी और फिर अधिक सुस्ती आयेगी। इस प्रकार आज जिस काम को करना चाहते हो उसको आज ही कर लेना चाहिए। आज का मतलव 'अभी' कर डालना चाहिए। यदि रेल चलाने वाला ड्राइवर अपने मार्ग पर आने वाले प्रत्येक स्टेशन पर दो मिनट की देर करता चले, तो उसको अपने अन्तिम स्टेशन तक पहुँचने मे हो सकता है कि घटो की देर हो जाय और यह भी सम्भव है कि उसकी इस देर के कारण मार्ग मे ही कोई दुर्घटना हो जाए। उस वेचारे ने तो केवल दो-दो मिनट ही रास्ते के स्टेशनो पर अधिक खर्च किए थे, इसमे उसका तो कोई विशेप दोष न था। परन्तु उसके दो-दो मिनट ही तो इतने भयानक वन गए। अत महत्त्वाकाँक्षी व्यक्ति को समय का मूल्य पहचानना आवश्यक है।

मानव जीवन का सवसे भयानक शत्रु आलस्य है। यदि आलस्य न हो तो मनुष्य कभी भी अपने जीवन मे असफलता का मुह न देखे। शरीर मे यदि स्फूर्ति हो तो आलस्य कभी भी पास नही आ सकता और ऐसी अवस्था मे काम का वोझ भी भारी नही लगता। किसी काम को आगे के लिए स्थगित कर देने का तात्पर्य है—प्राय उसे सदा के लिए छोड देना। 'अव करने ही वाला हूँ का मतलव होता है नही करने वाला हूँ।' कहा

भी है, 'आषाढ चूका किसान और डाल का चूका बन्दर कही का नही रहता।' इसलिए जो व्यक्ति आलस्य-वश किसी कार्य से चूक जाता है, वह कभी भी फिर उस अवसर को नही पा सकता। व्यक्ति की सफलता का इतना महत्व उसकी योग्यता मे नही, जितना उसका तत्परता मे है 'आलस्य' शैतान का दूत है। इस आलस्य ने न जाने इतिहास के कितने पृष्ठो को कुछ का कुछ बना दिया जो व्यक्ति अपने को कुछ बनाना चाहता है, उसे सबसे पहले इस शत्रु से लडना चाहिए।

समय का मूल्य हाथ मे तभी आ सकता है, जब हम अपने काम नियमित कर डालें। प्रत्येक कार्य के लिए पहले कार्यक्रम बना लें और फिर उस पर अटल होकर आगे बढें। यदि कार्यक्रम बनाकर दीवार पर टाँग भी दिया और उसके अनुसार आचरण नही किया तो वह व्यर्थ है, उसका कोई महत्व नही। समय का उपयोग रक को राजा और दुरुपयोग राजा को रक बना देता है। अत इस महान शक्ति को पहचानाना ही सबसे बडी बात है।

विदेशो मे समय का मूल्य पहचाना जाता है और प्रत्येक व्यक्ति उसका सदुपयोग करना जानता है। यदि आपने किसी को मिलने का समय ७-३० का दिया है, तो वह ठीक उसी समय आ पहुँचेगा। न दो मिनट पहले और न बाद मे। परन्तु भारतीय जनता इस सम्बन्ध मे बिल्कुल असावधान है। बडी-बडी सभाओ का समय तो घण्टा भर भी लेट हो जाय तो कोई असम्भव नही माना जाता। विधान सभाओ तक मे सदस्यो के देर मे आने के कारण कोरम पूरा न होने से कार्यक्रम कई बार स्थगित रखना पडता है। यह मनोवृत्ति वास्तव मे राष्ट्र की उन्नति के लिए बहुत बाधक है।

अत नियमपूर्वक और समय पर काम करने मे मन प्रसन्न रहता है। किसी प्रकार की अशान्ति या बेचैनी नही रहती। ठीक समय पर किया गया कार्य अच्छी तरह से सफल हो सकता है। नियमितता भी एक आवश्यक गुण है। यदि कोई व्यापारी ठीक समय पर ध्यान नही देता, एक छोटा सा तार

ठीक समय पर उचित स्थान पर नही पहुँचता, यदि एक आज्ञापत्र किसी को फाँसी से बचाने के लिए दिया गया और वह समय पर नही पहुँचाता, तो समझ लीजिए इन सबका कितना भयानक परिणाम हो सकता है। लखपति व्यापारी समय की चूक से भिखारी हो सकता है, तार के एक दिन 'लेट' पहुचने से उसका उद्देश्य ही समाप्त हो जाता है। एक बार किसी पहाडी नदी के रक्षक ने जिलाधीश को नदी मे बाढ आने का तार दिया। अधिकारियो ने उसे साधारण तार समझ कर रोक लिया और कई घन्टो बाद जब निश्चित स्थान पर पहुँचा तो स्थिति बहुत ही भयानक हो गई थी। उस नदी की बाढ ने केवल थोडी सी असावधानी और समय की भूल के कारण लाखो घरो को तबाह कर दिया।

इसलिए समय का मूल्य पहचान कर उसका सदुपयोग करना जीवन की सफलता का सबसे बडा मूल मत्र है। समय के निकल जाने पर सिवाय पश्चात्ताप कुछ हाथ नही आता। पश्चात्ताप की एक उक्ति कितनी मार्मिक है।

उड गया मेरा समय जैसे विहगम,
और खाली हाथ जीवन रह गया है।

सस्कृत मे भी समय की सदुपयोगिता पर कितना सुन्दर लिखा है—

प्रथमे नार्जित विद्या द्वितीये नार्जितम् धनम्,
तृतीये नार्जित ज्ञानम् चतुर्थे किम्करिष्यति।

अर्थात् बाल्यकाल मे विद्या नही पढी, यौवन मे धन न कमाया प्रौढावस्था मे ज्ञान प्राप्त नही किया तो वृद्धावस्था मे क्या करेगा? अर्थात् कुछ नही।



युद्ध के पक्ष में

ससार मे सदा से ही दो विचार मुख्य रहे है। समस्त ससार हो इस द्वन्द्वात्मक प्रवृत्ति का परिणाम है, परन्तु उसमे जो विचार मनुष्य को उत्साह, साहस और अभूतपूर्व कार्य करने के लिए प्रेरित करते हैं वही सच्चे निर्माता, सुधारक और सृष्टि को प्रगतिपथ पर ले जाने वाले है। इस दृष्टि से देखने पर हमे यह सोचना पडेगा कि कौन से विचार मनुष्य को निष्क्रिय वनाते है। ध्यान से देखने पर पता चलेगा कि शान्ति का विचार कायरो का आदर्श हथियार है। महाकवि दिनकर ने कहा है —

क्षमा सोहती उस भुजग को
जिस के पास गरल हो।

यह एक विचारणीय प्रश्न है कि युद्ध है क्या। इसका मनोवैज्ञानिक प्रतिफलन क्या है ? युद्ध कोई ऐमी क्रिया नही जो व्यर्थ हो। मनुष्य यदि पागल नही है तो निरर्थक ही दीवार से सर नही फोडेगा। युद्ध एक ऐसी प्रतिक्रिया है जो अन्याय और अत्याचार के विरुद्ध विद्रोह करती है। क्रान्ति का झडा फहराती है और अधिकार को छीनकर समाज को स्वस्थ बनाती है। स्वस्थ ममाज उस अधिकार की मुरक्षा के लिए दृढ और सशक्त बनता है। क्रान्ति की जन्मकथा पर एक कवि मधुर शास्त्री की एक पक्ति मुझे स्मरण हो आई है। वे लिखते हैं—

क्रान्ति ने जन्म तव ही लिया जव कि अधिकार की शक्ति छीनी गई,
तूफान आया तभी सिन्धु मे जव लहर की तृप्ति छीनी गई।
चाँदनी से अलग चाँद जव भी हुआ हो गया तव अधेरा सकल विश्व मे
हुई मौत भगवान की उस समय जिस समय भक्त की भक्ति छीनी गई।

इससे यह ज्ञात होता है कि जो मनुष्य शान्ति के नाम पर आलसी बनकर अपने अधिकार खो बैठता है उस कायर को इतिहास आत्मद्रोही कहता है, वह जातिद्रोही और दूसरे शब्दो मे देशद्रोही है क्योकि ऐसे शक्तिहीन मनुष्य के प्रभाव मे भी देश को पराजय का दुख देखना पडता है।

इतिहास साक्षी है कि सामाजिक सुधार और वर्तमान से ऊपर उठने के लिए युद्ध अनिवार्य होता है। दुष्प्रवृत्तियों और दुराचारों से छुटकारा पाने के लिए उन्हे सहन नही करना होगा बल्कि उनका मूलोच्छेदन करना होगा।' यदि ऐसा न होता तो राम रावण का युद्ध न होता। ससार राम की सहन-शीलता और बल से परिचित है परन्तु उन्हे भी अत्याचारियों के विरुद्ध शस्त्र उठाना पड़ा। वह कृष्ण जिन्होंने महाभारत मे युद्ध न करने की प्रतिज्ञा की थी उन्हे भी अत्याचारो से विवश होकर भीष्म के विरुद्ध रथ का पहिया चक्ररूप मे उठाकर उत्तेजित होना पड़ा। उन्होने स्वय श्रीकृष्ण को युद्ध के लिए प्रेरित किया अन्यथा कृष्ण जैसा महात्मा योगिराज और राजनीतिज्ञ किसी परिवार को नष्ट करने के लिए प्रतिज्ञाबद्ध नहीं था। वह जानता था कि अन्याय के सामने सिर झुकाना कायरता है उनकी वह वाणी-क्षुद्र हृदय दौर्बल्य त्यक्त्वा उत्तिष्ठ परतप'। अर्थात हृदय की कायरता को छोड़कर उठ। स्वय श्री कृष्ण ने यह भी कहा है कि वे स्वय भी इसीलिए अवतार लेते हैं ताकि दुराचारियो का नाश करे और सज्जनो की रक्षा करें। इस प्रकार युद्ध से जहाँ दैत्यो का दमन होता है वहा सत्य की सुरक्षा होती है। इसका सबसे सबल प्रमाण यह है कि जब विस्तारवादी चीन ने भारत पर आक्रमण किया तो शान्तिदूत ने भी युद्ध के पक्ष मे राय प्रकट करते हुए कहा था हम तब तक युद्ध जारी रखेगे जब तक हिन्दुस्तान की इच भर भूमि भी शत्रु के कब्जे मे रहेगी इसके लिए समय की कोई सीमा नही।

इससे स्पष्ट है कि शान्तिवादी सत्य की सुरक्षा के लिए युद्ध की अनिवार्यता अनुभव करता है।

युद्ध का दूसरा नाम सघर्ष है (Struggle is life) सघर्ष ही जीवन है। जिसके जीवन मे सघर्ष नही वह महत्वाकाँक्षी नही हो सकता। नीति कहती है कि युद्ध प्रिय शासक ही अपने राज्य का विस्तार कर सकता है। जो राजा यथा प्राप्त राज्य पर सतोष करके बैठे रहते हैं उनमे कोई उन्नतिपूर्ण परिवर्तन नही मिलता बल्कि ऐसे राज्यो पर दूसरे महत्वाकाँक्षी राजा आक्रमण कर अपने अधिकार मे कर लेते हैं। ऐसे अनेक उदाहरणो से हमारा इतिहास भरा पड़ा है

कि शान्ति द्वारा किसी समाज ने, देश ने, जाति ने बर्बर अत्याचार पर विजय पाई हो ऐसे उदाहरण मेरी दृष्टि मे नही ।

आज की वर्तमान स्थिति मे भी हमारी सरकार शान्ति के लिए थोथे उपदेशो पर चली उसका परिणाम हमारे सामने है । हमारा राष्ट्रीय चरित्र इसीलिए पतित है कि हमारा खून ठडा हो गया है। हमे हर अत्याचार को सहन करने की आदत हो गई है। शत्रु हमारी जिम भूमि पर अधिकार कर लेता है। वह और हम अनेक प्रकार के कुतर्कों द्वारा अपनी कायरता को शक्ति की रेशमी साडी मे लपेट कर सजा लेते है। युद्ध की अनिवार्यता की जो व्यक्ति मानते है वे ही शान्ति सग्रह मे विश्वास रखते हैं। वे ही अपने देश, जाति और समाज को शक्तिशाली वनाने के लिए प्रयन्तशील रहते हैं। योग्य वह ही निर्भय रहता है। विना युद्ध भय के वीरता का सचय कहा "भय विन होत न वह प्रीत" यदि हम ससार मे अपना शौर्य दिखाना चाहते है ससार मे योग्य स्थान चाहते हैं। ससार की श्रद्धा और प्रीति पान,चाहते हैं तो युद्ध की अनिवार्यता माननी होगी। अवश्य माननी होगी। यदि ऐसा न होगा तो निश्चय ही निकट भविष्य मे हम अपना अस्तित्व भी खो वैठेंगे इसमे तो सन्देह नही। स्वतत्रता के पीछे सुभाप का सघर्ष, भगतसिंह का वलिदान, और क्रान्ति का विकराल जाल है—मात्र शान्ति से स्वराज्य प्राप्त नही हुआ। स्वतत्रता का दामन रक्त के अनेक छोटे वडे धब्बो से रजित है यह हमे नही भूल जाना चाहिए।



सहकारी पंचायत योजना

स्वतन्त्र भारत मे प्रसन्नता और समृद्धि के लिए अनेक प्रयत्न किए जा रहे हैं और किए गए है। इसके लिए प० नेहरू की पचवर्षीय योजनाए एक आदर्श स्वरूप लेकर प्रकट हुई हैं। भारतवर्ष ग्राम प्रधान देश है। जब तक

गाँवो मे सुख और समृद्धि नही तब तक देश को हम खुशहाल नही कह सकते। गाँधी जी ने भी गाँवो की समृद्धि पर ही सबसे अधिक ध्यान दिया था। गाँवो मे निर्धनता के पीछे जो कारण है उन्हे दूर करने के लिए ही सहकारी पचायत योजना बनाई गई है। क्योकि किसानो का पैसा व्यर्थ की मुकदमेबाजी मे नष्ट हो जाता है। किसान सदा कर्जदार रहता है।

गाँवो की कठिनाई नई नही है। युग-युग से चली आ रही कठिनाई को दूर करने का प्रयत्न सदा होता रहा है। भारत के लिए यह योजना नई नही है। प्राचीन तथा मध्यकाल मे भी इसका प्रयोग होता रहा है। इन सस्थाओ से ग्रामीणो को लाभ पहुँचता था। इन पचायतो के द्वारा अधिक से अधिक स्वतन्त्रता ग्रामीणो को प्राप्त थी। गाव अपने आप मे स्वाधीन रहे इसलिए केन्द्र मे यदि कोई परिवर्तन हुआ भी तो उसका कोई व्यापक प्रभाव गावो पर नही पडा। नीति के परिवर्तन मे ग्रामो का उतना ही सहयोग रहा जितने से वे सम्बन्धित थे। गाँधी जी ने जिस रामराज्य का स्वप्न देखा था वह इसी पचायत शासन पर निर्भर था। वे इस योजना के प्रबल समर्थक एव प्रशसक थे। वे जानते थे कि भारत की आत्मा गाँव मे है। आत्मा की प्रसन्नता और समृद्धि का प्रभाव सारे भारत पर होगा।

ब्रिटिश शासन मे गाव सदा उपेक्षित रहे। इसलिए उन्हे उनके अधिकारो से वचित होना पडा। अग्रेजो ने गावो की अपेक्षा नगरो पर अधिक ध्यान दिया। गाव का जीवनरस छीन कर नगरो को सौप दिया। कुछ समझदार अग्रेजो ने भारत का स्वरूप पहचाना और भारतीय गावो को सुधारने का प्रयत्न किया। लार्ड रिपन ने पहली बार स्थानीय सघो से भारतीयो का परिचय कराया। सन् १६०४ मे केन्द्र से अलग पचायतो का निर्माण हुआ। अनेक प्रान्तो मे वैधानिक सुविधाए देकर गावो को निजी स्वतन्त्रता प्रदान की गई।

भारत स्वतन्त्र हुआ तो इन पचायतो को नया जीवन मिला। गाँधी जी के अनुसार इन गाँवो का पुनर्निर्माण करने के लिए सभी वैधानिक और

क्रियात्मक योजनाए लागू होने लगी। उत्तर प्रदेश मे इस पचायत को ग्राम सभा के नाम से पुकारा जाता है। गाव की जनसख्या को देखते हुए सदस्यो, मत्री और उपमत्री आदि का चुनाव होता है। ये लोग कार्यसमिति को वैधानिक रूप देते हैं उसे ग्राम पचायत कहते है। ठीक प्रकार से चुनाव होते हैं। इन पचायतो का काम यह होता है कि खेती सुधार, व्यापार और अर्थ सम्बन्धी समस्याओ को सुलझाए। मेले और बाजारो द्वारा सहयोगी वैंक और सहयोगी भडार, पुस्तकालय तथा औषधालय आदि का निर्माण किया जाता है। इनका कार्य यह भी है कि ये भिन्न-भिन्न जनसेवक जैसे पटवारी, अमीन और पुलिस आदि के चरित्र पर भी निगरानी रखे क्योंकि किसानो का इनसे निकट सम्बन्ध होता है।

ग्राम पचायतो मे मत्री और निरीक्षक होता है। ये लोग वर्ष मे दो बार वजट का परीक्षण करते है, हिसाब चेक करते हैं और कर निर्धारण करते है। प्रत्येक वयस्क शासन के सुधार के लिए अपना सुझाव रखने का अधिकारी है। पचायत मे अदालत होती है। सरपच तथा पाच और पढे-लिखे सदस्य साधारण मुकदमो का निपटारा करते है।

ध्यान से देखा जाय तो पचायतो के इन कामो मे कई कमिया और अनियमितताए भी है। ग्रामीण लोगो की इन पचायतो मे अब भी प्राचीन रुढियाँ हैं—कई लोग अब भी जाति और धर्म पर विश्वास कर निम्न जाति के लिए उदार दृष्टिकोण नही अपनाते। पारिवारिक झगडो ने भी इन पचायती कामो मे बाधा डाल रक्खी है। ग्राम-सुधार-कार्यक्रमो मे धन का महत्वपूर्ण स्थान होता है। जो धन प्रान्तीय सरकार से प्राप्त होता है उसका सदुपयोग नही होता। धन को लेकर ही अनेक झगडे होते हैं।

साराश यह है कि ये योजनाएँ सफल तभी हो सकती है जब इनका ईमानदारी, वफादारी और जिम्मेदारी से सदुपयोग हो। अनुभवहीनता के कारण ही अनेक दोष आ रहे हैं। समय के अनुसार ये कमिया दूर होगी—समय तो लगेगा। इसमे कोई सन्देह नहीं कि इन पचायतो मे अपना काम स्वय करना, सहकारी ढग पर करना और निर्माणात्मक दृष्टि रखना सिखाया है।

खाद्य समस्या

जब से भारत स्वतन्त्र हुआ है तब से अनेक समस्याए एक साथ उभर कर सामने आई है। यह स्वाभाविक भी है क्योकि जब कोई देश स्वतन्त्र होता है तो सामाजिक और राजनीतिक ढाचे मे सहसा एक परिवर्तन आता है। ऐसी स्थिति मे यदि समाज और देश के नेताओ मे सही सामजस्य होता है तो समस्याओ का समाधान होता जाता है। नेता सही निर्देश करते है और समाज व्यक्तिगत स्वार्थ छोडकर उन निर्देशो का पालन करता है तभी समस्या का समाधान सभव है। दुर्भाग्य से अपने देश मे अशिक्षा और व्यक्तिगत स्वार्थ की भावना ने व्यक्ति को पूरी तरह से नही छोडा है। यही कारण है कि और समस्याओ की तरह खाद्य-समस्या अभी तक नही सुलझ सकी है।

आज भारत की जनसख्या दिनो दिन बढ रही है और उसी अनुपात से खाद्य का उत्पादन नही हो रहा है। इसका यह परिणाम है कि खाद्य समस्या दिन पर दिन भयकर होती जा रही है। इसके पीछे खाद्य की कमी के साथ साथ और भी अनेक कारण उलझे हुए है। भारत-विभाजन के समय गेहूँ और चावल की उत्पादक अच्छी भूमि पाकिस्तान के हाथ चली गई है। पजाब के उपजाऊ क्षेत्र और पूर्वी बगाल के क्षेत्र गेहूँ और चावल के लिए प्रसिद्ध हैं जिससे भारत वचित हो गया। दूसरी ओर लाखो हिन्दू परिवार अपने घर-बार छोडकर भारत आए जिसमे जनसख्या मे वृद्धि हुई और उत्पादन कम हुआ पिछले बीस वर्षो मे वैसे ही बडे-बडे व्यापारी सस्ते दामो मे किसानो से गल्ला खरीद कर अपने अनाज भडार मे भर लेते हैं। इससे यह होता है कि अनाज की कमी होती है तो दाम बढ जाते है और तेज भाव पर वे अनाज बेचकर लाभ उठाते हैं। क्योकि ये व्यापारी अपनी इस स्वार्थ वृत्ति को छिपाने के लिए सरकार के बडे-बडे अधिकारियो से सम्बन्धित रहते हैं और उन्हे भिन्न-भिन्न प्रकार से आर्थिक लाभ पहुँचाते हैं इसलिए जनता और पुलिस दोनो ही इस अनैतिक व्यापार को रोकने मे असमर्थ हो जाते हैं।

हो जाती है, भूख मिटाने के लिए लोग अपना ईमान और चरित्र बेच देते है। आवश्यकता है कि महिला समाज-सेविकाएँ गाँवो मे परिवार नियोजन केन्द्र खोलें और ग्रामीण महिलाओ को इस योजना के सही लाभ बताएँ। अनेक बार के प्रयत्नो से ही यह सुधार सभव है।

किसानो को भी अच्छा बीज, अच्छा खाद और उनके आधुनिक प्रयोग का पूर्ण प्रशिक्षण मिलना चाहिए। पिछले कुछ वर्षो मे भारत की जनसख्या मे अभूतपूर्व वृद्धि हुई है। १९४७ मे जनसख्या ३५ करोड थी और अब ४५ करोड है। यद्यपि भारत सरकार ने परिवार नियोजन के अनेक केन्द्र खोले। परन्तु हमारा देश अभी कुछ प्राचीन धार्मिक रूढियो से ग्रस्त है और अशिक्षा ने हमारी ग्रामीण जनता को स्थिति से सही रूप मे परिचित नहीं होने दिया।

ब्रिटिश काल मे चावलो की कमी को बर्मा द्वारा निर्यातित सस्ते चावल से पूरा किया गया। उस समय बर्मा ब्रिटिश साम्राज्य के अन्तर्गत था इसलिए वह आयात सभव हुआ और अब बर्मा स्वतन्त्र है इसलिए अब भारत को उसके लिए व्यय करना पडता है और चावल उसी के भाव पर खरीदना पडता है। भारत मे चावल का उत्पादन उतना नही है जितना कि आवश्यक है। हमारे किसान अभी खेतो के आधुनिक तरीको से भी अपरिचित हैं। खेती के योग्य भूमि भी पूरी किसानो के पास नही है। पीढी दर पीढी से भूमि का विभाजन भी ऐसा हुआ है कि प्रत्येक किसान के पास यथेष्ट भूमि नही है। दूसरे किसानो की प्रवृत्ति भी ऐसी है कि वे तम्बाकू और गन्ने की खेती इस लिए अधिक पसन्द करते हैं क्योकि उसमे उन्हे आर्थिक दृष्टि से अधिक लाभ होता है। गेहूँ और चावल की खेती से उतना आर्थिक लाभ नही होता।

खाद्य-समस्या को भयकर बनाने मे मुनाफाखोर व्यापारीवर्ग भी विशेष कारण है। इनके अनैतिक व्यापार से भी यह समस्या बढ रही है। जैसे ही रही है। जैसे ही नया अनाज बाजार मे आता है। सरकार को उसी समय

वह सब अनाज खरीद लेना चाहिए । यदि इस प्रकार चारो ओर से हम समस्या के समाधान मे लगेंगे, तो निश्चय ही वह दिन दूर नही जब कि भारत मे अनाज की समस्या नही रहेगी । फिर वही शस्य श्यामला भूमि ससार को भोजन देने मे समर्थ होगी । दूध दही की नदी बहेगी । भारतवासी हर दृष्टि से सुखी और समृद्ध होगे ।



फैशन का मनोविज्ञान

मानव के समस्त कार्य-कलाप मनोविज्ञान पर निर्भर होते है । मनोविज्ञान की व्यापकता इसी से सिद्ध है कि उसका सम्बन्ध मन से है। इच्छा का सम्बन्ध मन से और क्रिया से स्पष्ट है। प्रत्येक युग अपनी मौलिकता के लिए तभी प्रसिद्ध होता है जब युग के मन की प्रतिक्रिया किसी नये रूप को जन्म देती है । एक समय था जबकि मनुष्य का मन ससार की अन्तर्निहित समस्याओ के समाधान मे व्यस्त था । जीवन की गहनता और परिवर्तित मानदण्ड अनेक प्रश्न लेकर उसके सामने उपस्थित हो जाते थे। मनुष्य अन्वेषण और अनुसधान मे जीवन व्यतीत कर रहा था। जीवन-सागर को मथकर जो अमृत और विष प्राप्त हुए उसी की गहनगाथाए, पुराण, उपनिषद के रूप मे हमे सदा आलोक प्रदान करती रही। उस समय का रहन-सहन, खान-पान और चिन्तन-मनन तत्कालीन मनोविज्ञान की व्याख्या करते हैं। मनुष्य का ध्यान अन्तर्मुखी था, इसीलिए उस समय सभी का आत्मिक दृष्टि से उत्कृष्ट होना एक फैशन था ।

फैशन वर्तमान का व्यावहारिक रूप है । मनुष्य अपने जीवन का सौन्दर्य प्रकट करने के लिए खास तौर से वाह्य रूप को रुचिकर और ग्राह्य बनाने के लिए जिस पद्धति को स्वीकार करता है वही फैशन का रूप धारण कर

लेता है। वीरता के युग मे वीर होना, भक्ति के युग मे भजन, सन्त और महन्त होना आदि फैशन का ही सांस्कृतिक रूप था। यह दूसरी बात है कि उपयोगिता की दृष्टि से यह फैशन मानव के लिए कितना हितकर था। इसमे भी कोई शास्त्रीय सिद्धान्त नही है कि फैशन का स्वरूप निश्चित हो, यह तो रुचि और भावना पर निर्भर है।

ऐसी भी लहर आई थी कि प्रत्येक भारतवासी के हृदय मे देशभक्ति का फैशन था। यह फैशन की विशेषता है कि जब जैसा फैशन होता है उसके विपरीत चलने वाला मनुष्य निकृष्ट कोटि का कहा जाता और माना जाता है। भारत स्वतन्त्र हो जाने के पश्चात अब लोगो मे नेता होने का फैशन है। एक विशेष प्रकार का वर्ग है जो खास तौर के कपडे पहने, खास तौर से बात चीत करने और सामाजिक लोगो पर प्रभाव डालने के फैशन का आदी है। उसके पीछे त्याग, तपस्या आदि कुछ नही, वह एक प्रवाह है जो न स्पष्ट रूप से कुछ लेता है और न कुछ देता है, वह राजनीति मे नेता है।

फैशन एक प्रवाह है, गतिशील प्रवाह जिसमे परिवर्तन होते रहते है। यही कारण है कि इस परिवर्तित रूप ने उनमे अस्थायित्व ला दिया है। यह अस्थायित्व असत्य की गंध बाटता है। भारतीय वेश-भूषा भी तो फैशन है, धोती, कुर्ता, बन्द गले का कोट, अचकन, पायजामा (खुला तथा चूडीदार) फैशन तो ये भी हैं परन्तु इस फैशन का सम्बन्ध सांस्कृतिक हो जाने से ग्राह्य हो गया है। आज फैशन के नाम पर जो चित्र प्रबुद्ध सामाजिक प्राणी के मन पर उतरता है उसके प्रति श्रद्धा, प्रेम और ग्राहकता नही है।

जैसा कि मैंने ऊपर कहा है कि फैशन का मनोविज्ञान से सम्बन्ध है उसी आधार पर यह स्पष्ट है कि मन की रुचि यदि उत्कृष्ट होती है और सुसंस्कृत होती है तो उसी प्रकार का फैशन ग्राह्य और आकर्षक हो जाता है। क्योकि फैशन तो मन की रुचि और संस्कारो का बाह्य प्रदर्शन है। इसलिए जिस फैशन से मन पर सुसंस्कृत प्रभाव पडता है वह आकर्षक के साथ साथ ग्राह्य और अनुकरणीय लगता है।

आज जब हम फैशन की चर्चा करते हैं तो हमारे सामने एक तस्वीर उभरती है। वह एक युगल जा रहा है। युवक ने १४ इंच की मोहरी की पेण्ट पहनी हुई है जिसमे कुल मिलाकर छोटे-बडे लगभग २५ बटन होगे, महोदय को कही नीचे बैठना या झुकना पड जाय तो या तो फटेगी पैन्ट या । बालो मे आधुनिक प्रसिद्ध अभिनेताओ का अनुकरण, कमीज मे अनोखा कट आदि सहचरी युवती ने सलवार पहनी है—परन्तु चूडीदार पायजामा शायद पानी भरेगा उसके सामने। कमीज़ है तो इस प्रकार चुस्त कि ईश्वर की रची सृष्टि का सम्पूर्ण मानचित्र स्पष्ट हो सकता है। आप चाहे तो प्रत्येक पसली गिन लीजिए और गति के समय शरीर पर पडने वाले प्रत्येक प्रभाव के दर्शन कर लीजिए। इसी सन्दर्भ मे बालो का तो कहना ही क्या ? मात्र यही कहा जा सकता है कि आधुनिक वेश-विन्यास ने पुरातन कामनियो की केशकला को कही पीछे छोड दिया है।

यह ठीक है कि प्रत्येक मनुष्य स्वय को सुन्दर प्रदर्शित करना चाहता है। यह एक ऐसा सत्य है जिसे स्वीकार न करने से मनुष्य-मनुष्य न रहकर पशु हो जाता है। परन्तु इसके साथ ही हमे यह भी स्वीकार करना चाहिए और समझना चाहिए कि सौन्दर्य का रूप सर्वत्र समान नही होता। अफ्रीका की युवती का जो सौन्दर्य है उसे यूरोप मे ग्रहण नही किया जाता। यदि ऐसा होता तो इस वैज्ञानिक ढग मे कोई न कोई ऐसा केमिकल जरूर निकल आता जिसका प्रयोग यूरोपियन करते। इसी प्रकार किसी भी विदेशी को भारतीय वेशभूषा मे न देखकर भी आश्चर्य होता है। कि इस सबका कारण यह है कि प्रत्येक देश की भौगोलिक सस्कृति और सभ्यता भिन्न होती है। जो लोग अपने देश की सस्कृति और सभ्यता के स्वरूप से गौरवान्वित हैं वे कभी ऐसा नही करेंगे अन्यथा प० नेहरू जैसे सौन्दर्य पालक सुन्दर महान् मानव की वेषभूषा मे अवश्य अन्तर होता।

आधुनिक युग का फैशन विद्यालयो और विश्वविद्यालयो मे देखा जा सकता हैं। इस फैशनेबुल सौन्दर्य प्रदर्शन के पीछे सुसस्कृत आकर्षण न होकर थोथी कामुकता है। कुण्ठाग्रस्त तर्कों से यदि उसे छुपाया जाय तो भी सत्य

नही छुप सकता । इसी का यह परिणाम है कि शिक्षा कुंजियो पर निभर हो गई है और प्रमाण पत्र जेब मे रखने वाला व्यक्ति शिक्षित समझा जाता है। सत्य तो यह है कि जो विषय छात्रा पढता है उसका उसे पूरा ज्ञान नही । उसका कारण यह है कि छात्र ज्ञान के प्रति उत्सुक न होकर फैशन के प्रति उत्सुक है। वह अपनी व्यक्तिगत सजावट मे समय को नष्ट कर सकता है, अध्ययन के लिए समय नही है । अपने समाज मे स्वय को अत्याधुनिक सिद्ध करने की होड लगी है । कई निर्धन परिवार यथा तथा जोड कर अपनी सन्तान को सुशिक्षित बनाना चाहते हैं परन्तु सन्तान के फैशन ने उन्हे स्वय को बेचने पर विवश कर दिया है । फैशन की होड अवनति के सकेत है । इस मनोवैज्ञानिक उजाड को रोकना होगा । फैशन के इस मनो विज्ञान पर नई चेतनात्मक दृष्टि से विचार करना होगा ।

त्रिभाषा प्रस्ताव और हिन्दी

यह एक सर्वविदित सत्य है कि स्वतन्त्र राष्ट्र की भापा उसकी अपनी होती है । राष्ट्रभाषा का गौरवपूर्ण पद राष्ट्र की भाषा को प्राप्त होता है जो उसकी अपनी निजी है । और देशो की बात न करके अपने ही देश के सम्बन्ध मे विचार करना आवश्यक है ।

भारतवर्ष एक ऐसा राष्ट्र है जिसमे अनेक भाषाएँ बोली जाती हैं । जब भारत स्वतन्त्र हुआ तो राज्यो का पुनर्गठन भी हुआ । एक लम्बी बहस के बाद राज्यो का भाषावार पुनर्गठन इसीलिए किया गया था कि राज्य सरकारें अपने राज्य की जनता की भाषा मे कामकाज करें । इससे इस लाभ की आशा की गई कि प्रत्येक राज्य की भापा अपना अस्तित्व सुदृढ कर सकेगी और धीरे-धीरे भारत भाषा विषयक दासता से मुक्ति पालेगा । परन्तु देखा यह गया कि राज कर्मचारियो ने जन-भाषा को राज-भापा पद पर नही बैठाया । नेताओ को यह चिन्ता तो रही कि अंग्रेजी की शिक्षा का स्तर गिर रहा है परन्तु मातृभाषा का स्तर ऊपर उठे यह कभी नही सोचा । केन्द्रीय और राज्यो मे इसके लिए समर्थ उद्योग भी नही किए गए ।

सन् १९५० मे हिन्दी को राजभाषा स्वीकार किया गया था। सन् १९६५ मे उसे राष्ट्रभाषा घोषित किये जाने पर भी अग्रेजी को अनिश्चित समय के लिए राजभाषा बनाए रखने की बात करके राजकर्मी नेताओने उस राष्ट्र के जिसको इतनी लम्बी अवधि और संघर्ष के पश्चात् स्वतन्त्रता मिली उसके निर्माण के मार्मिक क्षेत्र मे १५ वर्ष की इस उपेक्षा और अकर्मण्यता का प्रदर्शन किया। यदि उसी समय एक सुदृढ निश्चित घोषणा हो जाती तो दक्षिण तमिलनाडु आदि मे जो हिन्दी विरोध का भद्दा प्रदर्शन हुआ वह न होता। यदि अब तक अग्रेजी को हटाकर राजभाषा के पद पर तमिल सिंहासनासीन हो जाती तो यह लज्जाजनक प्रसग ही न उठता। वह निर्णय राष्ट्रीय एकता की प्रतीक हिन्दी के लिए भी हितकर होता। उस भूल का प्रभाव हुआ यह कि स्वय हिन्दी भाषी प्रदेशो मे अग्रेजी का चलन पहले से कही अधिक बढ गया। पुराने देशी राज्यो मे देश भाषा मे काम होता था। वे जब नए राजस्थान या मध्य प्रदेश या गुजरात मे लीन हो गए तो अग्रेजी की प्रभुता बढ गई। यदि अग्रेजी ही चलानी थी तो भाषाधार प्रान्तो का पुनर्गठन निरर्थक सिद्ध हुआ।

कांग्रेस कार्यसमिति ने सभी भाषाओं मे सार्वदेशिक सेवाओ के लिए परीक्षा लेने का निश्चय किया है। इसका अर्थ है उन परीक्षाओ मे इन भाषाओं मे उत्तर पत्र लिखने की योग्यता रखने वाले छात्र सभी प्रदेशो मे मिलेंगे। परन्तु उच्च शिक्षा अग्रेजी मे दी जाती है। परिणाम यह होगा कि न कोई छात्र देश भाषा अध्ययन मे परीक्षा मे प्रविष्ट होगा न 'माडरेशन' का कष्ट उठाना पड़ेगा। त्रिभाषा—एक अग्रेजी, दूसरी हिन्दी और तीसरी प्रादेशिक भाषा का क्या सुपरिणाम होगा—यह इस सन्दर्भ मे विचारहीन होगा।

यह प्रस्ताव सभवत इसीलिए पास हुआ है कि राष्ट्रीय एकता के लिए इस प्रश्न को सदा के लिए सुलझा दिया जाए। केन्द्र ने अहिन्दी भाषाओं की मन स्थिति को समझ लिया है। उसी को ध्यान मे रखकर सभी भाषाओं को केन्द्रीय सेवाओं का माध्यम स्वीकार किया गया है। इसकी मान्यता

तभी है जब क्षेत्रीय भाषाओ मे उच्च शिक्षा प्राप्त हो सकेगी। क्योकि उनके माध्यम से शिक्षित नवयुवक केन्द्रीय परीक्षाओ मे बैठ सकेंगे।

अभी तक अ ग्रेजी के सामने हिन्दी का सामर्थ्य प्रकट हुआ है। लोगो मे (अग्रेजी समर्थक) यह भ्रम रहा कि हिन्दी के विकास के लिए उद्योग हुए और अब उन पर हिन्दी थोपी जाएगी इससे क्षेत्रीय भाषाओ का विकास नहीं होगा। वास्तव मे यह मिथ्या भ्रम है। जिन स्थानो पर अग्रेजी का पूर्ण अधिकार है, वहाँ तो क्षेत्रीय भाषाए विकसित होकर अपना स्थान ग्रहण करेंगी। इससे अग्रेजी को स्वय ही स्थान छोडना पडेगा। इस सत्य को बहुत से लोगो ने नही समझा। इसी कारण क्षेत्रीय भाषाए भी अग्रेजी के साथ जा जुडी।

ऐसी स्थिति मे हिन्दी भाषी लोगो का यह प्रयत्न होना चाहिए कि जिससे क्षेत्रीय भाषाए अपने अस्तित्व को पहचान कर अग्रेजी को छोड हिन्दी के साथ जुडे। इससे अ ग्रेजी स्वय ही अकेली पड जाएगी और हम दासता, से मुक्त होंगे। इसके लिए हिन्दी प्रदेशो मे विश्वविद्यालयो मे शिक्षा का माध्यम हिन्दी हो और राजकाज मे हिन्दी ही का प्रयोग हो। अहिन्दी भाषी प्रदेशो मे अपनी भाषा को शिक्षा का माध्यम मानने के लिए बाध्य किया जाए। प्रदेशो मे राजभाषा का चलन होने पर समान भाषा के रूप मे अग्रेजी के स्थान पर हिन्दी स्वय आएगी। केन्द्र मे हिन्दी का महत्वपूर्ण स्थान होना चाहिए। अग्रेजी पत्रो का अनुवाद हिन्दी मे साथ लगा होना चाहिए—पत्र व्यवहार के लिए यह आवश्यक है। केन्द्र का कर्तव्य है कि हिन्दी के साथ क्षेत्रीय भाषाओ के विकास में योजनाबद्ध कार्यक्रम रखे साथ ही अन्य क्षेत्रीय प्रदेशो मे हिन्दी के प्रशिक्षण-कार्य का सचालन केन्द्र करे। हिन्दी मे भी सभी प्रकार का साहित्य मिलना चाहिए। इस स्थिति मे सरकार का निर्णय सर्व-मान्य हो तभी राष्ट्रभाषा विषयक एक मार्मिक समस्या का सम्पूर्ण समाधान कर स्वतन्त्र वातावरण मे श्वाँस ले सकेगा। इस आन्तरिक विजय से ही हम पराजित मनोभाव से मुक्ति प्राप्त कर सकने मे समर्थ होगे।



साहित्यिक-निबन्ध

(इस विभाग मे साहित्यिक गतिविधियों से सम्बन्धित विचारो तथा विचारको का तर्कपूर्ण एव आलोचनात्मक विवेचन परिचय सहित प्रस्तुत किया गया है)

समाज और साहित्य

प्रत्येक मनुष्य मे स्वाभाविक रूप से यह दो वस्तुएँ देखने को मिलेंगी कि (१) वह अकेला नही रहना चाहता, (२) वह चिंतनशील है। अपनी एकान्त उदासीनता की समाप्ति के लिए उसने समाज का निर्माण किया तथा चिन्तनशील प्रवृत्ति के कारण साहित्य का। समाज मे रहते हुए मनुष्य मे भिन्न-भिन्न विचार उठते हैं, जिन्हे दवाना वह ज्वालामुखी के विस्फुट को रोकने के समान समझता है। मनुष्य जो कुछ सोचता है, उसको भाषा द्वारा वाहर उडेल देना चाहता है। भाषावद्ध इसी विचार-प्रवाह को साहित्य कहते हैं।

साहित्य सर्वदा समाज को अपने रग मे रगता रहता रहा है। समाज भी साहित्य को अपने रग मे रगता रहता है। साहित्य और समाज मे अन्योन्याश्रय सवन्ध है 'Poet and the age react upon each other' अर्थात् कवि और समय एक दूसरे पर प्रभाव डालते है। समाज की उत्पत्ति के पश्चात् साहित्य की उत्पत्ति होती है, अत पहले समाज साहित्य को प्रभावित करता है और फिर स्वय उससे प्रभावित होता है। साहित्य और समाज का यह सम्वन्ध कभी टूट नही सकता है। वस्तुत सच पूछा जाय तो साहित्य जाति, समाज और राष्ट्र एव विश्व की उन्नति के लिए एक नितान्त आवश्यक साधन है। कवि ने कहा है—

"अन्धकार है वही, जहाँ साहित्य नही है।
मुर्दा है वह देश, जहाँ साहित्य नही है।"

जिस प्रकार मस्तिष्क मे मनुष्य के अनुभव सचित रहते हैं उसी प्रकार साहित्य मे मानव-समाज के प्रभाव एकत्र रहते है। वर्सफोर्ड नामक अंग्रेज समालोचक ने एक स्थान पर कहा है—"Literature is the brain of humanity" अर्थात् साहित्य मानव-समाज का है। अत किसी जाति और समाज के साहित्य को हम उसकी सभ्यता और संस्कृति का निर्देशक कह सकते हैं।

"साहित्य को समाज का दर्पण कहा गया है।" वास्तव मे किसी समय के समाज का ठीक-ठीक चित्र यदि हमे कही देखना हो, तो उसके साहित्य को देख लेना चाहिए। साहित्य समाज की छाया है। जिस प्रकार एक मनुष्य की छाया उसके शरीर का अनुकरण करती है, उसी प्रकार साहित्य समाज की दशाओ का वर्णन करता है। समाज का सुख-दुख, हसना-रोना सब कुछ उसके साहित्य मे देखा जा सकता है।

प्राचीन काल मे आर्यों का सामाजिक जीवन हमे उस काल के साहित्य के अध्ययन से ज्ञात हो जाता है। वीरगाथा-काल के साहित्य को पढने से हम कह सकते है कि वह समय मार-काट तथा अशान्ति का काल था। राजा खुशामद पसन्द थे और कवि उनके झूठे गुण गाने वाले थे।

भक्ति-काल का साहित्य उस काल के समाज का स्पष्ट चित्र हमारे सामने प्रस्तुत कर देता है। उत्तर से लेकर दक्षिण तक तमाम भारत मे जो भक्ति की विविध रूप लहरें फैल रही थी और हिन्दू समाज उनमे प्लावित हो रहा था, यह सब हमे उस काल के साहित्य मे मिल जाता है। मुसलमान बादशाह किस प्रकार हिन्दुओ पर अत्याचार करते थे। जिसके परिणामस्वरूप भक्ति-काल का प्रादुर्भाव हुआ, यह हम भली-भाँति सोच सकते हैं।

रीति-काल के साहित्य का अध्ययन करते ही हम समझ जाते हैं कि वह काल विलासिता तथा वैभव का काल था। राजा सुख की सरिता मे डुबकी लगा रहे थे और कविगण उनकी आखो पर पट्टी बाध कर चटपटे तथा नमकीन साहित्य का सृजन कर रहे थे।

अग्रेजो के ढाई सौ वर्ष के अत्याचार आज भी साहित्य की तिजोरी मे ज्यो के त्यो सुरक्षित रखे हैं। कभी भी हम उन्हे पढकर उस समय के समाज की स्थिति का चित्र खीच सकते हैं और दुर्भाग्य के दर्शन भी कर सकते हैं।

समाज की घटनाओ की नीव पर ही साहित्य का भवन खडा होता है, जैसी जिस समाज की परिस्थितियाँ होगी, वैसा ही उसका साहित्य होगा। वीरगाथा काल मे पृथ्वीराज रासो तथा भक्ति काल मे रामचरित मानस की रचना इसका प्रमाण है। मिल्टन 'सूरदास' की रचना नही कर सकते थे—

शैले पदमावत नही लिख सकते थे और न सूरदास 'पैराडाइज लौस्ट'। कारण कि समाज की जैसी स्थिति होती है वैसा ही साहित्य लिखा जाता है।

साहित्य समाज की प्रतिध्वनि है। जिस प्रकार हम किसी बडे भवन मे वोलेंगे, तो वही प्रतिध्वनि सुनाई देगी, उसी प्रकार साहित्य मे समाज की सब पुकारें प्रतिध्वनित होती है।

समाज और साहित्य की घनिष्ठता का कारण है मानव की सम्वन्धित वृत्तियाँ। मनुष्य कल्पना शक्ति के द्वारा साहित्य का निर्माण करता है तथा उसी कल्पना शक्ति के योग द्वारा समाज सम्वन्धी वहुत-सी योजनायें वनाता है। अत कल्पना शक्ति एक उद्गम स्थान है, जहाँ से साहित्य तथा समाज का जन्म होता है। साहित्य तथा समाज दो सहोदर भाइयों के समान हैं जिनके सम्वन्ध पैतृक तथा स्वाभाविक रूप मे अटूट होते है।

साहित्य जहाँ समाज की दशा को दर्शाने वाला है, वहाँ वह भावी समाज के निर्माण का सयोजक भी है। इतिहास, भूगोल व मशीन बन्दूक जिस काम को नही कर सकते उस काम को साहित्य वडी सरलता से कर देता है। प्रसिद्ध है कि बिहारी के एक दोहे ने राजा जयसिह के जीवन को बदल दिया था। एक स्त्री के कपोलो के ऊपर लुढकते हुए आँसू भी उसके परदेश जाने वाले पति को नही रोक सके, किन्तु गाँव से वाहर एक कविता की कुछ पक्तियाँ सुनते ही वह घर लौट आया। समाज मे जागृति, जाति मे विद्रोह तथा जनता में उत्थान के भाव साहित्य वडी सरलता से भर सकता है। साहित्य मे किसी जाति के आदर्श जीवित और जागृत रहते हैं। अवनति मे पडे हुए समाज की उद्धार-रज्जु केवल साहित्य है।

आज हमारा समाज सुधारो की अपेक्षा रखता है। कई शताब्दियो की परतन्त्रता के कारण हम मे वहुत से दोष आ गये है। सुधार के वडे-वडे प्रयत्न किए जा रहे हैं, किन्तु अभी वैसा साहित्य नही लिखा जा रहा है। जिससे नवोदित स्वतन्त्र भारत मे प्रभातकालीन वायु का सौरभ, कलियो का पराग तथा भौरो की गु जार विखर कर कोने-कोने को भरपूर कर दे जिससे जागरण का शख-नाद हो उठे और सव चैतन्य तथा स्फूर्ति की तरगो मे झूम कर आलस्य का त्याग कर दें।

सम्पूर्ण हिन्दी को संक्षिप्त रूपरेखा

विक्रम की सतवी शताब्दी के उत्तरार्द्ध मे उत्तर भारत के पश्चिमाचल मे सम्राट हर्ष के रूप मे हिन्दुओ की साम्राज्य-सत्ता के दीपक की अन्तिम ज्योति टिमटिमाई। उसी के चतुर्दिक वूढे भारत का वैभव, ज्ञान और पराक्रम विखर कर दुर्बल हो गए। उसके क्षीण हो जाने पर केन्द्रस्थ शक्तियाँ विखर गयी कन्नौज, दिल्ली, अजमेर आदि छोटे-छोटे राज्यो का आविर्भाव हुआ लोग अपनी-अपनी डफली पर अपना-अपना राग वजाने लगे। देश को एक शासन सूत्र मे रखने की भावना का तिरोभाव हो गया। परिणामस्वरूप देश मे फूट की वेल फलने लगी। राजपूतो की सघ-शक्ति छिन्न-भिन्न हो गई। इसके पहले मुसलमान आक्रमणकारी इस भूखण्ड पर लूट मार आरम्भ कर कर चुके थे। सर्वप्रथम तो वे धन लूटने के लिए आक्रमण किया करते थे परन्तु अब उन्होने अपना धर्म इस देश मे फैलाने और अपना राज्य यहाँ स्थापित करने का स्वप्न देखना आरम्भ कर दिया था। हिन्दुओ ने कभी भी एक होकर उनके आक्रमणो को विफल करने का प्रयत्न न किया। मोहम्मद गौरी ने अन्तत पृथ्वीराज को परास्त करके यवन-राज्य की ध्वजा भारत पर आरोपित करके ही चैन लिया यद्यपि हिन्दुओ ने इस विदेशी शासन को एकदम स्वीकार नही कर लिया, उन्होने भिन्न-भिन्न स्थानो पर सिर उठाया। सारांश यह है कि विक्रमीय सातवी शताब्दी से जो हमले आरम्भ हुए थे वे तेरहवी शताब्दी मे सफल हुए और तव से अगली सदी तक उत्तर भारत लगातार सग्राम क्षेत्र बना रहा।

इस सघर्ष काल मे इसी भू-भाग में, अपभ्र श से हमारी हिन्दी का विकास हो रहा था। इस प्रकार हिन्दी-शिशु का लालन-पालन रणक्षेत्र मे हुआ। इस दशा मे उसकी तोतली वाणी से भी जो निकला उसमे वीरोत्साह का सचार था। इस काल मे कवियो का ध्यान साहित्य के अन्य विपयो की ओर जाना असम्भव था। इस युग के जितने काव्य उपलब्ध हुए हैं उनमे वीर रस की ही प्रधानता है। इसी से इस युग को वीरगाथा काल कहते हैं। इसकी

अवधि विक्रमीय स० १०५० से १३७५ तक निश्चित की गई है। इन वीर गाथाओ मे वीर रस के साथ शृंगार का भी मिश्रण मिलता है। उसमे तत्कालीन वीरो की मनोवृत्ति का पूरा परिचय मिल जाता है। उस जमाने मे सुन्दर स्त्रियो के कारण बहुत से युद्ध हुआ करते थे इसलिए कवि लोग वास्तव में युद्ध का कारण न होने पर भी अपने काव्य मे प्राय किसी रमणी की अवतारणा करते थे। इन कवियो को राज्याश्रय मे रहकर अपने सरदारो की प्रशसा करके उन्हे प्रसन्न करना होता था। ये कवि केवल लेखनी चलाने मे शूर नही होते थे वे तलवार के भी धनी होते थे इससे उनके युद्ध-वर्णन अत्यन्त स्वाभाविक और प्रभावशाली हैं।

इस युग की वीरगाथाए दो प्रकार की मिलती है। एक प्रवन्ध काव्य के साहित्यिक ढग की दूसरी रीति काव्य के ढग की। पृथ्वीराज-रासो चन्दवरदाई कृत इस काल का प्रमुख ग्रन्थ है। इस युग की प्रधान भवना (वीरता) के क्षेत्र से बाहर रहकर विद्यापति और अमीर खुसरो ने अपनी रचनाओ के द्वारा हमारे लिए उस समय की व्यवहार की भाषा का बहुत कुछ रूप रक्षित कर दिया है। खुसरो की पहेलियाँ और मुकरियाँ अनूठी देन है। विद्यापति की पदावली को कोमल और सरस सूक्तियो का भण्डार कहना चाहिये।

अलाउद्दीन के भारत विजय के अनन्तर कुछ दिनो के लिए क्षेत्रीय वीरो की परम्परा समाप्त सी हो गयी। हम्मीर के समय से वीरगाथाओ की रचना शिथिल पड गयी, मुसलमानी राज्य दृढ हो गया। मुसलमानो के अत्याचार से हिन्दुओ का त्राण करने वाला कोई वीर न दिखाई पडा। निराश्रित जनता का दिल टूट गया। हिन्दुओ के लिये चरम निराशा का काल था। हिन्दू जनता का मूर्तियो पर से विश्वास उठ गया था। मृत्यु या धर्म परिवर्तन यही दो मार्ग उस समय जनता के लिये खुले थे। ऐसी विषम स्थिति मे कुछ दैवी विभूतियो ने अपनी अमृत वाणी से जनता की मुर्दनी हटाई और उसे हताश होने मे बचाया। इन महात्माओ की अलौकिक गीत-

ध्वनि सवा तीन सौ वर्ष तक (१३७५-१७००) अबाध्य रूप से सुनाई पडती रही। इस युग को भक्ति काल कहते है।

इस काल मे निर्गुण और सदगुण दो प्रकार के भक्ति विषयक काव्यो की धाराए निकली और उक्त अवधि तक अलग-अलग बहती रही। निर्गुण भक्ति का स्रोत पहले फूटा। साकार ब्रह्म की ओर से हिन्दू जनता उस समय निराश हो रही थी। मुसलमानो के यहा बस जाने पर उनके एकेश्वरवाद ने इस मूर्तिपूजक देश मे बडी विकट परिस्थिति उत्पन्न कर दी थी। दोनो को एक मार्ग प्रदर्शित करने के लिए कुछ सन्त कवि आगे आए। कबीर इस धारा के प्रमुख कवि हैं। इस शाखा के महात्माओ की वाणी मे भाषा के परिष्कार ओर कवित्व का अभाव होते हुए भी स्पष्टता का आकर्षण है। इनकी कविता मे आडम्बर नही है। इसी से उसमे प्रभावोत्पादकता है। इन्होने निर्गुणभक्ति ज्ञानाश्रयी शाखा को पल्लवित किया।

इस वर्ग के साधुओ ने अपनी अटपटी और खरी वाणी से लोगो को अपनी ओर आकर्षित तो किया, पर उन्हे शान्ति न दे पाये। इसी बीच सूफी फकीरो ने अपनी प्रेम गाथाओ के बहाने अपना सदेश सुनाया। उन्होंने कल्पित और कभी-कभी ऐतिहासिक कहानियो से लौकिक प्रेम मे ईश्वरोन्मुख प्रेम की झलक दिखाई। इनकी भाषा मे अवधी की स्वाभाविक मधुरता है। इस शाखा का नाम प्रेमाश्रयी निर्गुण शाखा है। इसके प्रमुख कवि जायसी हैं। सूफी कवियो की रहस्य-भावना समन्वित रचनाओ मे सरसता है, किन्तु वह विदेशी ढग की है, इसमे उनकी और यहा की जनता कम खिची है और फल यह हुआ कि पौधा यहाँ की जलवायु मे पल्लवित न हो सका।

इन ज्ञान और प्रेम मार्गी कवियो ने अपने समय मे हिदुओ की निराशा से उत्पन्न खिन्नता तो दूर की, किन्तु उन्होने भगवान का ऐसा रूप उनके सामने रखा था जिसकी कल्पना भर की जा सकती थी। विपत्ति से उद्धार करने मे अग्रसर न देख पाने से जनता ऐसे निर्गुण ब्रह्म को आशा भरी दृष्टि से न देख सकी। भगवान के उस स्वरूप को देखने के लिये लोग उत्सुक

और व्याकुय थे जो उनकी रक्षा करने मे तत्पर और समर्थ हो । सूरदास जी ने मोहन की वाकी झाँकी दिखाकर उदास हिन्दू हृदयो मे प्रफुल्लता का सचार किया । भगवान की वाल लीलाएँ दिखाकर इन्होने जनता को नवीन आभा दी । इस धारा के कवियो के प्रभाव से व्रजभापा को वहुत दिन के लिए देश की काव्य भापा का गौरव मिला जो अव तक चला आ रहा है । सगुण भक्ति की इस हरी भरी कृष्ण-शाखा मे अगणित सुस्वादु फल लगे ।

इस प्रकार भगवान के अलौकिक लावण्य को दिखाकर श्री कृष्ण-भक्ति शाखा के कवियो ने जनता को आनन्दित किया और उधर गोस्वामी तुलसीदास ने प्रभु के लोक रक्षण मे निरत मर्यादा पुरुषोत्तम स्वरूप को दिखाकर उसे शक्ति प्रदान की । तुलसीदास ने अपने राम मे सौन्दर्य, शक्ति और शोभा का समन्वय करके साकार भावना को चरम अभिव्यक्ति दी । प्राचीन साहित्य मे मे प्रवीण तुलसीदास जैसे महाकवि को पाकर कविता धन्य हुई । तुलसीदास से वढकर उनके क्षेत्र मे कोई कवि नही हुआ । इस राम भक्ति शाखा मे यद्यपि कृष्ण भक्ति शाखा की भाति वहुत से फल नही लगे तथापि इसका एक फल ही ऐसा है जिसके समान कदाचित वे मव मिलकर भी नही होंगे ।

जिस युग मे हिन्दी-काव्याकाश के सूर्य और चन्द्र—सूर, तुलसी अपना प्रकाश फैला रहे थे । वह भारत के लिए राजनीतिक दृष्टि से भी अत्यन्त महत्त्वपूर्ण था । अकवर के समय से वढकर सुख और शान्ति भारतवर्ष के किसी अन्य मुसलमान शासक के राज्य काल मे नही मिली । अकवर म्वय कलाविद कवि और कविता प्रेमी था । उसके दरवार मे कई प्रतिष्ठित कवियो का जमघट था । उनमे रहीम वीरवल, ग ा, टोडरमल मुख्य थे । राजदरवार से अलग सैकडो और कवि भक्ति काल मे अपनी रचनाओ मे हमारा कोप भर रहे थे । उनमे सेनापति और नरोत्तमदास उल्लेखनीय हैं ।

भक्तिकाल के प्रतिभाशाली कवियो की कृपा से हिन्दी कविता भावना-सम्पन्न हो गई, अकवर के समय मे ही मुमलमानी विलासमय जीवन की झलक दिखाई पडने लगी थी । उसका उत्तराधिकारी जहागीर तो विलासिता

मिश्र, रमानाथ अवस्थी, मधुर, राही, सोमठाकुर, नेपाली, कौल, भवानीप्रसाद मिश्र, अजित, शिव मगलसिह 'सुमन' त्यागी, दिनेश अच्छे रचनाकार हैं। अब गीत की धारा बदल गई है। प्रयोगवाद के नाम पर मुक्तवृत्त छन्दो मे नई विचारधारा ने जन्म लिया है। नही कहा जा सकता कि कौनसी यह विचार-धारा रहेगी जिसके नाम से नया युग इतिहास मे प्रसिद्ध होगा।



हिन्दी साहित्य और मुसलमान साहित्यकार

प्रत्येक देश की अपनी-अपनी भाषा होती है। प्रत्येक भाषा का अपना साहित्य होता है। प्रत्येक जाति अपना-अपना साहित्य रखती है। किसी भी जाति की उन्नति और अवनति का पता उसके साहित्य से लगता है। जिसका साहित्य जितना ऊँचा होता है, वह जाति भी अपने आप मे उतनी ही उन्नत होती है। आज हम जिस भाषा का इतना विकसित रूप देख रहे हैं वह एक या दो वर्षों के परिश्रम का फल नही है। उसकी विकास श्रेणी का इतिहास सदियो की निरन्तर प्रगति और प्रयासो का फल है।

प्रारम्भ से ही हमारे देश मे समन्वय की भावना रही है। यह हिन्दी जिसका साहित्य आज इतना विकसित हो गया है कि विश्व के किसी भी साहित्य से उसकी तुलना कर सकते हैं यह हिन्दी नाम भी मुसलमानो का दिया हुआ है। भारतीय भाषाओ मे सस्कृत को देव-वाणी कहा गया है। जिस समय मुसलमानो ने भारत पर आक्रमण किया उस समय भारतीय जनता के साथ सम्पर्क स्थापित करने के लिए उर्दू का प्रचार हुआ। दिल्ली की भाषा कुछ कोमलता लिए हुई थी। मेरठ की तरफ की बोली जिसे खडी बोली कहते है, उसे मुसलमानो ने 'हिन्दवी वा हिन्दुई' कहकर पुकारा। धीरे-धीरे उसमे परिमार्जन और परिष्कार होता चला गया।

यह रही हिन्दी के नाम की बात। जहाँ तक साहित्य का सम्बन्ध है उसके लिए भी हम मुसलमानो की सराहना किए बिना नही रह सकते।

भारत इसके लिए प्रसिद्ध है कि यहाँ जो भी आता है यहाँ का हो जाता है। मुसलमानो ने जब भारत को अपना लिया तो उन्होने साहित्य भी पर्याप्त लिखा। जहाँ तक आलोचना का सम्बन्ध है मुसलमानो द्वारा लिखे गए साहित्य को हम पक्षपात की दृष्टि से देखते हैं। मुसलमानो ने समय-समय पर देश की अवस्था को पहचानते हुए बहुत सुन्दर साहित्य लिखा। कोई कोई तो ऐसे साहित्यकार हुए जिनकी रचनाएँ हमारे यहाँ इतना सम्मान प्राप्त कर चुकी है जितना कि हिन्दी के हिन्दू कवियो की रचनाओ ने आज प्राप्त किया है।

हिन्दी साहित्य के इतिहास पर दृष्टिपात करने से हमे हिन्दी साहित्य मे दी गई मुसलमानो की देन का पूर्ण परिचय मिल सकता है। सर्व प्रथम अमीर खुसरो का नाम है जिन्होंने उस सघर्ष के युग मे उतनी सुन्दर रचना की। विचार की दृष्टि से अमीर खुसरो हिन्दी के सर्वप्रथम हास्य-रस के कवि कहे जा सकते हैं। दूसरी बात यह है कि उन्होने सर्वप्रथम अपनी रचना खडी बोली मे की। खडी बोली का सर्वप्रथम विकसित रूप अमीर खुसरो की रचनाओ मे मिलता है। वास्तव मे अमीर खुसरो की रचनाएँ हिन्दी साहित्य, मे अपूर्व प्रेरणा प्रदान करने वाली है। उन्होने पहेलियाँ और मुकरिया लिखी सबसे बडी विशेषता तो यह थी कि उन्होंने चेतन ही नही, जड को भी काव्य-रचना का विषय बनाया। जड का उदाहरण देकर रचना करना अमीर खुसरो का ही काम था। इस जड के साथ उन्होने साधारण पशु-पक्षियो को लेकर मानव जीवन की व्याख्या की। उनकी उक्तियो की कला आज तक प्रसिद्ध है।

अमीर खुसरो के बाद जब हिन्दी मे भक्ति काल प्रारम्भ हुआ और ज्ञान तथा प्रेम की पावन धारा बहने लगी, उस समय भी मुसलमान कवि पीछे न हटे। भारतीय दर्शन का आधार लेकर महात्मा कबीर साहित्य के क्षेत्र मे उतरे। वह कौन नही जानता कि कबीर ने हिन्दू और मुसलमानो को अज्ञान के मार्ग से हटा कर सत्य जीवन का सरल मार्ग दिखाया। उन्होने अपने अनुभव के आधार पर जीवन को नए दृष्टिकोण से देखा। धर्म के नाम पर

होने वाले अनाचारो को दूर करने लिए देश मे नई चेतना के प्राण फूंके। इसका वहाँ तक प्रभाव पडा कि हिन्दू लोग कबीर को हिन्दू जाति मे उत्पन्न मानने लगे और मुसलमान तो कबीर को पाकर फूले न समाए। कुछ भी हो कवीर तो मुसलमान थे और उन्होने सन्त-मत की नीव डाली। आज भी भारत की जनता कवीर का नाम नही भूली है। अशिक्षित से अशिक्षित और शिक्षित से शिक्षित व्यक्ति को कबीर का नाम याद है।

कवीर के वाद हिन्दी मे मलिक मुहम्मद जायसी अपना विशेष स्थान रखते हैं। उन्होने प्रेम मार्ग की सुन्दर अभिव्यक्ति की। जायसी का पद्मावत हिन्दी साहित्य की अमूल्य निधि है। जायसी की विशेषता का सबसे बडा प्रमाण यह है कि उन्होने अपने काव्य के लिए हमारे देश को लौकिक गाथा का आधार लिया। इस प्रकार अवधी भाषा मे इतना सुन्दर महाकाव्य लिखकर जायसी ने वास्तव मे हिन्दी का महान् उपकार किया और हिन्दी साहित्य जायसी का चिर ऋणी रहेगा।

न केवल मुसलमान पुरुषो ने अपितु मुसलमान नारियो ने भी हिन्दी साहित्य की वृद्धि मे प्रशसनीय योग दिया। ताज की रचनाओ ने हिन्दी साहित्य मे नए भाव दिए। उसने कहा कि भगवान कृष्ण की भक्ति इतनी सुन्दर है कि मेरा मन उसमे उलझ गया है। ताज की एक रचना हिन्दी मे अत्यन्त प्रसिद्ध है—

सुनो दिल जानी मेरे दिल की कहानी,
तव रस की बिकानी बदनामी भी सहूँगी मैं।
मैं देव पूजा ठानी और निमाज हूँ भुलानी
तज कलमा कुरानी सारे गुणन गहूगी मैं
मेरा सावला सलौना सिर ताज सिर कुल्लेदार
तेरे नेह दाघ से निदाघ ह्वै दहूगी मैं
नन्द के कुमार कुरवान तायि सूरत पे
हौं तो मुसलमानी हिंदुवानी ह्वै रहूगी मैं।

बेगम ताज की यह रचना इस बात का प्रमाण है कि कृष्ण के सुन्दर चरित्र ने परधर्मियों को भी अपनी ओर आकर्षित कर लिया।

रसखान की सरस सुन्दर शैली से कौन परिचित नही है। उन्होने कवित्त सवैयो मे सुन्दर भाव पूर्ण रचनाएँ की हैं। अनुभूति की गहराई ब्रज भाषा का माधुर्य, सम्वेदनशीलता, भावुकता सभी कुछ रसखान मे मिलता है। वास्तव मे रसखान जैसी रचनाएँ हिन्दी मे बहुत कम है। रसखान का पद कितना सुन्दर है—

शेष सुरेश, गणेश, महेश, दिनेशहु, जाहि निरन्तर ध्यावे,
जाहि अनादि अनन्त अखण्ड अछेद्य अभेद्य सुवेद बतावें,
नारद से शुक व्यास रटें, पचि हारि तऊ पुनि पार न पावें,
ताहि अहीर की छोकरियाँ छछिया भर छाछ प नाच नचावें।

इन पदो मे इतनी सरलता और माधुर्य है कि सहज ही यह पद याद हो जाते हैं।

रहीम ने जो नीति के दोहे लिखे वह तो भारतीय समाज के लिए जीवन सिद्ध हुए। रहीम के दोहो ने भारतीय नीति को बडी ही कुशलता के साथ अपनाया है। शेख और आलम की कहानी तो इतिहास प्रसिद्ध है। जहाँ आलम इतने सुन्दर कवि थे वहाँ शेख भी बहुत अच्छी कवयित्री थी। कहा जाता है कि आलम तो हिन्दू ही थे परन्तु शेख की कविताओ पर रीझकर मुसलमान बन गए।

आधुनिक काल मे भी बहुत से मुसलमान लेखको ने हिन्दी साहित्य में अपनी रचनाओ से एक नवीन सौन्दर्य को जन्म दिया है। सैय्यद अमीर और जहूरबख्श आदि अच्छे-अच्छे लेखक हैं जिन्होने अपनी रचनाओ से हिन्दी साहित्य की श्री वृद्धि की है। विशेषता तो यह है कि इन लोगो ने खडी बोली में बहुत सुन्दर रचनाएं की हैं। इन मुसलमान कवियो ने हिन्दू कवियो के साथ कदम से कदम मिलाकर इतना बडा मार्ग तय किया है कि हम उन मुसलमान कवियो

के आभारी है जिन्होने हिन्दुओ को अपनाकर न केवल भारतीय परम्परा को प्रोत्साहन दिया है अपितु उसकी रक्षा की। भारतीय जन-जीवन की जागृति के वे पहरेदार बने। इसीलिए तो भारतेन्दु ने कहा था—

"इन मुसलमान हरिजनन पै कोटिन हिन्दवन वारि"

हिन्दी के गौरव ग्रन्थ

आज खडी बोली में साहित्य लिखा जा रहा है। हिन्दी साहित्य का नाम लेने पर खडी बोली में प्रकाशित ग्रन्थ भडार की ओर ध्यान आकर्षित होता है। जो भाषा विज्ञान से परिचित हैं वे इस रहस्य को भलीभाँति जानते हैं। हिन्दी साहित्य का इतिहास पढने पर यह निश्चित हो जाता है कि इतिहास १०वी शताब्दी से प्रारभ हुआ है। परिस्थितियो से प्रभावित साहित्य ही अपने समय का प्रतिनिधि और भविष्य के साहित्य के लिए प्रेरणादायक सिद्ध हुआ है। इस दृष्टि से देखने पर हमे उन गौरव ग्रन्थो पर दृष्टि डालनी होगी जो साहित्य भवन के स्तभ हैं। जिन ग्रन्थो ने भाषा, जाति, साहित्य और देश का गौरव बढाया है। इन गौरव ग्रन्थो में सर्वप्रथम स्थान पृथ्वीराज रासो का है।

पृथ्वीराज रासो—

यह वृहत्काय महाकाव्य वीरगाथा काल के प्रसिद्ध महाकवि, हिन्दी के आदि कवि चन्द वरदाई द्वारा लिखा गया है। इस ग्रन्थ में १५०० से भी अधिक पृष्ठ हैं। इस ग्रन्थ में चन्द ने पृथ्वीराज के जीवन चरित्र का वर्णन किया है। कहा जाता है कि चन्द रासो को पूर्ण नहीं कर पाए थे, उसे बीच में ही छोडकर वे युद्ध क्षेत्र मे चले गए थे। शेष रासो को उनके पुत्र जल्हण ने पूरा किया—प्रमाण में दोहे की एक पक्ति इस प्रकार है—

'पुस्तक जल्हण हत्थ दै चलि गज्जन नृपकाज'

पृथ्वीराज रासो ६९ समयो (अध्याय) में विभाजित है। यह डिंगल भाषा में लिखा गया है। इसमें पृथ्वीराज के जीवन से सम्बन्धित घटनाओ का

अत्यन्त सुन्दर चित्रण हुआ है। इसमे वीर रस मुख्य है वैसे शृंगार का भी वर्णन है। कवि ने प्रकृति का वर्णन भी किया है। युद्ध के दृश्य अत्यन्त मार्मिक और यथार्थ हैं।

सूरसागर—

सूरसागर की रचना भागवत के आधार पर हुई है। इसके रचना कार हैं वात्सल्य रसावतार भक्त शिरोमणि सूरदास हैं। इसमें १२ स्कध हैं। प्रथम से नवम तक वर्णन बहुत छोटे हैं। उनमें चौबीस अवतारो की कथा रामलीला आदि के फुटकर पद हैं। विशेष स्कध नवम और दशम हैं। इनमे विनय के पद, बाललीला के पद, रासलीला, गोपी विरह का मधुर वर्णन है। सूर का बाल-वर्णन ससार प्रसिद्ध है। सूर का भ्रमर-गीत गोपी विरह तथा उनकी कृष्ण के प्रति अनन्य भक्ति प्रकट होती है।

सूरसागर की भाषा बृज भाषा है। गीत शैली मे लिखे गये सूर के पद आज भी शास्त्रीय सगीत के अन्तर्गत विशेष रागो और रागिनियों में गाए जाते हैं। भक्त जनता सूर के पदों पर झूमती है। सूर के समान ललित कवि हिन्दी में दुर्लभ है।

राम चरित मानस—

कवि कुल गुरु गोस्वामी तुलसीदास द्वारा रचित यह महाकाव्य हिन्दी साहित्य की अमूल्य निधि है। इसमे राम का आदर्श चरित्र चित्रित हुआ है। आदर्श समाज, आदर्श परिवार, आदर्श राष्ट्र का स्वरूप देखने के लिए राम-चरित मानस पर्याप्त है। भारतीय सस्कृति और सभ्यता का उज्ज्वल चित्रण इसी शुभग्रन्थ मे हुआ हैं।

रामचरितमानस ही ऐसा ग्रन्थ है जो भारत में घर-घर मे पूजा ग्रन्थ की तरह उपासित होता है। इसकी भाषा सुसस्कृत अवधी है। इसमे सात काड हैं। इन काडो मे राम के सम्पूर्ण जीवन का चित्राकन हुआ है। इसी से मर्यादा पुरुषोत्तम राम प्रतिष्ठित हुए। इससे ही राम को ईश्वर का रूप प्राप्त हुआ। यह ग्रन्थ मुख्यत: दोहे और चौपाई मे लिखा गया है परन्तु सोरठा, छन्द भी मिलते हैं।

रामचन्द्रिका—

यह ग्रथ रीति काल के प्रमुख कवि एव आचार्य केशव द्वारा रचित है। इसमें कवि ने अपने ढग से राम का चरित्र चित्रित किया है। केशव दरबारी कवि थे। इसमे उन्होने राजसी ठाटबाट का अच्छा चित्रण किया है कही कही सवाद शैली भी अपनाई है।

केशव चमत्कार वादी कवि थे। अत इस ग्रथ मे अनेक छन्द और अनेक अलकार मिलते हैं। रामचन्द्रिका के अध्ययन से कवि के पाडित्य का पूर्ण ज्ञान मिलता है। यह वृज भाषा मे लिखा गया है। भाषा कही कही क्लिष्ट है।

प्रिय प्रवास—

आधुनिक खडी बोली का सर्व प्रथम महाकाव्य प्रिय प्रवास श्री अयोध्यासिंह उपाध्याय हरिऔध द्वारा रचित है। इसमे कवि ने कृष्ण के लोक मगल कारी व्यक्तित्व को उभारने का सबल प्रयत्न किया है। यह ग्रन्थ अपने आप मे सम्पूर्ण है। कृष्ण का गोकुल स मथुरा प्रवास का वणन है। इसमे प्रकृति का वणन भी वडा सुन्दर हुआ है। 'पवन दूत' का प्रसग अत्यन्त मनोरम है। राधा के विरह मे भी लेखक ने नवीनता भर दी है। राधा ने भी लोक कल्याण की भावना अपनाई है। इस महाकाव्याभास मे सस्कृत क सभी प्रसिद्ध छन्दो इन्द्र वज्रा उपेन्द्रवज्रा, उपजाति, भुजग प्रभात, हरिणी आदि का प्रयोग हुआ है।

साकेत—

राष्ट्रकवि मैथिली शरण गुप्त द्वारा रचित यह महाकाव्य हिन्दी साहित्य में महत्वपूण स्थान रखता है। इसमे कवि ने राम का चरित्र चित्रित किया है। परन्तु कवि का लक्ष्य रामायण की उपेक्षिता त्यागमयी मूर्ति उर्मिला लक्ष्मण की पत्नी का चरित्रांकन है। इसके लिए साकेत का नवमसग सर्वाधिक सुन्दर है। यह सग पृथक रूप स एक काव्य है। यह गीत शैली मे लिखा गया है। सस्कृत छन्दो स प्रभावित होकर ही इसकी रचना की गई है। इसमे कैकयी का चरित्र भी अत्यन्त करुणा जनक और मातृत्व से उद्वेलित है। खड़ी बोली का सुन्दर महाकाव्य साकेत हिन्दी का महान गौरव ग्रथ है।

कामायनी—

छायावाद और रहस्यवाद के प्रवर्त्तक स्व० जयशंकर प्रसाद का यह महाकाव्य हिन्दी साहित्य में उत्कृष्ट आसन का अधिकारी है। कवि ने इसमे मनु श्रद्धा और इडा के स्वरूप को लेकर आनन्द की सृष्टि की हैं। मनु से मानव तक की गई। इसी में अत्यन्त मनोवैज्ञानिक ढग से सर्गो की स्थापना की गई है। प्रतीकात्मक दृष्टि से लिखे गए काव्यो में कामायनी का महत्वपूर्ण स्थान है। इसकी शैली सुसस्कृत है। सस्कृत निष्ठ खडी बोली मे लिखे गए इस महाकाव्य ने एक नये युग को जन्म दिया है।

कुरुक्षेत्र—

राष्ट्रीय भावनाओ के प्रतिनिधि कवि श्री रामधारी सिह दिनकर रचित इस महाकाव्य में युद्ध की अनिवार्यता पर विचार किया गया है। युद्धोपरान्त युधिष्ठिर की मानसिक प्रतिक्रिया को भीष्म ने नए विचारो से परितुष्ट किया है। कवि ने राष्ट्रीयता को वीरता से सयुक्त किया है। स्वतन्त्रता सग्राम के वातावरण मे इस ओजस्वी काव्य का महा सत्कार हुआ है। यह युक्त रूप से लिखा गया है।

इस प्रकार हिन्दी साहित्य के अमूल्य गौरव ग्रन्थो की गणना कठिन कार्य है। प्रेमचन्द, निराला, पन्त, महादेवी, भारतेन्दु आदि अनेक महान् साहित्यकार हुए हैं। गोदान, परिमल, वीणा, यामा, चित्रलेखा, मुक्तिपथ, शेखर, पचवटी कहाँ तक गिनाए जाएँ। जो हिन्दी साहित्य के महत्व का दर्शन और गौरव जानना चाहते हैं वे अध्ययन करें—यह तो सक्षिप्त परिचय भी नहीं कहा जा सकता।

हिन्दी नाट्य साहित्य का विकास

हिन्दी नाटक का वास्तविक इतिहास भारतेन्दु युग से ही प्रारम्भ होता है, यद्यपि इससे पहले भी हिन्दी में कुछ नाटक लिखे जा चुके थे। इन प्राचीन नाटको मे रुक्मिणी हरण, हनुमन्नाटक तथा प्रबोधचन्द्रोदय का नाम प्रमुख है। परन्तु इन नाटको को काव्य-नाटक कहना ही अधिक उपयुक्त होगा। क्योंकि

प्रसाद-युग—हिन्दी नाटक के विकास में प्रसाद युग सक्रान्ति काल था। इस काल मे हिन्दी नाटकों मे एक नया ही परिवर्तन दिखाई देने लगा। इतिहास के प्रति प्रसादजी का विशेष मोह था। इससे उन्होने अपनी नाटकीय-कथा-सामग्री प्राचीन इतिहास से ही ली। अजात शत्रु, चन्द्रगुप्त, स्कन्द गुप्त, राज्यश्री ऐतिहासिक नाटक हैं। प्रसादजी की नाटय-कला का सुन्दर परिचय इन्ही नाटको से मिलता है। इसके साथ ही कुछ पौराणिक नाटक भी प्रसादजी ने लिखे थे, जिसमे सज्जन, विशाख, जनमेजय का नाग-यज्ञ प्रमुख है। 'कामना' प्रतीकात्मक शैली पर लिखा गया नाटक है। ऐतिहासिक नाटको मे प्रसादजी ने नए-नए अनुसन्धान किए हैं आपके नाटको ने भारतीय इतिहास का एक नया और खोजपूर्ण दृष्टिकोण उपस्थित किया है। कल्पना और इतिहास का सुन्दर समन्वय इन नाटको मे हुआ है। साथ ही प्रसाद जी ने अपने नाटको मे नारी पात्रो पर विशेष ध्यान दिया है। प्रसादजी के नाटक दु खान्त नही सुखान्त हैं, परन्तु उनमे दुखात्मक भावना अवश्य मिलती है। 'एक घू ट' प्रसादजी का हिन्दी का पहिला सफल एकांकी नाटक है। कभी परन्तु और शैली की दृष्टि से प्रसाद जी के नाटको को सफल माना जाता है।

प्रसाद युग मे पौराणिक और ऐतिहासिक नाटकों की परम्परा निरन्तर चलती रही। मैथिलीशरण, गुप्त के 'तिलोत्तमा' तथा 'अनघ' मिश्र बन्धुओ के 'पूर्व भारत' और 'उत्तर भारत' मे बद्रीनाथ का 'वेनचरित्र' प्रमुख पौराणिक नाटक है। ऐतिहासिक नाटको मे जगन्नाथ प्रसाद 'मिलिन्द' की 'प्रताप मौर्य, वियोगी हरि का 'प्रबुद्ध यामुन' उदयशंकर भट्ट का 'चन्द्रगुप्त मौर्य' 'विक्रमादित्य, सेठ गोविन्ददास का 'हर्ष' सुन्दर ऐतिहासिक नाटक है। इन नाटको मे भारत का अतीत-गौरव बहुत सुन्दर रूप में चित्रित हुआ है।

इस युग में समस्या-मूलक नाटकों की रचना हुई। इस प्रकार के नाटकों मे समाज की समस्याओं पर प्रकाश डाला गया है। जगन्नाथ प्रसाद द्विवेदी का 'मधुर-मिलन' लक्ष्मीनारायण मिश्र के 'सन्यासी', राक्षस का

मन्दिर, 'मुक्ति का रहस्य' और प्रेम का 'प्रेम की वेदी' ऐसे ही सामाजिक नाटक है।

प्रसाद युग मे प्रहसन भी अपनी पुरानी परम्परा के अनुसार लिखे जाते रहे, जिनमे राधेश्याम का 'कौंसिल की मेम्बरी' श्री जालान का 'घिर-कटसूम' गोविन्द वल्लभ पन्त का 'कजूस की खोपडी' बद्रीनाथ भटट का 'विवाह विज्ञापन' और 'मिस अमेरिकन' तथा उग्र जी का 'चार बेचारे' सुन्दर प्रहसन है।

इन मौलिक नाटको के अतिरिक्त इस काल मे अनुवदो का क्रम भी चलता रहा। जिनमें सस्कृत के 'मालविकाग्नि' 'मित्र' 'मालती-मानव' 'स्वप्न वासवदत्ता' 'पचरात्र', 'कुन्द माला' तथा 'नागानन्द' के अनुवाद हुए। अग्रेजी नाटको के अनुवादो मे शेक्सपीयर के नाटको के अनुवाद अधिक हुए। इन अग्रेजी अनुवादो में लाला सीताराम के सुन्दर अनुवाद है। गाल्सवर्दी के तीन नाटको के अनुवाद भी इसी युग में हुए जिनमे सिलवर बाक्स का 'चादी की डिबिया' नाम से अच्छा अनुवाद प्रकाशित हुआ। बगला नाटकों के भी बहुत से अनुवाद हुए जिनमे रवीन्द्रनाथ गोर तथा द्विजेन्द्रलाल राय के नाटको की संख्या अधिक रही। 'राजा-रानी', 'विसर्जन', 'डाकघर' तथा 'चित्रागदा' सुन्दर नाटक है।

इस प्रकार प्रसाद युग हिन्दी-नाटक साहित्य के इतिहास में एक स्वण-युग माना जाता है। इन युग में जहा साहित्य के विभिन्न अगो का विकास हुआ, वहा नाटक का सर्वाधिक विकास प्रसाद युग में हुआ। भाषा भाव तथा शैली सभी दृष्टि से प्रासद-युग मे महत्त्वपूर्ण कार्य हुआ।

प्रसाद परवर्ती युग—प्रसाद युग के बाद हिन्दी नाटकों मे समाज की समस्याओ को प्रमुखता दी गई। युग के नाटककारो में सेठ गोविन्द दास चतुरसेन शास्त्री, उदयशकर भट्ट, चन्द्रगुप्त विद्यालकार, लक्ष्मीनारायण मिश्र हरिकृष्ण प्रेम तथा उपेन्द्रनाथ 'अश्क' रामकुमार वर्मा, विष्णु प्रभाकर के नाम विशेष उल्लेखनीय है। इस युग में सबसे अधिक नाटक लिखे जा रहे हैं और सफल हो रहे हैं। 'सिन्दूर की होली' आदि सुन्दर नाटक हैं। अश्क जी

का 'अंगूर की बेटी', हरिकृष्ण प्रेमी के 'छाया और बन्धन' भी इस युग के दो सबल और सुन्दर नाटक हैं।

इतना सब कुछ होते हुए भी अभी नाटक क्षेत्र मे काफी विकास होना है। सम्भव है नये लेखक इस ओर ध्यान देकर सस्ती मनोरजक भावुकता को छोड सही अर्थों मे नाटक के गुणो का विकास करे।



हिन्दी-उपन्यास का विकास

कुछ विद्वानो की सम्मति में हिन्दी-उपान्यास का प्रारम्भ "रानी केतकी की काहानी" से माना जाता है परन्तु यह रचना उपन्यास न होकर एक बडी कहानी है। मौलिकता की दृष्टि से हिन्दी का सबसे पहला उपन्यास लाला श्रीनिवासदास का "परीक्षा गुरु" है। यद्यपि भारतेन्दु ने इस दिशा में कुछ प्रयत्न किया था और एक दो उपन्यास लिखे थे, परन्तु वे अपने इस प्रयत्न मे विशेष रुचि न ले सके और इसलिए भारतेन्दु जी उपन्यास-क्षेत्र मे असफल ही रहे। फिर भी जहा नाटक, निबन्ध पत्र-पत्रिकाओ के विकास के लिए यह युग महत्त्वपूर्ण माना जाता है, वहाँ उपन्यास का आरम्भ भी भारतेन्दु काल से ही मानना चाहिए। बगाल, और अगेजी के उपन्यासो के अनुवाद प्रारम्भ हो गए, साथ ही कुछ मौलिक प्रयास, भी दिखाई देने लगे थे।

हिन्दी उपन्यास के विकास मे प० किशोरीलाल गोस्वामी और श्री देवकीनन्दन खत्री के नाम सर्वप्रथम लिये जा सकते है। इन दोनो लेखको के रचना-काल मे लगभग एक वर्ष का अन्तर है। श्री किशोरीलाल गोस्वामी एक प्रतिभाशाली लेखक थे। आपने ऐतिहासिक, सामाजिक तथा ऐयारी, जासूसी सभी प्रकार के उपन्यास लिखे, जिनमे आपने कई साहित्यक शैलियों का प्रयोग किया। आपने सब मिलाकर लगभग ६५ उपन्यास लिखे, जिनमें 'लखनऊ की कब्र', 'चपला', 'तारा' 'माधवी-माधव' तथा 'अगूठी का नगीना'

विशेष प्रसिद्ध हैं । आपके उपन्यासो में नग्न-शृंगार का चित्रण अधिक रहा है और इस दृष्टि से 'चपला' तो सबसे अधिक उत्तेजनापूर्ण उपन्यास रहा ।

गोस्वामी जी के बाद देवकीनन्दन खत्री का नाम आता है। आपने हिन्दी-उपन्यास का सुन्दर क्षेत्र तैयार कर दिया। प्रेमचन्द जी के उपन्यासों को जो इतने अधिक पाठक तैयार मिले, वह 'चन्द्रकान्ता' और 'चन्द्रकांता-सन्तति' के कारण ही। इस उपन्यासी ने अनक व्यक्तियो को हिन्दी सीखने की प्रेरणा दी। प्रचार की दृष्टि से भी 'चन्द्रकाता' एक सफल रचना रही। इसके बाद 'भूतनाथ' का प्रकाशन हुआ। 'भूतनाथ' और 'गुप्तगोदना' देवकी नन्दन जी पूरा न कर सके और स्वर्ग वासी हो गए। इन दोनो रचनाओ को क्रमश दुर्गाप्रसाद खत्री तथा प० किशोरीलाल जी ने पूर्ण किया। देवकीनन्दन जी की शेष रचनाओ मे वीरेन्द्रवीर, नरेन्द्रमोहिनी, 'कुसुम-कुमारी क जर की कोठरी प्रसिद्ध रचनाए है। आपके उपन्यासो का उद्देश्य केवल मनोरजन था। तिलस्मी और ऐयारी के मनोरजन घटनाचक्र पाठक को अपने मे ऐसी बाध लेते हैं कि पाठक उनमे फसकर अपने को बिलकुल खो बैठता है। भाषा बडी ही सरल है ।

हिन्दी उपन्यास के इन विकास मे श्री गोपालराम गहमरी का अपना एक विशेष स्थान है। आपने हिन्दी को जासूसी उपन्यासो का पूर्ण भण्डार दिया। अपनी वृद्धावस्था मे भी आप निरन्तर लिखते रहे। आपकी रचनाओ की सख्या लगभग ५०-६० है।

उपन्यासो को एक परिष्कृत रूप देने वालो में प० अयोध्यासिंह उपाध्याय, श्री ब्रजनन्दन सहाय और लज्जाराम मेहता का नाम सबसे पहले आता है। श्री उपाध्याय के "ठेठ हिन्दी का ठाठ" और "अधखिला फूल" दो प्रसिद्ध रचनाएँ हैं। आपने उपन्यासकला से अधिक भाषा के परिमार्जन पर ध्यान दिया है।

हिन्दी-उपन्यास का दूसरा युग मुन्शी प्रेमचन्द से प्रारम्भ होता है। प्रेमचन्द इस क्षेत्र मे युग प्रवर्तक सिद्ध हुए। उनके 'सेवासदन' ने जासूसी

और तिलस्मी उपन्यासो के स्थानो पर एक नया और स्वस्थ दृष्टिकोण पाठकों के सामने रखा। देश की राजनीतिक परिस्थितियाँ और घटनाएँ बदल रही जा रही थी। गांधी जी का असहयोग आन्दोलन अपने पूरे जोर पर था। उधर सामाजिक विचार धारा पर आर्य समाज के एक नये दृष्टिकोण का प्रभाव था। प्रेमचन्द समय को पहचानने वाले कलाकार थे। अपने युग के एक सच्चे प्रतिनिधि लेखक थे। इसलिए उन्होंने जो हिन्दी को उपन्यास दिये, वे हिन्दी साहित्य की अमूल्य निधि के रूप मे सिद्ध हुए।

प्रेमचन्द का अपना जीवन कठिन परिस्थिति में बीता था। पिता के देहान्त के बाद परिवार का भार उनके ऊपर आ गया था। गरीबी का अभिशाप पहले ही सिर पर था। विवश होकर अध्ययन कार्य करके अनेक कठिनाईयो के बाद बी० ए० तक शिक्षा पा सके। लिखने का नशा बचपन से ही हो चुका था। इसलिए अपना सारा जीवन उन्होने इसी कार्य मे लगा दिया। पहले वे उर्दू मे लिखते रहे, परन्तु बाद मे जब हिन्दी मे लिखना शुरु किया तो अन्त तक हिन्दी के ही बने रहे।

प्रेमचन्द के प्रारम्भिक उपन्यासो पर स्पष्ट ही आर्य समाजी विचार धारा का प्रभाव है। 'सेवा सदन' में वे वेश्या-सुधार की समस्या लेकर चले हैं। निर्मला मे अनमोल विवाह और दहेज प्रथा की समस्या है। 'कर्म भूमि' तथा 'रंग-भूमि' इनकी गांधीवादी विचारधारा को लेकर चलने वाले उपन्यास है। इसमे उस समय की राजनीतिक घटनाओ का यर्थाथ चित्रण हुआ है। 'कायाकल्प' कुछ आलोचको की दृष्टि से एक असफल और बोझिल-कथा-पूर्ण उपन्यास है। प्रेमचन्द जी का अंतिम उपन्यास 'गोदान' है। इस उपन्यास में भारतीय जनता का सच्चा और सही चित्रण हुआ है। प्रेमचन्द का दृष्टिकोण विशाल था। लेखनी मे एक अपूर्व शक्ति थी। इसी से समाज का ऐसा कोई व्यक्ति नही, को उनके उपन्यास का पात्र न हो। समाज की अनेक कुरीतियों पर प्रेमचन्द ने निर्मम होकर चोट की है। आज का उच्चवर्गीय समाज उन चोटो से भले ही तिलमिलाए, परन्तु हैं वे यथार्थ ही। प्रेमचन्द यथार्थ और

आदर्श दोनो के समन्वय को ही कला का सच्चा रूप मानते थे। पात्रो के अन्तस्तल मे बैठकर उनके भावो का सही चित्रांकन करना प्रेमचद जैसे कुशल कलाकारो का ही काम था। 'हिन्दी के उपन्यास सम्राट्' पद के वे सच्चे अधिकारी थे।

आपकी रचनाओ मे प्रेमा, वरदान, सेवा-सदन, रगभूमि, काया कल्प, निर्मला, कर्म भूमि तथा गोदान विशेष प्रसिद्ध हैं।

प्रेमचन्द जी के बाद ही उपन्यास साहित्य के विकास मे श्री प्रसाद जी का नाम आता है। प्रसाद जी यद्यपि कवि और नाटककार थे, फिर भी 'ककाल' और 'तितली' उपन्यास लिखकर उन्होने इस क्षेत्र में भी सफलता पाई और आगे आने वाले उपन्यासकारो के लिए मार्ग निर्देशन का कार्य किया। इरावती' उनका एक अधूरा उपन्यास है। वे अपने उपन्यासो मे यथार्थवादी अधिक रहे हैं।

हिन्दी उपन्यासकारो मे श्री विशम्भरनाथ शर्मा 'कौशिक' का नाम भी आदर के साथ लिया जाता रहेगा। आपने केवल दो उपन्यास लिखे—माँ और भिखारिणी। दोनो ही उपन्यास समस्या-प्रधान हैं। 'मा' मे मातृ हृदय का सफल चित्रण है, साथ ही वेश्यागमन की बुराइयो की ओर भी सकेत किया गया है। 'भिखारिणी' मे समाज मे छूतछात की समस्या को प्रमुखता दी गई है। इन दोनो ही उपन्यासो की कथा का विकास पात्रो के कथोप-कथन के द्वारा ही हुआ है और इसी साधन से पात्रो का मनोविश्लेषण तथा चरित्र चित्रण हुआ है। कौशिक जी ने अपने उपन्यासो मे समाज के विविध पात्र नही लिए, उनका क्षेत्र केवल पारिवारिक ही रहा है। वे अपने इन दोनो उपन्यासो में सफल रहे हैं।

श्री वृदावन लाल वर्मा हिन्दी के प्रतिष्ठित उपन्यासकार हैं। आपके उपन्यास ऐतिहासिक विषय को लेकर चले हैं। उपन्यासो का कथा क्षेत्र राजपूताना और बुन्देलखण्ड के राजघरानो से ही अधिक सम्बन्धित हैं। उनके उपन्यासो मे यथार्थ, आदर्श और रोमांश का अच्छा समन्वय हुआ है। इतिहास का यथार्थ चित्रण करने मे वर्मा जी कुशल हैं। पात्रो के स्वाभाविक चरित्र-

चित्रण और घटनास्थल का मनोरम वर्णन आपकी अपनी विशेषता है। 'गढ़ कुडार' विराटा की पद्मिनी, 'झाँसी की रानी लक्ष्मीबाई; तथा 'मृग-नयनी' वर्मा जी के प्रमुख ऐतिहासिक उपन्यास हैं, 'कुण्डली चक्र' 'प्रत्यागत' सामाजिक श्रेणी के उपन्यास हैं। 'प्रेम की भेंट' नाम के अनुसार केवल प्रेम-कथा प्रधान उपन्यास है।

बेचनशर्मा 'उग्र' अपने समय के एक प्रसिद्ध उपन्यासकार रहे, परन्तु आपके सामयिक विषयों के कारण आपकी ख्याति अधिक समय तक स्थिर न रही। 'चन्द हसीनों के खतूत' 'बुधवा की बेटी' दिल्ली का दलाल' तथा 'शराबी' आपकी प्रसिद्ध रचनाएँ हैं।

इस युग के उपन्यासकारों मे श्री सूर्यकान्त त्रिपाठी निराला, भगवती-चरण वर्मा, भगवती प्रसाद वाजपेयी, श्री गोविन्दवल्लभ पन्त, प्रतापनारायण श्रीवास्तव आदि का नाम विशेष रूप से लिया जा सकता है। निराला जी के निरुपमा अलका, प्रभावती विशेष उल्लेखनीय हैं। भगवती चरण वर्मा के 'दो बहनें' और 'चित्र लेखा' अच्छे प्रसिद्ध रहे। पन्त जी का 'जूनिया' और 'प्रतीमा' सफल रचनाएँ हैं।

इस काल के प्रमुख उपन्यास लेखकों मे श्री जैनेन्द्र, नागर, यशपाल, अज्ञेय, इलाचन्द जोशी, उपेन्द्र नाथ 'अश्क' गुरुदत्त, श्री रामचंद तिवारी आदि उच्च कोटि के उपन्यासकार हैं। श्री जैनेन्द्र जी की परख, सुनीता, कल्याणी प्रसिद्ध रचनाएँ हैं। अज्ञेय जी का नदी के द्वीप और 'शेखर एक जीवनी', उनकी प्रतिनिधि रचनाएँ है। इलाचद जोशी एक निराली ही विचार धारा के लेखक हैं। निर्वासित, मुक्ति पथ, पर्दे की रानी तथा छायापथ आपके प्रमुख उपन्यास है। रामचन्द तिवारी के सरिता, सागर और अकाल तथा कमला सुन्दर उपन्यास प्रकाशित हुए हैं। उपेन्द्रनाथ अश्क का चेतन एक मध्यमवर्गीय परिवार का सुन्दर कथानक प्रधान उपन्यास है।

इस प्रकार हिन्दी के उपन्यास साहित्य का विकास अपने विविध युगों में से होता हुआ पूर्ण उन्नति की ओर बढ रहा है। अब नयी पीढ़ी सामने आ

रही है उनमे विष्णु प्रभाकर, उदयशकर भट्ट, मोहन सिंह सेंगर, धर्मवीर भारती, रांगेय राघव प्रभाकर माचवे, रेणु आदि। अनेक उपन्यासकार नई दृष्टि से लिख रहे हैं। इस नये युग के प्रति आश्वस्त हुआ जा सकता है।



हिन्दी कहानी की कहानी

कहानी की कहानी बहुत पुरानी है। वेदों और उपनिषदो तथा ब्राह्मण ग्रन्थों में अनेक रूपात्मक कहानियो का वर्णन मिलता है। इसके बाद सस्कृत साहित्य मे पचतन्त्र तथा हितोपदेश, वेताल पचविंशति तथा कथा-सरितसागर प्राचीन कहानी के सुन्दर उदाहरण है। सस्कृत-साहित्य के बाद बौद्ध-धर्म की जातक कथाए तथा जैन-धर्म-कथाए भी प्राचीन कहानी के इतिहास मे ली जा सकती हैं।

हिन्दी मे आधुनिक कहानियों ने पहले इन पर फारसी कहानियो का प्रभाव रहा। 'तोता-मैना', 'गुल बकावली,' 'किस्सा साढे तीन यार' ऐसी ही फारसी की कहानियाँ थी, जिनमें मनोरजन तो था परन्तु आदर्श की दृष्टि से उन्हे उपयोगी नहीं माना जा सकता। वास्तव में हिन्दी कहानी का इतिहास इंशा अल्लाह खाँ की 'रानी केतकी की कहानी', से ही प्रारम्भ होता है। परन्तु कहानी-कला की दृष्टि से इसमें कोई विशेषता न थी। राजा शिव प्रसाद का 'राजा भोज का सपना' आधुनिक कहानी के अधिक निकट है। सन् १९०० मे 'इन्दुमती' का प्रकाश हुआ। लेकिन किशोरीलाल की इस कहानी पर अग्रेजी नाटक 'टेम्पेस्ट' का प्रभाव मिलता है आलोचको की दृष्टि मे हिन्दी की प्रथम मौलिक कहानी 'दुलाईवाली' थी, जो किसी बग महिला ने लिखी थी। इसी समय शुक्ल जी की 'ग्यारह वर्ष का समय' तथा मैथिलीशरण गुप्त की 'निन्नानवे के फेर' कहानियों का प्रकाशन हुआ।

हिन्दी कहानी के विकास में प्रसाद जी द्वारा 'इन्दु' पत्रिका का प्रकाशन महत्त्वपूर्ण है। इस पत्रिका ने हिन्दी कहानी के विकास को एक नियमित रूप दे दिया और अनेक कहानीकार इस क्षेत्र मे सामने आये। प्रसाद जी ने जहा कविता, नाटक और उपन्यास क्षेत्र में महत्त्वपूर्ण कार्य किया, वहा कहानी के विकास मे भी पूरा सहयोग दिया। ज्वालादत्त शर्मा, विश्वम्भरनाथ शर्मा कौशिक, प्रेमचन्द सुदर्शन तथा वृंदावनलाल वर्मा आदि ने इस विकास मे सहयोग दिया।

हिन्दी कहानी के विकास का इतिहास दो भागो मे विभक्त किया जा सकता है —(क) प्रथम उत्थान तथा (ख) द्वितीय उत्थान। हिन्दी कहानी के प्रथम उत्थान पर प्रेमचन्द जी का प्रभाव विशेष है, अत इस युग को 'प्रेमचद युग' भी भी कहा जा सकता है। इस युग की कहानियाँ जीवन के विविध विषयो को लेकर चली, जिनमे आदर्शवादी, यथार्थवादी, ऐतिहासिक तथा प्रेम प्रधान कहानियाँ हैं। प्रेमचद व्यावहारिक आदर्शवाद को लेकर चले इसलिए उनकी कहानियो मे समाज की अनेक समस्याओ पर प्रकाश डाला गया है। प्रेमचन्द की कहानियो मे साधारण जीवन के साधारण पात्र हैं। प्रेमचन्द ने इस साधारण समाज को बहुत निकट से देखा था, स्वय ऐसी ही कठिन परिस्थितियो मे होकर गुजरे थे। इसीलिए अपने कथा-साहित्य के लिए उसी साधारण जीवन को चुना जो उनके आस-पास था। इसी से उनकी कहानियो मे स्वाभाविकता और सजीवता है। प्रेमचन्द अपने उपन्यासो से अधिक कहानी मे विशेष सफल रहे हैं। प्रेमचद की प्रमुख कहानियो मे नमक का दरोगा, पच परमेश्वर, सत्याग्रह, शतरज के खिलाडी, आत्माराम तथा वडे घर की बेटी विशेष प्रसिद्ध हैं।

श्री विश्वम्भर नाथ शर्मा कौशिक ने यद्यपि 'मा' और 'भिखारिणी' दो उपन्यास भी लिखे हैं, परन्तु आपकी विशेष रुचि कहानी की ओर ही थी। आपने लगभग ३५० कहानियाँ लिखी हैं। कहानियो का विषय प्रायः समाज के ही विभिन्न स्तरो से लिया गया है। कथा का विकास पात्रों के कथोपकथन

से ही अधिक होता है। 'मनुष्यता का दण्ड' और 'नाई' आपकी सुन्दर और आदर्शवादी कहानियाँ हैं।

श्री सुदर्शन की कहानियो की कथा राजनीतिक, सामाजिक और ऐतिहासिक आदि अनेक विषयो को लेकर चली है। 'गुरु-मंत्र' तथा न्याय-मन्त्री' सुदर्शन जी की सुन्दर कहानियाँ हैं। इस प्रकार 'प्रेमचद युग मे जो कहानियाँ लिखी गई उनमे आदर्शवाद को भावना थी।

यथार्थवाद इस भावना की प्रतिक्रिया थी। इस प्रकार की कहानियो मे नैतिकता का कोई मूल्य नही। समाज का घृणित और नग्न रूप चित्रित ही इन लेखको का उद्देश्य था। इन चित्रो मे एक आकर्षण और सजीवता तो है, परन्तु समाज में आदर्श का भी कुछ महत्त्व है, यह तथ्य इन कहानी लेखको को स्वीकार न था। इसी से इन कहानियो मे सुरुचि का अभाव है। वासनात्मक उत्तेजनापूर्ण चित्र इन कहानियो मे मिलते हैं। चतुरसेन शास्त्री, बेचैन शर्मा उग्र तथा ऋषचरण जैन का नाम इस परम्परा मे विशेष उल्लेखनीय है।

इस युग मे कुछ ऐतिहासिक और प्रेम-प्रधान कहानियाँ भी लिखी गई। ऐतिहासिक कहानियो मे अपने युग का यथार्थ और सुन्दर चित्रण हुआ है। प्रेम और साहस दोनो का सुन्दर समन्वय इन कहानियो मे मिलता है। इस प्रकार की प्रसादजी की कई सुन्दर कहानिया हैं, जिनमे ममता, आकाश-दीप विशेष हैं। श्री वृन्दावनलाल वर्मा ने जहाँ ऐतिहासिक उपन्यास लिखने मे सफलता पाई है, वहा सुन्दर कहानियाँ भी लिखी हैं।

इस युग में कुतूहल-प्रधान तथा हास्यरस की भी कहानियाँ लिखी गई। इन कहानियो में पात्रो के चरित्रो पर विशेष ध्यान न देकर घटनाओ के ही ताने-बाने बुने गए हैं। जी० पी० श्रीवास्तव हास्य-प्रधान कहानी लेखक हैं। गोपालराम गहमरी और दुर्गाप्रसाद खत्री ने तिलस्मी और जासूसी कहानियाँ लिखी हैं।

हिन्दी कहानी के दूसरे युग में मनोवैज्ञानिक और सामाजिक कहानियों की प्रमुखता रही। जैनेन्द्र जी की पाजेब, चोर आदि ऐसी ही कहानियां हैं। इन कहानियो मे बौद्धिकता का अधिक प्रभाव है, साथ ही गाधीवाद के भी दशन होते हैं। श्री अज्ञेय जी की कहानिया भी इसी श्रेणी की हैं। परन्तु बौद्धिकता मे भी एक सरसता भर देना अज्ञेय जी की अपनी विशेषता है। श्री इलाचन्द्र जोशी की कहानियो पर फ्रायड के कामशास्त्र का विशेष प्रभाव है। इनकी प्रेम प्रधान कहानियाँ कही २ सुरुचि की दृष्टि से सुन्दर न रह सकीं। 'विद्रोही' उनकी एक ऐसी ही कहानी है।

समाजवादी विचारधारा के लेखकों में रांगेय राघव, अचल, आदि का नाम विशेष है। साथ ही भगवतीचरण वर्मा, भगवती प्रसाद वाजपेयी, उपेन्द्रनाथ अश्क, विष्णु प्रभाकर, सेंगर, नागर, यशपाल, सियाराम शरण, फणीश्वरनाथ, रेणु, कमलेश्वर, मार्कण्डेय, पहाड़ी, मन्मथनाथ गुप्त, रजनी आदि का नाम भी इसी श्रेणी मे आता है।



महात्मा कबीर

भारतवर्ष मे मुस्लिम साम्राज्य अच्छी प्रकार से स्थापित हो चुका था। मुसलमान बस कर भारतीय बन गए थे। रोष के ज्वर के पश्चात विवेक के दर्शन हुए। उन्होने अपने पडोसी हिन्दुओ से परिचय प्राप्त किया तथा उनकी बहुत सी बातो को ग्रहण किया परन्तु अभी दोनो की कटुता और कट्टरता में कमी न आई थी। इस मनोमालिन्य को मिटाने का प्रयत्न अनेक व्यक्तियों द्वारा अपने-अपने ढग से किया गया। परन्तु कबीर ने इस विषय में तनिक कठोरता से काम लिया। महात्मा कबीर ने हिन्दु मुस्लिम एकता के लिए तथा दोनो में प्रेमभाव उत्पन्न करने के लिए बडे ही सद् प्रयत्न किए।

महात्मा कबीरदास का जन्म सवत १४५६ मे हुआ था। किवदन्ती के अनुसार यह एक विधवा ब्राह्मणी से उत्पन्न और एक जुलाहा दम्पति से पालित हुए थे। कबीर के बाल्यकाल का विवरण अभी तक अन्धकार मे है। इन्हें यथानियम अध्ययन करने का अवसर नही मिला। कबीर के ही शब्दो मे, उन्होने 'मसि कागज छूओ नही, कलम गहो नहि हाथ।' बाल्यकाल से ही उन्हें अपना पैतृक व्यवसाय करना पडा था, परन्तु जान पडता है उनका अवकाश काल हिन्दु-साधु-सन्तो के बीच व्यतीत हुआ करता था इसी सगति का प्रभाव समझिए जो कबीर की कविता में हिन्दु धर्म की अभिव्यक्ति है और इसी कारण यह महात्मा रामानन्द के शिष्य हुए। इनकी कविता मे सूफी धर्म की व्यजना के कारण कबीर पथी मुसलमान इन्हें मानिकपुर के निवासी सूफी फकीर शेख तकी का शिष्य मानते हैं। साधु स्वभाव कबीर गृहस्थ थे। उनकी स्त्री का नाम लोई और पुत्र का नाम कमाल बतलाया जाता है। इनकी आयु ११९ वर्ष की मानी जाती है जो ऐसे सदाचारी व्यक्ति के लिए असम्भव नही जान पडती।

कबीर की विलक्षण प्रतिभा के क्रमिक विकास सूचक साधनो का अभाव है। उन्होने खूब देशाटन किया था और हर प्रकार के जानकारो का साथ किया था। इससे उनका अनुभव और ज्ञान विस्तृत हो चला था। इनका

प्रभाव कबीर की भाषा पर भी पड़ा। यद्यपि वे कह गए हैं कि 'मेरी बोली पूरबी' तथापि उसमे अवधी, ब्रज, खड़ी, बिहारी, पंजाबी और राजस्थानी के साथ फारसी अरबी तक का मेल है, यह बेमेल मिठाई संस्कृत और साहित्यिक न होते हुए भी कबीरकी स्वच्छन्द प्रकृति की परिचायक है। जिस प्रकार इस कवि ने अन्य क्षेत्रों में विधि-निषेध की कड़ियां तोड़ी हैं उसी प्रकार भाषा की व्याकरण शृंखलाएँ भी। अलंकारों से लदी और छन्दशास्त्र के नियमों से बद्ध साहित्यिक भाषा का माधुर्य उनकी कविता में दुर्लभ है। उसमें भावों की निष्कपट एवं सच्ची अभिव्यंजना है। कबीर की यह विशेषता उनको हिन्दी के अन्य कवियों की परम्परा से अलग रखती है।

उन्होंने एक स्थान पर 'सायर, सिंह, और सपूत' का लीक पर न चलना लिखा है। इस बात को अपने व्यवहार मे चरितार्थ कर दिया है। कबीर ने हिन्दू और मुसलमान दोनों के धार्मिक अन्ध-विश्वासों की कठोर आलोचना की है। धर्म के नाम पर किए जाने वाले ढोंग कबीर को अच्छे नहीं लगते थे। उन्हें तो सरल तथा शान्तिमय जीवन प्रिय था और धर्म के मूल-तत्त्व—अहिंसा सत्य, सदाचार आदि सद्गुण उनके इष्ट थे। इसी से उन बातों से रहित धर्म के पुजारी कबीर के कोप-भाजन बने। कबीर की ईश्वर विषयक धारणा भिन्न भिन्न साम्प्रदायिक विचारों की खिचड़ी जान पड़ती है। कहीं वह अपने को 'राम की बहुरिया' कहकर सखी-भाव के भक्त जान पड़ते हैं और कहीं मुक्ति न मांगकर भक्ति की याचना करते हुए दास। कहीं वह रामानन्दनीय-भावना से दास राम राम के भक्त दिखाई पड़ते हैं और कहीं यह कहते हुए सुने जाते हैं कि 'दशरथ सुत तिहुँ लोक बखाना, राम नाम का मरम न जाना।' आगे चलकर 'निरगुण राम, जपहु रे भाई' कह कर कबीर ने अपने राम को ब्रह्म का पर्याय बना लिया।

यह कबीर का धार्मिक सिद्धाँत जान पड़ता है। ज्ञान के विषय निराकार ब्रह्म को, कल्पना का ही विषय न बनाए रखकर, कबीर ने भावना क्षेत्र में साकार बनाकर, जान पड़ता है, निर्गुण-सगुण का भेद मिटाने की चेष्टा की है

ःवीर की ज्ञान सम्बन्धिनी उक्तियों को उनके आत्मानुभाव का सार समझना ाहिए क्योंकि वे स्वय कह गए हैं कि 'सो ज्ञानी जो आप विचारें।' कबीर ने त्सग से वेदान्त, उपनिषद् और पुराणो की बहुत सी बातें जान ली थी, योग ी क्रियाएँ भी वे जानते थे। पर इससे यह न समझना चाहिए कि वे इन ३षयों में पारगत थे।

जिस रहस्यवाद की हिन्दी मे धूम रही, उसका सच्चा स्वरूप हमें कबीर ां दिखाई पडता है। इस ससार के समस्त कार्य जिस अदृष्ट शक्ति द्वारा ाचालित होते हैं उसका पता लगाने की चेष्टा ही रहस्यमयी कल्पनाओ को न्म देती है कबीर ने परमात्मा को मित्र, माता, पिता और पति के रूप में ाखा है। उनकी वे उक्तियाँ जिनमे ये भाव है, रहस्यवाद के अन्तर्गत हैं। उनकी वे उलटवासियो में भी रहस्यभावना भरी हुई है। जैसे—

लाली मेरे लाल की जित देखू तित लाल
लाली देखन मैं गई मै भी हो गई लाल ।।

इनमें परोक्ष सत्ता की एक धुंधली सी झलक मिलती है कबीर की रहस्योक्तियो मे यद्यपि काव्य-पद्धति के अनुसार अनेक-रूपता नही, उनमें वहुत प्रकार के चित्र नहीं हैं तथापि उनमे अकित चित्र कही-कहीं बहुत सुन्दर बन पडे हैं।

कबीर की कविता की सबसे बडी विशेषता यह है कि उसमें छन्द, अलंकार, व्याकरण आदि की बाहरी तडक-भडक से आवृत कवि की आत्मा के दर्शन नही होते, वह तो कवि के हृदय का स्वच्छ दर्पण है। स्पष्ट शब्दो मे कही हुई कबीर की उक्तियाँ इसी गुण के कारण इतनी प्रभावशालिनी हैं। यह सच है कि इस कवि की बात अधिक उक्तियाँ कविता नहीं कहला सकती, परन्तु इसमे उनकी सत्य की अभिव्यक्ति करने वाली भावपूर्ण रचना का मूल्य घटाना ठीक नही। कबीर कई दृष्टियो से हमारे कवियो के बीच उच्च स्थान के अधिकारी हैं। ज्ञान सम्बधी रचनाकारो मे वे निर्विवाद सर्व-श्रेष्ठ हैं। नीति-काव्यकारो में रहीम और वृन्द उत्तम माने जाते हैं किन्तु

कबीर के नीति विषयक दोहे इन लोगों से कहीं अधिक लोकप्रिय हैं। रहीम ने कबीर के बहुत से दोहों का भाव अपनाकर एक प्रकार से इनकी श्रेष्ठता स्वीकार की है। भारतीय जन-समाज पर तुलसी के बाद कबीर की ही कविता प्रभावशालिनी हुई है और आडम्बर-विहीन भावाभिव्यक्ति तथा अलौकिक प्रतिभा तो कबीर के समान अन्यत्र अलभ्य है।

कबिर के विषय में प्रायः दो मत प्रचलित हैं एक दल तो उनको समाज-सुधारक मानता है, कवि नहीं। दूसरा दल उनको रहस्यवादि कवि मानता है और काव्य-जगत् में उनको उच्च स्थान प्रदान करता है। वास्तव में उनके समाज-सुधारक होने में कोई सन्देह नहीं। वह स्वयं 'कबीरपंथ सम्प्रदाय' के प्रवर्तक के नाम से विख्यात थे। उनको केवल कवि की पदवी से विभूषित करना युक्तियुक्त प्रतीत नहीं होता। वे वास्तव में सुधारवादी उच्च कवि थे। हिंदी के शैशव काल में इसको राष्ट्रभाषा का रूप देकर समस्त उत्तर भारत में उसे सुबोध बना देना कबीर जैसे महात्माओं का ही कार्य था।



कवि शिरोमणि गोस्वामी तुलसीदास

युग आयेंगे और चले जायेंगे किंतु युगों की शूलावली को कुचल कर जो चरण बढ़े हैं, उनके चिन्ह कभी नहीं मिट सकेंगे। आने वाले समय की धड़कनें उनकी पूजा में गीत गायेंगी मनुहार करेंगी और अपना सिर झुका आत्म विभोर हो, अराधना में लीन हो जायेंगी, राम को भला कौन भुला सकता है? राम के साथ तुलसी के नाम से कौन अनभिज्ञ रह सकता है। भविष्य चिरकाल तक अपने आँसुओं का अर्घ्य इन महान् आत्माओं के चरणों पर चढ़ाता रहेगा और विश्व भारत पर अनंतकाल तक तुलसी का नाम लिखा हुआ पढ़ा जा सकेगा।

साहित्याकाश मे तुलसीदास सूर्य की भाँति जगमगाते हैं। आज तक अनेक कवि हुए किंतु तुलसी का प्रकाश किंचित भी कम न हुआ। विश्व के अंधकार में आज भी तुलसी का साहित्य ज्योति की किरणें बिखेर रहा है।

तुलसीदास का जन्म सम्वत् १५८९ के लगभग माना जाता है। इनका बचपन का नाम 'रामबोला' था। पिता आत्माराम दुबे राजापुर, जिला बांदा के निवासी थे। इनकी आर्थिक दशा अच्छी न थी। जाति के ब्राह्मण होने के कारण अपनी दुर्बलता इन्हे अखरती भी न थी।

इनका जन्म मूल नक्षत्र मे हुआ था इसलिए इन्हे घर से निकाल दिया था। नहीं कहा जा सकता कि मा बाप अपने बच्चे को घर से निकाल सकते हैं कुछ भी हो, यह सत्य है कि छोटी मे आयु मे तुलसी अनाथ हो गये थे। यह साधु-सतो मे रहने लगे और गाने लगे। सुना जाता है कि गुरु नरहरिदास के पास रहकर तुलसी ने १२ वर्ष तक विद्या पढी। इनके पाण्डित्य से प्रभावित होकर दीनबंधु पाठक ने इनके साथ अपनी लड़की का विवाह कर दिया। विवाह हो जाने पर वह गृहस्थ हो गए। तुलसीदास जी का अपनी पत्नी रत्नावली से इतना प्रेम था कि एक क्षण का वियोग भी उन्हे सहन नहीं था। एक दिन उनकी अनुपस्थिति मे पत्नी अपने पिता के घर चली गई। जब तुलसी सायंकाल को घर लौटे और ज्ञात हुआ तो अत्यन्त दुखी हुए। पत्नी के वियोग को सहन न कर सके। रात को नदी, नाले पार करके उसके पास पहुँचे। इससे पत्नी को अपने माँ बाप के सामने बड़ा लज्जित होना पड़ा और वह तुलसीदास से बिगड़ गई। क्रोध मे उसने तुलसी से केवल इतना कहा—

"लाज न लागत आपको दौरे आयेहु साथ।
धिक् धिक् ऐसे प्रेम को कहा कहो मैं नाथ॥
अस्थि-चर्ममय देह मम तामे ऐसी प्रीति।
जो होती श्री राम मह तौ न होति भवभीति॥"

एक-एक शब्द तुलसी को बाण के समान लगा। वह उसी समय वहा से

चल दिए । रत्नावली रोकती ही रही, पर तुलसी न रुके । काशी में जाकर यह रामानद के शिष्य हो गए । उनसे यह विद्याध्ययन करते रहे तथा तीर्थ स्थानों मे घूमते रहे । विशेषकर यह काशी तथा अयोध्या में रहे । काशी में पहले हनुमान नाटक, फिर गोपाल मदिर में रहे । कृष्ण-सम्प्रदाय वालों के द्वेष के कारण यह स्थान भी इन्हें छोडना पडा और फिर वह अस्सी घाट पर जाकर रहने लगे । अयोध्या मे रहकर तुलसीदास ने 'रामचरिममावस' की रचना की। राम में उनकी अटूट श्रद्धा थी । स्वभाव से वह सरल तथा स्नेही थे । बताते हैं कि मीराबाई और सूरदास ले भी इनकी भेंट हुई थी ।

सम्वत् १६८० में काशी मे महामारी का प्रकोप हुआ । हमारे हिन्दी के शेक्सपयीर तुलसी भी इससे न बच सके । उनके मुख मे यह अन्तिम दोहा निकला और वे शान्ति की नीद सो गये—

राम नाम यश बरनि कै भयो चहत अब मौन ।
तुलसी के मुख साजिए, अब ही तुलसी सोन ।।

सम्वत् १६८० मे ही काशी में इनकी मृत्यु हुई । इस सम्बन्ध मे एक दोहा प्रसिद्ध है—

सम्वत् सोलह सौ असी असी गंग के तीर ।
श्रावण श्याम सप्तमी तुमसी तज्यो शरीर ।।

परन्तु अब यह प्रमाणित हो चुका है कि उनकी मृत्यु—

"श्रावण शुक्ला तीज शनि, तुलसी तज्यो शरीर"

तुलसीदास सस्कृत तथा हिन्दी भाषा के अगाध पण्डित व धुरन्धर विद्वान् थें । उनके बनाए हुए अनेक ग्रथ है जिनमें रामचरितमानस, कवितावली गीतावली, दोहावली, विनयपत्रिका, जानकीमगल, रामलाल नहछू, बरवै रामायण तथा हनुमान चालीसा प्रसिद्ध हैं। तुलसी ने ये सब ग्रथ राम की भक्ति के लिखे है ।

तुलसी का व्रज तथा अवधी दोनों भाषाओं पर पूर्ण अधिकार था । उनमे साहित्यि पुट देकर तुलसी ने उन्हें और भी सरल बनाया । उनका

'रामचरितमानस' अवधी भाषा में लिखा हुआ है तथा कृष्ण गीतावली, गीतावली आदि ग्रथ ब्रज भाषा मे ?? दोहे, चौपाई, सोरठा, छप्प, कवित्त, सवैया प्राय: सभी छन्दो का प्रयोग तुलसी ने किया है। भिन्न-भिन्न प्रकार के गीत तथा पद भी उन्होने लिखे हैं भक्तिकालीन रामशाखा के वे प्रतिनिधि कवि हैं। राम की जीवन-गाथा गाकर तुलसो अमर हो गए। उनकी भक्ति राम में अतुल थी। राम के प्रेम मे विभोर होकर ही उन्होने जो कुछ कहा, वही कविता बन गई।

विश्व हित के लिए 'मानस' लिखकर तुलसी ने समाज का भारी उपकार किया है। हम उस बहुमुखी प्रतिभा के सत की वाणी उसके ग्रन्थो से सुनकर उसी के अनुसार आचरण करें तो हमारा कल्याण अवश्य होगा। ईश्वर हमे सद्बुद्धि दे कि हम तुलसी क बताए मार्ग पर चल सकें।

साहित्यिक दृष्टिकोण से यद्यपि गोस्वामी जी की 'विनय-पत्रिका' श्रेष्ठ रचना मानी जाती है तथापि उनकी ख्याति, लोकप्रियता और सम्मान का मूलाधार उनका 'रामचरितमानस' है। ज्ञात नही इस महाकाव्य के कितने सस्करण निकल चुके हैं। कितने टीकाकार और वाचक इसके कारण अमर हो गये परन्तु फिर भी इस काव्य का आकर्षण न्यून नही हुआ है।

साहित्य के महान् विद्वानो से लेकर अपढ व्यक्ति तक रामायण की महानता पर मुग्ध होता है और उसकी सराहना करता है। सच तो यह है कि इस अलौकिक महाकाव्य ने उत्तर भारत की हिन्दू जनता मे धर्म-ग्रन्थ का स्थान ग्रहण कर लिया है यह पोथी प्रत्येक हिन्दू के घर मे पाई जाती है और उसे सब बडे सम्मान की दृष्टि से देखते हैं।

स्पष्ट है कि यदि केवल लोकप्रियता ही किसी कवि के महत्त्व की कसौटी मानी जाए तो हमारे गोस्वामी जी हिन्दी के सर्वोत्कृष्ट कवि प्रमाणित होते हैं।

समाज प्राय: उन कवियो को जो उनको अच्छे लगते हैं, प्रमुख स्थान देता है और अन्यों को गौण। इस कवि-पुगव के विषय में कदापि दो सम्मतिया नही हो सकती। गोस्वामी जी कविता के परिणाम के आधार पर, भाषा पर

अपूर्व आधिपत्य के आधार पर, विभिन्न काव्य शैलियो की सफल रचनाओं के आधार पर, मनोरम अलंकार योजना एव सुन्दर भावव्यंजना आदि के आधार पर तथा लोकप्रियता के आधार पर सभी दृष्टियो से हिंदी साहित्यकारो में सर्वोत्कृष्ट हैं। भाव-व्यंजना के आधार पर इनकी तुलना ससार के किसी भी कवि से की जा सकती है। शेक्सपीयर की सराहना करने वाले लोग तुलसी की प्रतिभा से चमत्कृत हो जाते हैं।

स्पष्ट है कि हिन्दी साहित्य और हिन्दू समाज गोस्वामी जी का चिर ऋणी है। उनके दिव्य सन्देश ने, इनकी आशावादिता ने, मृतप्राय हिन्दू जाति के लिए सजीवनी का कार्य किया। इनकी सामन्जस्य भावना ने हिन्दुओ को पारस्परिक सकटो से मुक्त रखा। अभी तक धर्म परायण आर्त हिन्दू 'राम-चरित-मानस' मे अपनी समस्याओं का हल प्राप्त करता है।

उन्होंने काव्य-रचना काव्य निर्माण की दृष्टि न की थी। वह आन्तरिक प्रेरणा का परिणाम थी। वह स्वान्तः सुखाय रची गई थी। निम्नलिखित कथन से हम पूर्णतया सहमत हैं।

कविता करके तुलसी न लसे,
कविताई लसी या तुलसी की प्रभा।

सूरदास

हिंदी-साहित्य-गगन के कमनीय कलाधर सूर से भला कौन परिचित नहीं है। हिंदी साहित्य में उन्होने जो रस का सागर लहराया है उसमे भक्त-गण अवगाहन करके आज भी कृतार्थ होते हैं। कृष्ण सम्प्रदायवादियों पर सूर की आत्मा चन्द्रिका की भांति छाई हुई है। उन्होने उस नवीन भक्ति पद्धति का द्वार खोला, जिसके मार्ग पर आज इतनी भीड-भाड है कि चलने को स्थान

सूरदास भक्तिकालीन कृष्ण-भक्ति-शाखा के प्रतिनिधि कवि थे। अष्ट छाप के कवियो में उनका प्रथम स्थान था। कृष्ण के बाल रूप का जैसा अनूठा वर्णन उन्होंने किया विश्व के किसी अन्य कवि ने नहीं किया। विरह वर्णन भी इनका विश्व साहित्य में बेजोड है। इसलिए इन्हें वात्सल्य तथा विप्रलम्भ रस का अवसर कहा जाता है। इनका एक-एक पद मानों एक-एक गोपी है। जितनी मधुरता, जितनी सरलता और हृदय की तन्मयता इनके पदो में है वैसी हिन्दी साहित्य मे अन्यत्र नहीं।

'सूरसागर' के प्रथम नौ स्कंधों में तो केवल श्रीमद्भागवत की कथाओं का सरल और सीधा-सादा वर्णन है। परन्तु दसवें स्कंध से कृष्णलीला का वर्णन आरम्भ होता है। प्रारम्भ में कृष्ण का मथुरा मे जन्म और वासुदेव द्वारा यशोदा के यहाँ ब्रज में पहुँचना साधारण वर्णन प्रारम्भ होता है, उसमे कवि की सच्ची प्रतिभा के दर्शन होते हैं। मातृ-हृदय की कोमल भावनाओ और बाल सुलभ लीलाओ का ऐसा स्वाभाविक वर्णन अन्यत्र मिलना कठिन है।

अभी कृष्ण छोटे हैं। मा का दूध पीते हैं, अभी न मुँह में दांत आए हैं और न अभी बोलना सीखे हैं। यशोदा उनको गोद मे लेकर अभिलाषा करती हैं कि—

कब मेरो लाल घुटुरुव रेंगै कब धरनी पग द्वैक धरै।
कब द्वै दन्त दूध के देखो कब तुतरे मुख बैन झरै।
कब धों तनक-तनक कछु खैहै आपन कर सो मुखहि भरै।
कब हसि बात कहेगो मोसों छवि देखत दुख दूरि टरै।

अब कृष्ण कुछ बड़े हो गए हैं। सखाओ के साथ वन में गो चराने जाते हैं, और अवसर पाकर माखन चोर का दाव भी लगा जाते हैं, लेकिन जब कभी पकड़े गये, तो चतुराई करके मा के पीटने से बचने का प्रयत्न करते हैं।

हौं बालक बहियन को छोटो छींको केहि विधि पायो।
ग्वाल-बाल सब बैर पड़े हैं बरबस मुख लपटायो॥

इस प्रकार सूर ने वात्सल्य रस में एक अनुपम सफलता पाई है। सूर ने चलती हुई ब्रजभाषा में ग्रंथ रचना की। कहीं-कहीं संस्कृत के तत्सम शब्दों का भी पुट देकर भाषा को अधिक सुन्दर बना दिया है। सूर की ब्रजभाषा में बड़ा माधुर्य-लालित्य तथा सुकुमारता है। शब्दों की तोड़-मरोड़ भी उन्होंने अधिक नहीं की। बीच-बीच में मुहावरों के योग से भाषा अधिक सरस बन गई।

सूर ने केवल पद ही लिखे हैं, किन्तु कई राग तथा रागनियाँ उनके पदों में ऐसी हैं, जिनका ज्ञान आज के संगीतज्ञों को हुआ भी नहीं। अपने पदों की अमूल्य निधि में ही सूर ने इतने रत्न भर दिए हैं कि उन सब को समेटना कठिन सा है।

सूर ने कई ग्रंथों की रचना की, किन्तु अधिक प्रसिद्ध ग्रंथ उनके तीन हैं :—(१) सूरसागर (२) सूरसारावली (३) साहित्य लहरी। उनकी रचनाओं के सम्बंध में विद्वानों के भिन्न भिन्न मत हैं। 'सूरसागर' उनकी रचना है, यह तो सब मानते हैं, किन्तु कुछ विद्वान 'सूरसारावली' तथा 'साहित्य लहरी' को उनकी रचना नहीं मानते।

जिस काल में सूर का जन्म हुआ उन दिनों भारत में भक्ति की लहर फैल रही थी। इस युग की इस विशेषता से सूरदास भी प्रभावित हुए तथा शोक और दुःख के सागर में डूबी हुई हिन्दू जनता के लिए अमर सन्देश देने लगे। देश में मुसलमानों का शासन था। बहुत से हिन्दू मुसलमान बन रहे थे और यदि सूर या तुलसी आकर कृष्ण तथा राम का सन्देश न देते तो हिन्दु जाति अधोगति को पहुँच जाती। भटकती हुई हिन्दु जाति को सूर ने ऐसी सुरीली तान से मोहित किया कि सब कृष्ण ? भक्ति-प्रवाह में डूब कर अपने दुःख भूल गए। सूर का 'सूरसागर' केवल एक काव्य ग्रन्थ ही नहीं, अपितु उस युग की निराशा की गहन निशा के गहन अन्धकार का अन्त कर उदय होने वाला सूर्य है।

सूर ने अपना समस्त जीवन कृष्ण की भक्ति मे बिताया। कृष्ण के प्रेम मे वे इतने मतवाले रहते थे कि अपने तन की सुध-बुध भी भूल जाते थे। उनकी भक्ति तथा प्रेम को देखकर स्वय कृष्ण का उनका भक्त होना पड़ा। इसलिए उन्होने सूर को यह प्रतिभा तथा दिव्य दृष्टि प्रदान की जिसका उपयोग कर सूर ने हिन्दी साहित्य के भक्तिकालीन इतिहास को स्वर्ण रजित कर दिया। सूर वास्तव मे महान थे। एक सूरभक्त की भावना देखिए—

किधौं सूर को सर लग्यो किधौं सूर की पीर।
किधौं सूर को पद लग्यो, बेधौं सफल सरीर॥



वर्तमान हिन्दी साहित्य की प्रगति

साहित्य शब्द अपने आप मे अत्यन्त व्यापक है। व्यापक इस अर्थ में कि साहित्य शब्द से कविता, कहानी नाटक उपन्यास और निबन्ध आदि सभी पर दृष्टि डालनी होती हैं। जब हम वर्तमान साहित्य की प्रगति पर विचार करते हैं तो हमारा अभिप्राय उस साहित्य की प्रगति से होता है जो प्रसाद युग के बाद प्रारम्भ होती है। परिस्थिति के अनुसार जो विचारधाराएँ परिवर्तित होती रहती हैं साहित्य भी उन विचारो का प्रतिबिम्ब होने के कारण अपने रूप परिवर्तन करता रहता है। साहित्य तो जीवन की व्याख्या है। जिस अवस्था की गहन गुफा से जीवन यात्रा प्रारम्भ करता है उसकी स्मृति और अनुभूति ही साहित्य को जन्म देती है। सामाजिक और राजनीतिक आर्थिक, धार्मिक परिस्थिति के अनुसार जब-जब जीवन की दिशा मे मोड आए तब-तब साहित्य ने भी वीरगाथा काल, भक्तिकाल, रीतिकाल और आधुनिक काल के रूप में पलटा खाया। आधुनिक काल में भी भारतेन्दु युग,

द्विवेदी युग और प्रसाद युग इसी परिवर्तन की देन है। वर्तमान साहित्य की प्रगति दृष्टि से उनका ज्ञान कर लेना आवश्यक है।

साहित्य का मुख्य अंग काव्य है। काव्य के दृष्टिकोण से प्रसाद के युग मे जो धारा चली वह छायावाद और रहस्यवाद के रूप में मुख्य रूप से प्रसिद्ध हुई। आज की सामाजिक, राजनीतिक और आर्थिक परिस्थतियाँ बडी शीघ्रता से बदली हैं। जब तक भारत को स्वतन्त्रता नही मिली थी तब तक कवि या तो एक मात्र राष्ट्रीय गीतो का गायक रहा या एक मात्र काल्पनिक स्वप्नलोक मे विचरण करने वाला। स्वतन्त्रता मिलते ही काव्य का रुख बदल गया। नवीन भावना वेदना, करुणा और निराशा को लेकर बही। कारण उसका यह रहा कि जो स्वप्न स्वतन्त्रता से पूर्व पलको मे पल रहा था वह टूट गया, क्योकि सामाजिक विषमता दिनो दिन बढ रही हैं। इस विषमता ने उन कवियो को जो "प्रकृति की नव माया से सम्बन्ध तोड कर, द्रुमो की मृदु छाया को छोड कर वाला के वाल जाल मे अपने लोचनो को उलझना नहीं चाहते थे उन्हें भी यह कहने पर विवश कर दिया—

गा कोकिल, बरसा पावक कण, अन्त ध्वस्त हो क्षीण पुरातन (पंत)

हम देखते हैं कि समाज में इतनी बडी विषमता आ गई है कि एक ओर धनिक वर्ग श्रमिको की रोटी छीन कर आनन्द ले रहा है दूसरी ओर गरीब किसान, मजदूर भूखे मर रहे हैं। इन पूँजीपतियो को उन गरीब किसानो की व्यथा सुनने का अवकाश नही हैं। कवि के शब्दो मे

पागल जो अपने सुख मे,
हैं जिनको सुप्त व्यथाएँ।
अवकाश कहाँ फिर उनको,
सुनने का करुण कथाएँ।

ये विचार धाराएँ आज प्रगतिवाद के नाम से प्रसिद्ध हैं। कवि ने

इस वैषम्य को मिटाना ही अपना सर्वप्रथम कर्तव्य समझा। इसलिए दिनकर ने कहा था—

व्योमकुंजी की परी अयि कल्पने,
आ उतर हस खेल लें वन-फूल मे।

इसी विषमता से ऊब कर तो कवि अपने नाविक को भुलावा देकर चलने के लिए उकसा रहा था। महादेवी की निराशा ने भी काव्य के क्षेत्र में इसी प्रकार की करुणा जागृत की थी। उन्होंने तो वियोग को ही जीवन मान लिया था—

काटूं वियोग पल रोते।
सयोग समय छुप जाऊ॥

परन्तु यह काल्पनिक प्रिय का वियोग कब तक मानव को छलता। समय आया और कवि कल्पना के स्वर्ग से उतरकर यथार्थ और प्रत्यक्ष सत्य की कठोर धरती पर आया। आते ही उसने क्राति का बिगुल बजाया। उसने कहा—

कवि कुछ ऐसी तान सुनाओ जिससे उथल पुथल मच जाए,
एक हिलोर इधर से आए एक हिलोर उधर से आए।

(नवीन)

अब कवि का उद्देश्य यही हो गया कि वह ऐसी रचना करे। यह भावना महाप्राण निराला की पौरुषपूर्ण वाणी मे अभिव्यक्त हुई—

वह तोड़ती पत्थर
इलाहाबाद के पथ पर।

पुरानी पीढी के अतिरिक्त जो नए रचनाकार सामने आए उन्होंने भी ऐसी कविताए लिखी। बलबीर सिंह रग की वह पक्ति इसी दिशा की ओर सकेत करती है—

अभी तो निर्माण की दिशा मे सुधार है साधना नहीं है—

न मन्द तारों की कान्ति होगी।
कभी तो धरती पै शान्ति होगी॥

अभी तो एक और क्रान्ति होगी—यह सत्य है कल्पना नहीं है।

तरुण कवि इस यथार्थ पृष्ठ भूमि पर ऐतिहासिक सत्यो के आधार लेकर पूंजीवाद का भडा फोड करने लगे—

मैं चमचम करते फाड समाजी पर्दे को
अन्दर सडती नगी तस्वीर दिखाने आया हू—

(रामावतार त्यागी)

तरह-तरह से इन श्रमिको के कार्य के प्रति सहानभूति प्रकट करने लगे—

चांदनी चढाता हूं उन चरणों पर जो अपनी राहे आप बनाते हैं।
आवाज लगाता हूं उन गीतो को जिनको मधुवन मे भौंरे गाते हैं॥

(रामनाथ अवस्थीथ)

अब उसे एक निश्चय हो गया कि जब तक यह वैषम्य समाप्त नही होगा तब तक सूखी समाज के स्वप्न प्रभात के नक्षत्र हैं। उसने कहा—

कहीं पर व्यथा है, कहीं पर हसी है, कहीं आंख भीगी, बसरी है।
कहीं पर महल है, कहीं झोंपड़े हैं कहीं जामे-साकी कहीं भुखमरी है।
अगर चाहते हो सुखी दिन बिताना तो ये भेद सारे मिटाने पडगे।

(मधुर)

जीवन की इस विषमता का चित्र इस व्यापकता से चित्रित हुआ कि यह समस्या भारत की नहीं रह गई, विश्व-व्याप्त हो गई। उसके दु ख व्यक्ति से उठकर समाज में व्याप्त हो गए।

आज तो मेरा सखा ससार है, व्यक्ति का मृदु प्यार अब नि सार है।

(मधुर)

इस धारा मे नीरज, रग, त्यागी, वीरेन्द्र, मधुर शास्त्री, राही, चिरजीत, दिनेश, चचल, रमानाथ, अचल, गोपाल कृष्णकौल आदि कवियो की रचनाएँ पर्याप्त प्रसिद्ध हुई।

पिछले दिनो मे यह धारा अतरमुखी होने लगी है। कवि आत्मा की ओर झुका है। प्रगति धारा के नाम पर गीतो की अभिव्यजना शैली बदलकर मुक्त छद में कुछ ऐसी स्वछद रचनाएँ लिखी जाने लगीं जिससे प्रगति काव्य का ढाँचा बदला। प्रयोगवाद के नाम पर एक नवीन धारा चली। यह निरुद्देश्य धारा केवल नए प्रयोगो का निस्सहाय समुदाय मात्र है। 'अज्ञेय' इस धारा के प्रतिनिधि कवि है। हम अभी किसी निश्चय पर नहीं पहुचे हैं कि यह धारा कहाँ है ? अभी इन गीतकारो को अनुभूति जुटानी होगी इन नवीन गीतकारो मे साधना की अभी कमी है। परन्तु पत, निराला, महादेवी और प्रसाद के कुछ ही दिनों बाद जो रचनाकार सामने आए उनमें नरेन्द्र शर्मा का प्रमुख स्थान है। लोकप्रिय गीतकारो में बच्चन का नाम स्मरणीय है। इस प्रकार काव्य की दृष्टि से वर्तमान साहित्य प्रगति की ओर है।

जहाँ पद्य का दृष्टि से इतना प्रचार हुआ वहा गद्य के क्षेत्र मे भी नवीन विचारधाराओ ने जन्म लिया है परिस्थितियो की विषमता एक सी है। एक विशेषता और यह है कि आज का कवि केवल कवि नही हैं वह उपन्यासकार, नाटककार, कहानीकार भी है। इस प्रकार प्रेमचन्द और प्रसाद के बाद हिंदी गद्य क्षेत्र का विकास तो हुआ है परन्तु अभी कोई युग प्रवर्तक गद्यकार दिखाई नहीं पडता। नाटकों के क्षेत्र में अब एकांकी नाटकों का प्रचलन अधिक हो गया है। इन दिनो एकांकी नाटक अच्छे लिखे गये हैं। इन लेखकों मे रामकुमार वर्मा, भगवती चरण वर्मा, उदयशकर भट्ट सेठ गोविंदास, उपेन्द्रनाथ अश्क, विष्णु प्रभाकर अच्छे नाटककार हैं। कथा क्षेत्र में वृदावनलाल वर्मा, भट्ट, धर्मवीर भारती, अज्ञेय, रांगेय राघव, भगवतीचरण वर्मा, उपेन्द्रनाथ अश्क, महावीर अधिकारी, रजनी, नागर, नरेश मेहता आदि के

अच्छे उपन्यास लिखे हैं। इसी प्रकार कहानी का क्षेत्र भी विस्तृत होता जा रहा है, परन्तु अभी हिन्दी को बहुत चाहिए। हिंदी को समृद्ध बनाने के लिए अच्छे कुशल कलाकारो की आवश्यकता है । इस क्षेत्र मे जो जाने माने सिद्ध रचनाकार हैं उन्हें चाहिए कि इन नई पौध के फूलो का पथ प्रदर्शन करें। नवीन कलाकारो का यह कर्त्तव्य है कि अतीत के साहित्य को घ्यान में रखकर सहानुभूति और सहिष्णुता से साधना करें। हिंदी के साहित्यकारो मे यह कमी प्राय: पाई जाती है कि साधना के अभाव मे वे बडी शीघ्रता से प्रकाश मे आना चाहते हैं। इससे हानि यह होती है कि अपरिपक्वता के कारण यदि किसी रचनाकार को थोडा-सा भी प्रोत्साहन नही मिलता तो वह उसे अपमान समझता है और कुंठा के कारण उसकी प्रतिभा कुंठित हो जाती है। वर्तमान साहित्य की प्रगति पर विचार करते समय हमे इन न्यूनताओ की ओर भी ध्यान देना चाहिए।



काव्य-कला

यह समस्त सृष्टि उस अनन्त भगवान ईश्वर की काव्य-कला है। इस सृष्टि का सर्वश्रेष्ठ शृंगार मनुष्य है। यह मनुष्य भी इस जीवन को सतत सुन्दर बनाने के लिए प्रयत्न करता आ रहा है। इस प्रयत्न मे जो उसे अनुभूति होती है उसे कलात्मक ढग से प्रस्तुत करने की इच्छा रहती है। इन्ही अनुभूतियों को साकार करने के लिए कला के अनेक रूप अपनाए गए हैं।

यद्यपि कला का कभी विभाजन नही हो सकता। फिर भी अभिव्यक्ति और अनुभूति की दृष्टि से कला के दो स्थूल रूप हैं उपयोगी कला और ललित कला। उपयोगी कला हमारे व्यावहारिक जीवन की आवश्यकता को पूरा करती है सुनार, कुम्हार, लुहार आदि इसी श्रेणी में आते हैं ललितकला के

द्वारा हमारे हृदय को आनन्द प्राप्त होता है। यह आनन्द हमें श्रवणेन्द्रिय और नेत्रेन्द्रिय द्वारा प्राप्त होता है। ललित कलाएँ पांच हैं—वस्तु कला (भवन निर्माण) मूर्ति कला, चित्रकला, सगीत कला और काव्य कला। सगीत और काव्य का आनन्द श्रवणेन्द्रिय से लिया जाता है।

ललित कलाओ में मुख्य स्थान काव्य कला का है। काव्य की परिभाषा जीवन की परिभाषा की तरह कठिन है। जिस तरह जीवन व्यापक है उसी प्रकार काव्य भी किसी एक बधन में नहीं बांधा जा सकता। जिस प्रकार अनेक आचार्यों ने जीवन की अनेक ढग से व्याख्या की है उसी प्रकार काव्य भी अनेक व्याख्याओ से युक्त है। किसी ने कहा कि 'शब्दार्थ के सहित काव्य' है। कोई कहता है 'सुन्दर अर्थ को बतान वाले शब्द को काव्य' कहते हैं। कुछ भी हो अभिप्राय यह है कि काव्य का सर्वप्रधान गुण है कि वह सत्य शिव और सुन्दर होना चाहिए। काव्य जीवन की सुन्दर आलोचना है।

कवि एक प्रकार से आत्मा का गायक होता है। प्राय: देखा गया है कि आत्मा के सौंदर्य का पुजारी होने के कारण कवि ससार के बाहरी सुखो से वचित रहता है। वह अपने सारे सुख काव्य-कला द्वारा प्राप्त करता है। यह भी सत्य है कि ससार की प्रत्येक वस्तु नष्ट हो सकती है परतु सच्ची कविता नष्ट नहीं होती। एक युग था जबकि हमारे पास प्रकाशन की भी कोई व्यवस्था नही थी। फिर भी कालिदास, वाल्मीकि, व्यास, शैक्सपियर, तुलसी, कबीर, सूर, मीरा की कविता आज भी उतनी ही प्रेरणा प्रदान कर रही है। इन महाकवियो की वाणी जन-जन के मन का उल्लास और प्रगति की सजीवनी बूटि देकर मानवता को जीवन प्रदान कर रही है।

यह देखा गया है कि जो काम तोप और तलवार नहीं कर पाए वह काम काव्य-कला ने कर दिखाया। कारण यह है कि कविता का प्रभाव मन पर, हृदय पर होता है। हृदय की आवाज को मनुष्य ठुकरा नहीं सकता। कविता के द्वारा हृदय परिवर्तन सरल होता है। इसी आधार पर संभवत वीरगाथा काल के 'रासो' शब्द का अभिप्राय 'रसायन' (औषधी) माना गया है। क्योंकि

ये ऐसे महाकाव्य थे जिनके द्वारा कायरो में भी वीर रस का सचार होने लगा था। इसी प्रकार एक विदेशी कवि ने कई बार पराजित होने वाली अपने देश की सेना को कविता सुनाकर ऐसी वीर भावना उत्पन्न की कि वह देश विजयी हुआ।

किसी देश का या जाति का आत्मिक सौंदर्य और उन्नति की परख के लिए उस देश का काव्य—साहित्य देखना चाहिए। हमारे देश का प्राचीन गौरव हमारे काव्य साहित्य पर आधारित है। इन काव्यो में सस्कृत के महान गुण मिलते हैं। काव्य-कला के द्वारा ही इन महान आत्माओ ने समाज के सामने आदर्शपूर्ण विचार रखे। गूढ से गूढ़ रहस्य काव्य-कला के माध्यम से सरल हो गए। वेद उपनिषद् आदि मे काव्य का सत्य रूप प्राप्त होता है। इनमे दर्शन की गुत्थियो को सरल कथाओ द्वारा सुलझाया गया। यही नहीं काव्य ने सदा मनुष्य को अ धकार में प्रकाश देकर सही मार्ग प्रदर्शित किया है। अधर्म और अन्याय, अहिंसा और अनाचार के युग में कबीर और तुलसी ने जीवन दर्शन का नया पृष्ठ खोला।

काव्य मे देश और जाति की आत्मा होती है। वीरगाथा कालीन काव्य से पूर्व सस्कृति और विभिन्न भाषाओ के साहित्य मे उस समय की सामाजिक, राजनीतिक और धार्मिक परिस्थितियो का पूर्ण चित्र मिलेगा। इसी प्रकार भक्तिकालीन, रीतिकालीन तथा आधुनिक काव्य के द्वारा मानव के बदलते हुए विचारो और जीवन पद्धतियों का परिचय प्राप्त किया जा सकता है।

यू तो काव्य द्वारा किसी भी रस का वर्णन हो सकता है परन्तु काव्य में कोमलता उसका स्वाभाविक गुण है। काव्य की उत्पत्ति पीड़ा से होती है। जब किसी कवि आत्मा को कोई ठेस पहुँचती है तो कविता स्वय ही मुख से निकलती है। बाल्मीकि ने जब क्रोंच पक्षी के जोड़े मे से एक को दु खी देखा तो स्वय कविता फूट पडी करुणा की भूमि से सहज रूप से झरने वाला यह

स्रोतहृदय को पवित्र आँसुओं से धोता है कविवर श्री सुमित्रानन्दन पंत ने कहा है—

वियोगी होगा पहला कवि, आह से उपजा होगा गान।
निकल कर नयनों से चुपचाप, वही होगी कविता अनजान॥

काव्य-कला की प्रतिभा ईश्वर द्वारा प्रदत्त होती है। यह प्रतिभा कहीं भी उभर सकती है। काव्य प्रतिभा ऊच नीच नही देखती। वह कबीर जैसे अनपढ और तुलसी जैसे महान् विद्वान् दोनो में प्रकट होकर जन कल्याण कर सकती है। जो काव्य-कला प्रयत्न से उभारी जाती है उसमें वह सौंदर्य और प्रभावशालित्व का गुण विद्यमान नहीं होता जबकि काव्य कला का प्रधान गुण यही होता है। काव्य कला के द्वारा कठोर से कठोर व्यक्ति के हृदय को पिघलाया जा सकता है। भयकर से भयंकर व्यक्ति की आखें करुण-काव्य कला द्वारा आसूओ से भीगी देखी जा सकती हैं।

काव्य मे अपरिमित शक्ति होती है। जिस वस्तु के प्रति हमारे मन में घृणा हो, कवि अपनी काव्य कला द्वारा उसके प्रति प्रेम उत्पन्न करा सकता है। काव्य कला की सहेली तथा सहोदरा कल्पना है। इस कल्पना के द्वारा कवि हमारे सामने अदृष्ट दृष्यो का ऐसा वर्णन कर सकता है कि हम उसका प्रत्यक्ष जैसा आनन्द ले सकते हैं। कवि काव्य-कला द्वारा उस अनुभूति की जिससे हमारा परिचय भी नहीं उसकी अनुभूति करा सकता है। प्राचीन महाकवियो के द्वारा वह अनुभव और दृश्यो का पूर्ण परिचय प्राप्त किया जा सकता है।

हमारे यहा इन्हीं गुणो के आधार पर परमात्मा के नामों के वर्णन में उसे कवि भी कहा गया है। कहा गया है कि—

('कवि मनीषी परिभू स्वभू) यह सत्य भी है क्योकि 'जहा न पहुचे रवि वहां पहुचे कवि'। कवि तो सर्वव्यापक है। वह एक स्थान पर बैठे ससार के किसी भी कोने मे बैठी आत्मा से सबंध स्थापित कर लेता है। उसके लिए कोई अगम्य नहीं। कवि के पास सबमे बडा धन उसकी काव्य-कला है। इस कला पर कौन है जो मोहित नही होता। काव्य-कला से हृदय का संस्कार

होता है। काव्य-कला देश, धर्म, जाति आदि के बंधनों को तोडकर स्वतंत्र बिहार करती है। इसीलिए कवियों को निरंकुश कहा गया है। काव्य-कला का संसार सौंदर्य का है, सत्य उसका पथ है और कल्याण उसका पावन उद्देश्य है। काव्य कला के उपासक कवियों की प्रशंसा में कहा गया है :—

जयन्ति ते सुकृतिनो रससिद्धा. कवीश्वरा,
नास्ति येषा यश.काये जरामरणजं भयम्।

उन रस सिद्ध कवीन्द्रो की जय हो जिनके यश के शरीर को बुढापे और मृत्यु का भय नहीं होता।

हिन्दी काव्य में कृष्ण चरित्र

हिन्दी साहित्य मे सर्वप्रिय एव आकर्षक चरित्र भुवनमोहन भगवान श्री कृष्ण का है। 'जा की रही भावना जैसी' के अनुमार कृष्ण के अनेक रूप चित्रित किए गए हैं। कोई रूप सौंदर्य, कोई स्वाभाविक लीला-वैचित्र्य, कोई गोपिकाओ के चारु-चीर-चोरण, कोई कन्नी उगली पर गोवर्द्धन धारण, कोई मुरली को मधुर तान और कोई महाभारत युद्ध की राजनीति पर मुग्ध है। वृजेन्द्र-नन्दन कृष्ण की आदि झांकी महाभारत तथा श्रीमद्भागवत में मिलती है। महाभारत से लेकर अब तक कृष्ण के व्यक्तित्व-विकास के अनेक रूप मिलते हैं।

सर्वप्रथम कृष्ण वैदिक ऋषि के रूप में हमारे सामने हैं। ऋग्वेद के अष्टम मण्डल में 'कृष्ण' नाम आया है। कृष्ण के अच्युत भिन्न रूप की पराकाष्ठा श्रीमद्भागवद्गीता में मिलती है। गीता में योगिराज कृष्ण का रूप चित्रित है।

'कृष्ण' का दूसरा रूप 'वीरनीतिज्ञ' का है, जहाँ वह "निश्चेष्ट होकर बैठे रहना यह महादुष्कर्म है—न्यायार्थ अपने बन्धु को भी दण्ड देना धर्म है" का उपदेश देते हैं। महाभारत के कृष्ण 'मोहतमसावृत' पार्थ को कर्त्तव्य पालन की प्रेरणा देते हैं। महाभारत में वह विष्णु का अवतार रूप लेकर उतरे हैं।' कृष्ण का तीसरा रूप वासुदेव सात्वत कृष्ण और चौथा गोपाल के रूप में हैं।

हिन्दी में कृष्ण-चरित्र के सर्वप्रथम चतुर चितेरे विद्यापति हैं। विद्यापति पर जयदेव के माधुर्यमय कृष्ण का प्रभाव है। उन्होंने राधा को कृष्ण की प्रेमिका बताया है। वे लौकिक शृंगार में कृष्ण लीलाओं का वर्णन करते हैं। उनकी वासनामयी कल्पना भक्त हृदय में बनकर सर्वाराध्य के श्री चरणों पर लोटने लगी। हिन्दी की प्रसिद्ध भक्त-कवयित्री मीरा इतनी तन्मय हो गई कि स्पष्ट शब्दों में कह डाला :—

मेरे तो गिरधर गोपाल दूसरो न कोई।
जाके सर मोर मुकट है मेरो पति सोई॥

मीरा में सात्विक तन्मयता दृष्टिगत होती है।

अष्टछाप के कवियों में "सूर" का नाम सबसे आगे लिया जाता है। वात्सल्य और शृंगार के अंकन में "सूर" की भावोन्मत्तता मनोवैज्ञानिक होते हुए भी सीमा को लाँघ गई। इसका कारण "सूर" की सख्य-भावना थी। नन्ददास ने रास पंचाध्यायी में नख-शिख-वर्णन, रास, विरह सभी का चित्रण किया है—शृंगार रस का एक चित्र देखिए :—

इह विधि विविध विलास, हास सुख कुंज सदन के।
चले जमुन जल क्रीडन व्रीडन कोटि मदन के॥

श्रीकृष्ण के कार्य-कलापों, उनकी महत्ता और समाज के प्रति की गयी कार्य-विधियों पर मुसलमान कवियों ने भी लेखनी उठाई है। उन मुसलमान कृष्ण-भक्त कवियों के साहित्य का अवलोकन करें, जिनकी रचनाओं का मूल्यांकन करते हुए भारतेन्दु जी ने लिखा है :—

इन मुसलमान हरिजनन पै, कोटिक हिन्दू वारिये।

रहीम खानखाना

अब्दुर्रहीम खानखाना ने यद्यपि भगवान राम के चरित्र का वर्णन ही अधिक किया है, तथापि उन्होंने कृष्ण के जीवन पर भी लेखनी उठाई है। उन्होंने कृष्ण-भक्ति के सम्बन्ध में लिखा है :—

'जेहि रहीम मन आपुनो, कीन्हों चारु-चकोर।
निसि-वासर लाग्यो रहे, कृष्णचन्द्र की ओर॥'

कृष्ण-वर्णन में कविवर रसखान की तुलना भक्त प्रवर सूरदास से की जा सकती है। सूरदास के समान ही रसखान का कृष्ण-वर्णन अनुपम एवं अवर्णनीय है। रसखान केवल कृष्ण के रूप-सौन्दर्य एव कार्य कलाप से ही प्रभावित नही हैं, अपितु उनकी छडी और कम्बल की प्रशसा करते हुए भी नहीं अघाते। वह कहते है :—

'या लकुटी अरु कामरिया पर,
राज तिहुं पुर को तजि डारौ॥
आठहु सिद्धि नवो निधि को सुख,
नन्द की धेनु चराय बिसारौ॥

इतना ही नही, वे कामना करते हैं कि किसी न किसी प्रकार कृष्ण का सान्निध्य प्राप्त हो। मुस्लिम मतावलम्बी पुनर्जन्म नही मानते किन्तु रसखान परमात्मा से अनुनय करते हैं —

'मानुष हौं तो वही रसखान,
बसौं ब्रज गोकुल गाँव के ग्वारन।
जो पशु हौं तो कहा बस मेरो,
चरौं चित नन्द के धेनु मभारन।
पाहन हौं तो वही गिरि कौं,
जो धर्यो कर छत्र पुरन्दर कारन।

जो खग हौं तो बसेरो करौं,
मिलि कालिन्दी-कूल कदम्ब के डारन।

आलम

कृष्ण-भक्त कवियो मे आलम का नाम आदर के साथ लिया जाता है। वे जन्म से हिन्दू थे; किन्तु बाद में इस्लाम धर्म स्वीकार कर लिया था। वह भी रसखान की भाँति श्री कृष्ण का सामीप्य चाहते हैं। वह कहते हैं :—

जा घर कीन्हें विहार अनेकन।
ता घर काकरी बैठि चुन्यो करैं॥
जा रसना सौं करो बहु बातन।
ता रसना सौं चरित्र गुन्यौं करैं॥
'आलम' जौन से कुंजनि मे करि,
केलि तहा अब सीस धुन्यौ करैं॥
नैननि मे जो सदा रहते तिनकी
अब कान कहानी सुन्यौं करै॥

शेख

आलम की भाँति उनकी पत्नी भी साहित्य में रुचि रखती थीं। शेख ने भी कृष्ण-चरित्र पर लेखनी उठायी है। गोपियों को कृष्ण की वंशी अखरती थी, इसलिये गोपियाँ कृष्ण से कहती हैं :—

हम व्रज वसिहैं तो बाँसुरी न बसै यहं
बाँसुरी बसाय, कान्ह हमे विदा दीजिए।

इतना ही नही गोपिया अपनी सौत- बाँसुरी को ही मारने लगती हैं। इसीलिये वे विचार करती हैं :—

करिये उपाय; बास डारिये कटाय।
नाहि उपजैगो बाँस, नाहि बाजै फेरि बाँसुरी॥

ताज

कृष्ण-भक्ति से ओत-प्रोत कवियित्री ताज का नाम आदर के साथ लिया जा सकता है। वे कृष्ण-चरित्र पर मुग्ध होकर कहती हैं :—

सुनो दिलजानी, मेरे दिल की कहानी, तेरे,
हाथ हौं बिकानी बदनामी भी सहूंगी मैं।
देव-पूजा ठानी औ रिवाज हू भुलानी,
तज्ज कलमा-कुरान सारे, गुननि गहूंगी मैं।
साँवला सलोना, सिरताज, सिर कुल्लेदार,
तेरे नेह दाव में निदाघ ह्वै बहूंगी मैं।
नन्द के कुमार कुरबान तेरी सूरत पै,
हौं तो मुगलानी हिन्दुयानी ह्वै रहूंगी मैं।

अर्थात् कृष्ण के सान्निध्य के लिये 'ताज' मीराबाई की भाँति सब कुछ छोड़ने के लिये तत्पर हैं। उन्हे लोक-लाज, मान-अपमान किसी प्रकार की चिन्ता नहीं है।

इस प्रकार कृष्ण-भक्ति कविता रीति की गलियो मे होती हुई खडी बोली तक आ पहुँची। आधुनिक काल के कृष्ण भक्ति के कवि युग जीवन से प्रभावित तो रहे परन्तु पिछले खेमे के शृ गारी कवियो जैसी भावना का प्रभाव भी रहा। भारतेन्दु का एक चित्र देखिये —

छाँडो मेरी बहियाँ लाल सीखो यह कौन चाल,
काहे तुम परसत तन औरन की नारी।
घ गुरी मेरी मुरक गई परसत तन पीर भई,
भीर भई देखत सब ठाडी व्रजनारी।

द्विवेदी युग मे आकर कृष्ण का रूप बदला। राधा कृष्ण की भक्ति से प्रेरित होकर कविवर "हरिऔध" ने प्रियप्रवास लिखा। इसमें कृष्ण एक महापुरुष के रूप मे हमारे सामने आये। उन्होने "मानववाद" का उदात्त और

मधुर रूप मे समर्थन किया। गोवर्धन की घटना पर एक नवीन बौद्धिक दृष्टि-कोण प्रस्तुत करते हुए 'हरिऔध' कहते हैं :—

लख अपना प्रसार गिरीन्द्र मे,
व्रज धराधिप के प्रिय पुत्र का,
सकल लोग लगे कहने उसे, रख
लिया अंगुलि पर श्याम ने।

इसी घटना को गुप्त जी ने "द्वापर" में इस प्रकार कहा है :—

उठा लिया सचमुच पहाड़ ही गौरव मद गोविन्द ने।

कालीनाग दमन का चित्र भी 'हरिऔध' ने नवीन रूप से वर्णित किया है :—

मुहु मुहु अद्भुत वेणु नाद से
बना वशीभूत विमूढ़ सूर्य को
सुकौशलों से वर अस्त्र शस्त्र से
उसे नवाया व्रजभूमि रत्न ने।
अचेत हो भूपर जो गिरे रहे
उन्हीं सबो ने विविधा सहायता,
अशक की थी बलभद्र बन्धु की
विनाशने मे विकराल व्याल को।

प्रियप्रवास के कृष्ण पूर्ण मानवतावादी हैं। वहाँ के कृष्ण तो :—

रोगी दुखी विपद आपद में पडे की
सेवा अनेक करते निज हस्त से थे,
सेवा निकेत व्रज में न मुझे दिखाया
कोई जहां दुखित हो पर वे न होवें।

उन्होंने तो :—

अपूर्व आदर्श दिखा नरत्व का
प्रदान की है पशु को मनुष्यता,

सिखा उन्होने चित की समुच्चता,
बना दिया सभ्य समग्र गोप को।

वह युगधर्म के संस्थापक एव मनुष्यत्व के निरूपण होते हुए भी परब्रह्म से भिन्न नहीं है। राधा जी कहती हैं :—

जो आता है न मन चित मे,
जो परे बुद्धि के है,
जो भावो का विषय नहीं है,
नित्य अव्यक्त जो है।
है वेदो की प्रगति जिसमे औ
गुणातीत जो है,
सो क्या है मैं अबुध अबला जान
पाऊ उसे क्यो ?

रामायण की तरह द्वारिका प्रसाद मिश्र ने "कृष्णायन" की रचना की है। कृष्ण का एक चरित्र "उद्धव शतक" मे प्रेम-विह्वल होकर जगन्नाथ दास रत्नाकर ने चित्रण किया है। कृष्ण का तर्कपूर्ण और मनोवैज्ञानिक चित्र देखिए :—

उझकि उझकि पद कजनि पै
पंजनि पै
पेखि पेखि पाती छाती छोहन,
छबै लगी

इसमें निर्गुणवाद पर व्यग्य किया है। रत्नाकर का "उद्धव शतक" कृष्ण भक्ति काव्य की परम्परा मे होते हुए भी भावात्मक नही, वह दार्शनिक तर्कों, व्यग तथा उक्ति-वैचित्र्य से पूर्ण है। रत्नाकर ने मध्य युग के विषय, मध्य युग की भाषा तथा छन्दो को लेकर आधुनिक बौद्धिकता का प्रयोग किया है।

गुप्त जी ने "द्वापर" मे चारित्रिक विशेषताओं पर अधिक ध्यान दिया

है। भ्रमर गीत की भावनाएँ भी इसमें अन्तर्निहित दिखाई पड़ती हैं। कृष्ण को अच्युत ब्रह्म का अवतार मानते हुए कहलाया :—

मां तुमको किसकी चिन्ता है, अच्युत है सुत मेरा।

इसी प्रकार कुब्जा और गोपियो के द्वारा कृष्ण का मार्मिक चित्र चित्रित किया है :—

वृन्दावन मे नव मधु आया लघु से मन्मथ आया,
उससे तन तन मे मन मन मे एक मनोरथ आया,
उसमे आकर्षण हो राधा आकर्षण में आई,
राधा मे माधव माधव में राधा की पूर्ति समाई ॥

वियोगी हरि ने अपनी "वीर सतसई" मे महाभारतीय कृष्ण के वीर रूप की बांकी झांकी दिखाई है .—

अरुभयो जो रथ चक्र मे, धावत भीषम ओर।
कब गहि हो रन छोर को वा, पटुका को छोर ॥

ठाकुर गोपालशरण सिंह की एक ही मधुर सूक्ति उनकी आत्मानुभूति का परिचय देती है .—

मेरे चित्त मे ही छिपा मेरा चितचोर है।

श्री सुमित्रानन्दन पन्त न ग्राम्या मे उसे ग्राम देवता का रूप दिया है .—

श्री राम रहे सामन्त काल के ध्रुव प्रकाश,
त्रेता युग की उस नव संस्कृति के विकास।
बालमीकि बाद आए थे व्यास जगतवंदित,
वह ऋषि संस्कृति का चरनोन्नतयुग था निश्चित।
बन गए राम तब कृष्ण भेद मात्रा का मिल,
वैभव युग की वंशी से करजन मनमोहित।

कृष्ण-वर्णन मे बहुत से आधुनिक मुसलमान कवियों ने रुचि ली है। उक्त वर्णन में जहां कवियों ने हिन्दी भाषा के माध्यम से कृष्ण-स्तवन किया है वहां

ऐसे कवि भी हुए हैं जिन्होंने उर्दू कविता द्वारा अपनी श्रद्धा के पुष्प चढ़ाए है :—

नजीर

कृष्ण की माखन-चोरी प्रसिद्ध है। सूरदास ने इसका विशद् वर्णन किया है। अब जरा नजीर की लेखनी से कृष्ण की चतुराई का एक उदाहरण देखिये जो वे अपने साथियो को चौर्य कार्य की दीक्षा देते हुए कहते हैं .—

'गर चोरी करते आगयी ग्वालिन वहाँ,
और उसने आ पकड लिया तो उससे बोले वाँ,
मैं तो तेरे दही की उडाता था मक्खियाँ,
खाता नहीं मैं उसको निकाले था चींटिया।

मर्तजा अहमद

और श्री मुर्तजा अहमद केवल कृष्ण की माखन-लीला से प्रभावित नहीं हुए अपितु वे उनकी सैन्य-सचालन की योग्यता पर लट्टू हो गए। सम्भवतः इसीलिए वे लिखते हैं —

'तेरी रथवानी का फिर हिन्दोस्ता मुहताज है।

साराश यह है कि आज कृष्ण का रूप राष्ट्रीय और सामाजिक होता जा रहा है। हमारे जीवन का द्वन्द्वात्मक भौतिकवाद साहित्य में समा गया है। कृष्ण भी आज इस युग के प्रतीक बनकर आयेंगे। नवीन कवि का स्वर समस्याओ का समाधान करने में संलग्न है।

कुरुक्षेत्र

आधुनिक काव्यो की पक्ति में कुरुक्षेत्र महाकाव्य का महत्वपूर्ण स्थान है। कुरुक्षेत्र का प्रारम्भ युधिष्ठिर के सग्राम जन्म विषाद से प्राप्त हुआ है। यह कथा युद्धान्त की है। कौरवो के नष्ट हो जाने पर युधिष्ठिर के हृदय में घृणा उत्पन्न होती है। युद्ध एक निन्दित और क्रूर कर्म है। दिनकर अपने काव्य के प्रारम्भ मे लिखते हैं —

"वह कौन रोता है वहाँ इतिहास के अध्याय पर
जिसमें लिखा है, नौजवानो के लहू का मोल है।
ईश जाने देश का लज्जा विषय तत्व है कोई केवल आवरण
उस हलाहल सी कुटिल द्रोहाग्नि का जोकि आरही चिरकाल
से स्वार्थलोलुप सभ्यता के अग्रणी नायकों के पेट मे जठराग्नि-सी।
विश्व मानव के हृदय निर्द्वेष मे मूल हो सकता नहीं द्रोहाग्निका,
चाहता लडना नहीं समुदायहै फैलती लपटें विषैली व्यक्तियों की सांससे

युधिष्ठिर महाभारत सग्राम का पश्चाताप कर रहे हैं :—

यह महाभारत वृथा निष्फल हुआ
उफ ! ज्वलित कितना गरलमय व्यग है
पांच ही असहिष्णु नर के द्वेष से
हो गया सहार पूरे देश का।
द्रोपदी हो दिव्य वस्त्रालंकृता
और हम भोगें अहम्य राज्य यह
पुत्र पति हीना इसी से तो हुई
कोटि मातायें करोड़ों नारियाँ
रक्त से छाने हुए इस राज्य को
वज्र हो कैसे सकूंगा भोग मैं ?

आदमी के खून मे यह है सना
और है इसमे लहू अभिमन्यु का।

व्यथित होकर युधिष्ठिर बाणो की शैय्या पर लेटे हुए योगलीन गम्भीर पितामह भीष्म के पास गए। जाकर उन्होने पूछा कि "विजय का उपहार मैं नचा हूँ बोलो, जीत किसकी है और किसकी हुई है हार।" यही से भीष्म और युधिष्ठिर का सम्वाद प्रारम्भ होता है। इस सवाद मे दिनकर ने शका, सघर्ष और अन्तर्द्वन्द से ग्रसित सक्रान्ति की व्याख्या की है। कला, विज्ञान और कल कारखानो की वृद्धि होने पर भी मानव अत्यन्त दु खी होता जा रहा है। सत्य और अहिंसा का रूप आज मानव के लिए सदिग्ध समस्या-प्रधान बन गया है। युधिष्ठिर के विषाद ग्रस्त वचन सुनकर भीष्म गम्भीर शब्दों में बोले —

यों ही नरों मे भी विकारों की शिखायें आग सी
एक से एक जलती है प्रचण्ड वेग से
तप्त होता क्षुद्र अन्तर्व्योम पहले व्यक्ति का
और तब उठता धधक समुदाय का आकाश भी
क्षोभ-क्रोध से, दाहक घृणा से, गरल ईर्ष्या द्वेष से।

व्यक्ति की भावना समष्टि मे डूब कर बोलती है। व्यक्ति प्रतिशोध की भावना से प्रेरित होकर युद्ध करता है। प्रतिशोध पृथ्वी के समस्त जड़-चेतन प्राणियों का स्वाभाविक और जन्मसिद्ध अधिकार है। सहिष्णुता, करुणा एव क्षमा की भर्त्सना करते हुए तथा प्रतिशोध की प्रशसा करते हुए भीष्म कहते हैं —

प्रतिशोध से होती हैं शौर्य की शिखायें दीप्त
प्रतिशोध हीनता नरों मे महापाप है
छोड़ प्रति वैर पीते मूक अपमान वे हो
जिनमें न शेष क्रूरता का वह्नि-ताप है
चोट खा सहिष्णु वह रहेगा किस भाँति तीर
जिसके विभूषण निषग मे करों मे दृढ़ चाप है

चेता के विभूषण सहिष्णुता क्षमा है किन्तु
हारी हुई जाति की सहिष्णुता शाप है
सटता कहीं भी एक तृण जो शरीर से
उठता कुशल हो फणीश फुफकार है
सुनता गजेन्द्र की चिघार जो वनो में कहीं
भरता गुहा मे ही मृगेन्द्र हुकार है
शूल चुभते हैं, छूते हैं जलती, भू को
लीलने को देखो गर्जमान पारावार है
जग मे प्रदीप्त है इसी का तेज, प्रतिशोध
जड़ चेतनों का जन्म सिद्ध अधिकार है।

भाष्म का विश्वास है कि देह की लडाई देह से और आत्मा की लडाई आत्मा से जीती जा सकती है। सैद्धान्तिक रूप से अहिंसा ठीक है, व्यावहारिक जगत में दुष्टो को दण्ड देना ही चाहिए। सत्य और अहिंसा का प्रभाव व्यक्ति के मन पर होता है। कुप्रवृत्तियो के सामने दण्ड की आवश्यकता है। भीष्म कहते हैं :—

छीनता हो स्वत्व कोई और तू
त्याग तप से काम ले, यह पाप है
पुण्य है विच्छिन्न कर देना उसे
बढ़ रहा तेरी तर जो हाथ है।
हिंसा का आघात तपस्या ने कब कहाँ सहा है,
देवों का दल सदा दानवों से हारता रहा है।

ऐसी स्थिति मे युद्ध अनिवार्य है—

युद्ध को तुम निन्द्य कहते हो, मगर
जब तलक हैं उठ रही चिनगारियाँ
भिन्न स्वार्थों के कुलिष संघर्ष की
युद्ध तब तक विश्व मे अनिवार्य है।

व्यक्ति का है धर्म तप करुणा क्षमा
व्यक्ति की शोभा विनय भी, त्याग भी,
किन्तु उठता प्रश्न अब समुदाय का
भूलना पडता हमे तप त्याग को,
त्याग तप करुणा क्षमा से भीग कर
व्यक्ति का मन तो बली होता मगर
हिंस्र पशु जब घेर लेते हैं उसे
काम आता है वलिष्ठ शरीर ही।

भीष्म की यह उक्ति तब भी सत्य थी और आज भी सत्य है। दिनकर ने वह चित्र वर्तमान में ढाला है। देखिये :—

सुख समृद्धि का विपुल कोष
संचित कर बल छल से,
किसी क्षुधित का ग्रास छीन
धन लूट किसी निर्बल से,
हिलो डुलो मत हृदय रक्त—
अपना मुझको पीने दो।
सब समेट प्रहरी बिठला अर
कहती "कुछ मत बोलो"
शान्ति सुधा बह रही न इसमे
गरल क्रान्ति का घोलो।

क्रान्ति उत्पन्न होती है जब कि अधिकार और शक्ति छीनी जाती है। शान्ति और सुव्यवस्था के नाम पर जनता का शोषण होता है। सत्य, अहिंसा और विश्वबन्धुत्व का राग अलाप कर शान्ति के पूंजी शाही ठेकेदार हृदय से पापी और मलिन होते हैं। इस मायावी शान्ति की व्यवस्था भीष्म ने इस प्रकार की है :—

न्याय शान्ति का प्रथमन्यास है जब तक न्याय न आता,
जैसा भी हो महल शान्ति का सुदृढ़ नहीं रह पाता

शान्ति नहीं तब तक जब तक सुख भाग न नर का सम हो
नहीं किसी को बहुत अधिक हो नहीं किसी को कम हो
न्यायोचित अधिकार मागने से न मिलें तो लड के,
तेजस्वी छीनते समर को जीत, या कि खुद मर के,
शान्ति बीन तब तक बजती है नहीं सुनिश्चित सुर मे,
स्वर की शुद्ध प्रतिध्वनि जब तक उठे नहीं उर उर मे,
पापी कौन ? मनुज से उसका न्याय चुराने वाला,

चतुर्थ सर्ग मे भीष्म ने शूर धर्म का उपदेश दिया है। आज के युवकों के लिए आदर्श है .—

शूर धर्म है अभय दहकते अगारों पर चलना
शूर धर्म है शान्ति असि पर धर कर पांव मचलना
बुझा बुद्धि का दीप वीर वर आख मूद चलते हैं
उछल वेदिका पर चढ जाते और स्वय बलते हैं।

परन्तु बुद्धि का दीप बुझा कर चलने मे प्राणी कहां तक सुखी हो सकता है ? भीष्म इसका उत्तर यो देते हैं —

सच है बुद्धि कलश मे जल है शीतल सुधा तरल है
पर भूलो मत कुसमय मे हो जाता वही गरल है
बात पूछने को विवेक से जभी वीरता जाती
पी जाती अपमान पतित हो अपना तेज गवाती।

कुरुक्षेत्र में उसी सात्विकी बुद्धि का उल्लेख किया है जोकि मोहासक्त मानव को अंधकार से प्रकाश की ओर ले जाती है। मानवता का कल्याण करने वाली शकरी बुद्धि का कवि ने हृदय से स्वागत किया है।

श्रेय वह नर बुद्धि का शिवरूप आविष्कार
ढो सके जिस प्रकृति सब के सुखो का भार
श्रेय होगा मनुज का समता विधायक ज्ञान
स्नेह सिचित न्याय पर नव-विश्व का निर्माण।

त्याग, तपस्या को कायरता बताने वाले भीष्म भी अहिंसा की कामना करते हैं परन्तु उसका रूप शुद्ध और शाश्वत है :—

सच है मनुज बड़ा पापी है
नर का वध करता है
पर भूलो मत मानव के हित
मानव ही मरता है
लोभ द्रोह प्रतिशोध वैर
नरता के विघ्न अमित हैं
तप बलिदान त्याग के संबल
भी न किन्तु परिमित हैं।

भीष्म का विश्वास है कि जब तक भिन्न स्वार्थों की चिनगारियां उठ रही हैं तब तक विश्व में हिंसा अवश्य होगी। जीवन को शुद्ध सात्विक बनाने के लिए संघर्ष अनिवार्य है। उदासीन और निष्क्रिय व्यक्ति को जीने का अधिकार नही।

वह सपनों का देश कुसुम ही कुसुम यहाँ खिलते हैं
उड़ती कहीं न धूल न पथ मे कण्टक ही मिलते हैं
कटु की नहीं मात्र सत्ता है जहाँ मधुर कोमल की
लौह पिघलकर जहाँ रश्मि बन जाता विधु मण्डल की
फूलों पर आंसु के मोती और अश्रु में आशा
मिट्टी के जीवन की छोटी नपी तुली परिभाषा।

सप्तम सर्ग के कर्मयोग का सुन्दर व्याख्यान किया है। यह जीवन अरण्य के समान है जो कर्मयोगी है वह अपनी राह बना लेता है।

जीवन उनका नहीं युधिष्ठर !
जो उससे डरते हैं

यह उनका जो चरण रोप
निर्भय होकर लड़ते हैं,
खारा कह जीवन समुद्र को
वही छोड़ देता है
सुधा सुरामणि रत्न कोष से
पीठ फेर लेता हैं।

इस प्रकार कुरुक्षेत्र में जीवन के सत्यों का रहस्योद्घाटन किया गया है। कवि ने वर्तमान युग की आवश्यकताओं को परखते हुए सत्य और अहिंसा, व्यक्ति और समुदाय की अच्छी व्याख्या की है। भीष्म के शब्दों मे प्रश्न और उत्तर दोनों हैं।

स्वत्व मागने से न मिलें संघात पाप हो जायें,
बोलो धर्मराज शोषित वे जियें या कि मर जायें।

कवि का विश्वास है। उसके वचन सदा कानों में गूँजते रहते हैं :—

क्षमा शोभती उस भुजग को जिसके पास गरल हो
उसको क्या जो दन्तहीन विषरहित विनीत सरल हो
कंचन को नर साध्य नहीं साधन जिस दिन मानेगा
जिस दिन देख उसे पायगा मनुज ज्ञान के बल से,
रह न जायेगी उलझ दृष्टि जब मुकुट और वल्कल से,
शान्ति नहीं तब तक जब तक सुख भाग न नर का सम हो।



मेरा सर्वप्रिय ग्रन्थ—"सूरसागर"

भक्तिकाल हिन्दी साहित्य का स्वर्ण युग कहलाता है। इस युग में जिस प्रकार की कला कृतियों तथा साहित्य का निर्माण हुआ, वैसा किसी युग में नहीं। विश्व को सन्मार्ग का सदेश देने वाले ग्रथों की रचना इसी काल मे हुई, प्रेम का सागर लहराया, भक्ति की गगा बही। 'सूरसागर' एक अमर रचना है उसके अध्ययन में ऐसा लगता है कि मनुष्य मानो रस के सागर मे डुबकी लगाता है, एक-एक पद को बार-बार पढ़ने को जी चाहता है।

सूरसागर की रचना भागवत के आधार पर हुई है सूरदास ने स्वयं इस बात को स्वीकार किया है।

'सूर कह्यौ भागवत अनुसार'

किन्तु फिर भी हम उसे भागवत का अनुवाद नहीं कह सकते। भागवत की तरह इसमें भी बारह स्कंध हैं। प्रथम से नवम् स्कंध तक वर्णन बहुत छोटे तथा प्रक्षिप्त हैं। उनमें चौबीस अवतारो की कथा, रामलीला आदि फुटकर पद हैं। ये स्कध तो केवल भागवत के अनुसार स्कध सख्या पूरी करने की दृष्टि से लिखे गये है। अन्यथा विशेष स्कध तो नवम् तथा दशम् ही हैं। इनमे विनय के पद, बाललीला के पद, रासलीला के पद तथा गोपी विरह के पद हैं।

सूरसागर के विनय के पदो मे ईश्वर के प्रति अनन्य प्रेम की अभिव्यंजना है। परमात्मा में सूर की अटूट आस्था है।

मेरो मन अनत कहा सुख पावै।
जैसे उडि जहाज को पछी पुनि जहाज पै आवै॥

भगवान् के सामने सूर अपनी दीनता प्रकट करते हैं, पापो की क्षमा याचना करते हैं तथा भक्ति की ऐसी धारा बहाते है कि पाठक का मन विभोर हो जाता है। अपनी भक्ति के अकाट्य तर्क देकर सूरदास ईश्वर को भी पतित पावन बनने के लिए लाचार कर देते हैं। उपमा, रूपक, उत्प्रेक्षा की

ऐसी झड़ी लगाते हैं कि पढ़कर पाठक गदगद् हो जाता है। एक ओर जहां सूरदास इतनी दीनता दिखाते हैं वहां अपने प्रेम की पवित्रता दिखाने के लिए कृष्ण के समक्ष भी आ डटते हैं।

आज हौं एक-एक करि टरि हौं।
कै हम ही, कै तुमहीं, माधव अपुन भरोसो लरिहौं॥

सूरदास उच्चकोटि के भक्त थे। उनकी भक्ति-भावना विनय के प्रत्येक पद मे ओत-प्रोत है।

सूरसागर का बालवर्णन तो इतना सजीव है कि ऐसा विश्व साहित्य में कहीं भी नहीं मिल सकता। समस्त बाल-चेष्टाए, बाल-सौन्दर्य तथा बाल-चपलता सूर ने अपनी अन्धी आखो से इस प्रकार वर्णित की कि कोई आखों वाला भी नहीं कर सकता।

यशोदा हरि पालने झुलावै।
कबहु पलक हरि मूंद लेत हैं कबहु अधर फरकावै॥

घुटुने चलना, शरीर को धूल से भर लेना, परछाई पकड़ने को दौडना मुख पर माखन लिपटा लेना, देहली को न लांघ सकना तथा तुतला कर बोलना, सब कुछ सूरदास जी वर्णन करते थकते नहीं।

× × ×

गोपियो का विरह वर्णन भी सूर का अद्वितीय है। कृष्ण के मथुरा चले जाने पर गोपियो उनके विरह में व्याकुल होती हैं। कृष्ण अपने मित्र ऊद्धव को उन्हें समझाने के लिए भेजते हैं। ऊद्धव गोपियो को कृष्ण को भूल जाने के लिए तथा निर्गुण की उपासना के लिए कहते हैं। इस पर गोपियां एक ओर तो उद्धव के निर्गुण ब्रह्म की खिल्ली उड़ाती है :—

निर्गुण कौन देश को वासी।

और दूसरी ओर अपने विरह को प्रकट करतीं है :—

बिनु गोपाल बैरिन भइ कुञ्जें।
तब ये लता लगति अति शीतल अब भई विषम ज्वाल की पुञ्जें॥

कृष्ण के बिना गोपियो को कुछ नहीं सुहाता। दिन रात उन्हीं की बाट जोहती रहती हैं। उन्ही की याद मे आसू बहाती रहती हैं :—

सखी इन नैनन से घन हारे।
बिनही ऋतु बरसत निसि बासर सदा सजल दोउ तारे ॥

कृष्ण को एक बार फिर देखने को उनका जी तरसता है। उद्धव की निर्गुण बातो मे उन्हे कुछ नहीं मिलता।

अंखियाँ हरि दर्शन की भूखी।
कैसे रहें रूप रस रांची ये बतियाँ सुनि रूखी ॥

गोपियो की विरह-वेदना को देखकर उद्धव निर्गुण ज्ञान को भूल जाते हैं और कृष्ण-प्रेम मे विभोर हो जाते हैं। सूरदास ने गोपियो के विरह-वर्णन में आश्चर्यजनक सिद्धहस्तता दिखाई है। प्रत्येक पद ऐसा प्रतीत होता है, मानो स्वय एक-एक गोपी बोल रही हो।

'सूरसागर' वास्तव में रस का सागर है। इस ग्रथ मे भक्ति, प्रेम तथा वात्सल्य की ऐसी त्रिवेणी बहती है, जिसमे अवगाहन कर पाठक धन्य-धन्य हो जाता है। भावुकता, सरसता, सरलता का तो यह भण्डार ही है। जिस भक्ति —पद्धति तथा प्रेम भावना के पथ पर बढने की प्रेरणा सूरसागर देता है वह भारतीय दर्शन और आध्यात्मिक महत्व को समझने के लिए पर्याप्त है।

प्रेम-योगिनी मीरा

भक्त कवियों में मीरा का स्थान प्रमुख है। जहाँ तुलसी की भक्ति दास्य भाव की थी और सूर की सख्य-भाव की, वहा मीरा की भक्ति-भावना पति-पत्नी भाव की थी। इनकी भक्ति-भावना मे कृष्ण ईश्वर होते हुए भी इनके लिए पति-स्वरूप ही थे। बचपन मे ही इनके सस्कार भक्ति-भाव के थे। पितामह का प्रभाव इन पर विशेष था।

मीरा का जन्म सम्वत् १५७३ मे चौकड़ी ग्राम मे हुआ था। मेवाड़ के राठौर रत्नसिंह की पुत्री मीरा का विवाह चित्तौड के महाराणा सागा के पुत्र कुँवर भोजराज के साथ हुआ था, परन्तु दुर्भाग्यवश शीघ्र ही वह विधवा हो गई। मीरा के लिए यह एक दुखद घटना थी। अब उसके लिए केवल भक्ति-भावना का ही मार्ग रह गया था। बचपन के सस्कार अब प्रबल हो उठे और रात दिन अपने गिरधर की भक्ति मे तल्लीन रहने लगी। साधु-सगति, भजन-कीर्तन ही मीरा का जीवन बन गया। सत रैदास को अपना गुरु मानकर उन्होंने अपना समस्त जीवन कृष्णार्पण कर दिया था।

मीरा का इस प्रकार साधु सगत करना और मन्दिरो मे सबके सामने नृत्य करना महाराणा को न भाया और उन्होंने इस प्रकार कुल की लाज त्यागने वाली मीरा को सीधे मार्ग पर लाने के अनेक प्रयत्न किए, विष का प्याला भेजा, कि जिसे पीकर 'कुलनासी' मीरा समाप्त हो जाएगी, परन्तु वह तो अमृत रस बन गया, डिबिया मे सर्प भेजा तो 'सालिग्राम' बन गया। इस प्रकार जो भी उपाय राणा ने इस प्रेमयोगिणी को समाप्त करने के लिए किये, वे सभी उसके व्यर्थ गये और मीरा अपने प्रेम-मार्ग पर शान्त मन से आगे बढती ही रही। उसको कोई लोक-लाज न थी। वह तो स्वय गाती थी—

मेरा तो गिरिधर गोपाल दूसरो न कोई।
जाके सिर मोर मुकुट मेरो पति सोई।
× × ×
सन्तन ढिग बैठि-बैठि लोक लाज खोई।

और जब महाराणा ने बहुत तग किया तब मीरा ने घर छोड़ दिया। मथुरा वृन्दावन की यात्रा पर निकल पडी। अन्त से सम्वत् १६०३ में उनकी मृत्यु हुई।

ससार मे जितना निकट का सम्बन्ध पति-पत्नि का होता है, वैसा कोई दूसरा नहीं। इस सम्बन्ध मे कुछ भी तो गोपनीय नही रहता। मीरा के अन्तर में भी अपने प्रियतम के लिए कुछ शेष न था। सब कुछ तो उसने उनके चरणों में अर्पित कर दिया था। अब वह उसका जन्म मरण का साथी था, वह रात दिन उसका पथ निहारती थी, उसके देखे बिना उसे एक घडी भी चैन न पडता था। उसने तो अपने गिरिधर से प्रेम किया था, लोग चाहे उसे 'भक्ति' कहे या कुछ और। उसका प्रेम सूर और तुलसी का प्रेम न था, वह तो राधा और गोपियो का प्रेम था, जिसके कारण उसने संसार को ही छोड दिया था, लोक-लाज का भी परित्याग कर दिया था। उसके दिल मे एक दर्द था और उसी दर्द में व्याकुल होकर वह गा उठी—

हेरी मैं तो दर्द दिवानी मेरो दर्द न जाने कोय।
घायल की गति घायल जाणे जो कोई घायल होय।
दरद की मारी बन बन डोलू, बैद मिला नहि कोय।

लेकिन पिया से मिलन कैसे हो? क्योंकि उसकी सेज तो सूली ऊपर है। उसके दिल मे जिस प्रेम की व्याकुलता थी, वह तो साधारण न थी। प्रेम का मार्ग वैसे भी सरल नही होता है इस मार्ग पर तो वही चल सकता है, जो अपना सर सोपने को तैयार रहे। मीरा ने तो सभी कुछ सोप दिया था, फिर भी उसका प्रियतम उसे न मिल रहा था। उसका विरह-रोग ऐसा था जिसका कोई 'बैद' न था। वह पीली पड गई थी। वैद्य ने आकर उसकी नाडी देखी, पर बेचारा वैद्य क्या जाने कि मीरा का रोग शरीर का नही, हृदय का है। उसकी पीर तो तभी मिट सकती है 'जब वैद्य सांवलिया होय।'

प्रेम मार्ग-कोई राज-पथ नहीं, वह तो एक सांकरी गली है, जिसमें यात्रा

'तू' और 'मैं' के भेद-भाव को मिटाकर ही आगे बढ सकता है। इस गली में आकर प्रेमी अपने आराध्य में ऐसे खो जाता है कि उसमें दोनों का अस्तित्व एक हो जाता है, न अपना पता रहता है और न दिल का—

तेरी गली मे आकर खोये गये हैं दोनों।
दिल मुझको ढूंढ़ता है मैं दिल को ढूंढ़ता हूं॥

मीरा इसी मार्ग पर चली जा रही थी, पर उसका प्रेमी, उसका 'सांवलिया' अभी तक उसे न मिला था। वह व्याकुल हो उठी :—

जो मैं ऐसी जानती, प्रीत किये दुःख होय।
नगर ढिंढोरा पीटती, प्रीत करो मत कोय॥

लेकिन अब तो वह प्रेम के मार्ग पर बहुत आगे बढ़ आई थी, अब पछताने से क्या हो सकता था। अब तो आगे बढना ही था। मीरा कृष्ण की मिलन प्रतीक्षा मे और दर्शन की कामना में आजीवन तडपती रही। राधा और गोपियो को तो अपने प्रियतम कृष्ण का साहचर्य मिल भी गया था, पर मीरा तो सदा इसी विरह में तडपती रही। एक दिन वह पुकार उठी—'मैं जान्यो नहीं प्रभु वो मिलन कैसे होय री।'

इसी प्रकार उसके विरह के दिन कट रहे थे मिलन की उत्कण्ठा बढ़ती जा रही थी, तभी एक दिन उसके प्रियतम उसे मिल गये। परन्तु यह मिलन भी विचित्र था, पल भर के लिए मीरा की पलकें नीद मे लगी थीं कि स्वप्न में 'सांवलिया' आए और जब वह जगी, वे जा चुके थे। जिसके लिए वह इस प्रकार व्याकल थी, वह आया और चला गया, यह मीरा के लिए कितनी दुःखदाई घडी थी, वह कह उठी—

सोयत ही पलका में मैं तो, पलक लगी पल मे पिय आये।
मैं जु उठी प्रभु आदर देण क जाग पडी पिय ढूंढ न पाये।
और सखी पिय सोई गमाये, मैं जू सखी पिय जागि गंवाये।

इस प्रकार मीरा का विरह-वर्णन एक सच्चे हृदय की अनुभुति है। उसमें प्रेमी हृदय की सच्ची व्याकुलता, दर्द और टीस है।

इसी प्रकार मीरा का सयोग-वर्णन भी कुछ कम नही है। उसमे मिलन की लालसा पूरी होती है। कृष्ण मीरा के घर आए हैं, आखें उस रूप-माधुर्य का रस पान करती हैं, मीरा अब उन्हें एक पल को भी अपनी आंखो से दूर नहीं होने देना चाहती, इसी से कहती हैं—

पिया जी म्हारे-नैण आगे रहज्यो जी।
नैना आगे रहज्यो म्हांने, भूल मत जाज्यो जी॥

प्रभु ने मीरा की यह बात मान ली, वे मीरा के महल मे ठहर गये अब उस प्रियतम को रिझाने के लिए मीरा मतवाली हो उठी। उस प्रेम-मिलन में वह बावली होकर नाच उठी—

मीरा नाची रे।
पग घूंघरू बांध मीरा नाची रे॥

इस प्रकार मीरा का वियोग और सयोग दोनो ही अपूर्व हैं। दोनो ही प्रसगों में आत्मा की सच्ची अनुभूति हैं, सच्ची तन्मयता है। मीरा का यह प्रेम-काव्या हिन्दी की अपूर्व सम्पत्ति है। सवत् १६०३ मे उनकी मृत्यु हो गई।

काव्य कला की दृष्टि से मीरा की गीत-शैली (Lyrical) है। मीरा का स्वर मधुर था। उसमे सगीत की एक अपूर्व छटा है। रूपक, उत्प्रेक्षा, उपमा, दृष्टान्त आदि अलकारो का अच्छा प्रयोग हुआ है। मीरा की प्रसिद्ध रचनाएं निम्नलिखित हैं—

(१) राग गोविन्द, (२) नरसी जी का मायरा, (३) राग मल्हार।



बाबू भारतेन्दु हरिश्चन्द्र

प्रत्येक व्यक्ति का अपना व्यक्तित्व और महत्व होता है। भारतेन्दु का महत्त्व इसलिए नही है कि उन्होने काफी सख्या मे ग्रन्थ लिखे, अपितु उनका महत्त्व इसलिए है कि वे ऐसे समय में पैदा हुए, जबकि हिन्दी को एक दृढ आत्म-विश्वासी और योग्य नेतृत्व की आवश्यकता थी। वह समय हिन्दी के लिए सक्रान्तिकाल का समय था। राजनीति, समाज और धर्म सभी में नई क्रान्ति आ रही थी। अतएव हिन्दी को ऐसे व्यक्ति की आवश्यकता थी, जो उसे निश्चित मार्ग दे सके। ऐसे ही कठिन समय में भारतेन्दु का प्रादुर्भाव हुआ था।

भारतेन्दु हरिश्चन्द्र का जन्म सम्वत् १९०७ मे काशी मे हुआ। आपके पिता का नाम गोपालचन्द्र गिरिधर था। आप भी हिंदी के अच्छे कवि थे। व्यक्ति के सस्कारो पर परिवार के वातावरण का प्रभाव पड़ना स्वाभाविक है। अतः भारतेन्दु पर भी अपने पिता का प्रभाव पडा और शैशवावस्था से ही काव्य रचना करने लगे। प्रसिद्ध है कि भारतेन्दु जी ने पाँच वर्ष की अवस्था मे ही एक सुन्दर दोहे की रचना करके अपने पिता को आश्चर्य चकित कर दिया था।

जब पिता का स्वर्गवास हुआ, भारतेन्दु की अवस्था केवल दस वर्ष की थी। पिता की इस असमय मृत्यु से उनकी शिक्षा पूरी न हो सकी। इस अभाव को उन्होंने घर पर रह कर ही पूरा किया। बगला, सस्कृति और फारसी-अरबी का आपने यथोचित अध्ययन किया। अनेक तीर्थ-यात्राएँ भी कीं, जिनसे उन्हें प्रकृति सौंदर्य और देश के विभिन्न प्रान्तो के सामाजिक रीति-रिवाजो को देखने-समझने का अच्छा अवसर मिला। भारतेन्दु सकुचित विचारो के व्यक्ति न थे। उनका दृष्टिकोण विस्तृत था। वे स्वतन्त्रता के प्रेमी और प्रगतिशील विचारो के व्यक्ति थे, साथ ही वे स्वभाव से दानी प्रकृति के भी थे। अनेक शिक्षा-सस्थाओ और गरीब विद्यार्थियों को उन्होंने मुक्तहस्त से सहायता देकर आगे बढ़ाया। भारतेन्दु जी का इस दानशीलता को देखकर

एक बार काशी नरेश ने इन्हे सावधान भी किया था, परन्तु इन्होंने जो उत्तर दिया, वह बहुत महत्वपूर्ण था—इन्होंने कहा "महाराज इस धन ने मेरे पूर्वजों को खाया है और मैं इसे खाऊँगा।"

दूसरी प्रवृति सत्य की थी। सूरज और चदा के जग से टरने पर भी ये अपने सत्य के प्रति अटल रहते थे। भारतेन्दु हरिश्चन्द्र सत्यवादी हरिश्चन्द्र के समान सत्यवादी, सरल और दृढ थे।

भारतेन्दु बाबू सर्वतोमुखी प्रतिभा-सम्पन्न कवि थे। अपनी इस प्रतिभा से हिन्दी के प्रायः सभी अगो का विकास करने का प्रयत्न किया। उस समय हिन्दी साहित्य में दो भाषाओ का प्रयोग हो रहा था, एक ओर तो पद्य मे ब्रजभाषा की प्रधानता थी और दूसरी ओर गद्य मे खड़ी बोली का प्रयोग चल रहा था। इन्होने पद्य की भाषा ब्रज को ही स्वीकार किया, परन्तु अब तक जो विषय कविता के क्षेत्र मे लिये जा रहे थे, वे उन्हे स्वीकार नहीं हुए अब तक कविता के विषय प्रायः राधा-कृष्ण ही रहे थे और इन्ही को लेकर शृगार के रस का वर्णन किया जाता था, परन्तु भारतेन्दु ने अपनी कविता के विषय देश-भक्ति, समाज सुधार तथा शुद्ध भक्ति आदि ही रखे। कविता में राष्ट्रीयता के भावो को स्थान देने वाले पहले व्यक्ति भारतेन्दु ही थे। दूसरा कार्य उनका भाषा सुधार का था। उन्होने देखा कि ब्रजभाषा मे ऐसे शब्दो का प्रयोग होता है, जो पुराने पड गये हैं। अपने ऐसे शब्दो का सर्वथा परित्याग करके प्रचलित और सरल शब्दो को ही अपनी कविता मे स्थान दिया, जिससे ब्रजभाषा की क्लिष्टता दूर हो गई और सरलता आ गई। इससे कविता का जो सम्बन्ध सर्व-साधारण से टूट गया था, वह पुन. जनता के निकट आ गया।

गद्य के क्षेत्र मे भी उस समय एक अनिश्चित अवस्था चल रही थी। राजा लक्ष्मणसिंह सस्कृतनिष्ठ गद्य के समर्थक थे, तो राजा शिव प्रसाद सितारे हिन्द उर्दू-फारसी के शब्दो को प्रधानता देना चाहते थे। भारतेन्दु की यह भी सबसे बड़ी सफलता थी कि उन्होंने मध्य मार्ग निश्चित करके हिन्दी गद्य का ऐसा स्वरूप रखा जो साधारण जनता के लिए उपयुक्त था।

बाबू भारतेन्दु हरिश्चन्द्र

प्रत्येक व्यक्ति का अपना व्यक्तित्व और महत्व होता है। भारतेन्दु का महत्त्व इसलिए नही है कि उन्होने काफी सख्या मे ग्रन्थ लिखे, अपितु उनका महत्त्व इसलिए है कि वे ऐसे समय में पैदा हुए, जबकि हिन्दी को एक दृढ आत्म-विश्वासी और योग्य नेतृत्व की आवश्यकता थी। वह समय हिन्दी के लिए सक्रान्तिकाल का समय था। राजनीति, समाज और धर्म सभी मे नई क्रान्ति आ रही थी। अतएव हिन्दी को ऐसे व्यक्ति की आवश्यकता थी, जो उसे निश्चित मार्ग दे सके। ऐसे ही कठिन समय में भारतेन्दु का प्रादुर्भाव हुआ था।

भारतेन्दु हरिश्चन्द्र का जन्म सम्वत् १६०७ मे काशी मे हुआ। आपके पिता का नाम गोपालचन्द्र गिरिधर था। आप भी हिंदी के अच्छे कवि थे। व्यक्ति के सस्कारो पर परिवार के वातावरण का प्रभाव पड़ना स्वाभाविक है। अतः भारतेन्दु पर भी अपने पिता का प्रभाव पडा और शैशवावस्था से ही काव्य रचना करने लगे। प्रसिद्ध है कि भारतेन्दु जी ने पाँच वर्ष की अवस्था मे ही एक सुन्दर दोहे की रचना करके अपने पिता को आश्चर्य चकित कर दिया था।

जब पिता का स्वर्गवास हुआ, भारतेन्दु की अवस्था केवल दस वर्ष की थी। पिता की इस असमय मृत्यु से उनकी शिक्षा पूरी न हो सकी। इस अभाव को उन्होंने घर पर रह कर ही पूरा किया। बगला, सस्कृति और फारसी-अरबी का आपने यथोचित अध्ययन किया। अनेक तीर्थ-यात्राएँ भी कीं, जिनसे उन्हें प्रकृति सौंदर्य और देश के विभिन्न प्रान्तो के सामाजिक रीति-रिवाजों को देखने-समझने का अच्छा अवसर मिला। भारतेन्दु सकुचित विचारो के व्यक्ति न थे। उनका दृष्टिकोण विस्तृत था। वे स्वतन्त्रता के प्रेमी और प्रगतिशील विचारों के व्यक्ति थे, साथ ही वे स्वभाव से दानी प्रकृति के भी थे। अनेक शिक्षा-सस्थाओ और गरीब विद्यार्थियो को उन्होंने मुक्तहस्त से सहायता देकर आगे बढ़ाया। भारतेन्दु जी का इस दानशीलता को देखकर

एक बार काशी नरेश ने इन्हे सावधान भी किया था, परन्तु इन्होंने जो उत्तर दिया, वह बहुत महत्वपूर्ण था—इन्होने कहा "महाराज इस धन ने मेरे पूर्वजों को खाया है और मैं इसे खाऊँगा।"

दूसरी प्रवृत्ति सत्य की थी। सूरज और चदा के जग से टरने पर भी ये अपने सत्य के प्रति अटल रहते थे। भारतेन्दु हरिश्चन्द्र सत्यवादी हरिश्चन्द्र के समान सत्यवादी, सरल और दृढ थे।

भारतेन्दु बाबू सर्वतोमुखी प्रतिभा-सम्पन्न कवि थे। अपनी इस प्रतिभा से हिन्दी के प्रायः सभी अगो का विकास करने का प्रयत्न किया। उस समय हिन्दी साहित्य में दो भाषाओ का प्रयोग हो रहा था, एक ओर तो पद्य मे ब्रजभाषा की प्रधानता थी और दूसरी ओर गद्य मे खड़ी बोली का प्रयोग चल रहा था। इन्होंने पद्य की भाषा ब्रज को ही स्वीकार किया, परन्तु अब तक जो विषय कविता के क्षेत्र मे लिये जा रहे थे, वे उन्हें स्वीकार नहीं हुए अब तक कविता के विषय प्राय. राधा-कृष्ण ही रहे थे और इन्ही को लेकर शृंगार के रस का वर्णन किया जाता था, परन्तु भारतेन्दु ने अपनी कविता के विषय देश-भक्ति, समाज सुधार तथा शुद्ध भक्ति आदि ही रखे। कविता मे राष्ट्रीयता के भावो को स्थान देने वाले पहले व्यक्ति भारतेन्दु ही थे। दूसरा कार्य उनका भाषा सुधार का था। उन्होंने देखा कि ब्रजभाषा में ऐसे शब्दों का प्रयोग होता है, जो पुराने पड गये हैं। अपने ऐसे शब्दो का सर्वथा परित्याग करके प्रचलित और सरल शब्दो को ही अपनी कविता में स्थान दिया, जिससे ब्रजभाषा की क्लिष्टता दूर हो गई और सरलता आ गई। इससे कविता का जो सम्बन्ध सर्व-साधारण से टूट गया था, वह पुनः जनता के निकट आ गया।

गद्य के क्षेत्र मे भी उस समय एक अनिश्चित अवस्था चल रही थी। राजा लक्ष्मणसिंह संस्कृतनिष्ठ गद्य के समर्थक थे, तो राजा शिव प्रसाद सितारे हिन्द उर्दू-फारसी के शब्दो को प्रधानता देना चाहते थे। भारतेन्दु की यह भी सबसे बडी सफलता थी कि उन्होंने मध्य मार्ग निश्चित करके हिन्दी गद्य का ऐसा स्वरूप रखा जो साधारण जनता के लिए उपयुक्त था।

उन्होंने अपने गद्य को न तो राजा लक्ष्मणसिंह के समान संस्कृत के शब्दों से बोझिल होने दिया और न ही अरबी फारसी के 'आम-फहम' शब्दों का प्रयोग किया। उन्होंने अपने नाटकों और निबन्धों में ऐसी भाषा रखी, जिससे हिन्दी का साधारण पाठक बिना किसी कठिनाई के सरलता से समझ सके। भाषा में मुहावरों का प्रयोग उनकी भाषा को सुन्दर बनाने में और भी सहायक हुआ।

हिन्दी में भारतेन्दु की सबसे बड़ी देन नाटक की थी। इनसे पहले हिन्दी में केवल मौलिक नाटक एक दो ही लिखे गये थे। इस क्षेत्र में आपने जहाँ मौलिक नाटक लिखे, वहाँ बगला, संस्कृत और अंग्रेजी नाटको के भी हिन्दी में सुन्दर अनुवाद किये। संस्कृत के 'मुद्राराक्षस' नाटक का अनुवाद आपका आदर्श अनुवाद है। बगला नाटक से 'धनंजय-विजय' का अनुवाद भी आपका अच्छा बन पड़ा है।

इसके अतिरिक्त प्रहसन नाटको में 'अन्धेर नगरी', 'विषस्य विषमौषधम्', तथा 'वैदिकी हिंसा-हिंसा न भवति' आपके सफल प्रहसन हैं। अंग्रेजी नाटकों के अनुवादों में आपका 'दुर्लभ-बन्धु' एक सफल अनुवाद है।

पत्र पत्रिकाओं के क्षेत्र में भी आपने सराहनीय कार्य किया। 'हरिश्चन्द्र-मैगजीन' पत्रिका अपने समय की सुन्दर पत्रिका थी। एक उपन्यास लिखने का भी प्रयत्न किया था, जो अधूरा रह गया। सब मिलाकर आपने लगभग १७५ ग्रन्थ लिखे थे। आपने एक साहित्यिकगोष्ठी भी स्थापित की थी, जो 'भारतेन्दु मित्र मंडली' के नाम से प्रसिद्ध थी उसमें उस समय के अनेक प्रसिद्ध कवि और विद्वान सम्मिलित थे। इस गोष्ठी ने हिन्दी के प्रसार में अनेक सराहनीय कार्य किये थे।

शोक है कि संवत् १९४१ में कुल ३५ वर्ष की आयु में ही आपका स्वर्गवास हो गया, जिससे हिन्दी-संसार की महान् क्षति हुई। भारतेन्दु हिन्दी के लिए वरदान बनकर आये थे और अपनी महान सेवाओं से उन्होंने ठीक

समय पर हिन्दी का उचित मार्ग निर्देशन किया। हिन्दी साहित्य के इतिहास मे गद्य का जन्मदाता और पद्य का पथ प्रदर्शक मान कर आपको सदा याद किया जाता रहेगा।

श्री जयशंकर प्रसाद

परिस्थितियाँ नवीन विचारधाराओ को जन्म देती हैं। जब कोई नवीनता सामने आती है तो उसका आधार कोई न कोई घटना होती है। आधुनिक साहित्य का जो रूप आज जितना विकसित देख रहे हैं उनके पीछे कितने ही तपस्वी साहित्यकारो का तप है। उन तपस्वियो मे प्रसाद का नाम आदर से लिया जाता है साहित्य सामाजिक परिस्थितियो और विचारो का प्रतिबिम्ब होता है। परन्तु हिंदी साहित्य जिन कठिनाईयो मे से गुजरा है उसे देखते हुए प्रसाद का कार्य अत्यन्त सराहनीय है। प्रसाद का साहित्य देखने के लिये उनके जीवन पर दृष्टिपात करना आवश्यक है। क्योंकि जीवन ही कविता का स्रोत होता है।

प्रसाद का जन्म काशी के सुप्रसिद्ध सुँघनी साहू परिवार में सवत् १८५६ मे हुआ। प्रसाद के लिए साहित्यिक प्रतिभा विरासत के रूप में मिली थी। प्रसाद का परिवार प्रारम्भ से ही साहित्यिक रुचि सम्पन्न था। आये दिनो प्रसाद के पिता और पितामह के यहा साहित्यिक व्यक्तियो का जमघट लगा रहता था। कविगण समस्या पूर्ति करते थे। बालक प्रसाद पर इस वातावरण का प्रभाव पडना आवश्यक था। हुआ भी ऐसा ही, प्रसाद एकान्त मे बैठकर उन उक्तियो को गुनगुनाया करते थे। यही गुनगुनाना धीरे-धीरे कविता मे परिणत हो गया, परन्तु गुनगुनाना ही किसी को कवि नही बना देता है। इस गुनगुनाने के साथ प्रसाद की काव्य-साधना है।

उन्होंने अपने गद्य को न तो राजा लक्ष्मणसिंह के समान संस्कृत के शब्दों से बोझिल होने दिया और न ही अरबी फारसी के 'आम-फहम' शब्दों का प्रयोग किया। उन्होंने अपने नाटकों और निबन्धों में ऐसी भाषा रखी, जिससे हिन्दी का साधारण पाठक बिना किसी कठिनाई के सरलता से समझ सके। भाषा में मुहावरों का प्रयोग उनकी भाषा को सुन्दर बनाने में और भी सहायक हुआ।

हिन्दी में भारतेन्दु की सबसे बड़ी देन नाटक की थी। इनसे पहले हिन्दी में केवल मौलिक नाटक एक दो ही लिखे गये थे। इस क्षेत्र में आपने जहाँ मौलिक नाटक लिखे, वहाँ बगला, संस्कृत और अंग्रेजी नाटकों के भी हिन्दी में सुन्दर अनुवाद किये। संस्कृत के 'मुद्राराक्षस' नाटक का अनुवाद आपका आदर्श अनुवाद है। बंगला नाटक से 'धनंजय-विजय' का अनुवाद भी आपका अच्छा बन पड़ा है।

इसके अतिरिक्त प्रहसन नाटकों में 'अन्धेर नगरी', 'विषस्य विषमौषधम्' तथा 'वैदिकी हिंसा-हिंसा न भवति' आपके सफल प्रहसन हैं। अंग्रेजी नाटकों के अनुवादों में आपका 'दुर्लभ-बन्धु' एक सफल अनुवाद है।

पत्र पत्रिकाओं के क्षेत्र में भी आपने सराहनीय कार्य किया। 'हरिश्चन्द्र-मेगजीन' पत्रिका अपने समय की सुन्दर पत्रिका थी। एक उपन्यास लिखने का भी प्रयत्न किया था, जो अधूरा रह गया। सब मिलाकर आपने लगभग १७५ ग्रन्थ लिखे थे। आपने एक साहित्यिकगोष्ठी भी स्थापित की थी, जो 'भारतेन्दु मित्र मंडली' के नाम से प्रसिद्ध थी उसमें उस समय के अनेक प्रसिद्ध कवि और विद्वान सम्मिलित थे। इस गोष्ठी ने हिन्दी के प्रसार में अनेक सराहनीय कार्य किये थे।

शोक है कि संवत् १९४१ में कुल ३५ वर्ष की आयु में ही आपका स्वर्गवास हो गया, जिससे हिन्दी-संसार की महान् क्षति हुई। भारतेन्दु हिन्दी के लिए वरदान बनकर आये थे और अपनी महान सेवाओं से उन्होंने ठीक

समय पर हिन्दी का उचित मार्ग निर्देशन किया। हिन्दी साहित्य के इतिहास मे गद्य का जन्मदाता और पद्य का पथ प्रदर्शक मान कर आपको सदा याद किया जाता रहेगा।

श्री जयशंकर प्रसाद्

परिस्थितियाँ नवीन विचारधाराओ को जन्म देती हैं। जब कोई नवीनता सामने आती है तो उसका आधार कोई न कोई घटना होती है। आधुनिक साहित्य का जो रूप आज जितना विकसित देख रहे हैं उनके पीछे कितने ही तपस्वी साहित्यकारो का तप है। उन तपस्वियो मे प्रसाद का नाम आदर से लिया जाता है साहित्य सामाजिक परिस्थितियो और विचारो का प्रतिबिम्ब होता है। परन्तु हिंदी साहित्य जिन कठिनाईयो मे से गुजरा है उसे देखते हुए प्रसाद का कार्य अत्यन्त सराहनीय है। प्रसाद का साहित्य देखने के लिये उनके जीवन पर दृष्टिपात करना आवश्यक है। क्योकि जीवन ही कविता का स्रोत होता है।

प्रसाद का जन्म काशी के सुप्रसिद्ध सुंघनी साहू परिवार में सवत् १८५६ में हुआ। प्रसाद के लिए साहित्यिक प्रतिभा विरासत के रूप में मिली थी। प्रसाद का परिवार प्रारम्भ से ही साहित्यिक रुचि सम्पन्न था। आये दिनो प्रसाद के पिता और पितामह के यहा साहित्यिक व्यक्तियो का जमघट लगा रहता था। कविगण समस्या पूर्ति करते थे। बालक प्रसाद पर इस वातावरण का प्रभाव पडना आवश्यक था। हुआ भी ऐसा ही, प्रसाद एकान्त मे बैठकर उन उक्तियों को गुनगुनाया करते थे। यही गुनगुनाना धीरे-धीरे कविता मे परिणत हो गया, परन्तु गुनगुनाना ही किसी को कवि नही बना देता है। इस गुनगुनाने के साथ प्रसाद की काव्य-साधना है।

प्रसाद का बाल्यकाल अत्यन्त विनोदपूर्ण बीता। काशी के वातावरण के अनुसार व्यायाम और घुडसवारी की ओर प्रसाद झुके और उनमे सफल भी हुए। जब प्रसाद बारह वर्ष के थे उन्होने अपनी माता के साथ बद्रीनाथ की यात्रा की इस यात्रा से प्रकृति के सौदर्य का हृदय पर प्रभाव पडा। १२ वर्ष की अवस्था तक ही प्रसाद के पिता और माता की मृत्यु हो गई। प्रसाद का हृदय पितृशोक से व्याकुल हो उठा। घर की परिस्थिति का भार प्रसाद पर आ पडा, नवी शिक्षा के बाद वह शिक्षा प्राप्त न कर सके। कुछ दिन बाद बडे भाई शम्भुदत्त ने घर पर ही हिन्दी, सस्कृत, फारसी, उर्दू पढने का प्रबन्ध करा दिया। प्रसाद ने बडे मनोयोग से भारतीय दर्शन का अध्ययन किया। वैसे परिवार से प्रसाद शैव थे। प्रसाद ने बौद्ध-दर्शन का अधिक अध्ययन किया। इसलिए बौद्धो की करुणा और शैव धर्म का आनन्द प्रसाद के काव्य के मूल आधार है।

प्रसाद ने १७ वर्ष की आयु मे साहित्य क्षेत्र मे पदार्पण किया। इनकी प्रारम्भिक रचनाएँ ब्रजभाषा मे मिलती हैं। कुछ दिनो के बाद वे खडी बोली मे कविता करने लगे। प्रथम कविता सग्रह 'चित्राधार' है। जिस समय प्रसाद हिन्दी साहित्य के क्षेत्र में आए उस समय द्विवेदी युग चल रहा था। उस युग की प्रवृत्ति इतिवृत्तात्मक थी। प्रारम्भ में इस प्रवृत्ति का प्रभाव प्रसाद पर पडा और उस प्रभाव में कानन कुसुम, महाराणा का महत्त्व, प्रेमपथिक और करुणालय की रचनाएँ कीं। प्रसाद की प्रतिभा तो कुछ और ही थी। वह किसी परम्परा का अनुकरण करना नही चाहती थी। ज्यो-ज्यो प्रसाद का अध्ययन गम्भीर होता गया त्यो-त्यो विचारधारा विकसित और नया मोड लेने लगी। प्रसाद ने देखा कि श्रृगार के नाम पर नग्न शृंगार का चित्रण किया जा रहा है। उसके स्थान पर प्रसाद ने अशरीरी सौदर्य, भावगभीरता आदि गुणो के आधार पर 'आँसू' और 'झरना' की रचना की। इन रचनाओ से हिन्दी मे छायावाद जैसी नवीन अभिव्यजना शैली ने जन्म लिया।

प्रसाद ने इन दिनो प्राचीन इतिहास का भी अधिक गम्भीर अध्ययन

किया। इस अध्ययन का परिणाम यह हुआ कि प्रसाद की सूझ बूझ और गहन हो गई। इन्ही दिनो आपने साहित्य के अन्य क्षेत्रो में अपनी प्रतिभा का परिचय दिया। नाटक और कहानी के क्षेत्र में भी प्रसाद ने नई धारा को जन्म दिया। काव्य के क्षेत्र में आसू, लहर, झरना के बाद सबसे अधिक महत्त्वपूर्ण रचना कामायनी है। कामायनी छायावाद और रहस्यवाद की सर्वोत्कृष्ट रचना है प्रसाद की प्रतिभा वास्तविक रूप में इसी रचना में प्रतिफलित हुई। दार्शनिक स्पर्श ने इस रचना को 'आत्मा का काव्य' बना दिया है। प्रकृति का जो मनोहर चित्रण कामायनी में हुआ वह हिन्दी काव्य के लिए नए पथ का दिग्दर्शक सिद्ध हुआ। प्रकृति का मानवीयकरण, अलौकिक कल्पनाएँ नवीन उपमाएँ, नई उद्भावनाएँ, भावसौंदर्य की स्थापना, नई भाषा शैली प्रसाद के काव्य की विशेषताएँ हैं।

प्रसाद ने हिन्दी साहित्य के किसी क्षेत्र को अछूता नही छोडा। विशेषता यह है कि इन्होंने हिन्दी साहित्य भवन के जिस कोने को छुआ उसे ही एक नए प्रकाश से भर दिया। काव्य के क्षेत्र में आसू और कामायनी वे अमर रचनाएँ हैं जो युग-युग तक हिन्दी काव्य का पथ प्रदर्शन करती रहेंगी। यों तो प्रसाद कवि के रूप में प्रधान रूप से याद किये जाते हैं—परन्तु जहाँ वे युग के कवि हैं, वहा के युग के नाटककार भी हैं। प्रसाद ने ऐतिहासिक भावात्मक और पौराणिक नाटक लिखे हैं। ऐतिहासिक नाटको की पृष्ठ भूमि प्रसाद ने वहा से चुनी, जिसे हमारे इतिहास मे स्वर्णयुग अर्थात् गुप्त-युग कहा जाता है। नाटककार प्रसाद की विशेषता यह है कि उन्होंने अतीत के चित्र खीचते हुए भी वर्तमान को नहीं भुलाया है। उनके नाटको का शरीर भले ही ऐतिहासिक अतीत का दिया हो परन्तु उनकी आत्मा मे वर्तमान कालिक समस्याओ का करुण क्रन्दन है। ये समस्याएँ युग के मानव की समस्याएँ हैं। नारी का अन्तर्द्वन्द और वहिर्द्वन्द्व प्रसाद ने अतीव सफलता से चित्रित किया है। प्रसाद से पहले भारतेन्दु ने नाटक के क्षेत्र में अच्छा कार्य किया था, उस कार्य को नवीन रूप में आगे बढ़ाने का श्रेय प्रसाद को है। ऐतिहासिक नाटको में चन्द्रगुप्त, स्कन्दगुप्त, अजातशत्रु, राज्यश्री,

ध्रुवस्वामिनी, विशाख, आदि हैं। जनमेजय का नाग यज्ञ प्रसाद का पौराणिक नाटक है। कामना और एकघूंट प्रसाद के भावात्मक नाटक हैं। इन नाटको मे वस्तु की गम्भीरता, चरित्र का द्वन्द्वात्मक चित्रण, सवादो का माधुर्य और शान्ति विशेष गुण लिए गए है। नाटको मे कवि प्रसाद का कवित्व छिप नहीं सका है।

प्रसाद मे जहाँ काव्य और नाटक लिखे वहाँ उपन्यास भी लिखे। प्रसाद ने कुल मिलाकर तीन उपन्यास लिखे, जिनमे दो तो पूर्ण हैं और तीसरा अधूरा। परन्तु इन ढाई उपन्यासो के कारण ही प्रसाद की तुलना, उपन्यास सम्राट प्रेमचन्द से की जाती है इसी से प्रसाद के व्यक्तित्व और साहित्यिक गाम्भीर्य का परिचय प्राप्त किया जा सकता है। ककाल और तितली उपन्यास सामाजिक उपन्यास हैं। इन उपन्यासों मे प्रसाद का दृष्टिकोण आध्यात्मिक और काल्पनिक स्तर से उठकर यथार्थवादी हो गया है। 'इरावती' प्रसाद का अधूरा उपन्यास है। वास्तव मे ये उपन्यास भी अपनी शैली और विषय के कारण उपन्यास साहित्य के इतिहास मे नया पृष्ठ जोडते हैं।

प्रसाद ने अपने कर-पारस-पारस से किस धातु को कुन्दन नहीं बना दिया ? काव्य का क्षेत्र, नाटक का क्षेत्र, उपन्यास का क्षेत्र प्रसाद-प्रतिभा की ज्योति पाकर द्योतित हो उठे। जब यह 'आकाशदीप' कहानी के क्षेत्र मे पहुँचा तो जैसे किसी ने दीपक राग गा दिया। कहानी साहित्य प्रसाद की सुन्दर चमत्कारपूर्ण कहानियो को पाकर गर्व से सर उठा बैठा। विश्व-साहित्य की कहानियाँ प्रसाद का कर चुम्बन करने के लिए मानो ललक उठी। प्रसाद ने कुल मिलाकर सत्तर के लगभग कहानियाँ लिखी। ये कहानियाँ छाया, इन्द्र-जाल प्रतिध्वनि, आकाशदीप और आंधी पाँच कहानी सग्रहो मे-सग्रहीत है। इन कहानियो मे भी प्रसाद का कवित्वपूर्ण हृदय छिप नहीं सका है। इस प्रकार सब मिलाकर अट्ठाइस ग्रन्थ प्रसाद ने लिखे। कला, कविता तथा छायावाद आदि विषयो पर प्रसाद के निबन्ध अत्यन्त उच्चकोटि के हैं। परन्तु

काल की क्रूर कहानी इतनी पुरानी होते हुए भी अधूरी है। इस कहानी के पात्र दिन पर दिन बढ़ते ही जाते हैं। प्रसाद की आयु अभी कम थी। संवत् १९६४ मे क्षय रोग के कारण उनका देहावसान हो गया। यदि सर्वशक्तिमान ईश्वर प्रसाद को कुछ आयु और देता तो यह महान आत्मा न जाने इस कामायनी के अतिरिक्त कौन-सा अमूल्य काव्य-रत्न हिन्दी को देती, जिससे यह हिन्दी वंचित रह गई। प्रसाद इस कविता-कामिनी के सिंदूर थे। प्रसाद को खोकर जैसे हिन्दी का सुहाग असमय छिन गया। आज के आलोचक प्रसाद के साहित्य मे दोष दर्शन करते हैं—वह ठीक भी है। आलोचना तो कसौटी है—परन्तु प्रसाद का यश अथाह क्षीर सागर है उसमे ये आलोचना के कटु बिन्दु विलीन हो सकते हैं उसे खारा नही बना सकते। प्रसाद भारतीय संस्कृति के अमर गायक थे। उनके साहित्य मे सत्य, शिवम् और सुन्दरम् की अनन्य मगल कामना यत्र-तत्र बिखर रही है। प्रकृति और प्रेम का उज्ज्वल चित्र उपस्थित कर आज के व्यस्त मानव के लिए जैसे चुनौती है। उनके नाटक, काव्य, कहानी और उपन्यासो मे उनके कवित्व का रूप प्रधान है। शैली और भावना की दृष्टि से इस क्षेत्र में कुछ दोष कहे जा सकते हैं। जैसे प्रसाद के नाटक रंग-मंच पर नही खेले जा सकते। परन्तु आज के वैज्ञानिक वातावरण को देखा जाए तो प्रसाद के नाटक दोषी नहीं ठहरते। कहानियो की वर्णन शैली में जो कवित्व की मात्रा अधिक है वह भी उनकी कलात्मक रुचि का प्रभाव है।

———

राष्ट्र कवि मैथिलीशरण गुप्त

कौन जानता था कि एक साधारण परिवार मे उत्पन्न बालक, विद्यालय की शिक्षा से वचित विद्यार्थी तथा आधुनिकता के रग से दूर एक मानव एक दिन राष्ट्र का सबसे बडा कवि होगा, और भारत के कवियो में उसका सर्वश्रेष्ठ स्थान होगा। सरस्वती के ऐसे अमर पुत्र श्री मैथलीशरण जी का जन्म सन् १८८६ ई० म चिरगाव जिला झासी मे हुआ था। आपके पिता श्री रामशरण जी भगवत-भक्ति के पोषक थे। धनी होने पर भी भगवान में उनकी अटूट आस्था थी। कविता मे उन्हें भी रुचि थी तथा वह भी कविता लिखा करते थे।

गुप्त जी की शिक्षा घर पर ही मुन्शी अजमेरी जी द्वारा हुई। यहीं आपन सस्कृत तथा बगला का अध्ययन किया। महावीर प्रसाद द्विवेदी के गुरुत्व में आपकी प्रतिभा का विकास हुआ।

उस समय काग्रेस का जन्म हो चुका था तथा देश मे राष्ट्रीयता की लहर फलने लगी थी। गुप्त जी भी इससे अछूते न रह सके। भारत की स्वाधीनता प्राप्ति के रग मे गुप्त जी भी रग गए तथा भारतीयो को अपनी कविता द्वारा प्रबोधन देने लगे। सस्कृत तथा बगला पढने के कारण भारत की प्राचीन सस्कृति मे आपकी अटूट श्रद्धा हो गई। महावीर प्रसाद द्विवेदी की विद्वत्ता की भी आपके जीवन पर गहरी छाप पडी। आगे चलकर गांधी जी का इनके जीवन पर प्रभाव पडा और हिन्दु-मुस्लिम एकता, अछूतोद्धार, स्त्री-शिक्षा के यह सबल पोषक बने।

गुप्त जी के जितने भी ग्रन्थ हैं वे भारत की प्राचीन सस्कृति तथा राष्ट्रीयता से ओत-प्रोत हैं। 'भारत-भारती' उसका ज्वलन्त उदाहरण है। सम्पूर्ण देशो से अधिक किस देश का उत्कर्ष है—"उसका कि जो ऋषि-भूमि है, वह कौन ? भारतवर्ष है।" अतीत के गौरव के प्रति गुप्त जी बार-बार अपना मस्तक झुकाते हैं और उसका आह्वान करते हैं।

संसार के जब देश करना 'हाँ' न 'न' थे जानते।
ईश के आदेश से तब हम वेद मन्त्र बखानते॥

मातृ-भूमि पर बलिदान होने में गुप्त जी अपना गौरव समझते हैं। दूसरो का आदर तथा उनकी आवभगत के वह पोषक है किन्तु जहाँ देश का अहित देखते हैं ललकार कर कह देते हैं—

त्याग हमारा धर्म किन्तु हम आचरण कभी न सहेंगे।
दानवता से मानवता का वरण कभी न सहेंगे॥

काव्य-जगत मे गुप्त जी ने कुछ अछूता नही छोडा। स्वदेश प्रेम, रहस्य-वाद, ईश्वर-भक्ति सभी ओर इनकी बहुमुखी प्रतिभा ने साहित्य का निर्माण कर युग के चरण पखारने मे योग-दान दिया है।

'भारत-भारती' गुप्त जी का प्रथम लोकप्रिय काव्य है। इसमें कवि ने तीन खण्ड रखे हैं। 'अतीत खण्ड' में भारत के अतीत गौरव की गाथा गायी है, 'वर्तमान' मे देश की दुर्दशा पर आँसू बहाए हैं और 'भविष्यत्' मे भारत की पुन सुख-समृद्धि की कामना की है।

'साकेत' राम-कथा प्रसग को लेकर चलने वाला खडी बोली का महाकाव्य है। काव्य की उपेक्षिता उर्मिला को इस काव्य मे प्रमुखता दी गई है। कैकेयी का परिताप और उर्मिला का वियोग 'साकेत' के अत्यन्त मर्मस्पर्शी स्थल हैं। भरत के साथ उर्मिला भी पचवटी गई थी। अवसर पाकर किसी बहाने से सीता ने लक्ष्मण को उर्मिला की कुटिया मे भेजा। उर्मिला को देख कर लक्ष्मण ठिठके से रह गए। तब कितनी मार्मिक वाणी मे उर्मिला ने कहा—

मेरे उपवन के हरिण आज वनचारी,
मैं बांध न लूंगी तुम्हें, तजो भय भारी।

इस प्रकार 'साकेत' में कवि की वाणी बडी कोमल हो गई है। कला-पक्ष और भाव दोनो पक्ष की दृष्टी मे यह रचना अत्यन्त सफल है। इसी प्रकार काव्य की दूसरी उपेक्षिता यशोधरा है। महात्मा बुद्ध का महान् त्याग स्वय ही महान् था, परन्तु यशोधरा का जीवन तो काव्य की विभूति थी फिर

भी न जाने क्यो कवियो ने इस विभूति की उपेक्षा की। गुप्त जी ने 'यशोधरा' काव्य लिखकर इसी उपेक्षिता के चरणो में अपनी श्रद्धा के भाव-पुष्प चढ़ाए हैं। 'यशोधरा' हिन्दी का एक अनुपम काव्य है। 'साकेत' में कवि उर्मिला के आँसू पूरी तरह न पोछ सका था, उस कमी को इस काव्य में पूरा किया है। यशोधरा के आँसुओ मे उर्मिला के आँसुओ की पूर्ति हुई है।

गुप्त जी की राष्ट्रीयता महान् है। वे अपने देश और जाति की उन्नति में सभी प्रयत्नो में सहयोगी रहते हैं। न्याय के लिए अपने बन्धु को भी दण्ड देने में उनको कोई संकोच नही है। सच्चा राष्ट्रीय कवि वही होता है जिसकी वाणी में राष्ट्र की आत्मा की सच्ची पुकार हो, अपने युग की सभी समस्याओं का समाधान हो। इस दृष्टी से गुप्त जी की राष्ट्रीयता महान् हैं।

गुप्त जी की शैली को हम तीन भागो में बाट सकते हैं—(१) प्रबन्ध-काव्य जिसमे साकेत, यशोधरा, जयद्रथ-वध तथा पचवटी आदि, (२) विवरण-काव्य, जिसमे भारत-भारती तथा द्वापर आदि हैं तथा (३) नीति शैली, जिसमे झकार, किसान तथा अनघ आदि है।

इस प्रकार गुप्त जी के काव्यो मे विभिन्न शैलियो का समावेश है। भाषा इनकी शुद्ध तथा सरस खडी बोली है।

गुप्त जी ने जो रचनाएं लिखी हैं उनमे रग मे भग, भारत-भारती, जयद्रथ-वध, पलासी का युद्ध, पचवटी, सिद्धराज, साकेत तथा यशोधरा प्रसिद्ध हैं। इसके अतिरिक्त 'सरस्वती' आदि भिन्न-भिन्न पत्रो में उनकी रचनाए उपलब्ध होती हैं। इन सब रचनाओ मे गुप्त जी का दृष्टीकोण जीवनोपयोगी रहा है। वह कला को केवल कला के लिए नही मानते बल्कि जीवन से भी उसका लगाव स्वीकार करते हैं और कहते हैं—

केवल मनोरजन न कवि का कर्म होना चाहिए।
उसमे उचित उपदेश का भी मर्म होना चाहिए॥

खडी बोली के उपन्यासों में गुप्त जी का विशेष स्थान है। भारतेन्दु के बाद प्रोत्सहान देने वाले गुप्त जी हैं। उन्होंने हिन्दी को परिष्कृत रूप मे काव्य की भाषा बनाया तथा उसे राष्ट्रभाषा के पद पर आसीन होने मे योग दिया

गुप्त जी सधे हुए कलाकार हैं उनकी रचनाओ ने देश के मस्तक को ऊँचा उठाया है तथा राष्ट्र में एक नवीन जागृति भरने का कार्य किया है। भारत को एक सूत्र मे बांधने का गुप्त जी ने भरसक प्रयत्न किया है। आज वे भारतीय ससद् के वरिष्ठ सदस्य रहे।



श्री सुमित्रानन्दन पंत

आधुनिक हिन्दी साहित्य के इतिहास मे छायावादी विचार-धारा का आगमन एक विशेष परिचित और अद्भुत घटना है छायावाद का जन्म द्विवेदी-युग की इतिवृतात्मक विचारधार के प्रतिक्रिया स्वरूप हुआ था। इस विचार धारा के प्रवर्तक स्वर्गीय श्री जयशकर प्रसाद थे। छायावाद की धारा को आगे वढाने वालो मे श्री सुमित्रानन्दन पन्त का नाम वडे आदर से लिया जाता है। इसमे कोई सन्देह नहीं कि पन्त ने आधुनिक हिन्दी खडी वोली के काव्य को नया स्वर और नवीन शैली दी।

सुमित्रानंदन पत का जन्म अलमोडा प्रान्त के अतर्गत कमौली ग्राम में सवत् १८१७ मे हुआ। आपका वचपन का नाम कुछ और था—परन्तु आपके भाई हरिदत्त पन्त के पास एक सुमित्रानन्दन सहाय नामक एक मित्र का पत्र आया करता था। भाई ने इस नाम के सौंदर्य को देखकर उन्हें इसी नाम से पुकारना प्रारम्भ कर दिया। आज यह नाम आधुनिक हिन्दी साहित्य के इतिहास का अविस्मरणीय और आदरणीय नाम है। कवि पंत की प्रारम्भिक शिक्षा ग्राम में हुई। उसके वाद वह प्रयाग आ गये, परन्तु असहयोग आंदोलन के प्रभाव के कारण कालेज छोड दिया और साहित्य सेवा में जुट गए। साथ हो पंत ने सस्कृत, वंगला और अग्रेजी का विशेष अध्ययन किया।

हिन्दी-साहित्य में पन्त प्रकृति के कोमल कवि कहे जाते हैं। इसका एक तो कारण यह है कि कवि का जीव प्रकृति की गोद मे पला, हंसा और खेला।

भी न जाने क्यों कवियों ने इस विभूति की उपेक्षा की। गुप्त जी ने 'यशोधरा' काव्य लिखकर इसी उपेक्षिता के चरणों में अपनी श्रद्धा के भाव-पुष्प चढ़ाए हैं। 'यशोधरा' हिन्दी का एक अनुपम काव्य है। 'साकेत' में कवि उर्मिला के आंसू पूरी तरह न पोंछ सका था, उस कमी को इस काव्य में पूरा किया है। यशोधरा के आंसुओं में उर्मिला के आंसुओं की पूर्ति हुई है।

गुप्त जी की राष्ट्रीयता महान् है। वे अपने देश और जाति की उन्नति में सभी प्रयत्नों में सहयोगी रहते हैं। न्याय के लिए अपने बन्धु को भी दण्ड देने में उनको कोई संकोच नहीं है। सच्चा राष्ट्रीय कवि वही होता है जिसकी वाणी में राष्ट्र की आत्मा की सच्ची पुकार हो, अपने युग की सभी समस्याओं का समाधान हो। इस दृष्टी से गुप्त जी की राष्ट्रीयता महान् हैं।

गुप्त जी की शैली को हम तीन भागों में बांट सकते हैं—(१) प्रबन्ध-काव्य जिसमें साकेत, यशोधरा, जयद्रथ-वध तथा पंचवटी आदि, (२) विवरण-काव्य, जिसमें भारत-भारती तथा द्वापर आदि हैं तथा (३) नीति शैली, जिसमें झंकार, किसान तथा अनघ आदि है।

इस प्रकार गुप्त जी के काव्यों में विभिन्न शैलियों का समावेश है। भाषा इनकी शुद्ध तथा सरस खड़ी बोली है।

गुप्त जी ने जो रचनाएं लिखी हैं उनमें रंग में भंग, भारत-भारती, जयद्रथ-वध, पलासी का युद्ध, पंचवटी, सिद्धराज, साकेत तथा यशोधरा प्रसिद्ध हैं। इनके अतिरिक्त 'सरस्वती' आदि भिन्न-भिन्न पत्रों में उनकी रचनाएं उपलब्ध होती हैं। इन सब रचनाओं में गुप्त जी का दृष्टीकोण जीवनोपयोगी रहा है। वह कला को केवल कला के लिए नहीं मानते बल्कि जीवन से भी उसका लगाव स्वीकार करते हैं और कहते हैं—

केवल मनोरंजन न कवि का कर्म होना चाहिए।
उसमें उचित उपदेश का भी मर्म होना चाहिए॥

खड़ी बोली के उपन्यासों में गुप्त जी का विशेष स्थान है। भारतेन्दु के बाद प्रोत्साहन देने वाले गुप्त जी हैं। उन्होंने हिन्दी को परिष्कृत रूप में काव्य की भाषा बनाया तथा उसे राष्ट्रभाषा के पद पर आसीन होने में योग दिया

गुप्त जी सधे हुए कलाकार हैं उनकी रचनाओं ने देश के मस्तक को ऊँचा उठाया है तथा राष्ट्र में एक नवीन जागृति भरने का कार्य किया है। भारत को एक सूत्र मे बाँधने का गुप्त जी ने भरसक प्रयत्न किया है। आज वे भारतीय ससद् के वरिष्ठ सदस्य रहे।



श्री सुमित्रानन्दन पंत

आधुनिक हिन्दी साहित्य के इतिहास मे छायावादी विचार-धारा का आगमन एक विशेष परिचित और अद्भुत घटना है छायावाद का जन्म द्विवेदी-युग की इतिवृतात्मक विचारधार के प्रतिक्रिया स्वरूप हुआ था। इस विचार धारा के प्रवर्तक स्वर्गीय श्री जयशकर प्रसाद थे। छायावाद की धारा को आगे वढ़ाने वालो मे श्री सुमित्रानन्दन पन्त का नाम बडे आदर से लिया जाता है। इसमे कोई सन्देह नहीं कि पन्त ने आधुनिक हिन्दी खडी बोली के काव्य को नया स्वर और नवीन शैली दी।

सुमित्रानंदन पत का जन्म अलमोडा प्रान्त के अतर्गत कसौली ग्राम में सवत् १८१७ मे हुआ। आपका वचपन का नाम कुछ और था—परन्तु आपके भाई हरिदत्त पन्त के पास एक सुमित्रानन्दन सहाय नामक एक मित्र का पत्र आया करता था। भाई ने इस नाम के सौंदर्य को देखकर उन्हें इसी नाम से पुकारना प्रारम्भ कर दिया। आज यह नाम आधुनिक हिन्दी साहित्य के इतिहास का अविस्मरणीय और आदरणीय नाम है। कवि पंत की प्रारम्भिक शिक्षा ग्राम में हुई। उसके वाद वह प्रयाग आ गये, परन्तु असहयोग आंदोलन के प्रभाव के कारण कालेज छोड दिया और साहित्य सेवा में जुट गए। साथ हो पत ने सस्कृत, वगला और अग्रेजी का विशेष अध्ययन किया।

हिन्दी-साहित्य मे पन्त प्रकृति के कोमल कवि कहे जाते हैं। इसका एक तो कारण यह है कि कवि का जीव प्रकृति की गोद मे पला, हँसा और खेला।

इसलिए प्राकृतिक-सौंदर्य के प्रति झुकाव और रुझान स्वाभाविक था। यह प्राकृतिक सौंदर्य तो था ही—स्वयं कवि भी इस प्राकृतिक सौंदर्य के साथ सुन्दर है। कविता का व्यक्तित्व इस कोमलता से ओत-प्रोत है। यही कोमलता उसके जीवन का प्राण है, काव्य का सौंदर्य है और गीत का शृंगार है। इस कोमलता और नवीनता का उदाहरण एक प्रसिद्ध घटना है। कवि पंत ने एक संस्था को जन्म दिया, जिसका नाम रक्खा "लोकायतन।" जिस प्रकार संस्थाओं में मंत्री, उपमंत्री और कोषाध्यक्ष होते हैं—पंत ने इन तीन नामों की अपेक्षा नवीन नाम जैसे—लोकपति, निधिपति अपनाए। इस रुचि से उनकी कोमलता और नवीनता का अनुमान भली भाँति लग सकता है।

कवि पंत प्रकृति, प्रेम और सौंदर्य के कवि हैं। छायावादी काव्यधारा में दो विशेषताएँ पाई जाती है एक शैलीगत दूसरी वर्ण्य, विषय या वस्तुगत। वे दोनों विशेषताएँ पंत के काव्य में पाई जाती हैं। प्रकृति के साथ कवि का ऐसा आत्मिक संबंध है कि ऐसा लगता है कि प्रकृति कवि की युग-युग की सहचरी, साथी और संगिनी है। कवि एक स्थान पर भौंरे की कन्या से कहता है—

सिखा दो, ना, ए मधुप कुमारि ? मुझ भी अपने जैसा गान।

यह कामना इतनी सजीव है कि क्या कहा जाय। प्रकृति जड़ है, परन्तु कवि ने उसमें प्राण डालकर उसे चेतना बना दिया है प्रकृति का यह रूप जो सर्वथा मूक है कवि उनमें भी इसी प्रकार बोलता है जैसे कि वह किसी चेतन में प्रलाप कर रहा हो—एक स्थान पर 'छाया' के प्रति उक्ति देखिए—

आओ सखि हम बाँह खोलकर गले जुड़ालें प्राण।
तुम तम में, मैं प्रियतम में ध्रुत हो जावें अन्तर्ध्यान।।

इसी प्रकार की भावना प्रत्येक प्राकृतिक चित्रण में मिलती है। इसी

प्रकृति मे रहस्य की भी कवि ने सुन्दर झाँकी प्रस्तुत की है। एक स्थान पर पत कहते हैं—

न जाने नक्षत्रो मे कौन ।
निमत्रण दपा मुझको मौन ॥

छायावादो काव्य की भावमयता, प्रकृति का मानवी करण, अभिनव छदयोजना, व्यक्तिगत सूक्ष्म अनुभूति, लाक्षणिक और प्रतीकात्मक अभिव्यक्ति, प्रकृति के साथ तादात्म्य आदि समी विशेषताएँ कवि पत मे मिलती हैं। कवि ने कही-कही परिभाषाएँ भो सुन्दर दी हैं। उनकी 'काव्य सम्बन्धो परिभाषा' अत्यत प्रसिद्ध है—

वियोगी होगा पहला कवि आह से उपजा होगा गान।
निकल कर नयनो से चुपचाप वही होगी कविता अनजान ॥

इस प्रकार कवि पत के काव्यगत सौंदर्य क अनेक उदाहरण प्रस्तुत किए जा सकते हैं। पत की एक विशेषता यह है कि वे युग अनुसार जीवन को मोड देते चले आए हैं।

कवि पत के काव्य जीवन का अध्ययन करने के लिए हमे उनके काव्य को कुछ वर्गो मे विभाजित करना होगा। जब हम इस दृष्टि से विचार करेंगे तो हम पत के समस्त काव्य को तीन वर्गों मे विभाजित कर सकते हैं—

(१) छायावादी सौंदर्यप्रधान युग
(२) प्रगतिशील काव्य युग।
(३) आध्यात्मिकताप्रधान युग ।

छायावादी सौंदर्यप्रधान युग मे कवि की कल्पना इस भौतिक ससार से उठकर भावुकता के प्राकृतिक लोक मे जा पहुँची। इस धारा के प्रतिनिधि काव्य हैं।

वीणा, ग्र थि, पल्लव, पल्लिविनी, गु जन, युगान्त।

'वीणा' कवि की प्रारम्भिक रचनाओ का सकलन हैं। इसमे कवि भोले शिशु की भांति प्रकृति के अद्भुत सौंदर्य से चकित है। 'ग्रथि' कवि का दुसरा

काव्य सग्रह है । एक प्रकार से यह विरह काव्य है । कहा जाता है इसका सम्बन्ध कवि के व्यक्तिगत जीवन से है । इनमे जीवन का करुणापूर्ण चित्र, अकित किया गया है ।

'पल्लव' काव्य कवि का प्रतिनिधि काव्य है। छायावाद का स्पष्ट रूप यहीं से आरम्भ होता है । 'पल्लव' में वास्तविक कवि का रूप का सामने आया है । परन्तु हम यहा एक बात कहना न भूलेंगे, वह यह कि कवि का साहचर्य जिस दिन से प्रकृति से छूटा है, उस दिन से प्रकृति की सूक्ष्म अनूभूति का अभाव दिखाई देता है । शब्दचित्रो में कवि की प्रौढता के दर्शन अवश्य होते जाते है । दूसरे सस्कृत के अप्रयुक्त और अप्रचलित शब्दो का योग भी इस कुशलता के साथ किया है कि ऐसा प्रतीत होता है कि मानो स्वय शब्द प्रकृति के चित्र खीच रहे हो । इसी प्रकार 'पल्लविनी' और 'गु जन' भी कवि के इसी प्राकृतिक सोदर्य के प्रति अभिरुचि का परिचय देते हैं ।

समय की परिवर्तनशीलता न कवि के विचारो को झकझोर दिया । सच्चा कवि सामयिक समस्याओ से मुख किस प्रकार मोड सकता है । उस समय देश में गाधी जी असहयोग आन्दोलन का प्रचार कर रहे थे । इस प्रकार एक ओर तो गांधी और दूसरी ओर साम्यवाद का प्रचार हो रहा था । कवि इस गाधीवाद और समाजवाद दोनो से प्रभावित हुआ । इन विचारो से प्रभावित होकर उसके मन में जो पुरातन के प्रति प्रतिक्रिया जागी थी वही गीत के रूप में व्यक्त हुई । कवि ने कहा—

गा कोकिल बरस पावक कण ।
त्रस्त ध्वस्त हो जीर्ण पुरातन ।

समभाव, से कवि ने पूंजीवाद के विरुद्ध आवाज बुलन्द की । 'युगवाणी' ग्राम्या उसकी प्रगतिशील विचारधारा के प्रतिनिधि काव्य है । इस विचारधारा के अनुसार पत में जो कुछ कहा, वह अत्यन्त स्वस्थ मानवीय दृष्टिकोण हैं । परन्तु हमें इस रूप में एक बात कहनी है—वह यह है कि पत के विचार भले ही प्रगतिशील रहे हो, परन्तु विचारो की अभि-

व्यक्ति उतनी सजीव कही है । इसकी कारण यह है कि धारा के अनुकूल शब्दावली पत के पास नही है—दूसरे पत की कोमल प्रकृति इस कठोर सत्य की अभिव्यक्त में साथ नहीं दे सकी । फिर भी यह तो मानना ही पडेगा कि पत ने अपनी प्रतिभा के बल पर सभी युगो कि मांगो को एक प्रकार से पूरा किया है।

किन्ही कारणो से कवि का स्वास्थ्य विगडा गया। स्वास्थ्य लाभ के लिए कवि पाडेचरी में अरविंद आश्रम में गया । वहाँ से कवि को भावना अतर्मु खी हो गई। आध्यात्मिक अनुरक्ति, मानवीय सिद्वात और विश्व सौदर्य की भावना आदर्शों को आड़ में गूंजी। स्वर्णधूलि स्वर्ण-किरण, उत्तरा, इसी युग की रचनाए है । इस प्रकार हम देखते हैं कि कवि पत की प्रवृत्ति सदैव विकासोन्मुख रही है। वे इस युग के कुशल कलाकार है ।

पत ने गद्य पद्य दोनो लिखे हैं। पद्य में जहा उन्होंने पल्लव, गूंजन और ग्रथि जैसे सुन्दर काव्य दिये हैं, वहा गद्य के क्षेत्र मे नाटक, कहानी और निवध भी लिखे हैं ।नाटको मे उन्होने 'ज्योत्स्ना' नामक भावात्मक पाच अको का नाटक लिखा है। रेडियो से सवधित होने के कारण इन दिवो आपने ध्वनि रूपक भी अच्छे लिखे हैं । 'पाच कहानिया' नाम से आपकी कहानिया का सग्रह है। निवध भी समय-समय पर अत्यन्त सुन्दर लिखे हैं ।

इस प्रकार हम कह सकते हैं कि कवि पत हिन्दी के सजीव, कल्पनाशील भावुक एव कुशल कलाकार हैं। उनमे कीट्स वर्ड्स्वर्थ और शैले कवियो की विचारधाराओ का त्रिवेणी-सगम है। वास्तव मे पत हिन्दी के श्रृगार हैं। के आजकल आप आकाशवाणी के हिन्दी विभाग के प्रतिनिधि सलाहकार हैं और अवाधगति से साहित्य सृजन मे व्यस्त हैं ।



महादेवी वर्मा

नारी के जीवन में व्याप्त करुणा को आज तक किसने आंका है ? उसके द्वारा सृष्टि का शृ गार भिन्न-भिन्न रूपो में किया गया है। यह बात मान्य है कि साहित्यिक क्षेत्र में महादेवी की देन सख्या की दृष्टि से अन्य क्षेत्रो की अपेक्षा कम है। हिन्दी के साहित्य क्षेत्र पर विहगम दृष्टि डालने से पता चलता है कि कवयित्री का साहित्यिक क्षेत्र में पदापण उसके समसामयिक परिस्थितियो से प्रभावित होकर ही होता है। महादेवी ने साहित्यिक क्षेत्र में उस समय पदार्पण किया जबकि छायावाद अपने पूर्ण यौवन पर था। महादेवी अपने आचल के दु खमयी वेदना के आंसू एकत्र कर मां भारती के मदिर में पहुँची। उन्होने अपने समस्त जीवन को दु खमय ही देखा। उन्होने अपने प्रियतम को पीडा में खोकर प्रियतम को खोजा।

महादेवी वर्मा का जन्म स० १९६४ में फरुखावाद के अत्यन्त सुशिक्षित एव समृद्धिशाली परिवार में हुआ। इनके पिता का नाम बाबू गोविंदप्रसाद वर्मा तथा माता का नाम हेमरानी है। ये बडे ही विद्वान तथा कलाप्रेमी थे। महादेवी को शिक्षा के साथ-साथ सगीत कला तथा चित्र-कला से भी प्रेम है। आपका विवाह ग्यारह वर्ष की अवस्था में डा० रूपनारायण वर्मा के साथ हुआ। विवाह के बाद ही आपने सस्कृत विषय में प्रथम श्रेणी में एम० ए० परीक्षा उत्तीर्ण की। आजकल आप प्रयाग महिला विद्यापीठ की आचार्या हैं।

महादेवी आज भी मा भारती के मदिर में उसी शाश्वत सत्य की साधना में लगी हुई वेदनापूर्ण गीतो की रचना कर रही हैं। आपके गीतो में रहस्यवाद की परिपक्व अवस्था के दर्शन होते हैं। आपके जीवन में निराशा के अतिरिक्त कुछ नही। इस निराशा का सम्बन्ध आपके अपने व्यक्तिगत जीवन से है। आपने बौद्ध-दर्शन का भी बडा अध्ययन किया है। आपको भौतिक सुखो से एक प्रकार का वैराग्य है। आप सदैव अलौकिक छवि की साधना मे लगी रहती हैं। आपको पूर्णतया विश्वास है कि आपका प्रियतम दु ख के

घोर अधकार मे आता है। आप चाहती हैं कि जीवन में सदैव रात ही रहे। उनकी धारणा है कि प्रकाश की किरण को देखकर उनका प्रियतम कही लौट न जाए। आप कहती है :—

मेरे प्रियतम को भाता है,
तम के पर्दे में आना।
ओ नभ की दीपावलियों,
तुम क्षण भर को छुप जाना।

आप सदैव प्रियतम की प्रतिक्षा मे प्राणो का दीप जलाये वैठी रहती हैं आपको प्रतीक्षा में ही आनन्द की प्राप्ति होती है। सयोग वांछनीय नही। कहती हैं—

काटू वियोग पल रोते,
सयोग समय छुप जाऊँ।

महादेवी में वही आध्यात्मिक प्रेम स्थान-स्थान पर प्रकट हुआ है। आप जीवनमुक्त न वन कर वार-वार जीवन चाहती हैं, जिसमें आप उस अमर ज्योति पर युग-युगातर तक शलभ की भाति झुलसती रहें।

महादेवी छायावाद एव रहस्यवाद की प्रधान कवयित्री हैं। कहावत है कि प्रसाद ने काव्य को प्रकृति प्रेम प्रदान किया। पत ने कोमलता दी, निराला ने मुक्त छन्द दिये तथा महादेवी ने करुणापूर्ण आंसुओं से धुले हुए कोमल प्राणो का सचार किया। वेदनाप्रधान होने के कारण महादेवी को 'आधुनिक मीरा' कहा जाता है। वही वेदना, वही आत्मसर्पण की भावना वही प्रियतमा वनने का भाव, वही विरहव्यथा, वही दर्शनोत्सुकता और 'असुवन जल सीच-सीच प्रेम वेलि वोई' की आर्द्र कल्पना दोनो स्त्री कलाकारों में समान रूप से विद्यमान हैं। हाँ, मीरा सगुणोपासिका थी और महादेवी वर्मा कहती हैं—

'क्या पूजा क्या अर्चन रे।
प असीम का सुन्दर मदिर मेरा लघुतम जीवन रे!

मीरा ने तो 'सतन ढिग बैठि-बैठि लोक लाज खोई' परन्तु महादेवी में बौद्धभिक्षुणी बनने की इच्छा भी है कि नहीं, यह अज्ञात है। कलापक्ष की दृष्टि से उनका स्थान मीरा से ऊचा है। मीरा जैसी विह्वलता का स्वर आज महादेवी के मुख से भी मुखरित हुआ है।

'तुमको पीडा में ढूढा, तुममें ढूंढूगी पीडा'

महादेवी के जीवन की विशेषता यह है कि आपकी प्रवृति बहिर्मुखी न होकर अन्तर्मुखी है। आपका सारा काव्य इसी प्रियतम की आराधना मे रचा गया है। महादेवी के काव्य सग्रह उनके जीवन मे कण-कण मे व्याप्त निराशा का करुणापूर्ण सगीत लिए हुए हैं। नीरजा मे आपकी भावनाएँ अत्यन्त प्रौढ़ हैं। 'नीहार', 'रश्मि', 'साघ्यगीत', यामा', तथा 'दीपशिखा' आपकी मुख्य कृतियाँ हैं। 'अतीत के चलचित्र, स्मृति की रेखाएँ' तथा शृखला की कडियाँ, आपकी गद्य रचनाएँ प्रकाशित हो चुकी हैं।

महादेवी के काव्य मे भाव तथा कला का बडा ही सुन्दर समन्वय है। आपका अपना जीवन एक तपस्विनी जैसा है। आपने अपने काव्य का भावयुक्त करने के लिए प्रकृति को माध्यम बनाया है। आपके काव्य मे सगीतज्ञ होने के कारण गान का अश अन्य कवियो की अपेक्षा अधिक है। दर्शन-शास्त्र के गभीर अध्ययन के कारण काव्य पर दार्शनिक प्रभाव पर्याप्त मात्रा मे हैं।



सूर्यकांतत्रिपाठी 'निराला'

छायावादी काव्य-धारा के कवियो मे 'निराला' जी का स्थान प्रमुख है। हिन्दी साहित्य मे प्रसाद जी ने जिन नवीनताओ को जन्म दिया था, उनकी शृ खलाओं को आगे चलाने मे निराला जी का नाम सर्वप्रमुख है। प्रसाद जी की भांति दार्शनिकता और आध्यात्मिकता इनके काव्य की दो प्रमुख विशेषताएँ हैं। भाषा और छन्द के विषय मे निराला जी को युगान्तर कवि माना

जाता है। इस स्वतन्त्रता के युग मे कविता को छन्दो का बन्धन रहे, यह निराला जी को स्वीकार न हुआ और इस लिए आपने एक नया छन्द प्रचलित किया जिसे मुक्तक छन्द कहा गया। इस छन्द की सबसे बडी विशेषता सगीतात्मकता है। प्रारम्भ मे निराला जी की बडी आलोचना हुई और उसे 'रबड छन्द' का नाम दिया गया, परन्तु आगे आने वाले कवियो ने अधिकतर उसी छन्द को स्वीकृत किया और अपने काव्य की रचना की।

हिन्दी के इस महाकवि का जन्म सम्वत् १६५५ वि० मे जिला मेदिनीपुर के एक गाव मे हुआ था। सस्कृत तथा बगला के आप अच्छे ज्ञाता थे। सगीत की ओर आपकी विशेष रुचि रही। दार्शनिक विचारो पर परमहस रामकृष्णदेव और स्वामी विवेकानन्द के विचारो का गहरा प्रभाव पडा है। गहन दार्शनिकता के कारण निराला जी की कविताओ को साधारण पाठक कुछ जटिल समझता है परन्तु इसी दार्शनिकता ने उन्हे निराला बना दिया है।

निराला जी के शब्द-चित्र बहुत सुन्दर हैं। जहाँ भी पात्रो या स्थितियो का चित्रण करने लगते हैं वह पाठक के सामने सजीव रूप मे आ जाता है। आपने कविता और गद्य दोनो ही क्षेत्रो मे सफल रचना की है। काव्य मे आपका प्रकृति वर्णन अत्यन्त सुन्दर बन पडा है। इसके साथ ही उनकी रचनाओ मे बुद्धि और हृदय का भी बहुत भावपूर्ण सामजस्य हुआ है। निराला जी मे प्राचीन भारतीय सस्कृति के प्रति अगाध श्रद्धा है परन्तु वर्तमान समय के समाज मे जो विषमताएँ फैली हैं उनके प्रति भी कवि के अन्तर मे एक क्रान्ति है। समाज मे फैले वर्ग-सघर्ष को कवि मिटाना चाहता है।

कवि निराला पर वेदान्त का गहरा प्रभाव है। उनकी कविता मे जहाँ सगीत का समन्वय है वहा दार्शनिक विचार भी बडे गहरे हैं। साथ ही उनमे दलित, पीडित समाज के अतर्तम मे व्याप्त करुण भावना भी है। इसलिए निराला जहाँ छायावादियो मे भी प्रमुख हैं वहाँ प्रगतिवाद में भी उनका एक स्थान है। प्रस्तुत पक्तिया निराला के प्रगतिवाद का सुन्दर उदाहरण है—

दो टूक कलेजे के करता
पछताता, पथ पर आता,

पेट, पीठ दोनों मिलकर हैं एक,
चल रहा लकुटिया टेक,
मुटठी भर दाने को,
मु ह फटी झोली को फैलाता,
पथ पर आता।

इन पक्तियो मे समाज की उस व्यवस्था पर कुठाराघात किया गया है जिसके कारण कुछ व्यक्ति पूंजीपति बनकर समाज के सभी सुख वैभव अपने अधिकार मे किए बैठे है और कुछ दो-दो दानो के लिए भिखारी बने पथ पर हाथ फैलाए घूमते हैं, भूख के कारण जिनके पेट और पीठ एक हो गए हैं। कवि निराला ऐसी समाज-व्यवस्था नही चाहते थे।

अपने उपन्यासो मे भी समाज की अनेक रूढियो के प्रति विद्रोही दिखाई देते हैं। 'निरूपमा' का नायक कुमार, विद्वान ब्राह्मण होकर भी चमार का काम करता है। वह साहसी युवक है। उसे अपनी विद्वत्ता पर झूठा गर्व नही, उसे काम चाहिए, भले ही जूतो पर पालिश करने का ही क्यो न हो।

कवि निराला का दृढ व्यक्तित्व उनकी रचनाओ मे साकार हो उठा है। उनकी रचनाएँ ऐसी हैं जिनका साहित्यिक मूल्य बहुत बढ़ा-चढा है। जहां उन्होंने प्रगतिवादी काव्य-धारा मे शोषित, पीडित और दलित का चित्रण किया, वहाँ वे साथ ही भारतीय प्राचीन सस्कृति के भी अमर गायक थे। इस दृष्टि से उनकी शिवाजी का पत्र' नामक रचना अधिक प्रसिद्ध है। इसके अतिरिक्त निराला की 'राम की शक्ति पूजा' नामक रचना अत्यन्त सफल रचना है।

निराला ने दर्शन का गम्भीर अध्ययन किया था। इस क्षेत्र में रामकृष्ण परमहस और विवेकानन्द का उन पर अधिक प्रभाव था। एक ही कारण है कि रहस्यवाद के क्षेत्र मे भी निराला अपना पृथक स्थान सुरक्षित किये हुए थे। उनकी 'तुम और मैं' रचना रहस्यवाद का सर्वोत्कृष्ट उदाहरण है। जीवात्मा और परमात्मा के आनन्द और कारण-कार्य सम्बन्धों की

अभिव्यक्ति जितनी सुन्दरता से इस रचना मे हुई है वह अन्यत्र कठिन है । एक पंक्ति देखिए —

तुम मृदु मानस के भाव
और मैं मनोरंजिनी भाषा ।
तुम प्राण और मैं काया ।
तुम शुद्ध सच्चिदानन्द ब्रह्म,
और मैं मनोमोहिनी माया ।

इसी प्रकार की और भी अन्य रचनाएँ है जिनसे कवि की प्रतिभा और दार्शनिकता का परिचय मिलता है । निराला की विशेषता यह है कि उन्होंने ऐसी समर्थ रचनाओ के साथ-साथ कारुणिक रचनाएँ भी लिखी हैं। अपनी पुत्री के निधन पर आपने 'सरोज-स्मृति' लिखी । इसमे कवि ने जिस आर्थिक परिस्थिति का चित्र खीचा है, वह अत्यन्त मार्मिक है ।

पद्य के क्षेत्र मे निराला ने भाव और शैली की दृष्टि से बडी सारपूर्ण रचनाएँ की हैं । अनामिका, परिमल, गीतिका उनके मीठे रहस्यपूर्ण और भावमय गीतो के सग्रह हैं । कुकुरमुत्ता व्यगपूर्ण रचना है ।

हिन्दी मे बहुत कम ऐसे कवि हैं जिनकी लेखनी प्रत्येक क्षेत्र मे अपना व्यक्तित्व जमाए बैठी हो । निराला ने गद्य के क्षेत्र मे उपन्यास कहानी और निबन्ध भी सुन्दर लिखे हैं । उपन्यासो मे अलका, अप्सरा, निरुपमा, प्रभावती अच्छे उपन्यास हैं । 'चतुरी चमार' आपकी कहानियो का सग्रह हैं । निबन्ध भी निराला ने बडे ही प्रभावपूर्ण लिखे हैं । इस प्रकार हम देखते हैं कि निराला ने हिन्दी साहित्य के मन्दिर मे जो रचना के फूल चढाए हैं उनकी सुगन्धि युग-युग तक रुचि सम्पन्न और भावुक हृदयो को सुरभित करती रहेगी ।

निराला प्रयाग मे निवास करते थे । उनका स्वास्थ्य बिगड गया था । आर्थिक परिस्थितियो ने कवि के जीवन को झकझोर डाला । वह विक्षिप्त हो गये थे । परन्तु उनकी विक्षिप्तता मे भी एक सौंदर्य था । उनका उन्नत

ललाट, प्रभावशाली व्यक्तित्व को चुनौती देता था। उनकी आँखो की गहराई मे अनुभव का समुद्र लहरा रहा था। निराला वह अटल चट्टान थे जिससे, अनेक परिस्थितियो की आँधियाँ और तूफान टकराए और टकराकर चकना चूर हो गए। धन्य है वह भाषा जिसमे ऐसे कवि हो, धन्य है वह भूमि जहाँ ऐसा महामानव जन्म ले।

१५ अक्टूबर १९६१ का दारुण दिवस। हाय ! वह महाज्योति, जिसका महाप्रकाश दिग्दिगन्त को व्याप्त कर रहा था वह दिवगत हो गई। निर्धन हिन्दी का दधीचि, कवि चतुष्टयी का द्वितीय वज्रस्तम्भ, पुण्य तपस्वी वह काव्यर्षि सदा सदा के लिए कविता को विधवा कर गया। सारा भारत शोक-सागर मे डूब गया। ९ बजकर २३ मिनट पर समय की काली छाया ने जैसे काव्य दूत को बन्दी बना लिया महाप्राण का महाप्रयाण हो गया और गुरु गर्जन आज भी गूँज रहा है—

दुख ही जीवन की कथा रही,
क्या कहूँ आज जो नहीं कही (नीचे की ओर) 'निराला'

इस महापुरुष की स्मृति मे एक नवयुवक की भावपूर्ण श्रद्धान्जली कितनी मार्मिक है।

कवि तुम एक तुम्हीं,
बार बार झेलते सहस्रो बार—
निर्मम ससार के।
दूसरो के अर्थ ही लेते दान
महाप्राण, जीवों में देते हो
जीवन ही जोड
मोड निज सुख से मुख
विजया तुम्हारे दिशा मुक्ति से प्रेरण
मौन में सुघरतर फूटे अमर गान

हिन्दी के महान् उपन्यासकार प्रेमचन्द

जिस समय हिन्दी का उपन्यास-साहित्य 'चन्द्रकान्ता' और 'भूतनाथ' जैसे तिलस्मी और ऐयारी की भूलभुलैया मे भटक रहा था, जिस समय हिन्दी का पाठक जासूसी उपन्यासो से ही अपने मन की सतुष्टि कर रहा था, उस समय मु शी प्रेमचन्द हिन्दी पाठको के सामने एक नया ही दृष्टिकोण लेकर उपस्थित हुए। उन्होंने बताया कि साहित्य का उद्देश्य केवल मनोरंजन नही है, अपितु जीवन की समालोचना का नाम साहित्य है। उन्होने भूत की चिंता नही की और न भविष्य की परवाह की, केवल वर्तमान को ही उन्होने अपने साहित्य का विषय बनाया।

प्रेमचन्द ने आस-पास के समाज को खुली आंखो से देखा था। वे अपने को सदा एक मजदूर ही समझने रहे। मृत्यु से कुछ दिन पूर्व भी वे अपने कमजोर शरीर को मजदूरी करने के लिए विवश करते रहे, लिखते रहे। अपने समय के समाज का विषमताओ के प्रति सच्चे विद्रोही थे। उन्होने समाज के उन प्राणियो को देखा था, जो फटे चिथडो मे, दाने-दाने को तरसते नाटकीय जीवन बिताते थे। यही कारण है कि वे अपने साहित्य को 'चन्द्रकाता' और 'भूतनाथ' न बना सके। ढोग उनकी आत्मा को स्वीकार न था, उन्होने मानवता मे ही ईश्वर के दर्शन किए थे, इसलिए मनुष्य को वे सबसे बडी वस्तु समझते थे। इसलिए प्रेमचन्द-साहित्य मे मानवता की सच्ची पुकार है, उसमे मानवता को पीस डालने वाले ज्ञान का कोरा भार नही, हृदय की सच्ची वेदना है, तडपन है, उसमे केवल मनोरजन की भूलभुलैया मात्र नही, अपने समय के समाज का सच्चा प्रतिबिम्ब है।

प्रेमचन्द ने जिस परिवार मे जन्म लिया था, वह निर्धन परिवार था। शिक्षाकाल मे उनकी यह निर्धनता अभिशाप बनी उनके सामने खडी थी। कभी-कभी तो अपनी पाठय पुस्तकें बेचकर भी वे पेट की आग नहीं बुझा पाते थे। उन्होंने दरिद्रता मे जन्म पाया दरिद्रता मे पले और दरिद्रता

मे ही समाप्त भी हो गये, फिर भी वे भारत के सर्वश्रेष्ठ साहित्यकार थे। उनके साहित्य में भी यह दरिद्रता अपना महत्वपूर्ण स्थान रखती है। उनकी प्रत्येक समस्या के मूल मे आर्थिक विषमताओ का ही हाथ है। उनकी प्रत्येक घटना विषमता को लेकर आगे बढती है। सेवा-सदन, गबन, कर्म भूमि, निर्मला, और गोदान इन सब में मूल रूप मे वही आर्थिक एवं नैतिक समस्या है। निर्मला' मे दहेज-प्रथा ने ही अनमोल-विवाह की स्थिति पैदा की, धनाभाव के कारण ही मुन्शी तोताराम के परिवार में सघर्ष चलते हैं, 'गबन' के नायक रमानाथ और गोदान के होरी को अपने जीवन में इसी आर्थिक समस्या से जूझना पडता है। इस प्रकार प्रेमचन्द ने जिस अभिशाप को स्वय अपने जीवन मे देखा और भोगा था, उसी को उन्होंने अपने साहित्य मे प्रमुख स्थान दिया।

प्रेमचन्द ने न अतीत के गुण गाए और न भविष्य की मोहक कल्पनाओं का अपने पाठको के सामने भ्रमजाल फैलाया। उन्होंने देखा कि भारतीय समाज की दुरवस्था के कारण बाह्य-बधन नही, समाज की भीतरी विषमताओं के बधन ही हैं। अत उन्होने समाज की ऐसी ही विषमताओ पर कठोर कुठाराघात किया है। अपने सभी उपन्यासो और कहानियो में प्रेमचन्द वर्तमान से दूर नहीं गए। अपने समय के सच्चे और ईमानदार कलाकार बने रहे। साहित्य यदि अपने समय के समाज का प्रतिबिम्ब हैं, तो प्रेमचन्द का साहित्य इस परिभाषा से दूर नही। अपने समय का प्रभाव उन पर पूरी तरह था, आर्यसमाज के सामाजिक और सांस्कृतिक आन्दोलन तथा गाधी जी के हरिजनोद्धार और राजनीतिक आन्दोलनो को उन्होने अपने उपन्यासो मे स्थान दिया। कर्मभूमि, और रगभूमि, मे तो स्पष्ट ही इन राजनीतिक आन्दोलनों के चित्र हैं। रगभूमि का सूरदास गाँधीवादी विचारधारा का ही प्रतिनिधि है।

प्रेमचन्द पावन प्रेम के उपासक थे। उनके मत मे पवित्र प्रेम मानसिक गन्दगी को दूर करता है और मानव-जीवन में नई ज्योति प्रदान करता है। यह प्रेम ही मनुष्य को सेवा और त्याग की ओर बढ़ाता है जहां सेवा और

त्याग नही प्रेम भी नही। प्रेमचन्द के पात्रो के लिए प्रेम का अर्थ त्याग और सेवा है, जहा यह नही, वहाँ प्रेम की प्रधानता नही वासना का प्रावल्य है।

प्रेमचन्द ने बहुत विस्तृत क्षेत्र का चित्रण किया है। उनके पात्रो मे निम्न और मध्यम श्रेणी के ही पात्रो की प्रधानता है, इन्ही के चित्रण मे उन्हे सफलता भी मिली है। यथार्थ और आदर्श के समन्वय से इस चरित्र-चित्रण मे एक स्वाभाविकता है। उनका मत है कि यथार्थवाद यदि हमारी आखें खोल देता है तो आदर्शवाद हमे उठाकर मनोरम स्थान में पहुँचा देता है। जहा आदर्शवाद मे गुण हैं, वहा इस बात की शका है कि हम ऐसे चरित्रो को न चित्रित कर बैठे, जो सिद्धान्तो की मूर्तिमात्र हैं। किसी देवता की कामना करना मुश्किल नही है, लेकिन उस देवता में प्राणप्रतिष्ठा करना मुश्किल है।

इसी परिभाषा के अनुसार प्रेमचन्द ने अपने पात्रो के चरित्र न कोरे यथार्थवादी बनने दिए और न ही सिद्धान्तो की मूर्तिया। वहा तो यथार्थ और आदर्श के समन्वय से सच्ची प्राणप्रतिष्ठा की गई है। अपने सद्व्यवहार और सद्विचारो से उनके पात्र पाठको को मोहित कर लेते हैं। मानवीय दुर्बलताऐं उनके पात्रो मे भी मिलती हैं, परन्तु ऐसी दुर्बलताएं ही तो मानव को मानव बनाती हैं, अन्यथा निर्दोष चरित्र तो देवताओ में ही मिल सकता है। इसीलिए तो उनके पात्र सच्चे अ गो मे मानव हैं।

प्रेमचन्द का साहित्य उस ग्रामीण जनता का साहित्य है, जिसका जीवन अध-विश्वास और अज्ञानता में बुरी तरह पिस रहा है। उन्होंने इस जीवन को बहुत निकट से देखा था, गाँवो के किसानो को उनसे अधिक कोई नही जानता, उन्होने स्वय देखा था—ऐसा एक आदमी भी नही जिसकी रोनी सूरत नही मानो उनके प्राणो की जगह वेदना ही बैठी कठपुतली की तरह नचा रही हो। जीवन में न कोई आशा है न कोई उमग। इस जीवन का चित्र प्रमचन्द के साहित्य मे मिलेगा। इसी चित्र को उन्होने बिना किसी 'वाद' की ओर देखे, अपने उपन्यासो मे चित्रित किया है। यही कारण हैं कि प्रेमचन्द अपने पात्रो को एक ऐसा सजीव रूप देते हैं कि पाठक की सहानुभूति उन्हें सहज में ही प्राप्त हो जाती है।

कहा जाता है कि प्रेमचन्द को पुरुष पात्रो के चरित्र-चित्रण मे जितनी सफलता मिली है, उतनी नारी-पात्रो के चरित्रो मे नही। परन्तु ऐसी धारणा सत्य प्रतीत नही होती। 'कर्मभूमि' के नारी-पात्रो मे सकीना, सुखदा, नीना, 'गोदान' मे झुनिया, मालती तथा निर्मला में 'निर्मला' का चरित्र इन उपन्यासों के पुरुष पात्रो से कुछ कम नही है। प्रेमचन्द के पात्र, समाज में हर वर्ग के पात्रो का चरित्र अपने-अपने अनुरूप समान स्थान पाता गया है।

भाषा की दृष्टि से प्रेमचन्द एक महान कलाकार थे। इस दृष्टि से तुलसी और भारतेन्दु के बाद प्रेमचन्द ही ऐसे लेखक हुए, जिन्होने इतनी सरल हिन्दी लिखी। इनसे पूर्व हिन्दी लेखक बगला का पूरा अनुकरण करते थे, वह एक उधार भाषा थी। परन्तु प्रेमचन्द ने इस उधार को स्वीकार नही किया। उन्होने हर प्रकार से हिन्दी को हिन्दी के ही रूप में स्वीकार किया। उर्दू और हिन्दी के कृत्रिम भेद-भाव को दूर करके उर्दू के सरल शब्दो और मुहावरो का प्रयोग किया। इससे उनकी हिन्दी में एक नई शक्ति, एक नया ओज आ गया।

इस प्रकार मुशी प्रेमचन्द अपने कथा-साहित्य में एक सफल कलाकार और जनता से सच्चे प्रतिनिधि के रूप में हिन्दी के महान् लेखक थे।

श्री प्रेमचन्द का जन्म सवत् १९३७ में काशी के पास ही लमही नामक ग्राम में हुआ, और मृत्यु सवत् १९९३ में हुई। आज प्रेमचन्द हमारे बीच नही हैं परन्तु उनका साहित्यिक शरीर सदा अमर है।

विवरणात्मक-निबन्ध

(इस विभाग में राजनीति तथा समाज के क्षेत्र में महान् कार्य करने वाले व्यक्तित्वो के व्यक्तित्व तथा विचारो के अतिरिक्त आधुनिक सामाजिक समस्याओ पर भी प्रकाश डाला गया है)

श्री कृष्ण

महापुरुषो के जीवन का इतिहास पढने से यह ज्ञात हुआ है कि जब कभी मानव अज्ञान और उससे उत्पन्न होने वाले अवगुणो से अधकार में भटक जाता है तो एक प्रकाश ज्योति अवश्य प्रकट होती है जो उसे जीवन के सत्य और सुन्दर माग पर चलने की प्रेरणा देती हैं। सर्वतत्र स्वतत्र श्री कृष्ण एक ऐसी ही ज्योति के रूप में प्रकट हुए।

जिस समय कृष्ण का जन्म हुआ उस समय भारतवर्ष की राजनीतिक, सामाजिक, धार्मिक दशा बडी शोचनीय थी। कस जैसा अत्याचारी राजा राज्य कर रहा था, जिसने राज्य लोभ से अपने पिता को कारावास में डाल दिया। अपने विनास के भय से अपनी बहिन और बहनोई को भी कारागार की कठोर जजीरों में जकड दिया था। कंस ही नही और भी बडे राजा छोटे राजाओ पर अत्याचार कर रहे थे। समाज में धर्म और न्याय की कोई मर्यादा नही रह गई थी। सब अपने कर्तव्यो को भूलकर स्वार्थी हो रहे थे। जन साधारण में शोक के भय ने घर कर लिया था। तात्पर्य यह है कि चारो ओर जीवन के आकाश पर दुख की काली घटाएं छाई हुई थी। ऐसी अंधियारी रात कि जिसमें मनुष्य को मनुष्य नहीं दीखता था। अधर्म और धर्म का नाम भी किसी को नहीं सूझ रहा था। ऐसी अवस्था में आज से लगभग पाँच हजार वर्ष पूर्व भाद्रपद कृष्ण अष्टमी की रात्रि को १२ बजे कस अधेरे कारागार मे एक अलौकिक ज्योति प्रकटी। यही ज्योति इतिहास में श्री कृष्ण के नाम से प्रसिद्ध है।

कृष्ण की माता का नाम देवकी और पिता का नाम वासुदेव था। पुराणो के अनुसार कस ने देवकी की सात सतानो की हत्या कर डाली थी। कहा जाता है कि जब कंस देवकी को रथ मे बिठाकर ले जा रहा था तभी आकाश वाणी हुई "मूर्ख ! जिसे तू इतनी प्रसन्नता से लिए जा रहा है इसी के गर्भ से उत्पन्न आठवीं सतान तेरा विनाश करेगी" कस ने यह वाणी सुनते ही अपनी बहिन और बहनोई को कारागार में डाल दिया। कृष्ण से पूर्व

उत्पन्न सात सतानों को उसने अत्यन्त निर्दयता पूर्वक मार डाला। कृष्ण का जन्म होते ही देवकी के हृदय मे करुणा जागी। उन्होने वासुदेव से प्रार्थना की कि किसी प्रकार इस बालक की रक्षा करो। वासुदेव उसे लेकर गोकुल पहुँचे। वहाँ नद के घर यशोदा से एक पुत्री ने जन्म लिया। वासुदेव ने कृष्ण को देकर वह कन्या ले ली। प्रात काल होते ही कन्या कस के हाथो स्वर्ग सिधार गई।

गोकुल के ग्वाल बालो के बीच कृष्ण का लालन-पालन हुआ। कृष्ण प्रारम्भ से ही अत्यन्त सुन्दर, गुणी, चतुर, कलाकार और दयालु स्वभाव के थे। सारा व्रज कृष्ण के चरित्र से सुशोभित हो रहा था। बाल्यावस्था से ही उनमे भावी महापुरुष के गुण दिखाई देने लगे थे। उनके मनमोहक गुणो ने उन्हें मनमोहन नाम दे दिया था। उनका बाल्य जीवन कालिन्दी के किनारे पर कलत्व करते, वसी की तान अलापते, गाय चराते, मक्खन खाते और गोप गोपियो के साथ बिहार करते बीता। कृष्ण का व्यक्तित्व ज्यों-ज्यो विकसित होता गया वैसे-वैसे कस का नृशंस सिंहासन हिलने लगा। कस ने इस सुदृढ़ और अमर जीवन को मृत्यु देने के अनेक प्रयत्न किए परन्तु वह सफल न हो सका।

समय बीतता गया। एक बार कस ने चाहा और युद्ध करने के लिए कृष्ण को निमन्त्रित किया। कृष्ण कस की चाल को अच्छी तरह समझते थे। उन्होने मथुरा की यात्रा की। कृष्ण को मथुरा जाते देख सारा गोकुल विरह के सागर मे डूबने लगा। परन्तु कृष्ण के सामने भावना की अपेक्षा कर्तव्य का मार्ग श्रेष्ठ था। वे सभी को सामान रूप से सात्वना देकर मथुरा गये और वहाँ कस को मारकर उग्रसेन को राज्य का अधिकार सौंप दिया। उन्हीं दिनों कस का श्वसुर जरासघ भी शक्तिशाली राजा था। कृष्ण ने पाण्डवो की सहायता से उसका विनाश किया। इस प्रकार उन्होंने भारत भूमि को विनाशक और आसुरी भावनाओ से मुक्त कराने का बीडा उठाया।

कृष्ण का नाम लेकर मध्ययुग मे जो शृंगार साहित्य लिखा गया

उसने उनके वास्तविक व्यक्तित्व को ढक दिया है। यदि हम ध्यानपूर्वक देखें तो कृष्ण एक कुशल राजनीतिज्ञ, धार्मिक, देशभक्त, न्यायप्रिय और महायोगी-राज थे। वे समस्त भारत मे एक शासन की स्थापना चाहते थे। युधिष्ठिर के द्वारा राजसूय यज्ञ की योजना इसी का प्रमाण है। इसी यज्ञ मे दुरभिमानी राजा शिशुपाल का विनाश किया गया। इस प्रकार एक शासन सूत्र मे समस्त भारत को पिरोकर उसे शक्तिशाली राष्ट्र घोषित किया।

महाभारत के युद्ध मे कृष्ण ने अपनी राजनीतिज्ञता का कुशलता पूर्वक परिचय दिया। कौरवो के अन्याय पूर्ण व्यवहार के विपरीत उन्होने पाडवो का साथ दिया। यद्यपि सख्या और शक्ति मे पाँडवो से कहीं अधिक शक्तिशाली कौरव थे, परन्तु कृष्ण ने चतुराई से पाँडवो के गले मे विजय माला डलवाई। कृष्ण ने राजदूत के रूप मे किस सत्य और न्याय का परिचय दिया वह ससार की राजनीति शास्त्र से लिए आदर्श है। दुर्योधन जैसे कपटी राजा के सामने पाँडवो के जिस बल का वर्णन कृष्ण ने किया, उसका प्रभाव यह हुआ कि कृष्ण की हत्या के षडयत्र रचे जाने लगे। परन्तु कृष्ण का अनुपम तेज और दिव्य व्यक्तित्व विजयी हुआ।

कृष्ण निर्भीक और न्याय प्रेमी थे। दुर्योधन द्वारा युद्ध में सहायता मागे जाने पर उन्होने उसे मु ह मागी वस्तु दी। समस्त महाभारत मे सबसे अधिक उज्ज्वल और चमत्कारी व्यक्तित्व यदि किसी का है तो वह है श्री कृष्ण का। वे महान् योद्धा, कुशल शासक और दृढ़ राजनीतिज्ञ थे।

समस्त ससार को कर्म के क्षेत्र मे पवित्र साहस, कर्तव्य परायणता, धर्म प्रियता का उपदेश देने वाले श्री कृष्ण ने 'गीता' को जन्म देकर जैसे युग-युग की मानवता को जीवन दिया है। विश्व के साहित्य मे एक महान साहित्यकार का यह ग्रथ आज जीवन का वह आदर्श प्रस्तुत कर रहा है कि लोग इस देश को सिर नवाकर प्रणाम करते हैं। गीता जीवन की वह व्याख्या करती जिसमे जीवन के किसी भी प्रश्न का उत्तर है और प्रत्येक समस्या का समाधान है। आत्म विश्वास का मृत्यु जय मत्र देने वाली गीता मनुष्य के जीवन की

ज्योति है। कृष्ण ने जिस अथक परिश्रम से भारतवर्ष में दृढ शासन की नीव डाली उसका प्रभाव हजारो वर्ष तक रहा। सारा भारत शुद्ध और सच्चरित्र पवित्र आत्माओ के सौंदर्य से भर गया। महाभारत का शून्य सुख और शान्ति की हरितिमा से लहलहा गया।

अत मे धार्मिक महानुभावो के हाथ इस भारत को सौंप यह नि स्वार्थ देश-भक्त, महामानव द्वारिकापुरी की ओर बढ चला। कृष्ण ने अपने जीवन का अतिम समय दान और धर्मोपदेश में व्यतीत किया। उन्होने तपस्वी जीवन बिताया। तप करने के लिए वन चले गए। वही व्याध के बाण से आपकी मृत्यु हुई। उन्होने व्याध को क्षमा कर दिया। इस प्रकार हम कृष्ण को नारी की लज्जा के रक्षक, दुर्बलो के रक्षक, सत्यवादी, राजनीतिज्ञ, नेता, परोपकारी, देशभक्त, योगी, धार्मिक, ज्ञानी और सर्वांगपूर्ण महामानव के रूप मे स्मरण करते हैं। धन्य हैं ऐसे महापुरुष जिन्होने मानवता की रक्षा की।

महात्मा बुद्ध

जब ससार मे घोर अधकार फैल जाता है, तब उसके विनाश के लिए दिव्य ज्योति का अविर्भाव होता हैं। ईसा से लगभग ६०० वर्ष पूर्व दशा थी कि किसी मनुष्य को धर्म-अधर्म का बिल्कुल ज्ञान नही था। सभी अधविश्वास तथा रुढियो के दास बने हुए थे। स्वार्थी लोगो ने अपना उल्लू सीधा करने के लिए एक धर्म पर अनेक सम्प्रदाय बना रखे थे, जो धर्म को घसीटते हुए रसातल (पाताल) की ओर लिए जा रहे थे। पवित्र ज्ञान की जगह कर्मकाण्ड ने ले रखी थी। लोक कल्याण के लिए ऋषियो ने वेदो मे यज्ञो का विधान किया था और जो यज्ञ मुक्ति के द्वार समझे जाते थे, उनमे नरबलि तथा पशुबलि होती थी। हिंसा लोगो को अधा बना कर कुमार्ग पर धक्के दे रही

थी। जब पाप की सीमा हो चुकी थी ठीक उसी समय बुद्ध भगवान् इस मृत्यु-लोक मे अन्धो की नेत्र-ज्योति बन कर उतरे।

कपिलवस्तु मे मायादेवी के गर्भ से राजा शुद्धोधन के घर भगवान बुद्ध का जन्म हुआ। उनका पहला नाम सिद्धार्थ था।

बचपन में ही आपको मातृ-वियोग हुआ, आपके पालन-पोषण का भार विमाता प्रजावती ने सम्भाला। शुरू से ही आप दयालु, शान्त तथा गम्भीर प्रकृति के थे। सबके साथ आपका व्यवहार बडा ही प्रेममय था। पिता ने अपने पुत्र के लिए किसी वस्तु की कसर नही देखने दी थी। राजा चिंतित था कि उसका पुत्र युवको की रगरेलियो से उदासीन रहकर दु ख दर्द और मृत्यु पर विचार करता रहता है। राजा ने उसकी चित्तवृत्ति को फेरने के लिए शहर को सजाने की आज्ञा दी, ताकि राजकुमार सैर करके अपना दिल बहलावे।

परन्तु राजकुमार को सारी चीजो से प्रेम था। उसने कहला भेजा कि मैं लोगो का असली स्वरूप देखना चाहता हूँ। इसलिए नगर को न सजाया जाये। रथ मे घोडे जोते गए। राजकुमार दरबारियो के साथ शहर मे निकला। वह अपने विचारो मे मग्न था दैवयोग से उसने वृद्ध, रोगी तथा मृतक शरीर को देखा। सारथी से यह जानकर कि प्रत्येक पुरुष की, चाहे वह राजा हो अथवा रक, यही दशा होगी, कुमार को अति दु ख हुआ और उसे इस ससार से घृणा हो गई।

राजा ने उसे साँसारिक बन्धनो मे बाँधने के लिए यशोधरा नाम की परम सुन्दरी, गुणवती कन्या से उसका विवाह कर दिया। राजकुमार फिर भी उदास रहता। तब उसे एक ऐसे स्थान पर पहुँचाया गया, जिसे उसने कभी न देखा था। दोनो ओर सुन्दर फलो से लदे वृक्ष थे। कोयलें आम पर बैठी हुई कू कू की मीठी तथा मधु-तान अलाप रही थी। चश्में और फुव्वारे अपनी छटा दिखला रहे थे, फूलो की सुगन्ध उड रही थी, पोडशी बालायें रूप तथा यौवन में मदमाती, गले में बहियाँ डाले नाचती-कूदती स्वर्ग की परियो को भी लज्जित

कर रही थी। हर तरह विलास का सामान कामदेव के राज्य की याद दिला रहा था। परन्तु कुमार ने सुन्दरता की ओर निहारा भी नहीं।

वह सोच रहा था कि ससार के दुःख से कैसे मुक्ति प्राप्त की जा सकती है। वह ध्यान मे विमग्न हो गये। उन्होने प्रण कर लिया कि मैं मनुष्य मात्र को सासारिक दुःखो से मुक्त करवा कर रहूँगा। परन्तु राजा ने राजकुमार सिद्धार्थ पर बडा कडा पहरा लगा दिया। राजकुमार को अपने पिता का प्रेम निश्चय से न बदल सका। वह एकात मे बैठकर ससार को दुःख से मुक्त करने का उपाय सोचते। सारी दुनिया को बुढ़ापे, बीमारी तथा मृत्यु से छुटकारा दिलाने के लिए किसी उपाय की खोज करने के लिए सिद्धार्थ ने गृह त्याग का निश्चय किया और त्याग, तपस्या से आत्मा को शुद्ध करने का सकल्प किया।

एक दिन रात के समय वे छन्नक सारथी को ले, कन्थक घोड पर बैठ कर निकल पडे। दूर जगल मे जाकर केशो को तलवार से काटकर वस्त्र-भूषण को देकर वापिस लौटा दिया।

सिद्धार्थ ने ब्रह्मचारियो के साथ कठिन तप किया, पर सफलता न मिली। आखिरकार वे एक दिन गया नामक स्थान पर वट के वृक्ष के नीचे समाधि लगा कर बैठे। वहाँ अचानक इन्हे दिव्य ज्ञान प्राप्त हुआ उन्होने जान लिया कि कामनायें ही हमारे दुःख का मुख्य कारण है। इनको रोकना ही सुख है। अहिंसा पवित्रता तथा दया ही भक्ति के साधन हैं। इनके द्वारा मनुष्य उन्नति करते-करते निर्वाणपद प्राप्त कर सकता है।

यज्ञादिको मे पशुबलि तथा कर्म काण्ड के आप विरोधी थे। आपने इन्ही सिद्धांतो का घूम-घूम कर प्रचार किया थोडे ही दिनो मे बहुत से लोग आपके भक्त बन गए। राजाओ पर भी आपके उपदेशो का सिक्का जम गया।

जब आप कपिलवस्तु मे वापस आए तो यशोधरा ने आपको राहुल पुत्र की भेंट देकर अपनी दान उदारता का परिचय दिया।

आपका विचार था कि ज्ञान, शान्ति तथा सत्य को मनुष्य एकात मे ध्यान-मग्न होकर पा सकता है।

इस सोये हुए ससार को जगा कर, सीधे मार्ग पर लगाकर, ज्ञान का प्रकाश दिखाकर ८० वर्ष की दीघ आयु मे आपने निर्वाणपद प्राप्त किया। आपके बाद अशोक, कनिष्क तथा हर्ष ने बुद्ध धर्म के उपदेशो को स्तूप और खम्भो पर खुदवाकर ससार के कोने-कोने तक पहुँचाया। अब भी समस्त ससार के एक तिहाई मनुष्य बौद्ध हैं। भारत मे तो शकराचार्य के विरोध से इसका प्रचार कम हो गया था, परन्तु शेष ससार चीन, जापान आदि देश अभी तक इसका जयनाद कर रहे हैं। इस वर्तमान मे वही चीन भारत के विरुद्ध अपना दुश्चरित्र प्रकट कर रहा है। यह एक कृतघ्नता है।

महात्मा बुद्ध ने भारतीय समाज को बहुत ऊँचा उठाया। उन्होने निराशा से परिपूर्ण व्यक्तियो के हृदय मे आशा का सचार करके सही मार्ग पर चलने का उपदेश दिया। उन्होने सदाचार पर विशेष जोर दिया। उन्होने बताया कि मनुष्य का श्रेष्ठ आचरण ही सच्चा धर्म है। यद्यपि आज बुद्ध भगवान हम मे नही हैं, किन्तु आज भी उनकी विचारधारा से सारा जगत चमत्कृत हो रहा है। हमारी ईश्वर से यही प्रार्थना है कि हमारे देश में बुद्ध जैसी महान् आत्मायें समय समय पर प्रकट हो, जिससे हमारे समाज और राष्ट्र का उत्थान हो।



सम्राट अशोक

ससार के इतिहास मे हजारो विजेताओ और सम्राटो के नामों मे अशोक नाम अलग एक नक्षत्र की भाँति चमकता है। यह सर्वप्रथम सम्राट था, ने अपनी प्रजा को जीवन का उद्देश्य तथा उसकी प्राप्ति का साधन । यह पहला विजेता था, जिसने विजय के बाद भी युद्ध को हानिकारक सदैव के लिए उससे मुख मोड लिया। सतत् अट्ठाईस वर्ष तक उसने

सभी बौद्ध तीर्थों का परिभ्रमण किया तथा लाखो की संख्या में रुपये भी दान किये। इन्होने अपने राज्य में कुछ सुधारो का होना आवश्यक कर दिया, उन्हें खम्भो और शिलालेखो पर भी खुदवा दिया।

इनके राज्य में पशु का मारना निषिद्ध समझा जाता था।

पशुओं की चिकित्सा के लिए अस्पताल खोल दिये गए। यात्रियो के लिए धर्मशालायें बनवा दी गई।

ऊँचे स्थानो के जातीय भोज, जो केवल प्रदर्शन के लिए होते थे—बंद कर दिए गए।

माता-पिता की आज्ञा का पालन श्रेयस्कर बताया गया।

ब्राह्मणो, शरणागतो, मित्रो तथा परिजनो से प्रेमपूर्वक व्यवहार करना अत्यन्त आवश्यक और महत्त्वपूर्ण घोषित किया।

किसी भी जीवधारी को दुःख तथा कष्ट पहुँचाना अपराध था।

आत्मसंयमी रहना एवं हृदय को निर्मल रखना तथा सबके साथ नम्रता का व्यवहार करना, परमावश्यक था।

अतिथि का सम्मान शत्रु के साथ समान भाव दिखाना आवश्यक था।

ऐसे कार्य जिससे क्रोध, अहंकार एवं निर्दयता आदि के भाव उत्पन्न हो, बहिष्कार कर देना चाहिए।

अपने जीवन-काल में अशोक ने अपने साम्राज्य के समस्त पवित्र स्थानो में ऐसे महान् आदर्शों को शिलालेखो पर लिखवाया और पाटलीपुत्र से हिमाचल प्रदेश तक पाँच विशाल स्तूपो का निर्माण कराया। पश्चिम की ओर अशोक ने एक बाग में जहाँ बुद्ध का जन्म हुआ था, एक विशाल स्तूप स्थापित कराया। कपिलवस्तु और सारनाथ तथा गया, जहाँ भगवान गौतम बुद्ध ने जन्म लिया उपदेश किये तथा आत्म-ज्ञान प्राप्त किया था, वहाँ अनेक स्तूप बनवाये तथा बौद्ध धर्म के प्रचारार्थ अनेक पाठशालाएँ तथा विहार व संस्थाएँ बनवाई।

महान् अशोक ने बौद्ध भिक्षुओ जैसे पीतवस्त्र धारण कर लिए तथा राज्य का कार्य करते हुए भी एक विदेह का-सा जीवन व्यतीत किया। पतीवस्त्रधारी

सम्राट अशोक

ससार के इतिहास मे हजारो विजेताओ और सम्राटो के नामो मे अशोक का नाम अलग एक नक्षत्र की भाँति चमकता है। यह सर्वप्रथम सम्राट था, जिसने अपनी प्रजा को जीवन का उद्देश्य तथा उसकी प्राप्ति का साधन बताया। यह पहला विजेता था, जिसने विजय के बाद भी युद्ध को हानिकारक समझकर सदैव के लिए उससे मुख मोड लिया। सतत् अट्ठाईस वर्ष तक उसने बुद्धिमत्तापूर्वक और सच्चाई के साथ प्रजा की वास्तविक सेवा की। अशोक विश्व मे विशुद्ध अहिंसात्मक प्रणाली से राज्य करने वाला सम्राट हुआ है। अशोक की यह महान् विजय थी कि युद्ध के प्रति घृणा करने पर भी किसी शासक ने उसके विरुद्ध विद्रोह का झण्डा नही उठाया। महाराज अशोक मौर्य वश की शोभा बढाने वाले थे। वह बौद्ध धर्म के अनुयायी और सच्चे सेवक थे, बौद्ध धर्म के प्रचार में उनका सबसे पहला नाम है इसी कारण वे आज तक ससार मे अमर हैं।

अशोक के पिता का नाम बिन्दुसार था। अशोक प्रारम्भ से परिश्रमी, होनहार और हठी थे। जिस कार्य को अपने ऊपर ले लेते उसे समाप्त करके ही साँस लेना इनकी आदत थी। पिता बिन्दुसार की मृत्यु के उपरान्त छोटी अवस्था मे भी इस योग्यता के साथ राज्य-कार्य को सम्भाला कि थोडे ही दिनो बाद इनका शासन बगाल, उडीसा, गोदावरी और कृष्णा नदी तक फैल गया। पाटलीपुत्र उनकी राजधानी थी।

कलिंग के युद्ध में लाखो की सख्या में आदमी मारे गये थे और बहुत से आदमी बीमारी और दुर्भिक्ष का शिकार बन गये थे। जिससे अशोक को बडा पश्चात्ताप हुआ। उस दिन से बौद्ध धर्म का उन पर काफी प्रभाव हुआ और इन्होंने वचन दे दिया कि आगे से कभी युद्ध नही किया जायेगा। प्रत्येक प्रकार से निरीह व्यक्तियो का पालन-पोषण और बौद्ध धर्म का प्रचार (अहिंसा परमो धर्म) इनके जीवन का लक्ष्य बन गया था। आचार्य उपगुप्त के साथ उन्होंने

सभी बौद्ध तीर्थों का परिभ्रमण किया तथा लाखो की सख्या में रुपये भी दान किये। इन्होने अपने राज्य में कुछ सुधारो का होना आवश्यक कर दिया, उन्हें खम्भो और शिलालेखो पर भी खुदवा दिया।

इनके राज्य में पशु का मारना निषिद्ध समझा जाता था।

पशुओं की चिकित्सा के लिए अस्पताल खोल दिये गए। यात्रियो के लिए धर्मशालायें बनवा दी गई।

ऊँचे स्थानो के जातीय भोज, जो केवल प्रदर्शन के लिए होते थे—बंद कर दिए गए।

माता-पिता की आज्ञा का पालन श्रेयस्कर बताया गया।

ब्राह्मणो, शरणागतों, मित्रो तथा परिजनो से प्रेमपूर्वक व्यवहार करना अत्यन्त आवश्यक और महत्वपूर्ण घोषित किया।

किसी भी जीवधारी को दु ख तथा कष्ट पहुँचाना अपराध था।

आत्मसयमी रहना एव हृदय को निर्मल रखना तथा सबके साथ नम्रता का व्यवहार करना, परमावश्यक था।

अतिथि का सम्मान शत्रु के साथ समान भाव दिखाना आवश्यक था।

ऐसे कार्य जिससे क्रोध, अहकार एव निर्दयता आदि के भाव उत्पन्न हो, बहिष्कार कर देना चाहिए।

अपने जीवन-काल में अशोक ने अपने साम्राज्य के समस्त पवित्र स्थानो में ऐसे महान् आदर्शो को शिलालेखो पर लिखवाया और पाटलीपुत्र से हिमाचल प्रदेश तक पाँच विशाल स्तूपो का निर्माण कराया। पश्चिम की ओर अशोक ने एक बाग में जहाँ बुद्ध का जन्म हुआ था, एक विशाल स्तूप स्थापित कराया। कपिलवस्तु और सारनाथ तथा गया, जहाँ भगवान गौतम बुद्ध ने जन्म लिया उपदेश दिये तथा आत्म-ज्ञान प्राप्त किया था, वहाँ अनेक स्तूप बनवाये तथा बौद्ध धर्म के प्रचारार्थ अनेक पाठशालाएँ तथा विहार व सस्थाएँ बनवाई।

महान् अशोक ने बौद्ध भिक्षुओ जैसे पीतवस्त्र धारण कर लिए तथा राज्य का कार्य करते हुए भी एक विदेह का-सा जीवन व्यतीत किया। पतीवस्त्रधारी

अशोक द्वारा इतने बड़े साम्राज्य के सचालन की कल्पना मन में एक अपूर्व विमुग्वता उत्पन्न कर देती है।

इतिहासज्ञों का कथन है कि ई० पू० २३२ में उनका देहान्त हुआ था। अशोक ने एक अति दीर्घ तथा महान् कार्य अपने हाथ में लिया। सत्य, अहिंसा और शाति के जो अमर सिद्धांत महात्मा बुद्ध ने संसार के सामने रखे थे, महाराज अशोक ने उनके अनुरूप अपने जीवन को ढाला तथा उन ही सिद्धांतो का प्रचार सारे ससार में किया। अनेक महात्मा चीन, जापान, तिब्बत, सुमात्रा, जावा, लका आदि देशो में भेजे जिसके फलस्वरूप आज २००० वर्ष के उपरान्त भी उन देशो में बौद्ध धर्म ही सर्वमान्य है। अशोक ने शक्ति से झुका कर नही अपितु भारतीय आदर्शों के बल पर ससार में भारत का नाम उज्ज्वल किया जिसके लिए ससार का इतिहास आज महाराज अशोक को अशोक महान् के नाम से याद करता है। भारत का राजनीतिक, धार्मिक, सास्कृतिक नेता अशोक का जीवन विशुद्ध राष्ट्रीय था तथा मानवता का साकार प्रतिरूप था।



महाराणा प्रताप

ऐसा कौन व्यक्ति है, जिसकी सूखी नसो में महाराणा प्रताप के नाम के साथ ही रक्त में नवीन सचार न हो जाये ? जिस व्यक्ति ने अपनी मातृभूमि की स्वतन्त्रता के लिए सकट सहे, उनके गौरव-गान से नई प्रेरणा और स्फूर्ति मिलती है। महाराणा को जन्म दे, भारत माता धन्य हो गई।

जिस समय मुगल राज्य के सूर्य के तेज और प्रकाश के सामने सभी राज्यों की शक्ति फीकी पड़ गई थी। उस समय कुछ एक मेवाडी वीर अपनी मातृभूमि की रक्षा के लिए तुले बैठे थे। वे सब भूख, प्यास और दु ख सह सकते

थे परन्तु अपनी मातृभूमि को पराधीन नहीं देख सकते थे। अपने स्वाभिमान को नही दबा सकते थे। वे हँसते-हँसते अपने प्राण दे सकते थे पर उन्होंने किसी के समाने सिर झुकाना नही सीखा था। महाराणा वीरता, शूरता, धीरता, स्वतन्त्रता, धर्माभिमान, स्वदेशानुराग और आन आदि सभी निराले गुणो मे पूरे पगे थे। वे सूर्यवंशी उसी वीर राणा सांगा के पोते थे, जिसने एक टाग, एक हाथ तथा एक आख होते हुए भी अकबर के दादा बाबर पर आक्रमण किया था।

महाराणा प्रताप वीर उदयसिह के पुत्र थे। इनका जन्म १ मई १५४० ई० मे हुआ था। जब ये सिंहासन पर बैठे उस समय तक इनके भाई शक्तिसिंह और दूसरे राजपूत सरदार अकबर की छत्रछाया मे जा चुके थे। जयपुर के राजा मानसिह और जोधपुर नरेश तो अपनी लडकियो तक का विवाह अकबर से कर बैठे थे। एक स्वतन्त्र जाति के लिए इससे अधिक अपमान और क्या हो सकता है? प्रताप ने दृढ प्रतिज्ञा की कि वह जब तक चित्तौड को अपना न बना लेगा तब तक सोने चादी के बर्तनो मे भोजन नहीं करेगा, न पलग पर सोयेगा और समस्त सुखो को छोडकर कठोर से कठोर जीवन बितायेगा।

उन दिनो मेवाड की राजधानी उदयपुर थी एक दिन अकबर का सेनापति मानसिंह किसी युद्ध मे लौटते समय उदयपुर मे गुजरा और महाराणा का अतिथि बना। राणा ने उसका उचित स्वागत किया परन्तु साथ बैठकर खाना खाने से सिर-दर्द का बहाना बनाकर टाल दिया। अभिप्राय स्पष्ट था, मानसिंह ताड गया, उसने क्रोध मे आकर अनुचित शब्द कहे। परन्तु राणा ने साफ शब्दो मे कह दिया कि यवनो के साथ बेटीं ब्याहने वालो से हम खान-पान का सम्बन्ध नही रखना चाहते। मानसिंह राणा के अभिमान को मिटाने की धमकी देकर दिल्ली चला गया।

कुछ दिनो के बाद ही वह शहजादा सलीम और महाबत खा के साथ दो लाख सिपाहियो समेत हल्दी घाटी के मैदान में पहुचा। राणा भी २२ हजार वीरो को लेकर अपनी वीरता, साहस और आत्म-गौरव का परिचय

देने के लिए वहा पहुँच चुके थे। दोनो सेनाओ की मुठभेड हुई। वीर राजपूतो ने घाटी में यवनो को घेरकर गाजर-मूली की तरह काट डाला। कुछ घण्टो में वहा लहू की नदिया बह निकलीं। इस युद्ध मे १८००० राजपूत काम आये सलीम और मानसिंह प्रताप के हाथो से बाल-बाल बचे।

युद्ध में वीर राजपूतो की हार हुई। महाराणा का घोडा चेतक मैदान से महाराणा प्रताप को लेकर बच निकला परन्तु घायल होने के कारण नदी पार करते हुए उसने दम तोड दिया। उस समय दो मुगल सैनिक प्रताप पर टूटना ही चाहते थे कि भाई शक्तिसिंह ने ऐसा करने से पहले ही उन्हें यमलोक पहुँचा दिया।

महाराणा प्रताप जगलो मे रहते, पर्वतो में भटकते, कई-कई दिन तक उपवास करते-करते और बच्चो का दु ख सहन न कर सकने के कारण कुछ अधीर हो चले थे। कहते हैं उस अवस्था से तग आकर उन्होने अकबर को एक पत्र लिखा था, जिसका उत्तर पृथ्वीसिंह कवि ने इतने जोशीले और वीरता भरे शब्दो में दिया कि महाराणा अपने किए पर पछता उठे। इसी बीच में उनके मन्त्री भामाशाह ने अपनी अतुल सम्पत्ति उनकी सेवा में भेंट की। जिससे फिर सेना का सचालन कार्य प्रारम्भ हुआ और प्रताप ने एक बार फिर भाग्य की परीक्षा करने की ठान ली। इस बार विजय-लक्ष्मी ने सच्चे सपूत का स्वागत किया। मुगलो की पराजय पर पराजय होने लगी और थोडे से समय में चित्तौड़ को छोडकर सभी गढ जीत लिए।

परन्तु महाराणा प्रताप अधिक दिन तक स्वतत्र देश मे सुख पूर्वक न रह सके। उनका शरीर तो पहले ही जर्जर हो चुका था। सन् १५९७ के जनवरी मास में उनकी अवस्था गिर गई। किन्तु उनके प्राण नही निकलते थे। समस्त सामन्तो ने मिलकर प्रार्थना की कि आप व्यथित न हो, निश्चिन्त होकर स्वर्ग सिधारिये। इस पर महाराणा गद्-गद हो गए और बोले—"अमरसिंह विलासी है। मुझे आशका है कि वह मेवाड़ की स्वतन्त्रता की रक्षा न कर सकेगा। यदि आप प्रतिज्ञा करें और आश्वासन दिलाये तो शान्ति मिले।"

निदान सब वीर राजपूतों ने मेवाड को स्वतन्त्र रखने की प्रतिज्ञा की। तदुपरान्त महाराणा का नश्वर शरीर अमरत्व को प्राप्त हुआ।

प्रताप का जीवन जीता जागता जीवन था उनमे अटूट हिम्मत थी। वे स्वर्ग की गुलामी से नरक के स्वतन्त्र राज्य को अच्छा समझते थे। उन्होंने अनेक कष्ट सहे, पर आन न छोडी। उनका जीवन भावी नवयुवको के लिये पथ-प्रदर्शक बना है। अकबर—दरबार के सर्वप्रथम नेता बनकर वे स्वर्ग-सुख भोग सकते थे। परन्तु वे तो सच्चे देश—भक्त थे, उन्हे यह सुख सदा काटे की तरह चुभते थे वे हृदय में इनकी स्मृति को भी पाप समझते थे। ऐसे वीरो को पाकर ही सदैव भारत का नाम उज्ज्वल रहा है। यदि कभी वीरो की एक माला बनालें तो उसके सर्वश्रेष्ट मणि प्रताप ही है।

महाराणा प्रताप सच्चे तपस्वी, स्वतन्त्रता के पुजारी और वीर क्षत्रिय थे। जन्मभूमि का सच्चा महत्व उन्होंने ही समझा था। उनकी सच्ची देश-भक्ति, वीरता, उत्साह तथा त्याग की अक्षय कीर्ति ससार में सदैव अमर रहेगी। ऐसे वीर धन्य हैं। वास्तव मे प्रताप का प्रताप भारतीय इतिहास मे चिरकाल तक प्रकाशित रहेगा।

छत्रपति शिवाजी

ऐसा कौन हिन्दू है जो गौ, ब्राह्मण, हिन्दू धर्म व जाति के रक्षक तथा उद्धारक शिवाजी के नाम से परिचित न हो? ऐसा कौन व्यक्ति है जिसकी नसो मे शिवा महामत्र की गूँज नवीन रक्त का सचार न करदे? मृतप्राय हिन्दू जाति को सगठन सजीवनी प्रदान कर स्फूर्ति और शक्ति देने वाले वीरवर शिवाजी के आविर्भाव से यह जाति धन्य हो गई।

उन महापुरुषो मे से, जो ससार मे वीरता तथा स्वाभिमान के लिए

विख्यात हैं, उनमें शिवाजी का नाम बडो श्रद्धा तथा विश्वास से लिया जाता है। इनके पिता का नाम शाहजी था जो कि बीजापुर दरबार के सेनापति थे। माता का नाम जीजाबाई था। वे स्वतन्त्रताप्रिय होने के कारण शाहजी से अलग होकर अपने पिता की जागीर पूनां में रहती थी। वहीं पर दादा जी कोणदेव ने जागीर का अत्युत्तम प्रबध करके यहाँ उसे समृद्ध बनाया और शिवाजी की शिक्षा-दीक्षा का भार भी अपने ऊपर ले लिया।

थोडे ही समय मे उसे एक वीर और होनहार बालक बना दिया। इधर जीजाबाई भी कोई साधारण माता न थीं। वह नीति, कर्तव्य-पालन तथा विचारो को बडी सीधी-सीधी भाषा में लाड-प्यार के साथ रामायण तथा महाभारत के वीरो की कथायें शिवाजी को सुनाया करती थीं। जिनका प्रभाव शिवाजी के हृदय पर गहरा पडा था।

शिवाजी युद्ध विद्या, वाण विद्या तथा घुडसवारी में निपुण तो हो ही चुके थे, साथ ही साथ दक्षिण प्रदेश के चप्पे-चप्पे भूमि से भी परिचित थे। उन्हे योग्य साथी भी मिल चुके थे। प्रत्येक समय आस पास के प्रदेशो को हस्तगत (आधीन) करने की धुन उन पर सवार रहती थी। जिसका परिणाम यह हुआ कि उन्होने क्रमश तोरण दुर्ग तथा कल्याण बन्दरगाह को अपने अधीन कर लिया। उनके पास सात हजार घुडसवार और दस हजार पैदल सिपाही थे।

इन समस्त घटनाओं की सूचना बीजापुर दरवार में पहुच चुकी थी। फलस्वरूप यहाँ के नवाब ने लूटमारो में शिवाजी के पिता शाहजी का हाथ समझ उन्हे एक कोठरी मे वद कर दिया। शिवाजी को जब अपने पिता के घोर सकट मे फँसने का पता चला तो उन्होंने लूटमार बद कर दी और शाहजी को कारावास (कैदखाने) से मुक्ति दिलाई।

शिवाजी के वल पराक्रम की गूंज चारो ओर उठ रही थी। जिसका भय बीजापुर को भी व्यथित कर रहा था। उसने एक बड़ी सेना शिवाजी के विरुद्ध लडने के लिए भेजी। इसका सेनापति अफजल खा, एक उच्च अधिकारी था जो कि अपने वल और मान पर फूला न समाता था। शिवाजी कुशल

नीतिज्ञ थे। अत छुपकर यह सिद्ध कर दिया कि वह अफजलखाँ से डर गए हैं।

अफजलखाँ ने भी उन्हे सामने न आते देख पकडने के लिए सन्धि का ढोग रचा। निदान शर्त हुई कि शिवाजी अकेले मे उससे मिलें। जब नियत स्थान पर शिवाजी उसको मिले तो उसने उन पर छुरी से वार किया, पर शिवाजी ने बाघनख से उसका काम तमाम कर दिया। शिवाजी की झाडियों मे छिपी हुई सेना मुस्लिम सेना पर टूट पडी। यवन सेना के छक्के छूट गए। वह सिर पर पैर रखकर भाग निकली। शिवाजी को पूर्ण सफलता मिली।

शिवाजी एक-एक करके मुगल प्रान्तो को लूटने लगे, इससे नाराज होकर मुगल बादशाह औरगजेब ने एक लाख सेना के साथ अपने मामा शाइस्ताखाँ को शिवाजी से युद्ध करने के लिए भेजा। उसने बिना किसी विघ्न-बाधा के पूना पर अधिकार कर लिया और लाल महल मे रहने लगा। शहर के चारों तरफ सख्त पहरा था पर फिर भी शिवाजी ने अपनी बुद्धिमत्ता से एक बारात का ढोग रचकर किसी न किसी तरह सैनिको को साथ लेकर अमावस्या की अँधेरी रात्रि मे महल पर धावा बोल दिया। चीत्कार तथा आर्तनाद के साथ-साथ हर-हर महादेव की उत्साह भरी ध्वनि आ रही थी। एक पहर की मार-काट के बाद मैदान शिवाजी के हाथ रहा।

जब यह समाचार दिल्ली पहुँचा तो औरगजेब ने जयसिंह के सेनापतित्व में एक विशाल सेना पूना की ओर भेजी। अबकी बार शिवाजी ने सन्धि कर ली और मुगल दरबार मे पहुँचे। वहा धोखे से कैद कर लिये गए। अपनी चतुराई से मिठाई के टोकरो मे बैठकर वहा से भाग निकले। उसके थोड़े ही दिनो बाद उन्होने सिहगढ, गोलकुण्डा, बीजापुर के किलों को जीतकर लगभग समस्त दक्षिण को अपने कब्जे म कर लिया। इस तरह १६७४ मे समृद्धशाली राज्य बनाकर और ६ वर्ष राज्य करके सन् १६८० ई० मे छत्रपति शिवाजी स्वर्ग सिधारे।

शिवाजी का चरित्र परमपावन तथा अनुकरणीय है। वे महान् थे, जो अत्याचारियो के चगुल में फँसी हुई हिन्दू जाति तथा सस्कृति का परित्राण

(रक्षा) करने को भारत भूमि पर उतरे थे। अभिमान और गर्व तो उन्हें स्पर्श भी न कर पाया था। वे सादा और एक सच्चे देश-भक्त का जीवन व्यतीत करने के लिए आए थे। वे अमीरो तथा अत्याचारियों को लूट कर रक की सेवा करना उत्तम समझते थे। गौ, ब्राह्मण, असहाय, दीन और अनाथों के लिए अपना सर्वस्व न्योछावर करना जानते थे। पक्षपात उन्हें छू तक न गया था। कुरानशरीफ को पडा देखते तो बडे आदर के साथ उठाकर किसी मुसलमान को दे देते। वे दूसरे के सुख दुख को अपना ही समझते थे। देश, जाति और धर्म के लिए अपने आप को विपद सागर में धकेल देना उनके लिए साधारण खेल था। वे ऐसे थे जो अपने पैरों पर आप खडा होना सीखे थे और जिन्होंने एक विशाल एव महान् हिन्दू राष्ट्र की नीव डाली थी।

उन्होंने अपने राज्य का भी अनूठा प्रबन्ध किया था जिसकी उपमा मिलना कठिन है। शिवाजी का शौर्य, उत्साह तथा साहस सराहनीय था। इन्हीं गुणों के कारण मरने के बाद उनके घोर विरोधी औरगजब ने भी भरे दरबार मे उनकी वीरता की प्रशसा की और कहा, "यदि शिवाजी न होता तो दक्षिण भारत मे भी अवश्य मुगल ध्वजा लहराती।"

वीरवर शिवाजी ने पतनोन्मुख हिन्दू-जाति को सगठित कर जिस चेतना का निर्माण किया था, एक मात्र वही हिन्दू जति को जीवित बनाये रखने में समर्थ हुई। उन्होने स्व-राष्ट्र का निर्माण किया, स्वराज्य प्राप्त करने का पथ प्रदशन भी किया। उन्होने राष्ट्रहित के लिए समयानुकूल नीति को बरतने का सुपाठ पढाया। वास्तव मे मृत-प्राय हिन्दू जाति को केवल जीवित ही नही वरन् बलवती बनाया। प्रात स्मरणीय वीरवर शिवाजी के कार्य के लिए हिन्दू जाति सदैव उनकी ऋणी रहेगी।



महारानी लक्ष्मीबाई

एक लडकी थी बडी चचल और बडी हठीली, नाम था मनू । बालकपन में ही वीरागनाओ के से कार्य करती थी। कभी घोडे पर चढती, कभी हाथी पर बैठती थी, कभी शिकार खेलने जाती थी तो कभी तलवार चलाना सीखती थी। उस ओज के साथ-साथ उसके सौन्दर्य की छटा भी अद्भुत थी। अनेक लोग उसके भविष्य की अनेक प्रकार से कल्पना करते थे। कोई कहता वह रानी होगी, कोई कहता वह वीरागना होगी—सब कुछ एक दिन सत्य ही सिद्ध हुआ। वह रानी भी बनी तथा वीरागना भी। शौर्य और सौन्दर्य की साकार प्रतिमा-सी वह सबकी हितैषिणी भी बनी तथा महालक्ष्मी-सी सदा के लिए सबके मन पर एक गहरा प्रभाव छोड गई।

महारानी लक्ष्मीबाई के पिता का नाम मोरोपन्त ताम्बे था। वह महाराष्ट्र मे सतारा के समीप कृष्णा नदी के किनारे थाई ग्राम मे रहते थे। साधारण हैसियत थी पर फिर भी बडों-बडो तक पहुँच थी। इन पर भी चिम्भा जी आपा साहब की, जो द्वितीय बाजीराव पेशावा के सहोदर थे, बडी कृपा थी। वह काशी मे रहते थे। इसलिए उन्होने मोरोपन्त को ५०) मासिक वेतन पर अपने पास काशी मे बुला लिया। उनकी धर्मपत्नी भागीरथी बाई भी उनके साथ काशी में रहती थीं। वे बडी सुशील, चतुर और अनेक गुणसम्पन्न स्त्री थीं। काशी मे ही १६ नवम्बर सन् १८३५ ई० को मनू का जन्म हुआ। मोरोपन्त के दाम्पत्य जीवन मे सुख की बाढ़-सी आ गई। जिस समय चिम्भा जी आपा साहब ने अपना भौतिक शरीर छोडा उस समय मोरोपन्त के कुटुम्ब-पालनार्थ काशी मे कोई सहारा न रहा। बाजीराव चिम्भा जी के भाई थे उन्हें भारत सरकार से आठ लाख रुपया पेंशन मिलती थी। भाई की मृत्यु का समाचार सुनकर उन्हे बहुत दु:ख हुआ। उन्होने मोरोपन्त ताम्बे को सपरिवार अपने यहाँ बुला भेजा। परन्तु दुर्दैव का दुख तो जैसे सुख के साथ ही आने की बाट जोहता है। आने के थोडे दिन बाद ही मोरोपन्त जी की पत्नी

भागीरथी बाई का देहान्त हो गया। बालिका मनू बाई तीन-चार वर्ष की अवस्था में ही मातृ-विहीन हो गई।

पत्नी के मरने पर सारा गृह-कार्य मोरोपन्त जी को अपने सिर पर लेना पडा। वे बालिका मनू का लालन-पालन अपने आप ही करने लगे वह भी अपने पिता के साथ-साथ सदा पुरुष-मण्डली मे रहा करती थी। वह बाल्यावस्था से ही बडी रूपवती थी। उसके विशाल नेत्र और वर्ण को देखकर कौन ऐसा अभागा होगा जिसको आनन्द न आता होगा। बाजीराव पेशवा और उनके समीपवर्ती लोग उसे छबीली कहकर पुकारा करते थे। बाजीराव के दत्तक पुत्र नानासाहब और राव साहब भी उस समय बच्चे ही थे। अत मनू बाई इन्हीं के साथ खेला करती थी। इसका परिणाम यह हुआ कि थोडे ही दिनो मे घोडे पर चढना, तीर चलाना तलवार चलाना आदि सीख लिया। इस प्रकार ब्राह्मण बालिका के हृदय मे क्षत्रियत्व का बीज बो दिया गया।

काल-चक्र रोके नही रुकता। समय बीतने पर हमारी चरित्रनायिका जब युवा हुई तो मोरोपन्त जी को कन्या के विवाह की चिन्ता हुई। ब्रह्मावर्त, मे कोई उनकी जाति का ब्राह्मण न था। इस कारण वे अन्य स्थानो में लडके की खोज करने लगे। दैवात एक दिन तात्या दीक्षित नाम के एक प्रसिद्ध ज्योतिषी झासी से बाजीराव से मिलने के लिए आए। मोरोपन्त ने उन्हे अपनी प्यारी पुत्री मनूबाई का जन्म-पत्र दिखाया और उसके विवाह की चर्चा की। ज्योतिषी ने उसका जन्म-पत्र देखकर कहा कि उसको राजयोग लिखा है। ज्योतिषी की भविष्यवाणी सत्य हुई। सन् १८४२ ई० मे उसका विवाह झासी के महाराज गगाधर राव के साथ हो गया। अब उसका नाम लक्ष्मीबाई रखा गया। मोरोपन्त को भी ३००) मासिक वेतन पर झाँसी दरबार मे सरदारी की जगह मिल गई। यहाँ उन्होने मुगलसराय के वासुदेवशिव राव की कन्या चिमन बाई के साथ दूसरा विवाह कर लिया।

महारानी लक्ष्मीबाई अपने पति-गृह मे सुखपूर्वक रहने लगी। सन् १८५१ ई० मे उनके एक पुत्ररत्न उत्पन्न हुआ परन्तु वह केवल तीन माह ही जीवित रहा और चल बसा। पुत्र वियोग से महाराज गगाधरराव के हृदय को

बडी चोट लगी वह भी प्रायः बीमार ही रहने लगे। सन् १८५३ ई० में उनका रोग इतना बढ गया कि उन्होंने विवश होकर आनन्दराव नाम के एक पच-वर्षीय बालक को गोद ले लिया। यही बालक दामोदर राव गगाधर राव के नाम से प्रख्यात हुआ।

उस समय झासी का राज्य अंग्रेजो की छत्र छाया मे था। अत महाराज गगाधरराव ने तत्कालीन बड लाट साहब के पास गोद लेने की सूचना भिजवा दी उस सूचना में यह भी लिख दिया कि झाँसी के वर्तमान महाराज गगाधर-राव की मृत्यु के पश्चात दामोदरराव का राज्याभिषेक होगा और उनकी नाबालिगी तक शासन का समस्त कार्य लक्ष्मीबाई के हाथ में रहेगा। इस प्रकार राज्य का कुल प्रबन्ध करके २१ नवम्बर सन् १८५३ ई० को इस असार ससार से विदा हो गए। अठारह वर्ष की युवती लक्ष्मीबाई विधवा हो गई।

उस समय देश में विद्रोह की आग भडक रही थी। प्रजा उन्मत्त हो रही थी। राष्ट्रीय भावना से वह तैयार थी अपने देश और धर्म के हेतु प्राणोत्सर्ग करने के लिए। उस समय मुगल साम्राज्य नष्ट प्राय हो चुका था, मरहठे अवनति के गर्त मे गिर चुके थे। बडे-बडे शूरो की तलवारो मे मोर्चा लग गया था। छोटे-छोटे राज्यो के शासक वर्ग आपस की कलह से शक्तिहीन हो चुके थे। सारा देश दासता की बेडियो मे जकडा जा रहा था। सबके हाथ ढीले पड गए थे। ताप के आगे तलवारें कुण्ठित हो गई थी। सहसा आग भडक उठी। स्वतन्त्रता ने अँगडाई ली और देश का कोना-कोना सजग हो गया। पुरानी तलवारें निकल आईं। मुर्दे जीवित हो उठे। बूढे जवान बन कर आगे आए। जिनका राज्य छिन गया था, जिनकी जायदाद लूट ली गई थी, जिनका अपमान हुआ था—सब मिल गए इस महायज्ञ मे। मनु ने भी इसी यज्ञ में आहुति दी थी। जब मनू विधवा हुई तो उसके पति की मृत्यु का दुखद समाचार सहकारी राजनीतिक ऐजेण्ट मेजर एलिस को ज्ञात हुआ। तब उन्होंने आकार झाँसी के किले मे रखे हुए राजकोष में ताला लगा दिया और उसकी रक्षा के लिए एक फौज का पहरा बैठा दिया। राजनीतिक एजेण्ट

मालकम ने कहा कि सरकारी स्वीकृति के बिना दामोदरराव का गोद लिया जाना उचित नही है। इसलिए झासी को अग्रेजी राज्य में मिला लिया जाय, और रानी को ५०००) मासिक पेंशन दे दी जाय। उस समय लार्ड डलहौजी गवर्नर जनरल थे। उन्होंने २ अगस्त सन् १८५४ ई० को मालकम साहब के आदेशानुसार झाँसी को अग्रेजी राज्य में सम्मिलित कर लिया। लक्ष्मीबाई ने अग्रेजो की नीति का घोर विरोध किया और पेंशन लेना अस्वीकार कर दिया। परन्तु अग्रेजो पर इसका कोई प्रभाव न पडा। लक्ष्मीबाई ने हृदय पर पत्थर रखकर सब सह लिया।

दोबारा सन् १८५७ ई० मे सरकार के हिन्दुस्तानी सिपाहियो ने विद्रोह कर दिया। झांसी की हिन्दुस्तानी फौज ने अग्रेजो के बगलो में आग लगा दी अग्रेज कुछ भयभीत हुए। उन्होंने रानी से सहायता मागी परन्तु विद्रोहियो ने दूतो को मार्ग मे ही मार दिया। उन्होने लक्ष्मीबाई से तीन लाख की माँग की थी—रानी ने अपने आभूषण देकर अपनी जान बचाई।

महारानी ने झाँसी के विद्रोह की सूचना सागर के कमिश्नर को दी। इसका परिणाम यह हुआ कि अग्रेज अधिकारियो के आने तक झाँसी का शासन प्रबन्ध लक्ष्मीबाई को सौंपा गया—किन्तु राजनीति निपुण कर्मचारियो के अभाव में वह सफल नही हो सकी—फलत: झाँसी पर आक्रमण होने लगे। करेरा पर सदाशिव राव नारायण नाम के एक व्यक्ति ने अपने को गद्दी का उत्तराधिकारी घोषित करके करेरा के किले पर आक्रमण कर दिया। लक्ष्मीबाई ने भी इधर-उधर से सेना इकट्टी करके करेरा पर चढ़ाई कर दी, वह विजयिनी बनी। इसके कुछ दिन बाद ओरछा राज्य के नत्थे खाँ ने चढाई की। लक्ष्मीबाई पुरुषो के वेष में निकली और उसने नत्थे खाँ को मारकर भगा दिया। वह भागकर अग्रेजो से मिल गया और रानी के विरुद्ध उनके कान भर दिए। रानी बागी समझी जाने लगी। सर ह्यूरोज के सेनापतित्व मे एक अग्रेजी सेना ने झाँसी पर आक्रमण कर दिया।

वह भी युद्ध करने के लिए तैयार हो गई। बहुत से मरहठे अवसर पाकर उससे आ मिले। २३ मार्च को दोनो ओर से गोले दगने लगे परन्तु उस दिन

अंग्रेज सफल हुए। २४ मार्च को नए मोर्चे बाधे। किले की दाहिनी ओर से आक्रमण किया। दीवारो मे छेद हो गये। चलते-चलते तोपें भी बन्द हो गईं पर अंग्रेजो को सफलता न मिली। अन्त मे एक विश्वासघाती की सलाह से पश्चिम से आक्रमण हुआ। बहुत से लोग मारे गए। रानी ने दृढ़तापूर्वक प्रलयकारी गोलो से प्रजा की रक्षा की—कई दिन युद्ध रहा। रानी भी दृढ़ता का परिचय देती रही। तात्या टोपे तथा अन्य सरदार भी आ गए। परन्तु अंग्रेजो की वृहद् सुव्यवस्थित सेना के आगे विद्रोहियो के पैर न टिक सके। अंग्रेजी फौज बुरी तरह से हिन्दुस्तानी प्रजा को मारने लगी। महारानी दुख से भर गई। उन्होंने गुप्त द्वार से सब नौकरो को बाहर निकाल दिया और स्वय भी निकल गई। मार्ग मे मोरोपन्त मारे गए। सारा नगर लूटा गया, झाँसी तबाह हो गई।

महारानी लक्ष्मीबाई झांसी से निकल कर ५ अप्रैल को माडेर पहुँची। अंग्रेजी सेना ने उसका पीछा किया—वह उस समय अकेली थी न सेना थी न कोई साधन—केवल तलवार ही एक सहारा थी ज्योंही बोकर साहब उसे पकड़ने के लिए लपके उसने अपनी तलवार का एक हाथ ऐसी चपलता से लगाया कि साहब पृथ्वी की गोद में गिरकर छटपटाने लगे—वह फिर कालपी पहुँची वहाँ राव साहब पेशवा ने उसके रहने का प्रबन्ध कर दिया उसने उनसे कहा—"आपके पूर्वजो ने यह तलवार हमे दी थी आज तक इसका उचित आदर हुआ। परन्तु अब मैं आपकी सहायता और कृपा न होने के कारण इसकी मर्यादा रख सकने मे असमर्थ हूं अतएव इसे वापिस ले लीजिए"। रानी की इस चतुरता से पेशवा सतर्क हो गए। युद्ध की तैयारी होने लगी। घोर युद्ध ठना और कालपी भी अंग्रेजो के हाथ आ गया। रानी और पेशवा भागकर ४६ मील दूर जाकर गोपालपुरी पहुँचे।

वहा तात्याटोपे और बांदा के नवाब भी इन लोगो से आ मिले, इन लोगो ने किसी किले पर अधिकार करने का निश्चय किया। ग्वालियर का किला निकट था जयाजीराव सिंधिया वहाँ के महाराज थे। युद्ध हुआ जयाजी राव के पैर उखड गये वे ग्वालियर से आगरा भाग गए किला विद्रोहियो का हो गया।

ऐसे अवसर पर बागी लोग भोग-विलास में लग गए अंग्रेज सतर्क थे। सर ह्यू रोज ने लार्ड केनिंग से परामर्श करके तुरन्त ही ग्वालियर पर आक्रमण कर दिया अब सबकी आखें खुली। लक्ष्मीबाई दूरदर्शी थी। वे समझ गई कि एक न एक दिन बागियो की विलास-प्रियता अवश्य रग लाएगी और उसी दिन उसे अपने जीवन की आहुति देनी होगी। हुआ भी यही। अग्रेजो ने आक्रमण किया। वह नागिन सी फुकार उठी—पीछे हटना तो वह जानती ही न थी। कई दिनो तक बराबर रणचण्डी की भाति लडती रही थी। पीछे से अवसर पाकर एक सिपाही ने उसके मस्तक पर तलवार से ऐसा वार किया कि उसके कोमल शरीर के दो भाग हो गए, दाहिनी आख निकल पडी वह अशक्त हो गई। उसने अपना बचना कठिन जानकर अपने विश्वासपात्र सरदार रामचद्रराव देशमुख को सहायता के लिए सकेत किया वे उसे एकपर्ण कुटी मे ले गए। मृत्यु समीप थी मुखपर एक अद्भुत वीर श्री खेल रही थी। ज्येष्ठ शुक्ल ७ स० १९१४ को उसने अपना शरीर छोड दिया। इस प्रकार एक देश भक्त नारी ने स्वतन्त्रता के लिए अपने प्राणो की आहुति दी।

लक्ष्मीबाई एक सच्ची वीरागना थी। सफेद तग पायजामा, गहरे नीले रग का कोट सिर पर सुन्दर कलगीदार पगडी, कमर म तिलई काम का दुपट्टा जिसमें हीरे की जडी मूठवाली तलवार लटकती थी यह था उस वीरागना का वेश। उसमें अद्भुत साहस था। अद्भुत पराक्रम था, अद्भुत शक्ति थी, उसका ब्राह्मणत्व उसकी कोमलता थी उसका क्षत्रियत्व उसकी कठोरता थी। अग्रेजो ने उसका अपमान किया। वह लड मरी अपने और देश के सम्मान की रक्षा के लिए।

अपनी प्रजा के प्रति रानी का प्रेम अगाध था। एक बार शहर मे जाते हुए रानी ने कुछ गरीब लोगो की भीड देखी। दीवान से पूछा कि यह लोग क्यो शोर मचा रहे हैं। दीवान ने बतलाया कि यह लोग बडे गरीब है। आजकल कडा शीत पड रहा है इनके पास ओढने का कपडा नही है इस कारण बहुत दुखी हैं। रानी यह सुनकर बहुत खिन्न हुई और आज्ञा दी कि शहर के सब कगालो को रजाई, रोटी और चादरें बाटी जायें। शहर भर

के दर्जी काम पर लगा दिए और दो तीन रोज के पश्चात् शहर मे एक भी कगाल विना कपडों के न रहा।

रानी महालक्ष्मी की उपासिका थी वे स्वय घोडे पर सवार होकर अथवा पालकी मे ही जलूस के साथ पूजा के लिए प्रति शुक्रवार को मन्दिर जाती थी। जव रानी सफेद घोडे पर सवार होकर चलती थी तो साक्षात दुर्गा लगती थी।

रानी अत्यन्त ही सादा जीवन व्यतीत करती थी। श्री डी० वी० पारएनिस ने उनके विषय में लिखा है "वह प्रतिदिन प्रात काल पाँच वजे नित्य कर्म से निवृत होती थी। स्नान के पश्चात् सध्या के लिए वैठ जाती थी। पूजा के अन्त में वन्दी लोग भगवत वन्दना के गीत सुनाते थे, फिर दरवारी लोग उन्हे क्रम से प्रणाम करते थे उनकी सख्या लगभग ७५० थी। परन्तु रानी की स्मृति इतनी तेज थी कि यदि कोई सरदार एक दिन भी उपस्थित न होता तो दूसरे दिन उसके आने पर उससे न आने का कारण और कुशल वृतात पूछती।

इस प्रकार महारानी लक्ष्मीवाई में वीरता के साथ-साथ अनेक गुण थे पर एक शब्द मे तो यही कहा जा सकेगा कि वह भारत माता की सच्ची पुत्री थी क्योंकि देश को पराधीनता की वेडियो से मुक्त कराने के लिए अपनी जान पर खेल गई। वीरो से लडकर उस वीरागना ने अपनी तलवार का जौहर दिखाया और अन्त मे वीरगति को प्राप्त हुई। आज वह वीर नारी नही है पर उसकी पावन आत्मा कण-कण में व्याप्त है जो देश की नारियो को शौर्य, साहस और वीरता का पाठ पढाती रहती है।



रवीन्द्रनाथ ठाकुर

वीसवी शताब्दी के प्रथम पचास वर्षों का भारतवर्ष का इतिहास केवल दो महान आत्माओ की जीवन गाथाओ से परिपूर्ण है। ये दो विभूति रवीद्र तथा गाँधी हैं। रवीद्र भी गाधी के सदृश ही प्रसिद्ध हैं। केसरलिग के विचार के अनुसार वे सबसे अधिक सार्वभौम और पूर्ण मानव थे। नितान्त सत्य है वे भारतमाता के उन रत्नो मे से थे, जिन्होने वतमान काल मे मतृ-भूमि के यश को सारे ससार मे बढाया है।

ठाकुर परिवार जिसमे रवीन्द्रनाथ ने जन्म लिया बगाल के अत्यन्त प्राचीन एव कला प्रेमियों मे गिना जाता है। आपके पिता तथा पितामह का नाम महर्षि देवेन्द्रनाथ तथा द्वारिकानाथ था। ईश्वर ने आपको धन तथा मान से भरपूर किया हुआ था उनमे प्राचीन काल से ऋषियो जैसे गुण विद्यमान थे। रवीन्द्रनाथ का जन्म ६ मई १८६१ ई० को कलकत्ता के जोरासाकु स्थित ठाकुर परिवार मे हुआ था।

शैशवकाल मे ही आपकी माता का देहान्त हो गया था, इसलिए माता का वात्सल्य भी पिता के द्वारा ही मिला। हर समय इनके ऊपर नौकर की देख रेख थी, ये विद्यालय मे प्रविष्ट हुए, परन्तु वहा की शिक्षा आपके अनुकूल न बैठी। इनका ध्यान तो उस समय के निर्दय एव क्रूर अध्यापको की दानवी प्रकृति की ओर था, इसलिए इन्हे विद्यालय से कोई विशेष शिक्षा प्राप्त न हो सकी।

घर हर किसी प्रकार की कमी न थी। सभी प्रकार के सुप्रसिद्ध कलाओ के ज्ञाताओ का आपके भवन मे जमघट रहता था। वे इनके यहाँ रहकर महीनो आतिथ्य ग्रहण किया करते थे। घर पर समय-समय पर साहित्य चर्चा हुआ करती थी। आप उसको बडे ध्यान से सुना करते थे तथा उस समय पूरी तरह मनन करते थे। सद्‌विद्या का मूल बीज तो उनके हृदय मे विद्यमान था परन्तु उसको आवश्यकता थी जलसिचन की और यह कार्य

साहित्यिको की सुन्दर चर्चा द्वारा सम्पन्न किया गया। अल्प अवस्था में ही ये अंग्रेजी तथा बगला भाषा में कविता की रचना करने लगे। चित्रकला, नाटक एव सगीत आपकी प्रतिभा के मनोविनोद थे। आप १६ वर्ष की आयु तक 'भानुसिंह' के नाम से कविता किया करते थे। जिनका प्रकाशन 'भारतीय', मासिक पत्रिका में हुआ करता था।

१८७७ में रवीन्द्र इगलैंड गये। वहा कुछ दिन ब्राइटन स्कूल मे अध्ययन करने के बाद लदन विश्वविद्यालय मे प्रविष्ट हो गये। जिस समय आप बैरिस्टर बनने की आयोजना मे सलग्न थे, उसी समय अपने पिता जी की आज्ञानुसार देश लौट आए। लन्दन से वापिस आने पर आपने 'भग्न-हृदय' 'सांध्य गीत', 'विदग्ध-प्रसग' आदि मार्मिक एव भावपूर्ण ग्रन्थ तथा लेख लिखे, प्रभात सगीत आदि रचनाएँ पाश्चात्य साहित्य से प्रभावित, बगला साहित्य तथा प्रकृति निरीक्षण से युक्त हैं। "गीताजलि" आपकी जगत-ख्याति-प्राप्त पुस्तक है। इसी रचना पर आपको सन् १९१३ ई० मे एक लाख बीस हजार का "Nobl prize" अर्थात "नोबल पुरस्कार" प्राप्त हुआ था।

रवीन्द्रनाथ का विवाह १८८३ ई० में हो गया था। १९०२ मे आपकी धर्म पत्नी स्वर्ग सिधार गई तथा १९०५ ई० मे लडकी का देहान्त हो गया, पिता देवेन्द्रनाथ १९०५ मे स्वर्ग सिधार गये। १९०६ ई० मे उनका अत्यन्त प्रिय मधुर भाषी लडका भी चल बसा। इन सब घात-प्रत्याघातो का वर्णन आपकी 'स्मरण-शक्ति' तथा 'खेया' मे लक्षित होता है।

शनै-शनै आपकी ख्याति का शखनाद देश-देशातरो मे गूंजने लगा। आपकी कविता माधुरी सबको प्रभावित करने लगी। आपकी कृतियों के अनुवाद कई भाषाओ में प्रकाशित होने लगे। १९०८ मे आप फिर लन्दन दोबारा को गये। वहा के प्रमुख कवियों ने कवि की प्रतिभा को पहचाना। इगलैंड से रवीन्द्र अमेरिका गये। १९१३ मे वापिस लौटे। १९१४ में भारत सरकार ने आपको 'सर' की उपाधि से विभूषित किया। १९१४ में जलियां वाला गोली काण्ड के विरोध में आपने 'सर' की उपाधि वापिस लौटा दी।

कलकत्ता विश्वविद्यालय ने आपको 'डाक्टर ऑफ लिटरेचर' की उपाधि दी। आपकी 'गीताजलि' तथा 'साधना' दो सर्वोत्तम ग्रथ माने जाते हैं।

राजनीतिक क्षेत्र व स्वतत्रता सग्राम के आन्दोलन मे दादा भाई नौरोजी, लोकमान्य तिलक, महात्मा गाँधी आदि नेताओ को प्रमुख भाग लेते हुए देखकर आपकी आत्मा भी स्वतन्त्रता के लिए छटपटाने लगी। १६१६ के पजाब हत्याकाड से आप बहुत ही दुखी हुए और ईश्वर से प्रार्थना करते हुए कहने लगे 'हे भगवान! मेरा देश उन्नत तथा जाग्रत हो।' आपको गुरुदेव के नाम से सम्बोधित किया जाता था। शाति निकेतन अथवा विश्वभारती की स्थापना १६०१ में लाखो रुपये का प्रबन्ध करके बोलपुर नामक स्थान पर रवीन्द्रनाथ के सत्प्रयत्नो के द्वारा हुई थी। वह शिक्षालय निराले ही ढग का है। इसको देखने के लिए यात्री देश देशान्तर से आते हैं। यह सस्था भारत की अनुपम सम्पत्ति है। इसका मुख्य उद्देश्य ग्रामोद्योग सम्बन्धी सभी योजनाओ को कार्यान्वित करना है।

भारत के साहित्य शिरोमणि विश्वकवि श्री रवीन्द्रनाथ ठाकुर के विचारानुसार मृत्यु जीवन की एक सुनहली सध्या है। मृत्यु की भयानकता से निभय रवीन्द्र न ७ अगस्त १६४१ ई० को स्वर्गारोहण किया। यह दुखद समाचार समस्त विश्व मे व्याप्त हो गया और देश व्यापी शोक मनाया गया।

रवीन्द्र जैसी महान् विभूतियाँ जिस कार्य के लिए ससार मे आती हैं, उसे सम्पन्न करके अपनी यश-सुरभि से दिशाओ को व्याप्त करके तिरोहित हो जाती हैं। साहित्य मे सूर्य की भाँति देदीप्यमान ... उच्चकोटि के

महर्षि स्वामी दयानन्द सरस्वती

वर्तमान युग में भारत के कल्याण का विशेष कार्य गुजरात प्रान्त मे उत्पन्न विभूतियो द्वारा सम्पन्न हुआ है। विश्ववद्य बापू का जन्म भी गुजरात मे ही हुआ था। भारत को खण्डो मे विभाजित होने से बचाने वाले सरदार पटेल भी गुजरात के ही थे। स्वदेश तथा स्वदेशी की भावना को जागृत करने वाले महर्षि स्वामी दयानंद सरस्वती भी गुजराती थे। वे अपने युग के सब से वडे सुधारक और आर्य-सस्कृति के उद्धारक थे। सत्यपरायणता, निर्भीक अनुपम साहस के कारण विश्व के इतिहास मे जिन महापुरुषो का नाम स्वर्णाक्षरो मे अ कित रहेगा, उनमे स्वामी दयानद का स्थान वहुत ऊँचा है। इस महापुरुष ने आलस्य, अकर्मण्यता एव निराशादि विविध व्याधियो से ग्रसित देशवासियो को अपने कठिन परिश्रम से अपने प्राणो की वाजी लगाकर उनमे कर्मन्याता रूपी सजीवनी का सचार कर उन्हे पुन जीवित किया।

ससार परिवर्तनशील है। इतिहास इस बात का साक्षी है कि किस प्रकार सभ्य जातियाँ दासत्व को प्राप्त होती हैं और किस प्रकार महान आत्माओ द्वारा उनका पुनरुद्धार होता है। इसी तरह धर्म मे भी परिवर्तन होते रहते है। धार्मिक कृत्यो मे प्राचीन विचार धारा समा जाती है। १९वी शताब्दी के अन्त तक प्राचीन आर्य धर्म भी अन्ध-परम्परा और रूढिवाद का शिकार वन गया था। हिन्दू अपने धर्म के मूल तत्व को भूल गये थे। समाज से उदार भावना लुप्त हो गई थी। मनुष्य स्वार्थपरायण और सकुचित हृदय के हो गये थे। अस्त हिन्दू जनता ईसाई एव मुसलिम धर्म मे परिवर्ति हो रही थी। इस प्रकार की विषमता विद्वानो को वहुत खल रही थी। यद्यपि वगाल के राजा राममोहन राय में पर्याप्त ससोधन किया, परन्तु वह पाश्चात्य सभ्यता से प्रभावित थे, स्वामी दयानद ने ही जन-जागरण का पुण्य कार्य अपने हाथ मे लिया।

उनका जन्म मधुकाँटा नदी के किनारे मोरवी राज्य के कस्बे में सम्वत्

१८८१ मे हुग्रा था। मोरवी राज्य के ग्रन्तर्गत टकारा नामक ग्राम को ग्रापके जन्म स्थान होने का सौभाग्य प्राप्त है। ग्रापके पिताजी का नाम कर्षन जी था। कर्षन जी बडे भारी भूमिधर थे स्वामी का पहला नाम मूलशकर था। लोग इन्हें दयाल जी कहकर भी पुकारा करते थे। उस समय किसी को क्या पता था कि यह बालक समस्त भारतवर्ष को सचेत कर उसकी कीर्ति को ससार व्यापी बनाएगा। पाच वर्ष की ग्रवस्था मे बालक मूलशकर का विद्यारम्भ-सस्कार कराया गया। सस्कृत व्याकरण, ग्रमरकोश के साथ साथ यजुर्वेद का भी ग्रध्ययन करा गया। मूलशकर बचपन मे बडे ही कुशाग्र बुद्धि थे। इस लिए थोडे समय मे ही सस्कृत की ग्रच्छी योग्ता प्राप्त कर ली।

इनके पिता कट्टर शिवोपासक थे। इसलिए बालक मूलशकर को सच्ची धार्मिक शिक्षा मिली। १३ वर्ष की ग्रवस्था में शिवरात्रि महापर्व ग्राया। पिता के कहने पर मूलशकर बालक ने शिवरात्रि का व्रत रखा। सारे दिन शिवोपासना मे व्यतीत हुग्रा। रात्रि को जागरण किया। शिवभक्त तो ग्रर्द्ध-रात्रि के पश्चात् निद्रादेवी की गोद मे खुर्राटें भरने लगे, परन्तु बालक मूलशकर जागता रहा उन्होने देखा कि शिव-लिंग पर चूहे चढ़ ग्राए हैं ग्रौर मिष्टान खा रहे हैं। इस घटना से स्वामी जी का मन शंकाग्रो से घिर गया। उन्हें इस प्रकार की भक्ति पर ग्रनास्था हो गई। मूर्ति-पूजा प्रवचना प्रतीत होने लगी। इसलिए ग्रनशन तोडकर मूर्ति-पूजा का परित्याग कर दिया। १७ वर्ष की ग्रायु में उनकी बहन की मृत्यु हो गई। इस मृत्यु ने उन्हे मृत्यु जय बनाने का ग्रादेश दिया।

ग्रपनी बहिन की मृत्यु से उनके चित्त में वैराग्य पैदा हो गया। वे सोचने लगे—"ससार नश्वर हैं। इससे किस प्रकार छुटकारा प्राप्त हो सकता है ?" इस प्रकार की भावनाग्रो से युक्त देखकर पिता ने उन्हे विवाह के बन्धन मे जकडना चाहा, परन्तु वे बहुत ही सजग निकले। विवाहोत्सव से सुसज्जित घर का परित्याग करके ग्राप निकल भागे। ग्राम-ग्राम तथा नगर

नगर चलते हुए आप अहमदाबाद से बडौदा पहुँचे। संतों के सत्संग और विद्या विनोद मे ही आपका समय बीताया था। नर्मदा तट पर डेढ वर्ष व्यतीत किया। चौबिस वर्ष की आयु में चडोद गांव से डेढ कोस पर स्थित एक दक्षिण दण्डी स्वामी से भेंट हुई। सन्यास लेने के पश्चात् १९१२ मे ३१ वर्ष की आयु मे कुम्भ के मेले मे पधारे। कुम्भ के अनाचारो को देख उन्हे पौराणिक रीति-नीति से अरुचि हो गई और समाज की कुरुतियो को दूर करने का संकल्प किया।

सच्चे गुरु की खोज मे भिन्न-भिन्न स्थानो का भ्रमण करते हुए आप मथुरा मे स्वामी बिरजानद जी के पास पहुँचे। कार्तिक सुदी २, वि० सं० १९१७ को उनसे दीक्षा ग्रहण की। तग कोठरी मे रहकर बडे कठोर परिश्रम से विद्याध्ययन किया। योग्य गुरु योग्य शिष्य को पाकर धन्य हो गये। विदा होते समय गुरु दक्षिणा मे गुरु जी ने भारतवर्ष में वैदिक-धर्म के प्रचार की प्रतिज्ञा कराली तथा स्वामी दयानद जी ने उसे सहर्ष स्वीकार कर लिया।

स्वामी जी गुरु को दिए हुए वचनानुसार वैदिक धर्म के प्रचार मे जुट गए। हरिद्वार के कुम्भ मे 'पाखण्ड खण्डिनी पताका' लगाकर यात्रियो को धर्म का गूढ रहस्य समझाया। समस्त देश मे स्वामी जी की धूम मच गई। कुम्भ से लौटकर आपने समस्त भारतवर्ष के मुख्य-मुख्य स्थानो मे भ्रमण किया। आपने अपने सिद्धान्तो का सग्रह कर बम्बई में आर्य समाज की स्थापना की तथा उसके बाद वैदिक धर्म का डका सारे भारत मे बज उठा। भ्रमण करते करते जब आप शाहपुर पहूँचे, तो जोधपुर नरेश महाराज यशवन्तसिंह का निमत्रण मिला। वहां स्वामी जी के स्वागत का बडा ही उत्तम प्रबन्ध किया गया। दूसरे दिन आपका भाषण प्रारम्भ हुआ। महाराज स्वयमेव तीन बार दर्शनो को आये।

एक दिन स्वामी जी नरेश के निमन्त्रण पर राजमहल मे गए तो वहां राजा के पास एक वैश्या को बैठे हुए देखा देखा। स्वामी जी को अत्यन्त खेद हुआ और उन्होंने कहा 'राजन् वेश्या स्थान-स्थान पर भटकने वाली कुतिया

के समान हैं वीरशर्दूल का कुतिया से प्रेम करना और आसक्त होना सर्वथा अनुचित है। केसरी की कन्दरा मे ऐसी कलुषिता कूकरी के आगमन का क्या काम ? बस दुर्व्यसन को छोड देना चाहिए, जब वेश्या को इस बात का पता चला कि स्वामी जी ने मुझे कुतिया सदृश बताया है, तो उसकी छाती पर सांप लोटने लगा। उसके हृदय मे स्वामी जी से बदला लेने की भावना जागृत हो गई। रसोइयो से मिलकर दूध तथा भोजन मे विष मिलवा दिया। धीरे-धीरे विष शरीर मे फैल गया और स्वामी जी को पेट का दर्द अनुभव हुआ। बहुत उपचार किया, परन्तु कोई फल दृष्टिगोचर नही हुआ। स्वामी जी को आबू पर्वत पर ले जाया गया। महाराज यशवन्तसिंह तथा प्रतापसिंह बहुत ही दुखी हुए, परन्तु स्वामी जी ने सान्त्वना देकर उन्हे विदा कर दिया।

कार्तिक कृष्णा अमावस्या मगलवार को भक्तो मे पक्वान्न वितीर्ण किया गया। स्वामी जी ने क्षौर-कर्म इत्यादि करवाया तथा अपने सेवको को सम्बोधित करते हुए कहने लगे—'इस नाशवा क्षणभगुर शरीर का अब मैं परित्याग कर दूंगा। तुम अपने कर्तव्य-कर्म का पालन करते हुए आनन्द से रहो। ससार मे सयोग और वियोग का होना स्वाभाविक है'। देह पर सर्वत्र छाले पडे रहने पर भी आपका मुख प्रसन्न था।

अन्त मे दीपावली के शुभ अवसर पर ससार को प्रकाश से जगमगाता देखकर यह कर्मठ ब्रह्मचारी सन् १८८३ मे वेद-मन्त्रो का पाठ करते हुए अतिम समय मे 'हे सर्वशक्तिमान ईश्वर तेरी इच्छापूर्ण हो, कहकर इस ससार को छोड कर अनन्त ज्योति मे विलीन हो गया। हिन्दू जाति स्वामी जी के ऋण से कभी भी मुक्त नही हो सकती। वे प्राचीन सस्कृति और पद्धति के भक्त थे। आज के भारत के पुनरुद्धार तथा स्वतन्त्रता। प्राप्ति मे आपका बडा ही हाथ था।



लोकमान्य तिलक

हमारे राष्ट्र-निर्माण मे तिलक का स्थान सर्वप्रमुख है। तिलक ने स्वतन्त्रता को जन्मसिद्ध अधिकार बताकर देश के बच्चे-बच्चे मे स्वराज्य की भावना जागृत की थी। जब अंग्रेजी राज्य रूपी विषैले वृक्ष की जडे इतनी गहराई से जम गई थी कि उनको उखाडकर फेंकना कोई सुगम कार्य नहीं था तब तिलक जी ने इस कार्य को अपने ऊपर लिया। यह क्रान्ति का कार्य उनके सद्प्रयत्नो द्वारा शीघ्रातिशीघ्र होकर रहा।

कांग्रेस को राष्ट्रीय सस्था बनाने का श्रेय आपको ही है। आपके महान् प्रयत्नो से कांग्रेस जनता की प्रतिनिधि सस्था बनी। इससे पहले कांग्रेस के सदस्य वकील, जमीदार तथा सरकार द्वारा सम्मानित श्रीमन्त ही हुआ करते थे। वे केवल वर्ष भर मे एक बार एकत्रित होकर और 'God Save the King' का गीत गाकर तथा नौकरियो और धारासभाओ मे भारतीयो की सख्या मे अभिवृद्धि के एक दो प्रस्ताव पास करके विसर्जित हो जाते थे। इनका यही कार्य राजनीतिक कार्य माना जाता था। तिलक ने उन्हे अपना मन्तव्य बताया कि स्वराज्य मागने से नही, अपितु लडने से मिलता है। कांग्रेस मे तिलक के प्रवेश के बाद ही सस्था का ध्येय स्वराज्य प्राप्ति निर्धारित हुआ।

बाल गगाधर तिलक का जन्म महाराष्ट्र के रत्नगिरि जिले के एक गाव मे पण्डित गगाधर रामचन्द्र नाम के अध्यापक के घर मे हुआ था बाल्यकाल मे ही आपको अपने पिता का वियोग सहना पडा। माता ने कष्टो को सहन करके आपकी शिक्षा का प्रबन्ध किया। १८७९ मे आपने बी० ए० एल० एल० बी० परीक्षा पास कर ली। यद्यपि उन दिनो इस उपाधि का बडा ही मान था, इसके द्वारा सम्मान तथा धन दोनो ही प्राप्त किये जा सकते थे परन्तु आपने सेवा का ही मार्ग अपनाया।

वकालत का काम छोडकर लोकमान्य तिलक ने शिक्षा के क्षेत्र मे पदार्पण किया। इन दिनो पूना मे 'इगलिश स्कूल' नाम की एक शिक्षा सस्था

थी तभी तिलक उसके संचालकों के साथ मिल गये और नाममात्र का वेतन लेकर इसके संरक्षक बन गए। पाँच मित्रों के सहयोग से स्कूल का यश महाराष्ट्र मे फैल गया। स्कूल खोलने का ध्येय राजनीतिक चेतना जागृत करना था। परन्तु जब उन्हे अपना लक्ष्य पूरा होता नही दिखाई दिया तो आपने समाचार-पत्रो का सहारा लिया तथा 'केसरी' नाम के मराठी दैनिक और 'मराठा' नाम से अंग्रेजी साप्ताहिक समाचार-पत्रो को जन्म दिया।

अपने पत्रो द्वारा सरकार की अन्यायपूर्ण नीति की कटु आलोचना की सरकार ने 'केसरी' पर प्रतिबन्ध लगा दिया। इस कारण आपका यश और भी फैल गया। केसरी पत्र द्वारा तिलक जी ने कोल्हापुर के अंग्रेज दीवान की कडी निन्दा की। इसी अपराध मे आपको तथा आपके साथी आगरकर को पकड कर चार मास का दण्ड मिला। कारागार से मुक्त होकर आपने फर्गुसन कालिज दक्खिन एजुकेशनल सोसाइटी की स्थापना भी की, परन्तु मित्रों के साथ मतभेद होने के कारण आपने सोसाइटी से सम्बन्ध विच्छेद कर लिया तथा राजनीतिक क्षेत्र में उतर आए। महाराष्ट्र में चैतन्य की लहर दौड गई।

आपने महाराष्ट्र में शिवाजी जयन्ती मनाने का विशाल आयोजन किया, ताकि जनता मे देश-प्रेम, स्वतन्त्रता तथा स्वाभिमान के भाव जाग उठे। कांग्रेस के कार्यो मे आप अब बडी तत्परता से सहयोग देने लगे। पूना के १६०६ के कांग्रेस अधिवेशन के आप मन्त्री निर्वाचित हुए, किन्तु मतभेद के कारण त्यागपत्र दे दिया। बम्बई म्युनिसिपल कार्पोरेशन के सदस्य रहकर आपने 'केसरी' द्वारा १८९६ को फैली हुई प्लेग बीमारी के समय सरकार की फिर आलोचना की। अधिकारी वर्ग आपकी इस प्रकार की आलोचना से चिड गए तथा प्लेग कमिश्नर मि० रैण्ड की हत्या के अभियोग मे आपके लेखो को उत्तेजनात्मक ठहरा कर १६ मास की कैद का दण्ड सुना दिया गया। देश भर में असन्तोष की लहर दौड गई।

इसके पश्चात् आपने वंग-भग आन्दोलन में भाग लिया नरमदल तथा

गरमदल का विरोध आपसे बहुत बढ़ गया। श्रीमती एनीबेसेंट के साथ मिलकर Home Rule League की स्थापना की। आठ वर्ष तक आप इसी संस्था में काम करते रहे। कांग्रेस की बागडोर नरमदली नेताओं के हाथ में रही। सरकार ने गरम दल वालों की इस फूट से लाभ उठाकर कुचलना चाहा। १९०८ में खुदीराम बोस ने एक सरकारी अफसर पर बम फेंका। इस सम्बन्ध में आपके घर की भी तलाशी ली गई तथा एक कार्ड जिस पर कुछ 'फास्फोरस' सम्बन्धी बातें लिखी थीं मिला। इस छोटे अपराध पर आपका सम्बन्ध क्रान्तिकारी दल से स्थापित कर अंग्रेजी जजों ने आपको छः वर्ष के कालेपानी का दण्ड सुना दिया। भारतीय जनता के असंतोष एवं विद्रोह के कारण वह कालेपानी की सजा साधारण दण्ड में परिवर्तित हो गई। १९१४ में आप जेल से छूटे।

जिस समय आप जेल से मुक्त हुए, उस समय प्रथम महायुद्ध प्रारम्भ हो चुका था। नरमदल वाले नेता तथा गांधी जी पूर्णतया अंग्रेजों की सहायता कर रहे थे। तिलक जी इसके विरुद्ध थे। अन्त में दोनों दलों में समझौता हो गया। तिलक जी १९१६ के लखनऊ अधिवेशन में सम्मिलित हुए। इसमें तिलक जी का बड़ी धूमधाम से स्वागत हुआ। आपने इस अधिवेशन में बड़ा ही जोशीला भाषण देते हुए बताया 'स्वराज्य हमारा जन्म सिद्ध अधिकार है'। तिलक जी का वह भाषण इतिहास में अमर रहेगा।

भारतीय जनता की पुकार को भारत के शिष्टमण्डल द्वारा ब्रिटेन के लोकमत को भारत की स्वतन्त्रता के पक्ष में करने के लिए आपने प्रयत्न करना चाहा किन्तु भारत सरकार ने इस कार्य के लिए अनुमति न दी। इसी बीच एक अंग्रेज चिरौल ने 'Unrest in India' नामक पुस्तक में तिलक जी पर आरोप लगाए। आपने उस पत्रकार पर इंगलैंड में मुकदमा चलाया। यद्यपि आपको अभियोग में सफलता प्राप्त नहीं हुई, तो भी आपके विद्वत्तापूर्ण वक्तव्य की धाक अंग्रेज राजनीतिज्ञों पर इतनी पड़ गई कि स्वयं

शिरौल ने आपकी महानता को स्वीकार करके मुकद्दमे के अन्त में श्रद्धाञ्जलि दी।

जब आप इंगलैंड में थे, तो भारत सरकार ने रोलेट एक्ट पास करके भारतीयो पर अत्याचार तथा जुल्म की हद कर दी। इस एक्ट का विरोध सभी दलो ने किया। गांधी जी के नेतृत्व मे असहयोग आन्दोलन प्रारम्भ हो गया। इंगलैंड से आने पर आप कांग्रेस के अमृतसर अधिवेशन मे पहुँचे और वहां पर बडा ही प्रभावशाली भाषण दिया।

निरन्तर अथक परिश्रम तथा करावास की यन्त्रणाओ से आपका शरीर जर्जरित हो गया। जिस समय आपकी ६३ वी वर्षगाँठ का बम्बई में आयोजन हो रहा था, सहसा आपका स्वास्थ्य खराब हो गया। डाक्टरो ने बहुत ही प्रयत्न किए, परन्तु आप न बच सके। जुलाई की रात्रि को बारह बजकर चालीस मिनट पर आपका पंचभौतिक शरीर समाप्त हो गया। सब ओर निराशा के बादल मंडरा गए। अन्त्येष्टि क्रिया-कर्म संस्कार चौपाटी पर किया गया। वहां आज भी आपकी एक मूर्ति स्थापित है। मृत्यु के समय भी सतत अभ्यास और गीता-प्रेमी होने के कारण आपकी जिह्वा पर श्लोक था—

"परित्राणाय साधूना, विनाशाय च दुष्कृताम
धर्मसंस्थापनार्थाय, संभवामि युगे युगे।"

मांडले जेल मे आपने गीता पर एक हजार पृष्ठो का ग्रन्थ लिखा था। जो 'गीता रहस्य' नाम से प्रसिद्ध है। आप इतिहास के असाधारण विद्वान थे। राष्ट्रीय चेतना के उत्थान मे आपने बडा ही अनुपम कार्य किया। इसलिए राष्ट्र निर्माताओ में आपका स्थान बड़ा ही ऊंचा है।

लाला लाजपतराय

पंजाब ने सदियों स्वतन्त्रता के लिए प्रयत्न किया अतः पंजाब के वीर सपूतों ने अंग्रेजों के विरुद्ध भी युद्ध किया। पंजाब के नवयुवक चन्द्रशेखर आजाद और भगतसिंह जैसे देश भक्त और क्रांतिकारी उंगलियों पर गिने जा सकते हैं। इन सबके प्रेरक थे लाला लाजपतराय। लालाजी ने आर्यसमाज से प्रभावित होकर भारत के पुनर्निमाण के मार्ग का अनुसरण किया था। उस समय को सामने रखते हुए इनका प्रयत्न बड़ा ही प्रशंसनीय था।

लाला लाजपतराय का जन्म फिरोजपुर में हुआ था। उनके पिता श्री राधाकृष्ण अग्रवाल सभी धर्मों पर अधिकार रखते थे और विद्वान पिता का पुत्र भी पीछे नही था। सदैव कक्षा मे प्रथम आना और छात्रवृत्ति प्राप्त करना, कालिज की पढ़ाई अत्यन्त रुचि से करना, उसकी योग्यता का प्रमाण था। तभी से उनके हृदय मे सदा देश-प्रेम हिलोरें मारता था, इसके पश्चात् उन्होंने वकालत पास की और सामाजिक जीवन मे प्रवेश किया।

वे अच्छे वकील सिद्ध हुए। कालेज मे ही भाषण का गुण उनमे आ चुका था। अतः अपनी कुशाग्रबुद्धि, भाषणकला और प्रतिभा के कारण उनका समाज मे आदर होने लगा।

लाला जी आर्यसमाजी थे। बचपन से ही वे आर्यसमाज की गतिविधियों मे रुचि रखते थे, और डी० ए० वी० कालेज की स्थापना, उसमे अवैतनिक अध्यापन कार्य तथा आर्यसमाज का प्रचार ही उसके जीवन का लक्ष्य था। लाहौर का अनाथालय भी आपकी शुभकीर्ति का स्मारक था। उन्नीसवीं शताब्दी के अन्तिम वर्षों मे दुर्भिक्ष और कांगड़ा भूचाल के समय भी आपने पीड़ितों की अकथनीय सेवायें की थी।

राजनीतिक दृष्टि से भी लाला जी पंजाब कांग्रेस के सर्वश्रेष्ठ नेता थे। १९०५ मे भारतीय जनता की मांग को अंग्रेजी जनता तक पहुँचाने के लिए लाला जी तथा श्री गोखले इंगलैण्ड गए। इंगलैण्ड मे भारतीय भावनाओं का

प्रचार किया। अन्त में इगलैण्ड से लौटकर उन्होने स्पष्ट कर दिया कि आजादी मागने से नही मिलती यह शक्ति और सघर्ष से मिलती है।

वग-भग आन्दोलन प्रारम्भ हुआ, उन्हें माडले जेल भेज दिया गया। इसके उपरान्त काग्रेस के दो दल हो गए—एक गर्म दल तथा दूसरा नर्म दल। गर्म दल के लोग भारत की आजादी क्रान्ति और शस्त्र की झकार से प्राप्त करने के इच्छुक थे। इसके विपरीत नर्म दल वैधानिक रीति से तथा गाधी जी के नेतृत्व मे अहिंसात्मक ढग से स्वतत्रता प्राप्ति के लिए प्रयत्नशील था। सन् १९१४ मे लाला जी अमेरिका गए। इसी बीच लडाई छिड गई। लाला जी सदैव ही अग्रेजों की आखो खटकते रहे। वे उन्हें अपना सबसे भयानक शत्रु समझते थे।

पजाब के ऐतिहासिक जलियाँवाला बाग काण्ड ने विदेश मे बैठे लाला जी को स्वदेश लौटने के लिए व्याकुल कर दिया, किन्तु गोराशाही ने भयकर परिणाम के भय से उन्हे अनुमति न दी। अतः शेर को अपनी भूख मिटाने का अवसर न मिला। निदान पजाब केसरी को अमेरिका में पर्याप्त समय व्यतीत करना पडा। उन्होने उस अपूर्व अवसर का समुचित सदुपयोग किया। आपने लेख और भाषणो तथा बातचीत द्वारा भारत के स्वतन्त्रता सग्राम, भारतवासियो की करुणाजनक स्थिति और अग्रेज शासन के अत्याचारो से वहाँ की जनता को परिचित कराया। इस प्रकार लाला जी ने इस बीच में अमेरिका की सम्मति बहुत कुछ भारत के पक्ष मे कर ली थी। सन् १९१८ मे आप स्वदेश लौटे।

गाँधी जी के असहयोग आन्दोलन मे आपने भाग लिया और कारावास मे क्षय रोग से पीडित हो गए, कुछ दिनो पश्चात् आपने काग्रेस की हिन्दू विरोधी विचारधारा को ध्यान मे रखकर हिन्दू महासभा की सदस्यता ग्रहण की और १९२५ मे हिन्दू महासभा के प्रधान निर्वाचित हुए।

१९२८ में आए साइमन कमीशन का बहिष्कार किया। ३० अक्तूबर को साइमन कमीशन लाहौर पहुँचा। लाला जी तो साइमन कमीशन की

प्रतीक्षा ही कर रहे थे। उन्होने साइमन कमीशन का बहिष्कार करने के लिए जलूस का आयोजन किया। जन-समूह ने लालाजी के नेतृत्व में साइमन कमीशन विरोधी नारे लगाए। उसी समय मजिस्ट्रेट की आज्ञा से लाठी चार्ज हुआ और सबसे अधिक लाठियाँ लाला जी को मारी गई। फलस्वरूप १७वें दिन लाला जी स्वर्ग सिधारे, जिससे सारा देश सतप्त हो गया। किन्तु वह वीर तो अपना प्रण निभा चुका था, आज भी उनके वाक्य उतने ही ताजे हैं, जितने मृत्यु से पूर्व थे—

'मेरे सिर पर लगी प्रत्येक लाठी भारत के अग्रेजी साम्राज्य मे कील का काम करेगी और उसे चैन से न बैठने देगी'।

इतिहास उस कठोर सत्य का साक्षी है। भारत स्वतन्त्र हुआ, जो उन शहीदो के बलिदान और त्याग का ही फल हैं। लाला जी के संकेत पर पचनद के नवयुवक रक्त की नदिया बहा सकते थे। परन्तु उन्होने तो अहिसा का व्रत लिया था। सत्य तो यह है कि लाला लाजपतराय पजाब सरकार के हाथो शहीद हो गए। उनका बलिदान रणभूमि मे आहत वीरो की भाँति हुआ। जैसा वीरतापूर्वक जीवन था वैसी ही वीरतामयी मृत्यु भी हुई। वास्तव मे लाला जी का क्षेत्र बहुत ही व्यापक था। वे अच्छे सम्पादक, लेखक तथा वक्ता भी थे। लाहौर की 'Servents of the Peoples Society' आप की अक्षय कीर्ति की स्मारक है। पजाब मे आपका बडा आधिपत्य था। वे वास्तव मे पजाब केसरी थे।



क्राँतिदूत सुभाषचन्द्र बोस

किसी को जगाने के लिए आवाज लगाना ही बहुत होता है। किसी को हिला-डुला कर उठाया जा सकता है। किन्तु किसी-किसी की नीद को भगाने के लिए तो पूरा तूफान ही उठाना पडता है। भारत भी ऐसी ही गहरी नीद मे ऊँघ रहा था और जगाने के लिए कुछ लोग इसे आवाज लगा रहे थे, कुछ इसे हिला-डुला रहे थे, किन्तु बगाल का एक सपूत सोच रहा था कि जब तक एक भयकर तूफान न आयेगा इसकी आख न खुलेगी। इसने एक हुकार भर कर क्राति का शख फूँक दिया। हाथो मे अगारे लेकर वह आधी की तरह एक कोने से लेकर दूसरे कोने तक समस्त देश के ऊपर छा गया। भारत की आँख खुली। उसने देखा कि एक क्रान्तिदूत उसे सजग होने के लिए ललकार रहा है। देश मे जागरण हो गया और सब उस जागरणकर्ता सुभाषचन्द्र बोस के सकेतो पर नाचने लगे। वही एक व्यक्ति थे, जिन्होने भारत के सार्वजनिक जीवन मे एक बार नही, अनेक बार महात्मा गाँधी जैसे बडे नेता से टक्कर ली। उनकी नीति के कट्टर विरोधी भी उनकी दृढ़ता, स्पष्टवादिता और तेजस्विता की मुक्तकण्ठ से प्रशसा करते थे।

बाल्यकाल से ही सुभाषचन्द्र बोस का स्वभाव बडा ही विचित्र था। उडीसा की राजधानी कटक के एक उच्च कुल मे आपका जन्म हुआ था। आपके पिता रायबहादुर जानकीदास बोस कटक म्युनिसिपैलिटी तथा जिला बोर्ड के प्रधान तथा नगर के गण-मान्य वकीलो मे थे। नेताजी की माता श्रीमती प्रभावती बडी ही सीधी-सादी तथा धार्मिक विचारो की स्त्री थी। सुभाष की पाँच बहिन एव छ भाई थे। इन सबने अपने-अपने क्षेत्रो में पर्याप्त ख्याति प्राप्त की थी। सुभाष की प्रारम्भिक शिक्षा एक यूरोपियन स्कूल मे हुई। जीवन के अन्त तक वे ब्रह्मचारी रहे, उनके चरित्र पर कोई कलक नही लगा। मैट्रिक में सुभाष कलकत्ता यूनिवर्सिटी मे द्वितीय रहे और प्रेजीडेन्सी कालिज मे प्रवेश प्राप्त किया। कालिज में अग्रेज प्राध्यापक से झगडा हो गया, जिसके परिणामस्वरूप आपको वह कालिज छोडना पडा। उसके बाद आप स्कॉटिश चर्च कालिज

में प्रविष्ट हो गए और कलकत्ता विश्वविद्यालय से बी० ए० (आनर्स) की उपाधि प्राप्त की। १९१९ में वे सिविल सर्विस की परीक्षा पास करने के लिए इंग्लैंड गए तथा परीक्षा मे कठोर परिश्रम के बाद छ महीने मे ही चौथा स्थान प्राप्त कर उत्तीर्ण हो गए। परन्तु इस परिक्षा से कठोर एक और परीक्षा उनके सामने थी। उन्हे स्वतन्त्रता और परतन्त्रता मे एक को चुनना था और उन्होंने स्वतन्त्रता को ही चुना। बंगाल प्रान्त की उस महान् विभूति ने साम्राज्यवाद की शोषक मशीन का पुर्जा बनने से स्पष्ट इन्कार कर दिया। आपने भोगी बनने की अपेक्षा योगी होना श्रेयष्कर समझा।

सुभाष बाबू पर देशबन्धु श्रीदास का विशेष प्रभाव पडा। उनकी कर्मठता तथा विद्वत्ता देखकर देशबन्धु को उन पर पूरा विश्वास हो गया और इसलिए ये उनके सच्चे सहयोगी बन गए। सन् १९२५ के दिसम्बर मे स्वय-सेवको के सगठन कार्य में सर्वप्रथम इन्हे गिरफ्तार किया गया। 'प्रिंस आफ वेल्स' की यात्रा के बायकाट आयोजन में इन्होने भाग लिया। देशबन्धु द्वारा आयोजित स्वराज्य पार्टी के आयोजन मे पर्याप्त सहयोग दिया। २५ अक्तूबर को आतंकवाद को प्रोत्साहन देने के कारण गिरफ्तार करके माडले जेल भेज दिया गया। स्वास्थ्य बिगड जाने के कारण १७ मई सन् १९२७ को मुक्त कर दिए गए। उस समय दास बाबू की मृत्यु हो चुकी थी। जेल से मुक्त हो जाने के बाद मद्रास कांग्रेस के अध्यक्ष डा० अन्सारी ने उन्हे कांग्रेस का प्रधान मन्त्री नियुक्त किया।

सुभाष बाबू स्वभाव से विद्रोही और प्रतिवादी थे। इसलिए आप औप-निवेशिक स्वराज्य की योजना पर सहमत नहीं हुए। आप पूर्ण स्वराज्य के पक्षपाती थे। अगले साल कांग्रेस ने लाहौर मे यही प्रस्ताव सर्वसम्मति से पास किया जिसका सुभाष ने हृदय से स्वागत किया।

गांधी जी से विरोध होने पर भी आप उनके नेतृत्व के आंदोलनो में सहर्ष भाग लेते रहे। १९३० मे कानून भग करने पर आप पुन गिरफ्तार हुए। जेल में स्वास्थ्य खराब हो गया। स्वास्थ्य लाभ के लिए सरकार से विदेश जाने की अनुमति प्राप्त होने पर आप यूरोप चले गए। रोम की भी यात्रा

की। विदेश मे प्राय तीन-चार वर्ष रहकर वहाँ के वातावरण को भारतीयो के अनुकूल बना डाला।

यूरोप यात्रा की समाप्ति पर जब आप भारतवर्ष लौटे तो हरिपुरा कांग्रेस के प्रधान निर्वाचित हुए। कांग्रेस के सभापति पद से उन्होंने जो भाषण दिया वह ओजस्वी होने के साथ-साथ मौलिक भी था। आपने फैडरल योजना का तीव्र विरोध किया। अगले वर्ष के लिए कांग्रेस अध्यक्ष का निर्वाचन हुआ तो सुभाष बाबू डा० पट्टाभि सीतारममैया के विरुद्ध २०३ वोट से विजयी हो गए। उसी समय गांधी जी ने कांग्रेस छोडने की अपनी इच्छा प्रकट की। सुभाष बाबू ऐसा नही चाहते थे। इसलिए उन्होने कांग्रेस से त्याग पत्र दे दिया और अग्रगामी दल (Forward Block) का निर्माण कर लिया।

कुछ दिनो के पश्चात् भारत-रक्षा कानून के अतगर्त उन्हे फिर गिरफ्तार कर लिया गया। आपने आमरण अनशन की घोषणा कर दी। इसलिए जेल से मुक्त करके घर पर नजरबन्द कर दिया गया। बन्धन से मुक्त होने के बाद आपने बहुत सोच विचार कर समाधिस्थ होने की घोषणा कर दी। मौलवी का वेश बनाकर सब की आंखो मे धूल झोंक कर निकल गए तथा काबुल होते हुए जर्मनी पहुँच गए। वहाँ इन्होंने आजाद हिन्द सेना की नीव डाली और जापान की सहायता द्वारा ब्रह्मा तथा मलाया से अंग्रेजो को भगा दिया। स्वतन्त्रता प्राप्ति के लिए सैकडो लडके तथा लडकियो ने सुभाष को रक्त से हस्ताक्षर करके दिए। आजाद हिन्द फौज १९ राष्ट्रो द्वारा मान भी ली गई थी। सुभाष बाबू ने अपने सैनिको को कहा था—"तुम मुझे अपना खून दो, मैं तुम्हे आजादी दूंगा।" उन्होने वहा "जयहिन्द" और "दिल्ली चलो" का नारा लगाया था। ५ जुलाई १९४३ को सुभाष ने इसके नेतृत्व की बागडोर अपने हाथ मे ली। आजाद हिन्द फौज ने तिरगा झण्डा लेकर अंग्रेजी सेना पर आक्रमण किया। 'इम्फाल और अराकान' का पहाडियाँ आजाद हिन्द फौज के नारो से गुंजायमान हो गयी। १९४५ मे दूसरा आक्रमण किया गया, परन्तु जर्मनी की हार के साथ युद्ध का पासा ही पलट गया।

आजाद हिन्द फौज के सैनिक भी गिरफ्तार कर लिए गए। दुर्भाग्यवश सुभाष बाबू वायुयान द्वारा जब जापान को जा रहे थे तो मार्ग में जहाज में आग लग गई और आप भी उसके शिकार हो गए। परन्तु इस समाचार को सन्दिग्ध माना जा रहा है और समय-समय पर समाचार मिलते हैं कि नेताजी जीवित हैं।

उनके चेहरे पर दिव्य तेज था, मानो अभी किसी अदृश्य शिल्पी ने गढ़ा हो। उनके नेत्रो मे असीम प्रकाश तथा वाणी मे कडक तथा भावुकता थी, जो कायर पुरुष को भी पौरुष से युक्त कर देती थी। वास्तव मे वे भारत की उमगो तथा आकाक्षाओ की प्रतिमूर्ति थे। उनके भाषण शेर की गर्जन के समान थे, जिन्हे सुनकर ब्रिटिश साम्राज्यवादी गीदड की तरह डर जाया करते थे। उनमें विद्युत जैसी आकर्षण शक्ति विद्यमान थी। निश्चय ही वह भव्यमूर्ति भुलाने पर भी नहीं भुलाई जा सकती। वह तो भारतवासियो के हृदय पटल पर सदा-सदा के लिए अंकित हो गई है। वे जीवन पर्यन्त ब्रिटिश राज्य की आखो में खटकते रहे। वे तो ज्वालामुखी के सदृश थे। नेता जी भारत की आजादी लिए सच्चे क्रान्तिकारी दूत बनकर आये थे।



महात्मा गाँधी

भारत की पुण्य-भूमि मे कितने ही महापुरुषो ने जन्म लिया। राम कृष्ण, गोविन्द और शिवा, बुद्ध, कबीर और चैतन्य। सभी महापुरुषो ने भारत के गौरव को बढ़ाया। जिस युग में हमारा जन्म हुआ है, उस युग क महानतम व्यक्ति ने भी भारत मे ही जन्म लिया और भारत को ही नहीं अपितु ससार की पीडित मानवता को सत्य व अहिसा का अमोघ शस्त्र देकर विश्व

को शान्ति का पाठ पढाया। वह विश्ववन्द्य महात्मा गाधी जी थे। ऐसा सौभाग्य हमारे देश को ही प्राप्त है कि उसने एक ऐसी दिव्यात्मा को जन्म दिया जिसकी गणना सदियो तक ससार के श्रेष्ठतम पुरुषो मे की जाएगी।

काठियावाड के अन्तर्गत पोरबन्दर में एक सम्भ्रान्त और कुलीन गाधी परिवार निवास करता था। कर्मचन्द गाधी उस परिवार के प्रतिष्ठित व्यक्ति थे। वे पहले पोरबन्दर, फिर राजकोट और बीकानेर राज्य मे दीवान-पद पर रहे। उनकी पत्नी पुतलीबाई बडी साधु और धर्मनिष्ठ स्वभाव वाली थीं। इसी दम्पति के यहा २ अक्तूबर सन् १८६९ को बालक मोहनदास गाधी का जन्म हुआ। माता की आस्तिकता तथा सत्यपरायणता की बडी गहरी छाप बालक पर पडी। बाल्यकाल मे साधारण शिक्षा हुई। बुद्धि भी विशेष तीव्र न थी। सकोचशील होने के कारण वे और भी अधिक साधारण श्रेणी के प्रतीत होते थे, किन्तु सत्यनिष्ठ और माता-पिता की भाँति आपके आकर्षक गुण थे। कुछ मित्रो की संगति से सिगरेट पीने का शौक लगा था। फिर चोरी भी की, परन्तु पिता के सामने अपने अपराध को स्वीकार करके पश्चात्ताप किया।

गाधी जी बचपन मे बडे शान्त और सरल प्रवृत्ति के थे। किसी से बात करना इनको सुहाता न था। इन्होने मैट्रिक पास किया और इनके कुटुम्बियों ने केवल १३ वर्ष की आयु मे इनका विवाह कर दिया। इनको बैरिस्ट्री पास करने के लिए विलायत भेज दिया गया। विलायत मे इन्होने पढ़ाई के साथ विदेशी सभ्यता और सस्कृति के सभी अ गो और उपगो मे निपुणता प्राप्त की। नृत्य, सगीत आदि की भी शिक्षा ली, किन्तु भावावेश मे ही और कुछ समय पश्चात् उसे अधूरा छोड दिया।

भारत लौटने पर आपने अपनी वकालत आरम्भ की और एक मुकदमे के लिए दक्षिणी अफ्रीका को प्रस्थान किया। वहाँ पर उन्होंने दक्षिण अफ्रीका के भारतीयो की दयनीय दशा देखी—भारतीयो के साथ पशुओ जैसा व्यवहार किया जाता था। गोरो और कालो के भेद ने गाधी के हृदय मे वह ज्वाला उत्पन्न की, जिसने समय आने पर गोरो का भारत से सदा के लिए बिस्तर

गोल कर जाने को विवश कर दिया। गाधीजी ने वैधानिक ढग से युद्ध छेड दिया और नवीन, किन्तु अमोघ सत्याग्रह का शस्त्र अपनाया।

दक्षिण अफ्रीका में गाँवी जी जन-प्रिय तो हो ही चुके थे, फिर भारतीय राजनीति भी मानो उसका स्वागत करने को तैयार खडी थी। लोकमान्य तिलक और गोखले भी मैदान में थे। गाधी जी भारतीय स्वतन्त्रता के वीर सेनानी बन गए और शनै शनै भारतीय राजनीति के अगुआ बन गए।

सन् १९१४ के महायुद्ध में भारत को स्वतन्त्रता देने की शर्त पर गांधी जी ने ब्रिटिश सरकार को सहयोग दिया। किन्तु अग्रेजो ने भारत को रौलेट एक्ट और जलिया वाला काण्ड आदि ही पुरस्कार स्वरूप दिए।

नमक-कर के पश्चात् आपको १९३१ मे गोलमेज कान्फ्रेंस में आमन्त्रित किया गया। १९३८ में आपकी सहमति से कॉंग्रेस ने विभिन्न प्रान्तो मे अपने मन्त्रिमण्डल बनाए और १९३९ के महायुद्ध मे भारतीयो की सहमति लिए बिना अग्रेजो ने भारत को युद्ध मे सम्मिलित राष्ट्र घोषित कर दिया। आप साम्प्रदायिकता के कट्टर शत्रु थे। आपने प्राणो की बाजी लगाकर साम्प्रदायिक आग को शान्त किया।

किन्तु कुछ व्यक्तियो के हृदय की दुष्प्रवृत्ति शान्त न हुई और उनकी दैनिक प्रार्थना में किसी नवयुवक ने बम फेंका। गांधी जी तो बुद्ध की भाति ही थे। वह तो क्राइस्ट थे। उन्होंने उसे क्षमा कर दिया और दस ही दिन के बाद ३० जनवरी को भारत मे घोर काली रात्रि की भाँति चारों ओर अधेरा छा गया और हुआ वही जो जीसस क्राइस्ट ईसा मसीह और सुकरात तथा मसूर के साथ हुआ था। एक नासमझ हिन्दू नवयुवक नाथूराम गोडसे ने रिवाल्वर की तीन गोलियो से भारत के महान् सत, विश्व की पीडित मानवता के एकमात्र सहारे और विश्व के महानतम व्यक्ति को इस ससार से विदा कर दिया। जवाहरलाल नेहरू के शब्दो मे प्रकाश बुझा नहीं क्योंकि यह तो लाखों, हजारो व्यक्तियो के हृदय को प्रकाशित कर चुका था।

गांधी जी नेता, विचारक और आध्यात्मिक पुरुष थे। वह हमें स्वतन्त्र

कर गए ससार को शान्ति और सत्य का मार्ग बता गए तथा भारत की कीर्ति को विश्व में फैला गए। उनकी मृत्यु से ससार के सभी झण्डे झुक गए, सभी ने उनको श्रद्धाजलिया दीं। वे अमर हो गए और भारत की कीर्ति को अमर कर गए। वे इस युग के सबसे महान् पुरुष थे। शारीरिक गठन के नाते अत्यन्त दुर्बल थे परन्त उनकी आकृति में सब प्रकार का प्रभावशाली आकर्षक गुण प्रकट होता था। वे अपने लक्ष्य से अच्छी तरह परिचित थे तथा उन्हें अपने ऊपर अगाध विश्वास था। उन्होने शताब्दियो से सोये हुए भारतवर्ष को उत्थान किया था। देश मे आत्म सम्मान की लहर दौडाई। आपका रहन-सहन अत्यन्त ही सीधा-सादा था। आप उच्चकोटि के सुधारक थे। सत्य तथा अहिंसा के पक्षपाती थे। आपका चरित्र केवल भारतवासियो के लिए ही नहीं अपितु विदेशियों के लिए भी अनुकरणीय है। भारत को एक महान् राष्ट्र बनाने वाले आप ही थे। भारत की सूखी नसो मे रक्त का सचार करने वाले आप ही थे। आप भारत के हृदय सम्राट थे और रहेगे। आपके जन्म से भारत को महान् गौरव प्राप्त हुआ है। आपकी अन्तरात्मा देश के दलित कण-कण में व्याप्त है। भारतीय सस्कृति का मूलमन्त्र केवल इन्हीं के प्रसाद का एकमात्र आधार हैं नि.सन्देह ऐसे कर्मयोगी को उत्पन्न कर भारत माता सदैव पूज्य-दृष्टि से देखी जायेगी।

सरदार वल्लभभाई पटेल

हमारे देश को यदि सरदार पटेल जैसे लोह पुरुष प्राप्त न होते तो हम स्वतन्त्रता के सग्राम मे इतनी शीघ्रता से विजय का मुख न देख सकते और न ही प्राप्त की हुई स्वतन्त्रता की सम्यक प्रकार से रक्षा कर सकते थे। हमारा प्यारा भारतवष भिन्न भिन्न राज्यो एव प्रान्तो में खड-खड हो जाता। सरदार पटेल की चाणक्य नीति ने उस समय की अराजकता और प्रान्तीय

विप्लवो को बडी ही विलक्षणता से हल किया। ऐसे ही महान् पुरुषो द्वारा राष्ट्र का निर्माण हुआ करता है। भारत मे श्री जवाहरलाल नेहरू की उच्च विचारधारा के साथ सरदार पटेल की क्रियात्मक नीति का बडा ही सुन्दर समन्वय हुआ, जो कि हमारे राष्ट्रीय इतिहास के लिए एक अमर वरदान सिद्ध हुआ।

सरदार पटेल का जन्म गुजरात प्रान्त मे नाडियाद के निकट करमसद गाँव मे एक किसान परिवार मे हुआ था। आपके पिता झवेर भाई ने झाँसी की रानी की सेना में अंग्रेजो के विरुद्ध १८५७ के गदर मे भाग लिया था। झवेर भाई ६० वर्ष तक जीवित रहे और उस अवस्था मे भी कच्चे चावल और ज्वार खाकर उन्हे पचा सकते थे। माता लाडबाई ८० वर्ष की होने पर भी चर्खा चलाती थीं। वल्लभ भाई की अपने अध्यापको से नहीं बनती थी। आपका विवाह झवेरबाई नाम की बालिका के साथ मैट्रिक उत्तीर्ण करने से पहले ही हो गया था। इनकी धर्मपत्नी डाह्या भाई पटेल नामक पुत्र और मणिबेन नामक पुत्री को छोडकर परलोक गामिनी हो गई। २२ वर्ष की अवस्था में पटेल ने मैट्रिक परीक्षा उत्तीर्ण कर ली और वकील की हैसियत से काम करना प्रारम्भ कर दिया। आपकी वकालत बडी धूमधाम से चल निकली। गोधरा मे दो वर्ष वकालत करने के बाद यह अपने भाई विट्ठल भाई के पास बोरसद चले गए। फौजदारी मे यह जोडी अनुपम थी। अन्त मे अपने संचित धन से आप इगलैंड गए और वहाँ से बैरिस्ट्री पास कर आए और खूब धन तथा यश कमाया।

महात्मा गाँधी जी की अहिंसा को ये अव्यवहारिक बताया करते थे। प्रारम्भ मे इनको गाँधी जी का सत्याग्रह सिद्धान्त बेकार प्रतीत होता था, परन्तु बाद मे ये गाँधी जी के अनन्य भक्त बन गए। महात्मा जी के अनुयायी बनकर देश सेवा का व्रत ले लिया, और यह घोषणा कर दी—"देश को तभी स्वतन्त्रता मिलेगी जब सैकडो युवक सन्यासी बनकर देश सेवा के क्षेत्र मे बढेंगे।"

गोधरा के कांग्रेस अधिवेशन के आप सयोजक मन्त्री बने तथा उत्साह

पूर्वक कार्य सम्पन्न किया। दो वर्ष बाद वकालत छोड़कर देश सेवा मे संलग्न हो गये। महात्मा जी उनकी अनुमति के बिना कोई काम नहीं करते थे। उन्होने खेडा सत्याग्रह को सफल बनाने के लिए सम्पूर्ण शक्ति लगा दी। गाँधी जी ने अपनी 'आत्मकथा' मे लिखा है—"मेरी राय मे सत्याग्रह की बडी सफलता यह है कि वल्लभ भाई मुझे मिले।" इसके बाद वे महात्मा जी के दाहिने हाथ बनकर ही देश की राजनीति मे कार्य करते रहे।

सरदार वल्लभ भाई पटेल मे कार्यकर्ताओ को संगठित करने की अद्भुत योग्यता थी। खेडा, जोरसद तथा बारदोली के सत्याग्रह आपकी योग्यता की कसौटी है। सर्वप्रथम तो उन्होंने छोटे-छोटे सत्याग्रह का ही संचालन किया जिसमे उनकी ख्याति गुजरात प्रान्त तक ही सीमित रही। बारदौली के सत्याग्रह की सफलता से सरदार की ख्याति देश के कोने-कोने में व्याप्त हो गई। बारदौली की विजय के पश्चात सरदार की गणना समस्त भारत के अग्रणी नेताओ में होने लगी तथा बापू जी ने इसी सत्याग्रह की विजय के उपलक्ष मे आपको 'सरदार' की उपाधि से विभूषित किया। वास्तव में कांग्रेस का सुदृढ संस्था बनाने तथा उसके आन्तरिक मामलो को सुलझाने मे जितना अधिक हाथ आपका था, उतना अन्य किसी व्यक्ति का नहीं। गाँधी जी ने राष्ट्रीय आन्दोलन को चेतना तथा स्फूर्ति प्रदान की, नेहरू द्वारा उसकी विदेश नीति का निर्माण हुआ तथा सरदार ने उसके आन्तरिक भाग को परि-पुष्ट किया।

साबरमती आश्रय मे कांग्रस कार्य समिति की बैठक हुई, जिसमें नमक के कानून तोडकर सत्याग्रह करने का निश्चय किया गया। नमक सत्याग्रह के लिए ऐतिहासिक 'डांडी यात्रा' प्रारम्भ हुई। मोतीलाल जी इसके डिक्टेटर चुने गए। उनके बाद सरदार पटेल डिक्टेटर चुने गए। बम्बई इस आन्दोलन का केन्द्र घोषित किया गया। सत्याग्रह में लाठी चार्ज हुआ, परन्तु लोग तनिक भी अपने स्थानो से नही हटे। सरदार पटेल और दो महिलाएँ गिरफ्तार करली गई।

सत्याग्रहो की अपूर्व सफलता के कारण ही आपको कराची कांग्रेस अधिवेशन का सभापति निर्वाचित किया गया। इस अधिवेशन मे एक दो प्रस्ताव स्वीकृत हुए। यही पर राष्ट्रीय पताका का स्वरूप निर्धारित किया गया। आपकी स्मृति वैधानिक युद्ध के सूत्रकार होने के रूप मे विशेष रूप से की जाती है।

योग्य सगठन कर्ता होने के साथ आप कुशल तथा योग्य शासक भी थे। सन् १९३५ मे शासन सुधार सम्बन्धी घोषणा के वाद आपने सम्पूर्ण भारत का दौरा कर कांग्रेस को चुनावो में सफल वनाया। सन् १९४२ मे गाँधी जी ने स्वतन्त्रता के अन्तिम युद्ध की घोषणा की, तव आपने इसमे भी पूर्ण सहयोग दिया। १५ जून १९४५ को आप अन्य नेताओ सहित कारागार से मुक्त किए गए। आपने देखा कि अग्रेज भारत को पूर्ण स्वतन्त्र करने का दृढ सकल्प किय वैठे हैं, परन्तु मुस्लिम लोग मार्ग मे रोडा अटका रहे है। जिन्ना साहव ने जव यह कहा कि—"यदि मुसलमानो की स्वीकृति के विना स्वतन्त्रता दी गई तो तलवारें चल जाएँगी और खून की नदियाँ वह जाएगी।" तव आपने जनता को सचेत किया कि आत्म-रक्षा के लिए तलवार उठाना हिंसा नही।

स्वतन्त्रता प्राप्त होने के वाद गृहमन्त्री रहकर देश की स्थिति को जिस योग्यता के साथ सम्भाला, उससे विदेशी लोग भी आपकी शासन सम्वन्धी योग्यता का लोहा मानने लगे। वात भी ठीक ही थी। स्वाधीनता मिलने के वाद यह भय था कि देश मे विप्लव हो जाएगा, रियासतें अपना शासन स्थापित करेंगी तथा मुस्लिम जनता विद्रोह कर देगी, परन्तु सरदार ने इन विष-वृक्षो के वीजो के अकुरित होने से पूर्व ही उन पर तुषारापात कर दिया। ६०० के लगभग रियासतो को एक-एक करके केन्द्रीय सरकार मे सम्मिलित कर लिया। देखने वालो को ऐसा प्रतीत हुआ मानो यह किसी जादू का परिणाम हो। आपने इस असम्भव काय को सम्भव करके दिखा दिया। हैदरावाद को सही मार्ग पर पुलिस कार्यवाही करके लाने का श्रेय आपको ही

है। परन्तु दूर्भाग्यवश स्वास्थ्य खराब हो जाने से भारत का यह तेजस्वी पुरुष १५ दिसम्बर सन् १९५० को स्वर्गवास हो गया।

आज भारत का इतना भव्य और विशाल रूप दृष्टिगोचर हो रहा है, वह आपका ही निर्माण किया हुआ है। बड़े-बड़े सम्राटो के द्वारा जो कार्य सम्पन्न नही हो सका, वह आपने थोडे से समय मे ही कर दिखाया। महात्मा गांधी के साथ-साथ आपका नाम भी चिरस्मरणीय रहेगा। इन्ही स्तम्भो पर तो नये राष्ट्र का भवन निर्माण होना है। वास्तव मे बात यह है कि इस वीर ने जो काम हाथ मे लिया, उसे कभी अधूरा नही छोडा। विघ्न बाधाओ को सतत कुचलते हुए सदैव अग्रसर होना इस वीर का ध्येय रहा। धन्य है वह देश, जहा ऐसी वीर आत्माएँ प्रकट होती हैं। धन्य है वह माता जो ऐसे देश-भक्तो को जन्म देती है। धन्य है वह जन्म-भूमि, जहाँ ऐसे महान् व्यक्तित्व को धारण करने वाले पुरुषो ने अपनी लीलाएँ कीं।



भूतपूर्व राष्ट्रपति डा० राजेन्द्र प्रसाद

भारतीय सर्व-प्रभुत्व-सत्ता सम्पन्न गणतन्त्र के प्रथम राष्ट्रपति डा० राजेन्द्र प्रसाद ने बिहार प्रान्त के सारन नामक ग्राम के एक जमीदार घराने मे ३ दिसम्बर सन् १८८४ को जन्म लिया। बाल्यकाल से ही इनकी बुद्धि तीव्र थी। सन् १९०२ मे बाबू राजेन्द्र प्रसाद मैट्रिक की परिक्षा मे प्रथम आए। इसके पश्चात् कलकत्ते के प्रसिद्ध विद्यालय प्रेजीडेन्सी कालिज में इन्होंने प्रवेश ग्रहण किया, और वकालत की परीक्षा मे उत्तीर्ण हुए।

डा० राजेन्द्र प्रसाद ने कलकत्ता मे ही वकालत प्रारम्भ की किन्तु यह अधिक सफलता प्राप्त न कर सके। सौभाग्यवश पटना में हाईकोर्ट की स्थापना से इन्होंने कलकत्ता त्याग दिया और पटना मे कार्य प्रारम्भ किया।

अपने सरल स्वभाव तथा तीव्र बुद्धि से इन्होंने पटना हाईकोर्ट में अपना स्थान बना लिया। यह पटना हाईकोर्ट के प्रमुख वकीलो मे गिने जाने लगे।

डा० साहब के मन मे कालेज जीवन मे ही देशभक्ति के भाव अकुरित होने लगे थे। विशेषकर गोखले के विचारो का उन पर बहुत गहरा प्रभाव पडा। १९१८ मे पटना विश्वविद्यालय को स्थापना हुई और ये उसके फेलो नियुक्त हुए।

महात्मा गाधी ने १९१७ मे बिहार के किसानो की सहायता से सरकार के विरुद्ध आन्दोलन किया। महात्मा जी के प्रभाव से डा० राजेन्द्र-प्रसाद ने अपनी सेवाएँ गाधीजी को अर्पित की और गाँधीजी ने इनको कार्य सौंप दिया। जिस क्षमता और कुशलता से इन्होंने आन्दोलन के कार्य को चलाया, उसी से प्रभावित होकर गाधी जी ने इन्हे एक विश्वस्त तथा सच्चे कार्यकर्ता के रूप मे ग्रहण किया। तभी से राजेन्द्र प्रसाद जी ने भारतीय राजनीतिक गतिविधियो में भाग लेना प्रारम्भ कर दिया।

अगले ही वर्ष अग्रेजो ने भारत मे रौलेट एक्ट जैसा शोषण करने वाला कानून लागू किया और सारे देश मे इसके विरोध का निश्चय किया। बिहार प्रान्त का नेतृत्व युवक राजेन्द्र बाबू के कन्धो पर आ पडा। इन्होंने सभी व्यवसायों को त्याग कर आन्दोलन को बडाया। इससे कांग्रेस हाई कमाण्ड ने इनको बिहार अग्रगण्य के रूप में स्वीकार किया। असहयोग तथा सविनय अवज्ञा भग आन्दोलन में बिहार किसी भी प्रान्त से पीछे नहीं रहा। राजेन्द्र बाबू के सरल स्वभाव से प्रेरित होकर, गाधी जी की पुकार पर लोगों ने जेलो को भर दिया। स्वय राजेन्द्र प्रसाद किसी से पीछे न रहे और अनेक बार जेल यात्रा की।

अग्रेज सरकार भी राजेन्द्र बाबू से प्रभावित थी। यह बिहार के लोक-प्रिय नेता थे। इनकी आवाज पर बिहार की जनता के कान खडे हो जाते थे। वे अपने बाबू के पीछे प्राण तक देने को तैयार थे। सन् १९३४ में बिहार में भूकम्प आया। करोडो रुपये की हानि हुई। लोग घबरा गए और ब्रिटिश

सरकार ने राजेन्द्र बाबू को रिहा कर दिया। राजेन्द्र बाबू ने विपदग्रस्त क्षेत्र में जनता की सभी प्रकार से सेवा की और जनता के हृदय सम्राट बन गए।

राजेन्द्र बाबू को इलाहाबाद यूनिवर्सिटी ने (डा० आफ लॉ) कानून के डाक्टर की उपाधि से विभूषित किया। शिक्षा के क्षेत्र में राजेन्द्र प्रसाद का अत्यन्त आदर किया जाता है।

१५ अगस्त सन् १९४७ को भारत ने स्वतन्त्रता प्राप्त की। आप उसी समय केन्द्रीय खाद्य के पद पर नियुक्त हुए। इसके उपरान्त भारत में विधान सभा की स्थापना हुई और उसका अध्यक्ष चुना गया। आपकी अध्यक्षता मे भारत के पवित्र संविधान का निर्माण हुआ। भारत का विधान संसार के सभी विधानो में श्रेष्ठ है। इसके निर्माण में आपका विशेष हाथ है। गांधीवादी और पूर्ण भारती होने के कारण आपको सभी मतों सम्प्रदायों तथा पार्टियो का प्रतिनिधित्व प्राप्त था।

२६ जनवरी १९५२ ई० को भारत सर्वसत्ता-सम्पन्न स्वतन्त्र राष्ट्र घोषित किया। भारत में गणराज्य को स्थापना हुई और उसी समय भारतीय जनता ने राजेन्द्र बाबू को प्रथम राष्ट्रपति के पद पर आसीन किया, गांधी जी की इच्छा थी कि प्रधान अथवा राष्ट्रपति कोई ग्रामीण किसान होना चाहिए, क्योंकि वही हमारा सच्चा प्रतिनिधि हो सकता है। गांधी जी की इच्छा पूर्ण हुई और सारन गांव का निवासी एक किसान, किन्तु असाधारण क्षमता और योग्यता प्राप्त, राजेन्द्रप्रसाद ही हमारे भारत सम्राट बने। तब से आप की ख्याति विश्व भर मे हो गई।

राजेन्द्र प्रसाद सच्चे भारतीय हैं। वे भारतीय संस्कृति तथा धर्म के पोषक है। नित्य ईश्वरोपासना करते है और सनातन विधि से धर्म का अनुष्ठान करते हैं। वास्तव मे भारत आत्मा ही उनमे निवास करती है। कई बार उन्हें कांग्रेस हाई कमाण्ड तथा प्रधानमंत्री पण्डित नेहरू आदि नेताओ से लोहा लेना पड़ता है। आपने हिन्दू कोड बिल को सरकार के विरोध के उपरान्त भी रद्द कराया। यह आपकी निर्भयता का परिचायक है।

राजेन्द्र बाबू सच्चे गाधीवादी हैं। आज गाधीजी के अनुयायी होने का दावा तो सभी खद्दरधारी व्यक्ति करते है, किन्तु गाधी जी के मार्ग पर अनुसरण करने वाले सज्जन अति अल्प हैं। राजेन्द्र प्रसाद उनमे सर्वश्रेष्ठ हैं। वह राजनीति मे रहकर भी दल बन्दी ऊप-- -- हुए हैं। सभी दल उनकी प्रशंसा करते हैं राष्ट्रपति राजेन्द्र प्रसाद मे राष्ट्र का प्रतिनिधित्व करने के सभी गुण विद्यमान हैं। आपको लोग अजातशत्रु कहते है।। १० वर्ष तक राष्ट्रपति के पद पर कार्यकर, १९६२ मे भारत के सुयोग्य शिक्षा शास्त्री डा० राधा कृष्णन के हाथो कार्यभार सौंप कर आप आजकल सदाकत आश्रम में शेष जीवन व्यतीत कर रहे हैं। सभी भारतीयो की यह कामना है कि ईश्वर आपको चिरायु करे।



आदर्श महिला श्रीमति 'एनी बेसेंट'

श्रीमति 'एनी बेसेण्ट' का जन्म पहली अक्तूबर सन् १८४७ ई० को एक मध्य वर्ग के घरान में हुआ था। इनके पिता विलियम पेगवुड आइरिश अर्थात् आयरलैंड द्वीप के रहने वाले थे, परन्तु व्यवसायवश यह इगलैंड की राजधानी लन्दन में ही रहा करते थे। मिस्टर वुड जिनका कार्य डाक्टरी द्वारा धनोपार्जन कर अपना जीवन निर्वाह करना था तथा डाक्टरी सम्बन्धी ग्रन्थो के अध्ययन मे रत रहना कुछ स्वाभाविक सा ही था, वह अपने विषय की पुस्तको के अतिरिक्त अन्य विषय के शास्त्रों मे भी अत्यधिक रुचि रखते थे। इसी कारण यह डाक्टरी के अतिरिक्त गणित, दर्शन शास्त्र एव प्राचीन व अर्वाचीन भाषाओ में बडे योग्य थे।

श्रीमती एनी बेसेण्ट की माता प्रोटेस्टेण्ट धर्मानुयायिनी थीं और अपने धर्म मे दृढ विश्वास बनाए हुए थी। लेकिन 'सगति की महिमा अपार' वाली कहावतानुसार मिस्टर वुड के सम्पर्क से उनके विचार अन्धविश्वास को तिलाजलि दे, स्वतन्त्र तथा औदार्य्यपूर्ण हो गए और वह स्वतन्त्र लेखको के

ग्रन्थ पढने मे रत रहने लगी। उक्त गुणो के स्वामी माता-पिता मे से यदि एनी बेसेण्ट जैसी सुपुत्री उत्पन्न हो तो कोई आश्चर्य की बात नही। अपनी माता के अपरिमित प्रेम तथा अपूर्व उत्साह का वर्णन करते हुए एनी बेसेण्ट ने लिखा है कि ससार मे कोई भी सुख उस सुख की समानता नही कर सकता जो माता की गोद मे बैठने से प्राप्त होता है। सत्य भी है —

"जननी जन्मभूमिश्च स्वर्गादपिगरीयसी"

सौभाग्यवश कुमारी वुड को थोडी ही अवस्था मे देश भ्रमण करने का अवसर प्राप्त हुआ। अपनी शिक्षिका के साथ यह फ्रास तथा जर्मनी मे भी गई। वहाँ की वास्तविक स्थिति से परिचित होने के साथ-साथ यहा की भाषाओं के लिखने पढ़ने का भी ज्ञान उन्होने प्राप्त किया। यद्यपि स्वतन्त्रता का प्रथम पाठ यह अपनी माता से पढ चुकी थीं किन्तु इस भ्रमण के कारण यह और भी पुष्ट हो गया। इस भ्रमण द्वारा प्राप्त अनुभवों ने ही इनके मनमन्दिर में स्वतन्त्रता देवी की प्रतिमा की स्थापना की जिसकी पूजा अपूर्व निर्भीकता के साथ यह सदैव करती रही।

श्रीमती एनी बेसेण्ट की शिक्षा १६ वर्ष की आयु मे समाप्त होने पश्चात् इनका परिचय मिस्टर फ्रैंक बेसेण्ट से हो गया जिनसे कुछ दिनों पश्चात् विवाह करके यह कुमारी वुड से श्रीमती एनी बेसेण्ट बन गई। विवाह-सूत्र ने इन दोनों को एक कर देने का प्रयत्न किया किन्तु पूर्ण सफलता न हुई और इनके विचारो की भिन्नता बनी रही। सन्तान रूप मे इनका एक लडका व एक लडकी उत्पन्न हुई किन्तु दुर्भाग्यवश लडकी अस्वस्थ रहने लगी और लडका परलोक सिधार गया जिसके फलस्वरूप श्रीमती एनी बेसेण्ट का ईश्वर से विश्वास उठ गया और गिर्जे आदि मे न जाकर पूर्ण नास्तिक बन गई। इसके पश्चात् इन्होने अपना ध्येय सत्य विचार, सत्य वचन एव सत्य आचरण करना ही बना लिया।

इन्ही दिनो इनका परिचय 'चार्ल्स ब्रैडला' से हुआ और यह "नेशनल सैकुलर सोसाइटी" की सदस्या बन गयी। इनका परिचय मिस्टर स्काट से भी

हुआ जिन्होने इनके लिए पुस्तकालय भी खोल दिया। जिसके फलस्वरूप इनकी रुचि ग्रन्थ रचना की ओर आकर्षित हो गई। ईश्वर के प्रति नास्तिक का रूप भी इनका अत्यधिक सौन्दर्यमय है। कारण कि नास्तिक होने पर भी अशिक्षितो तथा अनुदारो की भाति कभी ईश्वर के अस्तित्व के विषय मे इन्होने व इनके सहयोगी मिस्टर 'चार्ल्स ब्रैडला' ने शका नही की और न यह व्यक्त ही किया कि ईश्वर नाम की कोई शक्ति है ही नही। यदि कही सशय उत्पन्न हुआ तो उसी ईश्वर के विषय मे जिसको ईसाई लोग मानते हुए भी भांति-भांति के कुकर्म कर रहे थे।

अपने राजनीतिक जीवन के विषय मे श्रीमती एनी वेसेण्ट ने स्वयं लिखा है कि मैं 'होमरूलर' थी अर्थात मैं आयरलैंड के लिए स्वराज्य प्राप्त करने का प्रयत्न करती थी जिसके कारण मुझे सरकार के विरुद्ध होना पडता था। अनुचित तथा अत्याचार-युक्त शासन नीति के विरुद्ध मैंने वडे-वडे शहरो में अपने व्याख्यान दिए तथा सदैव युद्ध, प्राण-दण्ड व बेंत आदि की सजा का विरोध करती थी। मेरी सबसे प्रबल अभिलाषा यह थी कि देश के भीतर अनुचित रूप से धन-व्यय न करके सर्वसाधारण पुस्तकालय मे ही व्यय किया जाए।

सन् १८७९ ई० मे इनकी इच्छा विज्ञान का ज्ञान प्राप्त करने की हुई जिसको इन्होने मैट्रिक व उसके पश्चात् 'लण्डन विश्वविद्यालय' से बी० एस० सी० की परीक्षा मे उत्तीर्ण होकर प्राप्त कर लिया।

सन् १८८० मे यह 'स्वाधीन विचार सम्मेलन' की भी सदस्य बनी, जहाँ इनका परिचय डा० लडविग बूचर से हुआ। जिनकी कई पुस्तको का अंग्रेजी में अनुवाद भी एनी वेसेण्ट ने किया और कई मौलिक पुस्तकें स्वाधीनता पर भी लिखी। जिनमे "आयरलैंड मे निमन्त्रण और फल' अत्याधिक प्रसिद्ध है।

यही नही, भारत मे आकर श्रीमती 'एनी वेसेंट' ने हिन्दू धर्म की भी अत्याधिक सेवा की। उन दिनो पाश्चात्य सभ्यता की तडक-भडक मे आकर

अंग्रेजी शिक्षा प्राप्त नवयुवकगण, अपनी जन्मभूमि के प्राचीन गौरव को भूलते जा रहे थे, उस दु खमय पर श्रीमती एनीबेसेंट' ने 'हिन्दु-धर्म के गूढ सिद्धान्तों को वैज्ञानिक ढंग से समझाकर ससार को यह दिखला दिया कि आधुनिक सभ्यता का घमड करने वाले पाश्चात्यो को "भारत" से अभी बहुत कुछ सीखना है। इसलिए 'एनी बेसेंट' ने पहले शिक्षा पर जोर दिया और ७ जुलाई सन् १८६८ ई० मे "कर्नल आल्वर" और कई प्रसिद्ध हिन्दू नेताओ की सहायता से काशी में एक स्कूल खोला। जिसमे धर्म शिक्षा अनिवार्य थी। इस विद्यालय का नाम "सेंट्रल हिन्दू कालिज" था। श्रीमती 'एनी बेसेंट' ने इसके साथ-साथ एक 'थियोसोफिकल सोसाइटी' द्वारा सारे भारत मे ऐसे कई स्कूल खोल दिए और कई स्थानो पर 'हिन्दु कन्या पाठशाला' भी खोली। इसके पश्चात् पुन राजनीतिक क्षेत्र मे भी पदार्पण किया व मद्रास मे जाकर कई भाषण भी दिए। इन्हीं दिनो "Wake up India" नामक एक पुस्तक भी आपने लिखी।

सन् १६१३ मे श्रीमती 'एनी बेसेंट' के सम्पादकत्व मे 'कामन वलि' नामक एक साप्ताहिक-पत्र तथा 'न्यू इण्डिया' नामक पत्र भी जनता के समक्ष आया। यह "इण्डियन नेशनल काग्रेस" की सदस्या बनी तथा भारतवासियो के साथ स्वराज्य-आन्दोलन मे भी जो कि सन् १८७६ मे प्रारम्भ हुआ था, सक्रिय भाग लेती रही। स्वराज्य के लिए आपने यह भी भाव व्यक्त किए—"जातीय काम सहज में नहीं होता। हमें प्रत्येक भारतवासी के हृदय मे स्वराज्य के भावो को अंकित कर देना है। हमें यत्न पर यत्न, उद्योग पर उद्योग और परिश्रम पर परिश्रम करते रहना चाहिए। रात-दिन, उठते-बैठते व सोते-जागते स्वराज्य की ही बातें करनी चाहिए।"

श्रीमती 'एनी बेसेंट' ने राष्ट्र निर्माण के लिए शिक्षा को अनिवार्य समझते हुए इस ओर अधिक उत्साह तथा निपुणता से ध्यान दिया तथा विद्यालयो में शिक्षा के भीतर प्राचीन इतिहास का पढाया जाना भी अनिवार्य बताया और जातीय-भावो को उत्तेजित करने का प्रयत्न भी किया।

नवयुवकों को मानसिक उन्नति की आवश्यकता दिखलाते हुए बतलाया कि "यदि तुम मातृभूमि की सेवा भली-भाँति करना चाहते हो तो परिश्रम व गम्भीरता के साथ अध्ययन करो तथा मानसिक शक्ति व विकास को अपने वश में करो। प्रत्येक विषय का यथार्थ-ज्ञान अर्थात् गुण तथा दूसरे विषयों से उसके सम्बन्ध का बोध करो तथा अपनी समस्त शक्तियों को उन्नत करो। श्रीमती 'एनी बेसेंट' ने मनोवृत्तियों के विषय में भी कहा है, "मन का शिक्षण एक गहन विषय है। ज्ञान को सफलीभूत करने के लिए आवश्यक है कि उसके अनुसार कार्य करो। केवल अध्ययन से काम नहीं चल सकता।

अंग्रेजी शिक्षा के लिए भी श्रीमती 'एनी बेसेंट' ने अपने विचार व्यक्त करते हुए इस प्रकार कहा है—"पाश्चात्य सभ्यता की तड़क-भड़क में हम लोग अपनी आध्यात्मिक सभ्यता को भूलने लगे हैं, जिसका फल यह हुआ कि हमारी जातीयता का लोप हो गया।"

उक्त भावों तथा विचारों को पढ़ते व समझते हुए यह कहना कुछ अतिशयोक्ति न होगी कि श्रीमती 'ऐनीबेसेंट' अंग्रेज महिला होते हुए भी भारतवासियों के साथ कार्य करके केवल एक अच्छी नागरिका ही थी, बल्कि भारतीयों को उत्साह प्रदान करके तथा पथ का प्रदर्शन करते हुए उनके आध्यात्मिक स्तर को भी उन्नत करने वाली महान् विभूति थी।



भारत का दार्शनिक राष्ट्रपति

भारतीय संस्कृति और सम्यता सदा से ही भारत को ऐसे ही महापुरुषों का नेतृत्व देती रही है जो आध्यात्मिक क्षेत्र मे महान् रहा है। जब जब भी ऐसे महापुरुषो का अभाव हुआ तभी देश को अपने गौरव की आहुति देनी पडी। गौरव के उस चिर अभ्युत्थान के लिए आध्यात्मिक ज्योति प्रकट हुई है। व्यास, बाल्मीकि, बुद्ध, शकर तिलक, महात्मा गांधि आदि। आध्यात्मिक ज्योतियां समय २ पर प्रकट होकर जीवन-दर्शन के विविध रूप प्रकट करती रही हैं। हमारे प्रथमराष्ट्रपति राजेन्द्र प्रसाद का जीवन आध्यात्मिक दर्शन का अभिव्यक्तिरूप था। अब हमारे द्वितीय राष्ट्रपति डा० राधाकृष्णन एक दार्शनिक महापुरुष हैं।

मानवीय चिन्तन के इतिहास मे ऐसे बहुत कम दार्शिनक हुए हैं जो अपने ही जीवन काल में अत्यन्त प्रतिष्ठित हो गए हैं। इन प्रतिष्ठा प्राप्त महापुरुषों में डा० राधाकृष्णन का नाम सर्वप्रमुख है। अध्यात्मवाद और शब्द शास्त्र के अतिरिक्त शिक्षा, राजनीति, दर्शन, नीति तथा सांस्कृति क्षेत्र मे डा० राधाकृष्णन का नाम सर्वथा अद्वितीय है। अपने ही जीवन काल में इतना सम्मान और आदर प्राप्त करने का सौभाग्य हमारे वर्तमान राष्ट्रपति को मिला है।

पिछले दिनो मे डा० राधा कृष्णन ने चिन्तन का जो सिद्धांत प्रतिपादित किया उसे मानव मुल्यो से रहित कट्टरता का एक मात्र विकल्प माना जा रहा है। डा० राधाकृष्णन ऐसे सांस्कृतिक सगम के प्रतिनिधि हैं जो दर्शन और विज्ञान के सर्व प्रमुख तत्वो को बनाए रखने के साथ साथ पश्चिम के ज्ञान तथा पूर्व की बौद्धिकता का परस्पर मेल कराता है। राजनीति के क्षेत्र में शक्ति की अपेक्षा सहमति की प्रणाली को श्रेष्ठ मान कर एक नया दृष्टि कोण दिया है। विचार स्वातन्त्र्य को बड़ा मानकर आत्मा को मशीन से अधिक महत्व देते हैं।

डा० राधाकृष्णन के व्यक्तिगत जीवन से लोग बहुत कम परिचित हैं। अपनी एक पुस्तक में उन्होने लिखा है—"अपने निजी जीवन, माता पिता वश, विवाह और परिवार, अपनी पसन्द और नापसन्दगियो, सघर्ष और

निराशाओ व सम्बन्ध में कुछ कहने का मेरा इरादा नहीं है। यह सौभाग्य मुझे प्राप्त नही हुआ कि मैं उस क्षेत्र से निकल जाऊं जिसमें मानवता सघर्ष करती है। जीवन की विषमताओ और जीवन के भार का मेरा हिस्सा मुझे मिला है यद्यपि ये नाते मेरे लिए अधिक महत्व के ही है। फिर भी मैं चाहता हूँ कि उनके बारे मे कुछ न कहूँ।

सर्व पल्ली राधाकृष्णन का जन्म पाच सितम्बर १८८८ को दक्षिण भारत के एक छोटे से कस्बे तिरुत्तनी मे हुआ। तिरुत्तनी कई शताब्दियो से धार्मिक स्थान रहा है। धार्मिक तीर्थ में जन्म लेने तथा माता पिता की धार्मिक आस्थाओं ने राधाकृष्णन से हिन्दू धर्म के गहन मूल्यो और लम्बी परम्परा से सम्बन्धित होने मे महत्व पूर्ण योग दान किया। एक स्थान पर अपने विचार प्रकट करते हुए उन्होने कहा है—"दर्शन शास्त्र की समस्याओ को वैज्ञानिक दृष्टिकोण से देखने की अपेक्षा धर्म की दृष्टि से देखनें का कारण मेरी प्रारम्भिक शिक्षा है।"

डा० राधाकृष्णन की शिक्षा दीक्षा ईसाई शिक्षण सस्थाओ मे हुई जहा ईश्वर से भय की भावना छात्रो में डाली जाती है। साथ ही हिन्दू धर्म और भारतीय विचारधारा की आलोचना भी होती है। इस आचरण से क्षुब्ध हो कर उन्होने लिखा "तब मुझे बाध्य होकर हिन्दू दर्शन का अध्ययन करना पडा। जग परम्परा मे आस्था डगमगा जाय तो दर्शन की आवश्यकता होती है।

दर्शन के अध्यापन के पीछे भी एक सयोग ही था। १६ वर्ष की आयु में वे अपने विषय का चुनाव नहीं कर पा रहे थे। उन्हीं दिनो एक सम्बन्धी ने उन्हे पुरानी पुस्तकें पढने के लिए दी। ये पुस्तकें मनोविज्ञान, तर्कशास्त्र, और नीतिशास्त्र की थी। डिल्थ के शब्दो का उल्लेख करते हुए उन्होने लिखा—जीवन क्या है ? सयोग, भाग्य, और चरित्र के ताने बाने से बुना हुआ रहस्यपूर्ण वस्त्र।

राधाकृष्णन का जीवन प्रेसीन्डेसी कालिज मद्रास में १९०९ में दर्शन के शिक्षक के रूप में प्रारम्भ हुआ। उपनिषद् वेद आदि का गहव अध्ययन किया।

साथ ही जैन, बौद्ध, साख्य, मीमासा, योग आदि पद्धतियो का विचार पूर्ण चिन्तन किया। इनमें शकर के अद्वैतवाद, उपनिषदो, गीता और बौद्ध दर्शन ने अत्यन्त प्रभावित किया।

योरोपीय विचार दर्शन में भी आप पारगत हैं। प्लेटो, प्लोटिनस, कान्ट, ब्रेडले, बर्गशन की दर्शन पद्धति से आप प्रभावित हैं। साहित्य में दाते, गोथें, सैक्सपीयर, वर्डस्वर्थ, अनल्डि, ब्लेके और ब्राउनिग का प्रभाव आपकी रचनाओ पर है। राधाकृष्णन इनसे प्रभावित होते हुए भी स्वय को अनुयायी नही मानते। उनके विचार और निष्कर्ष उनके अपने हैं उनका कहना है—

"मेरी चिन्तन धारा का स्रोत कुछ और है। वह निजी अनुभवो से मिला ऐसे अनुभव जो अध्ययन से प्राप्त नही होते। मेरी चिन्तन धारा का आधार तर्क की अपेक्षा आध्यात्मिक जागृति है। सत्य के साथ सघर्ष से दर्शन का जन्म होता है न कि उन सघर्षों के ऐतिहासिक अध्ययन से।"

भारत के राष्ट्रपति पद पर आपको प्रतिष्ठित होते देख ऐसा प्रतीत हुआ जैसे एक बार यूनान के दार्शनिक प्लेटो के दार्शनिक शासन की कल्पना साकार हुई हो। दार्शनिक की अन्तर्दृष्टि ने राजनीतिज्ञ की बाह्य दृष्टि से समझौता कर लिया है।



"शांति दूत जवाहर"

आज कई मास से उत्तरी वियतनाम देश पर युद्ध के घनघोर बादल छाए हुए हैं। न जाने कब ये बादल बरस पड़े और शिवाजी के ताण्डव नृत्य का सा भयकर दृश्य उपस्थित कर दें। विश्व की ऐसी भयकर परिस्थितियो में याद आते हैं शान्ति के अग्रदुत जवाहर, जिनके प्रयत्नो से कोरिया, फारमोसा और इण्डोचायना आदि देशो पर से युद्ध के बादल हट गए थे।

पचपन करोड़ देवताओ के हृदय सम्राट, महान राजनीतिज्ञ मोती के जावहर का जन्म १४ नवम्बर सन् १८८९ को प्रयाग मे हुआ था। आपकी माता का नाम स्वरूप रानी था। आपके पिता श्री मोती लाल नेहरू एक प्रसिद्ध वकील थे। लक्ष्मी आप के चरणो की दासी थी।

आपकी प्रारम्भिक शिक्षा आनन्द भवन मे अग्रेज अध्यापकों की देख रेख मे हुई। १५ वर्ष की आयु में आप पढने के लिए इगलैण्ड भेजे गए। वहाँ आप हैरो स्कूल मे प्रविष्ट कराए गए। दसवी की परीक्षा पास करने के बाद आप ट्रिनिटी कालिज और कैम्ब्रिज विश्वविद्यालय के छात्र बने। बैरिस्टरी की शिक्षा प्राप्त कर सन् १९१२ में आप भारत लौटे। १९१६ में आप का विवाह कमला देवी के साथ हुआ था।

स्वदेश लौटने पर गांधी जी की तरह आपने भी वकालत प्रारम्भ की परन्तु आपका मन इस कार्य मे न लग सका। भारत की पराधीनता आप के हृदय में शूल बन कर चुभती रहती थी। अग्रेजो द्वारा भारतीयो को पारितोषिक रूप दिए गए "रोलट एक्ट" तथा जलियान वाला बाग के अमानुषिक अत्याचारो नें आपकी स्वतन्त्रता की भवना को और भी उत्तेजित कर दिया। आप एनी बेसण्ट तथा लोकमान्य तिलक द्वारा स्थापित होम रूल सस्था की शाखा के खुलते ही उसके सदस्य बन गए। अब आप का प्रत्येक पल देश सेवा मे व्यतीत होने लगा। आपने अपनी समस्त दौलत देश को अर्पण कर दी। १९२१ मे आप को कृष्ण मन्दिर की सैर करनी पडी। १९२९ में आप नेशनल कांग्रेस के सभा-

पति बने। रावी के किनारे आपने भारत को पूर्ण स्वतन्त्र कराने की घोषण की। इस प्रतिज्ञा पूर्ति के लिए आप को अनेक बार जेल जाना पडा। हसते-हसते आप ने इन सभी कष्टों को सहन किया। पत्नी की मृत्यु भी आप को इस पथ से विचलित नही कर सकी। आप के इन्ही बलिदानो के कारण १५ अगस्त सन् १९४७ को भारत स्वतन्त्र हुआ।

१५ अगस्त १९४७ को आपने स्वतन्त्र भारत के प्रधान मन्त्री पद का कार्य भारत सम्भाला था। आप २७ मई १९६४ तक इस सिंहासन पर विराजमान रहे। आपके प्रधान मन्त्रित्वकाल मे देश ने महान उन्नति की है। भारत विभाजन के कारण पैदा हुई परिस्थितियां चीन का आक्रमण, कश्मीर पर पाकिस्तानियो का आक्रमण व राज्यो की पुर्नगठन समस्या को आप ने सुन्दर रूपेण सुलझाया था। देश को आर्थिक दृष्टि से समृद्ध करने के लिए अनेक योजनाए कार्यान्वित की गई। तृतीय विश्व महायुद्ध के घटा टोप मेघ जब विश्व के आकाश पर आच्छादित थे; एक राष्ट्र दूसरे राष्ट्र को हडप करनें के लिए मगरमच्छ की तरह मु ह खोले बैठा था, तब आप की शान्तिपूर्ण नीति से ही शान्ति के मेघ बरसे थे। आप द्वारा प्रतिपादित। "पचशील" का सारा विश्व लोहा मानता है।

आप का जीवन कर्म योगी सा रहा है। देश के लिए किया गया त्याग आप का महान है आपको बच्चो से सदैव स्नेह रहा है। इसलिए बच्चे आपको चाचा नेहरू कह कर पुकारा करते थे।

आप द्वारा की गई साहित्य सेवा भी भुलाई नही जा सकती। "भारत की कहानी" "पिता के पत्र पुत्री को, "विश्व इतिहास की झलक" व मेरी कहानी आपकी प्रसिद्ध रचानाएँ हैं।

शान्ति का यह अग्रदूत, देशसेवक भी काल-विकराल के चगुल से न बच सका। २७ मई १९६४ को आप इस नश्वर शरीर को छोड कर अपार्थिव बन गए। युगो तक भारतवासी आपको याद रखेंगे।

आप का अन्तिम संस्कार देहली मे राजघाट पर महात्मा गांधी की समाधि के समीप ही किया गया था। वह दृश्य करुणापूर्ण था। जनसमूह रो रहा था। आकाश और धरती भी रो उठे थे।

जवाहरलाल नेहरू का राजनीतिक दर्शन

नेहरू के राजनीतिक दर्शन का मूल्याकन आने वाली पीढिया करेंगी, लेकिन उनकी विचार धारा के मूलभूत तत्वो के सुफल उनके जीवन-काल में ही सामने आ गये और राष्ट्रीय एव अन्तरराष्ट्रीय क्षेत्रो में समयकी कसोटी पर खरे उतर रहे हैं। भारत को तथा विश्व को वे किस रूप मे देखना चाहते थे, यह उनके चिन्तन की धारा से स्पष्ट है।

श्री जवाहरलाल नेहरू को यह बात ना पसन्द थी कि उन्हे दार्शनिक या राजनीतिक विचारक कहा जाय। फिर भी इस तथ्य को झुठलाया नही जा सकता कि राष्ट्रीय क्षेत्र मे "समाजवादी ढांचा" और अन्तरराष्ट्रीय क्षेत्र में "पचशील" उनकी विचारधारा के दो स्वरूप मात्र हैं।

उनकी क्रियात्मक राजनीतिज्ञता गाधी जी तथा कार्ल मार्क्स के सिद्धान्तों के ज्ञान तथा अनुभव का समन्वय है। श्री नेहरू के लेख तथा उनके भाषण इस दर्शन को सुस्पष्ट करते हैं, जिसे "नेहरूवाद" कहा जाता हैं।

मार्क्स तथा लेनिन के लेखो का श्री नेहरू पर प्रभाव स्पष्ट है। सन् १९२८ में सोवियत रूस का भ्रमण करने के पश्चात वे समाजवाद के परम्परागत रूप के कट्टर समर्थक वन गये। परन्तु, महात्मा गाधी का निरतर सम्पर्क भी अपना प्रभाव डाले विना न रहा। नेहरू का नैतिक सिद्धान्तो मे विश्वास तथा व्यक्ति को मार्क्स के आदर्शवादी राज्य के व्यक्ति की अपेक्षा ऊंचा दर्जा देने मे गाधीजी का ही प्रभाव हैं। वस्तुत श्री नेहरू की प्रवृत्तिया उक्त दोनों दर्शनो का मिश्रण थीं।

नेहरू जी मानते थे। कि "मार्क्स के अधिकांश दर्शन को मैंने बिना कठनाई के स्वीकार किया था।" इसमे ब्रह्मवाद की भांति ब्रह्म 'मन' और

'भौतिक तत्त्व' की दवैधावस्था का अभाव (ब्रह्मवाद में केवल 'मन' तथा मार्क्सवाद में 'भौतिक तत्त्व' की प्रधानता है), भौतिक तत्त्वो की गतिविद्या और क्रमिक उन्नति अथवा आकस्मिक होने वाले अविरल परिवर्तन, कार्य कारण के पारस्परिक सम्बन्ध और उसके कारण अनुकूलता, विपरीतिता तथा सयोग आदि सरलता से प्रभाव डाल सके।" परन्तु नेहरू के मन में एक अस्पष्टसा आदर्शवाद जड पकडता गया, जिसने उन्हें वेदान्त के सदृशय अत्यधिक व्यक्तिवादी तथा वैयक्तिक स्वाधीनता का विश्वासी बना दिया। यह विश्वास मार्क्सर्स के सैनिकीकरण से उत्कृष्ट है।

व्यक्तिगत स्वाधीनता

आधुनिक समाज में व्यक्ति के स्वाभिमान एव स्वत्व के नाश पर प० नेहरू बहुत दुखी थे। उनके विचार मे प्रजातन्त्र का अर्थ केवल राजनीतिक अथवा आर्थिक स्वतन्त्रता नही अपितु कुछ मानसिक स्वतन्त्रता भी है। प्रत्येक व्यक्ति को अपनी योग्यता एवं सामर्थ्य के अनुसार विकास की पूर्ण स्वतन्त्रता होनी चाहिए। श्री नेहरू का मत था कि व्यक्ति को वे समस्त अधिकार प्राप्त हो, जो सामाजिक सगठन के बन्धनो से समुचित सतुलन रख सके। वस्तुतः सामाजिक कर्तव्यो के बिना अधिकार भी निरर्थक हैं। 'व्यक्ति और राज्य के पारस्परिक सबधो पर विचार करते हुए उन्होने कहा कि राज्य व्यक्ति के विकासमात्र के लिए हैं, इसलिए आवश्यक है कि राजनीति ही नहीं अपितु जीवन के सभी क्षेत्रो मे व्यक्ति को अवसर की समानता का अधिकार मिले। अत्यधिक आर्थिक वैषम्य हो तो भी राजनीतिक समानता अर्थ शून्य है। जनता अगर भूखी मर रही हो, तो मताधिकार का कुछ भी महत्व नही।

प्राचीन राज्य प्रणाली को श्री नेहरू 'पुलिस राज्य' के सदृश समझते थे, क्योंकि उसमें व्यक्ति को केवल विदेशी आक्रमण से सुरक्षित रहने का अधिकार था और कुछ नही।

"व्यक्तिगत स्वाधीनता तथा केन्द्रीयकरण में संघर्ष" विषय पर नार्मन कॉसिन्स को एक भेंट में नेहरू जी ने उत्तर दिया था कि केन्द्रीकरण के व्यापक उपायों के बिना हम कोई कार्य नहीं कर सकते।

श्री नेहरू कहते थे कि निसन्देह हड़ताल व्यक्तिगत स्वाधीनता का किसी संस्था द्वारा होने वाला बौद्धिक प्रदर्शन मात्र है। परन्तु हड़ताल की स्वतन्त्रता का अधिकार बहुत से स्थानों पर अनुचित दबाव का रूप ले लेता है। परिणाम यह होता है कि व्यक्ति तथा राज्य के संबंध बिगड़ जाते हैं। इसलिए हड़तालों पर उचित अंकुश रखना चाहिए, जिससे उत्तम परिणाम निकल सकें।

साम्यवाद में संशोधन

समाजवाद में श्री नेहरू की गहरी आस्था थी, यहाँ तक कि साम्यवाद के कुछ अंशभावी साम्यवादी समाज—पर भी उनका विश्वास था, परन्तु साम्यवाद की कार्य प्रणाली से वह सहमत नहीं थे। उनका दृढ़ मत था कि कुछ साम्यवादी समाजों द्वारा जिन उपायों को अपनाया गया, उनसे अशान्ति, दुख तथा दमन ही मिला है। इसीलिए ये उपाय उपयुक्त नहीं।

वर्ग संघर्ष को स्वीकार करते हुए श्री नेहरू का मत था कि यह शान्तिपूर्ण उपायों से तथा हिंसा के बिना भी समाप्त हो सकता है। अपने मत की व्याख्या करते हुए उन्होंने कहा कि नवीन उदाहरणों से यह सिद्ध होता है कि साम्यवाद एक आर्थिक सिद्धान्त न होकर साम्राज्यवाद का विस्तार मात्र है। पहले पहल यह जनता को मुक्ति सेवा सी जान पड़ती है, परन्तु इसका प्रभाव क्षणिक ही होता है। अन्ततोगत्वा राष्ट्रवाद साम्यवाद की प्रतिक्रिया में अवश्य सफल होगा। श्री नेहरू के विचार में साम्यवाद का उपरोक्त रूप समाजवादी न होकर आतंकवादियों का विचार मात्र है।

उनके मतानुसार कार्ल मार्क्स वास्तव में एक महान व्यक्ति था। परन्तु १९वीं शताब्दी के मध्य में रहने वाले के विचारों से २०वीं शताब्दी के

मध्य की समस्याओ को सुलझाना असगत है। भारतीय साम्यवादियो से तो नेहरू का पर्याप्त मतभेद रहा, जिनके लिए सृष्टि का प्रारम्भ ही रूस की राज्य क्राति (सन् १९१७) से हुआ।

मार्क्स और नेहरू का मतभेद के एक कारण यह भी है कि कार्ल मार्क्स मानसिक शक्ति की अवेहलना कर केवल "भौतिक तत्वो" को अपने दर्शन का सर्वस्व मानता है। मानसिक शक्ति की व्याख्या करते हुए श्री नेहरू ने लिखा है कि मार्क्स विचारधारा अथवा उसके मन ने उन तत्वो को प्रभावित किया जो अपने समय के सामाजिक व आर्थिक ढाचे में क्राति ला सका। परन्तु कुछ अवस्थाओ मे 'मन' का भौतिक तत्वों से उत्कृष्ट होना भी सिद्ध होता है।

इससे सिद्ध होता है कि श्री नेहरू नैतिक तथा बौद्धिक दृष्टि से किसी एक वर्ग से पूर्ण सहमत नही और न ही किसी वाद विशेष के अन्धानुकरण के पक्ष पाती थे। उन्होने लेनिन का उल्लेख किया है जिसने रूस के साम्यवादियो को मार्क्सवाद का स्वतन्त्र चिन्तन करने का परामर्श दिया था। क्योकि यह विचारधारा तो केवल मार्ग-दर्शन ही करती है और इसका प्रयोग विभिन्न परिस्थितियो मे विभिन्न प्रकार से हो सकता है। उदाहरणतया फ्रास की अपेक्षा इगलैंड मे भिन्न, जर्मन से फ्रास में और तथा रूस से जर्मनी मे अलग रूप से अधिक लाभकारी सिद्ध होता है।

श्री नेहरू गाँधी जी के 'विकेन्द्रीकरण' सिद्धाण्त के भी कट्टर अनुयायी नहीं। उन्होने कहा था कि बडे-बडे उद्योगो को उनके समस्त झझटो तथा सुपरिणायो के सहित स्वीकार करना होगा। जहा विकेन्द्रीकरण की आवश्यकता हो, वहा अवश्य होना चाहिए। परन्तु जैसे भी हो, उत्पादन के पुराने और निकम्मे साधनो को त्यागना चाहिए। इनका अस्थायी प्रयोग चाहे हो, परन्तु स्थायी रूप से इनका प्रयोग आगे चलकर विकास के मार्ग में बाधक होगा।

श्री नेहरू की गृह नीति को श्री श्रीमन्नारायण ने निम्न लिखित रूप में संक्षिप्त किया है :

१. अवसर की समानता, सामाजिक, आर्थिक तथा राजनीतिक न्याय पर आधारित सामाजिक और आर्थिक व्यावस्था की स्थापना।

२. जाति, वर्ग तथा वर्ण के भेद अथवा सामाजिक और आर्थिक स्तरो में समस्त विषमताओ को दूर करना। बेकारी समाप्त करने के लिए सभी समर्थ नागरिको को काम तथा समुचित पारिश्रमिक का, आश्वासन देना।

३ राष्ट्र के कल्याण के लिए समस्त भौतिक साधन सोतो तथा प्रमुख औद्योगिक साधनो का प्रभावशाली नियन्त्रण।

४ सर्वांगीण विकास मे बाधक, सम्पति तथा उत्पादन के प्रमुख साधनों के केन्द्रीकरण को त्यागना।

५. देश मे उत्पादन तथा सम्पत्ति मे वृद्धि के लिए गति को बढाना।

६ देश की सम्पति का समान विभाजन तथा आर्थिक असमानता को रूप से कम करने का यत्न करना।

७ कुटीर उद्योगो तथा ग्राम पचायतो का सगठन तथा राजनीतिक शक्तियो का विकेन्द्रीकरण।

८ शातिपूर्ण तथा जनतान्त्रिक उपायो से उपरोक्त परिवर्तन के लिए यत्न करना।

अंतर राष्ट्रीय क्षेत्र में

राष्ट्रीय क्षेत्र में व्यक्ति तथा राज्य के सम्बन्धो के सदृश ही अन्तर राष्ट्रीय क्षेत्र में श्री नेहरू के विचार इस प्रकार हैं

१. नैतिक आधार पर राष्ट्र का पारस्परिक सम्बन्ध।

२. 'साम्यवादी' तथा प्रजातान्त्रिक जैसी विपरीत विचारधाराओं का सह-अस्तित्व।

३ आर्थिक समानता पर आधारित समस्त राष्ट्रो की राजनीतिक समता।

श्री नेहरू ने कहा था कि आज का विश्व आर्थिक आधार पर दो वर्गों में विभाजित है। जब तक आर्थिक दृष्टि से पिछड़े तथा औद्योगिक दृष्टि से अल्प विकसित देशो के समान आर्थिक समता का अधिकार नहीं मिलता, जब तक सहअस्तित्व की नीति निरर्थक है। आर्थिक दृष्टि से उन्नत देशों को चाहिए कि विश्व शाति के लिए पिछड़े देशो के आर्थिक वैषम्य को दूर करें क्योकि यह उनका नैसर्गिक अधिकार है।

पंचशील

विश्व राजनीति में 'पचशील' श्री नेहरू को सबसे बडी देन है। इसके सिद्धात हैं.

१ सभी देशो की सार्वभौम एवं राष्ट्रीय सत्ता का पारस्परिक सम्मान।

२ आक्रमण न करना।

३ किसी राष्ट्र के आन्तरिक मामलो में हस्तक्षेप न करना।

४ समानता तथा पारस्परिक विश्वास।

५. विभिन्न राजनीतिक प्रणालियो में भी शातिपूर्ण सहअस्तित्व तथा सहकारिता।

श्री नेहरू की राष्ट्र सघ में अटूट आस्था थी। उन्होंने नि शस्त्रीकरण तथा आणविक परीक्षणो को एकदम वन्द करने की माग की थी। परन्तु उनका यह अनुभव था कि नि शस्त्रीकरण या आणविक परीक्षणो को केवल एक पक्ष नहीं अपितु सभी पक्ष वन्द कर दें।

धर्म और धर्म निरपेक्षता

भारतीय सविधान में 'धर्मनिरपेक्षता' की जो व्याख्या की गयी है वह श्री नेहरू के धर्म और ईश्वर विषयक निष्पक्ष विश्वास की देन है।

श्री नेहरू का कहना था कि ईश्वर के विषय मे जो अर्थ लिया जाता है, मेरा उसमे विश्वास नही। एक जगह वह लिखते हैं कि मैं एक देवी शक्ति के विषय में सोचने अथवा किसी अज्ञात महान शक्ति को साकार रूप में मानने मे अपने को असमर्थ पाता हूँ और यह तथ्य कि बहुत से लोग इस प्रकार सोचते या विचार करते हैं, मेरे लिए आश्चर्य का विषय है।

आत्मा जैसी किसी वस्तु के अस्तित्व अथवा पुनर्जन्म के विषय मे श्री नेहरू की रुचि नहीं थी। ये प्रश्न चाहे कितने ही महत्त्वपूर्ण हो, उनके लिए कुछ नही। ऐसे प्रश्नो के उत्तर उनके विचार मे केवल एक ऐसे अज्ञात लोक के विषय मे बौद्धिक अनुमान मात्र हैं जिसके बारे मे हमे कुछ ज्ञात नहीं। जो वस्तु जीवन पर कोई सीधा प्रभाव नही करती, उसके लिए श्री नेहरू को कोई क्रियात्मक रुचि नही थी।

भारत की परिस्थिया इस प्रकार की हैं कि यहा राजनीतिज्ञो द्वारा प्रतिपादित 'धर्मनिरपेक्षता का कट्टरता से पालन सम्भव नही। श्री नेहरू का कथन था कि भारत की धार्मिक तटस्थता का रूप 'धर्मनिरपेक्षता' के सदृश नही, अपितु उससे कुछ भिन्न है। नाम चाहे कुछ भी दिया जाय पर श्री नेहरू इस बात मे सन्तुष्ट थे कि राज्य अपने अपेक्षित दायित्व का पूर्ण निर्वाह कर रहा है और इस नियम का पालन कर रहा है कि कोई वर्ग या जाति दूसरो के अधिकारो का अतिक्रमण न करे। अगर ऐसा हो जाय तो राज्य केवल मूक दर्शक नहीं रहेगा। ऐसा होने पर तो 'धर्मनिरपेक्षता' का न्याययुक्त कोई अर्थ नही रहता। राजनीतिज्ञो की धर्मनिरपेक्षता स्थिर है परन्तु श्री नेहरू ने उसकी नवीन व्याख्या की। उनके द्वारा अन्तराष्ट्रीय तटस्थता जैसी धर्मनिरपेक्षता की प्रभावशाली व्याख्या वस्तुत: प्रशसनीय है क्योंकि जवाहरलाल नेहरू का यह विचार भारत के राजनीतिक विचारों के भण्डार में एक अमूल्य देन है।

प्रधान मंत्री श्री लालबहादुर शास्त्री

देश को आर्थिक, सामाजिक व राजनैतिक दृष्टि से अन्य उन्नत राष्ट्रो के समकक्ष खडा करने के प० जवाहर लाल नेहरू के अधूरे स्वप्न को मूर्त रूप देने का उत्तरदायित्व आज जिन के कन्धो पर था, उस भारत के लाल श्री लाल बहादुर शास्त्री को कौन नही चाहता ? नेहरू जी द्वारा प्रज्वलित मशाल को सतत जलाए रखना आप का ही काम था।

गांधी भक्त श्री लाल बहादुर शास्त्री का जन्म गाधी जी की जन्म तिथि २ अक्तूबर को आज से ६० वर्ष पूर्व "मुगलसराय" मे हुआ था। मुगलसराय जिला बनारस मे स्थित हैं। पिता का नाम श्री शारदा प्रसाद था। शास्त्री शब्द-साथ मे लगा हुआ होने के कारण लोग आप को ब्राह्मण समझते हैं। परन्तु आप कायस्थ कुल से सम्बन्ध रखते थे। निम्न मध्य वर्ग के होने के कारण आप की शिक्षा बडी कठिनाई से पूर्ण हुई। हाई स्कूल तक की शिक्षा आप ने भारतेन्दु हरिश्चन्द्र हाई स्कूल मे प्राप्त की। बाल्यावस्था मे हमेशा आपको धन के अभाव का सामना करना पडा। इसी अर्थाभाव के कारण ही आप १४ वर्ष की अवस्था में गगा को तैर कर अपने घर गए थे।

गाधी जी के असहयोग आन्दोलन से प्रभावित हो कर १६२१ मे आपने लिखना पढना छोड दिया था। इसी असहयोग आन्दोलन मे भाग लेने के कारण आपको कारागार की सैर करनी पडी। जेल से मुक्त होने के बाद आप फिर अध्ययन करने मे संलग्न हो गए। काशी विद्यापीठ से शास्त्री की परीक्षा उत्तीर्ण कर आप फिर स्वतन्त्रता सग्राम के सैनिक बन गए।

१६३७ में आप प्रथम बार उत्तर प्रदेश विधान सभा के सदस्य चुने गए। १६४६ में भी आप पुन निर्वाचित हुए। सन् १६४७ में आप उत्तर प्रदेश मन्त्रिमण्डल में गृह और यातायात मन्त्री रहे। इस पद पर आपने चार वर्ष तक कार्य किया था।

१९५२ में आप केन्द्रीय मन्त्रिमडल में सम्मिलित हुए। तव से आप किसी न किसी रूप मे मन्त्रिमडल मे रहे थे।

प० जवाहरलाल जी की मृत्यु के वाद २ जून १९६४ को आप प्रधान मन्त्रित्व के सिंहासन पर विराजमान हुए थे।

आप में अनेक महान् गुण थे। आपको कभी भी जीवन मे पद का लालच नही रहा। जव कि आज का प्रत्येक मानव पद का लोभी है। जव कि केन्द्रीय और प्राँतीय मन्त्री मण्डलो में जाने की होड सी लगी रहती है सन् १९५६ मे महवूव नगर हैदरावाद मे होने वाली दुघर्टना के परिणाम स्वरूप अपने पद से त्याग पत्र दे देना क्या इस वात की यथार्थता का प्रमाण नही। आप मे स्वतन्त्र चिन्तन तथा व्यवहारिता का भी गुण विद्यमान था। जव चीन से नैपाल ने अभिसन्धि की थी और उसके सम्वन्ध हमारे देश से विगड़ रहे थे तव आपने नैपाल की सद्‌भावना यात्रा कर नैपालियो को ऐसा मोह लिया था कि उनके दिल से भारत के प्रति उत्पन्न दुर्भावन सद्‌भावना मे परिर्वतित हो गई। यह आपके व्यावहारिक और स्वतन्त्र-चिन्तन का ही प्रभाव था। आप की वेश भूषा व रहन सहन वहुत ही सादा है। अभिमान तो आप मे लेशमात्र भी नही था। आपने कुशल प्रशासक के रूप मे भी सफलता प्राप्त की थी। इसका सवसे वडा प्रमाण यह है कि जव भी आप मन्त्रिमडल से हटे थे, नेहरू जी को आपको पुन. वुलाना पड़ा था। कामराज योजना के अन्तर्गत मन्त्रिमण्डल से अलग हुआ कोई भी व्यक्ति नहीं लिया गया परन्तु आप इसके अपवाद थे।

आप को देश से महान आशाएँ थी। भगवान् आप को स्वर्ग मे भी शांति दे यही हमारी कामना है।

भारत-पाकिस्तान युद्ध

पाकिस्तान से युद्ध करते समय हमारे सामने महाभारत का दृष्टान्त उपस्थित हो जाता है। कौरवो द्वारा सताये जाने पर पाण्डवो को युद्ध करना पडा था। रणस्थल में भी अर्जुन के मन मे युद्धसन्नद्ध कौरव सेना को देखकर मोह जाग गया था। उसे अपने सामने अपने सम्बन्धी दिखलाई दे रहे थे। उसे ध्यान हुआ कि भूमिखण्ड के लिए क्यो युद्ध किया जाय, क्यो वृथा रक्तपात किया जाय ? सम्मोहित, भ्रमित अर्जुन सन्यासी बनने के लिए तत्पर हो गया था। कृष्ण ने उसके भ्रम को तोडा और उसे कर्तव्य बोध कराकर युद्ध करने के लिए तैयार किया।

पाक राष्ट्रपति अयूब खाँ व विदेश-मन्त्री भुट्टो की इस धमकी को देखते हुए कि भविष्य मे अधिक पैमाने पर युद्ध होगा, यह नही कहा जा सकता कि यह शांति कब तक रहेगी, पर फिर भी यह स्पष्ट है कि पाक का सैन्य गर्व प्राय नष्ट हो गया है और यह काफी समय तक युद्धखोर की स्थिति में नही आ सकेगा।

वस्तुत भारत का उद्देश्य भी यही था और उसने अपने इस उद्देश्य में बहुत कुछ सफलता प्राप्त कर ली है। इस युद्ध में भारतीय सेना की भूमिका श्रेष्ठतम व सराहनीय रही है। यद्यपि इस बात से इन्कार नही किया जा सकता कि भारत को भी कम क्षति नही पहुँची है एव पाकिस्तानी सेनाए भी बहादुरी और दिलेरी से लडी हैं, पर समग्रत भारत हर दृष्टिकोण से पाकिस्तान से आगे रहा है। पुन जैसे-जैसे पाकिस्तानी सेनाएँ विजय से वचित होती गई हैं उनमें खीज बढती गई है। उसका बदला उन्होंने अन्तिम दिनो निरस्त्र भारतीयों पर अन्धाधुन्ध बमबारी करके दिया है। इस युद्ध में मुख्यत. दो ही मोर्चे रहे हैं, स्थल व वायु के।

स्थल व टैंक शक्ति

पाक स्थल सेना पैटन टैंको के कारण अजेय मानी जाती थी पर उस युद्ध मे उसका यह गर्व चूर हो गया है। शत्रु के लगभग ४६४ टैंक नष्ट हुए हैं या छिन गए हैं। जबकि भारत को केवल १५० टैंको से हाथ धोना पडा है। पाक टैंकों मे २४५ दुर्भेद्य पैटन टैंक भी शामिल हैं जो अमरीकी सैन्य सहायता के अन्तर्गत प्राप्त हुए थे। पाकिस्तान के लगभग ५० टैंक भारत के कब्जे मे सही हालत मे आ गये हैं। यह स्मरणीय है कि पाकिस्तान को ३६० पैटन टैंक अमरीका से मिले हैं। इसमे से १८० युद्ध-सज्जित सेना के काम के लिए थे व १८० आवश्यकता पडने पर रिजर्व मे थे। इन आकडो के अनुसार रिजर्व मे से ४० पाकिस्तान खो चुका है और बचे हुए टैंको में भी बहुत से क्षति ग्रस्त हैं। अमरीका ने इनमें से केवल १८० टैंको के लिए मरम्मत आदि की सुविधा दी थी, रिजर्व के लिए यह सुविधा नही थी। अत. अब यदि अमरीका पुन: इनकी मरम्मत आदि की सुविधा न दे तो पाकिस्तान की टैंक शक्ति लगभग अक्षम ही मानी जानी चाहिए। यह भी उल्लेखनीय है कि बिना किसी बाहरी सहायता के पाकिस्तान स्वय इस स्थिति मे नही है कि वह मरम्मत का काम कर सके।

कुल मिलाकर हर स्थिति मे अतत पाकिस्तान आधे से अधिक टैंक खो चुका है व उसकी ६० प्रतिशत से अधिक बख्तरबन्द सैन्य शक्ति नष्ट हो चुकी है। भारत के क्षतिग्रस्त टैंको मे अमरीकी शर्मन फ्रांसीसी हलके ए एम एक्स १३ एव ब्रिटिश सैनचुरियन टैंक शामिल हैं। निश्चय ही जहाँ तक क्षमता का प्रश्न है, पाक टैंक अधिक सफल माने जाते थे, पर भारतीय सेनाओ की उन पर विजय विश्व की एक अद्भुत घटना रही है। सम्भवत इसका श्रेय विश्व के छटे टैंक-युद्ध विशेषज्ञ जरनल चौधरी को है। भारत के टैंको मे सेन्चूरियन, जो कुछ हद तक पैटन टैंको के मुकाबले के टैंक माने जाते हैं, यह प्रसन्नता की बात है कि उनकी हानि कम हुई है। यहाँ यह भी उल्लेखनीय है कि भारत टैंक-मरम्मत व निर्माण काय के लिए किसी देश के आश्रित नहीं। आत्मनिर्भर होने के नाते इस क्षति की वह और आसानी से पूर्ति कर सकता है। पुन. उसने

इधर टैंक निर्माण की ओर भी कदम उठाया है व उसका विजयन्त टैंक तैयार हो गया है।

पाक बख्तरबन्द सेना ने अपने कुशल कर्मचारियों से भी बुरी तरह हाथ धोया है। इसका प्रमाण है कि पाकिस्तान की छठी बख्तरबन्द डिवीजन में रिजर्व का एक बड़ा अंश था और उनके चालक अप्रशिक्षित व अकुशल थे।

वायु-शक्ति

अब वायु शक्ति को लें। पाकिस्तान ने अपनी कुल विमान शक्ति २०० में से ७० विमान युद्ध में खोए हैं अर्थात् ३५ प्रतिशत। इनका ब्यौरा इस प्रकार है • उसके पास वायुशक्ति में श्रेष्ठतम १०० सैबर जैट थे जिनमें से ४७ वह खो चुका है। एफ १०४ सुपरसैनिक स्टार फाइटर में वह सभवत २५ में से ५ विमान खो चुका है। इसके पास बी-६५ कैनबरा के लगभग ३० से ५० विमान थे इनमें वह ७ विमानो से हाथ धो चुका है। पाकिस्तान के दो सी-१३० परिवाहन विमान व अन्य विभिन्न वायुयान भी नष्ट हुए हैं। कुल मिलाकर पाकिस्तान की ४० प्रतिशत वायु शक्ति नष्ट हो गई है। पाकिस्तान हवाई अड्डो को भी भारतीय वायुशक्ति ने भारी क्षति पहुँचाई है व पश्चिमी पाकिस्तान में केवल सरगोधा को छोडकर प्राय सभी अड्डे — चकलाला, पेशावर, स्यालकोट क्षतिग्रस्त हुए हैं। इनमें बमबारी से जमीन पर नष्ट हुए विमान पृथक हैं।

इसके विपरीत भारत ने कुल ३५ विमान खोए हैं, कुछ विमान उसके भी जमीन पर बमबारी से नष्ट हुए हैं। उसके हत चालकों की सख्या भी पाक से बहुत कम है। भारत के नट विमानो ने योग्य हाथोमें बडा सुन्दर काम किया है। इस युद्ध में उसने स्टार फाइटर की तुलनात्मक क्षमता वाले मिग विमानो का उपयोग नही किया है। वायुशक्ति में अमरीका पर अश्रित पाकिस्तान एगुप्राय. हो गया है जबकि भारत बहुत शीघ्र अपनी स्थिति वापस लाने में सफल होगा।

प्रत्यक्ष विजय

अब प्रश्न आता है प्रत्यक्ष विजय का। यह सही है कि कुल मिलाकर लड़ाई पाकिस्तानी भूमि पर ही रही है पर फिर भी हम शत्रु की भूमि में बहुत गहरे में नहीं जा सके हैं। इस सम्बन्ध में आकडे अभी अस्पष्ट हैं पर यह तथ्य है कि पाकिस्तान खेमकरण को छोड़कर किसी भी भारतीय क्षेत्र में नहीं आ सका है जबकि भारतीय सेनाएँ काश्मीर, स्यालकोट, कसूर व राजस्थान क्षेत्रों में चली गई है। स्यालकोट क्षेत्र में भारयीय सेना १५-१६ मील आगे है जबकि लाहौर में ८-६ मील, राजस्थान में लगभग ३० मील। भारतीय काश्मीर में पाकिस्तान के हाथ में अल्प पर महत्वपूर्ण छम्ब क्षेत्र चला गया है और भारत ने काश्मीर में उडी-पूंछ, टिथवाल व कारगिल में जो सफलता पाई है वह अधिक व्यापक है। भारत ने लगभग आजाद कश्मीर की १,५०० वर्गमील भूमि ले ली है जबकि पाकिस्तान लगभग ५० वर्गमील भूमि ले गया है।

आम क्षति व पूर्ति

उपरोक्त रूप से प्रत्यक्षत हर मोर्चे पर पाकिस्तान पराजित रहा है। पाकिस्तान का अधिक ढाचा भी हिल गया है। भारत ने हर क्षेत्र में आद्योगिकरण के महत्व को समझ कर आत्मनिर्भरता की दिशा में कदम धरे हैं और इस दृष्टि से अल्पशक्ति होते हुए भी पूरी क्षति को वह अधिक सरलता से झेल पाएगा, पर पाकिस्तान के लिए बिना किसी विदेशी सहायता के यह क्षति तारक सिद्ध होगी।

शास्त्री जी का अन्तिम शान्ति समझौता

प्रधानमन्त्री लालबहादुर शास्त्री ने डेढ वर्ष के संक्षिप्त कार्यकाल में राष्ट्रीय तथा अन्तराष्ट्रीय क्षेत्र मे अनेक सफलताएँ प्राप्त की और कई नयी परम्पराएँ स्थापित की। वे शक्ति के साथ शान्ति के पुजारी थे, कमजोर शान्ति के नही। तभी तो पाकिस्तानी हमले का हथियारो से मुकाबला किया और बाद मे शान्तिपूर्ण समझौता भी। उन्होने सभी अनुमानो को गलत सिद्ध करके विश्व रगमच पर अपनी छाप छोड दी। कद का छोटा विश्व का सबसे बडा बन गया।

कूटनीति के इतिहास मे उनका यह नया परीक्षण था कि एक तटस्थ देश और एक पश्चिमी गुटबन्दो मे शामिल देश मे कम्युनिस्ट देश समझौता कराये। यह परीक्षण सफल हुआ और भारत तथा पाकिस्तान की ताशकद सयुक्त घोषणा उनका अन्तिम शान्ति समझौता है।

अन्तराष्ट्रीय क्षेत्र मे श्री शास्त्री को पहली बडी सफलता श्री लका में बसे भारतवासियो के बारे मे श्री लका की प्रधानमन्त्री श्रीमती भण्डारनायक से हुए समझौते के रूप में प्रकट हुई थी। फिर तो बर्मा से समझौता हुआ, कच्छ के बारे मे पाकिस्तान से समझौता हुआ, काहिरा मे हुए तटस्थ राष्ट्र सम्मेलन में उन्होने अपनी छाप छोडी और लन्दन में राष्ट्रमण्डलीय प्रधानमन्त्री सम्मेलन से तो साफ हो गया—और सारी दुनिया ने मान लिया—कि वे एक बडे कूट-नीतिज्ञ थे।

जिस प्रकार श्री लका से हुए समझौते के बाद तथा कच्छ समझौते के बाद अनेक दलो ने श्री शास्त्री की आलोचना की थी, वैसे ही जब ताशकद घोषणा के बाद भी जनसघ, प्रजा समाजवादियो तथा संयुक्त समाजवादियो तथा सयुक्त समाजवादियो ने आलोचना की लेकिन गौर से अध्ययन करने से स्पष्ट हो जाता है कि श्री शास्त्री ने बहुत कम दिया और दूसरे पक्ष से ज्यादा लिया। यह बात कभी नही जानी चाहिए कि दो विपक्षियो में समझौता कुछ ले देकर ही

हो सकता है। अगर लेना-देना न हो तो फिर कोई समझौता नहीं किया जा सकता।

ताशकंद घोषणा

ताशकंद घोषणा के नौ मुख्य सूत्र इस प्रकार हैं . (१) संयुक्त राष्ट्र-संघीय घोषणापत्र के अनुसार आपसी विवाद को हल करने के लिए बल का प्रयोग नहीं करेंगे तथा विवादों को शान्तिपूर्ण तरीकों से हल करेंगे।

(२) दोनों देश युद्ध विराम का पूरी तरह पालन करेंगे और २५ फरवरी तक सभी शस्त्र लोगों को पाँच अगस्त की रेखा तक लौटा लेंगे।

(३) दोनों नेता इस बात के लिए राजी हो गये कि दोनों देशों के सम्बन्ध एक दूसरे के आन्तरिक मामलों में हस्तक्षेप न करने के सिद्धान्त पर आधारित होंगे।

(४) दोनों देश एक दूसरे के विरोध में किए जाने वाले प्रचार को रोकेंगे और ऐसे प्रचार को प्रोत्साहन देंगे जिससे दोनों देशों के मध्य मैत्रीपूर्ण सम्बन्धों के विकास में सहायता मिलें।

(५) दोनों देशों के राजनतिक सम्बन्ध सामान्य रूप से पुन चालू होंगें तथा इस बारे में दोनों सरकारें वियना सम्मेलन के नियमों का पालन करेंगी।

(६) आर्थिक, व्यापारिक और यातायान सम्बन्धी सम्बन्ध सामान्य किये जायेंगे तथा वर्तमान समझौतों को बनाये रखने के लिए कदम उठायेंगे।

(७) युद्धबन्दियों की वापसी के लिए अपने-अपने अधिकारियों को तुरन्त आदेश दिए जायेंगे।

(८) शरणार्थियों, निष्क्रान्तों और गैरकानूनी रूप से प्रवेश करने वालों की समस्या पर वार्ता जारी रखेंगे। निष्क्रमण रोकने के लिए उचित वातावरण तैयार करेंगे तथा युद्ध में छीनी गयी सम्पत्ति की वापसी के बारे में बातचीत करेंगे।

(९) दोनों देश उच्चस्तरीय तथा अन्य स्तरों पर बातचीत जारी रखेंगे। संयुक्त समितियों की स्थापना की आवश्यकता पर जोर दिया गया है।

मुख्य विरोध

ताशकद घोषणा की इस बात का सबसे अधिक विरोध किया गया है कि हमे पाँच अगस्त की रेखा पर लौटना पडेगा। जनसघ, प्रजा समाजवादी तथा सयुक्त समाजवादी दलो की ओर से कहा गया है कि पाँच अगस्त की रेखा तक सेना हटाने का मतलब यह है कि हाजी पीर दर्रा तथा करगिल आदि खाली करने की बात मानकर सरकार इस आश्वासन से पीछे हटी है कि वह इन स्थानो से पीछे नही हटेगी।

लेकिन अन्तराष्ट्रीय राजनीति के विद्यार्थी जानते हैं कि जिस स्थान से लडाई होती है, लडाई के बाद उसी स्थान को लौटना पडता है। भारत भी यह बात चीन के सदर्भ मे पहले कह चुका है। इसलिए यदि पाकिस्तान से समझौता करना है तो पाच अगस्त की रेखा तक हटना ही पडेगा। नही तो पाँच अगस्त का कोई अर्थ नहीं माना जा सकेगा।

हमारी राय मे पाकिस्तान से समझौता-वार्ता का मुख्य लक्ष्य यह था कि फिर दोनो देशो मे लडाई न हो। इसमे काफी हद तक सफलता जरूर मिली है। हालाकि पाकिस्तान ने "युद्ध नही" सन्धि नही की, फिर भी ताशकद घोषणा-पत्र में यह तो साफ लिखा गया है कि दोनो देश आपसी विवादो को हल करने के लिए बल का प्रयोग नही करेंगे। इसके साथ राष्ट्र सघ के उद्देश्य का नाम लग जाने से इसका असर तो कम नही हो जाता।

विवादो के हल के लिए बल का प्रयोग न करने की बात पाकिस्तान से कहलाकर श्री शास्त्री ने भारी सफलता पायी। भारत और पाकिस्तान की जनता युद्ध नहीं चाहती। युद्ध से हमे पाकिस्तान की अपेक्षा अधिक हानि होती है, यह बात नही भुलायी जानी चाहिए।

पाक क्या लाभ उठायेगा ?

ताशकद घोषणापत्र पर हस्ताक्षर करने के तुरन्त बाद श्री शास्त्री का देहान्त हो जानसे से पाकिस्तान यह लाभ जरूर उठा सकता है कि वह कुछ

बातें अपनी ओर से गढ ले और फिर कहे कि श्री शास्त्री उन पर मौखिक रूप से राजी हो गए थे और इसीलिए पाकिस्तान ने घोषणापत्र पर हस्ताक्षर किए थे। लेकिन पाकिस्तान की यह चाल ज्यादा नही टिक पायेगी।

अब तो बस एक बडा खतरा है। वह यह कि पाकिस्तान ताशकद घोषणा का अर्थ अपने ढग से निकालने की कोशिश करेगा। वैसे पाकिस्तान मे ऐसा शुरू भी कर दिया है। ताशकद मे घोषणा पत्र पर हस्ताक्षर होने के कुछ घण्टे बाद ही पाकिस्तानी प्रवक्ता ने कह दिया कि 'सभी सशस्त्र व्यक्तियो की वापिसी के अन्तर्गत वे लोग नही आते जिन्हे पाकिस्तान जम्मू-कश्मीर की आजादी के लिए सघर्ष करने वाला कहता है।'

दूसरी ओर हमारी सरकार के प्रवक्ता ने कहा कि सशस्त्र व्यक्तियो मे पाकिस्तानी घुसपैठिये निश्चित रूप से आते है।

यह मूलभूत मतभेद है और यदि पाकिस्तान इस पर अडा रहा तो ताशकद घोषणा पत्र पर अमल करना खतरे मे पड जायगा। जब तक पाकिस्तान उन सशस्त्र लोगो को काश्मीर से वापिस नही बुलायेगा जो पाँच अगस्त से काश्मीर में घुसे थे तब तक भारत हाजी पीर आदि स्थानो से सेना नही हटायेगा।

यह एक अजीब स्थिति है। अगर पाकिस्तान घुसपैठियो की जिम्मेदारी से मुकरता है तो 'सशस्त्र व्यक्ति' लिखने का कोई मतलब नहीं, फिर तो सैनिको की वापसी की बात लिखी जानी चाहिए थी। इस प्रकार स्पष्ट हो चला है कि पाकिस्तान ने जिस प्रकार अन्य समझौतो का पालन नही किया उसी तरह वह इस समझौते का भी पालन न करने का यत्न करेगा।

श्रीमती इन्दिरा गांधी

श्री लाल बहादुर शास्त्री के बाद भारत के सामने फिर वही प्रश्न आया कि भारत का कौन प्रधान मत्री चुना जाऐ। इसके लिये काग्रेस कार्य कारणी ने चुनाव करा कर श्री मति इन्दिरा जी को भारत का नेता चुन लिया। विशव को अब यह आशा बन्ध गई कि गुलाब का फूल फिर वापिस आ गया।

प्रधानमत्री श्रीमती इन्दिरा गाधी न राष्ट्र के नाम एक भाषग प्रस्तारित करते हुए देश की भावी नीति के सम्बन्ध में जो वक्तव्य दिया उसमे यद्यपि कोई बहुत नयी एव रोमाचक बात नही है—मुख्यत उन्ही आदर्शों, सिद्धातो और नीतियो के अनुगमन पर बल दिया गया है जो नेहरू और शास्त्री के युग में रही—परन्तु उससे एक बात बहुत साफ हो जाती है। काग्रेस के वामपथी एव तथाकथित प्रगतिशील तत्वों और कम्युनिस्टो ने उनके प्रधानमत्री चुने जाने से पूर्व यह आशा की थी कि वे देश की राजनीति को अबसे अधिक समाजवादी मोड देगी, परन्तु उन्होने प्रस्तुत वक्तत्य देकर यह सिद्ध कर दिया है कि उनके विचार और सम्पर्क कुछ भी रहे हो किन्तु उनकी दृष्टि मे बादकी अपेक्षा वस्तु-स्थितिका अधिक महत्व है और वे राष्ट्र के निर्माण में सबके सहयोग का स्वागत करती हैं।

वामपथी तत्व अमरीका को साम्राज्य वादी देश कहकर उसके द्वारा प्रदत्त सहायता को आशका की दृष्टि से देखते हैं। इसी प्रकार उनका एक विश्वास यह है कि देश के सामने खाद्य और विदेश मुद्राका जो भारी सकट है वह उसकी प्राप्ति एव वितरण के काय को सरकार द्वारा अपने अधिकार मे लेने तथा राष्ट्रयकरण का बैंको तथा अन्य अनेक उद्योगो तक विस्तार करने से बहुत हद तक दूर किया जा सकता है। प्रधानमत्री ने खाद्य की व्यवस्था और वितरण पर अधिक ध्यान दिये जाने और कृषि के क्षेत्र में अधिक उत्पादन तथा आत्मनिर्भरता पर तो जोर दिया है, परन्तु साथ ही अमरीकी सहायता के प्रति कृतज्ञ व्यक्त करते हुए यह भी कह दिया है कि खाद्य की आवश्यकता

और प्राप्ति मे जो अन्तर है उसे पूरा करने के लिए उनकी सरकार बडी मात्रा मे अन्न का आयात करेगी। इससे जहाँ यह सूचित होता है कि कृषि उत्पादन को बढ़ाने और उसे आत्मनिर्भर बनाने की दिशा मे उनकी सरकार हर सम्भव प्रयत्न करेगी वहाँ यह भी सकेत मिलता है कि वह किसी वाद विशेष के चक्कर मे पडकर देश को भूखा नहीं मरने देगी। प्रधान मन्त्री ने इसे सरकार का प्रथम कर्त्तव्य स्वीकार किया है और इस कार्य मे जनता के भी हर वर्ग क सहयोग की अपेक्षा की है।

आधारभूत उद्योगो मे सरकारी क्षेत्र की प्रमुखता तथा औद्योगिक सामग्री एव ज्ञान के सम्बन्ध मे देश को अधिकाधिक अपने पैरो पर खडा होने पर उन्होने बहुत बल दिया है और वर्तमान परिस्थितियो को दृष्टि में रखते हुए राष्ट्र के भावी निर्माण की दृष्टि से वह उचित भी है, किन्तु साथ ही जो वस्तु स्थिति है उसके प्रति आँख नही मीची है। इसीलिए जहा एक ओर यह कहा गया है कि सरकारी और निजी क्षेत्र मे कोई सघर्ष नही है और सरकार निजी क्षेत्र को सहायता देती रहेगी वहाँ यह भी प्रकट किया गया है कि विदेशी मुद्रा की कमी से जो औद्योगिक प्रगति अवरुद्ध हो गयी है उसे दूर करने तथा चतुर्थ पचवर्षीय योजना मे जो लक्ष्य निर्धारित किये गये है उन्हे पूरा करने के लिये तेजी से प्रयत्न किये जायेगे। वैसे तो प्रधानमन्त्री ने सभी देशो से अच्छे सम्बन्धो और भारत के विकास मे उनके सहयोग की अपेक्षा की है परन्तु अमरीका का विशेष रूप से उल्लेख करके उन्होने यह इ गित कर दिया है कि देश की भावी नीति किसी पक्ष विशेष की ओर झुकी न होकर सन्तुलित होगी।

अवाम की सुख-सुविधा के लिए नयी सरकार को कितनी अधिक चिन्ता है इसका पता केवल इस बात से नही लगता कि प्रधानमन्त्री ने खाद्य व्यवस्था को अपनी सबसे बडी जिम्मेदारी स्वीकार किया है और ग्राम क्षेत्र के मजदूर को अधिक आमदनी हो सकने के साधनो को अपनाने का सकेत दिया है अपितु सरकार के इरादों और कार्य मे प्रशासनिक दोषों के कारण होने वाले

भारी अन्तर को पूरा करने की जो बात उन्होने कही है वह इस तथ्य को पुष्ट करती है। यह किसी से छिपा नहीं हैं कि लालफीताशाही और विभिन्न प्रकारके भ्रष्टाचार के कारण ही न तो सरकार की योजनाएं उचित खर्च में जल्दी पूरी होती है और न ही जनता के दुख-दर्द दूर होते हैं। यह निश्चित है कि यदि इस ओर ठीक ध्यान दिया गया तो नई सरकार के लिए यह बहुत श्रेय की बात होगी।

प्रधानमत्री ने लोकतन्त्र, धर्मनिरपेक्षता, देश के योजनाबद्ध विकास, पडोसी देशो से मित्रता के सम्बन्धो तथा शान्ति की नीति की उपयोगिता को दुहराया है—ताशकन्द समझौते पर पूरी तरह से अमल करने पर बल दिया है, किन्तु साथ ही देश की स्वतन्त्रता और अखण्डताकी रक्षा की ओर भी सकेत किया है। उनका यह कथन बिल्कुल सच है कि गरीबी से लड़ने के लिए शान्ति की जरूरत है, परन्तु इस कथन मे यह बात भी निहित है कि नयी सरकार देश की सुरक्षा-व्यवस्थाओ के प्रति भी पूरे रूप मे जागरूक रहेगी।

जहा तक परराष्ट्र-नीति की बात हैं प्रधानमत्री ने कहा है कि यह देश सब देशों से अपना सहयोग और मित्रता बढायेगा। भारत की नीति पहले से ही गैर गुटबन्दी और शान्तिपूण सह-अस्तित्व की रही है और इस नीति का न केवल उसे अपितु दुनिया के देशो को भी लाभ पहुँचा है। वह नीति उसके आदर्शों और परम्पराओ के अनुकूल है। उससे न तो उसके राष्ट्रीय हितो को कोई चोट पहुंचती हैं और न ही उसकी स्वतन्त्र-सत्ता और गौरव को कोई हानि होती है। उल्टे इस नीति ने विदेशो मे उसकी प्रतिष्ठा को और बढाया है और परस्पर विरोधी वाद वाले देशो के साथ उसके सम्बन्ध और भी सुदृढ हुए हैं। इसलिए प्रधानमन्त्री ने उसी नीति का अनुगमन करने की घोषणा करके देशके हित में ही कदम उठाया है और इससे उसकी शक्ति और प्रभाव बढ़ने मे मदद मिलेगी।

वियतनाम की गुत्थी

अमरीका ने सरकार इस सवाल पर गभीरता से विचार करना आरम्भ कर दिया है कि उत्तर वियतनाम पर फिर बमबारी शुरू की जाय या नहीं और अगर बमबारी शुरू करना है तो कब, अमरीका मे सैनिक और असैनिक विचार धारा का झुकाव धीरे-धीरे इसी दिशा में हो रहा हैं कि उत्तर पर बमबारी प्रारम्भ कर दी जाय। परराष्ट्रमत्री रस्क और रक्षामत्री मैकनमारा का मत यह बताया जाता है कि बमबारी को अर्से तक रोक रखना दक्षिण वियतनाम मे अमरीका की सैनिक स्थिति के अनुकूल न होगा, क्योंकि वियतकाग छापामारो को उत्तर से सभी तरह की मदद भारी मात्रा मे पहुँच रही है, वे अपनी स्थिति मजबूत बना रहे हैं और इतने मास के सघर्ष के बाद दक्षिण की स्थिति में जो अनुकूलता आयी थी, वह फिर धीरे-धीरे सेगोन और वाशिगटन के प्रतिकूल होती जा रही है।

एक उलझी गुत्थी को जो लोग तत्काल हल होते देखना चाहते हैं उनके लिए इस बात से कुछ अधीर होना स्वाभाविक है कि लगभग पाच सप्ताह तक उत्तर पर बमबारी बद रहने के बाद भी हनाई सरकार भागती हुई वार्त्ता-मेज पर नही आयी और वियतकागो की ओर से ऐसा कोई सकेत नही दिया गया कि वे लडाई के मैदान से हट कर शांति-वार्ता के पक्ष मे आना चाहते हैं। ऐसे लोग समस्या को अपने तरीके से मोडने का जो इरादा रखते है और इसमे उन्हे जो निराशा होती है उसके कारण उनके कठोर कदम उठाने की बात कहना उनके लिए अस्वाभाविक नही। मगर देखने की बात यह है कि क्या सैनिक कारवाई तेज करके समस्या को हल किया जा सकता है? क्या यह मान लिया गया है कि समस्या का राजनीतिक नही, सैनिक हल ही सभव है? अगर वाशिगटन का यह मत बना है कि वह समस्याको अपने सैन्य बल से हल कर सकता है, तो उसे इसके सभी पहलुओ और अपनी प्रत्येक कारवाई के जवाब मे दूसरे पक्ष द्वारा की जानेवाली कार्यवाई और उसके अगले नतीजों पर गौर करना होगा।

शांति या युद्धकी जिम्मेदारी सिर्फ अमरीका के कंधो पर नहीं। शांति को लाने के लिए कम्युनिस्टो को अमरीका के साथ मिलकर सहयोग और समझौते का रास्ता खोजना होगा और यदि युद्ध भडकता है तो इसके लिए कम्युनिस्ट स्वय को दोषमुक्त नही कह सकते। जो लोग यह समझते हैं कि वियतनाम की समस्या का सैनिक हल सभव नही और यह बात अमरीका के कान तक पहुँचाना चाहते हैं, उन्हे यह बात कम्युनिस्टो को भी समझानी होगी कि वे तोप के दहाने से सत्ताका जन्म होने का माओवादी सिद्धातो को अपने दिमाग से निकाल दे। इसके बिना वे शांति की आशा नहीं करे सकते क्योकि कोई भी व्यक्ति अमरीका से यह उम्मीद नही कर सकता कि वह हर मैदान को इसलिए खाली करता जायगा जिससे कम्युनिस्ट उसपर कब्जा कर लें यह बात भी दिमाग से निकाल देनी चाहिए कि कम्युनिस्ट मुक्तिदाता है। अगर अमरीका से यह उम्मीद की जाती हैं कि वह अमरीका बने लोकतन्त्र का निर्यात बद कर दें तो बेहतर होगा कि कम्युनिस्टो से भी कहा जाय कि वे पेकिंग की फैक्टरियो मे गढे गये कम्युनिज्म का व्यापार समाप्त कर दें। दक्षिण पूर्व एशिया से पश्चिमी साम्राज्यवाद को इसलिए नहीं निकाला गया कि वहाँ कम्युनिस्ट साम्राज्यवाद की स्थापना हो सके।

अमरीका के सदेह और तर्क को गलत नहीं कहा जा सकता। यह भी सही है कि उत्तर वियतनाम की ओर से ऐसा कोई सकेत नही दिया गया कि वह बिना शर्त कोई बातचीत करना चाहता है। जापानी परराष्ट्रमत्री श्री शीना की मास्को यात्रा का अथवा वाशिंगटन के शांति प्रयत्नो और अपीलो का कोई नतीजा नहीं निकला। लेकिन इसका यह अर्थ नहीं कि शाति-प्रयत्नो के सभी रास्ते और नये प्रयत्नो की सभावनाए समाप्त हो चुकी हैं। हनोई की कुछ कठिनाइयो को समझने की जरूरत है। ऐसा कोई कदम उठाना ठीक न होगा, जिससे रूस के सामने धर्मसकट पैदा हो, क्योकि पेकिंग की दिलचस्पी इसी में हैं। हनोई को पेकिंग को गोद में जाने को मजबूर करना भी उचित न होगा।

कुछ ऐसे सवाल भी हैं जिनके बारे मे अमरीका को अपने विचार स्पष्ट करने होंगे। दक्षिण वियतनाम मे वह क्या चाहता है, यह स्पष्ट नही—वियतकांगो का समूल नाश सेगोन मे तटस्थ सरकार या पश्चिम परस्त सरकार ? दक्षिण वियतनाम की स्वतन्त्रताकी जो कल्पना अमरीका के दिमाग में है, उसमे वियतकांग की स्थिति क्या है ? इन या इन जैसे सवालो का जवाब स्पष्ट कर दिये जाने पर शायद शाति वार्ताका रास्ता खुलने मे देर नही लगेगी ।

भारतीय रुपये का अवमूल्यन

प्रात काल रेडियो के इस समाचार ने लोगो को अचम्बे मे डाल दिया कि 'भारत सरकार ने अपने रुपये का अवमूल्यन घोषित कर दिया है,' एक हलचल पैदा करदी और अनेक प्रश्न दिमाग मे घूमने लगे। अपनी उसी तत्काल प्रतिक्रिया को मैं यहा व्यक्त कर देना चाहती हू ।

पिछले अप्रैल मे भारत सरकार पर अवमूल्यन के लिए विश्व बैंक द्वारा डाले गये दबाव की बात गुप्त रखे जाने के बावजूद प्रगट हो ही गयी थी और भारतीय समाचार पत्रो मे इस पर काफी विवाद हुआ। विदेशी समाचार पत्रो ने अनुमान लगाया था कि भारत सरकार पर अमरीकी सरकार ने इस बात के लिए दबाव डाला था कि यदि वह अपनी मुद्रा का अवमूल्यन नही करेगी, तो उन्हे अमरीकी सहायता मिलनी बन्द हो जायेगी । फिर भी यह कहना तो बहुत कठीन है कि इस अवमूल्यन मे अमरीकी दवाव कितना है, किन्तु अवमूल्यन की सुचना के कुछ दिन पूर्व ही भारतीय योजनामन्त्री श्री मेहता का अमरीका मे रहना इस सन्दभ मे बहुत अर्थ रखता है । हालांकि वित्तमन्त्री श्री चौधरी ने इस दवाव की बात के लिए पूर्ण रूप से इन्कार किया है। पर अब तो देखना है कि यह अवमूल्यन हमारी आर्थिक परिस्थितियो पर किस प्रकार प्रभाव डालेगा।

अवमूल्यन क्या है ?

किसी मुद्रा का मूल्य सोने या अन्य मुद्राओ के अनुपात मे कम स्वीकार कर लेना ही उस मुद्रा का अवमूल्यन कहलाता हैं। अवमूल्यन बिगडते हुए देशीय भुगतान के सन्तुलन को फिरमे स्थापित करने का एक निश्चित साधन माना जाता है। १९३०के आस पास तथा द्वितीय महायुद्ध के बाद के ऐसे अनेक उदाहरण हैं, जबकि विभिन्न देशो की मुद्राओ को सकट काल में अवमूल्यन ने बल दिया है फांस के राष्ट्रपति दगॉल की सरकार के पूर्व फ्रैंच फ्रैंकका अनेक बार अवमूल्यन हुआ है। १९४९ में ब्रिटिश सरकार को भी इसी अवमूल्यन का सहारा लेना पडा था। दो या तीन वर्ष पूर्व जापानी येन और इटालियन लीरा के अवमूल्यन की काफी चर्चा थी । साधारणतया अवमूल्यन से आयात में कमी और निर्यात मे वृद्धि होती है जिसके परिणाम स्वरूप शीघ्र ही भुगतानों मे सन्तुलन आ जाता है। इसे इस प्रकार स्पष्ट किया जा सकता है कि मान लीजिए एक वस्तु हमने पहले १३.३३ रुपये में इग्लैण्ड को बेची, जिसके लिए उसे एक पौण्ड का भुगतान करना पडा, किन्तु अब अवमूल्यन के बाद उसी वस्तु के लिए उसे १३ या १४ शिलिग देने पड़ेंगे। परिणाम यह होगा कि सस्ती होने के कारण वह इस वस्तु को अधिक मात्रा मे खरीदेगा और निर्यात मे वृद्धि होने से हमें निश्चय ही लाभ होगा।

आयात मे इससे विपरीत होगा। जो वस्तु हम एक पौण्ड मे खरीदते थे अर्थात् जिसके लिए १३.३३ रुपये देते थे, अब उसी के लिए २१ रुपये देने होगे, अत मूल्य मे वृद्धि से मांग मे कमी होगी और आयात घटेगा, किन्तु अर्थशास्त्रियो का कहना है कि यदि आयात और निर्यात करने वाली वस्तुओं की माग लोचदार नही है, तो अवमूल्यन लाभ के स्थान पर हानि ही पहुँचायेगा। यदि हम खनिज पदार्थ और अन्न जैसी आवश्यक वस्तुओ का आयात कर रहे हैं, जिनकी माग मे कमी सम्भव नहीं है, तो अधिक मूल्य देकर भी उन्हें खरीदना पडेगा। निर्यात की जाने वाली वस्तुओं की माग भी

यदि लोचदार नहीं है, तो वस्तु का दाम कम होने पर भी उसकी माग वही रहेगी। फलस्वरूप विदेशी मुद्रा हमें पहले से भी कम मात्रा मे मिलेगी और इस प्रकार आयात-निर्यात के बीच की खाई पूरी नही की जा सकेगी और हालत दिन पर दिन शोचनीय ही होती जायेगी। निर्यात की जाने वाली वस्तु की माग यदि लोचदार हैं तो यह हो सकता है कि मूल्य मे कमी होने से तत्काल हमारे निर्यात मे में वृद्धि हो जाये। परन्तु प्रश्न है कि क्या हम लम्बे समय तक इस निर्यात वृद्धि को बनाये रख सकते हैं ?

निर्यात मे वृद्धि मूल्य में कमी के अलावा अन्य बातो पर भी निर्भर करती है। उत्पादन की भी अपनी एक क्षमता होती है, जिसके आगे उस वस्तु का उत्पादन महगा पडता है। आन्तरिक यातायात के साधन, कच्चे माल की उपलब्धि तथा माल को बाहर भेजने के लिए जहाजी सुविधाओं का होना आदि कारण भी इस पर प्रभाव डालते हैं। फिर विदेशी बाजार में प्रतियोगिता भी तो है। दूसरे देश भी अपनी वस्तु का दाम कम कर सकते है।

हमारे रुपये के अवमूल्यन के कारण लका, फारस की खाडी के छोटे-छोटे देश, जो भारतीय रुपये मे बहुत घने रूप से बधे हैं तथा नेपाल को काफी कठिनाइयो का सामना करना पडेगा। (यद्यपि अभी कुछ देशो ने अवमूल्यन न करने की घोषणा की हैं।) पाकिस्तान ने भी यह घोषणा की है कि वह अपनी मुद्रका का मूल्य नहीं गिरने देगा, परन्तु सचाई तो यह है कि उसने पिछले कई वर्षो से एक प्रकार की बोनस योजना चालू कर रखी है। इस योजना के अनुसार जो पाकिस्तानी इग्लैंड से पाकिस्तान मे पौण्ड भेजते हैं उसे १३.३३ रुपये के स्थान पर २० पाकिस्तानी रुपये मिलते है।

यह बात सच है कि आज हमारे पास विदेशी मुद्रा की बेहद कमी है और इसे पूरा करने के लिए हम विभिन्न पचवर्षीय योजनाओ के अन्तगत विभिन्न देशों से कर्ज लेते हैं और फिर कर्ज का चुकान को अन्य कर्ज। इस प्रकार यह राशि वर्ष-प्रति-वर्ष बढती जाती है। अब इस अवमूल्यन के बाद यह

राशि और अधिक हो जायेगी। इसके साथ ही साथ कर्ज देने वाले देश कर्ज के साथ कभी-कभी बडी अजीब शर्तें रख देते हैं। जैसे कर्ज के रूप मे दिये गये सामान को उन्हीं के जहाजो से भारत पहुचाया जाये; यदि यह कोई मशीन आदि है, तो कुछ समय तक उसकी देखभाल भारत मे उक्त देश के टेक्नीशियन ही करेंगे, जिनका वेतन उसी देश के वेतन स्तर से ही निर्धारित होता है। इस प्रकार की व्यर्थ की बातों के कारण कर्ज का एक बहुत बडा भाग कर्ज देने वाले देश मे ही वापस चला जाता है।

अवमूल्यन के बुरे प्रभावों से कैसे बचा जा सकता है ?

अब यदि भारत सरकार जरा-सी भी असावधानी बरतती है, तो इस अवमूल्यन से बहुत भयकर परिणाम हो सकते हैं। यदि देश मे आवश्यक वस्तुओं के दाम इस समय बढ जाते हैं, तो इससे मुद्राप्रसार तो होगा ही, अशान्ति भी हो जायेगी। मूल्य-वृद्धि पर नियत्रण रखने के लिए मूल्य-निर्धारण विभाग खोला जाना चाहिए। जो दैनिक उपभोग की वस्तुओ के अधिकृत मूल्यो का निर्धारण करे। यह निर्धारित मूल्य हर वस्तु के पैकटो पर लिखा जाना चाहिए। अब यदि कोई विक्रेता इन वस्तुओ को इस दाम से अधिक बेचता है तो उसे चोर बाजारी के अपराध मे सजा दी जाय। यह काम जब तक बहुत कडाई से नही होगा, देश की वर्तमान दशा मे सुधार तब तक नही हो पायेगा। वैसे सरकार ने स्टोर खोलने की घोषणा तो की है।

इसके साथ यह भी आवश्यक है कि गृहणियां वस्तुओ को घर मे भर लेने की प्रवृत्ति न दिखाये। उन्हे अपनी एक समिति बनाकर नागरिक-प्रशासन को इस बात के लिए बाध्य करना चाहिए कि वे वस्तुओ का सही वितरण करायें तथा मूल्य-वृद्धि पर नियत्रण रखें।

अग्रेजी जमाने की हमारी लाल फीताशाही अभी तक गयी नही है। अपने इस अठारह वर्ष के स्वतन्त्रता के जीवन में हमने दो युद्ध लडे और एक अकाल का सामना किया और अब इस चौथे सकट का सामना कर रहे हैं। फिर भी

लगता है कि सरकारी पदाधिकारियो मे जागरूकता और कर्त्तव्यपरायणता का भाव नहीं जागा। हमारी बहुमूल्य विदेशी मुद्रा-राशि मन्त्रियो तथा उच्च अधिकारियो के लिए विदेशो से कार आयात करने मे व्यय कर दी जाती है। मन्त्रियो का विदेशभ्रमण निरन्तर वृद्धि पर हैं। ऐसा कोई मन्त्री नही जो अपने मन्त्रित्व-काल मे विदेशो का भ्रमण न कर चुका हो। स्वर्गीय शास्त्री जी के प्रधानमन्त्री बनने पर कुछ लोगो ने इसी से नाक भौं सिकोड़ी थी कि वे बेचारे नेपाल को छोडकर कही विदेश की यात्रा नही कर आयं थे। यदि सरकार कहती है कि हम सकट के समय से गुजर रहे हैं, तो निश्चय ही उस संकट का सामना प्रत्येक भारतीय को बराबर से करना चाहिए। यह तो नैतिक पतन की निशानी है कि भारत के सत्ताधिकारी चाहे, वे सरकार मे हो या निजी व्यवसाय मे, स्वय अपने आनन्द मे किसी प्रकार की कमी न करें और गरीब जनता को अधिकाधिक पिसने दें। यदि हम भयकर आन्तिरिक अव्यवस्था और आन्दोलन नही चाहते, तो ये सत्ताधिकारी कुछ तो आदर्श सामने रखें।

निर्यात-वृद्धि के लिए प्रयास

मैं अपने अनुभव से कह सकती हू कि भारत अनेक चीजों के निर्यात के लिए यूरोप मे बाजार ढूढ़ सकता है। इग्लैण्ड मे तो विशेषकर बहुत-सी भारतीय वस्तुए आसानी से खप सकती हैं। इस देश मे अधिकांश खाने-पीने का सामान तथा अन्य बहुत सी वस्तुए आयात की जाती हैं। यह सत्य है कि हम खाने-पीने का सामान निर्यात नही कर सकते, परन्तु ऐसी और भी बहुत सी चीजें हैं, जिन्हें हम महत्ता नही देते, पर उन्हे निर्यात करके हम विदेशी मुद्रा प्राप्त कर सकते हैं। रेशमी कपडा, जूते और सिलाई की मशीनो से लेकर नकली मोतियो की मालाए, सीक की छोटी छोटी चटाई, बेंत की टोकरिया, रेशमी रूमाल, सगमरमर या हाथी दाँत का बना सामान, हाथ की कढाई का सामान, मिट्टी और काच के बने सुन्दर खिलौने, लकडी का कामदार सामान, काँच की मोटी चूडियां आदि ऐसे असख्य सामान हैं, जिनको

यहा वेचा जा सकता है। यद्यपि यह सही है कि ऐसे छोटे-छोटे सामान से हम बहुत अधिक विदेशी मुद्रा नही प्राप्त कर सकते, पर इनसे छोटे-छोटे उद्योग धन्धो को हम अपने यहा बढावा दे सकते हैं।

साथ ही यह भी आवश्यक है कि सरकार ऐसे कडे कदम उठाये, जिससे काला बाजार में जो लोग ऊचे दामो पर रुपये देकर पौण्ड या डालर खरीदते हैं, वह बन्द हो। सुना जाता है कि लोग एक पौण्ड के बदले ३०) रुपये तक देते हैं। ये लोग कौन हैं, जो असल मे पौण्ड और डालर चाहते हैं। और जिनके लिए रुपये की कोई कीमत नही है, मुझे मालूम नही। शायद इसी काला बाजार को समाप्त करने के लिए भारत सरकार ने गत जनवरी से 'डिफेन्स रेमिटेन्स स्कीम' चालू की थी, जिसके अन्तर्गत किसी भी प्रवासी भारतीय को विदेशी मुद्रा भारत भेजने पर उस कुल मुद्रा का ६० प्रतिशत आयात परमिट के रूप मे मिल जाता था। परन्तु उसे यह छूट थी कि वह ऐसे आयात परमिट को किसी अन्य व्यक्ति को भी दे सकता था। सुना गया है ये परमिट भारतीय बाजार मे बडे ऊचे दामो पर बिके। पर ऐसा लगता है कि यह योजना भी अधिक सफल न हो सकी और तभी ३१ मई को इस योजना को समाप्त कर दिया गया।

रुपये का यह अवमूल्यन हमारी अब तक की अर्थ-नीति की असफलता की निशानी है। श्री चौधरी ने अपनी नवीनतम अर्थ-नीति से लाभ होने की आशा प्रकट की है। विश्वास करना चाहिए कि सरकार कड़े कदमो से स्थिति का सामना करेगी और देश को आर्थिक सुरक्षा की ओर ले चलेगी।

डा० भाभा और भारत

भारतीय विज्ञान के एक स्तम्भ डा० होमी जहाँगीर भाभा की मृत्यु से भारत ही नही बल्कि सारा ससार एक कुशल वैज्ञानिक की सेवाओ से वचित हो गया। डा० भाभा ने भारत मे परमाणु शक्ति के रचनात्मक प्रयोगो की आधार-शिला रखी और परमाणु शक्ति के विकास कार्य को आगे बढाया। उसकी मृत्यु से उनके स्थान को भरना मुश्किल हो रहा है, ठीक उसी तरह से जैसे नेहरु की की मृत्यु के बाद उनके स्थान को भरने की समस्या उत्पन्न हुई थी।

स्वतन्त्रता प्राप्ति के बाद प्रधानमन्त्री श्री नेहरू के विश्वासपात्र बनकर डा० होमी जहाँगीर भाभा ने देश मे परमाणु शक्ति के विकास मे पर्याप्त योग दिया। उन्होने आरम्भ से ही कहा कि देश में परमाणु शक्ति के विकास की बहुत जरूरत है—क्योकि ईधन के परम्परागत साधन कम होते जा रहे हैं, हमे अन्त मे परमाणु शक्ति का ही सहारा लेना होगा। डा० भाभा अपना निर्णय वैज्ञानिक तथ्यो और दूरदर्शिता से करते थे और इसीलिए उनकी किसी बात को प्रधानमन्त्री ने नहीं टाला। उनको वैज्ञानिक अनुसधान की पूरी छूट थी। इसी के कारण डा० भाभा ट्राम्बे मे परमाणु शक्ति का एक ऐसा केन्द्र बनाने मे सफल हुए, जिसने थोडे ही समय मे विश्व-प्रसिद्धि प्राप्त कर ली और परमाणु शक्ति के क्षेत्र मे भारत को बहुत आगे कर दिया। आज भारत परमाणु शक्ति के मामले मे आत्मनिर्भर है और अब वह परमाणु बिजली बनाने के कार्यक्रम को आगे बढा रहा है। एक परमाणु बिजलीघर तारापुर मे बन रहा है और दो अन्य राजस्थान और मद्रास राज्य मे बनेंगे।

डा० भाभा भारत मे ही नहीं बल्कि विदेशो में भी एक अग्रणी परमाणु वैज्ञानिक के रूप मे माने जाते थे। उन्होने देश-विदेश की अनेक वैज्ञानिक संस्थाओ का सम्मान पाया। राष्ट्रसघ की वैज्ञानिक समिति के वे सदस्य थे और अन्तरराष्ट्रीय परमाणु शक्ति एजेन्सी मे भी उनकी सलाह को वैज्ञानिक बडे आदर से मानते थे। डा० भाभा ने १९५५ में जेनेवा मे हुए परमाणु शक्ति के

रचनात्मक प्रयोगो पर प्रथम सम्मेलन की अध्यक्षता की थी और तब उन्होंने दुनिया को बता दिया था कि समुद्र के पानी मे काफी हाइड्रोजन शक्ति है, जिसका उपयोग मानव को करना चाहिए। उनकी इस सलाह पर अमरीका, इंगलैण्ड आदि देशो मे इस दिशा में प्रयोग किए गए और वे लाभान्वित हुए।

ट्राम्बे का सस्थान और बम्बई का प्रसिद्ध टाटा मूलभूत अनुसधान सस्थान डा० भाभा की ही देन है। इन दोनो सस्थाओं मे डा० भाभा ने परमाणु शक्ति तथा सैद्धातिक भौतिकी के क्षेत्रो मे पर्याप्त काय कराया और अनेक भारतीय वैज्ञानिको को प्रशिक्षित किया। जिस प्रकार ट्राम्बे सस्थान ने परमाणु शक्ति के विकास के क्षेत्र मे कार्य किया, उसी प्रकार टाटा सस्थान ने भौतिकी के मूलभूत क्षेत्रो मे कुछ ऐसे कार्य किये, जिनको अन्तरराष्ट्रीय मान्यता मिली। डा० भाभा का एक क्षेत्र ब्रह्माण्ड किरणो की खोज का था, इसी लिए टाटा सस्थान ने ब्रह्माण्ड किरणो पर पर्याप्त कार्य हुआ। डा० भाभा ने भौतिकी के क्षेत्र मे ही प्रारम्भिक कणो पर पर्याप्त कार्य किया, जिसके फलस्वरूप अन्तरिक्ष से तथा सूर्य से आने वाले विकिरण का अध्ययन सम्भव हुआ। इसी जानकारी का प्रयोग आज अन्तरिक्ष-यात्रा को सुरक्षित बनाने मे हो रहा है।

डा० भाभा को केवल ३१ वर्ष की आयु मे ही रायल सोसायटी का फैलो चुन लिया गया। उन्होने देश-विदेश की अनेक वैज्ञानिक सस्थाओ मे काम किया और वैज्ञानिक सम्मेलिनो में अपने भाषणो से चमत्कृत किया।

निरस्त्रीकरण और बम

निरस्त्रीकरण की समस्या पर डा० भाभा क विचार बहुत सुलझे हुए थे और इसलिए उन्होंने १९६४ मे आकाशवाणी से एक ब्राडकास्ट मे कहा था कि ससार को निरस्त्रीकरण की दिशा मे सक्रिय कदम उठाने चाहिए क्योंकि भविष्य में और अनेक देशो के पास परमाणु बम हो जायेंगे। उन्होने कहा था कि परमाणु बम बनाने की टेक्नालाजी मे विकास के फलस्वरूप बमो पर खर्चा कम होता जा रहा हैं, इसलिए छोटे देश भी बम बनाने के लिए प्रोत्साहित होगें।

यद्यपि डा० भाभा ने देश में परमाणु शक्ति का इतना विकास कर लिया था कि भारतीय वैज्ञानिक स्वय परमाणु बम बना सकते थे, लेकिन डा० भाभा ने भारत की नीति के अनुसार कभी भी परमाणु बम बनाने का प्रतत्न नहीं किया। उन्होंने भारतीय वैज्ञानिको की सहायता से ट्राम्बे में प्लुटोनियम सयत्र लगवाया जिसका उद्घाटन स्व० प्रधानमन्त्री श्री लालवहादुर शास्त्री ने किया था। इसके पहले अप्सरा, जर्लोना और कनाडा-भारत परमाणु भटिटया स्थापित की गयी, जिनका नाम देश का बच्चा-बच्चा जान गया।

डा० भाभा के लिए परमाणु शक्ति के क्षेत्र में पर्याप्त काम था लेकिन फिर भी वे अन्य वैज्ञानिक अनुसधान के लिए समय निकाल लेते थे। उनमें गजब की शक्ति थी और वे काफी यात्रा करते थे। इसी को लेकर उन्होंने कई भाषण दिये उनके भाषण बडे सरल और सुलझे हुए थे। पिछले कुछ मास से उन्होने परमाणु शक्ति विभाग के सयोजन मे ही भारत में अन्तरिक्ष अनुसधान का काय आरम्भ कराया और थुम्बा मे एक केन्द्र स्थापित कराया। उनको श्री शास्त्री ने मत्रीमडल म आने का निमन्त्रण दिया था, लेकिन वे वैज्ञानिको के बीच रहना अधिक पसन्द करते थे, इसीलिए उन्होंने इस प्रस्ताव को नहीं माना। वे परमाणु शक्ति के विकास-कार्य को अधिक महत्वपूर्ण समझते थे।

मधुमेह पर गोष्ठी

मानव के कष्टो को दूर करने के लिए वैज्ञानिको के प्रयत्न तेजी से हो रहे मालूम होते हैं। आज कम विकसित देशो के लोग जनसख्या के विस्फोट से आक्रांत है। वे परिवार नियोजन की पद्धतियाँ अपना रहे हैं। बम्बई में मधुमेह पर एक अन्तरराष्ट्रीय गोष्ठी हुई, जिसमें कुछ उल्लेखनीय तथ्य सामने आये। इधर दिल के दौरे से अनेक मौतें हुई, संसार के वैज्ञानिक दिल की बीमारी पर अनुसधान कर रहे हैं और इस प्रयत्न में हैं कि इस भयकर रोग की रोक-थाम की जाय।

हमारे देश मे मधुमेह से डेढ से लेकर ढाई प्रतिशत तक व्यक्ति पीडित हैं और यह रोग सावर्जनिक स्वास्थ्य के लिए एक खतरा बन गया है। हाल में बम्बई मे 'गर्म देशो मे मधुमेह' पर एक अन्तरराष्ट्रीय गोष्ठी आयोजित की गयी जिसमे मधुमेह रोग के प्रसार और उसकी रोकथाम की समस्याओ पर विचार-विमर्श किया गया।

एक तथ्य यह प्रकाश में आया कि यह रोग जहा लाखो आदमियो को ग्रसित करता है, इसके उन्मूलन के लिए भरसक प्रयत्न किए जाने चाहिए अर्थात इस रोग पर अधिक अनुसधान की जरुरत है। गरीब लोगो को इस रोग के खतरे के विषय में शिक्षित करने की जरुरत भी है। गर्म देशो में आम लोगो के भोजन मे कैलरी व प्रोटीन की कमी रहती है और कार्बोहायड्रेट ज्यादा होते हैं। यदि भोजन की उनकी आदतें बदली जायें तो स्थिति सुधर सकती है। लेकिन गरीब लोग कम कार्बोहायड्रेट और अधिक प्रोटीन भोजन नही खा पाते, इसलिए वे मधुमेह के शिकार हो जाते हैं।

देश के कुछ भागो में मधुमेह की बीमारी का सर्वे किया गया है। बम्बई में सर्वे मे पता चला है कि हर छटा रोगी मधुमेह स मरता है। पूरे भारत में मधुमेह से मरने वाले व्यक्तियो के आकडे उपलब्ध नही हैं और इसलिए यह कहना मुश्किल है कि यह रोग सबसे अधिक किस राज्य में फैलता है।

फिर भी हाल की खोजो से एक यह महत्वपूण तथ्य प्रकाश मे आया है कि मधुमेह से दिल की बीमारी होती है दिल की बीमारी के लिए अनेक बातें जिम्मेदार है जैसे कसरत न करना, थकान, अधिक धूम्रपान तथा नशा वाली चीजें अधिक खाना। अब मधुमेह भी दिल की बीमारी का कारण बन सकता है।

मधुमेह की बीमारी शरीर में अधिक चीनी पहुचने से होती है। इससे इसुलिन की सप्लाई कम हो जाती है। इन्सुलिन एक प्रकार का हार्मोन है जो अग्न्याशय (पेन्क्रिअस) द्वारा बनाया जाता है। कार्बोहायड्रेट के पचाने के लिए इसुलिन जरूरी है और शरीर मे जब इसकी कमी हो जाती है तो कार्बोहायड्रेट

और प्रोटीन का सतुलन बिगड जाता है। इसके फलस्वरूप बहुत-सी फालतू शक्कर खून मे मिल जाती है और फिर पेशाब मे निकलती है। यह रोग पारिवारिक भी होता है और बहुत से बच्चो को हो जाता है जो उनके बडे होने तक रहता है। मोटापे से भी मधुमेह होता है लेकिन जब से इंसुलिन औषधि ईजाद हुई तब से मधुमेह के भयकर रोगियो की जीवन रक्षा सम्भव हो गयी। जिनको वह रोग भयकर रूप से नही होता, उनके खाने-पीने के परहेज से ही आराम हो जाता है।

भारत जैसे गर्म देश मे मधुमेह पर और अधिक सर्वे और अनुसधान की जरूरत है, जिससे इस रोग से लोगो की रक्षा की जा सके।



हमारी सेनायें

हमारी सेना के तीन विभाग हैं—स्थल सेना, नौसेना और वायु सेना। स्थल-सेना में पाँच या छ. सिपाहियो का एक सैक्शन होता है। तीन सैक्शन को मिलाकर एक प्लाटून, और तीन प्लाटूनो की एक कम्पनी बनती है। ऐसी पाँच कम्पनियो को मिलाकर, जिनमें लडने वाली तथा सहायक कम्पनियाँ भी होती है, एक बटालियन बनती है। तीन बटालियन से एक ब्रिग्रेड और तीन ब्रिग्रेड से एक डिवीजन बनता है। तीन डिवीजनो का एक कोर होता है। पूरी स्थल-सेना में आवश्यकतानुसार चाहे जितने कोर रह सकते है।

इन्फैन्ट्री (पैदल सेना) मे लडने वाले सिपाही होते हैं। इसकी मदद करते हैं। आर्टिलरी (तोपखाना) तथा आर्मड कोर (बख्तरबन्द कोर) जिसमे टैंक आदि लडाका वाहन होते हैं। बढती हुई सेना की आवश्तकतानुसार रास्ते, पुल आदि बनाना तथा रास्ते मे सुरगें लगाना आदि और दुश्मन द्वारा जमीन मे लगाई गई सुरगो आदि विस्फोटको को खोज के बाहर निकालकर सेना का मार्ग निष्कटक करने का काम इन्जीनियरिंग कोर करता है। लडने वाली सारी फौज को रेडियो, टेलीफोन, वायरलैस द्वारा सूचना या सदेश आदि पहुचाने का

काम सिगनल डिविजन करता है। आर्मी सप्लाई कोर का काम होता है लडती हुई सेना को जीवनोपयोगी तथा युद्धोपयोगी सामग्री सप्लाई करना। इसके बाद मैडिकल कोर आता है जो स्वास्थ्य व्यवस्था तथा युद्ध मे जख्मी और बीमार सैनिको की चिकित्सा तथा देखभाल करता हैं। ई० एम० ई० बिजली और मशीन इन्जीनियरिंग की व्यवस्था रखता है। सैनिकों के लिये जीवनोपयोगी तथा युद्धोपयोगी सामग्री इकटठा कर उसे सप्लाई विभाग तक पहुचाने का काम आर्डनेन्स करता है। आर्मी शिक्षा विभाग सैनिको को उपयुक्त शिक्षा देकर युद्ध के योग्य बनाता है।

वायु सेना

वायु सेना स्थल-सेना को मदद देती है। वायु सेना में विमान-चालकों (पायलट) को मदद करने वाला नेविगेटर होता है। वह दिशा-निर्देशन बताकर आवश्यक विविध सूचनाएँ देता रहता है। टैक्नीकल ब्राच मे इलैक्ट्रिकल मैकेनिकल आदि इन्जीनियरिंग का काम होता है। यह ब्रांच विमान की मरम्मत कर उसे लडने के लिये हमेशा तैयार रखता है। इसकी मदद करने वाला एक्विपमेन्ट विभाग होता है, जो स्थल-सेना के आर्डनेन्स तथा सप्लाई दोनो का काम करता है। और जिस पर युद्धोपयोगी तथा जीवनोपयोगी सारी सामग्री को एकत्रित कर उसे सप्लाई करने की जिम्मेदारी होती है। अन्त मे प्रशासन तथा स्पेशल ड्यूटी का विभाग आता है जो शासन हवाई अड्डे तथा शिक्षा को सम्भालने का काम करता है।

नौ सेना

नौसेना में नाविक विभाग (सीमैन ब्राच) मुख्य होता है जिस पर लडने का भार होता है। नाविक विभाग को मदद करने वाला तोपखाना (गनरी) विभाग होता है। उन्हे तकनीकी (टैक्नीकल) तथा इन्जीनियरिंग विभाग हमेशा मदद करता है। उसके बाद सप्लाई सैक्रेटेरियेट की व्यवस्था होती है जो शासन तथा आवश्यक सामग्री की सप्लाई करने का प्रबन्ध करता है। अन्त मे शिक्षाविभाग होना है जो विविध प्रकार की शिक्षा से नाविको को

जल-युद्ध के लिये तैयार करता है। नाविक विभाग मे ही नाविक वैमानिक विभाग (नेवल एविएशन) भी होता है जिसमे आई० एन० एस० विक्रान्त जैसे एयरक्राफट कैरियर होते है। उसपर विमानो का अड्डा है। इसका काम है शत्रु के जहाजो का पता लगा कर उनका नाश करना और शत्रु के जहाजो से तथा विमानो से अपने जहाजो की रक्षा करना।

प्रगति इस शती की विशेषता है। इस प्रगति से प्रत्येक व्यक्ति प्रभावित होता है, चाहे वह शहर से बहुत दूर गाव में ही रहता हो। वह अपने पचायती रेडियो पर नित नई प्रायोजनाओ, नए तरीको और अन्य अनेक नई बातों के बारे मे सुनता है। यही नहीं, उन्हे अपनाता भी है क्योकि वह जानता है कि इन नए तरीको को अपनाने से ही उसका भविष्य उज्ज्वल हो सकेगा।

लेकिन प्रगति से केवल लाभ ही नही हानियां भी हैं क्योकि मनुष्य ने अब प्राणघातक हथियार बनाने सीख लिए हैं जिन्हे वह शीघ्रता से व अधिक परिशुद्धता से इस्तैमाल कर सकता है। सैनिको को इनका इस्तैमाल करने व उनसे बचाव करने के लिए प्रशिक्षित किया जाता है।

अनन्त काल से मनुष्य अपने देश की सीमाओ की दुश्मन से रक्षा करने के लिए सजग रहा है दुश्मन के हमले को नाकाम करने के लिए उसने तरह-तरह के उपाय किए हैं। पुराने जमाने में युद्ध क्षेत्र सीमित होता था परन्तु आज के युद्ध क्षेत्र सीमाबद्ध नही है। ऐसी स्थिति मे शत्रु की शक्ति को कमजोर बनाने के लिए, उसके योजनाबद्ध कार्यों में बाधा डालने के लिए तथा उसकी गति को रोकने के लिए तरह-तरह की वैज्ञानिक युक्तियो, उपकरणों और यन्त्रों की आवश्यकता होती है।

राष्ट्र का एक नया पहरेदार है—रडार। और बमवर्षक व लडाका विमान शत्रु की शक्ति व व्यवस्था को छिन्न-भिन्न करने के साधन हैं। अब तो इन विमानो मे निर्देशिक प्रक्षेप्यास्त्र लगाए जाने लगे हैं जिनका उपयोग किया जाता है शत्रु के विमानों को नष्ट करने के लिए। रेडियो सचार द्वारा सेना के अधिकारी सैकडो-हजारो मील दूर मोर्चों पर डटे जवानो से अपना

सम्पर्क बनाए रखते हैं और समयानुसार उन्हे निर्देश भी देते हैं। ये रेडियो यंत्र बड़े जटिल होते हैं। उनको अच्छी तरह समझने के लिए और इनसे ठीक प्रकार काम लेने के लिए काफी प्रशिक्षित कर्मियो की आवश्यकता होती है।

रडार

रडार का उपयोग द्वितीय विश्व युद्ध मे प्रारम्भ हुआ। उसके बाद तो इसका उपयोग बहुत बढ गया है। हवाई अड्डो पर तथा समुद्र में पानी के जहाजो पर मौसम की भविष्यवाणी करने के लिए इसका उपयोग किया जाता है। रडार शब्द रेडियो डिटेक्शन एण्ड रेंजिग के प्रथम अक्षरो से बना है।

रडार मे विद्युत चुम्बकीय तरगो का उपयाग किया जाता है। ये तरगें ऐसी ही हैं जिनके माध्यम से आप रेडियो पर सगीत आदि सुनते हैं। हा, इनकी आवृत्ति रेडियो वाली तरगो की आवृत्ति से कुछ अधिक होती है। ये तरगें सरल रेखा मे चलती हैं जबकि रेडियो स्टेशन से रेडियो सैट तक आने वाली तरगें सरल रेखा में नहीं चलतीं और इसीलिए आप दुनिया भर के रेडियो स्टेशनो से प्रसारित होने वाले कार्यक्रम अपने रेडियो सैट पर सुन पाते हैं।

किसी भी रडार से एक निश्चित क्षेत्र में आने वाले जहाज का ही पता लगाया जा सकता है। यदि जहाज उससे बहार है तो पता नहीं लगाया जा सकता। दूसरे, शत्रु का वायुयान पृथ्वी की गोलाई का उपयोग करके भी रडार की दृष्टि से बच निकल सकता है इसकी सम्भावना कम होती है। लेकिन रडार की दृष्टि से बच निकलना भी कोई आसान काम नही है। ज्योही रडार द्वारा शत्रु के किसी यान का पता लगता है तुरन्त नगर में भोपू द्वारा सूचना दे दी जाती है और अपने लड़ाका विमान शत्रु के कार्य मे

बाधा डालने के लिए तुरन्त भेज दिये जाते हैं। साथ ही विमान-भेदी तोपें भी शत्रु के विमान को मार गिराने के लिए यन्त्रो की सहायता से लक्ष्य साध--कर गोले दागती हैं। ये तोपे स्वत. ही विमान का लक्ष्य ठीक-ठीक साध लेती हैं। इनका लक्ष्य विमान नही होता वरन् उसकी वह स्थिति होती हैं जहाँ वह उस समय पहुँचेगा जब गोला वहाँ पहुँचेगा। इन गोलो मे मियादी फ्यूज (टाइम फ्यूज) लगे होते हैं जिससे गोला तोप से निकलने के एक निश्चित समय बाद फटता है। अक्सर इतने समय मे गोला विमान के पास पहुँच जाता है। कुछ गोलो मे सान्निध्य फ्यूज (प्रोक्सिमिटीफ्यूज) लगे होते हैं। ये रडार के सिद्धान्त पर ही कार्य करते हैं और इनसे निकली रेडियो तरगो को परावर्तित करने वाला यान जब इनके पास मे आ जाता है तो वह फट जाता है।

वायु सेना के विमानो में भी रडार लगा होता है। इससे विमान मे बैठा कर्मी शत्रु के विमान की स्थिति का पता लगा लेता है। साथ ही वह अपने विमान को अनुकूल स्थिति में कर लेता है और शत्रु के विमान पर हमला भी कर सकता है।

आजकल तो तोपखाने के साथ भी एक रडार रहता है। यह फील्ड रडार कहलाता है। शत्रु की ओर से गोला दागे जाने पर फील्ड रडार की सहायता से गोले के पथ का पता लगा लिया जाता है और फिर दागने वाली तोप की सही स्थिति पता लगा ली जाती है। इस पूरे काम मे लगभग पाच मिनट लग जाते हैं।

अनवरुद्ध प्रगति

शत्रु के विमान को नष्ट करने के लिए लडाका हवाई जहाजो से निर्देशित प्रक्षेप्यास्त्र (गाइडेड मिसाइल) भी छोडे जाते हैं। इन प्रक्षेप्यास्त्रो मे भी छोटा सा रडार सैट लगा होता है जिसकी सहायता से ये सीधे शत्रु के विमान की ओर जाते हैं और उसे नष्ट कर देते हैं।

उपर्युक्त रडार के अतिरिक्त अनेक प्रकार के और ऐसे ही उपकरण व साथ ही अन्य बहुत से इनसे भी अच्छे शस्त्र विकसित किए जा रहे हैं। अभी कुछ वर्ष पूर्व एक ऐसा छोटा सा रडार बनाया गया है जिससे २,००० गज की दूरी से ही किसी व्यक्ति की चाल से यह पता लगाया जा सकता है कि वह स्त्री है या पुरुष। ऊंचे उडते हुए वायुयानो से लिए गए अवरक्त फोटोग्राफो से नगर के औद्योगिक क्षेत्रो व रेलवे यार्ड का पता घुप अंधेरे मे भी बडी आसानी से चल जाता है। इन फोटोग्राफो मे इजनो, भट्टियो आदि की गर्मी क कारण कुछ धब्बे दिखाई देते हैं। ऐसा उपकरण भी अब बन चुका है जिसकी सहायता से अंधेरे में भी देखा जा सकता है।

———

वर्णनात्मक निबन्ध

(इस विभाग मे प्राकृतिक दृश्यो, उत्सवों, पुण्य-पर्वों, समयानुकूल विचारों तथा घटित घटनाओ का वर्णन किया गया है)

रक्षाबन्धन

त्योहार मनाने की प्रथा अतीत काल से चली आती है। त्योहार जाति के स्मृति चिह्न होते हैं। वैसे तो हिन्दुओ के अनेक त्योहार हैं परन्तु चार तो बहुत ही महत्त्व के हैं, जिनमें से रक्षाबन्धन ब्राह्मणो का त्योहार माना जाता है। रक्षाबन्धन अर्थात् रक्षा के लिए बन्धन। तात्पर्य यह है कि ब्राह्मण लोग अपनी रक्षा के लिए क्षत्रिय इत्यादि जातियो के बन्धन बाधते थे और वे इनकी रक्षा का भार अपने कधो पर वहन करते थे। दशहरा क्षत्रियो का, दिवाली वैश्यो का तथा होली शूद्रो का त्योहार है। इनमे से रक्षाबन्धन का धार्मिक तथा नैतिक दृष्टि से विशेष महत्त्व है।

रक्षाबन्धन का त्योहार प्रत्येक वर्ष श्रावण मास की पूर्णिमा को मनाया जाता है। इसी कारण कोई-कोई इसे श्रावणी-पर्व के नाम से भी पुकारते हैं। वर्षा की अधिकता तथा यातायात की सुविधाओ के कारण सभी जाति के लोग इस ऋतु मे अपने-अपने कार्यों को स्थगित कर देते थे। ऋषि मुनि आषाढ मास की शुक्ला एकादशी से चातुर्मास करने के लिए अपने-अपने आश्रमो को लौट आते थे। पुन चार मास पश्चात् कार्तिक शुक्ला एकादशी को देश पर्यटन के लिए आश्रमो को छोड देते थे।

ब्राह्मणो के अपने-अपने आश्रमो मे लौट आने पर राज्य की ओर से उनका प्रबन्ध किया जाता था। अन्यान्य व्यक्ति भी सेवा मे उपस्थित होकर उपदेशामृत का पान करते थे। यज्ञादि का विधान होता था जिसकी पूर्णाहुति श्रावणी के दिन होती थी यज्ञ की समाप्ति पर राजा लोग आश्रमाध्यक्ष की पूजा करते थे और वे उनके हाथो मे पीले रग का सूत्र बाधते थे जिसका तात्पर्य यह होता था कि बँधवाने वाले व्यक्ति की रक्षा का भार उठाना सहर्ष स्वीकार कर लिया है। इस प्रकार राजाओ के ऊपर आश्रमाध्यक्षो तथा आश्रमों का उत्तरदायित्व हो जाता था।

परिवर्तनशील ससार मे काल-क्रमानुसार प्राचीन रीतियों मे शनै शनैः परिवर्तन होता रहता है। कभी-कभी तो ये परिवर्तन इतने अधिक हो जाते

है कि उनका प्रथम रूप प्राय आमूल परिवर्तित हो जाता है। रक्षाबन्धन पर्व के मनाने में भी परिवर्तन हुआ। मध्य युग में क्षत्रियो का बोलबाला था। आश्रमो की प्रणाली एकदम परिवर्तित हो चुकी थी। धन-लोलुपता ने ब्राह्मणों मे घर कर लिया था तथा त्यागमय प्रवृति का एक अभाव हो गया था। वे राजाओ के आश्रित रहने के इच्छुक हो गए थे। इसीलिए आश्रम के इच्छुक और असहाय व्यक्ति रक्षाबन्धन करते थे। ब्राह्मणो के साथ-साथ स्त्रियाँ भी रक्षाबन्धन की अधिकारिणी हो गई थी। स्त्रियाँ प्राय अपने भाइयो के ही रक्षाबन्धन करती थी किन्तु अन्य व्यक्ति भी राखी बाधे जाने पर अपने को उस स्त्री का भाई समझता था। उस काल मे इस प्रथा का बडा ही महत्व रहा। रक्षाबन्धन करवाने वाला व्यक्ति अपने प्राणो को सकट मे भी डालकर इस राखी की पवित्रता की रक्षा करता था। मध्यकालीन इतिहास इस प्रकार के अनेक उदाहरणो से अकित है, इतिहास इस बात का साक्षी है कि हुमायूँ ने चित्तौड की महारानी कर्णवती की राखी प्राप्त करके अपने सैनिको के विरोध करने पर भी गुजरात के मुसलमान शासक को जो कि चित्तौड पर आक्रमण करने आया था, पहुँचकर उसके दाँत खट्टे किए तथा अपनी धार्मिक बहिन कर्णवती की रक्षा की। मध्युग मे यह प्रथा बहुत महत्वशाली थी।

आधुनिक युग मे न तो इस प्रथा का इतना महत्व ही रहा है और न पूर्वकालीन पवित्रता ही। प्रात काल से ब्राह्मण अपने यजमानो को राखी बाधने के लिए निकल पडते हैं तथा उनसे दक्षिणा प्राप्त करते हैं। बहिनें भी राखी बाँधकर अपने भाइयो से दक्षिणा प्राप्त करती है मध्यान्ह के समय इस दिन 'सेमई' खाने की परिपाटी चल गई है। खीर तो इस मास का मुख्य भोजन माना ही गया है। सायकाल के समय स्त्री-पुरुष अपने बाल-गोपालों सहित विविध प्रकार के मनोरजन प्राप्त करने के लिए जगह-जगह पर जाते हैं। आजकल तो सभी त्यौहारो मे सिनेमा एक विशेष मनोरजन माना है। अतएव इस दिन भी अधिकाश व्यक्ति सिनेमा देखने के लिए जाते हैं। इस दिन स्त्रियाँ प्रथानुसार अपने मैके चली जाती है तथा अपनी सहेलियों के साथ आमोद-प्रमोद करती हैं।

यह त्यौहार भाई-बहिन की पवित्र स्मृति का द्योतक है। ब्राह्मण का भाग तो प्राय इस दिन के महत्त्व के कारण गौण हो गया है। स्त्रियाँ इस बहाने अपने मैके चली जाती हैं तथा अपनी सहेलियों से मिलने का अवसर प्राप्त कर लेती हैं। झूला, गाना तथा आमोद-प्रमोद स्वास्थ्य के लिए अत्यन्त सुन्दर साधन हैं। इसके द्वारा स्वास्थ्य पर अच्छा प्रभाव पड़ता है। ऐसे सुखदायी अवसरों पर पुत्री अपनी माता के घर से कुछ न कुछ प्राप्त कर लेती है तथा उस घर पर अपना स्वत्व बनाये रखती है। मनुष्यों में भी इस ऋतु में व्यायाम के लिए विशेष रुचि उत्पन्न हो जाती है। इस काल में नगर से दूर प्रात काल का भ्रमण बड़ा ही हितकर है। इस लिए सभी दृष्टिकोण से इस त्यौहार की उपयोगिता दृष्टिगत होती है।

इस प्रकार इन त्यौहारों की उपयोगिता के साथ-साथ जातीय—गौरव परम्परा आदि का भी अत्यधिक महत्व है। इन्हीं कारणों द्वारा जाति को नवीन चेतना तथा स्फूर्ति प्राप्त होती है इसलिए प्रत्येक व्यक्ति को अपने जातीय त्यौहार में पूर्ण उत्साह से सम्मिलित होना चाहिए तथा उनको मनाना चाहिए क्योंकि इसी में देश तथा जाति का कल्याण है।



है कि उनका प्रथम रूप प्राय आमूल परिवर्तित हो जाता है। रक्षाबन्धन पर्व के मनाने मे भी परिवर्तन हुआ। मध्य युग में क्षत्रियो का बोलबाला था। आश्रमो की प्रणाली एकदम परिवर्तित हो चुकी थी। धन-लोलुपता ने ब्राह्मणों मे घर कर लिया था तथा त्यागमय प्रवृति का एक अभाव हो गया था। वे राजाओ के आश्रित रहने के इच्छुक हो गए थे। इसीलिए आश्रम के इच्छुक और असहाय व्यक्ति रक्षाबन्धन करते थे। ब्राह्मणो के साथ-साथ स्त्रियाँ भी रक्षाबन्धन की अधिकारिणी हो गई थी। स्त्रियाँ प्राय अपने भाइयो के ही रक्षाबन्धन करती थी किन्तु अन्य व्यक्ति भी राखी बाधे जाने पर अपने को उस स्त्री का भाई समझता था। उस काल में इस प्रथा का बडा ही महत्व रहा। रक्षाबन्धन करवाने वाला व्यक्ति अपने प्राणो को सकट मे भी डालकर इस राखी की पवित्रता की रक्षा करता था। मध्यकालीन इतिहास इस प्रकार के अनेक उदाहरणो से अकित है, इतिहास इस बात का साक्षी है कि हुमायूँ ने चित्तौड की महारानी कर्णवती की राखी प्राप्त करके अपने सैनिको के विरोध करने पर भी गुजरात के मुसलमान शासक को जो कि चित्तौड पर आक्रमण करने आया था, पहुँचकर उसके दाँत खट्टे किए तथा अपनी धार्मिक बहिन कर्णवती की रक्षा की। मध्युग मे यह प्रथा बहुत महत्वशाली थी।

आधुनिक युग मे न तो इस प्रथा का इतना महत्व ही रहा है और न पूर्वकालीन पवित्रता ही। प्रात काल से ब्राह्मण अपने यजमानो को राखी बाधने के लिए निकल पडते हैं तथा उनसे दक्षिणा प्राप्त करते हैं। बहिनें भी राखी बांधकर अपने भाइयो से दक्षिणा प्राप्त करती है मध्यान्ह के समय इस दिन 'समई' खाने की परिपाटी चल गई है। खीर तो इस मास का मुख्य भोजन माना ही गया है। सायकाल के समय स्त्री-पुरुष अपने बाल-गोपालो सहित विविध प्रकार के मनोरजन प्राप्त करने के लिए जगह-जगह पर जाते है। आजकल तो सभी त्योहारो मे सिनेमा एक विशेष मनोरंजन माना है। अतएव इस दिन भी अधिकाश व्यक्ति सिनेमा देखने के लिए जाते हैं। इस दिन स्त्रियाँ प्रथानुसार अपने मैके चली जाती है तथा अपनी सहेलियों के साथ आमोद-प्रमोद करती हैं।

यह त्यौहार भाई-बहिन की पवित्र स्मृति का द्योतक है। ब्राह्मण का भाग तो प्राय इस दिन के महत्त्व के कारण गौण हो गया है। स्त्रियाँ इस बहाने अपने मैके चली जाती हैं तथा अपनी सहेलियो से मिलने का अवसर प्राप्त कर लेती हैं। झूला, गाना तथा आमोद-प्रमोद स्वास्थ्य के लिए अत्यन्त सुन्दर साधन हैं। इसके द्वारा स्वास्थ्य पर अच्छा प्रभाव पडता है। ऐसे सुखदायी अवसरों पर पुत्री अपनी माता के घर से कुछ न कुछ प्राप्त कर लेती है तथा उस घर पर अपना स्वत्व बनाये रखती है। मनुष्यो मे भी इस ऋतु में व्यायाम के लिए विशेष रुचि उत्पन्न हो जाती है। इस काल में नगर स दूर प्रात काल का भ्रमण बडा ही हितकर है। इस लिए सभी दृष्टिकोण स इस त्यौहार की उपयोगिता दृष्टिगत होती है।

इस प्रकार इन त्यौहारो की उपयोगिता के साथ-साथ जातीय—गौरव परम्परा आदि का भी अत्यधिक महत्व है। इन्हीं कारणो द्वारा जाति को नवीन चेतना तथा स्फूर्ति प्राप्त होती है इसलिए प्रत्येक व्यक्ति को अपने जातीय त्यौहार में पूर्ण उत्साह से सम्मिलित होना चाहिए तथा उनको मनाना चाहिए क्योकि इसी मे देश तथा जाति का कल्याण है।



विजयादशमी (दशहरा)

त्यौहार मनाने की प्रथा प्रत्येक सभ्य जाति मे अति प्राचीन काल से चली आ रही है। ये त्यौहार उस जाति को नवस्फूर्ति तथा चेतना को प्रदान करते ही हैं, साथ ही साथ इनका महत्त्व अन्य कारणो से भी है। हमारा भारतवर्ष धर्मप्रधान देश है। यहा पर प्रत्येक बात पर किसी न किसी रूप में धर्म अवश्यमेव देखने को मिलता है। वैसे तो इन त्यौहारो की सख्या सैकड़ों हैं, परन्तु इनमे से चार—रक्षाबधन, दशहरा, दीपावली, तथा होली बहुत बड़े तथा मुख्य हैं। इनमे से प्रत्येक त्यौहार का किसी व किसी वर्ण विशेष से तो सम्बन्ध है ही, लेकिन फिर सभी वर्ण एव जाति के लोग सभी त्यौहारों को बडे आनन्द तथा उत्साह के साथ मनाते हैं।

यह बात बहुत प्रसिद्ध है कि श्रावणी ब्राह्मणो का, विजयादशमी क्षत्रियों का, दीपावली वैश्यो का तथा होली शूद्रो का विशेष पर्व है। इस प्रकार क्षत्रिय लोग विजयादशमी को विशेप धूमधाम से मनाते रहे हैं। वर्षाऋतु में अस्त्र-सस्त्र मे जग लग जाने के कारण इस अवसर पर उन्हें खूब साफ करके चमकाया जाता था। हाथी, घोडे, रथ, बैलो को खूब सजाया जाता था। चतुरगनी सेना को सुसज्जित कर उनका प्रदर्शन (परेड) होता था। राजे-महाराजे अपनी इस सेना सहित सवार, (जलूस) के रूप मे निकलने थे। महान यज्ञों की रचना कर राजे महाराजे बडे बडे दरबार करने थे जिनमे जनता उन्हें कुछ न कुछ यथाशक्ति सम्मान के रूप में भेंट करती थी। उन दरबारो में कविगण अपने राजा महाराजो, उनके पूर्वजो तथा आर्य जाति की अन्य महान आत्माओं तथा वीर योद्धाओं के यश पराक्रम तथा गुणो का गान करने थे। विद्वान महात्मा तथा सन्यासी राजा-महाराजाओ तथा जनता को उपदेश करते थे।

राजे-महाराजे, सन्यासियो, महात्माओ विद्वानो तथा ब्रह्मचारियों का नाना प्रकार से सत्कार करते थे। उच्चाधिकारियो तथा वीर योद्धाओं को

उनकी प्रशसनीय सेवाओं के पुरस्कार-स्वरूप उपाधिया प्रदान करते थे और अन्य कर्मचारियो और सेवको को पारितोपिक वितरण करते थे। इस दिन वे राजकीय घोषणाएँ करते थे जिनमे वे बनाते थे कि आगामी वर्ष के लिए वे अपनी प्रिय प्रजा के लिए क्या-क्या हितकारी योजनाए कार्यरूप मे परिणत करने जा रहे हैं। वे इस दिन अपनी प्रिय प्रजा के कष्टो को भी सार्वजनकि रूप से सुनते थे और उन कष्टो को तुरन्त विवरण करते थे। प्रत्येक विभाग के मन्त्रियो तथा उच्चाधिकारियो से उनके विभाग के कार्यों में मन्त्रणा देते थे ताकि राज्य प्रत्येक दिशा मे उत्तरोत्तर उन्नति करे। राज्य की ओर से नई फसल के खाद्य पदार्थो का भाव (मूल्य) निश्चित किया जाता था।

वर्षा ऋतु समाप्त हो जाने तथा नई फसल आ जाने के पश्चात् व्यापार जोर के साथ आरम्भ हो जाता था। यात्राएँ भी एक स्थान से दूसरे स्थान को आरम्भ हो जाती थीं।

वैदिक काल समाप्त होने तथा पौराणिक काल आरम्भ होने पर जहाँ आर्य जाति मे अनेक कुरीतियो ने प्रवेश किया, वहा इसके पर्वो का स्वरूप बिगड गया और उनमें कुत्सित रूढिया प्रवेश कर गयीं। हिन्दू रजवाडों में भैंसे तथा बकरो को कई दिन पूर्व से खूब खिला पिलाकर मोटा किया जाता था और उनके शरीर को रगा जाता था और इस दिन राजे-महाराजे, उनके परिवार के लोग तथा अन्य क्षत्रिय इन भैंसो तथा बकरों का तलवार तथा भालो से वध करने लगे। राजाओं महाराजाओं के दरबारो मे विद्वान सन्यासी महात्माओ के उपदेशो के स्थान पर वेश्याओ के नाच-गाने और भाँडो की कव्वालिया होने लगीं।

बगाल प्रांत मे सबसे बडा पर्व विजयादशमी ही समझा जाता है। बगाली लोग काली देवी के उपासक होते है उनका विश्वास है कि कालीदेवी

वकरो के रुधिर से प्रसन्न और तृप्त होती है । अत बगाल मे विजयदशमी के अवसर पर लाखो की सख्या मे बकरो का वध काली के मन्दिरो मे होने लगा और उनके रुधिर की धारा उन मन्दिरों में नदी के रूप में प्रवाहित होने लगी । अकेले कलकत्ता के प्रसिद्ध काली के मन्दिर मे सहस्रो बकरो की बलि होने लगी । यह पशुवलि बगाली हिन्दुओ के माथे पर एक भारी कलक है । कुछ वर्षों से यह अमानुषिक प्रथा कुछ सुधारको के प्रयत्नो से अब कुछ काम है, परन्तु जड मूल-से नष्ट अभी तक नहीं हुई । बगाली हिन्दुओ को चाहिए कि वे इस अमानुषिक प्रथा को जड—मूल से नष्ट करें ।

ऐसा कहा जाता है कि इस दिन मर्यादा पुरुषोत्तम भगवान रामचन्द्र ने रावण का वध करके उस पर विजय प्राप्त की थी—यह बात असत्य और निराधार है । बाल्मीकि रामायण जो भगवान रामचन्द्र के इतिहास के विषय मे सबसे अधिक प्रमाणिक ग्रन्थ समझा जाता है, उसमे स्पष्ट लिखा है कि आश्विन सुदी दशमी अर्थात आज के दिन महाराज रामचन्द्रने पम्पापुर से लका की और प्रस्थान किया था और चैत्र कृष्ण अमावस्या को रावण-वध किया था । इसी तथ्य की पुष्टि तुलसीकृत रामायण आदि मे भी मिलती है ।

अब प्रश्न यह उठता है कि आज मे इस दिन पूव रामलीला मनाने और आज के दिन रावण वध करने की परिपाटी कैसे पड गई ?

वैदिकयुग की समाप्ति और पौराणिक युग के आरम्भ होने पर महापुरुषो के अभिनय (नाटक) खेलने की प्रथा पड गई । राजे-महाराजे, क्षत्रिय गण तथा समस्त जनता आज के दिन पूर्व तथा उत्सव तो मनाती ही थी, इस दिन अभिनय विशेष रूप से किए जाने लगे ।

ससार के महापुरुषो मे भगवान रामचन्द्र का जीवन सर्वश्रेष्ठ और मर्यादाओ से दीप्तिमान था और आज के ही दिन उन्होने रावण पर विजय

प्राप्त करने के लिए पम्पापुर से लका के लिए प्रस्थान किया था, तो लोगों ने आज के ही दिन अभिनय (नाटक) द्वारा वडे उत्सव के रूप मे रावण की बहुत वडी मूर्ति (पुतला) बनाकर उसको जलाना आरम्भ कर दिया और आज से दस दिन पूर्व से भगवान रामचन्द्र का सम्पूर्ण जीवन-चरित्र अभिनय (नाटक) द्वारा ही दिखाना आरम्भ कर दिया।

अज्ञानवश लोगो ने इस प्रकार के प्रदर्शन द्वारा कुछ कपोल कल्पित बातें भी कहनी आरम्भ कर दी। वीर हनुमान और सुग्रीव के पूछ लगा दी गई और उन्हें तथा उनकी जातिवाली सेना को जिसने लका विजय मे भगवान रामचन्द्र का साथ दिया था, बन्दर प्रसिद्ध किया गया। वास्तव मे वनो मे रहने के कारण इन लोगो को वानर नाम की जाति से पुकारा जाता था। लोगो ने यह बात समझकर उन सबको बन्दर ही बना दिया।

मर्यादापुरुषोत्तम भगवान रामचन्द्र का समस्त जीवन आरम्भा से अन्त तक आदर्श तथा मर्यादाओ के पालन करने मे चरम सीमा पहुँचा पर हुआ था। उनके अतिरिक्त महारानी सीता का पतिव्रत-धर्म लक्ष्मण को वडे भाई के लिए कष्ट उठाना, लक्ष्मण की पत्नी उर्मिला का त्याग, भरत का भ्रातृ-प्रेम और हनुमान की स्वामि-भक्ति भी किसी प्रकार कम नही थी।

करोडो की सख्या मे स्त्री और पुरुष प्रतिवर्ष राम लीला देखते हैं, परन्तु उनमे कितने लोग ऐसे हैं जो उपर्युक्त महान आत्माओ के उच्च चरित्र को अपने जीवन मे उतारने का यत्न करते हैं ? समूचे देश मे रामलीला उत्सव मनाने पर जो करोडो रुपया प्रतिवर्ष व्यय किया जाता है, उसके मुकाबले में जाति को लाभ लेशमात्र नही पहुँचता। देखने मे तो यह आ रहा कि राम लीला करने वालो तथा देखने वालो दोनो का ही चरित्र और अधिक गिरता जा रहा है। यदि रामलीला के प्रबन्ध को तथा उसमें भाग लेने वाले

पात्रो का चरित्र स्वय ऊचा तथा पवित्र नही है तो उस प्रकार की लीला को देखने वालो का चरित्र कहा से ऊँचा तथा पवित्र बन सकता है ?

अत देश के चरित्रवान एव विद्वान सुधारकों को इस ओर भी एक नया कदम उठाना चाहिए।

रंग रंगील होली

मनुष्य स्वभाव से ही आनन्दप्रिय प्राणी है। वह अपने जीवन का प्रत्येक क्षण आनन्द और उत्साह से बिताना चाहता है। त्योहार मानव की इस हर्षोन्माद तथा श्रद्धा भावना के ही परिचायक हैं। प्रत्येक दिशा में अपनी-अपनी रीति रिवाजो के अनुसार त्योहार मनाए जाते हैं। हरेक जाति का अपना कोई न कोई त्योहार होता है, जो उस जाति के जनसमुदाय के जीवन को नया उल्लास और राग रजित करता है। त्योहार से मानव जीवन की उदासी और निराशा कुछ समय के लिए दुर हो जाती है। ससार के सघर्षों में आगे बढने के लिए जीवन में एक नया उत्साह मिलता है।

हिन्दू-समाज में हर मास कोई न कोई त्योहार या व्रत आता ही रहता है फिर भी हिन्दू समाज के चार प्रमुख त्योहार माने जाते हैं—होली, रक्षा-बन्धन, दशहरा और दिवाली। हिन्दू समाज मुख्य रूप से चार वर्णो मे बटा हुआ है। रक्षा बन्धन ब्राह्मणो का, दशहरा क्षत्रियों का, दीवाली वैश्य समाज का और होली शूद्रो का त्योहार माना जाता है। यद्यपि प्रत्येक त्योहार किसी वर्ण विशेष से सम्बन्ध रखता है, फिर भी प्रत्येक हिन्दू बिना किसी भेदभाव के हरेक त्योहार को पूण श्रद्धा और प्रेम से अपना समझकर मनाता है।

होली आशा और उत्साह का त्योहार है। भारत मे बसन्त ऋतु एक

बहुत ही सुहावनी ऋतु होती है। प्रकृति मे एक नया भाव भर जाता है, जिसमे यहाँ के रहने वालो मे एक नई उमग और नये जीवन का आनन्द छा जाता है। होली के आगमन मे समाज मे ऊँचे नीचे का भाव एक दूसरे के बीच से उठ जाता है। सभी एक दूसरे के साथ अपनत्व की भावना लेकर स्नेह से गले मिलने के लिए लालायित हो उठते हैं। होली का रग सभी के हृदय के मनो मालिन्य को धोकर नये प्रेम और अपनत्व के बन्धनो मे बाध देता है। वर्ष भर का मन का मैल धुल जाता है और सभी एक होकर बड़े ही चाव से होली मनाते हैं।

होली शिशिर ऋतु की समाप्ति पर मनाया जाता है। शिशिर ऋतु की समाप्ति पर वसन्त ऋतु का मादक वातावरण देश की जनता मे एक नया हर्ष भर देता है। इसके साथ ही इन दिनो मे किसानो की फसल पक कर तैयार हो जाती है। किसान अपनी इस लहलहाती कमाई को देखकर आनन्द से भर जाता है, वह अपने परिश्रम को इस प्रकार सफल होता देखकर अपने प्रभु को धन्यवाद देता है प्रसन्न होकर होली का त्योहार मनाता है।

होली के साथ एक प्राचीन कथा का सम्बन्ध भी है। कहते हैं कि बहुत पुराने जमाने मे हिरण्यकश्यप नाम का एक अहंकारी और नास्तिक विचारो का राजा था। उसका पुत्र प्रह्लाद ईश्वर भक्त और बढ़े ही धार्मिक विचारो का बालक था। अनेक प्रयत्न करने पर भी जब प्रहलाद का कुछ नहीं बिगाड सका, तो उसने प्रहलाद को अपनी बहिन होलिका की गोद मे बैठाकर आग मे जला देने का प्रयत्न किया, परन्तु राजा का यह प्रयत्न भी असफल हुआ और प्रहलाद जलती आग मे से भी बच गया। उसको आग मे लेकर बैठने वाली राक्षसी होलीका जलकर भस्म हो गई। इसी प्रसन्नता मे प्रतिवर्ष भारतीय जनता होली मनाती है। लकडियो का एक बडा ढेर एकत्र

पात्रो का चरित्र स्वय ऊचा तथा पवित्र नही है तो उस प्रकार की लीला को देखने वालो का चरित्र कहा से ऊँचा तथा पवित्र बन सकता है ?

अत देश के चरित्रवान एव विद्वान सुधारको को इस ओर भी एक नया कदम उठाना चाहिए।

रंग रंगील होली

मनुष्य स्वभाव से ही आनन्दप्रिय प्राणी है। वह अपने जीवन का प्रत्येक क्षण आनन्द और उत्साह से बिताना चाहता है। त्योहार मानव की इस हर्षोन्माद तथा श्रद्धा भावना के ही परिचायक हैं। प्रत्येक दिशा मे अपनी-अपनी रीति रिवाजो के अनुसार त्योहार मनाए जाते हैं। हरेक जाति का अपना कोई न कोई त्योहार होता है, जो उस जाति के जनसमुदाय के जीवन को नया उल्लास और राग रजित करता है। त्योहार से मानव जीवन की उदासी और निराशा कुछ समय के लिए दूर हो जाती है। ससार के सघर्षों में आगे बढने के लिए जीवन मे एक नया उत्साह मिलता है।

हिन्दू-समाज में हर मास कोई न कोई त्योहार या व्रत आता ही रहता है फिर भी हिन्दू समाज के चार प्रमुख त्योहार माने जाते हैं—होली, रक्षा-बन्धन, दशहरा और दिवाली। हिन्दू समाज मुख्य रूप से चार वर्णो मे बटा हुआ है। रक्षा बन्धन ब्राह्मणो का, दशहरा क्षत्रियो का, दीवाली वैश्य समाज का और होली शूद्रो का त्योहार माना जाता है। यद्यपि प्रत्येक त्योहार किसी वर्ण विशेष से सम्बन्ध रखता है, फिर भी प्रत्येक हिन्दू बिना किसी भेदभाव के हरेक त्योहार को पूर्ण श्रद्धा और प्रेम से अपना समझकर मनाता है।

होली आशा और उत्साह का त्योहार है। भारत मे वसन्त ऋतु एक

बहुत ही सुहावनी ऋतु होती है। प्रकृति में एक नया भाव भर जाता है, जिसमें यहाँ के रहने वालों में एक नई उमंग और नये जीवन का आनन्द आ जाता है। होली के आगमन से समाज में ऊँचे नीचे का भाव एक दूसरे के बीच से उठ जाता है। सभी एक दूसरे के साथ अपनत्व की भावना लेकर स्नेह से गले मिलने के लिए लालायित हो उठते हैं। होली का रंग सभी के हृदय के मनो-मालिन्य को धोकर नये प्रेम और अपनत्व के बन्धनों में बांध देता है। वर्ष भर का मन का मैल धुल जाता है और सभी एक होकर बड़े ही चाव से होली मनाते हैं।

होली शिशिर ऋतु की समाप्ति पर मनाया जाता है। शिशिर ऋतु की समाप्ति पर वसन्त ऋतु का मादक वातावरण देश की जनता में एक नया हर्ष भर देता है। इसके साथ ही इन दिनों में किसानों की फसल पक कर तैयार हो जाती है। किसान अपनी इस लहलहाती कमाई को देखकर आनन्द से भर जाता है, वह अपने परिश्रम को इस प्रकार सफल होता देखकर अपने प्रभु को धन्यवाद देता है प्रसन्न होकर होली का त्यौहार मनाता है।

होली के साथ एक प्राचीन कथा का सम्बन्ध भी है। कहते हैं कि बहुत पुराने जमाने में हिरण्यकश्यप नाम का एक अहंकारी और नास्तिक विचारों का राजा था। उसका पुत्र प्रह्लाद ईश्वर भक्त और बड़े ही धार्मिक विचारों का बालक था। अनेक प्रयत्न करने पर भी जब प्रह्लाद का कुछ नहीं बिगाड़ सका, तो उसने प्रहलाद को अपनी बहिन होलिका की गोद में बैठाकर आग में जला देने का प्रयत्न किया, परन्तु राजा का यह प्रयत्न भी असफल हुआ और प्रहलाद जलती आग में से भी बच गया। उसको आग में लेकर बैठने वाली राक्षसी होलीका जलकर भस्म हो गई। इसी प्रसन्नता में प्रतिवर्ष भारतीय जनता होली मनाती है। लकड़ियों का एक बड़ा ढेर एकत्र

कर उसमे आग लगाई जाती है और कल्पना की जाती है कि दुष्ट होलिका जल गई तथा भक्त प्रहलाद बच गया ।

होली के दूसरे दिन इस प्रसन्नता को प्रगट करने के लिए रग और गुलाल से लोग खेलते हैं । सारा दिन आनन्द और मस्ती से व्यतीत होता है । यो तो यह त्योहार बसन्त पचमी से ही आरम्भ हो जाता हैं, परन्तु इसका मुख्य दिन फाल्गुन की पूर्णिमा का दिन होता है । लोग महीना भर पहले से ही थोड़ा-थोडा लकडी और अन्य ईंधन एकत्र करना शुरू कर देने हैं और होली के मुख्य दिन सब इकट्ठे होकर एक नियत समय पर लकडियो के ढेर की पूजा कर इसमें आग लगा देते हैं । सभी मिलकर गाना बजाना करते हैं, किसान लोग अपने खेनो से नया अन्न लाकर इसमे गर्म करके आपस मे बाट कर खाते हैं । ऐसा करना वे एक प्रकार से शुभ समझते हैं और इस प्रकार अग्नि देवता को नया अन्न भेंट करके उसे प्रसन्न करते हैं।

दूसरा दिन 'दुलेंडी' माना जाता है। इस दिन भी राग रग चलता है । रग गुलाल का यह विशेष दिन होता है । सभी एक दूसरे पर रग डालकर और गुलाल लगाकर हर्ष प्रकट करते हैं परस्पर गले मिलते हैं, तथा स्नेह सम्बन्ध की मिठाइया बटती हैं, प्रीतिभोज होते है । यह दिलों को मिलाने वाला दिन होता है, नया स्नेह सम्बन्ध बाधता है । इस दिन शत्रु भी कुछ देर के लिए अपनी शत्रुता भुला कर आपस में एक दूसरे के गले लग जाते हैं । एक बार फिर जीवन मे नई आशाएं, नई उमगे लहलहा उठती हैं । अतः होली का त्योहार भारतीय जनता के जीवन के आनन्द और उल्लास का त्योहर है ।

युगो से चले आते इस पवित्र त्योहार के मनाने, में लोगो ने कुछ गलत धारणाएं भी अपने मन मे पैदा कर ली हैं । कुछ लोग इस शुभ दिन

गांजा, भांग, सुलफा तथा शराब पीना शुभ समझते हैं। परन्तु यह न तो शुभ ही है और न हर्ष मनाने का उचित ढंग। होली भारतीय संस्कृति का एक पवित्र त्योहार है। ऐसे महान पवित्र पर्व के दिन यदि हम व्यसनों और कुरीतियों की ओर बढ़ते हैं, तो इससे हम त्योहार के वास्तविक महत्व से बहुत दूर हट जाते हैं अत. हमें इस दिन को एक पवित्र और मंगलमय त्योहार के रूप में ही मनाना चाहिए।

दीपावली

यों तो प्राय सभी देशों और जातियों के अपने त्योहार और पर्व होते हैं परन्तु भारतवर्ष त्योहारों का एक विशेष देश माना जाता है। यहां प्रतिमास कोई न कोई त्योहार या पर्व आता ही रहता है। त्योहार राष्ट्रीय-जीवन में एक नया उल्लास और आशा लेकर आते हैं। नित्य-प्रति की नीरसता से जब मानव थक जाता है, तब उसके जीवन की इस एकरसता को दूर करने के लिए त्योहारों का अपना एक विशेष महत्व रहता है।

भारत में अनेक धर्म और समुदायों के मनाने वाले लोग रहते हैं, इसलिए आये दिन कोई न कोई त्योहार प्राय आता ही रहता हैं, फिर भी इस देश की हिन्दू जाति के प्रमुख चार त्योहार माने जाते हैं। रक्षा-बन्धन का श्रावणी-पर्व, धर्म और शास्त्र का प्रमुख त्योहार होता है, दशहरा युद्ध और शस्त्रों की महत्ता से पूर्ण रहता है तथा होली खेल और राग रंग का त्योहार है परन्तु दीवाली भारतीय गृहस्थों का त्योहार है, जन समाज का त्योहार है।

दीपावली को वास्तव में त्योहारों का एक अजायबघर ही कहना चाहिए। मानने को तो यह त्योहार पांच दिन तक माना जाता है, परन्तु

इसका वास्तविक रूप मे प्रारम्भ नवरात्रो से ही हो जाता है और यम-द्वितीया को भाई-बहन की भेंट मे उसके आनन्द की समाप्ति होती है।

दीपावली हर वर्ष नया संदेश और नया उत्साह लेकर आती है। इस शुभ दिन से हमे एक नया आदर्श और नई कल्पना मिलती हैं जनता बहुत समय पहले ही इस शुभ दिन की प्रतिक्षा करने लगती है और तैयारिया शुरू हो जाती हैं। प्राचीन काल मे व्यापारी जहाजो में बैठकर समुद्र पार जाते थे और अनेक देशो की यात्रा के बाद दीपावली पर अपने घर वापिस आकर अपने कुटुम्बियों से मिलकर आनन्दोत्सव मनाते थे, घर मे लक्ष्मी का पदार्पण होता था। इस प्रकार दीपावली गृहस्थ–जीवन का एक सौभाग्यपूर्ण त्योहार बन जाता था।

दीपावली जिस प्रकार अपने चारो ओर अनेक त्योहारो का सम्बन्ध बांधे हुए है, उसी प्रकार इसके साथ अनेक पौराणिक कथाएँ भी गुंथी हुई हैं। सुना जाता है कि दशहरे के दिन भगवान राम ने विजय पाई और दीपावली के दिन वे भरत लक्ष्मी सीता सहित अयोध्या मे पधारे। उस दिन की प्रसन्नता मे यह शुभ पर्व देश मे प्रचलित हुआ। राम की रावण पर विजय, मानों सत्य की असत्य पर विजय थी और यह सत्य ही यहा के जीवन में दीपावली बनकर आया।

इसी प्रकार एक दूसरी कथा भी दीपावली के साथ जुडी हुई है। कहा जाता है कि प्राचीन काल में प्राग ज्योतिष नामक नगर मे एक नरकासुर नाम का दुष्ट राजा राज्य करता था। वह अपने बल पराक्रम से यहा के अनेक राजाओ को पराजित करके उसकी कन्याओ को छीन ले गया और अपने करागार मे बन्दी बनाकर डाल दिया। भगवान् कृष्ण ने अपनी पत्नी सत्तभामा के साथ जाकर उसे युद्ध मे पराजित किया और और उन कन्यो को बन्दीखाने से मुक्त किया।। उस दूराचारी नरकासुर के मर जाने पर सारे देश ने आनन्द मनाया और कार्तिक की अमावस्या की रात भी अपनी दीप-पक्तियो से पूर्णिमा की रात बना दी।

लेकिन यह नरकासुर हर वर्ष जन्म लेता है और उसे हर वर्ष मारना पड़ता है। वर्षा ऋतु में उत्पन्न होने वाली गन्दगी से गाँव और नगर एक प्रकार से चारों ओर से घिर जाते हैं, उस गन्दगी से अनेक प्रकार के रोगों के कीटाणु चारों ओर फैल कर जनता के जीवन को त्रस्त कर देते हैं, तब इस दुष्ट राक्षस को मारने के लिए देश की जनता कुदाली और फावड़ों से उससे युद्ध करती है तथा विजय पाकर तेल के दीपकों का प्रकाश करके उसकी शेष सेना मच्छरों और अन्य कीटाणुओं को भी नष्ट करती है। लोग मिठाइयाँ खाते हैं, प्रसन्नता मनाते हैं।

यह त्योहार प्रायः भारत के सभी प्रान्तों में मनाया जाता है। लोग अपने-अपने घरों और दुकानों को सजाते हैं, द्वारों पर 'स्वागतम्' 'लक्ष्मी सदा सहाय' आदि लिखते हैं। देवताओं और नेताओं के चित्रों से घर का सौन्दर्य बढ़ाते हैं। बाजारों में चहल-पहल बढ़ जाती है। अमीर और गरीब सभी में एक नया उत्साह दिखाई देता है। मिट्टी के हाथी, घोड़े और बन्दर मिठाई के बतख, बटेर से लेकर ऊँचे-ऊँचे घंटाघर तक खाने को मिलते हैं। धनतेरस के दिन बर्तनों की दुकानों पर विशेष भीड़ रहती है। इस दिन गरीब से गरीब गृहस्थ भी एक-दो बर्तन लेने की कामना करता है।

दीपावली विशेषकर व्यापारियों का त्योहार माना जाता है। दिवाली के बाद उनका नया वर्ष आरम्भ होता है। बही-खाते बदले जाते हैं, पुरानी उधार चुका दी जाती है। आगे आने वाले वर्ष की शुभ-कामना में रात को गणेश और लक्ष्मी की पूजा होती है। सभी गृहस्थ अपने-अपने घरों में एक साथ बैठकर इस पूजा में श्रद्धा और भक्ति से भाग लेते हैं।

किसान लोग इस दिन नये अन्न के आने की खुशी मनाते हैं। पहले भगवान को भोग लगाया जाता है और तब उस नए अन्न को प्रयोग में लाते हैं। यह प्रथा इस देश में बहुत काल से चली आती है। महाराष्ट्र में इस नये अन्न से पहले कुछ कड़वी चीज खाई जाती है, गोवा में इस दिन चिउड़ा की मिठाई खाने का महत्त्व है, जिसमें सभी इष्ट-मित्र सम्मिलित होते हैं। पंजाब में यह दिन गुरु गोविन्द जी के मुसलमानों के कारागार से मुक्ति पाने

की प्रसन्नता में भी मनाया जाता है। आर्य-समाज के प्रतिष्ठापक श्री स्वामी दयानन्द का निर्वाणोत्सव भी इसी प्रकार मनाया जाता है। दीपावली भारतीय समाज का एक बहुत ही महत्त्वपूर्ण त्योहार है। यह पर्व देवी की नवरात्र-पूजा से प्रारम्भ होकर भाई के मस्तक पर लगाई जाने वाली बहिन की प्रसन्नता-भरी रोली उत्सव मे भैया-दूज के दिन समाप्त होता है।



बसंत

मानव-जीवन की भाति समय भी परिवर्तनशील है। जिस प्रकार मनुष्य के जीवन मे भिन्न-भिन्न काल आते हैं, उसी प्रकार प्रकृति भी बचपन, यौवन और बुढ़ापे की स्थिति को प्राप्त करती है। प्रकृति मे कभी-कभी शोक, दुख और व्याकुलता होती है, तो कभी वह एक सुविकसित युवती की भाति मदमाती विलसित होती है। उसकी छटा भी निराली है। बसत प्रकृति का यौवन है। मनुष्य का यौवन जैसे सुहावना, मनोहरी और मोहक होता है, वैसे ही बसत प्रकृति रूपी युवती का अत्यन्त छटापूर्ण साकार यौवन है। बसत आया और प्रकृति खिल उठी। नव-पल्लव अकुरित होते हैं और अर्द्ध-विकसित पुष्प खिल जाना चाहते हैं।

इसे 'मधुमास' भी कहते हैं। प्रकृति मे माधुर्य, मादकता और सौंदर्य भर जाता है। उस समय ऐसा प्रतीत होता है, जैसे ससार के पुराने नियमों के स्थान पर नए नियम लागू हो गये हैं। उन नियमो का प्रभाव प्रकृति पर भी पडता है और वह इसका प्रमाण अपने वस्त्र बदल कर देती है। शिशिर की कडी ठण्ड से वह दुबक-सी जाती थी और अब समय अनुकूल जानकर वह खिल उठना चाहती है, जिसके फलस्वरूप उसमें स्पन्दन और स्फूर्ति का सचार होता है और वह पतझड की ध्वसात्मक प्रवृत्ति को रोक कर उस ध्वस के आधार पर नवीन रचना करती है, तभी तो अग्रेजी कवि 'शैले' ने कहा है कि यदि

शिशिर आएगा तो क्या बसंत दूर रहेगी ? नहीं, नहीं ! वह तो शिशिर की अनुगामिनी है और अवश्य ही सर्द ऋतु का अन्त उसके आगमन की घोषणा कर रहा है।

बसंत को ऋतुराज कहा जाता है। सारी प्रकृति नववधू की भांति शोभायमान हो जाती है। पतझड़ में पेड़ पत्तों से शून्य हो जाते हैं, परन्तु बसंत में पुनः उन पर एक बार यौवन का उभार आ जाता है। फिर कोयल कूकने लगती है। आमों पर बौर आ जाता है। बागों में भंवरों के गीत और तितलियों के उल्लासमय नृत्य प्रारम्भ हो जाते हैं। केवल यही नहीं, चारों ओर पीतवर्ण छा जाता है। कितने ही लोग उस समय प्राकृतिक दृश्यों को देखने के हेतु ग्राम ग्राम घूमते हैं। खेतों की सरसों देखकर तो यही प्रतीत होता है कि मानो प्रकृति-नटी ने पीली ओढ़नी ओढ़ रखी है। इस प्रकार के दृश्यों के कारण उस समय यही अभिलाषा होती है कि काश सदैव यही ऋतु रह पाती। इसके अस्थायित्व ने ही तो एक कवि को यह कहने पर विवश कर दिया है।

बसंती पवन ने हसाया चमन,
यह मिलन का समय, रूठ जाना नहीं,
लोरियों को सुनाती हुई कोकिला,
पुष्प शिशु को स्वरों में सुलाने लगी।
झूलना डालकर झूलती डाल पर,
पल्लवों का हिंडोला डुलाने लगी।
मंजरी ने इशारे किए नैन से,
कौन समझा, न जाना किसी ने कहीं।
अर्घ्य शबनम लिए द्वार पर है खड़ी,
ज्यों प्रवासी पिया को बुलाने लगी।

इस ऋतु में कवि तो क्या सभी व्यक्ति चाहे वह धनी हो अथवा निर्धन सशक्त हो अथवा निःशक्त सभी इसके इच्छुक होते हैं। कारण कि जब मौसम

की प्रसन्नता में भी मनाया जाता है। आर्य-समाज के प्रतिष्ठापक श्री स्वामी दयानन्द का निर्वाणोत्सव भी इसी प्रकार मनाया जाता है। दीपावली भारतीय समाज का एक बहुत ही महत्त्वपूर्ण त्योहार है। यह पर्व देवी की नवरात्र-पूजा से प्रारम्भ होकर भाई के मस्तक पर लगाई जाने वाली बहिन की प्रसन्नता-भरी रोली उत्सव मे भैया दूज के दिन समाप्त होता है।



बसंत

मानव-जीवन की भाति समय भी परिवर्तनशील है। जिस प्रकार मनुष्य के जीवन में भिन्न-भिन्न काल आते हैं, उसी प्रकार प्रकृति भी बचपन, यौवन और बुढ़ापे को स्थिति को प्राप्त करती है। प्रकृति में कभी-कभी शोक, दुख और व्याकुलता होती है, तो कभी वह एक सुविकसित युवती की भाति मदमाती विलसित होती है। उसकी छटा भी निराली है। बसत प्रकृति का यौवन है। मनुष्य का यौवन जैसे सुहावना, मनोहरी और मोहक होता है, वैसे ही बसत प्रकृति रूपी युवती का अत्यन्त छटापूर्ण साकार यौवन है। बसत आया और प्रकृति खिल उठी। नव-पल्लव अकुरित होते हैं और अर्द्ध-विकसित पुष्प खिल जाना चाहते हैं।

इसे 'मधुमास' भी कहते हैं। प्रकृति मे माधुर्य, मादकता और सौंदर्य भर जाता है। उस समय ऐसा प्रतीत होता है, जैसे ससार के पुराने नियमों के स्थान पर नए नियम लागू हो गये हैं। उन नियमो का प्रभाव प्रकृति पर भी पडता है और वह इसका प्रमाण अपने वस्त्र बदल कर देती है। शिशिर की कडी ठण्ड से वह दुबक-सी जाती थी और अब समय अनुकूल जानकर वह खिल उठना चाहती है, जिसके फलस्वरूप उसमें स्पन्दन और स्फूर्ति का सचार होता है और वह पतझडकी ध्वसात्मक प्रवृत्ति को रोक कर उस ध्वस के आधार पर नवीन रचना करती है, तभी तो अग्रेजी कवि 'शैले' ने कहा है कि यदि

शोभा क्यों धारण कर लेती है ? भारत भू किन लाडलों के लिए आज प्रेम भरे गीत गाने को उत्सुक है ? कवि भी तो सत्य ही कहता है —

इन पर फूल चढाने मानो
दुनिया भर के फूल जो खिलते।

भारत-भूमि अपने लाडले पुत्रों पर गर्व करती है और ऐसा हो भी क्यों न ? उन्होंने उनकी कोख को सजाया नहीं ? अपने देश तथा धर्म पर वे न्योछावर हो गए हैं। इसलिए प्रतिवर्ष दुनिया भर के फूल उन लाडले माँ के बेटों की समाधि पर हर्ष और गर्व से विकसित होते हैं। तभी तो किसी ने कहा है —

शहीदों की चिताओं पर लगेंगे हर बरस मेले।
वतन पर मिटने वालों का यही बाकी निशां होगा॥



उपवन की शोभा

मनुष्य अपने जीवन की शान्ति और सुख के लिए सदा प्रकृति की रमणीय गोद में विश्राम करता है। मानव जीवन के सभी रूप प्रकृति में प्राप्त हो जाते हैं आजकल के इस व्यस्त जीवन में प्रकृति का आनन्द दुर्लभ हो गया है। नगरों में प्राय उपवन मिलते हैं। जहां सायंकाल को बालक, वृद्ध, गृहस्थ और सन्यासी बैठे हुए मिलते हैं। इसी प्रकार प्रात काल के सौन्दर्य का रसपान करने के लिए बहुत से व्यक्ति शीघ्र उठकर समीप वाले या दूर वाले उपवन तक जाते हैं। उपवन की शोभा सुखदायक होती है।

सुहाना होता है, तो कार्य करने की शक्ति स्वय ही आ जाती है और फिर वसत तो त्याग और बलिदान का घोषक है। बसती रग तो मानो त्याग और बलिदान का ही रग है। यह तो वह ऋतु है, जिसमे गुरु गोविंद के मासूम बच्चे देश और धर्म की बलिवेदी पर न्योछावर हो गए थे। वीर 'हकीकत' ने अपने यौवन रूपी पुष्प को विकसित होने से पूर्व ही देश की वेदी पर अर्पण कर दिया था। आज भी चमकोर दुर्ग की मिट्टी उन वीर शहीदो के रग से रगी मालूम देती है, जो कि अपने दर्शन-मात्र से ही देश और धर्म पर बलि देने की स्फूर्ति नवयुवक मे भर देती है, तभी तो किसी कवि ने कहा —

मधु ऋतु आई फाल्गुन की फिर लेकर नई बहार,
एक नई शक्ति का करती वीरो मे सचार।

जब-जब वसत ऋतु आती,
बलिदानों की याद दिलाती।
वीरों का उत्साह बढाती,
देकर अपना प्यार।
कलगी धर के नन्हें बच्चे,
बलि हुए चमकोर दुर्ग पर अजीत और जुझार।

इस लिए तो चारो ओर वसत ऋतु में मेले लगते हैं हर्षोउल्लास में बच्चे खेलते हैं, देश की फसलें कटती हैं, देश धन धान्य से भर जाता है। कृषक लोग मस्त हो जाते हैं। यह वसत ही तो उनका बडा त्योहार है। वह इन्ही दिनो अपने घरों में दीपावली की भाति रोशनी करते हैं, क्योंकि दीपाली लक्ष्मी पूजन का त्योहार कहा गया है और उसको लक्ष्मी के दर्शन देने वाली मूल-शक्ति यह वसत ऋतु ही है। लेकिन इस ऋतु के फूलो को विकसित होते देखकर कभी-कभी यह मन में प्रश्न होता है कि इनका वह उल्लास क्या किसी के स्वागत के लिए तो नहीं है? प्रकृति-माता इनकी

शोभा क्यों धारण कर लेती है ? भारत भू किन लाडलों के लिए आज प्रेम भरे गीत गाने को उत्सुक है ? कवि भी तो सत्य ही कहता है —

इन पर फूल चढाने मानो
दुनिया भर के फूल जो खिलते।

भारत-भूमि अपने लाडले पुत्रों पर गर्व करती है और ऐसा हो भी क्यों न ? उन्होंने उनकी कोख को सजाया नहीं ? अपने देश तथा धर्म पर वे न्यौछावर हो गए हैं। इसलिए प्रतिवर्ष दुनिया भर के फूल उन लाडले माँ के बेटों की समाधि पर हर्ष और गर्व से विकसित होते हैं। तभी तो किसी ने कहा है —

शहीदों की चिताओं पर लगेंगे हर बरस मेले।
वतन पर मिटने वालों का यही बाकी निशां होगा ॥



उपवन की शोभा

मनुष्य अपने जीवन की शान्ति और सुख के लिए सदा प्रकृति की रमणीय गोद में विश्राम करता है। मानव जीवन के सभी रूप प्रकृति में प्राप्त हो जाते हैं आजकल के इस व्यस्त जीवन में प्रकृति का आनन्द दुर्लभ हो गया है। नगरों में प्राय उपवन मिलते हैं। जहा सायकाल को बालक, वृद्ध, गृहस्थ और सन्यासी बैठे हुए मिलते हैं। इसी प्रकार प्रात काल के सौन्दर्य का रसपान करने के लिए बहुत से व्यक्ति शीघ्र उठकर समीप वाले या दूर स्थित उपवन तक जाते हैं। उपवन की शोभा सुखदायक होती है।

मेरे घर से थोड़ी दूर नगर पालिका समिति द्वारा अनुशासित एक उपवन है। इस उपवन की शोभा देखते ही बनती है। इस उपवन के पिछले भाग मे नदी बहती है। इस नदी से इस उपवन के जीवन को रस प्राप्त होता है। किनारे पर बडे-बडे आम और जामुन के वृक्ष खडे हैं जो अपनी तरल छाया से नदी से जल को ताप और शीत से बचाते हैं। ऐसा मालूम होता है मानो ये वृक्ष नदी के दर्पण मे अपनी बसती शोभा को देख रहे हो।

उपवन का द्वार अत्यन्त शोभा है। उपवन के आस-पास के लोग इसकी मिश्रित सुगन्ध से आनन्द अनुभव करते हैं द्वार को पार करते ही सामने एक सीधी पक्ति मे काफी दूर तक गुलाब के पौधे लगे हुए हैं। ये पक्तिया तीन श्रेणियो में विभाजित हैं। पहली श्रेणी सफेद गुलाब की है। सफेद गुलाव शरद् ऋतु के बादलो की तरह झूमता है। धीरे-धीरे गुलाब के इन फूलो में सोने का-सा रग उभरता है और गुलाबी रग की हलकी-सी चमक आंखो को चकाचौंध करती हुई मन को गुदगुदाती है। एक दम लाल गुलाब की पक्ति प्रारम्भ हो जाती है और फिर पीले गुलाब से लालिमा। तिरगी चूनर ओढे हुए प्रकृति का अनुपम सौन्दर्य मन को मुग्ध कर लेता है।

उपवन की बाई ओर मेहन्दी के लहलहाते पौधे आत्मा की सुगन्ध बाटते है। यह सुगन्ध मस्ती भरी होती है। मन कहता है कि ससार की समस्त माया को छोड सुगन्ध से जीवन को तृप्त करना चाहिए। परन्तु सौन्दर्य का सागर अपार है और इच्छा मनुष्य को किसी एक सुख मे मग्न नही रहने देती। इस सुगन्ध से हमारा मन एक दम न जाने क्या-क्या सोचता है। यही मेंहदी हाथों पर लगकर छोटे बडे अमीर गरीब को दुनियां में एक नया रग भर देती है। इसी कल्पना में आगे बढ़कर पांव रुक जाते हैं। हम चारो ओर देखते है कि यह अनोखी सुगध कहां से आई।

एक ओर एक छोटा-सा पौधा है। यह पौधा सादा है और फूल का रूप बिलकुल हरा और कहीं थोडा नीला। गिनती की पक्तिया और रस भरी डाली। इस फूल का नाम चम्पा है। आकर्षण-हीन फूल में सुगन्धि का यह

साम्राज्य। प्रशंसा के लिए शब्दों का अभाव है। लगता है कि जैसे कि प्रकृति हमें शिक्षा दे रही है कि रूप ही न देखो गुण भी देखने चाहिएँ। साधारण शरीर में असाधारण आत्मा अपना गुण सारे वातावरण को प्रदान कर रही है। चम्पा के पुष्प देखते ही न जाने कितने कवियों की माधुर्य भावना हृदय में रम गई। सुनते हैं भौंरा इसके पास नहीं आता। ठीक है वहाँ तो रूप का अभाव है अथवा भौंरे मे उसके गुण के प्रकाश को सहन करने की शक्ति नहीं है।

चम्पा के बाद एक अनोखा वृक्ष है। हरे और पीले काँटेदार शरीर वाला वृक्ष है। दूर से ऐसा लग रहा था कि यह काँटे यहाँ क्यों आए। परन्तु उस भीनी और अच्छी लगने वाली सुगंधि का मूल यह केवड़ा है, यह जानकर आश्चर्य हुआ। केवड़े के इत्र लगाते समय इस रूप की कल्पना भी नहीं की जा सकती। इस केवड़े की बाल बड़ी सुगंधित और सुन्दर होती है। उपवन का यह भाग देख कर जब आगे बढ़ते हैं तो फलों का थोड़ा सा वृक्ष समुदाय है।

उपवन की बायी ओर वाली पंक्ति मे अशोक की पंक्तियों ने उपवन के सौन्दर्य को चार चाँद लगा दिए हैं। अशोक की लाल लरजती हुई कलियाँ और किसलय जैसे लज्जा की साकार मूर्ति हैं। अशोक के वृक्षों के पास मौलिश्री के पौधे हैं। जिनके लाल और सफेद रंग वाले फूल मनोहर हैं। मार्ग के इधर-उधर क्यारियों मे बसन्त बहार, बेला रात की रानी, गुलमौर आदि के पौधे हैं। जो व्यक्ति एक बार उपवन मे आता है वह फिर सब कुछ भूल जाता है। रंग-बिरंगे और भिन्न-भिन्न नाम वाले अनेक सुगंध और निर्गंध पुष्प उपवन का शृंगार करते हैं। स्वभाव से बढ़ने वाली बेलें जैसे वन्दन वार सजा रही हैं? गुच्छेदार पुष्प ऐसे लगते हैं जैसे प्रकृति के कानों में लटके झुमके हों।

इस प्रकार उपवन की शोभा जीवन को नया आनन्द प्रदान करती है। मन को रमाती है और उल्लास को हंसाती है। सारे मानसिक दुःख दूर हो जाते हैं। ऐसे उपवन नगरों में और हों जिससे अधिक संख्या में लोग लाभ उठा सकें। उपवन की शोभा जीवन की शोभा है। गाँव, नगर, सब स्थानों

में इस प्रकार के प्राकृतिक उपवन अत्यन्त आवश्यक हैं। इनकी सुरक्षा और अभिवृद्धि का ध्यान भी नागरिकों को करना चाहिए।

प्रातःकालीन नदी-तट का दृश्य

वह भी कितना सुन्दर सुहावना दृश्य था। धीरे-धीरे रात्रि का गहन अन्धकार मिटता जा रहा था और प्राची से ऊषा की कोमल और मधुर लालिमा फूटती आ रही थी। मैं नदी-तट पर पड़ी एक सुन्दर-सी शिला पर बैठा, भावमुग्ध हो यह सब देख रहा था। मन्द-मन्द बहती वायु के शीतल स्पर्श से तन मे एक मीठी सिहरन-सी दौड़ जाती थी।

ऊषा की प्रथम लाली के साथ ही पक्षियों की चहचहाट प्रारम्भ हो गई, मानो सब मिलकर किसी अनन्य शक्ति के गुणगान में तल्लीन हों। सामने ही अपनी मन्द गति से भागीरथी गंगा कल्लोल करती बहती जा रही थी। तभी सामने से बाल-रवि की प्रथम किरणों ने सरिता की उठती लहरों का प्यार भरा चुम्बन किया। यह मिलन भी कितना मधुर था। लहरें मिलन को पाकर थिरक उठीं। चारों ओर एक नया ही समा बँध गया, ऊषा वेला की उन भावमयी किरणों के स्पर्श से जल-कणों ने एक इन्द्र-धनुषी छटा चारों ओर फैला दी। मैं भाव-विभोर हो इस सुन्दर दृश्य को बैठा देखता रहा।

गंगा के एक तट पर बने सुन्दर घाट और दूसरी ओर आगतों का स्वागत करती वृक्षों की पंक्तियां, एक ओर पुण्यार्थियों के स्तुति-पाठ और दूसरी ओर पक्षी वृन्द की ईश-वन्दना यह सब मिलकर एक बहुत ही सुन्दर और अलौकिक दृश्य उपस्थित कर रहे थे। इस सौन्दर्य को देखकर मन अपनी तृप्ति में मग्न था। स्नान करती युवतियां अपने दोनों हाथों से जब जल ऊपर उछालतीं तो चारों ओर मोती से बिखर जाते, वह उज्ज्वल जल-धारा

ग्रोर भी मधुर हो उठती थी। इनका दोनो हाथो से मुख धोते हुए देखकर कवि की यह उत्प्रेक्षा कितनी सार्थक प्रतीत होती है—

घोवत सुन्दरी वदन करन अति ही छवि पावत।
वारिधि नाते ससि कलंक मनु कमल मिटावत।

स्नान के बाद सूर्य की ग्रोर जलाञ्जलि देते हुए भक्तो को देखकर सहसा प्राचीन युग के ऋषियों को सुधि नाच उठती है। इन्हीं सरिताग्रो के तट पर इसी दृश्य को देखकर ही उन ऋषियो ने वेदो की रचनाग्रो का ज्ञान किया था। इसी गगा को ब्रह्म-कमण्डल से लाने के लिए भागीरथ ने घोर तप किया था। इसी गगा की इन जीवन लहरो ने राजा सागर के साठ हजार पुत्रों का उद्धार किया था ग्रौर तब से इस पावन भारत-भूमि को सिंचित करती निरन्तर इसी प्रकार बहती जा रही है।

दोनो तटों पर दूर-दूर तक फैली रेणुका प्रभात की सुनहरी किरणों से चमक उठी है, ग्रोस-कणो से दूर्वा-दल मोती-माला धारण किए है। मेरा कवि मन प्रकृति के इस सुन्दर दृश्य में खो-सा गया है। वह न जाने फिर किस ग्रतीत मे चला गया है। इसी तट पर ऋषि-मुनियो के ग्राश्रम थे, वेद-ध्वनि ग्रौर स्वाहा-स्वाह के गम्भीर घोष के साथ उठता सुगन्धमय धुग्राँ सभी दिशाग्रों को पवित्र बनाता हुग्रा ग्राकाश की ग्रोर फैलता था। ग्राज भी जनता के मानस में उस ग्रतीत की पावन-कल्पना उठती हैं ग्रौर नत-मस्तक हो सभी इसकी महत्ता के गुणगान करते हैं। दूर-दूर तक फैली हरियाली, साधु-महात्माग्रो की ध्यान-मग्न मूर्तियाँ इस प्रभात वेला मे इस गगा-तट को कितना महान बना देती हैं। ग्रनेक जलचर जल मे क्रीडा करते हैं, पक्षी-समूह वृक्षो की शाखाग्रो पर इधर-उधर नाचते दिखाई देते हैं। कभी-कभी बहुत दूर पर बहती किसी नौका को देखकर ग्रनायास ही मन उधर खिंच जाता है। दूर-दूर तक फैली पर्वतमाला मानो इसकी महानता के गुणो को स्वीकार करती-सी प्रतीत होती है। वृक्ष ग्रौर लताएँ ग्रपने पत्ते पुष्प इसे भेंट करके ग्रात्म-तुष्टि का ग्रनुभव करते हैं। पर सबकी स्नेह-भेंट स्वीकार करती ग्रपनी इसी मन्थर

गति से बहती चली जा रही है। दूसरे तट पर खड़ा मृग शावक सरिता के स्वच्छ जल मे अपना प्रतिबिम्ब निहार कर स्वय ही भ्रमित-सा खड़ा है। मैं स्वय ही इस पावन वातावरण मे अपने को भूला हुआ बैठा रहा।

महान पुण्यवती इस भागीरथी ने जन-मन को ही तुष्टि नही दी अपितु इस देश को हरा-भरा करके धनधान्य से भी पूर्ण बनाया है। हिमाचल की गोद से निकल कर जब यह समतल भूमि पर आती है तो देश के मध्य भाग से बहती हुई अपने सभी ओर जीवन का सचार करती चलती है। खेतो को हरा-भरा बनाती है। जनता के मनस्ताप दूर करती है और देश को सौभाग्य प्रदान करती है। अनेक कवियो ने उसके गुणगान किए हैं।

इस प्रकार के उस पावन-तट पर बैठा प्रकृति के इस सुन्दर दृश्य को देखता हुआ आत्म-विभोर था कि तभी पीछे से किसी ने मेरे कन्धे को स्पर्श किया। मैंने घूमकर देखा तो मुस्कराती हुई कृष्णा मेरे पीछे खड़ी है। बोली "कवि जी' आज यहीं बैठे रहोगे, घर नही चलना है ?"

मैंने कहा कृष्णा, आज तो मुझे प्रकृति की इस गोद में ही खेलने दो। देखती नहीं, सामने उठती यह लहरें कैसे हिलमिल कर खेल रही हैं। कैसे जीवन का एक नूतन सन्देश लेकर इधर बढ़ी आ रही हैं। इन लहरों के साथ झिलमिल करती सूर्य किरणें भी कितनी चचल हो उठी हैं। सृष्टि का समस्त सौन्दर्य मानो सिमट कर यही अपना मिलन कर रहा हो। प्रकृति के इस सौन्दर्य को भुलाकर ही तो आज मानव-जीवन इतना बेरस और दुखपूर्ण हो गया है। जीवन की समस्त सरसता आज न जाने कहाँ खो गई है। वरुण की वह शान्त कछार जहाँ सबसे पहले तथागत ने ससार को अपना अमर सन्देश सुनाया था, आज न जाने मानव ने क्यो भुला दी है ? देखो ? कृष्णा, यदि आज भी हम पुन एक बार अपना वही युग ला सकते, जिस युग में मानव केवल मानव था, जिसमे उसने इन प्रमान कालीन सरिताओ के तट पर अपने अन्तरतम को असीम शान्ति पायी थी तो आज के हमारे सभी सन्ताप दूर हो सकते हैं। मुझे तो इस तट पर फैली इस वृक्ष की शीतल छाया को छोडकर

कहीं जाने की चाह नहीं होती। कवि पन्त की इन पंक्तियों में आज मुझे कितनी यथार्थता प्रतीत होती है—

छोड़ द्रुमों की मृदु छाया,
तोड़ प्रकृति से भी माया।
बाले ! तेरे बाल-जाल में,
कैसे उलझा दूं लोचन।

उधर देखो कृष्णा वह ऊषा कितनी सुहावनी प्रतीत हो रही है। इसी दृश्य को देखकर तो शायद कवि प्रसाद ने कहा था—

उषा सुनहरे तीर बरसाती,
जय लक्ष्मी-सी उदित हुई।
उधर पराजित काल-रात्रि भी,
जल में अन्तर्निहित हुई।

मेरी इस भाव-मुग्धता को देखकर एक बार तो कृष्णा भी आत्म-विभोर हो गई। परन्तु दूसरे ही क्षण वह खिलखिलाकर हँस पड़ी और मेरा हाथ पकड़ कर उठाती हुई बोली, कवि जी महाराज, अब तो उषा की जगह सूर्य की प्रखर किरणें फैल रही हैं। धूप तेज हो जायगी। अब तो घर चलो।

तब मैं आज्ञाकारी की भांति उठकर उसके साथ चल दिया। परन्तु मेरा मन अब भी उन्हीं झिलमिलाती लहरों के साथ खेल रहा था।



रात्रि में आकाश विहार

मैं वायुयान मे काफी सैर कर चुका हूँ। इसमें हर तरह की कलाबाजियां जिनको जमीन पर खड़े होकर देखने मे डर लगता था, वे मैं अकेले कर चुका हूँ। जमीन से केवल २०००० फुट ऊपर भी उड चुका हूँ और इससे १८,००० फुट ऊपर उडकर नन्दादेवी के बर्फीले पहाडो की भी सैर कर चुका हूँ। पर रात्रि मे आकाश विहार का आनन्द कुछ निराला ही था, वह भी जब पूर्णिमा का चन्द्र व असंख्य तारे आकाश मे अपनी छटा दिखा रहे हों। शायद किसी कवि ने भी अभी तक ऐसे दृश्य की कल्पना न की होगी।

सोमवार का दिन शायद राजस्थान के इस रेगिस्तानी इलाके मे मेरे लिए सबसे अधिक आनन्ददायक था। यह रक्षा-बन्धन का दिन था और सुबह हम अपनी प्रिय बहनो की भेजी हुई राखियें पहने हुए थे, सारा दिन कुछ कुछ वर्षा भी हुई थी इसलिए जोधपुर जैसी जगह में भी उस दिन देहरादून का मजा आ रहा था।

हमें ६ बजे Crew room मे बुलाया गया और एक घटे तक priefing दी गई। तत्पश्चात् मैंने तथा मेरे नवीन शिक्षक श्री हैरिन्गटन ने अपने अपने पैराशूट लिये तथा जहाज का भली भांति निरीक्षण करने के बाद 'कोक-पिट' में बैठे। हमने 'विग—टिप्स' की व 'टेल लाइट' जलाई। उसके बाद हमने एन्जिन स्टार्ट' किया। 'कोकपिट' में बिल्कुल अंधेरा रहता है और तमाम स्विच, लिवर और बटन आदि हाथ से टटोल कर ढूंढने हैं। अगर हम भूल से किसी बटन के बदले एंजिन की बैटरी का बटन बन्द कर दें तो आप सोच सकते है नतीजा क्या होगा।

खैर 'स्टार्ट' करने के बाद हम धीरे-धीरे 'रन-वे' की ओर चले। एक जगह वर्षा से जमीन बहुत नर्म हो गई थी तथा मेरे विमान के पहिए उसमें धंस गए। हमको निकालने, जल्दी-जल्दी एक विशाल क्रेन आया। जब तक

वह आया तब तक हम किसी तरह वायुयान के इंजन का 'फुल-थ्रोटल' खोल कर कीचड से बाहर निकल गए परन्तु वह क्रेन वहीं पर बुरी तरह धस गया तथा अगले दिन सुबह तक नही निकल पाया। इस तरह हम रन-वे, के पास तक पहुँचे, वहा ग्राउन्ड-क्रयु ने हमारे टायर आदि 'चैक' किए।

जब हम तैयार हो गए तो हमने एक रोशनी से 'एयर कण्ट्रोल पाइलेट' को सिगनल, भेजा, कुछ समय बाद उसने भी बहुत तेज हरे रग की रोशनी से वैसा ही सिगनल भेजा। तत्पश्चात् हम 'रन-वे' पर पहुँचे और एक बार फिर 'ब्रेक' लगा कर 'एन्जिन' को 'टेस्ट' कर लिया। इसके बाद हम 'टेक-आफ' कर गए।

दिन में 'टेक-आफ' बहुत आसान होता है परन्तु रात को बहुत सावधान रहना पडता है। 'रनवे' के दोनो ओर 'सौ-सौ गज' के फासले पर मिट्टी के तेल की मशालें रखी हुई होती हैं। हम दोनो ओर की मशालो के बीच-बीच में रहने की कोशिश करते हैं। मैं बतला चुका हूँ कि 'कोकपिट' में अधेरा रहता है तो हम 'इन्स्ट्रूमेन्टस (Instruments) कैसे देखते हैं। हमारे Instruments मे रेडियम लगा होता है तथा वे रात को चमकते हैं। हम रात को सिर्फ इन्स्ट्रूमेन्टस की सहायता से चलते हैं क्योंकि जमीन पर लाइट्स के सिवा और कुछ दिखाई नही देता।

टेक-आफ करने के बाद हम १,२०० फुट तक चढे और फिर वायरलैस से कट्रोल टावर को सन्देश भेजा "Bravo Leaving Circuit" उसका जवाब आया "Roger"। यानी "आज्ञा मिल गई"। इसके बाद हमने लेविल फ्लाईंग किया और शहर के ऊपर आए। हर जगह पर यानी के महल, किले, तथा वायरलैस पोल्स के ऊपर लाल रोशनी लगी होती है। उन स्थानो पर हम थोडा और ऊपर चले जाते थे।

शहर पर उडने का मजा निराला ही था। मेरे शिक्षक ने स्वय कन्ट्रोल ले लिए और मुझे बाहर देखने की आज्ञा दे दी। बाहर देखते ही मेरा तो जीवन सार्थक हो गया। सारा शहर बिजली की रोशनी से जगमगा रहा

था। ऐसा प्रतीत होता था कि दिवाली मनाई जा रही हो। ओलम्पिक और मिनर्वा के साइनबोर्ड लाल बत्तियो से जगमगा रहे थे। शहर के आस-पास दो झीलें हैं। उनमे पता नही पानी है या नही, केवल काई ही काई नजर आती है। दिन के समय कुरूपता की कल्पना करके मैंने वहा तक जाने की कभी गलती न की। पर उस समय उसकी भी अद्भुत छटा थी। पूर्णिमा के चन्द्रमा का प्रतिबिम्ब तथा चमकते हुए पानी के 'रिपल्स' आकाश मे २,००० फुट की ऊँचाई से अत्यन्त ही मनोहर दिखाई दे रहे थे। विचार आया कि देखो एक अत्यन्त कुरूप स्त्री भी क्रीम पाउडर आदि लगाने पर आकर्षक लगने लगती है जैसे जोधपुर जैसा भी शहर आकाश से आकर्षक लग रहा है।

खैर हम आधा घटा घूमकर 'एरोड्रोम' के समीप आए। हमने कन्ट्रोल टावर को कहा "Bravo Joinig Circuit" तथा उसने हमे आज्ञा दे दी। उस समय बहुत से वायुयान उतरना चाहते थे। हमने टावर को कहा "Brvo Fiuals" वहाँ से जवाब आया "Bravo you are No 3 to Land" इसलिए हमने कुछ चोडा सरकिट कर लिया। जब टावर ने तेज हरी रोशनी हमारे जहाज पर फेंकी तब हमने 'लैण्ड किया।

मैंने मगलवार को भी 'नाइट फ्लाई ग' की। पर उस दिन ६०० फुट पर ही बादल मिल गए। ऊपर ही वर्षा भी होने लग गई। किसी प्रकार जल्दी से हम वापिस आए। कुछ भी हो नाइट फ्लाई ग में आनन्द बहुत आता है।



मेरी रेलवे यात्रा

मानव जीवन असीम इच्छाओं का केन्द्र है। वह चाहता कि छोटे-से जीवन में मुझे सभी प्रकार के आनन्द प्राप्त हो और अधिक से अधिक ज्ञान मिल सके। यही कारण है कि ज्ञानवान व्यक्ति अपने समय को खोते नही हैं, उसे किसी अच्छे उपयोग मे बिताते हैं। विद्यार्थी-जीवन में कुछ महीने हर वर्ष ऐसे आते हैं जबकि वह खाली होता है। इस खाली समय मे वह अच्छे और दर्शनीय स्थानो की यात्रा करता है या पर्वतीय भूमि पर चला जाता है, जिससे गर्मी का अधिक प्रभाव न हो। छुट्टियाँ भी गर्मी मे होती हैं। यह आज विज्ञान की कृपा है कि हम थोड़े-से समय में दूर-दूर पहुँचकर आनन्द लाभ कर लेते हैं।

परीक्षा समाप्त हो जाने पर विद्यार्थी एक प्रकार की मानसिक थकान अनुभव करता है। पिछले दिनो मेरे एक मित्र ने जो शिमला का निवासी है, बड़ा ही आग्रह किया कि इस बार छुट्टियो मे मैं अवश्य शिमला पहुँचू। मेरी परीक्षाएं जैसे ही समाप्त हुई कि मित्र का पत्र मिला। पत्र लेकर मैं पिताजी की सेवा मे पहुँचा और अपना उद्देश्य निवेदन किया। पिताजी ने मुझे मार्ग की असावधानी से परिचत कराकर अनुमति दे दी मैं दूसरे दिन शिमला यात्रा को तैयार हो गया। मैंने अपनी आवश्यक वस्तुएं ट्रंक में रख ली और बिस्तर बांधकर तांगे के द्वारा स्टेशन जाने को तैयार हुआ। मैं अपने मन मे अपूर्व प्रसन्नता का अनुभव कर रहा था। मैं सोच रहा था कि जो विचार अपने मन मे इतने दिनो से सजोये हुए था, आज वह सफल हुआ। जब मैं तांगे पर चढ़ा तो इससे पूर्व मैंने अपने पिताजी और माताजी के पैर छुए मुझे विदा करते समय माँ कि आखो में अनजाने आँसू डबडबा आए। मेरी छोटी बहिन के मुख पर भी करुणा के भाव थे। मैं भी अपने घर से इतने दिनो के लिए अलग न हुआ था। इस परिस्थिति मे मेरा हृदय भी करुणा से भर आया। परन्तु मैंने अपने को सभाला और माता जी को शीघ्र लौटने

का वचन देकर मैं ताँगे पर चढ गया। तागे के चलते ही लल्लू ने मुझे 'टा-टा' कहकर विदा का सकेत दिया, जो अब भी मेरी आँखो मे झूल रहा है।

मैं स्टेशन पहुँचा। वहाँ की दशा देखकर मैं घबरा गया। मैंने सोचा कि क्यों अधिक पैसे खर्च किए जाएँ इस विचार से मैं थर्ड क्लास के टिकट-घर पर पहुँचा। जैसे ही मैं वहा पहुँचा कि इतनी भीड कि टिकट लेना आसान दिखाई नही दिया। कुछ समझदार लोगो ने जनता से लाईन में खडे होने की प्रार्थना की। इससे कुछ लोग तो खडे हो गए किन्तु कुछ ऐसे भी थे जो लाईन को तोडकर शीघ्रता से पहले टिकट लेने मे अपनी शान समझते थे। वे वहाँ के अनुशासन को बिगाड रहे थे। एक पुलिस-मैन से कहकर लाईन थोडी ठीक कराई गई। कुछ लोग ऐसे भी थे जो स्वय लाईन में न खडे होकर दूसरे लाईन में खडे हुए लोगो को उनके गन्तव्य स्थान को पूछकर अपनी टिकट के लिए पैसे दे रहे थे। मैं खडा-खडा यह सोच रहा था कि यदि मनुष्य इसी प्रकार दूसरे की असुविधा न देखकर अपनी ही सुविधा पर ध्यान देगा तो समाज का कैसे कल्याण होगा ? अस्तु, मैंने कुली का नम्बर नोट करके उस पर सामान रखाया और किसी प्रकार कठिनाई से टिकट लेकर प्लेटफार्म पर पहुँचा।

प्लेटफार्म पर गाडी खडी हुई थी। मैं स्थान की खोज कर रहा था। परन्तु यात्रियो ने प्रत्येक डिब्बे को इस प्रकार घेर रखा था कि जैसे यह उनका घर का है। नम्रता से वहाँ काम चलाना कठिन लगा। कुछ देर पश्चात् एक डिब्बे का दरवाजा खुला मिला और मैं बडी कठिनाई से उसमे घुसा। वहाँ घुसते ही जो दृश्य देखा मुझे मनुष्य के स्वार्थ पर बडा क्रोध आया। कुछ ऐसे लोग थे जो पूरी सीट पर अपना बिस्तर खोल सोने की तैयारी कर रहे थे। कुछ लोगो ने जहाँ सामान रखा जाता है वही बिस्तर लगा रखा था। मैं बड़ी परेशानी मे था। उस कुली ने जरा-सी जगह देखकर मेरा सामान टिकाया। अनजाने ट्रंक का एक कोना किसी महानुभाव के तलवो से छू गया वे एकदम ऐसे उछल पडे कि जैसे बिच्छू ने काट खाया हो और एकदम कुली

के साथ झगडा करने पर उतारू हो गए। मैंने क्षमा मांगी और मन ही मन उस मूर्ख पर झल्लाया। कुली ने सामान रख दिया। मैंने उसे पैसे दिए। मुझे रेट का पता था—मैंने इसी हिसाब से उसको पैसे दिए परन्तु वह बिछल गया। मैं अपने मन मे सोचने लगा कि ये लोग कितने बेईमान हो गए हैं कि यदि इनसे बिना ठहराए काम कराओ तो दुगना पैसा मागते हैं। मुझे शान्ति मे ही सुख सूझा। मैंने यथासम्भव पैसे दे दिए।

रेल समय पर छूटी। मैंने अपनी भूमि को नमस्कार किया। थोडी ही देर में रेल ने रफ्तार बढा दी। अगले स्टेशन पर एक व्यक्ति उतर गया। मैंने उसके स्थान पर अपना कुछ सामान रख दिया और यूरिनल (पेशाबघर) मे चला गया। आते ही देखा कि एक साहब मेरे स्थान पर बैठते ही सो गए। बडी कहा सुनी के बाद उन्होंने मुझे स्थान दिया। मैं खिडकी के सहारे बैठा था। रेल बीहड जगल को पार किए जा रही थी। कही कही कुछ बस्तियाँ दीखती थी। फिर सहसा भयानक निर्जन में केवल रेल की आवाज कानो में आती थी। मुझे लगता था कि जैसे मैं अन्धकार को चीरकर भाग रहा हूँ। ऊपर तारे थे। तारो की चमक जैसे-जैसे रात अधिक होती थी और बढती जाती थी। बीच-बीच मे किसी जानवर की आवाज वहाँ की भयकरता को और भी बढा देती थी। यह सब कुछ भयकर और शून्य होते हुए भी मुझे अच्छा लग रहा था। डिब्बे में कुछ लोग सो रहे थे। उनमे से कुछ 'घरं-घरं' की आवाज कर रहे थे—मैं बडे आश्चर्य से शरीर की गतिविधि और मनुष्य के जीवन को देख रहा था।

धीरे-धीरे रात ने अन्धकार का आचल छोड दिया और पौ फटने लगी। कितने ही छोटे स्टेशनो पर रेल नही रुकती थी। वे झट से इस प्रकार निकल जाती थी जैसे कि कोई सुहानी घडी जल्दी बीत जाय। सहसा रेल एक भीम-काय पर्वत की ओर मुडी। मैं उस पर्वत की ओर देखकर प्रकृति के रूप को निहारने लगा। वहाँ की वायु मे सोंधी गन्ध और उन्माद था। सुना कि अब कालका स्टेशन आने वाला है। मुझे वहाँ से रेल बदलनी थी। मैंने अपना सामान सम्भाला और नियत समय पर कालका स्टेशन के दर्शन किए।

सुबह हो गई थी। सूर्य की कोमल किरणें जैसे सुनहरे फूल ससार पर फेंक रही हो।

वहा से शिमला को जाने वाली छोटी सी रेल मे बैठ गया। धीरे-धीरे वह रेल सरकी। कुछ गुफाओ मे से वह घू-घू करती हुई रास्ता पार कर रही थी। मैंने खिडकी में से आगे की ओर झाका तो लगा कि कोई स्टेशन आ रहा है। रेल रुकी, वहाँ से एक रेल पास हुई। मैं जब अपनी रेल पर चढ गया तो वह जाती और उतरती हुई रेल मुझे एक गिजाई-सी जान पडी। जैसे टेढा-मेढ़ा चलता है, इसी प्रकार यह रेल भी भाग रही थी। कही पर्वत के किनारे पर चली जाती थी। उस समय हजारो फीट नीचा गड्ढा देखकर एक बार हृदय दहल जाता था और पाताल के नाम का अर्थ मेरी समझ मे आ जाता था। कही तरजवार खडे हुए खेत भले मालूम होते थे। लगता था जैसे किसी ने हरे रग से बडे करीने से धरती को रगा है। भिन्न-भिन्न प्रकार के पुष्प, पेड और बेलों को देखकर ईश्वरीय माया से चकित हो जाता था। कही-कही निर्मल झरने बडे प्यारे लगते थे। मन चाहता था कि इसी में स्नान करता रहूँ। इस शोभा को देखकर मुझे विश्वास हो गया कि निश्चय ही जो एक बार घर से निकल कर प्रकृति की गोद मे आ गया फिर वह लौटने का नाम न लेगा। इसीलिए पन्त ने प्रकृति की सुन्दरता से आकर्षित होकर यह पद्य लिखा था।

छोड़ द्रुमो की मृदु छाया,
तोड़ प्रकृति की यह माया।
बाले! तेरे बाल-जाल मे कैसे उलझा दू लोचन,
छोड अभी से इस जग को।

मैं उन दृश्यों को देखते-देखते प्रसन्न हो रहा था। नियत समय पर मैं शिमला पहुचा। मेरा मित्र मेरी सूचना पाकर पहले ही मुझे लेने स्टेशन पर आ गया था। बडी प्रसन्नता से मार्ग की सारी घटनाएं सुनाता हुआ ऊँची-नीची सड़कें और पगडण्डी पार करता हुआ उसके घर पहुँच गया।

एक ऐतिहासिक यात्रा (ताजमहल)

प्रात से ही आकाश मे बादल घिर आये थे। रिमझिम-रिमझिम वर्षा हो रही थी। शीतल वायु के झोके शरीर का स्पर्श करते ही उमग तथा सिहरन उत्पन्न कर देते थे। मैं अपने कमरे मे खिडकी के पास बैठा आत्म-विभोर हो, बाहर का दृश्य देख रहा था कि सहसा किसी ने आकर द्वार खटखटाया। मैं अस्त-व्यस्त-सा उठा तो देखा कि पोस्टमैन कोई पत्र लाया है। मैंने उसे उत्सुकता से खोलकर पढना आरम्भ किया। पत्र मित्र का था। उसने मुझे ताजमहल देखने के लिए आगरा बुलाया था। पढकर मेरे हर्ष का ठिकाना न रहा, क्योकि ग्रीष्मावकाश व्यतीत करने की चिन्ता अब दूर हो चुकी थी।

पिताजी से स्वीकृति ले, मैं जनता मेल से आगरे के लिए चल पडा। आगरा स्टेशन पर ही मेरा मित्र मुझे लेने आया हुआ था। अत उसके साथ, गप्प-शप्प लडाता हुआ उसके घर पहुँच गया। सौभाग्य से उस दिन पूर्णमासी थी। शाम के भोजन के पश्चात मेरे मित्र ने ताज देखने चलने के लिए कहा और हम शीघ्र ही ताजमहल के निकट पहुँच गए।

दूर से ही ताजमहल की मीनारो और गुम्बद का दृश्य दिखाई देने लगता है। इस महल के चारो ओर लाल पत्थर की दीवारें हैं जिसमे बडा सुन्दर उद्यान है। इसकी वृक्षो की सजावट और हरियाली की मनोहरता को देखते ही मन मोहित हो जाता है। महल तक जाने के लिए सबसे पहले एक बहुत ऊँचे भव्य द्वार से होकर जाना पडता है। द्वार मे घुसते ही ताज के स्रोतो तथा सुन्दर उद्यान के सामने १८६ वर्गफीट ऊँचे चबूतरे पर यह सगमरमर का भव्य भवन स्थित है। इसका गुम्बद बडा ऊचा है। चारो ओर बडी-बडी मीनारें हैं। ताज के पश्चिम की ओर यमुना बहती है। चाँदनी की बहार होने के कारण उस रात यमुना के जल मे ताज की परछाई पड रही थी। वह ऐसी प्रतीत होती थी मानो कोई बहुत बडा अण्डा पानी मे तैर रहा हो। मेरे मित्र ने मुझे वही चबूतरे पर बैठने के लिए कहा। कुछ समय तक हम

मन्त्र-मुग्ध से होकर उस दृश्य को देखते रहे। कितनी शान्ति और सुख मिल रहा था हमें उसको देखने में। मानो मुगल काल के वैभव की हम पर वर्षा हो रही हो और हम एक स्वप्नो के देश में विचर रहे हो। ताज के भीतर का दृश्य भी विचित्र ही है। सबसे नीचे भवन में मुमताज महल और शहशाह की संगमरमर की कब्रें हैं। उन पर अरबी मे कुछ लिखा हुआ है तथा बहुत से रग-बिरगे बेल-बूटे खुदे हुए हैं। इस कक्ष के ठीक ऊपर एक ऐसा ही भाग है। उसमें भी बादशाह तथा सौन्दर्य की दृष्टि से इनका महत्व अधिक है। पहले इनके चारो ओर सोने की जाली भी थी जिसको औरगजेब ने हटवा कर सगमरमर की जाली लगवाई थी। गुम्बद में इतनी शाति और शालीनता है कि मनुष्य का मन वहाँ से बाहर जाने को नही चाहता।

ताजमहल शाहजहा के प्रेम भरे उद्गारो का साकार रूप है। इसको बनवाने मे शाहजहा ने कुशल कलाकारो का आह्वान किया था और राज्य का सब धन ताज की पूर्ति के लिए न्योछावर कर दिया। ताजमहल लगभग २० वर्ष तक तीस हजार मजदूरो द्वारा बनाया जाता रहा और इसमे तीस लाख रुपए व्यय हुए।

ताज अपने सौन्दर्य का अपने ढग का एक ही ऐसा स्मारक है जिस पर गर्व किया जा सकता है। विश्व के आठ आश्चर्यों मे ताज का नाम भी है। अतः ससार के कोने-कोने से लाखो की सख्या में यात्री प्रतिवर्ष इसे देखने आते हैं और इसके सौन्दर्य से सुख-शान्ति प्राप्त करते हैं।

सैकडो वर्ष हो गए किन्तु ताज का सौन्दर्य आज भी ज्यो का त्यो है। वर्षा की बौछारो, सर्दी के कसालो और गर्मी के थपेडो को सहकर भी यह सौन्दर्य निधान पूर्ववत् है। स्नेह की कमरता को हृदय में छिपाये हुए पावन प्रेम का यह प्रतीक समय की क्षण भगुरता पर अट्टहास कर रहा है मानव जीवन की खिल्ली उडा रहा है और बस एक सन्देश केवल एक सन्देश विश्व को दे रहा है कि "सच्चा प्रेम सदा अमर रहता है।" दिन की धूप मे इनका तम-तमाता हुआ चेहरा जैसे स्वार्थान्धो को नष्ट करने के लिए क्रुद्ध-सा प्रतीत होता

है। रात की चाँदनी मे इसकी मधुर मुसकान दुःखी और बिछुड़े हुए प्रेमियों को धैर्य का अमृत पिलाती हुई दृष्टिगोचर होती है। युगों की छातियों पर प्रेम के चरण चिन्हों का यह द्योतक कब तक अटल रहेगा, कौन जानें ?



एक साहसपूर्ण यात्रा

मेरे जीवन का पूर्वार्द्ध लगभग घुमक्कड़पन मे ही बीता है। मेरे रचयिता विधाता ने न जाने मेरे सीधे पैर मे कौन-सा गोल चक्कर लगा दिया जो मुझे नारद की तरह ढाई दिन भी एक स्थान पर नहीं टिकने देता। राजस्थान के रेगिस्तान और पंजाब के हरे-भरे खेत-खलिहानों को मैं पैदल ही पार करता न जाने कितनी बार घूमता फिरा हूँ। परन्तु इन यात्राओं मे मेरी सबसे अधिक साहसिक यात्रा गोहाटी (आसाम) से कलकत्ता तक की थी। इस यात्रा मे मैंने जो कुछ पाया उसे आज भी अपनी स्मृतियों से दूर नहीं कर पाया हूँ।

सन् १९३५ की बात है। मन मे कुछ उमंग उठी और न जाने कैसे दिल्ली मे एक दिन रात के समय एक कम्बल कन्धे पर डालकर सीधा स्टेशन पहुँचा और गोहाटी का टिकट लेकर गाडी मे जा बैठा। कुछ पता नहीं रास्ते मे कौन-कौन से शहर और प्रान्त आए, दिन-रात की सीमाओं का कोई भी ज्ञान नहीं। केवल इतना ही जान पाया कि स्टीमर ब्रह्मपुत्र के अनन्त प्रवाह को तीव्र गति से पार कर रहा है। इसके बाद तो बस चारों ओर पर्वत मालाओं की गोद में बसे गोहाटी मे जा पहुँचा।

यह शहर एक उदास और रूखा प्रतीत हुआ। जीवन के प्रति न जाने कैसी कठोरता लिए अपना मन्द गति से दिन व्यतीत करता है। कम से कम मुझे तो कुछ ऐसा ही प्रतीत हुआ। ज्यों-ज्यों दिन बीतने लगे, मेरा

मन वहा से उचाट होता गया और दस दिन बाद ही फिर मैं वहाँ से अपना कम्बल कन्धे पर डाल स्टेशन की ओर चल दिया। लेकिन जब स्टेशन पहुँचा तो देखा कि पास में केवल एक रुपया है और इससे अधिक से अधिक ब्रह्मपुत्र महानदी को पार करने के लिए स्टीमर का ही टिकट आ सकता है। मैंने भी उस महानदी के सर्प जैसे कुण्डल में से निकालने के बाद ही आगे के सम्बन्ध में सोचने का निश्चय किया और एक बार फिर मैं निश्चित-सा उस सागर को पार करता इस तने पर पहुचा। कुछ देर तक भूला-सा किनारे पर खडा उस अनन्त जलराशि को निहारता रहा। उन दस दिनो मे मैंने जाने कितनी बार उसके ऊबड-खाबड तटो पर खडे होकर उसके सौन्दर्य से अपनी आत्मा की तृप्ति की थी परन्तु आज तो उसका सौन्दर्य ही दूसरा था। न जाने कब तक मैं वहाँ खडा उसे निहारता रहा। उसके बाद उसे एक श्रद्धा भरी दृष्टि से प्रणाम करके अपनी अज्ञात यात्रा के पथ पर चल दिया।

इन दस-पन्द्रह दिनों में यद्यपि मे आसामी बोली समझने का प्रयत्न करता रहा, पर फिर भी मुझे कोई विशेष सफलता न मिली थी। आसामी लिपि का मैंने अवश्य साधारण ज्ञान प्राप्त कर लिया था और मेरी इस यात्रा में मेरा यह ज्ञान बडा ही सहायक सिद्ध हुआ। यात्रा प्रारम्भ करने से पहले मेरे सामने स्पष्ट ही एक प्रश्न था कि कलकत्ता और दिल्ली मे से किसको लक्ष्य बनाया जाय। अन्त मे कलकत्ते का आकर्षण ही मेरे लिए अधिक रहा। मालूम हुआ कि वहाँ से कलकत्ता ६८६ मील है और दिल्ली दो हजार। मैंने अपना पथ-प्रदर्शक रेलवे लाइन को ही बनाया और कलकत्ते की ओर चल दिया।

गाव मे यथासम्भव मैं कम जाता था। केवल उन्ही—पगडण्डियो पर चलता था जो रेलवे लाइन के निकट थी। क्योंकि स्टेशन आने पर अगले स्टेशन का पता चल जाता था। एक बात भी थी, सुना था कि कामरूप देश (आसाम) मे किसी भी विदेशी युवक को जादू से तोता मेढा या बकरा बना दिया जाता है। यात्रा के आरम्भ के कुछ दिन यह भय बना रहा। रास्ते मे मुझे काफी कठिनाइयो का सामना करना पडा। मार्ग मे मिलने वाले

बागो या जंगली फलो पर ही कई दिन तक गुजारने पडे। वे लम्बे-लम्बे पहाडी तलहटी के सघन जगल, अथाह सागर की तरह बहती नदियाँ मुझ एकाकी यात्री के मन में भय पैदा कर देती थी फिर भी मैं अपने मार्ग पर बढता जा रहा था।

एक दिन मैं एक ऐसे जंगल में घुस गया जो वास्तव में बहुत ही भयानक था। ग्यारह बजे थे, जब मैंने उस जगल के इधर के स्टेशन को छोडा था। ज्यो-ज्यों मैं आगे बढ़ता था, जगल की भयानकता भी बढती जाती थी। इधर चारो ओर ऊँचे ऊचे वृक्ष, दूसरी ओर उठती उतग पर्वतमाला और एकाकी यात्रा ने मेरे लिए एक भय का वातावरण पैदा कर दिया। इसी प्रकार बढ़ता हुआ मैं जिस स्थान पर पहुँचा, वह एक विशाल पाटवाली नदी का मुहाना था। तट पर पहुँच कर देखा तो सूर्य भगवान अस्ताचल की ओर बढ़ते जा रहे हैं। सामने गहन जलराशि है, एक तरफ ऊँची पर्वत माला और आगे अजान अनन्त पथ। सोचा, जीवन का अन्त निकट ही है। पेट की ज्वाला और पैरो की थकान ने मेरी सारी हिम्मत छीन ली। आगे बढने का साहस न था। निराश होकर उसी पर कुछ देर विश्राम के लिए बैठ गया। अनेक कल्पनाएँ रह रह कर उठ रही थी। जरा भी कही से खडखडाहट होती तो भय से काँप उठता था। चारो ओर चौकन्ना होकर देखता था। सामने छोटी-छोटी झाडिया भी उस समय मौत का सन्देश लिए मेरे समाने खडी थी। तभी नदी के उस तट पर जो मेरी दृष्टि गई तो मेरे सारे शरीर में सन्नाटा-सा छा गया, रोगटे खडे हो गए। एक भयानक भेडिया आनन्द से पूँछ हिलाता हुआ अपने शिकार को खा रहा था। शायद मेरे आने से पहले ही वह अपने काम में लगा हुआ था। वह मुझे नही देख पाया था। इसलिए बडी ही सावधानी से पैर दबाता हुआ मैं रेलवे पुल की ओर चल दिया। अब इस जगल में आगे बढ़ने का मेरा साहस नहीं रह गया था। भय के कारण मेरे पैर स्वय लडखड़ा रहे थे। सोचने की हिम्मत नहीं रह गयी थी। डगमगाते पैरों से आगे बढ़ रहा था। पुल के पास पहुँच कर तो मुझे एक और सकट का सामना करना पडा। रेलवे पुल पर अपना भयानक

फन उठाए एक विषधर मेरा स्वागत कर रहा था। यदि मैं जरा भी आगे बढ़ता तो वही मेरे जीवन का अन्त था। मैं वहाँ से पीछे हटकर पुल से नीचे उतर आया। तभी सामने से गाडी आती दिखाई दी। यह मेरे लिए अच्छा ही हुआ कि सर्प देवता ने मुझे आगे नही बढ़ने दिया अन्यथा पुल पर कही भी जगह न थी जो मैं गाडी के विशाल इजन से बच पाता। गाडी निकल जाने पर देखा तो सर्प देवता भी अन्तर्ध्यान हो चुके थे। पुल के पार पहुँचा तो सामने ही एक छोटा-सा स्टेशन था। स्टेशन मास्टर अपने कमरे का दरवाजा बन्द करके अपने घर जाने को तैयार थे। मैं जाकर हारा-थका-सा एक बेंच पर बैठ गया।

तभी स्टेशन मास्टर ने मुझे आसामी भाषा में कुछ कहा। भाषा तो मेरी समझ में न आई, परन्तु उनके सकेत से मैं समझ गया कि मैं रात को यहां नहीं ठहर सकता। मैं न अग्रेजी जानता था और न आसामी भाषा। हिन्दी में ही अपने भाव समझाने का प्रयत्न किया कि आज की रात मैं स्टेशन पर ही बिताऊंगा। वह समझ गए कि मैं बहुत दूर का परदेसी हूँ। कुछ थोड़े बहुत हिन्दी के शब्द बोल लेते थे। मैंने देहली और गोहाटी आदि का नाम लिया तो शायद मेरी यात्रा का कुछ तारतम्य समझ गए और अपने साथ अपने घर पर ले गये। रात को वहाँ चारो ओर जगली जानवरों का भय बना रहता था। इसलिए क्वार्टर के चारो ओर काटेदार तार लगे थे। घर में पहुँचकर मुझे एक कोठरी में ठहराया गया। वह मुस्लिम परिवार था। परन्तु मेरे लिए तो इस समय जाति-भेद, धार्मिक विचार केवल कल्पना की वस्तुमात्र थे। हम दोनो ही मानव-मात्र थे। उसने जिस रूप से मेरा आतिथ्य-सत्कार किया, उसे मैं आज भी नहीं भूल सका हूँ।

प्रात.काल उठकर मैंने उस परिवार को सादर प्रणाम किया और आगे की यात्रा पर चल पडा। उस उदार परिवार ने बहुत चाहा कि मैं आगे की यात्रा रेल से पूरी करूँ, परन्तु मुझे तो इसी प्रकार पथ नापते चलने का चाव था।' 'और मैं आगे बढ़ चला।

एक दुर्घटना

जीवन मे सुख और दु ख, हर्ष और शोक, जीवन और मृत्यु सभी सुख का ज्ञान बिना दु ख के अनुभव के कहा सम्भव है। यह जीवन चक्की के दो पाट हैं। इमी प्रकार विज्ञान ने मनुष्य को जहा विलास, आराम और सुविधा की मामग्री प्रदान की है, साथ ही कुछ असुविधाएँ देकर कठिनाइयो से पूर्ण वचित भी नही किया है। विज्ञान ने हमारे जीवन में ऐश्वर्य का सचार किया है किन्तु किसी भी क्षण उसकी महान शक्ति हमारे जीवन को समाप्त भी कर देती है। एक अणुवम ससार के सुन्दर वडे से वडे भू-भाग को हमारे देखते-देखते समाप्त कर मकता है।

प्राचीन समय मे यदि अधिक सुविधाएँ नही थीं तो मनुष्य को कष्ट भी अधिक नही थे। आज जीवन के प्रत्येक क्षण में हमें कष्ट की सम्भावना रहती है। आवागमन के साधनो को ही ले लीजिए—यदि मोटर, साईकिल, रेल और वायुवान ने मानव को सुविधा दी है तो साथ मे दुर्घटना भी। हम घर स वाहर जाते हैं न जाने किस क्षग कौनसी दुर्घटना हमें आ घेरे। वास्तव मे एक दिन हुआ भी ऐमा ही।

मैं घर से सुन्दर नये कपडे आदि पहनकर आया। मुझे राष्ट्रपति भवन की एक पार्टी में सम्मिलित होना था। वस मे सवार हो गया। सोचता था राष्ट्रपति की पार्टी में प्रथम वार जा रहा हू। समय से कुछ पूर्व ही पहुँचना चाहिए क्योकि वहा की परम्पराओ और स्थिति से अनभिज्ञ था। हमारी वस अपने निश्चित मार्ग पर वढी चली जा रही थी कि अचानक एक कार उससे टकरा गई। कार के टकराने से कार में वैठे सज्जन तो वेहोश हो गये परन्तु कार ड्राइवर की घटनास्थल पर ही मृत्यु हो गई और कार चकनाचूर हो गई। इतना ही नही बस मे वैठी सवारियो को भी गहरी चोट पहुँची। किन्तु मैं पिछली सीट पर बैठा था, अत मुझे कोई चोट नही लगी। गलती किसकी थी ? इस प्रश्न की चर्चा करने का तो समय तक न था। उसी समय टैक्सी के द्वारा ड्राइवर तथा अन्य घायलो को इरविन हॉस्पिटल में पहुँचा

दिया गया। घायलो की सख्या भी २० से कम नही थी। हानि भी १०,००० से अधिक हुई होगी और अगले दिन ज्ञात हुआ कि मृत्यु-संख्या भी चार है। दुर्घटना इतनी ही नही है।

इरविन हॉस्पिटल से मैं मोटर-साईकिल-रिक्शा पर सवार हुआ। सोचा देर से पहुँच जाएँ फिर वापिस आकर हस्पताल मे घायलो के विषय मे विवरण प्राप्त करेंगे। ड्राइवर ने रिक्शा तेजी से दौडादी। विधाता की विधि निराली होती है। दूसरी ओर से एक टागा आ रहा था और मोटर-रिक्शा ढलान से उतर रही थी। तागे वाले ने रिक्शा देखी भी नही थी और बस तांगे से टक्कर हो गई और हम लुढ़कते-फुढकते नीचे आ पडे। ड्राइवर शायद होशियार था स्वय कूद गया। परतु सवारियो को बहुत गम्भीर चोट आई। मेरे हाथ की हड्डी टूट गई। किन्तु ऐसी दुर्घटना मे यह बहुत सख्त चोट न थी। कुछ अपरिचित सज्जनो ने मुझे हॉस्पिटल तक पहुँचा दिया, हॉस्पिटल मे मुझे कई दिन तक रहना पडा, एक्सरा हुआ और पलस्तर बांधा गर्मी के दिन थे। हाथ मे पलस्तर बांधा था, एक मास के पश्चात् मेरा हाथ ठीक हुआ।

आजकल दुर्घटनाए कोई अनोखी बात नही। नित्यप्रति समाचार पत्रो मे अनेक दुर्घटनाओ के हृदय द्रावक चित्र मिलते हैं। हमारे देश मे तो अभी भी मोटरें आदि इतनी अधिक लोकप्रिय नही हुई हैं जितनी की अमेरिका जैसे देश मे वहा पर दुर्घटनाएँ अत्यधिक होती हैं। फिर यह तो मैंने आप बीती का ही वर्णन किया है। अन्यथा समाचार पत्र प्रतिनिधि तो इसके अभ्यस्त होते है।

इसके पश्चात् एक अन्य अवसर पर मैं राष्ट्रपति भवन गया था, तब मैंने यह रोचक घटना राष्ट्रपति जी को सुनाई। उन्होने अत्यधिक सहानुभूति प्रकट की। किन्तु मैं तो इसे एक सामान्य जीवन की घटना ही समझता हूँ।

गणतंत्र दिवस

वैसे तो भारत मे प्रतिदिन कोई न कोई पर्व होता है, किन्तु फिर भी दीपावली, विजयादशमी, होली विशेष महत्व रखते हैं। यह सभी पर्व राष्ट्रीय होने पर भी सरकारी नहीं। यह सभी पर्व हिन्दू समाज की परम्परा में हजारो वर्षों से चले आते हैं और कुछ सम्प्रदायवादी लोग इनमें अधिक उत्साह से भाग नहीं लेते। इसके अतिरिक्त शासन की ओर से पन्द्रह अगस्त तथा २६ जनवरी के पर्व विशेष समारोह के साथ मनाए जाते हैं। भारत में रहने वाला प्रत्येक नागरिक इन राष्ट्रीय पर्वो को बिना किसी धर्म अथवा सम्प्रदाय के भेद-भाव के इनको हृदय से मनाता है।

इतिहास अभी ताजा है। आज से ३० वर्ष पूर्व सन् १६२१ में रावी नदी के तट पर लाहौर के कांग्रेस अधिवेशन मे भारत के लोकप्रिय नेता पंडित नेहरू की अध्यक्षता में पूर्ण स्वतंत्रता का प्रस्ताव पास हुआ था। उसी दिन से प्रत्येक भारतीय ने यह प्रण कर लिया था कि शीघ्रातिशीघ्र हम पूर्ण स्वतन्त्रता प्राप्त करेंगे और उसी दिन से प्रत्येक २६ जनवरी हमारे लिए राष्ट्रीय पर्व बन चुकी थी, प्रतिवर्ष प्रभात फेरिया निकलती थी, झण्डे का अभिवादन होता था और हम राष्ट्रीय गीत गाते थे। अंग्रेजों की सरकार इसे अनुचित समझती थी और देश भक्तों को जेल भेजती थी अथवा गोली का निशाना बनाती थी। समय ने करवट बदली और अंग्रेज सरकार का सूर्य अस्ताचल को कूच कर गया। पन्द्रह अगस्त १६४७ को हमें औपनिवेशिक स्वतंत्रता प्राप्त हुई किन्तु हम फिर भी पूर्णतया स्वतन्त्र नही हुए। २६ जनवरी १६५० को भारत का संविधान तैयार हुआ और भारत को सर्व-प्रभुत्ता सम्पन्न प्रजातान्त्रिक गणराज्य घोषित कर दिया गया। तभी भारतीयो को पूर्ण प्रसन्नता अनुभव हुई। हमने अंग्रेजो से छुटकारा पाया और भारत माता को पूर्णतया स्वतंत्र कर दिया। संयोग की बात है कि जिनकी अध्यक्षता में ३० वर्ष पूर्व पूर्ण स्वतन्त्रता का प्रस्ताव पास हुआ था वही हमारे देश के प्रधान-मन्त्री थे, उनकी कामना पूर्ण हुई।

यह तो पूर्णतया राष्ट्रीय पर्व है। सभी नागरिक इसे उत्साहपूर्वक मनाते हैं। अत शासन की ओर इस समारोह की तैयारिया महीनो पहले से प्रारम्भ हो जाती है। २६ जनवरी को देश के प्रत्येक कोने-कोने मे उल्लास और हर्ष छा जाता है। सभी स्थानो पर प्रात काल प्रभातफेरिया निकाली जाती हैं। सभी सरकारी तथा गैर-सरकारी स्थानो पर राष्ट्रीय ध्वजा फहराए जाते हैं, लोग उसका अभिवादन करते हैं और राष्ट्रीय गीत को दोहराते हैं। इसके उपरान्त नगर की सडको पर परेड होती है। पुलिस और मिलिट्री के सैनिक मार्ग सचलन के रूप मे सडको पर से गुजरते हैं। इसके पश्चात् कुछ मनोरजक अथवा सास्कृतिक झांकियो का कार्य क्रम होता है। दीपावली की भाति सभी नागरिक अपने अपने घरो, दुकानो और दफ्तरो को रग बिरगा कर सुसज्जित करते हैं। सारे दिन लोग आनन्द मनाते हैं। सभी दफ्तरो और व्यवसायो की छुट्टी होती है।

दिल्ली भारत की राजधानी है। दिल्ली का गणतन्त्र दिवस समारोह दर्शनीय होता है। प्रथम गणतन्त्र दिवस तो भारतीयो के लिए सदैव स्मरणीत रहेगा। प्रतिवर्ष प्रात काल होते ही लोग इण्डिया गेट की ओर चल पडते हैं, क्योंकि विशेष समारोह वहीं पर होता है। राष्ट्रपति अपने रथ पर बैठकर इन्डियागेट पधारते हैं और झण्डे का अभिवादन करते हैं यहां जल, थल तथा वायु सेनाओ का अभिवादन स्वीकार करते हैं। सेनाओ के वाद्य जनता को मोह लेते हैं और राष्ट्रीय गान तो जनता को कुछ समय के लिए एकदम स्तब्ध कर देता है। इसके उपरान्त नगर की प्रमुख-प्रमुख सडको पर विभिन्न सेनाओ की टुकडिया, सेना के टैंक आदि का प्रदर्शन होता है। इसके पीछे भारत के विभिन्न प्रान्तो की झाकिया उपस्थित की जाती हैं। दिल्ली में सभी प्रान्तो के सांस्कृतिक कार्यक्रम लोक नृत्यादि प्रदर्शित किये जाते हैं, मणिपुरी नृत्य, राजस्थानी गीत तथा पजाब की झाँकिया जनता को अत्यन्त मोह लेती हैं। इससे भारत की एकता का ज्ञान होता है, भारत की

विभिन्नता मे भी एकता छुपी है। सायकाल सरकार की ओर के सरकारी भवन में प्रतिष्ठित नागरिको का सम्मान किया जाता है।

इसी दिन भारत का प्रत्येक नागरिक देश के पवित्र सविधान की मर्यादा रखने के लिए जीवन वलिदान करने की प्रतिज्ञा करता है। हम सभी देश की आजादी की वर्ष-गाठ मनाते हैं और साथ ही यह प्रण करते हैं कि भारत की स्वतन्त्रता और विश्व की शान्ति, मानवता के उत्थान के लिए हम सभी नागरिक तैयार हैं, फिर चाहे हमे इसके लिए अमूल्य से अमूल्य वलिदान भी देना पडे। किन्तु हमारी आजादी अव हम से कभी दूर न होगी। हम प्रतिवर्ष आगे वढ़ेगे, देश अधिक समृद्धिशाली होगा और देश का प्रत्येक नागरिक आनन्द से जीवन व्यतीत कर सकेगा।



पन्द्रह अगस्त

हर पर्व किसी प्राचीन इतिहास को अपने उल्लास में छुपाए हुए होता हैं। पन्द्रह अगस्त भारतवर्ष के राजनीतिक इतिहास में स्वर्णदिन है क्योंकि यही वह दिन है जिस दिन भारत में परतन्त्रता की वेडियो को काटकर स्वतन्त्रता को गले लगाया था। यह परतन्त्रता का दुख यू ही नष्ट नही हो गया, इसके लिए भारतीय जनता ने न जाने कितने वलिदान दिए, आसु पिये। वर्षों के निरन्तर सघर्ष के पश्चात् वह घड़ी आई जिसकी कि हमे प्रतीक्षा थी।

पन्द्रह अगस्त का दिन, सोने का दिन हमारी स्वतन्त्रता का दिन हमारे जीवन का दिन है। रात्रि के १२ वजे अग्रेजो ने भारत की शासन-सत्ता भारत के हाथो में सौप दी। जनता इस स्वतन्त्रता के जयनाद को सुनते ही पुलकित हो गई, आतुर हो गई, किसी प्रकार सुवह हुई। प्राचीन की लालिमा जैसे इस

दिव और भी लाल हो गई हो। जन-जन के कण्ठ में जयहिन्द, मन-मन मे मादक मोद, पग-पग में अपार प्रगति, हृदय-हृदय में असीम उल्लास की हिलोरें उमड पडीं।

यद्यपि अभी पंजाब और बंगाल के नारकीय दृश्य भूले नही थे, पिशाचों द्वारा लगाई आग अभी ठडी भी न हो पाई थी। फिर भी इस बलिदान के रक्त से जो स्वतन्त्रता मिली उसे भारतीय जनता ने स्वीकार कर लिया।

समय हुआ, ऐतिहासिक लाल किले पर तिरगा लहराया। भारतीय जनता का सत्य, शिव और सुन्दर जैसे इन तीन रगों का रूप लेकर हस रहा हो। लाखो की सख्या मे नरनारी एकत्र हुए। भारतीय जनता के हृदय सम्राट प्रधान मन्त्री प० जवाहर लाल नेहरू ने समस्त भारत की जनता को स्वतन्त्रता का महत्व समझाया और स्वर्गीय आत्माओं को श्रद्धाजलि अर्पित की। इस अवसर पर उन्होने इस स्वतन्त्रता से प्राप्त प्रसन्नता का स्वागत किया, साथ ही अपने उत्तरदायित्वो के प्रति सजग रहने की प्रतिज्ञा भी की। महात्मा गाधी के बताए मार्ग पर दृढ रहने की प्रेरणा दी जिससे सारा भारत उन्नत और गौरवशाली राष्ट्र बना रहे।

सारा दिन इतिहास की चर्चा और मानसिक उल्लास मे व्याप्त हुआ। दिवस का सौन्दर्य और उल्लास आने वाली रात के लिए ईर्ष्या का विषय हो गया। अरमानो की कोई सीमा नही होती। रात का रूप निखर उठा पन्द्रह अगस्त की रात्रि का शृ गार हुआ। ऐसा शृ गार कि जैसे रात को दिन मे बदल गया हो। जैसे कष्टो का अन्धकार सदा के लिए नष्ट हो गया। चारों ओर प्रकाश, सौंदर्य साजसज्जा का वातावरण प्रफुल्ल हो उठा।

प्रति वर्ष पन्द्रह अगस्त आता है हम भारतीय इसे त्योहार मानकर मनाते हैं क्योकि यह विजय पर्व है। आज भारत को नई दृष्टि मिली थी। इस दृष्टि की ओर और ससार के राष्ट्रो की दृष्टि है। भारत ने पन्द्रह वर्षो में आपके जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में आश्चर्यजनक उन्नति की है। समाज, जाति और धर्म सभी प्रगति की ओर हैं। परन्तु हमारे कर्त्तव्यों की इति नही हुई है। हमें अपने धर्म, कर्म, ज्ञान, अनुभव, उत्साह, उन्नति, वीरता, सदाचार, सत्य,

शान्ति आदि सद्‌गुणो से वही स्थान पाना है जो भारत ने अपने अतीत में पाया था। भारत आदर्श के क्षेत्र में ससार के सबसे महत्वपूर्ण राष्ट्रों में ऊचा रहा है। हमारी लोभ-वृत्ति हमे हमारे आदर्श से न गिरा दे। यह बात ध्यान रखनी है।

अभी बहुत-सी कमिया हैं। प्रतिवर्ष पन्द्रह अगस्त के दिन हमें उन कमियो को समाप्त करने की प्रतिज्ञा करनी चाहिए। किसी एक व्यक्ति से राष्ट्र की उन्नति नही होती। समाज का प्रत्येक व्यक्ति राष्ट्र का सभ्य नागरिक प्रमाणित होने की इच्छा रखे, तभी सम्भव होगा जब भारत का भाल सदा के लिए ऊचा होगा। बाहर की चमक-दमक से प्रभावित न होकर आत्मा के प्रकाश को समझना होगा। जब हम अपने देश को ऊचा उठाने का प्रयत्न करते हैं तभी हम इस दिन के महत्व को पहचानते हैं, अन्यथा सारा प्रदशन व्यर्थ और सार हीन है।

बाल-दिवस

भारत ही एक ऐसा देश है जहा प्रतिदिन कोई न कोई त्योहार होता है। कारण कि प्रत्येक दिन कोई न कोई नया उल्लास और नया उत्साह लेकर उपस्थित होता है। सौन्दर्य तो यह है कि जब भी कोई प्रेरणाप्रद घटना घटती है वही त्योहार बनकर जन-जीवन मे रम जाती है। यह भारत की विशालता और सास्कृतिक गम्भीरता है कि यहा के त्योहार और सभी त्योहार आदर्श-पूर्ण हैं।

बाल-दिवस १४ नवम्बर को मनाया जाता है। इस त्योहार के जन्म का सम्बन्ध एक महान् व्यक्तित्व के जन्म से है। हमारे प्रधानमन्त्री जवाहरलाल नेहरू का जन्म १४ नवम्बर को हुआ था। पहले १४ नवम्बर पण्डित नेहरू के जन्म-दिन के रूप मे मनाया जाता था, परन्तु इसका महत्व इतना बढा कि अब यह दिन बाल-दिवस के रूप मे प्रसिद्ध हो गया।

यह बहुत हर्ष का विषय है कि बाल-दिवस बच्चो का अपना त्योहार है। सारे त्योहारो में कोई ब्राह्मणो का, कोई क्षत्रियो का, कोई वैश्यो का, कोई शुद्रो का है या कोई विशेष जाति-सम्प्रदाय, धर्म, रीति या विशेष प्रसग के अनुकूल है। यह त्योहार बालको का अपना है। इस त्योहार को बालक संपूर्ण उत्साह से विभिन्न प्रकार के कार्यक्रम करते हैं। विभिन्न शिक्षा-सस्थाओ के प्रतिभाशाली बालक अपने अभिनय, नृत्य, गायन, बाल-विवाद-प्रतियोगिता, बाल कवि सम्मेलन खेल-कूद अथवा अन्य प्रकार के मनोरजन, ज्ञानवर्द्धक एवं स्वास्थ्यप्रद सांस्कृतिक कार्यक्रमो द्वारा इस त्योहार का शृ गार करते है।

इस त्योहार का दिनो दिन विस्तार हो रहा है। अन्य देशो के बालक भी इस त्योहार को बडे उत्साह से मनाने लगे हैं। विदेश के बालक अपने विदेशी बालसाथियो को उपहार भेजते हैं। इस त्योहार का सौन्दर्य यह है कि इसकी विशालता अन्तर्राष्ट्रीय ढग से हो रही है। बालको का यह त्योहार ऐसा है जिसमें स्वतन्त्र होकर बालक भाग लेते हैं। इस त्योहार के प्रति उनमें ममता है, अनुराग है। बालक अपने त्योहार की अत्यन्त आतुरता से प्रतीक्षा करते हैं। इस अपनत्व से ही इस त्योहार का महत्व बढ़ गया है। बाल-दिवस एक राष्ट्रीय त्योहार है—इसे और भी समृद्ध और महत्वपूर्ण बनाने का प्रयत्न करना चाहिए।

बाल-दिवस का और भी प्रभावशाली बनाने के लिए ऐसा कार्यक्रम बनाना चाहिए जिससे प्रत्येक बालक का और भी पारस्परिक परिचय बढ़े। मनोवैज्ञानिक ढग से इस त्योहार को शिक्षाप्रद तथा रुचिकर बनाने की दिशा में प्रयत्न होने चाहिए। ईश्वर करे बालको का यह कोमल त्योहार और भी प्रसिद्ध हो तथा ससार के प्रत्येक देश, जाति, समाज मे इसका प्रचार हो। सारे ससार के बालक इसे मिलकर मनाए।



विद्यालय में पारितोषिक-वितरणोत्सव

विद्यालय के जीवन में वार्षिकोत्सव का बडा महत्व है। इससे विद्यालय मे नवीन स्फूर्ति आ जाती है। जनता के साथ घनिष्ठ सम्बन्ध स्थापित हो जाता है। वार्षिकोत्सव का सबसे महत्वपूर्ण दिन पारितोषिक वितरणोत्सव का दिन होता है। हमारे विद्यालय का उत्सव सदैव अत्यधिक आकर्षक तथा प्रशसनीय होता है।

प्रत्येक वर्ष की भाति इस वर्ष भी हमारे विद्यालय का उत्सव फरवरी मास की ११-वी तारीख को बडी धूमधाम के साथ मनाया गया। उत्सव का स्थान रामलीला मैदान था। चारो ओर कनाते तानी गई तथा शामियाने लगाए गए। शामियाना तिरगी झण्डियो से सुसज्जित था। जमीन पर रग-बिरगे वेल-बूटेदार कालीन बिछे हुए थे। पश्चिम की ओर एक उच्च मच पर सभापति महोदय के लिए एक बढिया कुर्सी थी और उसके पार्श्व मे दोनो ओर दो-दो कुर्सियां थी। इसके पीछे दो बडी-बडी मेजो पर पारितोपिक तथा ट्राफी आदि सजा दिए गये थे। सभापति महोदय के दक्षिण की ओर आमन्त्रित सज्जनो के लिए बैठने का प्रबन्ध था तथा दूसरी ओर विद्यार्थियों के लिए सभापति के रगमच से लेकर मुख्य द्वार तक सफेद चादर पर लाल वस्त्र बिछा हुआ था। शामियाने के अन्दर माइक्रोफोन का प्रबन्ध था तथा एक लाउडस्पीकर मुख्य द्वार पर लगा दिया गया था, ताकि सडक पर आने-जाने वाले व्यक्ति भी विद्यालय के उत्सव मे थोडा बहुत भाग ले सकें। ये सारी की सारी तैयारियाँ एक दिन पूर्व ही हो गई थीं।

ठीक चार बजे से आमन्त्रित व्यक्तियो का आगमन प्रारम्भ हो गया। मुख्य द्वार पर आगन्तुक महानुभावो का स्वागत किया जाता था तथा उन्हे यथोचित स्थान पर बिठा दिया जाता था। आगत सज्जन सजावट तथा स्कूल की मक्तकण्ठ से प्रशसा कर रहे थे। थोडे ही समय मे शामियाना खचाखच भर गया। बाहर मोटर, गाडियो और तागो का ताता लग रहा था। आगतुक व्यक्तियो के आगमन से विद्यार्थियो मे नवीन स्फूर्ति तथा चेतना

-का सचार हो रहा था। प्रत्येक विद्यार्थी अपने ग्रामको आदर्श रूप मे उपस्थित -करने का प्रयत्न कर रहा था।

साढे चार बजे के लगभग सभापति महोदय अपनी कार मे पधारे। मुख्याध्यापक ने अन्य अध्यापको सहित मुख्यद्वार पर सभापति जी का -स्वागत किया। बालचर सस्था ने बैंड इत्यादि से बडी धूमधाम से स्वागत किया। पडाल में प्रविष्ट होते ही अन्य सभासद् खडे हो गए तथा चारो ओर से करतल ध्वनि होने लगी। सभापति के यथास्थान पर पधारते ही सब सज्जन तथा विद्यार्थीवर्ग भी शान्तिपूर्वक बैठ गये। प्रधानाध्यापक ने सभापति के गले में फूलो का हार पहनाया तथा समस्त पडाल करतल ध्वनि से पुन. गूँज उठा।

सर्वप्रथम कार्यक्रमानुसार विद्यार्थी वर्ग ने ईश प्रार्थना का गायन किया। प्रधानाध्यापक महोदय ने समस्त सज्जनवृ द का हृदय से स्वागत किया तथा कुछ शुभ कामनाएँ पढ़कर सुनाई। इसके पश्चात् विद्यालय का सक्षिप्त वार्षिक विवरण सुनाया गया। विद्यालय की इतनी शीघ्र उन्नति एव ख्याति -इत्यादि के समाचार सुनकर लोगो की प्रसन्नता का कोई ठिकाना न रहा।

तदन्तर विद्यार्थियों का प्रोग्राम प्रारम्भ हुआ। कुछ विद्यार्थियो ने शारीरिक व्यायाम के अद्भुत प्रदर्शन किए, जिनको देखकर अतिथि-वर्ग आश्चर्य चकित हो गया। 'बीमार का इलाज' एकांकी का प्रदर्शन किया गया। उपस्थित वृन्द अत्यधिक प्रभावित हुआ। कुछ विद्यार्थियो ने उत्तम निबन्ध पढ़े तथा कुछ ने सुन्दर गाने गाए। इन बातों को दर्शको ने बहुत ही पसन्द किया तथा विद्यार्थी वर्ग की दक्षता की भूरि-भरि प्रशसा की।

इस कार्यक्रम के बाद पारितोषिक-वितरण आरम्भ हुआ और समस्त -सभामण्डप करतल ध्वनि से बार-बार गूजने लगा। सभापति महोदय प्रत्येक पुरस्कार विजेता से हाथ मिलाते, उनकी बडाई करते तथा उसे उत्साहित करते थे। पुरस्कार बाटने के बाद सभापति ने अपने छोटे से भाषण मे विद्यालय तथा विद्यार्थियो की प्रशसा की और अध्यापक वर्ग की योग्यता

कार्य-निपुणता और सफलता की मुक्तकण्ठ से प्रशंसा की। उन्होंने जनता से अनुरोध किया कि वे विद्यालय के उत्साहवर्द्धन में सम्मिलित होकर उनका उत्साह बढ़ावें तथा उनकी प्रत्येक योजना को सफल बनाने का प्रयत्न करें। इस प्रकार यह विद्यालय उन बालकों के लिए विशेष हितकर प्रमाणित हो सकेगा।

सभापति महोदय के भाषण के बाद मुख्याध्यापक ने निमन्त्रित व्यक्तियों का हृदय से धन्यवाद किया और उनको दूसरे पंडाल में जलपान के लिए आमन्त्रित किया। इसके बाद विद्यार्थियों को सूचना मिली कि वे मिठाई लेकर घर जावें तथा इस उत्सव के उपलक्ष में एक दिन के अवकाश की भी घोषणा कर दी गई। उन दोनों घोषणाओं के श्रवणमात्र से विद्यार्थी-वर्ग की प्रसन्नता का कोई ठिकाना न रहा। तत्पश्चात् सब लोग शनैः शनैः पंडाल से बाहर आने लगे। विद्यार्थी मिठाई लेकर तथा अतिथि जलपान करके अपने अपने घरों को वापिस लौट गए। इस भाँति उत्सव बड़ी धूमधाम से सम्पन्न हुआ। प्रत्येक व्यक्ति की जिह्वा पर विद्यालय का यशोगान था।

वास्तव में किसी विद्यालय की सच्ची परख उसके उत्सवों की पूर्ण सफलता पर निर्भर होती है। इसके द्वारा जनता पर पर्याप्त प्रभाव पड़ता है। विद्यार्थियों को भी अपनी योग्यता, आदर्श आदि का सच्चा एवं सुखद अनुभव हो जाता है। वे ऐसे अवसरों पर अधिकाधिक योग्यता-प्रदर्शन का प्रयत्न करते हैं और अन्त में वे सब गुण उनके स्वभाव में सम्मिलित हो जाते हैं इस प्रकार इसका बड़ा वाञ्छनीय प्रभाव होता है। अस्तु, प्रत्येक विद्यालय में ऐसे उत्सवों का आयोजन अवश्य होना चाहिए।



मनोरंजन के साधन

आज का मानव-जीवन संघर्षपूर्ण है। आज के युग में मनुष्य को अपने जीवन के लिए कठिन संघर्ष करने पड़ते हैं। इस अवस्था में भी मनुष्य के मन की एक प्रबल आकांक्षा मनोरंजन की ओर रहती है। दिन भर के कठिन परिश्रम के बाद जिस प्रकार आराम आवश्यक है उसी प्रकार मन को नई शक्ति, नई स्फूर्ति देने के लिए मनोरंजन की आवश्यकता है। बिना मनोरंजन के मनुष्य का मन उदास और क्लान्त रहता है। अत मानसिक शिथिलता को दूर करने के लिए मनोरंजन मानव-मन के लिए आवश्यक है। आराम यदि मानव-शरीर के लिए आवश्यक है, तो मनोरंजन मानव मस्तिष्क के लिए। जिस प्रकार भोजन शरीर-पोषण और उदर पूर्ति के लिए आवश्यक है, उसी प्रकार मनोरंजन मानव-मस्तिष्क के लिए आवश्यक है।

मनोरंजन मानव-मन की स्वाभाविक भूख है। आदि काल से ही मनुष्य किसी न-किसी रूप में अपने मन को बहलाने के साधन ढूंढता रहा है। प्राचीन काल में शिकार खेलना, जानवरों की लड़ाई कराना, कठ-पुतली के नाच, बन्दर-बन्दरियों का विवाह और रीछ के तरह तरह के नृत्य प्राचीन काल के मनोरंजन के साधन थे। परन्तु मानव स्वभाव चंचल है, इसलिए वह जहां अपने लिए अनेक क्षेत्रों में नये-नये परिवर्तन करता आया है, वहां मनोरंजन के क्षेत्र में भी उसने अनेक परिवर्तन कर लिए हैं। आज के मनोरंजन के साधन प्राचीन काल से बिलकुल भिन्न हैं।

आज का युग विज्ञान का युग है। जीवन के प्रत्येक क्षेत्र मे विज्ञान का प्रभाव दिखाई देता है। मनोरंजन के क्षेत्र मे भी विज्ञान ने अनेक नये-नये साधन पैदा कर दिये हैं। अब बन्दर-बन्दरियो के नाच में कोई विशेष आकर्षण नहीं रहा। अब तो सिनेमा, रेडियो, सरकस, तरह-तरह के टूर्नामेंट या उपन्यास-कहानियो की पुस्तकें और पत्र-पत्रिकाओं आदि ने वह स्थान ले लिया है।

प्रत्येक व्यक्ति की रुचि भिन्न होती है। अपनी रुचि के अनुसार ही मनुष्य अपने मनोरंजन के साधन पसद करता है। किसी को शारीरिक परिश्रम वाले मनोरजन पसद है, तो किसी को एक ही स्थान पर बैठे दिमाग लडाते रहना अधिक रुचिकर लगता है। किसी को सिनेमा के पर्दे पर नाचती-गाती परियो के हाव-भाव मुग्ध करते हैं, तो कोई रेडियो और ग्रामोफोन आदि से ही अपनी मन-स्तुष्टि कर लेता है। किसी को पुस्तकालय में बैठकर अपनी रुचि की पुस्तक पढ़ने मे आनन्द लाभ होता है, कुछ प्राकृतिक दृश्यों में अपने मन का भोजन पाते हैं। इस प्रकार प्रत्येक व्यक्ति अपनी-अपनी रुचि के अनुसार अपने मन का भोजन जुटाने का प्रयत्न करता है।

आज के सर्वसाधारण के लिए सबसे अधिक सुलभ मनोरजन सिनेमा से होता है। अमीर-गरीब सभी के लिए यह सबसे अधिक आकर्षण की वस्तु है। दिन भर रिक्शा चलाने वाला एक साधारण आय का मजदूर और आराम से गद्देदार कुर्सी पर बैठा रहने वाला मालदार, सभी उसी मनोरजन की ओर दौडते हैं। मित्रो और सहेलियो के अधिकतर मनोरजन के कार्यक्रम सिनेमा के लिए ही बनते हैं। घटनापूर्ण कथानक के साथ सगीत, नृत्य और प्राकृतिक दृश्य देखकर सामान्य जीवन से थका हुआ व्यक्ति एक नई तुष्टि, नई स्फूर्ति पा लेता है। जीवन के सघर्षों से क्लान्त हुआ मनुष्य कुछ देर के लिए एक नये ही आनन्द लोक मे विचरण करने लगता है। अत. आज के मनोरजन के साधनो मे सिनेमा का एक प्रमुख स्थान है।

मनोरजन के साधनो मे दूसरा स्थान रेडियो का है। आज के मानव जीवन पर रेडियो का महान उपकार है। रेडियो जहा सुरक्षा और समाचार आदि के लिए उपयोगी वस्तु सिद्ध हुई है, वहाँ इसने मनोरजन के क्षेत्र में भी महान् क्रान्ति कर दी है। आज मनुष्य को सगीत और नाटक आदि के लिए इधर-उधर भटकने की आवश्यकता नहीं। घर बैठे ही ससार के किसी भी देश के सगीत का आनन्द लिया जा सकता है। परन्तु भारत में

यह साधन अभी इतना सस्ता और सर्वसुलभ नही हो सका है कि जन-सामान्य इससे लाभ उठा सके। रेडियो और ग्रामोफोन अभी तो केवल अमीरों के लिए ही मीठे अगूर हैं, मध्य वर्ग के लिए तो यह अभी कुछ दूर का स्वप्न बने हुए हैं।

ऐसे ही मनोरजनो के साधनो मे सरकस और कार्निवल भी आते हैं। सरकस में तरह-तरह के जानवरो के खेल दर्शक को आश्चर्य-चकित कर देते हैं। शेर और भेडिया जैसे भयानक हिंसक जीव भी जब मनुष्य के डण्डे के सामने बकरी के साथ खेलते दिखाई देते हैं, तो दर्शक स्तब्ध रह जाता है। भयानक मौत के कुएँ मे मोटर साइकिल की दौड भी दर्शकों का काफी मनोरंजन करती है। नट और बाजीगर के खेल भी दर्शकों के लिए कम आश्चर्यजनक नही होते।

इन घर से बाहर के खेलो के अतिरिक्त कुछ ऐसे भी खेल हैं, जो घर बैठे ही काफी मनोरजन कर देते हैं। इनमे ताश, शतरज और चौपड हैं। मुस्लिम काल मे तो शतरज इतना लोक-प्रिय खेल था कि बादशाह अपनी रानियो के साथ खेलते हुए अपने दास-दासियो को ही गोटो के स्थान पर खडा करके खेला करते थे। आज भी ताश का नशा ऐसा पाया जाता है कि खेलने वालो को अपने खाने पीने तक की भी सुध नही रहती। इस प्रकार के खेलो मे से कुछ ग्रामीण खेल भी ऐसे होते हैं, जो भूमि पर ही कुछ लकरें खीचकर बना लिए जाते हैं और ककरो या छोटी-छोटी लकडियों से ही खेल लिये जाते हैं। इन खेलो में यद्यपि मानसिक व्यायाम अच्छा हो जाता है, परन्तु शारीरिक विकास की दृष्टि से उनका कोई विशेष लाभ नहीं है।

इसके बाद कुछ ऐसे खेल आते हैं, जो मानसिक और शारीरिक दोनो ही दृष्टि से लाभप्रद हैं। इनमें क्रिकेट, फुटबाल, हाकी, कबड्डी, टैनिस और बालीबाल विशेष हैं। इस प्रकार से खेलों खेलने वालो को तो लाभ होता ही

है, साथ ही दर्शकों का भी बहुत मनोरंजन होता है। इन मैदानी खेलों से शरीर और मन दोनों को बल मिलता है, मन की उदासीनता दूर होती है और सहनशीलता की भावना भी बढ़ती है।

मन की भूख शान्त करने का एक उत्तम साधन अच्छी पुस्तकों का अध्ययन है। आज मुद्रण कला के विकास के साथ-साथ साहित्य का भी निरन्तर विकास होता जा रहा है। अत: अनेक प्रकार की कहानी, नाटक और उपन्यास आदि की पुस्तकें तथा प्राय. सभी प्रकार के विषयों पर पत्र-पत्रिकाए निकलती रहती हैं। यद्यपि सभी लोग इतना अधिक साहित्य खरीद कर नहीं पढ सकते, फिर भी पुस्तकालयों तथा वाचनालयों से अपने खाली समय का सदुपयोग किया जा सकता है। पुस्तकालय साधारण जनता की सबसे अधिक लाभप्रद सस्था है। अब तो इसका निरन्तर विकास किया जा रहा है।

इसी प्रकार का एक मनोरंजन और भी है और वह है पिकनिक। आज के व्यस्त जीवन ने मानव को प्रकृति से दूर कर दिया है, परन्तु प्रकृति आज भी उसका स्वागत करने को तत्पर रहती है। दूर-दूर से एक मधुर सदेश लेकर बहते आते झरने, मुक्त और स्वच्छ पवन, फूलों पर गुंजन करते भ्रमर और पक्षियों का मधुर कोलाहल आज भी मानव जीवन के आकर्षण की वस्तु है। दो-चार मित्रों के साथ कुछ थोडा-सा खान-पान लेकर, नागरिक जीवन के कोलाहल से दूर, किसी नदी तट या सुन्दर से बाग में बिताया गया थोडा समय भी मानव मन को काफी सरस बना देता है।

मनोरंजन के कुछ ऐसे भी साधन हैं, जिनका सामाजिक दृष्टि से विशेष महत्व है। इनमे कवि सम्मेलन, राजनीतिक सम्मेलन तथा धार्मिक मेले, उत्सवों का विशेष स्थान रहता है। इन आयोजनों से जहां एक ओर मन की उदासी दूर होती है, वहाँ अनेक प्रकार के विद्वानों और नेताओं के दर्शनों का भी अवसर मिलता है। कभी-कभी तो इन अवसरों पर ऐसे

आयोजित भी हो जाते हैं, जिनका उद्देश्य केवल मनोरंजन ही होना है। दिल्ली मे एक 'महामूर्ख मंडल' नाम की संस्था है, जिसका कार्य संसार के समस्त मूर्खों की मूर्खता में उन्नति करने का ही प्रयत्न रहता है। समय समय पर इसके उत्सवों ने राजधानी की जनता का काफी मनोरंजन किया है।

अत कहा जा सकता है, आज मानव ने अपने अन्य क्षेत्रों मे जिस प्रकार उन्नति की है उसी प्रकार मनोरंजन के क्षेत्र में भी उसने काफी प्रगति की है। कुछ व्यक्ति जुआ आदि खेलो को भी मनोरंजन का साधन मानते हैं, परन्तु यह धारणा गलत है। मनोरंजन का उद्देश्य मानसिक और शारीरिक उन्नति है। हमे अपने विकास के लिए ऐसे ही साधनों को काम मे लाना चाहिए, जो नैतिक दृष्टि से भी उत्तम हो। मनोरंजन एक आवश्यक वस्तु है, इसके बिना मनुष्य का जीवन नीरस और व्यर्थ-सा प्रतीत होता है।

भारत की राजधानी दिल्ली

दिल्ली का अपना इतिहास है। इसने न जाने कितनों को चढ़ते और गिरते देखा है। न जाने कितने साम्राज्य दिल्ली ने देखे हैं। पाण्डवों की राजधानी इन्द्रप्रस्थ भी यही थी। बरतानिया सरकार ने भी दिल्ली को ही राजधानी बनाया और सारे भारत में लगभग दो शताब्दी तक राज्य किया। किन्तु दिल्ली तो दिल्ली है। किसी का भी राज्य स्थिर न रहा और किसी न किसी दिन प्रत्येक को अपने बोरिया बिस्तर गोल कर यहाँ से कूच करना पड़ा। मुगलों ने भी भारत पर कई शताब्दियों तक राज्य किया। किन्तु उनकी भी नींव हिल गई। ऐसा प्रतीत होता है कि यहाँ से गिरकर तो उस शक्ति का पतन ही होता चला गया। वह शक्ति फिर कभी पनप न सकी।

यमुना के तट पर स्थित यह नगर हजारों वर्ष बीते इतिहास की याद दिलाता है। नगर के कोने-कोने में स्थित खण्डहर प्राचीन साम्राज्यवादी शक्तियों के उत्थान और पतन का इतिहास प्रस्तुत करते हैं। दिल्ली का प्रत्येक कण ऐतिहासिक महत्व रखता है पाण्डवों ने एक बार दिल्ली को राजधानी बनाया, इन्द्रप्रस्थ दुर्ग का निर्माण किया और यहाँ पर बस गए। मुगलों ने लाल किला, जामा मस्जिद बनवाई। अंग्रेजों ने तो दिल्ली का विश्व की आधुनिक राजधानियों की भांति आधुनिकरण कर दिया। संसद् भवन तथा अन्यान्य सरकारी भवन सभी उनकी देन हैं। आज भी दिल्ली स्वतन्त्र भारत की राजधानी है। भारत ने एक हजार वर्ष की पराधीनता के पश्चात स्वाधीनता प्राप्त की और उस नई स्वाधीनता का समारोह भी दिल्ली में ही मनाया गया। पन्द्रह अगस्त तथा २६ जनवरी के राष्ट्रीय पर्व सबसे अधिक धूम-धाम और हर्षोल्लास से यहीं मनाये जाते हैं।

सभी बड़े-बड़े उद्योगों, व्यापारिक संस्थाओं तथा राजनीतिक दलों के नेता और मुख्य कार्यालय यहीं स्थित हैं। सभी देशों के दूतावास और राजनीतिक व्यक्ति यहीं पर रहते हैं। अतः दिल्ली औद्योगिक तथा राजनीतिक दृष्टि से अत्यन्त महत्वपूर्ण है संसार की गति-विधियों का यह मुख्य केन्द्र है। विशेषकर

एशिया का तो यह मुख्य कार्यालय है। संसार की बडी कान्फ्रेंस विश्व की समस्याओ को सुलझाने के लिए दिल्ली को ही अपना स्थान चुनती है।

दिल्ली मे प्रतिवर्ष सहस्रो व्यक्ति स्थानीय ऐतिहासिक स्थानो का भ्रमण करने के लिए आते हैं। कुतुबमीनार, लालकिला, जामा मस्जिद बिरला मन्दिर तथा नवनिर्मित बुद्ध पार्क, राजघाट आदि यहा के रमणीय स्थान है। दिल्ली का चांदनी-चौक बाजार एशिया के प्रमुख बाजारो मे गिना जाता है। दिल्ली का रेलवे जकशन भी दर्शनीय है। यमुना का ओखला बाध भी दर्शको की भीड जमा कर लेता है। एशिया के मुसलमान जामा मस्जिद के दर्शन कर अपने आपको धन्य मानते हैं। १५ अगस्त तथा २६ जनवरी के समारोह देखने के लिए भारत के प्रत्येक भाग से लाखो लोग दिल्ली आते हैं। गणतन्त्र दिवस को कनाट प्लेस, ससद् भवन तथा राष्ट्रपति भवन की शोभा तो शब्दो द्वारा वर्णन भी नही की जा सकती। विद्युत का प्रकाश दर्शको की आखों को चकाचौंध कर देता है।

दिल्ली की जनसख्या द्वितीय महायुद्ध के पूर्व बहुत कम थी किन्तु महायुद्ध के समय म अधिकाधिक लोग सरकारी नौकरियो में सम्मिलित हो गए। अत लाखो को गांव छोड कर दिल्ली मे बसना पड गया। विभाजन के फलस्वरूप लाखो शरणार्थी भाई पजाब से आकर दिल्ली मे बस गए। अतः दिल्ली की जनसख्या आजकल ४४ लाख से भी अधिक है। विभिन्न स्थानो पर नई बस्तिया बनाई जा रही हैं और दिल्ली एक छोर से दूसरे छोर तक आबादी से घिरी हुई है। बडे बड भवन और साथ ही छोटी-छोटी झो डियो का सामजस्य भारत की राजधानी की विशेषता है।

दिल्ली की जनसख्या नित्यप्रति बढती जा रही है और दिल्ली मे पाश्चात्य सभ्यता का प्रभाव भी वृद्धि पर है। किन्तु बढ़ती जनसख्या के लिए दिल्ली में सुधार की अत्यन्त आवश्यकता है। राजधानी की गन्दी बस्तियों की ओर भारत-सेवक समाज सुधार कार्य मे बहुत ध्यान दे रहा है। जनसख्या के घनत्व

की वृद्धि से दिल्ली के नागरिकों को ट्रैफिक तथा स्वास्थ्य सम्बन्धी शिकायतें होने लगी हैं। कमेटी को इस ओर शीघ्रातिशीघ्र ध्यान देना चाहिए।

शासन की दृष्टि से भी दिल्ली ने उन्नति की है। आज दिल्ली की अपनी सरकार है। केन्द्रीय शासन है।

साहित्यिक सभी दृष्टि से भी दिल्ली अब महत्त्वपूर्ण हो गई है। बड़े-बड़े कवि, कहानीकार, उपन्यासकार दिल्ली में हैं। आकाशवाणी के साहचर्य से और भी कलाकारों का स्थल दिल्ली हो गई है। विश्वास है कि दिल्ली राजनीतिक, धार्मिक, साहित्यक सभी दृष्टि से विकास के पथ पर है।

रुपये की आत्म-कथा

बसंत की सुहावनी संध्या थी। मैं बाहर बरामदे में आराम कुर्सी पर पड़ा हुआ था। सामने की मेज पर लिखने पढ़ने की सामग्री तथा बटुआ पड़ा हुआ था। सहसा बटुए के अन्दर खन-खन का शब्द होने लगा। ऐसा प्रतीत होता था कि उस बटुए में से कोई बाहर आने के लिए बेचैन है। मुझे उसकी दीन अवस्था पर दया आ गई। मैंने बटुआ मेज पर उलट दिया। सहसा उसमें से एक रुपया निकला और मेज का चक्कर लगाकर खड़ा हो गया और धीमे स्वर में कहने लगा—आपको आश्चर्यान्वित होने की आवश्यकता नहीं। संसार परिवर्तनशील है। यहां पर प्रत्येक व्यक्ति को सुख-दुख सहन करने पड़ते हैं। मैंने स्वयं अनेक दुखों को झेला है। उनकी स्मृतिमात्र कलेजे को कंपा देती है। मैंने जो सुख के दिन व्यतीत किये हैं उन सबका स्मरण कर आज आनन्द से विभोर हो उठता हूं। मेरी कहानी को सुनकर उससे शिक्षा ग्रहण करो।

मेरी जन्म तिथि के विषय में विभिन्न मत हैं। नवीन नवीन आविष्कर्त्ता भी मेरे विषय में अभी तक कोई मत निर्धारित नहीं कर सके हैं। सृष्टि के संचालक ब्रह्मा ने सृष्टि निर्माण के समय ही हमको वीर और साहसी

पुरषो के पारितोषिक के निमित्त छिपाकर रख दिया था । हमारा प्रारम्भिक निवास अफ्रीका म कांगो नदी से उत्तर का ओर था । कुछ व्यक्तियो ने हमारी अखण्ड समाधी का अनुमान किया । बस फिर क्या था एकदम सैकडो कुदाल तथा बेलचो ने महान परिश्रम करके हमे बाहर निकाल दिया ।

हमारी बडी ही कठोर परीक्षा की गई । घोर ताडना दी गई । हमको हमारे लोहा, तांबा आदि भाईयो से पृथक किया गया । दहकती हुई भट्टियो में तपा तपाकर अनेक असह्य कष्ट दिये गये । उन दुष्टो को हम पर किंचत मात्र भी दया न आई । किन्तु इसके बाद जो हमने चमकता सुन्दर सफेद रूप मे देखा तो समस्त कष्ट विस्मृत हो गए । इस प्रकार हमारे अनेक भाई बक्सो बन्द कर जहाजो पर लाद दिए गये । जहाज चला और समुद्र यात्रा के सुखद अनुभव होने लगे । केवल एक अभिलाषा रही कि बन्धन मुक्त हो समुद्र यात्रा न कर सके । इस प्रकार महीनो समुद्र यात्रा न कर सके । इस प्रकार महीनो समुद्र यात्रा करके बम्बई पहुँचा वहा से ठेलो पर चढकर भारतीय सरकार के टकसाल घर मे प्रवेश किया । हमारा अत्यधिक स्वागत किया गया और हमारे गुणो की प्रदर्शनी हुई ।

कुछ दिनो बाद मेरी बारी आई । प्रज्वलित भाइयो को देखकर भावी आशका मे मैं व्यथित हो गया । परन्तु विवश था, क्या कर सकता था । मुझे सर्वप्रथम आग मे खूब तपाया गया । और फिर मेरा रूप परिवर्तित किया गया । पुन मेरे अग-प्रत्यग को काटकर छोटे-छोटे टुकडे किए गये । बडा कष्ट हुआ, परन्तु मेरा करुण-क्रन्दन सुनने वाला कौन था ? मेरा रोना अरण्य-रोदन था । । अन्त मे मुझे साचे मे डाला गया तथा मेरे एक ओर एक चित्र छापा गया तथा दूसरी ओर मेरा नाम तथा पुनर्जन्म की तिथि आदि । इस प्रकार मैंने ससार मे प्रवेश किया तथा ससार लोलुप-दृष्टि से मेरी ओर निहारने लगा ।

एक दिन हमारे समस्त भ्राता एकत्र किये गये और फिर एक लोहे के सन्दूक मे बन्द कर दिये गये । मुझे रह रहकर क्षोभ हो रहा था कि

क्यों तो मुझे इतना सुन्दर रूप प्रदान किया और फिर क्यों मुझे इस प्रकार बन्दी-गृह मे डाल दिया गया। थोड़ी-सी देर के बाद ट्रेन मे रखकर स्टेशन लाये गये और एक डिब्बे में चढ़ा दिये गये। इस प्रकार रेलयात्रा का श्री गणेश हुआ। यात्रा में क्रोधायुक्त रहने के कारण कोई विशेष अनुभव नहीं हुआ।

हमारी रेल यात्रा देहली जंक्शन पर समाप्त हुई। वहाँ से स्थानीय इंपीरियल बैंक के भवन मे पहुँचे। वहाँ के कर्मचारियो को हमारे ऊपर विशेष दया आई और उन्होने बन्धन मुक्त कर दिया। एक लोहे के भवन मे यथास्थान रख दिया। थोड़े दिनो के बाद वहाँ से मुझे मेरे अन्य साथियों के साथ निकाला गया तथा एक रईस के हाथो सौंप दिया गया। मुझे उन्मुक्त वातावरण मे आकर अत्यन्त प्रसन्नता हुई। परन्तु उस धनी ने मुझे बैंक के सीमेंट के फर्श पर टकराया तो मेरे क्रोध का पारावार न रहा और मैं भागने का प्रयत्न करने लगा। परन्तु उसने मुझे तो अपनी कोट की जेब मे रख लिया और शेष साथियो को एक पोटली मे।

वहाँ से वह व्यक्ति घण्टे वाले हलवाई की दूकान पर पहुँचा। वहा से कुछ मिठाई लेकर मुझे उसके पास छोड दिया। हलवाई ने मुझे एक सन्दूकची मे डाल दिया। वहा जाकर मैंने अपने अन्य साथियो को देखा। इनमें अनेक तो बड़े ही अनुभवी प्रतीत होते थे। उनके दुर्बल शरीर पर वृद्धावस्था के चिह्न दृष्टिगोचर हो रहे थे। मुख निस्तेज था और जीवन से विरक्त प्रतीत होते थे। मुझे उन पर बडी ही दया आई। परन्तु उन्होने मुझे मनुष्य-वाणी मे सम्बोधित करते हुए कहा "तुम अभी बाहर से आ रहे हो। एक दिन हमारी-सी दशा तुम्हारी भी होगी।" मुझे बडी आशाएँ थी, उमगे थी, उनके इस प्रकार के उत्तर पर मैंने कोई विचार नही किया, परन्तु आज ज्ञात होता है कि उनके वाक्य में कितना सत्य, कितना रहस्य और कितना उपदेश था।

एक दिन हलवाई का बालक मुझे निकाल कर फल वाले के पास पहुचा

और मेरे विनियम से फल ले आया। वहाँ से मैं कभी पसारी के यहाँ, कभी बिसाती के यहाँ कभी डाक्टर की जेब मे, कभी कैमिस्ट की दुकान पर, कभी सुन्दरी के बटुए मे तो कभी देहाती की ओट में। मेरा इस घमने में खूब मन लगा। मानवो की भिन्न प्रकृतियों का मनोवैज्ञानिक अध्ययन किया। इस बात का मुझे अत्यत गर्व था कि मेरे मे ही सबके कार्य सिद्ध होते हैं। जिसको मैं मिल गया, बस उसकी प्रसन्नता का क्या ठिकाना ?

परन्तु एक बार एक अत्यन्त दु खपूर्ण घटना घटी। एक कजूस ने मुझे पृथ्वी के अन्दर दफन कर दिया। मैं बहुत ही खुश रहने लगा। किन्तु एक बार उस कजूस की मृत्यु के उपरान्त उसके लडके ने मुझे कारागार से उन्मुक्त कर दिया। इस पकार मैं पुन पर्यटन का आनन्द लेने लगा। परन्तु खेद का विषय है कि जर्मन युद्ध ने हमारे स्वतन्त्र भ्रमण में रोडा अटका ही दिया। यदि खजाने मे पहुँच जावें, तो वहाँ भी हमको बन्द कर दिया जाता है और यदि किसी व्यक्ति के हाथ लग गये तो बस उसने झट अपने ब धन मे डाल दिया। अब तो बस हमारे नामराशि नकली भाइयो का ही बोलबाला है। वे तो खूब पर्यटन करते हैं, परन्तु हमारे भाग्य मे तो पर्यटन का आनन्द सदैव के लिए समाप्त हो गया।

आपने मुझे बद तो नहीं किया है ? सदैव अपने बटुए मे रखते हैं। यदा-कदा स्वच्छ वायु भी मिल जाती है। परन्तु आप भी मुझे जाने देना नहीं चाहते। मैं भी आजकल के उपनिवेश की भाँति अपने आपको स्वतन्त्र समझता हूँ।

एक बात से मुझे अत्यधिक प्रसन्नता है कि हमारे प्रति मनुष्यो का आकर्षण अभी तक कम नही हुआ है, अपितु बढ गया है। हमारा सत्कार भी बहुत होता है। मैं अधिक उपयोगी हो गया हूँ। सचाग्चक्र ही ऐसा है। "सब दिन होत न एक समान।" इतना कहकर रुपया चुप हो गया और मैंने उसे फिर बटुए मे रख दिया। परन्तु यह उसका बडा ही सौभाग्य रहा कि मेरी लडकी उसे चुप चाप छिपाकर शुल्क मे दे आई। अब भी जब कभी

अकेला बैठता हूँ तो, मुझे उसे रुपए की आत्म-कहानी सहसा याद आ जाती है और मैं सोचता रह जाता हूँ कि संसार भी कैसा परिवर्तनशील है। यहाँ आकर सभी को संघर्षों में से गुजरना पड़ता है।

एक भयानक अग्नि-काण्ड

मैंने अपने जीवन में अनेक दुर्घटनाएं देखी थी, अनेक भयानक दृश्य मेरे सामने आए थे, परन्तु जैसा दुर्भाग्यपूर्ण और विनाशकारी दृश्य मैंने पिछले वर्ष देखा, वैसा मैं कभी न देख पाया। यह घटना मेरे जीवन की सबसे अविस्मरणीय घटना है।

उन दिनों मैं सदर बाजार में रहता था। यह मोहल्ला बाजार से बिल्कुल निकट ही है। चारों ओर ऊँचे-ऊँचे मकान, बाहर की ओर तरह-तरह के माल से भरी बड़ी-बड़ी दुकानें और अनेक गोदाम हैं। यह मोहल्ला भी छोटा नहीं है, लगभग तीस चालीस घर होंगे। इतनी सघन और शानदार आबादी आस-पास कोई दूसरी नहीं। इसलिए इस मोहल्ले में हर समय काफी चहल-पहल रहती है।

सर्दी के दिन थे। दिन भर आकाश में बादल छाए रहे और शाम को धीमी-धीमी बूंदें पड़नी शुरू हो गई। सभी अपने-अपने घरों में दुबके बैठे थे। मैं उस समय लिहाफ ओढे एक सुन्दर उपन्यास पढ़ने में तल्लीन था। रात के कोई आठ बजे का समय होगा। इसी समय गली में से एक बड़े जोर का हल्ला सुनाई दिया। मैं चौंक पड़ा। भागा हुआ बाहर आया, तो देखा कि पड़ोस के ही एक मकान में दूसरी मंजिल पर आग लगी है। भयानक लपटें चारों ओर लपलपाती हुई फैल रही हैं, धुएं के काले बादल आकाश को छू रहे हैं। बच्चों और औरतों के चीत्कार से एक करुणाजनक दृश्य उपस्थित

था। किसी को भी इस भयानक दृश्य की सम्भावना न थी और इसलिए सभी निश्चित होकर अपने घरो मे आनन्दमग्न थे, परन्तु इस दृश्य ने तो चारों ओर एक प्रलय का स्थिति उत्पन्न कर दी।

यह मकान एक पंजाबी लाला जी का था। दो साल पहले ही उन्होंने बनवाया था और मोहल्ले की सबसे सुन्दर इमारतो में माना जाता था। मकान में कई परिवार थे। आग लगते ही एक हलचल-सी मच गई। सभी अपना-अपना सामान, ट्रक, बिस्तर और बर्तन आदि निकाल कर बाहर डालने लगे। कुछ औरतें सोते बच्चो को निकाल कर ला रही थी। कुछ खाली हाथ ही घबराई हुई बाहर आ रही थीं। सभी को अपनी-अपनी मुसीबत दिखाई दे रही थी। मकान के सामने तमाशा देखने वालो की एक बहुत बडी भीड एकत्र हो गई थी।

इसी समय एक रोती हुई महिला की पुकार सुनाई दी—"हाय मेरा बच्चा अन्दर रह गया। मैं अब क्या करूँ?" उसकी करुणापूर्ण आवाज सुनकर सभी दर्शक दहल उठे। परन्तु आग की भयानक लपटो को देखकर किसी का भी आगे बढ़ने का साहस न होता था। बच्चा एक कमरे में सोता रह गया था और मा दूसरे बच्चो को बचाने की हडबडी में उसे निकाल न सकी। अब उस कमरे मे जाने के सभी रास्ते आग से घिर चुके थे। सभी खड़े हाथ मल रहे थे और मा अपने बच्चे के इस भयानक सकट को देखकर दहाड मारकर रो रही थी। तभी दर्शकों ने आश्चर्यचकित होकर देखा कि बराबर के मकान के पाइप से एक युवक भीगा काला कम्बल ओढे जल्दी-जल्दी छज्जे की ओर चढ़ा जा रहा है। युवक के उस साहस को देखकर चारो ओर एक सन्नाटा-सा छा गया। सभी आगे का परिणाम देखने को स्तब्ध खडे थे। युवक जलते मकान के छज्जे मे पहुचकर धुए के घटाटोप में गायब हो चुका था। दर्शक उसकी सफलता की कामना करते हुए उसकी ओर आखें लगाए खड़े थे। आग भी धीरे-धीरे उसका रास्ता रोकती आगे बढती आ रही थी।

बजे तक आग पूरी तरह शान्त हो गई एक-दो मोटरो को सावधानी के लिए वहाँ छोडकर बाकी सब मोटरें वहाँ से चली गई थी । उनके इस कठोर परि-श्रम को देखकर सभी मुक्त-कण्ठ से उनकी प्रशसा कर रहे थे । वास्तव मे, इन लोगों का कार्य महान् है । यदि इस प्रकार का सगठन न हो, तो इस अग्नि के भयानक क्रोध को शान्त करना कितना कठिन हो जाता ।

आग बुझाने के बाद का दृश्य तो और भी भयानक था । चारो ओर पानी फैला हुआ था । कीमती सामान कुछ राख हो चुका था, कुछ अधजला इधर-उधर बिखर पडा था । अवसर लगते ही कुछ लोग वहाँ से सामान उठाने मे भी न चूके थे । जो मकान एक दिन पहले देव भवन सा अपनी सुन्दर शोभा लिए शान से खडा था, वही अब भुतहा-खडहर दिखाई दे रहा था । दीवारें धुएं से काली और अधजली खडी थी । बाहर खडे उसके निवासी सर्दी मे पडे काँपते आसू भरी आखो से विनाशकारी दृश्य की ओर देख रहे थे जो कपडे तन पर पहने घर से बाहर निकले थे, वही शेष बचे थे । निकालने के प्रयत्न मे भी वे कुछ न निकाल पाए थे । सब कुछ मिलाकर लगभग डेढ–दो लाख की सम्पति इस अग्निकाड मे स्वाहा हो चुकी थी । कुशल यही थी कि प्राणो की कोई हानि नहीं हुई और न आग दूसरे मकानो में फैल सकी, अन्यथा वह शहर के इतिहास का एक सबसे बडा अग्निकाड होता ।

आग लगने का कारण भी साधारण था । एक महाशय सर्दी से बचने के लिए जलती अगीठी अपनी चारपाई के पास रख कर लेट गए । पुस्तक पढते-पढते जरा आखें लग गई और रजाइ का पल्ला अगीठी में जा गिरा । जब रूई ने पूरी तरह आग पकड ली, तब घबराहट मे उसने जो रजाई दूर फेंकी, तो उससे चारो ओर आग फैल गई । इस प्रकार उसकी एक जरा सी असावधानी ने इतना भयानक अग्निकांड उपस्थित कर दिया ।

आज मनुष्य ने अनेक प्राकृतिक बाधाओ पर विजय पा ली है, फिर भी कभी–कभी उसकी अपनी ही भूल से ऐसी दुर्घटनाएं सामने आ खडी होती

है, जो अनेक प्राणियो के लिए भयानक सकट उपस्थित कर देती हैं। कम-से-कम मनुष्य को आग पानी के सकटो से तो सदा सावधान रहना चाहिए। यह दोनो ही शक्तियाँ जहाँ मानव जीवन के लिए परम आवश्यक है, वहाँ नियन्त्रण से बाहर होने पर भयानक घातक भी। अत मनुष्य को अपने इन मित्रो को सदा शत्रु बनने से रोकते रहना चाहिए।



नारी और नौकरी

कभी कभी मनुष्य के सामने अपने ही उत्तर प्रश्न बन बैठते है? जो नारी कभी पुरुष के प्रश्नो का उत्तर होती थी वही आज प्रश्न का विषय बन गई है। जब नारी पुरुष के सामने खडी होने के योग्य हुई कि यह समानता कितने उत्तरदायित्वो का भार सभाले हुए है यह प्रश्न समाने आ गया। आज की नारी पुरुषो की तरह कार्यालयो म काम करके बराबर का पैसा घर लाती हैं। प्रश्न यह है कि ऐसी अवस्था म गृहलक्ष्मी वाला रूप ठीक प्रकार निभ सकता है या नही? देखा यह भी गया है कि कार्यालयो मे काम करने वाली प्राय नारी घर के काम के प्रति उतना सोच नही ले पाती जितनी कि चाहिये। या तो यह समझा जाय कि नारी और पुरुष दोनो मिलकर इतना कमा लेते है कि धन से पूरा लाभ उठाते हैं। रोटी आदि बनाने के लिए साफ सुथरा एक आदमी अलग से रखा जा सकता है तो धन का ऐश्वर्य क्यो न भोगा जाय? यदि नारी और पुरुष दोनो ही एक जैसी तबियत के है तब तो मेरा ख्याल है कि चैन से गुजर जाती होगी, परन्तु यदि नारी या पुरुष दोनों की किसी प्रकार की तबियत मे फर्क है तो शायद मुश्किल है। यह दूसरी बात है कि टाइप का क्लर्क तो वैसे भी घर मे अर्धांगिनी स्वय बन जाता है।

इस प्रकार के वातावरण में नारी और नौकरी का प्रश्न अत्यन्त स्वाभाविक है नारी कम से कम अत्याधुनिक नारी पुरुष के साथ कंधे मे कंधा मिलाकर चलने मे तत्पर है, इसमे कतई शक नही। दर असल इतनी चमक दमक के सामने आँख पूरी तरह नही खुल पाती। ऐसे मे सन्देह के पाँव डगमगा आते हैं। नौकरी वाले नर नारी जहाँ इतने ऊँचे दर्जे के दिखाई देते हैं अन्दर से देखा जाय तो मन के किसी कोने मे असन्तोष भी मिलता है। रसोई का वह सुख पहाड़ी वाँय कैसे दे सकता है? और बहुत जोर मारा तो श्रीमती जी सिर्फ इतना कर रही हैं कि प्लेट मे से विदेशी स्वाद का भोजन परोस भर रही हैं। इससे पुरुष और नारी दोनो ही अपना अपना सुख खो बैठते हैं। 'भारतीय चौका' जो स्वास्थ्य प्रदान कर सकता है, वह नहीं मिलता। धीरे धीरे स्वभाव ही प्रकृति बन जाता है।

इस प्रश्न का उत्तर दो प्रकार से दिया जा सकता है जो केवल बुद्धि से सोचते हैं वे नौकरी को बुरा नहीं मानते। क्योंकि उनके आनन्द का रूप ऐसा ही है जैसे कोई कागज के सुन्दर फूल में खुशबू भरकर असली बनावे। इसमें डूब जाने वाली बात पैदा नहीं होती। सोचने की बात है कि जब दोनो ही थके हो तो कौन किसकी थकान दूर करने का प्रयत्न करे। भूखा भूखे की भूख नहीं मिटा सकता, हाँ मिलकर किसी और से सुविधा ले सकते हैं?

घर में तो रस होना चाहिये। वह रस तभी आयेगा जब भूखा घर में आकर गृहलक्ष्मी के हाथों से सरस भोजन प्राप्त करेगा। यदि ऐसा नहीं है तो दीवारों और सुन्दर छत को 'स्वीट होम' नही कहते।

नारी की सबसे बड़ी नौकरी तो यह है कि घर में भरपूर सुख रहे। एक समय भोजन करके रहने मे जो सुख है वह उदास घर मे चार समय भोजन मिलने में भी नहीं है। घर में तरतीब से सारे काम हों कोई वस्तु व्यर्थ न जाय, प्रत्येक वस्तु की पूरी पूरी उपयोगिता ग्रहण की जाय तो इससे दुगुना लाभ होता है। परन्तु इन सबके पीछे परिस्थितियाँ होती है आज का युग

बहुत बढ़ गया और जीवन बहुत महंगा हो गया है। जीवन में आवश्यकताएँ इतनी बढ़ गई हैं कि मनुष्य की एक आय पर्याप्त नहीं रहती।

ऐसी अवस्था में यदि थोड़ा दु:ख सहकर अधिक आरामदेह सुख मिलते हैं तो बुरा नहीं। घर के वातावरण में चहल पहल बनी रहे, मस्ती भी रहे और आगे बढ़ने की इच्छा रहे तब तो नर और नारी दोनों नौकर हों तो सुख ही है।

समय की बात है—यदि फिर वस्तुएं सहज सुलभ होने लगें तो मनुष्य की आवश्यकताएं घटें। मन में विस्तार हो, तन में विस्तार होना ठीक नहीं है। जहां तक हो रोग को दूर करने की कोशिश करनी चाहिये।



श्री नेहरू की वसीयत



[श्री जवाहरलाल नेहरू भारत के परम उज्ज्वल रत्न थे। उन्हें भारत के कण-कण से प्यार था। भारत को स्वाधीन कराने में उनका बड़ा भारी योग था। विश्व मैत्री के वे श्रेष्ठ समर्थक थे। वे भारत के प्रधान मन्त्री थे। अपनी मृत्यु से पूर्व ही उन्होंने जो वसीयत लिखी थी, उसके कुछ विशेष अंश इस प्रकार हैं]

"मुझे मेरे देश की जनता ने, मेरे हिन्दुस्तानी भाइयों और बहनों ने, इतना प्रेम और इतनी मुहब्बत दी है कि चाहे मैं जो कुछ करूँ, वह उसके एक छोटे-से

छोटे हिस्से का बदला नहीं हो सकता। सच तो यह है कि प्रेम तो इतनी कीमती चीज है कि इसके बदले कुछ देना मुमकिन नहीं है इस दुनिया में बहुत से लोग हुए, जिनको अच्छा समझ कर, बड़ा मान कर उनका आदर किया गया, पूजा गया लेकिन भारत के लोगों ने छोटे और बड़े, अमीर और गरीब, सब तबको के बहनो और भाइयो ने मुझे इतना ज्यादा प्यार किया कि उसका बयान करना मेरे लिए मुश्किल है और उससे मैं दब गया हूँ। मैं आशा करता हूँ के अपने जीवन के बाकी वर्षों मे अपने देशवासियों की सेवा करता रहूँ और उनके प्रेम के योग्य बनूँ।"

"मैं चाहता हूँ, और मन से चाहता हूँ कि मेरे मरने के बाद कोई धार्मिक रस्में न अदा की जायें। मैं ऐसी बातो को नहीं मानता हूँ और सिर्फ रस्म समझकर इन में बध जाना धोखे में पडना मानता हूँ। जब मैं मर जाऊँ तब मेरा दाहसंस्कार कर दिया जाय। अगर विदेश में मरू तो मेरे शरीर को वहा जला दिया जाए और अस्थियां इलाहबाद भेज दी जायें। इनमे से मुट्ठी भर गगा में डाल दी जायें और उनके बडे हिस्से के साथ क्या किया जाए मैं आगे बता रहा हूँ। इनका कुछ भी हिस्सा किसी हालत में बचा कर न रखा जाए।"

"गगा में अस्थियों का कुछ हिस्सा डलवाने की इच्छा के पीछे, जहाँ तक मेरा ताल्लुक है, कोई धार्मिक भावना नही है। मुझे बचपन से गगा और यमुना से लगाव रहा है, और जैसे-जैसे मैं बडा हुआ, यह लगाव बढ़ता रहा। मैंने मौसमो के बदलने के साथ इनके बदलते हुए रग और रूप को देखा है, और कई बार मुझे याद आई उस इतिहास की, उन परम्पराओं की, पौराणिक

गाथाओं की, उन गीतों और कहानियों की, जो कि कई युगों से उन के साथ जुड़ी हैं और उनके बहते हुए पानी में घुल-मिल गई हैं।"

"गंगा तो विशेष कर भारत की नदी है, जनता की प्रिय है, जिससे लिपटी हुई हैं भारत की जातीय स्मृतियां, उसकी आशाएं और उसके भय, उसका विजय-गान, उसकी विजय और पराजय। गंगा तो भारत की प्राचीन सभ्यता का प्रतीक रही है, निशान रही है, सदा बदलती, सदा बहती, फिर वही गंगा की गंगा। वह मुझे याद दिलाती है हिमालय की बर्फ से ढकी चोटियों की और गहरी घाटियों की, जिन से मुझे मुहब्बत रही है, और उनके नीचे के उपजाऊ और दूर-दूर तक फैले मैदान जहां काम करते मेरी जिन्दगी गुजरी है। मैंने सुबह की रोशनी में गंगा को मुस्कराते, उछलते-कूदते देखा है, और देखी है शाम के साए में उदास, काली-सी चादर ओढ़े हुए भेद-भरी, जाड़ों में सिमटी सी आहिस्ते-आहिस्ते बहती सुन्दर धारा, और बरसात में वह दहाड़ती-गरजती हुई, समुन्द्र की तरह चौड़ा सीना लिए और सागर की तरह बरबाद करने की शक्ति लिए हुए। यही गंगा मेरे लिए निशानी है, भारत की प्राचीनता की यादगार की, जो बहती आई है वर्तमान तक और

भले ही मैंने पुरानी परम्पराओं, रीति और रस्मों को छोड़ दिया हो, और मैं चाहता भी हूं कि हिन्दुस्तान इन सब जंजीरों को तोड़ दे, जिन में वह जकड़ा है, जो उसको आगे बढ़ने से रोकती हैं और जो देश में रहने वालों में फूट डालती हैं, जो बेशुमार लोगों को दबाए रखती हैं और जो शरीर तथा आत्मा के विकास को रोकती हैं, चाहे ये सब मैं चाहता हूं फिर भी मैं यह नहीं चाहता कि मैं अपने को इन पुरानी बातों से बिल्कुल अलग कर लूं। मुझे

फख्र है इस शानदार उत्तराधिकार का, इस विरासत का, जो हमारी रही है और हमारी है और मुझे यह भी अच्छी तरह से मालूम है कि मैं भी, हम सबो की तरह, इस जजीर की एक ऐसी कडी हू जो कभी नहीं और कहीं टूटी है और जिसका सिलसिला हिन्दुस्तान के अतीत इतिहास के प्रारम्भ से चला आता है। यह सिलसिला मैं कभी नहीं तोड सकता, क्योंकि मैं उसकी बेहद कद्र करता हू, और इससे मुझे प्रेरणा, हिम्मत और हौसला मिलता है। मैं इस आकाक्षा की पुष्टि के लिए और भारत की सस्कृति को श्रद्धाजलि भेंट करने के लिए यह दरखास्त करता हू कि मेरी भस्म की एक मुट्ठी इलाहबाद के पास गगा में डाल दी जाय, जिससे कि वह उस महासागर में पहुँचे, जो हिन्दुस्तान को घेरे हुए है।"

"मेरी भस्मी के बाकी हिस्से का क्या किया जाय? मैं चाहता हू कि इसे हवाई जहाज में ऊँचाई पर ले जा कर बिखेर दिया जाय, उन खेतो पर जहा भारत के किसान मेहनत करते हैं, ताकि वह भारत की मिट्टी में मिल जाय और उसी का अग बन जाय।"



पत्र-लेखन-कला

(प्रमुख लोकोक्तियो—मुहावरो सहित)

पत्र-लेखन-कला

पत्र लिखना भी एक कला है। पत्र ऐसा प्रभावशाली होना चाहिए कि वह जिस आशय से लिखा जाय, उसका प्रभाव पड़े बिना न रहे। पत्र की भाषा और उसका प्रवाह विषय के अनुकूल होने चाहिएँ।

प्राचीन युग की पत्र-लेखन विधि और नवीन युग की पत्र लेखन-विधि पर्याप्त अन्तर आ गया है। शिक्षा में पत्र-लेखन को अब विशेष महत्त्व दे दिया गया है।

पत्र लिखने की विभिन्न शैलियाँ

निजी पत्र (Personal Letter)—ये पत्र अपने निजी सम्बन्धियों, मित्रों तथा घर के व्यक्तियों को लिखे जाते हैं। ऐसे पत्रों में निजी पत्र की स्पष्ट छाप होनी चाहिए।

प्रार्थना पत्र (Application)—ये पत्र किसी विशेष अधिकारी को लिखा जाता है, जिसमें अपनी योग्यता प्रकट होनी चाहिये और अपने स्वभाव और कुशलता का पूर्ण परिचय होना चाहिए। इस पत्र की विशेषता इसी में है कि पत्र ऐसा लिखा जाय कि अधिकारी इच्छित पद के लिए आपको ही उपयुक्त समझे।

व्यवहारिक पत्र (Business Letter)—ये पत्र किसी दूकानदार या व्यापारी को लिखे जाते हैं। ऐसे पत्रों में भाषा सरल और स्पष्ट होनी चाहिए और सभी प्रकार का विवरण देना चाहिए।

पत्र लिखते समय यह ध्यान रखना चाहिए कि कोई बात अनावश्यक और ऊल-जलूल नहीं होनी चाहिए। पत्र में प्रत्येक बात का एक क्रम होना चाहिए। वाक्य छोटे, सरल, सरस और स्पष्ट होने चाहिए। पत्र न अधिक लम्बा और न अधिक छोटा होना चाहिए।

सबसे पहले पत्र में स्थान, तिथि होनी चाहिए। आजकल एक रीति यह भी चल गई है कि तिथि और स्थान पत्र की बाईं ओर नीचे लिख देते हैं।

दूसरी बात यह है कि हमको यह भी जान लेना चाहिए कि जब हम पत्र लिखने बठ तो किसको कैसा सम्बोधन करना चाहिए। नीचे उसके प्रति अपने नाम से पहले क्या और किस प्रकार लिखने चाहिएँ।

नीचे ऐसे ही भिन्न प्रकार के पत्र दिए जा रहे हैं, जिनसे विद्यार्थियो को पत्र लिखने का ज्ञान हो जाय। कुछ ज्ञान के लिए ऐसे शब्द भी दिए जा रहे हैं, जिनका प्रयोग प्रारम्भ और अंत मे इस प्रकार होता है।

गुरुजनो के लिए

प्रारम्भ—पूज्य, श्री आदरणीय, श्रद्धेय, प्रात.स्मरणीय, माननीय।
अंत—आज्ञाकारी, आपका शिष्य, आपका प्रिय पुत्र, कृपाकांक्षी, चरण सेवक।

मित्रों के लिये

प्रारम्भ—प्रियमित्र, मित्रवर, स्नेहिन्, प्यारे दोस्त, प्रियबन्धु, सुहृद्वर।
अन्त—अभिन्न, तुम्हारा स्नेही, स्नेहाकांक्षी।

छोटों के लिए

प्रारम्भ—चिरजीव प्रिय, प्रिय पुत्र, प्रिय भाई।
अन्त—शुभैषी, शुभेच्छु, शुभचिंतक, हितैषी, हितेच्छु, हितचिंतक।

व्यावहारिक पत्रों के लिए

प्रारम्भ—श्रीमान जी, महोदय, महानुभाव, श्रीमान संपादक जी, श्री संस्थापक महोदय, श्री संचालक महोदय, श्री मैनेजर, श्री प्रबन्धक महोदय।
अन्त-भवदीय, विनीत, आपका, सादर विनम्र, भावत्मक।

परीक्षा के समय पिता का पुत्र को पत्र

मेरठ
२३-१-६७

चिरजीव रमाकात !

शुभाशीर्वाद

पत्र तुम्हारा मिला। ज्ञात हुआ कि तुम्हारी परिक्षायें १ तारीख से प्रारम्भ होने वाली हैं। बेटा ! यही समय है जब से तुम्हारा वर्ष-भर का परिश्रम प्रसन्नता और उल्लास की घड़ियों को जन्म देगा। यही वे क्षण हैं, जिन्हें अमूल्य कहा जा सकता है। ऐसे क्षणों मे आलसी और आवारा लड़कों से दूर रहने में ही कल्याण है। जो तुमने पढ़ा है, उसे ध्यान से विचारना

हम सब तुम्हारी प्रतीक्षा मे रहेंगे, तुम परीक्षा में सफल हो ऐसी हमारी शुभ कामना है। तुम्हारी मा तुम्हे आशीर्वाद और छोटी बहनें प्रणाम कहती हैं।

अपने परीक्षा पत्रों के बारे मे लिखते रहना।

तुम्हारा शुभैषी,
रामनाथ

पुत्र की ओर से पिता को पत्र

रामजस कालिज,
दिल्ली
१२-४-६७

पूज्य पिता जी !

चरणों मे सादर अभिवादन

आपका कृपा पत्र मिला। आपकी कृपा से यहाँ वार्षिक-उत्सव बड़ी धूम धाम से मना गया। इस अवसर सभापति पद के लिए महामान्य राष्ट्रपति डा० राधाकृष्णन को निमन्त्रित किया गया था। इन महानुभाव ने अपने दार्शनिक और विचारपूर्ण भाषण से छात्रों को अनुशासन की ओर प्रेरित

किया। जिन छात्रों को पारितोषिक मिला और उनमे से एक मैं भी था। पिता जी ! आपको जानकर यह प्रसन्नता होगी कि मैं अपने विषय में अपने विषय मे प्रथम हूँ।

इस अवसर पर और भी कई मनोरजक कार्यक्रम प्रस्तुत किये गए छात्रों की ओर से विष्णु प्रभाकर का लिखा नाटक खेला गया। एक दिन सगीत का कार्य क्रम किया गया। दूसरे दिन कवि सम्मेलन था, जिसमें हिन्दी के अच्छे प्रतिष्ठित कवियो ने भाग लिया। इस प्रकार यह उत्सव बड़ी प्रसन्ता और सफलता से सम्पन्न हुआ।

मुझे विश्वास है कि घर पर सब कुशल होगे।

पूज्य पिताजी को प्रणाम, भाइयो और बहनो को प्यार।

आपका आज्ञाकारी,
अशोक कुमार

मित्र को निमत्रण पत्र

३१८५, बाजार सीताराम, दिल्ली
२५ ५-६७

प्रिय स्नेहिन

सप्रेम नमस्कार !

तुम्हें यह जानकर हर्ष होगा कि मेरी छोटी बहिन नदरानी का विवाह चन्दौसी के प० बेणीप्रसाद के पुत्र राकेश शर्मा बी० ए० से होना निश्चित हो गया है। विवाह की तिथि ७ जून १९६७ हुई हैं।

मुझे विश्वास है कि इस अवसर पर आकर मुझे अपना सहयोग प्रदान कर उत्सव की शोभा वृद्धि करोगे। निमन्त्रण-पत्र डाक द्वारा भेजा जा चुका है। इस परिणय पर्व पर तुम्हारे सपरिवार उपस्थित होने की प्रतीक्षा मे हूँ। शेष कुशल

तुम्हारा—
भारत भूषण

मित्र के जन्मोत्सव पर बधाई तथा उपहार देना

१७७८, मासारलो रोड,
नई दिल्ली।
२८-४-६७

प्रिय सुरेश,

मुझे आज ही स्मरण हुआ है कि १-५-६७ को तुम्हारा शुभ जन्म दिन है। इस अवसर पर तुम्हारे लिये मेरी कल्याण कामनायें सदैव तुम्हारे साथ हैं। ईश्वर करे कि ऐसे शुभ दिन तुम्हे जीवन मे हजार बार देखने को प्राप्त हों और तुम सदा सुखी तथा स्वस्थ रहकर इन दिनो का महत्व समझो।

मैं तुम्हें "गोदान" नाम की पुस्तक उपहार स्वरूप भेज रहा हूँ, क्योंकि तुम्हें उपन्यास पढने का बहुत ही शौक है। यह उपन्यास मुन्शी प्रेमचन्द के उपन्यासो में सर्वश्रेष्ठ उपन्यास है। आशा है, तुम्हें इस उपन्यास द्वारा पर्याप्त मनोरंजन तथा शिक्षा प्राप्त होगी। मैं आजकल अपनी पढ़ाई में पूर्णतया व्यस्त हूँ। अपने पूज्य माताजी तथा पिता जी को प्रणाम।

तुम्हारा सुहृद,
अशोक।

मित्र को पत्र (अपने भविष्य के विषय में)

४८, दरियागज दिल्ली
२७-४-६७

प्रिय बन्धु !

आज परीक्षाएँ समाप्त हो चुकी हैं और मुझे विश्वास है, यदि भाग्य ने साथ दिया तो मैं अच्छे नम्बर लेकर उत्तीर्ण हो जाऊंगा। अब मैं आगे के बारे में सोच रहा हूँ। मेरे साथी ! ये ही ऐसे क्षण होते है, जिन में व्यक्ति कुछ सोच सकता है। अब तक मेरा सबसे उत्तम उद्देश्य यही था कि हिन्दी में एम० ए० कर लूँ। आज की परिस्थितियो को देखते हुए उक्त परीक्षा

नितान्त आवश्यक है। मेरा तात्पर्य यह नहीं है कि योग्यता परीक्षा से प्राप्त की जाती है, योग्यता तो विद्यार्थी के विचार और मनन पर निर्भर है। फिर भी परिक्षाओं के बहाने नया साहित्य पढने को मिलता है। दूसरे वह युग अभी दूर है, जबकि योग्यता के आधार पर व्यक्ति को पदवी मिला करेगी।

मेरा विचार है कि अब मैं प्राचीन साहित्य का अध्ययन करूँ और भारतीय प्राचीन साहित्य से जीवन के उन तत्वो को खोजूं जिनसे भारतीय आदर्श का गौरव प्रकट होता है। इससे यह लाभ होगा कि मैं प्राचीन साहित्य का ज्ञान प्राप्त कर सकूंगा और हिन्दी की सेवा भी कर सकूंगा। मुझे विश्वास है कि मेरे इस निश्चय पर तुम्हें प्रसन्नता होगी और तुम मेरे उत्साह को बढाओगे।

पूज्य वर्ग को सादर प्रणाम, बच्चो को शुभ स्नेह। पत्रोतर मे अपने विचार प्रकट करना।

तुम्हारा
प्राणनाथ मेहरा

मृत्यु का समाचार मित्र को

टैगोर रोड, कानपुर
२१-४-६७।

भाई रामेश्वर,

आज यह लिखते समय हृदय विदीर्ण हो रहा है कि २१ अप्रैल की शाम को चार बजे पूज्य माता जी का देहान्त हो गया। उनके अभाव से मुझे लगता है कि मेरा जीवन किसी अशीर्मयी छाया से हीन हो गया है। ऐसे समय मे तुम्हारा मेरे साथ होना आवश्यक है। मुझे तुम्हारे आने पर कुछ सान्त्वना मिल सकती है सबको मेरी ओर से यथा-योग्य कहते हुए इस दुखद समाचार से अवगत करा देना।

तुम्हारा,
श्रीकृष्ण



अपनी फीस माफ कराने के लिए

(प्रधानाध्यापक को)

सेवा मे,

प्रधानाध्यापक,
कमर्शियल हाई स्कूल,
२४, दरियागज, दिल्ली।

मान्यवर,

सेवा मे सविनय निवेदन है कि मैं इस स्कूल मे ३ वर्ष से शिक्षा प्राप्त कर रहा हूँ और सदैव अच्छे अको से पास होता रहा हूँ। स्कूल में सभी अध्यापक-गण, सहपाठी तथा अन्य कर्मचारी मेरे सदाचार से प्रसन्न हैं। इसी माह में तारीख ५ को अचानक ही हृदय की गति बन्द होने से पिताजी का स्वर्गवास हो गया है। अब कुटुम्ब के सारे प्राणियो का भरण-पोषण केवल पूज्य भाई साहब की आय से हो रहा है। आजकल किस कठिनता से घर का खर्च चल रहा है, मैं लिखने मे असमर्थ हूँ। भाई साहब की कुल आय १६०) मासिक है जिससे हम छोटे बडे ६ प्राणी हैं। हमे मकान किराया ७५) देना पडता है। पिताजी की अचानक मृत्यु हो जाने से घर की व्यवस्था बिगड गई है तथा कुटुम्ब को एक विकट परिस्थिति से निकलना पड रहा है। ऐसी अवस्था मे मैं फीस देने मे असमर्थ हूँ। आपसे करबद्ध प्रार्थना करता हूँ कि कृपया आप स्कूल-फीस माफ कर मुझे कृतार्थ करें तथा साथ ही छात्र-वृत्ति देने की भी कृपा करें। अन्यथा मुझे शिक्षा बन्द करनी पडेगी।

आपके इस उपकार के लिए मैं सदैव आपका कृतज्ञ रहूँगा।

आपका आज्ञाकारी
शिष्य.
२०-६-६७ श्यामलाल X-A

(प्रधानाध्यापक को)

(प्रमाण-पत्र के लिए)

सेवा में

श्रीमान् प्रधानाध्यापक,
कमशियल हायर सैकेन्डरी स्कूल,
७४, दरियागंज, दिल्ली।

मान्यवर,

सेवा में सविनय निवेदन है कि मेरे पिताजी की बदली यहाँ से अम्बाला हो गई है, जिसके कारण हम सबको उनके साथ जाना पड़ेगा। अत लाचारी के कारण मुझे यह स्कूल छोड़ना पड रहा है अन्यथा स्कूल के पूज्य अध्यापक-वर्गों का स्नेह, अनुशासन और अध्यापक से वंचित होकर मैं खिन्न हूँ। अतएव, आशा करता हूँ कि आप मुझे विद्यालय का प्रमाण-पत्र देकर कृतार्थ करेंगे।

आपका आज्ञाकारी
शिष्य,
रामस्वरूप
कक्षा ९

१४-५-६७

परीक्षा में बैठने के लिए

(आवेदन-पत्र मगाने के बारे मे)

१४१०, नई सडक, दिल्ली,
१२-४-१९८७

रजिस्ट्रार,
पंजाब विश्वविद्यालय,
चण्डीगढ़।

श्रीमान् जी,

मैं इस वर्ष जून में होने वाली प्रभाकर परीक्षा में बैठना चाहता हूँ। कृपया एक आवेदन-पत्र भेजने का कष्ट करें। साथ ही परिक्षायें कब से प्रारम्भ होंगी सूचित करने की कृपा करें। कष्ट के लिए क्षमा, धन्यवाद।

अत्यन्त आभारी,
अशोक गौड़।

रोल नम्बर न आने पर सूचना

सेवा में

श्रीमान् रजिस्ट्रार महोदय,
पंजाब विश्वविद्यालय,
चंडीगढ़ ।

श्रीमान जी,

निवेदन यह कि मुझे अभी तक रोल नम्बर प्राप्त नहीं हुआ है। परीक्षा प्रारम्भ होने में केवल एक सप्ताह बाकी है। अतः अतिशीघ्र तार द्वारा मेरा रोल नम्बर भेजने की कृपा करें। मुझे विश्वास है छात्र के अमूल्य समय और उसकी उन्नति में आप सहयोग देकर अपने शिक्षा-प्रेम को प्रकट करेंगे।

भवदीय,
रामजीलाल खन्ना,
५१७, जोगीवाड़ा, नई सड़क,
दिल्ली ।

२२ ५-६७

पुस्तक विक्रेता को
परीक्षा पुस्तकों का सूची पत्र तथा पुस्तकों को भेजने के लिए नियमावली के बारे में

इन्दरगंज,
लश्कर (ग्वालियर)
११-७-१९६७

संचालक,
साहित्य ज्ञान मन्दिर,
पुस्तक विक्रेता तथा प्रकाशक,
नई सड़क, दिल्ली ।

प्रिय महोदय,

कृपा करके आप पंजाब विश्वविद्यालय की हिन्दी प्रभाकर परीक्षा की नियमावली सूचीपत्र तथा पुस्तक अति शीघ्र भेजने का कष्ट करें। यहां पर हम ४-५ विद्यार्थियों का विचार परीक्षा में बैठने का है। साथ ही हम पंजाब

विश्वविद्यालय की मैट्रिकुलेशन परीक्षा की पुरानी किताबें बेचना चाहते हैं। आप उन्हे किन दामो मे खरीदेंगे, लिखने की कृपा करें। धन्यवाद।

भवदीय,
भगवती प्रसाद।

ग्राहक का पत्र दुकानदार को

सुभाष बाजार, मैनपुरी
३-५-६७

श्रीमान प्रबन्धक महोदय,
साहित्य ज्ञान मन्दिर,
नई सडक, दिल्ली।

प्रिय महोदय,

आपके यहा से हाल मे अभी कुछ परिक्षोपयोगी पुस्तकें प्रकाशित हुई हैं। आप निम्नलिखित पुस्तकें वी० पी० द्वारा शीघ्र ही भेजने की कृपा करें।

मुझे विश्वास है कि आप विद्यार्थी के अमूल्य समय का विचार करते हुए शीघ्रता करेंगे।

(१) नालदा निबन्ध प्रभा	१ प्रति
(२) नालदा संस्कृत व्याकरण	१ प्रति
(३) नालदा इगलिश एसेज	१ प्रति
(४) नालदा ईगलिश ग्रामर	१ प्रति

भवदीय,
उलफत राय ग्रोवर



(सफाई के बारे मे)

पत्र

श्रीयुत कमिश्नर महोदय,
दिल्ली नगर निगम,
दिल्ली।

महानुभाव !

पिछले कुछ दिनो से हमारी गली में प्रबन्ध की कमी हो गई है। सूचना यह है कि गली की नालियाँ समय के अनुसार स्वच्छ नही की जातीं। सड़क पर सदा कूडा दिखाई देता है।

दूसरी सूचना जिसके लिए सभी गली वाले परिवार दुखी हैं। कुछ ऐसे लोग हैं जो मदिरा (शराब) पीकर आते हैं। जब परिवार सोये होते हैं वो वह अनाप शनाप वाक्य बोलते हैं। सभ्य परिवारो के लिए इस प्रकार का व्यवहार असहनीय हो रहा है और यह मोहल्ले के लिए अत्यन्त लज्जास्पद बात है। आपसे प्रार्थना है कि आप सासकीय नियमो द्वारा सभ्य परिवारो को इस असभ्य-सगति के आतक से बचाने का कष्ट करें।

विश्वास है आप ध्यान देंगे।

आपके—
नगरवासी
छोटा पहाड वाली गली
धर्मपुरा,
दिल्ली।

६-५-६७



(पोस्ट मास्टर को शिकायती पत्र)

प्याऊ वाली गली,
चावडी बाजार, दिल्ली।
११-६-१९६७

श्री पोस्टमास्टर,
जी० पी० ग्रो०,
काश्मीरी गेट, दिल्ली।

महाशय,

मैं आपका ध्यान इस ओर आकर्षित करना चाहता हूँ कि जब से इस इलाके में नया डाकिया लगा है, तब से डाक कभी नियमित तौर पर नहीं आ रही है। साथ ही मेरे यहाँ बहुधा दूसरे के पत्र आ जाते हैं और पत्र दूसरों के यहाँ चले जाते हैं। कई बार मैं डाकिये को भी इस बारे में बता चुका हूँ मुझे तो ऐसा प्रतीत होता है कि अभी उस व्यक्ति को काम का अनुभव नहीं है। अतः किसी अनुभवहीन व्यक्ति को ऐसे कार्य का उत्तरदायित्व देना ठीक नहीं प्रतीत होता।

आशा है आप इस बात की जाँच करके यथासाध्य सप्रबन्ध करने की कृपा करेंगे।

भवदीय,
रामशरण अग्रवाल।

पुलिस अफसर को बाइसिकल की चोरी के विषय में

स्टेशन पुलिस अफसर,
हौजकाजी पुलिस स्टेशन,
दिल्ली।

श्रीमान् जी,

मैं आज प्रातःकाल लगभग १० बजे नई सड़क पर साहित्य ज्ञान मन्दिर की दुकान पर कुछ पुस्तकें खरीदने के लिए अन्दर गया और मैंने बाइसिकल को दुकान के बिल्कुल सामने खम्भे के सहारे खड़ा कर दिया। बाइसिकल का

ताला खराब था इसलिए ताला न लग सका। थोड़े ही समय के बाद बाहर आकर देखता हूँ तो बाइसिकल गायब थी। हरक्युलस की बाइसिकल जिसका नं० ई ८३६५ है। हैन्डल की बायीं ओर मेरा नाम 'रमेशचन्द्र शर्मा' खुदा हुआ है बाइसिकल बिल्कुल नई है, क्योंकि केवल अभी तीन माह ही खरीदे हुए हैं।

मुझे पूर्ण आशा है कि आप मेरी बाइसिकल की खोज के लिए पूर्ण प्रयत्न करेंगे। आपकी इस कृपा से मैं सदैव आभारी रहूँगा।

आपका विनीत
रमेशचन्द्र
१४६४, कूंचा सेठ,
दिल्ली।

१-५-१९६७

विज्ञापन के उत्तर में

(नौकरी के लिए आवेदन पत्र)

सेवा में,
व्यवस्थापक 'धर्मयुग'
१०, दरियागंज, दिल्ली।

मान्य महोदय,

इस मास के ११ तारीख के दैनिक हिन्दुस्तान' को देखने पर पता लगा है कि आपको अपने कार्यालय के लिए एक विद्वान उपसम्पादक की आवश्यकता है। मैं अपने आपको इस पद के लिए प्रस्तुत करता हूँ।

योग्यता के विषय में केवल इतना ही बताना चाहता हूँ कि मैं पंजाब विश्वविद्यालय से हिन्दी प्रभाकर तथा बनारस विश्वविद्यालय से साहित्य शास्त्री की परीक्षा प्रथम श्रेणी में पास की है। इसके अतिरिक्त गतवर्ष जर्नलिस्ट की परीक्षा भी पास कर चुका हूँ। अंग्रेजी की योग्यता मैंने केवल इन्टरमीडिएट तक प्राप्त की है। इस वर्ष बी० ए० की परीक्षा दे रहा हूँ।

(पोस्ट मास्टर को शिकायती पत्र)

[illegible] गली,
[illegible] बाजार, दिल्ली ।
११-६-१९५७

श्री पोस्टमास्टर,
जी० पी० ओ०,
काश्मीरी गेट, दिल्ली ।

महाशय,

मैं आपका ध्यान इस ओर आकर्षित करना चाहता हूँ कि जब से इस इलाके में नया डाकिया लगा है, तब से डाक कभी नियमित तौर पर नहीं आ रही है । साथ ही मेरे यहाँ बहुधा दूसरे के पत्र आ जाते हैं और पत्र दूसरों के यहाँ चले जाते हैं । कई बार मैं डाकिये को भी इस बारे में कह चुका हूँ मुझे तो ऐसा प्रतीत होता है कि अभी उस व्यक्ति को काम का अनुभव नहीं है । अतः किसी अनुभवहीन व्यक्ति को ऐसे कार्य का उत्तरदायित्व देना ठीक नहीं प्रतीत होता ।

आशा है आप इस बात की जाँच करके यथासाध्य सुप्रबन्ध करने की कृपा करेंगे ।

भवदीय,
रामशरण अग्रवाल ।

पुलिस अफसर को बाइसिकल की चोरी के विषय में

स्टेशन पुलिस अफसर,
हौजकाजी पुलिस स्टेशन,
दिल्ली ।

श्रीमान् जी,

मैं आज प्रातःकाल लगभग १० बजे नई सड़क पर साहित्य ज्ञान मन्दिर की दुकान पर कुछ पुस्तकें खरीदने के लिए अन्दर गया और मैंने बाइसिकल को दुकान के बिलकुल सामने खम्भे के सहारे खड़ा कर दिया । बाइसिकल का

ताला खराब था इसलिए ताला न लग सका। थोड़े ही समय के बाद बाहर आकर देखता हूँ तो बाइसिकल गायब थी। हरक्युलस की बाइसिकल जिसका नं० ई ८३६५ है। हैन्डल की बायीं ओर मेरा नाम 'रमेशचन्द्र शर्मा' खुदा हुआ है बाइसिकल बिल्कुल नई है, क्योंकि केवल अभी तीन माह ही खरीदे हुए हैं।

मुझे पूर्ण आशा है कि आप मेरी बाइसिकल की खोज के लिए पूर्ण प्रयत्न करेंगे। आपकी इस कृपा से मैं सदैव आभारी रहूँगा।

आपका विनीत

५-५-१९६७ रमेशचन्द्र

१४९४, कूचा सेठ,

दिल्ली।

विज्ञापन के उत्तर में

(नोकरी के लिए आवेदन पत्र)

सेवा में,

व्यवस्थापक 'धर्मयुग'

१०, दरियागंज, दिल्ली।

मान्य महोदय,

इस मास के ११ तारीख के दैनिक हिन्दुस्तान' को देखने पर पता लगा है कि आपको अपने कार्यालय के लिए एक विद्वान उपसम्पादक की आवश्यकता है। मैं अपने आपको इस पद के लिए प्रस्तुत करता हूँ।

योग्यता के विषय में केवल इतना ही बताना चाहता हूँ कि मैं पंजाब विश्वविद्यालय से हिन्दी प्रभाकर तथा बनारस विश्वविद्यालय से साहित्य शास्त्री की परीक्षा प्रथम श्रेणी मे पास की है। इसके अतिरिक्त गतवर्ष जर्नलिस्ट की परीक्षा भी पास कर चुका हू। अंग्रेजी की योग्यता मैंने केवल इन्टरमीडिएट तक प्राप्त की है। इस वर्ष बी० ए० की परीक्षा दे रहा हूँ।

अनुभव यह है मैं कुछ दिन दैनिक 'हिन्दुस्तान' में कार्य कर चुका हूँ। आजकल एक स्थानीय दैनिक पत्र में अनुवादक के रूप में कार्य कर रहा हूँ। शास्त्री-परीक्षा पास करने के पश्चात् मेरी पुस्तकें भी स्थानीय पुस्तक विक्रेताओं द्वारा प्रकाशित हो चुकी हैं।

विश्वविद्यालय की परीक्षाओं के प्रमाण-पत्र तथा मेरे द्वारा लिखी गई पुस्तकों की प्रतियाँ साथ भेज रहा हूँ।

मैं एक उच्च चतुर्वेदी कुटुम्ब से सम्बन्धित हूँ। सदाचरण के साथ ही साथ जन-सेवी भी हूँ। मेरी आयु केवल २६ वर्ष की है। स्वास्थ्य तथा आचरण सभी अच्छा है।

अन्त में, मैं आपको विश्वास दिलाता हूँ यदि आप मुझे यह पद प्रदान करने की कृपा करेंगे तो मैं आपको अपने कार्य से सन्तुष्ट करने में कोई कसर न रखूँगा। साथ ही चिरकाल तक आपका कृतज्ञ रहूँगा।

धन्यवाद सहित !

आपका विनम्र विश्वासपात्र,
किशोरीलाल चतुर्वेदी,
कटड़ा लच्छूसिंह, फव्वारा,
चांदनी चौक, दिल्ली।

नौकरी के लिए प्रार्थना पत्र

श्रीयुत डिप्टी कमिश्नर,
पुलिस विभाग,
दिल्ली।

माननीय,

मुझे विश्वस्तसूत्र से ज्ञात हुआ है कि आपके कार्यालय में एक क्लर्क की आवश्यकता है इस पद के लिए जो योग्यता आवश्यक है वह मुझे में है मैंने तीन वर्ष शिक्षा विभाग में क्लर्क के पद काम किया है। स्वास्थ्य के

खराब हो जाने के कारण मुझे वहाँ त्याग पत्र देना पड़ा। मेरी योग्यताएँ इस प्रकार है—

(१) दिल्ली विश्वविद्यालय की बी० ए० परीक्षा प्रथम श्रेणी में उत्तीर्ण की है।

(२) टाइप और शोर्टहैण्ड का २ वर्ष का अभ्यास है।

मुझे विश्वास है कि मेरी योग्यता और अनुभव को ध्यान में रखते हुए मुझे इस पद के योग्य समझेंगे और स्थान देकर अनुगृहीत करेंगे।

पूर्व धन्यवाद
दिनांक २-६-६७

आपका कृपाकांक्षी,
अमोलचन्द,
१८६८, धर्मपुरा, मस्जिद खजूर,
दिल्ली।

दैनिक पत्र को सूचना

सेवा में,
सम्पादक महोदय,
"नवभारत टाइम्स"
दरियागंज दिल्ली।

श्रीमान जी,

सविनय प्रार्थना है कि हमारी संस्था की ओर से सम्पन्न कार्य-क्रम को अपने समाचार पत्र में प्रकाशित कर अनुगृहीत करें।

"आज दिल्ली प्रान्तीय पराग कार्यालय की ओर से यहाँ एक साहित्यिक गोष्ठी सम्पन्न हुई। इस गोष्ठी में राजधानी के प्रसिद्ध कवियों, कहानीकारों और उपन्यासकारो ने भाग लिया। प्रसिद्ध आलोचको ने "हिन्दी के भविष्य" पर सारपूर्ण विचार-विमर्श किया। जलपान के बाद गोष्ठी समाप्त हुई।"

कष्ट के लिए क्षमा।
धन्यवाद।
१२-६-६७

निवेदक
युगेश जैन
मन्त्री
'पराग' कार्यालय
दरीबा, दिल्ली

आकाशवाणी दिल्ली केन्द्र को पत्र

स्टेशन डायरेक्टर महोदय,
आकाशवाणी दिल्ली।

श्रीमान जी,

सविनय निवेदन है कि आकाशवाणी से जो प्रोग्राम प्रसारित किए जाते हैं, वे बड़े ही सुन्दर और मनोरंजक होते हैं। परन्तु संस्कृत में बहुत कम प्रसारित किए जाते हैं। मेरा विचार है कि आकाशवाणी से कुछ प्रोग्राम शुद्ध संस्कृत में भी प्रसारित होने चाहिएँ।

आपके कार्यक्रमों में भाग लेने की मेरी इच्छा है। आप मुझे निर्देश करें कि किस प्रकार मैं भी इनमें भाग ले सकता हूँ। मुझे विश्वास है कि आप पत्र का उत्तर अवश्य देंगे।

भवदीय—
हरिकृष्ण
गली पहाड़ वाली, धर्मपुरा
दिल्ली।

२४-६-६७

कुछ प्रश्न सहित पत्रों के उत्तर प्रश्न शैली में दिए जा रहे। विद्यार्थी-समुदाय इन उदाहरणों से लाभ उठायें—

प्रश्न १—किसी मिल के मुख्य प्रबन्धक को मिल देखने के लिए पत्र लिखिये, प्रबन्धक आपके स्कूल का पूर्व छात्र रहा हो ?

उत्तर—

कमर्शियल हायर सैकेण्ड्री स्कूल
२४, दरीयागज, दिल्ली

सेवा में,
श्री प्रबन्धक महोदय,
बिरला मिल, दिल्ली
मान्यवर,

सादर निवेदन है कि हम ११ वीं कक्षा के छात्र अग्रिम मास में आपके मिल को देखकर अनुभव प्राप्त करने की उत्कट इच्छा हृदय मे लिए हुए हैं।

इस दृष्टि से सुविधा पूर्वक तिथि और समय शीघ्र देने का कृपा करें। यदि यह समय दो बजे से पूर्व दिया जा सके इसके लिये सागह प्रार्थना है।

आपसे यह प्रार्थना करते समय एक कारण और भी स्वयं को गौरवान्वित अनुभव कर रहे हैं कि आप इस स्कूल के पूर्व छात्र हैं। हम आपकी उदारता और कृपा को इसी तरह सानन्द अनुभव कर रहे हैं जैसे कोई छोटा भाई बड़े भाई से उसे प्राप्त करे।

हमें विश्वास है इस सम्बन्ध के निर्वाह के साथ प्रवेश की आज्ञा और देखने का सौभाग्य प्रदान करेंगे।

सम्मान सहित

विश्वासपात्र
आकाशमोहन
संयोजक—११ कक्षा सी०

प्र० २—अपने छोटे भाई को पत्र लिखिये जिसमे पुस्तकालय मे अध्ययन और सांस्कृतिक कार्यक्रमों में सक्रिय अभिरुचि के लिए प्रेरित किया गया हो ?

३१८५, बाजार सीताराम
दिल्ली

प्रिय सोम,

प्रसन्न रहो,

अभी अभी तुम्हारे पूजनीय प्रधानाध्यापक की ओर से भेजी हुई प्रगति-पुस्तिका मिली। बहुत हर्ष हुआ कि तुम इस वर्ष प्रथम श्रेणी में उत्तीर्ण हुए। यह तुम्हारे परिश्रम और योग्यता का फल ही तो है। इसी हर्ष क साथ यह जानकर कुछ खेद भी हुआ कि तुम विद्यालय के किसी भी सांस्कृतिक कार्य क्रमो मे भाग नही लेते और पाठ्य-पुस्तको के अतिरिक्त पुस्तकालय से भी लाभ नही उठाते।

सोम, यह अच्छा नही होता कि व्यक्ति ज्ञानी होते हुए भी उपमहूक रहे। यही समय है कि अपने ज्ञान का वृद्धि अधिक से अधिक हो सकती है। व्यस्त हो जाने पर विस्तृत अध्ययन और ज्ञान प्राप्ति का समय ही नहीं

मिलता । जब तक तुम अतिरिक्त समय में कार्यक्रमों में भाग नहीं लोगे तब तक तुम्हारे भीतर छिपी हुई प्रतिभा भी प्रकट नहीं हो सकती । खेलकूद, मनोरंजन और अपने विचारों के अनुरूप अभिरुचि आदि [illegible] जाओगे । मनुष्य में जो स्वाभाविक विकास होता है उसकी पूर्ति पाने का यही अवसर है । अतिरिक्त समय ज्ञानार्जन में लगाओ ।

मुझे विश्वास है कि मेरे लिए दूर [illegible] अपनी ज्ञानवृद्धि के लिए आज से ही तत्पर हो जाओगे ।

शुभ कामनाओं सहित, तुम्हारा भाई

[illegible]

प्र० ३—एक पत्र किसी दैनिक पत्र के सम्पादक को लिखिये जिसमें सड़क की मरम्मत के लिए नगर निगम का ध्यान आकर्षित किया गया हो ?

५०, मिन्टो रोड,
नई दिल्ली-१

सेवा मे,
श्रीयुत सपादक महोदय,
हिन्दुस्तान टाइम्स,
कनाट सर्कस, नई दिल्ली ।

मान्यवर,

हम आपके पत्र के माध्यम से नगर निगम का ध्यान सड़क की मरम्मत की ओर आकर्षित करना चाहते है जिसकी उपेक्षा नगर निगम बहुत दिनों से करता आ रहा है। नगर निगम अपने आपसी झगड़ो में इस तरह व्यस्त है कि उन्हे जनता के कष्टो का बिलकुल ध्यान नहीं है। पिछले चार महीनो से मिन्टो रोड का बाँया हिस्सा और थोड़ा बीच बीच से इतना खराब हो गया है कि आये दिनो यातायात रुक जाता है या दुर्घटना होने की नौबत आ जाती है।

इसके अतिरिक्त विराम चिह्नो के संकेत स्थानो पर प्रकाश का भी पूर्ण प्रबन्ध नहीं हैं। रात मे सड़क पार करना दूभर हो जाता है समय की

हानि होती है और खतरा सदा रहता है। यह बड़े दुर्भाग्य का विषय है कि नगर पालिका के होते हुए भी नागरिक कष्ट पाएं। जबकि यह सड़क सब से अधिक प्रयोग में आती है। इतना होने पर भी उस ओर ध्यान नहीं दिया जाता।

ऐसी स्थिति मे आपके निष्पक्ष पत्र के द्वारा नगर निगम के उपेक्षापूर्ण व्यवहार और कार्यशिथिलता को जनता की दृष्टि मे हम लाना चाहते हैं। हमें विश्वास है कि आप इसे प्रकाशित कर जनता का सुविधा की ओर ध्यान आकर्षित करेंगे।

विश्वासपात्र
निवासी परिवार
मंत्री—अमृतलाल गौड
संपर्क की समिति
मिन्टो रोड, नई दिल्ली।

प्र० ४—एक पत्र सिनेमा-हाल के प्रबन्धक को लिखिये जिसमे ऊंचे स्तर के चलचित्रों के लिए कहा गया हो ?

८५, कटरा बढियान
फतेहपुरी, दिल्ली
१०-१०-६७

सेवामें,

श्री प्रमुख प्रबन्धक महोदय,
'न्यू अमर' थियेटर
अजमेरीगेट, दिल्ली
माननीय,

यह कहते हुए मुझे अत्यन्त खेद है कि आपके हॉल में जो चलचित्र

दिखाये जाते हैं उनका स्तर बहुत नीचा होता है। इनमें विशाल आकस्मिक घटनाओं प्रेम कथाओं और नग्नभावभंगिमाओं के अतिरिक्त कुछ नहीं होता। मैं समझता हूं कि यह सब आप आर्थिक दृष्टिकोण से करते हैं आप के पास समाज-सुधार का एक बड़ा साधन है इस साधन से व्यक्तिगत स्वार्थ को पूरा करना चारित्रिक अन्याय है।

मेरा विचार है कि यदि आप शिक्षाप्रद ऊंचे स्तर के चित्रों का प्रदर्शन करो तो आपकी आय भी अधिक होगी और आप समाज कल्याण की दृष्टि से ऊंची कोटि का मनोरंजन भी कर सकेंगे। इस समय भारत में ऊंचे स्तर के चित्रों का निर्माण भी हो रहा है। इसलिए आप ऐसे ही सुन्दर आदर्श उच्च मनोरंजन चलचित्रों का प्रदर्शन करें जिससे नीचे विचार वाले भी प्रभावित हों और उनमें सभ्यता और संस्कृति के प्रति प्रेम जागे। देशभक्ति, ईमानदारी वफादारी और जिम्मेदारी भी समझें।

मेरा विश्वास है कि आप इस साधन से व्यक्तिगत सुख के साथ-साथ देश की आत्मा को भी सुख पहुंचाएंगे।

सफलता की कामना के साथ।

भवदीय,
मनोहरलाल
मंत्री—चरित्र निर्माण सभा

प्र०—एक पत्र अपने मित्र को लिखिये जिसमे उसके अनुकूल कार्य करने के सुझाव दिए गए हो—

५६, बलबीर नगर
शाहदरा, दिल्ली,
३ जनवरी, १९६८

प्रिय मित्र श्री निवास,

आज ही तुम्हारा पत्र मिला। वास्तव मे मैं स्वय को अत्यन्त गौरवान्वित अनुभव कर रहा हूँ कि तुमने जीवन की एक अत्यन्त महत्त्वपूर्ण समस्या का समाधान खोजने के लिए मुझे लिखा। यह तुम्हारा कहना कि "अनेक व्यवसायो और उनकी बाहरी और भीतरी दुर्बलताएँ चकरा गई हैं" सर्वथा सत्य एव स्वाभाविक है। मनुष्य को अपने स्वभाव और अपनी प्रकृति के अनुकूल यदि व्यवसाय प्राप्त हो जाय तो सौभाग्य की बात है यद्यपि मैं स्वय को उस योग्य अनुभव नही करता फिर भी मित्र के नाते कुछ सुझाव देकर अपना कर्तव्य पालन करूगा।

जिस काम मे तुम्हारी रुचि नही है वह काम तुम्हारे लिए लाभदायक नहीं रह सकता। जिस कार्य मे व्यय अधिक हो—वह भी तुम नही कर सकते इसलिए व्यापार आदि भी नही कर सकते। मैं समझता हूं कि तुम एक वकील भी नहीं हो सकते। मैं जानता हू क्लर्कों के जीवन के प्रति तुम्हारा दृष्टिकोण ठीक नही है। तुम्हारी प्रतिभा तुम्हे इन्जीनियर भी नही बनने देगी। इन सब स्थितियो को ध्यान मे रखते हुए मुझे यह विश्वास है कि यदि तुम्हे कहीं अध्यापन काय मिल जाये तो वह तुम्हारे लिए हितकर और तुम्हारे विचारो के अनुकूल रहेगा। इस कार्य के द्वारा देश की आत्मिक सेवा भी होगी। तुम्हारे जैसे शिक्षित, सभ्य, नागरिक यदि शिक्षक हो तो समाज का कल्याण भी निश्चय होगा। मुझे आशा है कि तुम मेरे सुझाव से सहमत होगे।

स्नेह और सम्मान सहित

तुम्हारा स्नेह एव विश्वसपात्र
पुरुषोत्तम

प्र०—एक पत्र अपने मित्र को लिखिये जिसमें इच्छानुसार व्यवसाय मिल जाने पर बधाई दी गई हो ?

एफ-२२६ मोती बाग,
नई दिल्ली ।

प्रिय मित्र सत्यदत्त,

तुम्हारा पत्र मिला । मुझे हार्दिक प्रसन्नता है कि तुम्हें तुम्हारे विचारों और शिक्षा के अनुकूल एक विद्यालय में कार्य मिल गया है । इस उन्नति और प्रगति के अवसर पर मेरी ओर से बधाई स्वीकार करो । आज की परिस्थितियों में एक व्यक्ति अपना शीघ्र मार्ग बना लें—यह सफलता का चिन्ह है । विद्यालय और विश्वविद्यालय से निकलकर व्यक्ति अपने आपको आत्मनिर्भर बनाले यह भी भाग्य की सफलता है ।

वैसे तुम अपने छात्र जीवन में भी सदा योग्य सिद्ध रहे तथा प्रथम श्रेणी में उत्तीर्ण होते रहे मुझे आशा है कि तुम इसी प्रकार उन्नत होगे, सीमित क्षेत्र में न बंधकर विस्तृत जीवन से अधिक से अधिक अनुभव और लाभ उठाओगे ।

पिताजी और माताजी भी तुम्हें आशीर्वाद और बधाई दे रहे हैं ।

शेष कुशल

तुम्हारा स्नेही
लक्ष्मीनारायण

प्र०—किसी स्कूल के प्रबन्धक के नाम व्यायाम शिक्षा अधिकारी के पद के लिए एक प्रार्थना पत्र लिखिये।

१०-द, कमला नगर

दिल्ली।

१३ जुलाई १९५८

श्री प्रबंधक महोदय,

कमर्शियल हायर सैकेन्डरी स्कूल,

२४ दरियागंज, दिल्ली।

मान्यवर,

हिन्दुस्तान टाइम्स मे प्रकाशित विज्ञापन के अनुसार मैं अपनी सेवाएं अर्पित करना चाहता हूं।

जहां तक मेरी योग्यताओं का प्रश्न है—मैंने बी ए. (दिल्ली विश्वविद्यालय मे प्रथम श्रेणी मे उत्तीर्ण किया है। लखनऊ विश्वविद्यालय में मैंने व्यायाम शिक्षा प्रशिक्षण प्राप्त किया है। मेरी आधुनिक खेलों में भी अभिरुचि है और मैंने स्कूल और विद्यालय की ओर से कई बार विजय प्राप्त की है। अपने छात्र जीवन में मैं फुटबाल और क्रिकेट का कैप्टन भी रहा हूँ। मेरे पास व्यायाम संबन्धी १५ प्रमाणपत्र तथा २५ पुरस्कार हैं जो भिन्न-भिन्न स्थानो से प्राप्त हुए है। ये पुरस्कार ऊंची कूद, भार उत्तोलन दौड़ और लंबी कूद आदि में मुझे प्राप्त हुए हैं। साथ ही बालचर संस्था (Scout) की ओर से प्रमाणपत्र प्राप्त हो चुका है।

स्थानीय स्वास्थ्य विभाग मे भी व्यायाम शिक्षा अधिकारी रहा हूँ।

इस समय तैराकी शिक्षक के रूप में भाग ले रहा हूँ । मैं २५ वर्षीय स्वस्थ नवयुवक हूँ । मुझे विश्वास है कि यदि मैं चुना गया तो निश्चय ही अपनी सेवाओं से संस्था को उन्नत बनाने का पूर्ण प्रयत्न करूंगा ।

प्रमाणपत्रों की प्रतिलिपियाँ साथ हैं ।

आपका विश्वासपात्र
ब्रजमोहन ।

प्रश्न—अपने मित्र को एक पत्र लिखिए जिसमें वर्णन करो कि वह अधिक से अधिक देश संकट में सहयोग दे ।

११६३, रोहतासनगर
शाहदरा, दिल्ली-३२

प्रिय राजेश,

चिरंजीव रहो ।

मित्र ! आज समय आ गया है कि हम अपनी स्वतन्त्रता के लिए तन, मन, धन निछावर कर दें । हमारे मित्र देश चीन ने हमारी धरती को हड़प लिया है । आज हम संकट में हैं । आज देश को धन की अधिक आवश्यकता है उसे आप जैसे बलवीर और होनहार ही कर सकते हैं । तुम इस यज्ञ में अधिक से अधिक आहूति देने का प्रयास करो ।

माताजी और पिताजी को प्रणाम ।

तुम्हारा अभिन्न मित्र
राकेश

प्रचलित मुहावरे

अर्थ-सहित

श्री गणेश करना—प्रारम्भ करना।

श्री गणेश होना—कोई कार्य प्रारम्भ होना।

अ

अकेला चना भाड़ नहीं फोड़ता—अकेला मनुष्य कठिन कार्य नहीं कर सकता।

अन्जर पन्जर ढीला होना—अंग-अंग शिथिल होना।

अंडा सेना—खाली बैठे रहना।

अन्त भला तो सब भला—यदि परिणाम अच्छा हो तो सब अच्छा है।

अंधा बांटे रेवड़ी फिर-फिर अपने ही को दे—अधिकार प्राप्त मनुष्य बार बार अपने मित्र और सम्बन्धियों की सहायता करता है।

अन्धी पीसे कुत्ता खाये—किसी की पैदा हुई सम्पत्ति पर दूसरे का मौज करना।

अन्धे के आगे रोना अपना दीदा खोना—निर्दय व्यक्ति के सामने अपना दुःख सुनाना व्यर्थ है।

अन्धे के हाथ बटेर लगना—अयोग्य व्यक्ति को अच्छी वस्तु मिल जाना।

अन्धे को अन्धेरे में बहुत दूर की सूझना—मूर्ख मनुष्य का बुद्धिमानी की बात करना।

अन्धेरे घर का उजाला—सुलक्षण।

अक्ल के लिए लट्ठ लिए फिरना—मूर्खता की बातें करना।

अक्ल चरने जाना—बुद्धि का अभाव होना।

अक्ल पर पत्थर पड़ जाना—बुद्धि का भ्रष्ट हो जाना।

अटकल पच्चू—मन गढ़न्त।

अधजल गगरी छलकत जाय—ओछा मनुष्य इतराकर चलता है।

बिन मागे मोती मिले मागे मिले न भीख—भाग्यवान व्यक्ति को सब कुछ मिल जाता है, लेकिन अभागे को नही।

अपना उल्लू सीधा करना—बेवकूफ बनाकर काम निकालना।

अपना-सा मुँह लेकर रह जाना—लज्जित होना।

अपने पाँव मे आप कुल्हाडी मारना—जान बूझकर विपत्ति मे पड़ना।

अपने मियाँ मिट्ठू बनना—अपनी प्रशसा आप करना।

अपनी करनी पार उतरनी—अपना कर्म-फल अपने ही को भोगना पड़ता है।

अब पछताए होत क्या जब चिडियाँ चुग गयी खेत—समय निकल जाने पर पश्चात्ताप करना व्यर्थ है।

अड्डा जमाना—अधिकार बतलाना।

अरहर की टट्टी और गुजराती ताला—छोटी वस्तु की रक्षा के लिए अधिक व्यय करना।

अल्पाहारी सदा सुखी—कम खाने वाला कभी अस्वस्थ नहीं होता।

अशर्फिया लुटें और कोयलो पर मुहर—एक ओर अधिक खर्च करने पड़ें दूसरी ओर पैसे-पैसे का हिसाब रखना।

आ

आई मौज फकीर की दिया झोपडा फूँक—विरक्त मनुष्य को किसी चीज की ममता नहीं होती।

आकाश पाताल का अन्तर—बहुत फर्क (भेद, अन्तर)।

आकाश पाताल एक कर डालना—बहुत प्रयास करना (स्पष्ट)।

आँख खुलना—सचेत होना, होशियार होना।

आख दिखाना—कोप प्रकट करना।

आख बिछाना—प्रेम से स्वागत करना। बाट जोहना।

आख लगना—नींद आना, प्रेम करना, टकटकी बधना।

आँख बची और माल दोस्तो का—जब अपनी असावधानी से किसी की चीज चोरी चली जाय।

आँख के अन्धे नाम नयन सुख—गुण के विरुद्ध नाम।

आँख के अन्धे गाँठ के पूरे—मूर्ख होने पर भी धनी ।

आँखों में चर्बी छाना—घमण्ड में चूर होना ।

आँखों में धूल झोंकना—धोखा देना, भ्रम में डालना ।

आँखों में समाना—ध्यान पर चढ़ा रहना ।

आग बबूला हो उठना—अधिक क्रोध-युक्त होना ।

आगे नाथ न पीछे पगहा, सबसे भला कुम्हार का गधा—जिसके कोई न हो ।

आग में पानी डालना—झगड़ा मिटाना ।

आगा पीछा सोचना—अन्तिम फल विचारना, समझ बूझकर काम करना ।

आटे दाल का भाव मालूम होना—संसार की कठिनाइयों का अनुभव होना ।

आठ कनौजिया नौ चूल्हे—अपनी खिचड़ी अलग पकाना, फूट होना ।

आड़े हाथों लेना—झिड़कना ।

आप काज महाकाज—अपना काम अपने से ही ठीक होता है ।

आप मरे जग परलौ—स्वयं के न होने से सारी हानि ।

आपे से बाहर होना—वश में न रहना ।

आबरू में बट्टा लगना—इज्जत में धब्बा लगना ।

आम के आम गुठलियों के दाम—किसी वस्तु से दो प्रकार का लाभ ।

आम खाने से काम पेड़ गिनने से क्या काम—काम की बातें न कर निरर्थक बातें करना ।

आसन डोलना—चित्त चलायमान होना ।

आसमान से तारे तोड़ना—कोई कठिन या असम्भव कार्य करना ।

आसमान पर थूकना—बेवकूफी का कार्य करना ।

आसमान पर सर उठाना—तंग करना ।

इ

इधर खाई तो उधर जाये तो खदक—सब तरफ मुसीबत ।

इस कान सुनना उस कान उड़ा देना—ध्यान देकर न सुनना ।

ई

ईंट से ईंट बजाना—युद्ध होना, विध्वंस करना ।

ईमान बेचना—विश्वास उठाना, बेईमान होना।
ईश्वर की माया कही धूप कही छाया—भाग्य विचित्र है।

उ

उंगली उठाना—दोषी बनाना।
उंगली पर नाचना—अपने वश मे रखना, हैरान करना।
उछल कूद करना— प्रसन्न होना, उत्साह और आवेग प्रकट करना।
उड़ती चिड़िया पहचानना—मन की बात ताड़ जाना।
उतर गई लोई क्या करेगा कोई—प्रतिष्ठा भग होने पर भय किसका।
उत्तम खेती मध्यम बान, नीच नौकरी भीख निदान—खेती करना सबसे अच्छा काम है, व्यापार करना मध्यम है, नौकरी बुरी है और भीख मांगना सबसे हेय है।
उल्टा चोर कोतवाल को डांटे—दोषी निर्दोष पर दोष मढे।
उल्टी गगा बहाना—विरुद्ध रीति चलाना।
उल्टे बास बरेली को—विपरीत दशा से कोई काम न करना।
उल्टी सीधी सुनना या सुनाना—भला बुरा कहना या सुनना।
उल्लू बनाना—धोखा देना, मूर्ख बनाना।

ऊ

ऊंट किस करवट बैठता है—देखें क्या निर्णय होता है।
ऊंट के मुंह मे जीरा—बड़े पेटू को थोड़ी-सी चीज।
ऊधो का लेना न माधो का देना—जो हर प्रकार निश्चित और स्वतन्त्र हो।

ए

एक अनार सौ बीमारी—जब एक स्थान खाली हो और सैकड़ों उम्मीदवार खड़े हों।
एक तो चोरी दूसरे सीना जोरी—बुरा काम करके आंख दिखाना।
एक तो करेला कड़वा दूसरे नीम चढ़ा—उद्दण्ड को सहारा मिलना।
एक पथ दो काज—एक बार परिश्रम से दो कामो का पूरा करना।

ओ

ओखली में सिर दिया तो मूसलों का क्या डर—किसी कठिन काम में हाथ डालना।

ओखली में सिर देना—जान बूझकर खतरे में पड़ना।

ओछे की प्रीति बालू की भीति—दुष्ट मनुष्य की मित्रता बहुत दिन तक नहीं चल सकती।

औंधे मुँह गिरना—बुरी तरह धोखा खाना।

क

कभी नाव गाड़ी पर कभी गाड़ी नाव पर—समयानुसार एक को दूसरे की सहायता लेनी पड़ती है।

करेगा सो भरेगा—अपने किए हुए का फल स्वयं को भुगतना।

कंधा देना—सहायता देना।

कंगाली में आटा गीला—जब आपदा पर आपदा आती है।

कच्चा चिट्ठा खोलना या सुनाना—गुप्त भेद खोलना।

कन्नी काटना—नजर बचाए फिरना।

कफन सिर से बांधना—मरने पर तैयार होना।

कमर सीधी करना—विश्राम करना।

कलेजा थामना—दुःख सहने के लिए जी कड़ा करना।

कहाँ राजा भोज कहाँ गंगू तेली—दो असमान व्यक्तियों की तुलना।

कहीं की ईंट कहीं का रोड़ा भानमती ने कुनबा जोड़ा—जब कोई इधर-उधर अनावश्यक वस्तुओं को जोड़कर निकम्मी वस्तु तैयार कर देता है।

काँटों में उलझना—आपत्ति में फँसना।

काठ की हाँडी—धोखे की चीज।

कान खाना—जोर-जोर से बातें करना।

कान पकड़ना—अपनी भूल स्वीकार करना।

कान पर जूँ रेंगना—कुछ भी परवाह न करना।

कान भरना—किसी के मन में किसी के विरुद्ध कोई बात बैठा देना।

काजल की कोठरी में कैसो हू सयानो जाय, एक लीक काजल की लागि है, पै लागि है—बुरे मनुष्य के पास बैठने से कुछ न कुछ बुराई अवश्य होगी।
काठ की हाँडी बार-बार नही चढ़ती—कपट का व्यापार एक ही बार होता है।
काला अक्षर भैंस बराबर—बिल्कुल अनपढ़।
किताब का कीड़ा—वह व्यक्ति जो दिन रात किताब पढने मे लगा रहे।
कुत्ते की मौत मरना—कष्ट सहकर मरना।
कोल्हू का बैल—अत्यन्त परिश्रमी।
कौडी-कौडी जोड़ना—बहुत थोडा-थोडा करके धन एकत्र करना।

ख

खग जाने खग की भाषा—जो जिस सगति में रहता है वह उसी का हाल जानता है।
खटाई में डालना—व्यर्थ किसी काम को लेकर लटकाए रहना।
खरबूजे को देखकर खरबूजा रग बदलता है—देखा-देखी साथियो के रंग-ढंग की तरह रग-ढग हो जाना।
खाक मे मिलना व मिलाना—बरबाद होना व करना।
खिसियानी बिल्ली खम्भा नोचे—जब कोई लज्जित होकर क्रोध करता है।
खून उबलना—क्रोध से शरीर लाल रहना।
खोदा पहाड़ निकली चुहिया—अधिक परिश्रम के पश्चात साधारण लाभ होगा।

ग

गगा गए गगादास जमुना गए जमुनादास—मुँह देखी बात कहना।
गागर मे सागर भरना—विशाल भाव को थोड़े से शब्दो मे प्रकट करना।
गरदन पर छुरी फेरना—हानि पहुँचना।
गले पडना—सिर पड़ना, न चाहने पर भी मिलना।
गहरी छानना—गाढी मित्रता होना।
गीदड़ भभकी—खाली धमकी।
गुड़ गोबर कर देना—बात बिगाड देना।

गुदड़ी का लाल—कोई ऐसा धनी या गुणी जिसके रूप रंग वेश आदि से उस का धन या गुण न प्रकट होता हो।

घ

घड़ों पानी पड़ना—बहुत लज्जित होना।

घर की मुर्गी दाल बराबर—घर की वस्तु की अधिक प्रतिष्ठा नहीं होती।

घर खीर तो बाहर खीर—सम्पत्ति वाले मनुष्य की हर जगह प्रतिष्ठा होती है।

घी के चिराग जलाना—खुशी मनाना, ठाट बाट के साथ रहना।

घाव पर नमक छिड़कना—शोक पर शोक उत्पन्न करना।

घुन लगना—भीतर ही भीतर किसी वस्तु का क्षीण होना।

घोड़ा बेचकर सोना—खूब निश्चिन्त होकर सोना।

च

चमड़ी जाए पर दमड़ी न जाय—अत्यन्त कंजूस।

चलती का नाम गाड़ी है—दुनिया में धन ही सब कुछ है।

चार दिन की चांदनी फिर अंधेरी रात—संसार में धन, यौवन और ऐश्वर्य थोड़े दिन के लिए होते हैं।

चिराग तले अंधेरा—जब कोई दूसरों को उपदेश दे परन्तु स्वयं तदनुसार कार्य न करे।

चलता पुरजा—चालाक, व्यवहार कुशल।

चाँदी के जूते मारना—रुपये देकर वश में करना।

चिकना घड़ा होना—बेशर्म हो जाना।

चुल्लू भर पानी में डूब मरना—लज्जा के मारे मर जाना।

चोर की दाढ़ी में तिनका—वास्तविक अपराधी बिना पूछे ही बोल उठता है।

चोर के पैर नहीं होते—अपराधी मनुष्य परीक्षा की कसौटी पर नहीं ठहरता।

चोर-चोर मौसेरे भाई—एक पेशे के मनुष्य आपस में बहुत शीघ्र मिल जाते हैं।

चोली दामन का साथ—घनिष्ठ मित्रता।

छ

छक्के छुडाना—अधीर करना, घबरा देना।

छटी का दूध याद आना—भारी सङ्कट पड़ना।

छाती पर मूंग दलना—अत्यन्त कष्ट पहुँचाना।

छाती पर साँप लोटना—दुःख मे कलेजा दहल जाना।

छोटे मुँह बडी बात—योग्यता से बढकर बात करना।

ज

जंगल मे मंगल होना—सुनसान स्थान में मंगल होना।

जब तक साँसा तब तक आशा—मृत्यु के समय तक आशा बनी रहती है।

जबाँ शीरी मुल्क गीरी—मीठी बोली से आदमी सबको अपने वश में कर लेता है।

जल में रहकर मगर से वैर—जिसके आश्रय मे रहे उसी से शत्रुता।

जले पर नमक छिड़कना—अधिक गुस्सा दिलाना। इधर-उधर की भिड़ाना।

जमाना देखना—बहुत कुछ अनुभव प्राप्त करना।

जमीन का पैरों तले से निकल जाना—हक्का बक्का हो जाना, होश-हवास जाते रहना।

जलती आग में कूदना—जान बूझकर भारी विपत्ति में फसना।

जान से हाथ धोना या धो बैठना—प्राण गवाना।

जाके पाव न फटी बिवाई सो क्या जाने पीर पराई—जिसने कभी दुःख न उठाए, उसे दूसरे के दुःख का क्या पता चल सकता है।

जान बची लाखो पाये—आलसी और कायर मनुष्य अपने कर्तव्य से अपनी जान अधिक प्यारी समझते हैं।

जितनी चादर देखो उतना ही पांव पसारो—शक्ति से बाहर काम न करो।

जिसकी लाठी उसी की भैंस—शक्तिशाली मनुष्य की ही विजय होती है।

जूतियाँ चटकाते हुए फिरना—दीनता वश इधर-उधर फिरना।

जैसा देश वैसा भेष, जैसी बहे बयार पीठ तब तैसी दीजै—जैसा मौका हो वैसा ही करना।

जो गरजते हैं वे बरसते नहीं—डींग मारने वालों से काम नहीं बनता।

झ

झूठ के पाँव नहीं होते—झूठा आदमी विचार में नहीं ठहरता।

ट

टट्टी की आड़ या ओट में शिकार खेलना—किसी के विरुद्ध गुप्त रूप से कोई कार्यवाही करना।

टाँग अड़ाना—अनावश्यक रूप से किसी काम में दखल देना।

टाँग तले से निकलना—हार मानना।

टेढ़ी खीर—कठिन कार्य।

ड

डंका बजाना—किसी का शासन या अधिकार होना।

डींग मारना व हाँकना—अपनी झूठी बड़ाई करना।

डूब मरना—लज्जा के मारे मर जाना।

डूबते को तिनके का सहारा—दुःखी पुरुष को थोड़ी मदद बहुत होती है।

डेढ़ चावल की खिचड़ी पकाना—राय का अलग होना।

ढ

ढोल पीटना व बाजा बजाना—घोषणा करना।

त

तलवे चाटना—खुशामद करना।

ताँता बाँधना—लगातार काम होते रहना, क्रम न टूटना।

ताजिया ठण्डा होना—किसी भारी आदमी का मर जाना।

तिनके का सहारा—थोड़ा-सा सहारा।

तिल धरने की जगह न होना—जरा सी भी जगह खाली न रहना।
तिनके की ओट पहाड़—थोड़े सहारे से जब कोई बड़ा काम सिद्ध होता है।
तीर नही तो तुक्का ही सही—जब किसी का फल अनिश्चित हो।
तीन तेरह होना—तितर-बितर होना।
तेल तिलो से ही निकलता है—उदार आदमी ही कुछ सहायता कर सकता है।

द

दम निकलना—प्राण छूटना, बहुत दु ख मालूम होना।
दबी बिल्ली चूहो से कान कटाती है—शक्तिशाली व्यक्ति भी अपराध करने पर कमजोरो की बातें सुनता है।
दांतो मे उंगली दबाना—आश्चर्य होना।
दांत खट्टे करना—परास्त करना, खूब हैरान करना।
दांतो मे तिनका लेना—शरण लेना।
दाग लगना—कलक लगाना।
दाना पानी उठना—जीविका का न रहना।
दाने दाने को तरसना—अन्न का कष्ट सहना।
दाल मे कुछ काला होना—कुछ खटके या सदेह की बात होना।
दिन दूनी रात चौगुनी होना—खूब उन्नति पर होना।
दूध की मक्खी—तुच्छ और तिरस्कृत पदार्थ।
दुविधा मे दोउ गए माया मिली न राम—एक समय मे दो काम करने से दोनों में हानि।
दूध का जला छाछ फूंक कर पीता है—एक बार का धोखा खाया हुआ मनुष्य सावधानी से काम करता है।
दूर के ढोल सुहावने—बिना अनुभव के दूर की वस्तुएं अच्छी लगती हैं।
देखे ऊंट किस करवट बैठता है—क्या निर्णय होगा।

ध

धोबी का कुत्ता न घर का न घाट का—जिस व्यक्ति का कोई स्थायी ठिकाना न हो। या तो मनुष्य दोनों तरफ का काम करे। लेकिन न इधर का रहे न उधर का।

न

नंगा बड़े परमेश्वर से—नंगे मनुष्य से डरते रहना चाहिए।

नक्कारखाने में तूती की आवाज़—बड़े-बड़े स्थानों में छोटे आदमियों की बातों को नहीं सुनते।

नदी नाव संयोग—संयोग से मिलने पर।

न नौ मन तेल होगा न राधा नाचेगी—किसी बहाने से काम न करना।

नया नौ दिन पुराना सौ दिन—नई चीजों का विश्वास नहीं।

न रहेगा बाँस न बजेगी बाँसुरी—विवाद और झगड़े की जड़ सहित नष्ट कर लेना।

नमक मिर्च लगाना—किसी बात को बढ़ाकर कहना।

नाक कटना—बदनाम होना, प्रतिष्ठा बिगड़ना।

नाकों चने चबाना—खूब तंग करना।

नाच नचाना—हैरान करना।

नाम धरना—बदनामी होना।

नाम बड़ा और दर्शन छोटे—ख्याति अधिक हो, किन्तु तत्त्व कुछ न हो।

निर्बल के बल राम—जिसकी संसार में सहायता देने वाला कोई न हो वह भगवान पर ही भरोसा करता है।

नीम हकीम खतरा-ए-जान—अनुभव-हीन मनुष्य से काम के बिगड़ने का भय बना रहता है।

नौ दो ग्यारह होना—देखते-देखते भाग जाना।

नौ नगद न तेरह उधार—कम कीमत पर, किन्तु नगद दामों पर चीज।

प

पाचो उँगलियां घी मे होना—सब तरह का लाभ होना।

पाचो सवारो मे नाम लिखना—जब कोई छोटा आदमी अपनी तुलना बड़े मनुष्यो से करता है।

पानी उतर जाना—नदी का बहाव निकल जाना (२) मोती की चमक जाती रहना (३) आइने का पारा खराब हो जाना (४) आदमी का वेशर्म और वेलिहाजा हो जाना (५) इज्जत जाती रहना।

पोल खोलना—दोष या बुराई को प्रकट करना।

पौ बारह होना वा पड़ना—जीत होना, हमेशा लाभ होना।

फ

फूक-फूंक कर कदम या पाँव रखना—धीरे-धीरे काम करना, सोच विचार कर काम करना।

फूट-फूट कर रोना—बहुत रोना।

ब

बट्टा लगना वा लगाना—कमी पूरी होना वा करना एव लगना या लगाना।

बड बोल का सिर नीचा—अहकारी मनुष्य नीचा देखता है।

बद अच्छा बदनाम बुरा—बुरा प्रमाणित होने से झूठ कलक का लगना कहीं अधिक बुरा होता है।

बारह वष दिल्ली मे रहे भाड झोका—अच्छी जगह से भी कुछ नहीं सीखा।

बावन तोले पाव रत्ती—जब कोई चीज बिल्कुल ठीक हो।

बाग बाग होना—फूला न समाना।

बाल की खाल निकालना—बारीक बातें निकालना, गहरी दृष्टि से देखना।

बाल-बाल बचना—साफ बच जाना—कुछ भी दुख व चोट न पहुँचना।

बिल्ली के भाग से छीका टूटा—जब सयोग से कोई काम अच्छा हो जाय।

बे सिर पैर की बातें करना—अट-सट बोलना।

भ

भागते भूत की लंगोटी ही सही—जिस स्थान से कुछ भी मिलने की आशा न हो वहाँ से जो कुछ भी मिल जाय वही बहुत अच्छा है।

भैंस के आगे बीन बजावे, भैंस बैठी पगुराय—मूर्ख के आगे अच्छी-अच्छी बातों का फल व्यर्थ होता है।

म

मन चंगा तो कठौती में गंगा—जिसका हृदय पवित्र है, उसके लिए घर ही गंगा है।

मरता क्या न करता—जो मरने के लिए तैयार है, उसे कोई काम कठिन नहीं।

मन मार कर बैठ रहना—सतोष करके बैठ रहना।

मार के आगे भूत भागे—मार से सभी डरते हैं।

मियां की जूती मियां के सिर—किसी की वस्तु से जब उसी को हानि पहुँचे।

मियां बीबी की राजी तो क्या करेगा काजी—जब दोनों आपस में मिल जायें तब बीच में दखल देने की आवश्यकता नहीं रहती।

मुल्ला की दौड़ मस्जिद तक—जिसमें काम करने की शक्ति और योग्यता सीमित हो।

मुँह की खाना—हारना, सजा पाना।

मुँह पर थूक देना—अत्यन्त बेइज्जत और लज्जित करना।

य

यथा नाम तथा गुण—नाम के अनुसार ही गुण भी निकलना।

र

रंग जमना—रंग चढ़ना, दिल में जचना, मजा आना।

रंगा स्यार होना—ढोंगी, धोखे की शक्ल बनाना।

रफ्फू चक्कर होना—भाग जाना।

रोएं खड़े होना—डर या दुख से शरीर के बाल खड़े हो जाना।

ल

लकीर पीटना—अवसर निकल जाने पर उद्योग करना।

लल्लो चप्पो करना—खुशामद करना।

लाल पीला होना—क्रुद्ध होना।
लोहे के चने चबाना—अत्यन्त कठिन काम करना।

व

वक्त पर काम आना—जरूरत पर काम निकलना।
विष उगलना—दुर्वचन, डाह मिटाना, दुश्मनी निकालना।
शिकार के वक्त कुतिया हगासी—जब कोई काम करने से जी चुराता है।

स

सन्नाटे में आ जाना—हक्का बक्का हो जाना।
सब्ज बाग दिखाना—धोखा देना, बहकाना।
समरथ को नहिं दोष गुसाईं—बलवान को दोष करने पर भी दाग नहीं लगता।
साप मरे न लाठी टूटे—काम सिद्ध हो जावे और किसी को हानि भी न उठानी पड़े।
सिक्का बैठाना—अधिक जमाना।
सिर आंखो पर बैठाना व रखना—बड़ी इज्जत और आवभगत से बैठाना।
सिर मुडाते ही ओले पड़े—जब किसी काम से प्रारम्भ में ही विघ्न हो।
सिर धुनना—उदास होना, सिर पीटना।
सिर पर सवार होना—साथ न छोड़ना।
सीधी ऊंगली से घी न निकलना—बिल्कुल सीधेपन से काम नहीं चलता।
सोने में सुगंध—जब अच्छी वस्तु में एक और विशेषता आ जाती है।

ह

हक्का बक्का रह जाना—आश्चर्य में डूब जाना।
हथियार डाल देना—अधीन हो जाना।
हथेली पर सरसो नहीं जमती—बात करते ही काम नहीं होता।
हाथ कंगन को आरसी क्या—प्रत्यक्ष के लिए प्रमाण की क्या आवश्यकता।

व्यजन ३३ हैं।

व्यजन—

कवर्ग—	क्	ख्	ग्	घ्	ङ्
चवर्ग—	च्	छ्	ज्	झ्	ञ्
टवर्ग—	ट्	ठ्	ड्	ढ	ण्
तवर्ग—	त्	थ्	द्	ध्	न्
पवर्ग—	प्	फ्	ब्	भ्	म्

ये वर्ण स्पर्श कहलाते हैं।

य् र् ल् व्। ये अन्त्य स्थ कहलाते हैं।

श् ष् स् ह। ये ऊष्म कहलाते हैं।

क्ष त्र ज्ञ। ये वर्ण सयुक्ताक्षर कहलाते हैं।

शब्द—अक्षरों के समूह को शब्द कहते हैं। जैसे:— यह चतुर, पुस्तक, मोहनी आदि।

शब्द के दो भेद होते हैं — १—सार्थक २—निरर्थक।

नोट—व्याकरण में सार्थक में शब्दों का ही विचार किया जाता है।

वर्णो को मुख से बोला जाता है। अत. इन वर्णों के उच्चारण स्थान इस प्रकार हैं।

वर्ण	स्थान
अ कवर्ग ह	कठ
इ चवर्ग य् श्	तालु
ऋ टवर्ग र् ष्	मूर्धा
लृ तवर्ग ल् स्	दन्त्य
उ पवर्ग	ओष्ठ
ए ऐ	कठतालु
ओ औ	कठोष्ठ
व	दन्तोष्ठय
क ख ग ज	जिह्वामूलीय
अनुनासिक	ञ म ङ ण न

व्यंजन ३३ हैं।

व्यंजन—

कवर्ग—क् ख् ग् घ् ङ्

चवर्ग—च् छ् ज् झ् ञ्

टवर्ग—ट् ठ् ड् ढ ण्

तवर्ग—त् थ् द् ध् न्

पवर्ग—प् फ् ब् भ् म्

ये वर्ण स्पर्श कहलाते हैं।

य् र् ल् व्। ये अन्य स्थ कहलाते हैं।

श् ष् स् ह। ये ऊष्म कहलाते है।

क्ष त्र ज्ञ। ये वर्ण संयुक्ताक्षर कहलाते हैं।

शब्द—अक्षरों के समूह को शब्द कहते हैं। जैसे:— यह चतुर, पुस्तक, मोहनी आदि।

शब्द के दो भेद होते हैं — १—सार्थक २—निरर्थक।

नोट—व्याकरण में सार्थक मे शब्दों का ही विचार किया जाता है।

वर्णों को मुख से बोला जाता है। अत इन वर्णों के उच्चारण स्थान इस प्रकार हैं।

वर्ण	स्थान
अ कवर्ग ह	कंठ
इ चवर्ग य् श्	तालु
ऋ टवर्ग र् ष्	मूर्धा
लृ तवर्ग ल् स्	दन्त्य
उ पवर्ग	ओष्ठ
ए ऐ	कंठतालु
ओ औ	कंठोष्ठ
व	दन्तोष्ठय
क ख ग ज	जिह्वामूलीय
अनुनासिक	ञ म ङ ण न

लाल पीला होना—क्रुद्ध होना।
लोहे के चने चबाना—अत्यन्त कठिन काम करना।

व

वक्त पर काम आना—जरूरत पर काम निकलना।
विष उगलना—दुर्वचन, डाह मिटाना, दुश्मनी निकालना।
शिकार के वक्त कुतिया हगासी—जब कोई काम करने से जी चुराता है।

स

सन्नाटे में आ जाना—हक्का बक्का हो जाना।
सब्ज बाग दिखाना—धोखा देना, बहकाना।
समरथ को नहिं दोष गुसाईं—बलवान को दोष करने पर भी दाग नहीं लगता।
साप मरे न लाठी टूटे—काम सिद्ध हो जावे और किसी को हानि भी न उठानी पड़े।
सिक्का बैठाना—अधिक जमाना।
सिर आंखो पर बैठाना व रखना—बड़ी इज्जत और आवभगत से बैठाना।
सिर मुड़ाते ही ओले पड़े—जब किसी काम से प्रारम्भ में ही विघ्न हो।
सिर धुनना—उदास होना, सिर पीटना।
सिर पर सवार होना—साथ न छोड़ना।
सीधी ऊंगली से घी न निकलना—बिल्कुल सीधेपन से काम नहीं चलता।
सोने मे सुगंध—जब अच्छी वस्तु में एक और विशेषता आ जाती है।

ह

हक्का बक्का रह जाना—आश्चर्य में डूब जाना।
हथियार डाल देना—आधीन हो जाना।
हथेली पर सरसो नहीं जमती—बात करते ही काम नहीं होता।
हाथ कगन को आरसी क्या—प्रत्यक्ष के लिए प्रमाण की क्या आवश्यकता।

व्याकरण-विभाग

व्याकरण—वह विद्या है जिससे किसी भाषा का शुद्ध लिखना, और पढ़ना बोलना आता है।

भाषा—वह साधन है जिसके द्वारा हम अपने विचार दूसरों पर लिखकर अथवा बोलकर प्रगट करते हैं और दूसरों के विचार स्वयं समझते हैं। जैसे—हिन्दी भाषा, अंग्रेजी भाषा आदि।

लिपि—किसी भाषा को लिखने का ढंग उस भाषा की लिपि कहलाता है। हिन्दी भाषा की लिपि देव नागरी कहलाती है।

व्याकरण की सम्पूर्ण शिक्षा प्राप्त करने के लिए उसको तीन विभागों में बांट लेना चाहिये—

१. वर्ण विभाग
२. शब्द विभाग
३ वाक्य विभाग

वर्ण—सार्थक वर्ण विभाग उस ध्वनि को कहते हैं जिसके टुकड़े नहीं किए जा सकते। साधारण रूप से वर्ण दो प्रकार के होते हैं।

१. स्वर—ये स्वतन्त्र होते हैं।

२ व्यजन—जो वर्ण या अक्षर स्वरों की सहायता से बोले जाते हैं, वे व्यजन कहलाते हैं। जैसे 'क्' के उच्चारण के लिए 'अ' की सहायता ली जाती है।

अं को अनुस्वार और अः को विसर्ग कहते हैं।

(जिन व्यंजनो में स्वर नहीं होता वह हलन्त कहलाता है—
ऐसे व्यजन के नीचे (्) चिह्न लगा दिया जाता है जैसे—
र् म् आदि)

स्वर—अ आ इ ई उ ऊ ए ऐ ओ औ ऋ ॠ

शब्द प्रयोग—

प्रयोग की दृष्टि से हिन्दी में चार प्रकार के शब्दों का प्रयोग होता है।

१ तत्सम—जो संस्कृत और हिन्दी मे समान हो—जैसे नगर, पुरुष, स्त्री,

२. तद्‌भाव—जो संस्कृत से बिगड कर हिन्दी में आए हों—घृत-घी हस्त-हाथ

३. देशी—जो और भाषाओं से शब्द लिए गये हो—जैसे चम्मच, चीमटा, लोटा

४. विदेशी—जो विदेशो से आए हो—चाकू, पैंसिल, कलम, वटन, कोट

शब्द-भेद

व्याकरण में मुख्य रूप से शब्दों के दो भेद होते हैं।

१ विकारी

२ अविकारी

विकारी—लिंग, वचन कारक के अनुसार इन में विकार (परिवर्तन) हो जाता है।

१. संज्ञा
२. सर्वनाम
३ विशेषण
४. क्रिया

अविकारी—जिन में कभी भी परिवर्तन न हो।

१ क्रिया विशेषण
२ सम्बन्ध बोधक
३. समुच्चय बोधक
४ विस्मयादि बोधक

संज्ञा—किसी वस्तु, प्राणी अथवा किसी भाव के नाम को संज्ञा कहते हैं। मुख्य रूप से तीन भेद होते हैं।

१ जाति वाचक—एक से अनेक का ज्ञान हो—कुत्ता, गाय, सिंह, पुरुष।

२ व्यक्ति वाचक—एक से एक का ज्ञान हो—राम, श्याम, गाँधी, सुभाष

३. भाव वाचक—जहा भाव और अनुभव हो—सुख-दुःख, सर्दी-गर्मी

(२) सर्वनाम—संज्ञा के स्थान पर प्रयोग में आने वाले शब्द होते हैं।

व्याकरण-विभाग

व्याकरण—वह विद्या है जिससे किसी भाषा का शुद्ध लिखना, और पढ़ना बोलना आता है।

भाषा—वह साधन है जिसके द्वारा हम अपने विचार दूसरों पर लिखकर अथवा बोलकर प्रगट करते हैं और दूसरों के विचार स्वयं समझते हैं। जैसे—हिन्दी भाषा, अंग्रेजी भाषा आदि।

लिपि—किसी भाषा को लिखने का ढंग उस भाषा की लिपि कहलाता है। हिन्दी भाषा की लिपि देव नागरी कहलाती है।

व्याकरण की सम्पूर्ण शिक्षा प्राप्त करने के लिए उसको तीन विभागों में बांट लेना चाहिये—

१. वर्ण विभाग
२. शब्द विभाग
३ वाक्य विभाग

वर्ण—सार्थक वर्ण विभाग उस ध्वनि को कहते हैं जिसके टुकड़े नहीं किए जा सकते। साधारण रूप से वर्ण दो प्रकार के होते हैं।

१. स्वर—ये स्वतन्त्र होते हैं।

२ व्यजन—जो वर्ण या अक्षर स्वरो की सहायता से बोले जाते हैं, वे व्यंजन कहलाते हैं। जैसे 'क्' के उच्चारण के लिए 'अ' की सहायता ली जाती है।

अं को अनुस्वार और अः को विसर्ग कहते हैं।

(जिन व्यजनो में स्वर नहीं होता वह हलन्त कहलाता है—
ऐसे व्यजन के नीचे (्) चिह्न लगा दिया जाता है जैसे—
र् म् आदि)

स्वर—अ आ इ ई उ ऊ ए ऐ ओ औ ऋ ॠ

व्यजन ३३ है।

व्यजन—

कवर्ग—क् ख् ग् घ् ङ्

चवर्ग—च् छ् ज् झ् ञ्

टवर्ग—ट् ठ् ड् ढ ण्

तवर्ग—त् थ् द् ध् न्

पवर्ग—प् फ् ब् भ् म्

ये वर्ण स्पर्श कहलाते हैं।

य् र् ल् व् । ये अन्य स्थ कहलाते हैं।

श् ष् स् ह । ये ऊष्म कहलाते हैं।

क्ष त्र ज्ञ । ये वर्ण सयुक्ताक्षर कहलाते हैं।

शब्द—अक्षरों के समूह को शब्द कहते हैं। जैसे:— यह चतुर, पुस्तक, मोहनी आदि।

शब्द के दो भेद होते हैं — १—सार्थक २—निरर्थक ।

नोट—व्याकरण मे सार्थक मे शब्दों का ही विचार किया जाता है।

वर्णो को मुख से बोला जाता है। अत इन वर्णों के उच्चारण स्थान इस प्रकार हैं।

वर्ण	स्थान
अ कवर्ग ह	कठ
इ चवर्ग य् श्	तालु
ऋ टवर्ग र् ष्	मूर्धा
लृ तवर्ग ल् स्	दन्त्य
उ पवर्ग	ओष्ठ
ए ऐ	कठ्तालु
ओ औ	कठोष्ठ
व	दन्तोष्ठय
क ख ग ज	जिह्वामूलीय
अनुनासिक	ञ म ङ ण न

ह्रस्व स्वर—अ इ उ ऋ

दीर्घ स्वर—आ ई ऊ ए ऐ ओ औ

प्लुत स्वर— गाने रोने वेद मन्त्रो में ऊचे स्वर

शब्द विभाग

वर्णों के समूह को शब्द कहते हैं। केवल वर्ण का कोई उपयोग नहीं होता। जैसे राम मे चार वर्ण इस प्रकार हैं—र्+आ म्+अ।

शब्द-व्युत्पत्ति—

शब्द की व्युत्पत्ति तीन प्रकार से होती है

१. रूढि

२. यौगिक

३ योग-रूढि

रूढि—

ये वे शब्द हैं जिन को खण्डित होने पर कोई अर्थ नहीं होता, जैसे— गाय चोर, छात्र आदि

यौगिक—

ये दो या दो से अधिक शब्दों के मेल से बनते हैं—जैसे पाठ+शाला- विद्या+आलय।

योग-रूढ़ि

ये वे शब्द होते हैं जो शब्दों के मेल से बनने पर किसी विशेष अर्थ के लिए प्रयोग में आते हैं। जैसे—चारपाई (चारपाई शब्द का अर्थ है चार पॉव वाला) परन्तु इस शब्द का प्रयोग सोने के लिए खाट के अर्थ मे ही होता है। इसी प्रकार नीरज, जलद आदि शब्द योगरूढ़ि कहलाते हैं।

शब्द प्रयोग —

प्रयोग की दृष्टि से हिन्दी में चार प्रकार के शब्दों का प्रयोग होता है।

१. तत्सम—जो सस्कृत और हिन्दी मे समान हों—जैसे नगर, पुरुष, स्त्री,

२. तद्भाव—जो सस्कृत से बिगड कर हिन्दी में आए हों—घृत-घी हस्त-हाथ

३. देशी—जो और भाषाओं से शब्द लिए गये हो—जैसे चम्मच, चीमटा, लोटा

४. विदेशी—जो विदेशो से आए हो—चाकू, पैंसिल, कलम, बटन, कोट

शब्द-भेद

व्याकरण में मुख्य रूप से शब्दों के दो भेद होते हैं।

१ विकारी

२ अविकारी

विकारी—लिंग, वचन कारक के अनुसार इन में विकार (परिवर्तन) हो जाता है।

१ सज्ञा
२ सर्वनाम
३. विशेषण
४. क्रिया

अविकारी—जिन में कभी भी परिवर्तन न हो।

१ क्रिया विशेषण
२ सम्बन्ध बोधक
३. समुच्चय बोधक
४ विस्मयादि बोधक

सज्ञा—किसी वस्तु, प्राणी अथवा किसी भाव के नाम को सज्ञा कहते हैं।

मुख्य रूप से तीन भेद होते हैं।

१ जाति वाचक—एक से अनेक का ज्ञान हो—कुत्ता, गाय, सिंह, पुरुष।

२ व्यक्ति वाचक—एक से एक का ज्ञान हो—राम, श्याम, गाँधी, सुभाष

३ भाव वाचक—जहां भाव और अनुभव हो—सुख-दुःख, सर्दी-गर्मी

(२) सर्वनाम—सज्ञा के स्थान पर प्रयोग में आने वाले शब्द होते हैं।

सर्वनाम की सख्या मुख्य तरह से ५ हैं ।

१. पुरुष वाचक	प्रथम पुरुष	मध्यम पुरुष	उत्तम पुरुष
	वह/वे	तू/तुम	मैं/हम
२ निश्चय वाचक	जहाँ निश्चय हो	यह वह	
३ अनिश्चय वाचक	जहाँ निश्चय न हो	कोई कुछ	
४. सम्बन्ध वाचक	जहाँ सम्बन्ध हो	जैसा वैसा	
५ प्रश्न वाचक	जहा प्रश्न हो	कौन क्या	

(३) विशेषण—सज्ञा और सर्वनाम की विशेषता प्रगट करने वाले शब्द होते है । सख्या मे विशेषण के चार रूप हैं ।

१. गुण वाचक—जो किसी वस्तु का गुण प्रगट करता है—काला, गोरा सुन्दर असुन्दर

परिमाण वाचक—जो कि निश्चत या अनिश्चित संख्या बतलाता है—एक, कम

३ सख्या वाचक—जो कि निश्चित या अनिश्चित सख्या बतलाता है—एक दूसरा, दुबारा, हजार,

४. निर्देशक (सर्वनामिक)—जो विशेषता का निर्देश करें—सुन्दरतर, सुन्दरतम (सर्वनाम के साथ आने वाले विशेषण जैसे वह योग्य पुरुष है सार्वनामिक विशेषण होते हैं)

(४) क्रिया—कर्ता जिस कार्य को करता है वह करना क्रिया कहलाती है । मुख्य रूप से क्रिया के दो रूप हैं

१. सकर्मक—वह क्रिया जो बिना कर्म के पूरी न हो—पुस्तक (कर्म) पढ़ना (क्रिया)

२. अकर्मक—वह क्रिया जिसमे कर्म की अवश्यकता न हो—हसाना, हसना,

विशेष—कुछ क्रियाएँ द्विकमक होती हैं—जैसे अध्यापक राम को पुस्तक पढ़ाता है ।

क्रिया के उपभेद—प्रयोग की दृष्टि से क्रिया के चार रूप पाये जाते हैं।

१. प्रेरणार्थक—जहा क्रिया दूसरे से कराई जाय—करवाना, लिखवाना, पढ़वाना।

२ नाम धातु—जहा शब्द को क्रिया बनाया जाय—हाथ-हथियाना, लाज-लजाना

३ पूर्वकालिक—जहा एक क्रिया के बाद दूसरी क्रिया हो—खाकर, पढकर, सोकर,

४. सयुक्त—जहाँ क्रिया साथ साथ जाएँ—खा चुका है, पढ रहा है।

क्रिया के रूपान्तर—वाक्यो मे क्रिया के सात परिवर्तित रूप पाए जाते हैं। काल, वाच्य लिंग, वचन, कारक, प्रयोग, प्रकार

काल—क्रिया के होने के समय का बोध करने वाले रूप को काल कहते हैं।

काल तीन रूपों में विभाजित हो सकता है।

भूत काल, वर्तमान काल भविष्यत् काल

भूत काल—बीते हुए समय को भूतकाल कहते हैं। ये छः प्रकार का होता है सामान्य, आसन्न पूर्ण, अपूर्ण, सदिग्ध, हेतुहेतुमद्

सामान्य—जिसमे भूतकाल की सामान्य क्रिया का ज्ञान हो—जैसे वह गया।

आसन्न—जो क्रिया अभी समाप्त हुई हो—जैसे वह पढ चुका है, गया है।

पूर्ण—जिसमे पूर्ण क्रिया का ज्ञान हो, जैसे काला गया था।

अपूर्ण—जो क्रिया पूरी न हो जैसे—वह जा रहा था।

सदिग्ध—जिसमे सदेह पाया जाय जैसे—गया होगा।

हेतुहेतुमद्—जो क्रिया कारण और कार्य से सम्बन्धित हो, जैसे—वह आता तो पाता।

वर्तमान काल—जो क्रिया इस समय हो रही है वह वर्तमान है। यह तीन प्रकार का है—

सामान्य, अपूर्ण, सदिग्ध,

सामान्य—वर्तमान की सामान्य क्रिया को कहते हैं जैसे—वह दूध पीता है।
अपूर्ण—जो क्रिया पूरी न हो, जैसे बच्चू पढ रहा है।
संदिग्ध—जिस मे सन्देह पाया जाय, जैसे उषा पढती होगी।

भविष्यत् काल—जो समय आगे आयेगा उसे भविष्यत् काल कहते हैं। उसके दो रूप हैं। सामान्य, सभाव्य

सामान्य—भविष्यत् की सामान्य क्रिया का ज्ञान हो, जैसे—कान्ता पढेगी।
संभाव्य—जिसमे सन्देह पाया जाए ..जैसे शायद हम आए।

वाच्य—इसके द्वारा यह जाना जाता है, कि क्रिया मुख्य सम्बन्ध कर्ता से है, या कर्म से या भाव से है। इसके तीन रूप हैं।

१ कर्तृ वाच्य—करता प्रधान होता है, जैसे—राम पुस्तक पढता है
२. कम वाच्य—कर्म को कर्ता माना जाता है, जैसे—राम से पुस्तक पढी जाती है।
३ भाव वाच्य—यहा भाव कर्ता होता है, जैसे—राम से हसा जाता है।

विशेष—भाव वाच्य के वाक्य मे अकर्मक क्रिया होती है। सकर्मक क्रियाओं के वाक्यो मे कर्म को कर्ता बना लिया जाता है परन्तु अकर्मक क्रिया में कर्म नहीं होता अत भाव को कर्ता बना लिया जाता है।

लिग—इसके द्वारा स्त्रीलिग और पुल्लिग का ज्ञान होता है, हिन्दी मे स्त्रीलिंग और पुल्लिग दो ही लिग प्रयोग मे आते हैं।

राम पढता है।	पुल्लिग
लता पढ़ती है।	स्त्रीलिग

वचन—इसके द्वारा संख्या का ज्ञान होता है। हिन्दी मे दो ही वचन हैं। एक वचन और बहु वचन।

छात्र पढ़ता है।	एक वचन
छात्र पढ़ते हैं।	बहु वचन

कारक—क्रिया के साथ सज्ञा या सर्वनाम के जिस रूप से उसका सम्बन्ध जाना जाय उसे कारक कहते हैं। कारकों की सख्या ७ है। सम्बोधन

को अलग कारक नहीं माना है। इस तरह आठ विभक्तियाँ समझनी चाहिये।

कारक	विभक्ति चिह्न	प्रयोग
१. कर्ता	ने	छात्र ने पढा
२. कर्म	को	छात्र पुस्तक को पढ़ता है।
३. करण	से, द्वारा	छात्र मुँह से बोलता है।
४. सम्प्रदान	के लिए (को)	छात्र के लिए पुस्तक दो।
५. अपादान	से (अलग)	छात्र घर से आता है।
६ सबन्ध	का के की	छात्र का विद्यालय है।
७. अधिकरण	में पर	छात्र में गुण हैं।
८. सम्बोधन	हे अरे	हे छात्र पढो।

प्रयोग—वाक्यों को प्रयोग करने के ढग को प्रयोग कहते हैं। तीन प्रकार का प्रयोग होता है—

कर्तरि प्रयोग
कर्मणि प्रयोग
भावे प्रयोग

अविकारी—

(१) क्रिया विशेषण—जो शब्द क्रिया की विशेषता प्रगट करते हैं। उन्हें क्रिया विशेषण कहते हैं। इनकी संख्या ४ है।

१. काल वाचक—क्रिया का समय बताने वाले शब्द—आज, अभी, कल,
२. स्थान वाचक—क्रिया का स्थान बताने वाले शब्द—यहा, वहा इधर उधर
३. परिमाण वाचक—क्रिया का नाप तोल बताने वाले शब्द—कम, ज्यादा
४. रीति वाचक—क्रिया की रीति बताने वाले शब्द—धीरे धीरे झटपट

(२) सम्बन्ध बोधक—जो शब्द वाक्य में प्रयुक्त शब्दों का एक दूसरे से सम्बन्ध बताते हैं। जैसे—पास, दूर, आगे, पीछे, तक, मात्र।

(३) समुच्चय बोधक—जो शब्द अन्य शब्दो या वाक्यो को आपस में जोडते हैं, वे समुच्चय बोधक कहलाते हैं—जैसे और, तो, यद्यपि, परन्तु तथापि, आदि।

(४) विस्मयादि बोधक—जो शब्द आश्चर्य, हर्ष, दु ख आदि को प्रकट करते हैं, जैसे हाय, अरे, अहो, अहा, आदि।

विशेषण की अावश्यकताएं—जिनके द्वारा विशेषण की तुलना द्वारा रूप प्रकट हैं। ये तीन प्रकार की अवस्थायें होती हैं।

१. मूलावस्था—जहा विशेषण के साथ किसी की तुलना न हो, जैसे—योग्य

२. उत्तराअवस्था—जहा दो वस्तुओ की परस्पर तुलना हो। जैसे—योग्यतर

३. उत्तमावस्था—जहा कई वस्तुओ मे एक की विशेषता बताया जाय। —जैसे योग्यतम

सन्धि

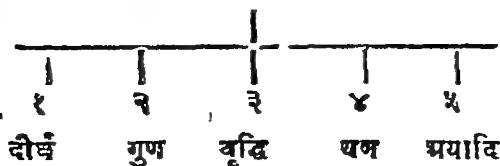
समीप के दो अक्षरों के मिलाने पर होने वाले विकार व परिवर्तन को सन्धि कहते हैं।

सन्धि के भेद—

१ स्वर सन्धि २. व्यजन सन्धि ३ विसर्ग सन्धि

दो स्वरो के परस्पर सम्बन्ध को "स्वर सन्धि" कहते हैं—महा+इन्द्र=महेन्द्र व्यजन के बाद स्वर या व्यजन का मेल हो तो वह "व्यजन सन्धि" कहलाती है—सत्+जन=सज्जनवि। सर्ग के वाद स्वर या व्यजन का मेल "विसर्ग-सन्धि" कहलाती है—मन.+विकार=मनोविकार

१. स्वर सन्धि



१. दीर्घ सन्धि

हिम + आलय = हिमालय
कवि + इन्द्र = कवीन्द्र
विद्या + अर्थी = विद्यार्थी
मही + इन्द्र = महीन्द्र
गिरि + ईश = गिरीश
पितृ + ऋण = पितृण
भानु + उदय = भानूदय
कपि + ईश्वर = कपीश्वर
परम + अर्थ = परमार्थ
देव + आलय = देवालय
विद्या + आलय = विद्यालय
सती + ईश = सतीश
दया + आनन्द = दयानन्द

२. गुण सन्धि

महा + इन्द्र = महेन्द्र
गण + ईश = गणेश
सुर + इन्द्र = सुरेन्द्र
धर्म + इन्द्र = धर्मेन्द्र
रमा + ईश = रमेश
हित + उपदेश = हितोपदेश
सर्व + उदय = सर्वोदय
महा + उदय = महोदय
गंगा + ऊर्मि = गंगोर्मि
नर + ईश = नरेश
सप्त + ऋषि = सप्तर्षि
महा + ऋषि = महर्षि

३. वृद्धि सन्धि

एक + एक = एकैक
सदा + एव = सदैव
महा + ऐश्वर्य = महैश्वर्य
तथा + एव = तथैव
परम + औषध = परमौषध
वन + औषध = वनौषध
महा + औदार्य = महौदार्य
महा + औत्सुक्य = महौत्सुक्य

४ यण सन्धि

यदि + अपि = यद्यपि
प्रति + उपकार = प्रत्युपकार
प्रति + आचार = प्रत्याचार
देवी + आगमन = देव्यागमन
अभि + उदय = अभ्युदय
इति + आदि = इत्यादि
प्रति + एक = प्रत्येक
सु + आगत = स्वागत
अनु + एषण = अन्वेषण
पितृ + आज्ञा = पित्राज्ञा
अनु + अय = अन्वय

५ अयादि संधि

ने + अयन = नयन	गै + अक = गायक
पो + अन = पावन	भो + अन = भवन
नै + अक = नायक	पो + अक = पावक
नौ + ईक = नाविक	भौ + उक = भावुक

व्यंजन सन्धि

सत् + चित् + आनन्द = सच्चिदानन्द	उत + लास = उल्लास
सत् + जन = सज्जन	तत् + टीका = तट्टीका
उत् + चारण = उच्चारण	अहम् + कार = अहंकार
उत् + गार = उद्गार	सम् + पूर्ण = सम्पूर्ण
उत् + हार = उद्धार	सम् + कल्प = संकल्प
सत् + धर्म = सद्धर्म	सम् + चय = संचय
तत् + रूप = तद्रूप	सम् + तोष = संतोष
तत् + लीन = तल्लीन	सम् + भव = सम्भव
जगत् + नाथ = जगन्नाथ	सम् + यम = संयम
दिक् + गज = दिग्गज	सम् + सार = संसार
अच् + अन्त = अजन्त	वाक् + ईश = वागीश
शरत् + चन्द्र = शरच्चन्द्र	जगत् + ईश = जगदीश
विपद् + जाल = विपज्जाल	तद् + हित = तद्धित
सत् + शास्त्र = सच्छास्त्र	वाक् + मय = वाङ्मय
सम् + कार = संस्कार	स्व + छन्द = स्वच्छन्द

विसर्ग सन्धि

निः + आशा = निराशा	मनः + गति = मनोगति
दुः + उपयोग = दुरुपयोग	मनः + भाव = मनोभाव,
दुः + गुण = दुर्गुण	तेजः + मय = तेजोमय
निः + गुण = निर्गुण	मनः + हर = मनोहर

निः + चल = निश्चल
नि: + छल = निश्छल
मन: + ताप = मनस्ताप
धनु: + टकार = धनुष्टकार
नि + पाप = निष्पाप
निः + ठुर = निष्ठुर
नि. + कपट = निष्कपट
नि: + रोग = नीरोग
दु + कर्म = दुष्कर्म
मन + ताप = मनस्ताप
अत: + एव = अतएव
अध + गति = अधोगति
नि: + सन्देह = निस्सदेह

समास

सम्बन्धित शब्द मिलाकर जब एक नये सामासिक पद के रूप मे आते हैं तो उसे 'समास' कहते हैं। समास के छ. भेद हैं—

१. अव्ययीभाव, २ तत्पुरुष, ३. कर्मधारय, ४. द्विगु, ५ बहुव्रीहि, ६ द्वन्द्व।

१ अव्यायीभावी —जिसमे पहला पद प्रधान हो और समस्त पद अव्यय हो उसे अव्ययीभाव समास कहते हैं।

जैसे— प्रतिदिन, भरपेट, हाथो-हाथ, बेशक, बेखटके, दिनोदिन यथाशक्ति, आजीवन, रातोरात, एकाएक, ।

२ तत्पुरुष —जिसमे दूसरा पद प्रधान रहता हो तथा पहला पद सज्ञा या विशेषण हो उसे तत्पुरुष समास कहते हैं। कर्ता और सम्बोधन के अतिरिक्त सबका प्रयोग तत्पुरुष मे होता है, जैसे —

कर्म तत्पुरुष—स्वर्गगत, ग्रामगत ।

करण तत्पुरुष—हस्तलिखित, तुलसीकृत ।

सम्प्रदान तत्पुरुष—रसोई-घर, रणनिमन्त्रण, कृष्णार्पण, देशभक्ति, राहखर्च ।

अपादान तत्पुरुष—धर्म भ्रष्ट, जन्मान्ध, विद्याहीन, धनहीन ।

सम्बन्ध तत्पुरुष—राज पुरुष, घुड़दौड़, गगाजल, गृहस्वामी, अमचूर, ।

अधिकरण तत्पुरुष—वनवास, आपबीती, कलाप्रवीण, स्वर्गवास, गृह प्रवेश ।

नञ तत्पुरुष—जिसमे पहला पद अभाव या निषेध वाचक हो जैसे .—

अयोग्य, अनाधिकार, अज्ञान ।

३ कर्मधारय —जिसमें विशेषण और विशेष्य तथा उपमान उपमेय का मेल हो वह कर्म धारय समास कहलाता है जैसे —

नील कमल	चन्द्रमुख
भला मानस	चरण कमल
परमानन्द	पुरुषरत्न
वीर पुरुष	

मध्य पद लोपी = दही बडा,—रसगुल्ला, घृतान्न, मृगनयनी।

४ द्विगु :—जिसमे पूर्व पद सख्या वाचक हो और उत्तर पद मुख्य हो।

जैसे—पचवटी, नवग्रह, चौमासा, अठन्नी, त्रिभुवन, पसेरा, सतसई, चौगाई, दोपहर, चवन्नो।

५ द्वन्द्व —जिसमे दोनो पद प्रधान हो।

जैसे—दालभात, राजधानी, लूटमार, राधा कृष्ण, माँ-बाप, दिन-रात सुख-दुख।

६ बहुव्रीहि —इसमें कोई पद प्रधान नहीं होता समस्त पद साधारण अर्थ छोड किसी विशेष अर्थ को प्रकट करता है।

जैसे—पकज, पीताम्बर, दशानन, चतुरानन, लम्बोदर।

शब्द रचना

(क) शब्द के पहले उपसर्ग जोडने से।

(ख) शब्दो के पश्चात् प्रत्यय जोडने से।

(ग) शब्दो के साथ दूसरा शब्द जोडने से।

उपसर्ग—वे शब्दाश होते हैं जो किसी शब्द के आदि मे जुडकर उनके अर्थ मे विशेषता पैदा कर देते हैं जैसे —

प्रताप, प्रहार, पराजय, निर्धन, इत्यादि।

सस्कृत के उपसर्ग

— प्र, परा, अप, अनु, अव, निस्, निर्, दुस् दुर्, वि, आङ, नि, अधि, अति, सु, उत, अभि, प्रति, परि, उप सम्।

हिन्दी के मुख्य उपसर्ग—अ, औ, सु, भर, उन आदि।

अज्ञान, औरस, सुडौल, भरपेट।

उर्दू के उपसर्ग—सर, ना, बे, ला, सुख, बा, ब दर, बद आदि।

सरताज, नाउम्मीद, बेलगाम, लाजबाब, खुशदिल, बाअदब, दरअसल।

प्रत्यय—वे शब्दाश जो शब्द के अन्त मे लगाकर शब्दो के अर्थों मे विशेषता या परिवतन उत्पन्न कर देते हैं उन्हे प्रत्यय कहते हैं। जैसे—

लडकपन, बुद्धिहीन

प्रत्यय के भेद

(क) क्रिया का प्रत्यय

(ख) कृत प्रत्यय

(ग) तद्धित प्रत्यय

(क) क्रिया का प्रत्यय—उन्हे कहते हैं जो धातुओ के अन्त मे लगाने से क्रिया शब्द बनाते हैं जैसे —आया, पाया, गाया, आदि।

(ख) कृत प्रत्यय—(कृदन्त) उन्हें कहते हैं जो धातुओ के अन्त में जोडे जाने से क्रियाओ के अतिरिक्त शब्द बनाते हैं। जैसे —गायक, ओढ़ना, खिलौना,

(ख) कृत प्रत्यय—(कृदन्त) के पाँच भेद है।

(1) कर्तृवाचक (कर्ता को बोध कराने वाले)-आर, एरा वला, ई

(ii) कर्म वाचक (कर्म का बोध कराने वाले)

(iii) करण वाचक (क्रिया के साधन का बोध कराने वाले)

(iv) भाव वाचक (क्रिया के व्यवहार का बोध कराने वाले) आई, आप, आवर, औती,

(v) क्रिया द्योतक (क्रिया पद का अन्य शब्दो से मेल का बोध कराने वाले) जी, आन, एरा इया, वाला

(ग) तद्धित प्रत्यय—उन्हे कहते हैं जो धातुओ को छोड कर अन्य शब्दो के अन्त मे लगाकर क्रियाओ के अतिरिक्त दूसरे शब्द बनाते हैं। जैसे—जापानी, देहाती सुनार, लकडहारा, दिनो दिन, रातो रात, लडकपन, बुद्धिहीन, धनहीन आदि।

कृदन्त और तद्धित में अन्तर

धातुओं के अन्त मे प्रत्यय जोड़ देने से क्रिया के अलावा जिन शब्दों का निर्माण होता है उन प्रत्ययो को कृत प्रत्यय या कृदन्त कहते हैं और धातु शब्द को छोडकर अन्य शब्दो के साथ जिन प्रत्ययों के जोडने से अन्य शब्द बनते हैं उन्हें तद्धित प्रत्यय कहते हैं।

वाक्य-विभाग

जिस प्रकार वर्णों के मेल से शब्द बनते हैं उसी प्रकार शब्दो के मेल से वाक्य बनते है। इस प्रकार सार्थक शब्द समूह को वाक्य कहा जाता है।

वाक्य के दो मुख्य धर्म हैं—

१. उद्देश्य

२. विधेय

उद्देश्य—वाक्य का सारा अर्थ इसी के अधीन रहता है। इसे कर्ता कहते हैं।

विधेय—उद्देश्य का सारा अर्थ उससे स्पष्ट होता है। जैसे—

राम प्रतिदिन सुबह उठता है।

राम—उद्देश्य

विधय—प्रति दिन सुबह उठता है।

यही उद्देश्य और विधेय वाक्यों के आकार के अनुरूप विस्तृत होते जाते हैं। वाक्यों में जिन कारकों का उपयोग होता है उनका भी विस्तार होता जाता है।

पदपरिचय—देते समय प्रत्येक पद का लिंग, वचन, कारक, पुरुष, काल आदि का सम्पूर्ण परिचय देना चाहिए।

विभाजन की दृष्टि से वाक्य को तीन वर्गों में विभाजित किया जा सकता है।

१. सरल वाक्य
२. मिश्रित वाक्य
३ सयुक्त वाक्य

सरल वाक्य—वे होते हैं जिसमें कर्ता, क्रिया आदि सीधे हों जैसे—मैं उन्नति के लिए पढ़ता हूँ।

मिश्रित वाक्य—वे होते हैं जहा वाक्य मिले हों, जैसे—मैंने जिससे कहा था—वह आप से मिलने आया है।

सयुक्त वाक्य—वे होते हैं जहा सयुक्त क्रिया हो,—जैसे—मैं और राम साथ साथ खेलते और पढ़ते हैं।

इस प्रकार सक्षिप्त रूप से व्याकरण समझना चाहिये।



पर्यायवाची शब्द

आकाश—आसमान, गगन, नभ, व्योम, अम्बर।

आग—अग्नि, अनल, पावक, वह्नि।

आख—नेत्र, नयन, चक्षु, दृग, लोचन।

कपड़ा—वस्त्र, वसन, चीर, पट, दुकूल, अम्बर।

सरोज—पद्म, अब्ज, अम्बुज, सरसिज, पकज, उत्पल, अरविन्द, कमल सरोरुह्।

अभिलाषा—इच्छा, आकाक्षा, उत्कण्ठा, चाह, कामना, मनोरथ।

अमृत—पीयूष, सुधा, अमिय, अमी।

गगा—भागीरथी, देवनदी, सुरसरि, मन्दाकिनी, जाह्नवी।

गणेश—गणपति, गजराज, गजवदन, लम्बोदर, गौरीसुत।

घर—गृह, निकेतन, भवन, सदन, गेह, आगार, आवास।

घोड़ा—अश्व, तुरग, वाजि, हय।

चन्द्रमा—चाँद, शशि, राकेश, विधु, इन्दु, हिमांशु, सुधांशु, सुधाकर।

तालाब—सर, सरोवर, जलाशय, ताल, तडाग।
देह—शरीर, तन, वपु, विग्रह, कलेवर, काया।
धरती—पृथ्वी, भू, धरणी धरा, अवनि, क्षिति, मेदिनी, वसुधा।
नाव—नौका, जलयान, डोंगी, तरिणी, तरी।
नौकर—सेवक, दास, अनुचर, किंकर, परिचारक, चाकर, भृत्य।
पक्षी—खग, विहग, परिन्दा, अंडज।
पहाड़—पर्वत, शैल, गिरि, भूधर, महीधर, अचल, नग।
पानी—जल, नीर, वारि, सलिल, उदक, अम्बु, पय, तोय।
पुत्र—बेटा, सुत, आत्मज, तन, पूत, अपत्य, नन्दन।
पुत्री—बेटी, सुता, आत्मजा, तनया, तनुजा, दुहिता, पुत्रिका।
पेड़—तरु, विटप, पादप, द्रुम, वनराई।
फूल—पुष्प, कुसुम, सुमन, प्रसून।
बाण—शर, तीर, विशिख, इषु, शिलीमुख।
भौरा—भ्रमर, मधुकर, मधुप, द्विरेफ, अलि, षटपद, भृंग।
मेघ—बादल, घन, जलधर, वारिद, नीरद, बलाहक।
राजा—नृप, भूप, महीप, नरेश, नरपति, भूपति, सम्राट।
राक्षस—असुर, दानव, दैत्य, निशिचर, रजनीचर।
रात—निशा, रात्रि, रजनी, रैन, यामिनी, निशीथ, शर्वरी।
विद्युत—बिजली, चपला, दामिनी, चंचला, तड़ित।
शत्रु—अरि, रिपु, अमित्र, विपक्षी, प्रतिपक्षी।
शरीर—देह, तन, गात्र, काया, कलेवर, वपु, मूर्ति।
शिक्षक—गुरु, अध्यापक, आचार्य, उपाध्याय, उपादेशक।
शेर—सिंह, केसरी, मृगराज, केहरी, मृगेन्द्र, शार्दूल।
समुद्र—सागर, उदधि, जलधि, पयोधि, नदीश, सिंधु, रत्नाकर।
सांप—सर्प, विषधर, नाग, उरग, पन्नग, व्याल, भुजग, अहि।
रवि—भानु, दिनकर, भास्कर, प्रभाकर, दिवाकर, सविता, आदित्य, सूर्य अंशुमाली, तरणि।

सोना—स्वर्ण, सुवर्ण, कंचन, कनक, हिरण्य, हेम।
स्त्री—नारी, अबला, महिला, ललना, रमणी, प्रमदा, कामिनी।
हवा—पवन, वायु, वात, बयार, समीर, अनिल, प्रभञ्जन।
हाथी—गज, द्विप, हस्ती, द्विरद, सिन्धुर, कुंजर।
मृग—कुरंग, सारंग, कृष्णसार, हिरण।
मनुष्य—मानुष, पुरुष, मानव, नर।

विलोम (विपरीतार्थक) शब्द

शब्द	विलोम	शब्द	विलोम
अमृत	विष	कोमल	कठोर
आकाश	पाताल	कृतज्ञ	कृतघ्न
आलस्य	उद्यम	गुण	दोष
आज्ञा	निषेध	गुरु	लघु शिष्य
उत्थान	पतन	जड	चेतन
उदार	अनुदार	जन्म	मृत्यु
उन्नति	अवनति	जीवन	मरण
ऊँच	नीच	ज्येष्ठ	कनिष्ठ
ऋजु	कुटिल	शीत	उष्ण
लौकिक	अलौकिक	शुक्ल	कृष्ण
वरदान	अभिशाप	सरल	कठिन
अन्धकार	प्रकाश	सन्धि	विग्रह
धनी	दरिद्र, निर्धन	स्तुति	निन्दा
नूतन	पुरातन	स्थावर	जंगम

पाप	पुण्य	स्वर्ग	नरक
प्रत्यक्ष	परोक्ष	स्वस्थ	रोगी
प्रवृत्ति	निवृत्ति	हर्ष	शोक
प्राचीन	अर्वाचीन	विस्तृत	संक्षिप्त
संयोग	वियोग	वीर	कायर
मूर्ख	विद्वान	स्वच्छ	मलिन
सम्मुख	विमुख	श्रद्धा	अश्रद्धा
सार्थक	निरर्थक	इष्ट	अनिष्ट
कल्याण	अकल्याण	उचित	अनुचित
कीर्ति	अपकीर्ति	उत्तीर्ण	अनउत्तीर्ण
कुटिल	अकुटिल (सरल)	उपयुक्त	अनुपयुक्त
ज्ञात	अज्ञात	उपस्थित	अनुपस्थित
नित्य	अनित्य	पूर्व	पश्चिम
न्याय	अन्याय	मान	अपमान
मंगल	अमंगल	यश	अपयश
योग्य	अयोग्य	उत्साही	निरुत्साही
शान्ति	अशाँति	अपराधी	निरपराधी
शुद्ध	अशुद्ध	जय	पराजय
सफल	असफल	क्रय	विक्रय
आचार	अनाचार	राग	विराग
आदि	अनादि	सम	विषम
स्वदेश	विदेश	विधवा	सधवा
सत	असत्	वाद	प्रतिवाद
उत्तर	प्रत्युत्तर	सदाचार	आचार
घात	प्रतिघात	सजीव	निर्जीव
अचेत	सचेत	सज्जन	दुर्जन

अनुकूल	प्रतिकूल	सरस	नीरस
आदान	प्रदान	सत्कर्म	दुष्कर्म
उत्कर्ष	अपकर्ष	सुगम	दुर्गम
उन्नति	अवनति	सुपुत्र	कुपुत्र
उपकार	अपकार	सुगन्ध	दुर्गन्ध
साकार	निराकार	स्वतन्त्र	परतन्त्र
सगुण	निर्गुण	स्वकीय	परकीय
दीर्घ	ह्रस्व	स्वार्थ	परमार्थ

अनेक शब्दों के लिए एक शब्द

जो पढ़ना लिखना न जानता हो।	अनपढ़
पीछे पीछे चलने वाला।	अनुगामी
जो दिखाई न दे।	अदृश्य
जो मारा न जा सके।	अवध्य
जिसका वर्णन न किया जा सके।	अवर्ण्य
जो बिना वेतन लिए काम करे।	अवैतनिक
जिस मे शक्ति न हो।	अशक्त
जिसका इलाज न किया जा सके (रोग)	असाध्य
स्वय अपनी हत्या करना।	आत्मघात
जो आदर करने के योग्य हो।	आदरणीय
जो किये गऐ उपकार को न माने।	कृतघ्न
जो गुप्त रखने योग्य हो।	गोपनीय
पानी मे रहने वाले जीव जन्तु।	जलचर
दया करने वाला।	दयालु

प्रतिदिन निकलने वाला (पत्र आदि)	दैनिक
आकाश में उडने वाला पक्षी।	नभ चर
जो ईश्वर को न मानता हो।	नास्तिक
जिसका कोई विरोध न करे।	निर्विरोध
आगे बढ़ने तथा नवीन बातो को ग्रहण करने वाला।	प्रगतिशील
वह भूमि जिसमे कुछ भी पैदा न हो।	ऊसर
प्रतिमास प्राप्त होने वाली (पत्रिका आदि)	मासिक
राजनीति से सम्बन्ध रखने वाला।	राजनीतिक
जो ससार मे प्रेम न रखता हो।	विरक्त
ससार को जीतने वाला।	विश्वविजयी
ससार में फैला हुआ।	विश्वव्यापी
जो विश्वास किये जाने पर धोका दे।	विश्वासघाती
विष्णु की उपासना करने वाला।	वैष्णव
शिव की उपासना करने वाला।	शैव
एक ही समय मे होने वाला।	समकालीन
एक ही उम्र के व्यक्ति।	समवयस्क
सब कुछ जानने वाला।	सर्वज्ञ
सब स्थानो पर रहने वाला।	सर्वव्यापक
साथ ही कक्षा मे पढने वाला।	सहपाठी
लड़के-लडकियो की एक साथ शिक्षा।	सहशिक्षा
प्रति सप्ताह निकलने (होने) वाला पत्र या अवकाश।	साप्ताहिक
दूसरों की बात मे दखल देना।	हस्तक्षेप
दूर की बात सोचने वाला।	दूरदर्शी
पति पत्नी का जोडा।	दम्पति
प्रत्येक कार्य मे देर करने वाला।	दीर्घसूत्र

समान उच्चारण (अर्थ में अन्तर)

शब्द अर्थ	शब्द अर्थ
अनिल = हवा	अनल = आग
अपेक्षा = बनस्वत	उपेक्षा = अवहेलना
अर्क = सूर्य	अरक = रस को आग पर तपाकर निकला जाय
अचल = पहाड़	अचला = पृथ्वी
अक्षय = अमर	अक्ष = भूमध्यरेखा
अचर = स्थिर	अचिर = बिजली; थोड़ी देर रहने वाली
अजर = अमर	अजरि = टीला, मेंढक
अन्न = अनाज	अन्य = दूसरा
अवलम्ब = सहारा	अविलम्ब = शीघ्र
अस = कधा	अंश = भाग, हिस्सा
अंब = माता	अंबु = जल
अबुल = कमल	अबुद = बादल
आकर = खाई	आकार = शक्ल
आधी = अर्द्ध	आधि = मानसिक पीड़ा
आहुत = हवन किया गया	आहूत = निमन्त्रित
उत्कर्ष = ऊंचा उठाना	उत्कृष्ट = ऊंचा उठा हु
उद्धत = धृष्ट	उद्यत = तैयार
उद्धरण = किसी उक्ति को उसी रूप में रखना	उदाहरण = मिसाल
उद्धार = मुक्ति	उधार = कर्ज
ओर = तरफ	और = तथा
करण = इन्द्रिय	कारण = हेतु

कर्म = काम	क्रम = सिलसिला
कलि = कलियुग	कली = फूल की कलिका
कुल = सारा या वंश	कूल = किनारा
क्षति = हानि	क्षिति = पृथ्वी
गृह = घर	ग्रह = नक्षत्र
चिता = शव को जलाने की अग्नि	चिंता = फिक्र
छत्र = बड़ी छतरी	छात्र = विद्यार्थी
जरा = बुढ़ापा	जरा = थोड़ा
तरणि = सूर्य	तरणी = नाव
प्रणय = प्रेम	परिणय = विवाह
प्रयाण = गमन	पर्याण = घोड़े का साज
तुरग = घोड़ा	तरंग = लहर
दीन = गरीब	दिन = दिवस
द्विप = हाथी	द्वीप = टापू
धरा = पृथ्वी	धारा = पानी का प्रवाह
नीड़ = घोंसला	नीर = पानी
परिमाण = मात्रा	परिणाम = नतीजा
पानी = जल	पाणि = हाथ
पुरुष = आदमी	परुष = कठोर
प्रकार = किस्म	प्राकार = चार दीवारी
प्रमाण = सबूत	प्रणाम = नमस्कार
प्रसाद = कृपा	प्रासाद = महल
सुरा = शराब	बूरा = शक्कर
भवन = मकान	भुवन = संसार
मद = अभिमान	मद्य = शराब
मातृ = माता	मात्र = केवल

मूल्य = कीमत	मूल = जड़
हृदय = दिल	ह्रद = तालाब
शकल = टुकड़ा	सकल = सारा
शर = बाण	सर = तालाब
शस्त्र = हथियार	शास्त्र = धार्मिक ज्ञान के ग्रन्थ
शुक्ल = सफेद	शुल्क = फीस (चन्दा)
सुत = पुत्र	सूत = सारथी, रुई का कच्चा धागा
सूर = सूरदास या सूर्य	शूर = वीर

विशेषण निर्माण

संज्ञा	विशेषण	संज्ञा	विशेषण
अधर्म	अधर्मी अधार्मिक	नरक	नारकीय
अन्त	अन्तिम	निशा	नैश
अभिमान	अभिमानी	पंक	पंकिल
कुल	कुलीन	पंडित	पांडिताई, पांडित्य
क्षण	क्षणिक	पथ	पथिक
ग्राम	ग्रामीण	पुराण	पौराणिक
चाचा	चचेरा	पेट	पेटू
ठंड	ठंडा	पृथ्वी	पार्थिव
त्रिलोक	त्रिलोकी	मामा	ममेरा
मेधा	मेधावी	सूर्य	सौर
यश	यशस्वी	सेना	सैन्य
राष्ट्र	राष्ट्रीय	मिठास	मीठा
संसद्	संसदीय	स्थान	स्थानीय

उग्रता	उग्र	स्वर्ग	स्वर्गीय
उदारता	उदार	स्वर्ण	स्वर्णिम
उन्माद	उन्मत्त	हृदय	हार्दिक
कौशल	कुशल	घृणा	घृणित
कृत्रिमता	कृत्रिम	तृप्ति	तृप्त
दम्भ	दम्भी	मूल्य	मूल्यवान
दुर्जनता	दुर्जन	लोभ	लोभी-लुब्ध
पाप	पापी	विस्तार	विस्तृत
बहिष्कार	बहिष्कृत	शान्ति	शान्त
मूर्खता	मूर्ख	साहस	साहसिक, साहसी
स्वास्थ्य	स्वस्थ	टिकना	टिकाऊ
तैरना	तैराक	देखना	दृश्य
चलना	चलाऊ, चालक	दौड़ना	दौड़
लड़ना	लड़ाका	पीना	पेय



भाववाचक संज्ञा का निर्माण

नम	नमी	अज्ञ	अज्ञता
खोटा	खोट	अहं	अहंकार
अपना	अपनापन	नम्र	नम्रता
नास्तिक	नास्तिकता	उचित	औचित्य
पण्डित	पाण्डित्य	उदार	उदारता
उग्र	उग्रता	कठिन	कठिनाई
बुद्धिमान	बुद्धिमता	जड़	जड़ता
काला	कालिख	भूखा	भूख

ठग	ठगी	गहरा	गहराई
उजला	उजलापन	चतुर	चतुराई
उच्छृंखलता	उच्छृंखलता	चोर	चोरी
कड़ा	कड़ाई	बुरा	बुराई
छोटा	छुटपन	ठण्डा	ठण्डक
कुलीन	कुलीनता	मलीन	मालिन्य
तीव्र	तीव्रता	मन्दा	मन्दी
दाना	दानाई	कृतज्ञ	कृतज्ञता
मीठा	मिठास	दूरदर्शी	दूरदर्शिता
शिशु	शैशव	लम्बा	लम्बाई
सुजन	सौजन्य	सरल	सरलता
वीर	वीरता	विशेष	विशेषता
कृष	कृषता	कृतघ्न	कृतघ्नता
मित्र	मित्रता	दुर्जन	दुर्जनता
मूक	मूकता	विषम	विषमता
सुगम	सुगमता	सज्जन	सज्जनता
सुन्दर	सौंदर्य	स्वस्थ	स्वास्थ्य
सर्वज्ञ	सर्वज्ञता	स्वतन्त्र	स्वतन्त्रता

काव्य में रस, अलंकार और छंद

छन्द और अलकार दोनों ही काव्य मे चमत्कार उत्पन्न करते हैं। यह हो सकता है कि निश्चित अलकारो से परे कवि की प्रतिभा ने अपूर्व सौन्दर्य दिखाया हो, परन्तु उसमें कोई न कोई अलकार घटित अवश्य होता है। छद और अलकार दोनों ही काव्य के कला-पक्ष का परिपोषण करते हैं। कला सौन्दर्य बोध कराती है, वह अभिव्यक्ति जन्य है जबकि साहित्य अनुभूति-जन्य।

साहित्य में सत्य और शिव के साथ-साथ सुन्दर भी अपेक्षित है। भिन्न भिन्न कला-कृतियों की सृष्टि ही साहीत्य है। संग्रह-रूप में जो साहित्य है मूल रूप में वही काव्य है, इसमें केवल व्यावहारिक भेद है। गोस्वामी जी ने 'यथेच्छा भाव-राशि चुनकर सुसज्जित करना' ही काव्य की व्याख्या की हैं। देश तथा काल भेद से अनेक काव्य लिखे गये हैं। कवि भाव को व्यक्त करने के लिए नवीन शब्द और छंदों का आश्रय लेता है। अभिव्यक्ति की सुन्दरता आनन्द का कारण है। इसलिए काव्य का प्रथम उपकरण सौन्दर्य है, दूसरा रमणीय अर्थ। रमणीय अर्थ से विद्वानो ने अर्थ के साथ शब्द का भी समावेश किया है। रमणीय अर्थ के प्रतिपादन के लिए सस्कृत-साहित्य मे अलकारो की योजना की गई है। रस तो काव्य की आत्मा माना गया है परन्तु अलकार काव्य-कलेवर को अधिक सुन्दर बना देता है। अर्थालकार और शब्दालकार इस लिए बनाए गए की वर्ण-विशेष की ओर व्यक्ति आकर्षित हो, चित किसी प्रबल मनोवेग से चमत्कृत हो जाय तथा काव्य रसमय होकर व्यक्ति के लिए आस्वादन करने योग्य बन जाए। समय और रुचि के भेद से रस और अलकार परिवर्जित होते रहते है। अस्तु, हम इतना ही कहना पर्याप्त समझेंगे कि शब्द और अर्थ अर्थात् भाषा और भाव दोनो मिलकर ही काव्य कहे जा सकते हैं।

गद्य और पद्य

काव्य गद्य और पद्य मे विभाजित है। गद्य में छन्दो की योजना नहीं होती परन्तु अलकार और कल्पना के चमत्कार मे गद्य उत्कृष्ट पद्य मे कम नही पद्य का स्वर अधिकांश में तालबद्ध होता है। ऐतिहासिकों का कहना है कि आदिकाल मे पद्य की ही प्रधानता थी। पाश्चात्य विद्वान में काले ने कहा है कि सभ्यता के विकास से कविता का ह्रास हो रहा है। कुछ भी हो, गद्य और पद्य में मौलिक अन्तर है। गद्य समाजिक सत्य, उसकी यथार्थता को अधिक प्रगट करता है, पद्य मनुष्य की अलकृत भावना की उपज होने के कारण उदात्त आदर्शों का व्यजक है उसमे भाव और कला दोनों हैं। समाज और व्यक्ति के सस्कार और विकास की सूचना देनेवाले उसके भाव हैं। 'भाव अखण्ड,

सार्वजनीन और स्वसवेद्य होता है।' अभिव्यक्ति की शैली ही कला का रूप धारण करती है। छन्द, गीत अलकार, नीति आदि उसकी शैलियाँ हैं। साराश यह है, काव्य को अलकारो से सुशोभित करना, 'गुणवान बनाना, दोषो से दूर रखना कलापक्ष का काम है।

कविता की परिभाषा

ध्यान देने की बात है कि अधिकाश साहित्य-शास्त्रो मे छन्द का प्रकरण नही रखा गया। शब्दलकारो में अन्त्यानुप्रास एक-क्षुद्र अलकार-मात्र है। हो सकता है कि छन्दो की सख्या अधिक होने के कारण, छन्द को काव्य-सहित्य आवश्यक अग नही माना गया। काव्य में सगीत सहायक का ही काम करता है। यदि ऐसा न हो तो कविता सगीत का एक गुण बनकर रह जाय। सस्कृत-साहित्य मे मम्मट, विश्वनाथ और जगन्नाथ, तीन आलोचक माने जाते हैं, तीनो की परिभाषाएँ पृथक् हैं।

ऐसे शब्दों और अर्थों को कविता कहते हैं जो दोष-रहित, अलकार-सहित हों और कभी-कभी अलकार न भी रहें तो भी।

—(मम्मट)

रसभरी भाषा को कविता कहते हैं —(विश्वनाथ)

रमणीय अर्थ के प्रतिपादन करने वाले शब्दो को काव्य कहते हैं।

—(जगन्नाथ)

वास्तविक दृष्टि से भेद न होने पर भी तीनो की अपनी-अपनी विशेषताएँ हैं। तीसरी परिभाषा ही साहित्य में अधिक मान्य है। शब्द और अर्थ अभिन्न रूप से कविता के आधार हैं। स्वरूप-ज्ञान के लिए वाचक, लक्षक, व्यजक, तीनो प्रकार के शब्द; वाच्य, लक्ष्य और व्यग्य तीनो प्रकार के अर्थ तथा अभिधा, लक्षणा और व्यञ्जना तीनो प्रकार की शब्द-शक्तियो का ज्ञान परमावश्यक है। शब्दार्थ के इस विवेचन के आधार पर ही रस, ध्वनि, सौन्दर्य कलात्मक, अनुभूति, साधारणीकरण आदि सभी की व्याख्या होती है। आगे चलकर शब्द और अर्थ के चमत्कार, सौन्दर्य और, रमणीयता को बढ़ाने वाले

गुण, दोष, वृत्ति, रीति, अलकार आदि का विवेचन होता है। जिस प्रकार शब्द और अर्थमय काव्य है उसी प्रकार अलकार भी शब्दालकार, अर्थालकार तथा उभयालकार तीन श्रेणियो में विभाजित हैं, जिनका विवेचन आधुनिक पुस्तको में यथोचित मिलता है। इसमे कोई सशय नही कि अलकार को लेकर एक सम्प्रदाय बना जो कि रस का ही समकालीन था। भामह, ऊद्भट, रुद्रट, दण्डी आदि इसी सम्प्रदाय के परिपोषक हैं। कलापक्ष मे सबसे अधिक प्रसिद्ध और रोचकता रस और अलकारों को ही मिली है।

काव्य में रस

रस का अर्थ है, आस्वाद्य। भरत मुनि ने रसहीन काव्यार्थ नही माना इसीलिए काव्य का एक आवश्यक तत्व है 'रस'।

भरत मुनि की रस व्याख्या को सभी जानते हैं। उनके अनुसार रसो के आधार भाव है। मन के विकार, भाव दो प्रकार के होते हैं। जो छोटी-छोटी उमगो को उठाकर थोडे समय में बदल जाते हैं, उन्हे सचारी भाव कहते हैं, या व्याभिचारी भाव कहते हैं। और जो रस की प्राप्ति तक ठहरे रहते हैं उन्हें स्थायी भाव कहते हैं सचारी भाव ३३ हैं। सचारी भाव स्थायी भावो की पुष्टि करते हैं। भावो का रस-रूप में बदलने के कारण विभाव हैं। आलम्बन, और उद्दीपन विभाव स्थायी भाव को रस रूप मे बदल देते हैं आन्तरिक भावो को बाह्य रूप देने में अनुभाव सहायक होता है। अनुभाव कायिक, मानसिक और सात्विक होते हैं। आँखें लाल होना, मुख पर मलिनता आना, पसीना आना, ये सब अनुभाव ही कहलाते हैं।

मूल रूप से नौ प्रकार के स्थायी भाव होते हैं। ये ही रति आदि स्थायी भाव आलम्बन-उद्दीपन रूप विभाव, अनुभाव और सचारी भाव के सयोग से रस रूप मे बदल जाते है। इसीलिए प्राचीन युग में आठ रस होते हुए भी 'शान्तश्च नवमोरस' से शान्त रस की कल्पना की गई। कभी-कभी ऐसा होता है कि रस ठीक तरह से परिचय नहीं हो पाता उसके अभाव के चार कारण हैं।

१. जबकि विभाव, अनुभाव आदि उत्पन्न होकर ही रह जाते हैं, आगे तीव्र नहीं हो पाते।

सार्वजनीन और स्वसवेद्य होता है।' अभिव्यक्ति की शैली ही कला का रूप धारण करती है। छन्द, गीत अलकार, नीति आदि उसकी शैलियाँ हैं। साराश यह है, काव्य को अलकारो से सुशोभित करना, गुणवान बनाना, दोषों से दूर रखना कलापक्ष का काम है।

कविता की परिभाषा

ध्यान देने की बात है कि अधिकाश साहित्य-शास्त्रो मे छन्द का प्रकरण नही रखा गया। शब्दलकारो में अन्त्यानुप्रास एक क्षुद्र अलकार-मात्र है। हो सकता है कि छन्दो की सख्या अधिक होने के कारण, छन्द को काव्य-सहित्य आवश्यक अग नही माना गया। काव्य मे सगीत सहायक का ही काम करता है। यदि ऐसा न हो तो कविता सगीत का एक गुण बनकर रह जाय। सस्कृत-साहित्य मे मम्मट, विश्वनाथ और जगन्नाथ, तीन आलोचक माने जाते हैं; तीनो की परिभाषाएँ पृथक् हैं।

ऐसे शब्दों और अर्थों को कविता कहते हैं जो दोष-रहित, अलकार-सहित हों और कभी-कभी अलकार न भी रहें तो भी।

—(मम्मट)

रसभरी भाषा को कविता कहते हैं —(विश्वनाथ)

रमणीय अर्थ के प्रतिपादन करने वाले शब्दों को काव्य कहते हैं।

—(जगन्नाथ)

वास्तविक दृष्टि से भेद न होने पर भी तीनो की अपनी-अपनी विशेषताएँ हैं। तीसरी परिभाषा ही साहित्य मे अधिक मान्य है। शब्द और अर्थ अभिन्न रूप से कविता के आधार हैं। स्वरूप-ज्ञान के लिए वाचक, लक्षक, व्यजक, तीनो प्रकार के शब्द, वाच्य, लक्ष्य और व्यग्य तीनों प्रकार के अर्थ तथा अभिधा, लक्षणा और व्यञ्जना तीनो प्रकार की शब्द-शक्तियो का ज्ञान परमावश्यक है। शब्दार्थ के इस विवेचन के आधार पर ही रस, ध्वनि, सौन्दर्य कलात्मक, अनुभूति, साधारणीकरण आदि सभी की व्याख्या होती है। आगे चलकर शब्द और अर्थ के चमत्कार, सौन्दर्य और, रमणीयता को बढाने वाले

गुण, दोष, वृत्ति, रीति, अलकार आदि का विवेचन होता है। जिस प्रकार शब्द और अर्थमय काव्य है उसी प्रकार अलकार भी शब्दालकार, अर्थालकार तथा उभयालकार तीन श्रेणियो में विभाजित है, जिनका विवेचन आधुनिक पुस्तको में यथोचित मिलता है। इसमें कोई सशय नही कि अलकार को लेकर एक सम्प्रदाय बना जो कि रस का ही समकालीन था। भामह, उद्भट, रुद्रट, दण्डी आदि इसी सम्प्रदाय के परिपोषक हैं। कलापक्ष मे सबसे अधिक प्रसिद्ध और रोचकता रस और अलकारो को ही मिली है।

काव्य में रस

रस का अर्थ है, आस्वाद्य। भरत मुनि ने रसहीन काव्यार्थ नही माना इसीलिए काव्य का एक आवश्यक तत्व है 'रस'।

भरत मुनि की रस व्याख्या को सभी जानते हैं। उनके अनुसार रसों के आधार भाव है। मन के विकार, भाव दो प्रकार के होते हैं। जो छोटी-छोटी उमगो को उठाकर थोडे समय में बदल जाते हैं, उन्हें सचारी भाव कहते हैं, या व्यभिचारी भाव कहते हैं। और जो रस की प्राप्ति तक ठहरे रहते हैं उन्हें स्थायी भाव कहते हैं सचारी भाव ३३ हैं। सचारी भाव स्थायी भावो की पुष्टि करते हैं। भावो का रस-रूप में बदलने के कारण विभाव हैं। आलम्बन, और उद्दीपन विभाव स्थायी भाव को रस रूप में बदल देते हैं आन्तरिक भावो को बाह्य रूप देने में अनुभाव सहायक होता है। अनुभाव कायिक, मानसिक और सात्विक होते हैं। आँखें लाल होना, मुख पर मलिनता आना, पसीना आना, ये सब अनुभाव ही कहलाते हैं।

मूल रूप से नौ प्रकार के स्थायी भाव होते है। ये ही रति आदि स्थायी भाव आलम्बन-उद्दीपन रूप विभाव, अनुभाव और सचारी भाव के सयोग से रस रूप में बदल जाते हैं। इसीलिए प्राचीन युग में आठ रस होते हुए भी 'शान्तश्च नवमोरस' से शान्त रस की कल्पना की गई। कभी-कभी ऐसा होता है कि रस ठीक तरह से परिचय नही हो पाता उसके अभाव के चार कारण हैं।

१ जबकि विभाव, अनुभाव आदि उत्पन्न होकर ही रह जाते हैं, आगे तीव्र नहीं हो पाते।

२ एक भाव के बाद दूसरे भाव की प्रबलता से रस-परिपाक ठीक नहीं होने पाता।

३, जब एक भाव मन को अपनी ओर खींचता है तथा दूसरा अपनी ओर तब भी रस-पाक नहीं हो पाता।

४ जब एक साथ हृदय मे कई भाव उत्पन्न होते हैं तब भी वे रस-परिपाक नही होने देते।

साराश यह है कि रसात्मक वाक्य को ही काव्य माना गया है, रस ही काव्य की आत्मा है। अलकार के बिना शरीर असुन्दर लग सकता है परन्तु आत्मा के बिना शरीर का कोई मूल्य नही। अतएव रसहीन काव्य निर्जीव, निष्प्राण और निश्चेतन है।

काव्य में छन्द

काव्य की उत्पत्ति के मूल मे करुण रस है। आदि कवि बाल्मीकि की करुणापूर्ण वाणी 'मा निषाद प्रतिष्ठा त्वमगम. शाश्वती समा ' छन्दोबद्ध होकर ही निकली थी सिद्धान्त. रूप मे छन्दो की आवश्यकता का खण्डन करते हुए भी यह सभी स्वीकार करेंगे कि हमारा साहित्य ही नही, वरन् ससार का काव्य-साहित्य बडी मात्रा में छन्दोबद्ध है। छन्द का सम्बन्ध सगीत से है। पाश्चात्यो में तो अब भी कविता और छन्द का अन्योन्याश्रम सम्बन्ध माना जाता है। जानसन का कहना है कि कविता पद्यमय निबन्ध है। कार्लाइल का कहना है कि कविता सगीतमय विचार है। ये सभी समीक्षक किसी-न-किसी रूप में सगीत को कविता का अग मानते हैं। किन्तु पद्य मात्र को कविता नाम देने में कितनी बुद्धिमानी है? इसका उत्तर मैं न दूंगा।

मनुष्य के जीवन में सगीत का स्थान है। एकान्त मे बहते हुए स्वच्छ निर्झर के कल-कल नाद मे, पक्षियों के चहचहाते रव मे, मन्द-मन्द बहते हुए समीर के स्पन्दन में स्वर, ताल और लय की झाँकी मिलती है, मानव हृदय शान्ति प्राप्त करता है। संगीतज्ञों का कहना है कि सगीत का कविता से पृथक्करण उसके प्रभाव और महत्व को न्यून करना है। जो लोग सगीत के प्रेमी हैं वे सगीतमय भाषा को महत्त्व देते हैं। कविता का सगीतमय रूप नष्ट

करना उसकी अलौकिक आनन्दोत्पादिका शक्ति का ह्रास करना है। परन्तु आपत्ति यह है कि कभी-कभी संगीत के बन्धन से छन्दों की रूढ़िवादी परम्परा के भार से लदकर, कविता भावाभिव्यंजना मे समर्थ नहीं हो पाती। शब्द, कविता और स्वर तीनो आपस मे विरोधी हो जाते हैं। उस समय हमारे विचार से छन्द के नियमों की अवहेलना करना ही उचित होगा, क्योंकि काव्य में शब्द को तो महत्व दे सकते हैं, स्वर को नहीं। इसीलिए ललित कलाओं में संगीत से ऊपर काव्य-कला मानी गई है। ऐतिहासिकों के मत के अनुसार जब सृष्टि का आरम्भ हुआ होगा तब मानवजाति ने अपने भावों को अभिव्यक्त करने के लिए सर्वप्रथम संगीतमय भाषा को अपनाया होगा, जैसा कि हम पहले कह चुके हैं।

नवीन आलोचक ऐसा नहीं मानते। उनका कहना है कि संसार की आदिम भाषा संगीतमय हो सकती हैं, परन्तु विकसित होते समय मनुष्य ने छन्दहीन भाषा बनाई। यह कहा जा सकता है कि कविता की उत्पत्ति संगीतमय हो। आधुनिक काल मे गद्य विकास की ओर है और भविष्य भी हमें गद्य-मय ही दिखाई दे रहा है।

छन्दहीन कविता नवीन युग की देन है। हमारा विचार है कि एक ऐसा युग आएगा जब कवि इन रूढ़ि परम्पराओं से दूर गद्यमयी भाषा में अपने विचारों की अभिव्यक्ति करेगा।

भारत प्रारम्भ से ही कला और विज्ञान के क्षेत्र में आगे रहा है। छन्द-शास्त्र भी हमारे यहाँ ही सर्वप्रथम प्रादुर्भूत हुआ। वेदांगों में छन्द का भी नाम आता है। वैदिक काल मे स्पष्टतया छन्दो के नाम मिलते हैं। प्राति-शाख्य आदि ग्रन्थो मे छन्दो के सिद्धान्त मिलते हैं। हिन्दी-साहित्य मे संस्कृत के आधार पर ही रीतिकाल के कवियो ने छन्दो पर ग्रन्थो की रचनाएँ की। समय बदला। मनुष्य कल्पना के आकाश से उतरकर यथार्थ की कठोर भूमि पर आ पहुँचा। उसे भाषा का बन्धन स्वीकार नहीं, तब छन्द का बन्धन वह क्यो स्वीकार करने लगा! इसीलिए मुक्त वृत्त लिखे गए। यद्यपि उनमें

पहला-सा भाषा-चमत्कार, स्वर, ताल, लय का अनुक्रम नहीं तो भी आज का काव्य लोकप्रिय बनता जाता है।

प्राचीन अंग्रेजी छन्द स्वर पर आश्रित थे। अंग्रेजी में भिन्न तुकान्त कविताएँ अधिक मिलती हैं। हमारे यहाँ उस शासन के प्रभाव से भाषा तथा भाव-परिवर्तन के साथ छन्द-परिवर्तन भी हुआ। इससे पूर्व मुस्लिम शासन-काल में भारतवर्ष की कला पर ईरान का प्रभाव पड़ा। परन्तु छन्दों के सम्बन्ध में यह अवश्य कहना होगा कि हमारा साहित्य विदेशी प्रभाव से अछूता रहा। हिन्दी के कुछ पद्यों की आड़ लेकर हम यह नहीं कह सकते कि हमारे छन्द-साहित्य पर विदेशी प्रभाव पड़ा। आज नवीन युग है। नवीन कलम है। नवीन कलाकार है। नवीन मनोवैज्ञानिक विवेचन है। आज के स्वच्छन्द छन्दों का कोई लक्षण नहीं किया जा सकता। कला और विज्ञान दोनों ही साधना-साध्य हैं। वार्णिक और मात्रिक छन्द किसी विशेष रूढ़ि में न बन्धकर केवल स्वर के प्रवाह में घुल गए।



काव्य विभाग

प्राचीन आर्यों ने नीचे लिखे काव्य के पांच प्रयोजन बताए हैं।

१. आनन्द की प्राप्ति।

२. यश की प्राप्ति।

३ गुरु, देवता और अपने आश्रयदाताओं को प्रसन्न करना।

४. धन प्राप्ति।

५. आनन्द के साथ-साथ शिक्षा।

काव्य का प्रभाव और उपादेयता

आनन्द की प्राप्ति सौन्दर्य से है। इसी से सुन्दर वस्तु को देखकर मनुष्य का चित्त आकर्षित हो जाता है। सौन्दर्य-प्रेम की मानव-प्रवृत्ति के कारण ही ललित-कलाओं का जन्म हुआ है। कलायें पांच होती हैं वास्तु, मूर्ति, चित्र,

संगीत और काव्य। इनमें प्रथम तीन उपयोगी कलायें और पिछली संगीत और काव्य ललित कलाएं कहलाती हैं। काव्य के द्वारा मनुष्य की उक्ति में सौन्दर्य आ जाता है और इसी से आनन्द का अनुभव होता है। सुन्दर उक्ति का ही दूसरे पर प्रभाव पड़ता है। भूषण कवि की ओजस्विनी, वीर रसमयी कविताओं ने हिन्दू जाति को जगा दिया। बिहारी की कविता ने ही राजा जयसिंह को कर्त्तव्य की ओर प्रवृत किया, अतएव आनन्द का हेतु और प्रभाव डालने का कारण होने से काव्य अत्यन्त उपादेय है।

काव्य के लक्षण

हृदय के उत्स से निकला हुआ वह शब्द प्रवाह जो समस्त मानव हृदयों में एक मधुर भाव का संचार कर अलौकिक आनन्द की प्राप्ति करावें उसे काव्य कहते हैं। इस भाव को पं० विश्वनाथ साहित्य दर्पणकार ने "वाक्य रसात्मक काव्यम्" कहा है अर्थात् जिस काव्य में रस हो उसे काव्य कहते हैं। तादात्म्य अनुभूति का रस कहा जाता है। पंडितराज जगन्नाथ ने काव्य की परिभाषा में रमणीय अर्थ और शब्द को काव्य कहा है अर्थात् काव्य में रमणीयता भी आवश्यक अंग है उत्तम काव्य में रागात्मकता होती है।

कविता और काव्य

प्रारम्भ में इन दोनों शब्दों में कोई भेद न था। परन्तु आजकल ग्रन्थ के लिये काव्य और फुटकर रचना के लिये कविता का प्रयोग होता है। प्राचीन काल में गद्य और पद्य दोनों ही कविता कहलाते थे। आजकल पद्य को काव्य कहने का व्यवहार नहीं है। उपन्यास और नाटकों को काव्य नहीं कहते यद्यपि वे काव्य ही हैं। क्योंकि आलौकिक आनन्द की प्राप्ति दोनों से ही होती है।

अलंकार

काव्य को अलंकृत (सुशोभित) करने वाली शब्द तथा अर्थ की विशेष रचना अलंकार है। अलंकार शब्द और अर्थ के विचार से दो प्रकार के होते

है। (क) शब्दालंकार, अर्थालंकार।

(क) शब्दालंकार में वर्ण तथा शब्द का चमत्कार होता है। इसके दस भेद हैं जिनमे दो मुख्य हैं—अनुप्रास और यमक।

(१) अनुप्रास—एक या अधिक अक्षरों के एक बार आवृत्त होने से छेकानुप्रास होता है, जैसे—

'स्वच्छ चादनी बिछी हुई है अवनि और अम्बर तल में'।

यहाँ 'छ' और 'अ' वर्ण की एक बार आवृति है, अत: छेकानुप्रास है।

(२) वृत्यानुप्रास—जब एक या अनेक अक्षरों की अनेक बार आवृत्ति हो तब 'वृत्यनुप्रास' होता है, जैसे—

'धर्म धुरीन वीर नरनागर' सत्य सनेह सील सुखसागर'

यहा 'ध' और 'स' वर्ण कई बार आये हैं वृत्यनुप्रास है।

(३) यमक—एक शब्द की आवृत्ति कई बार भिन्न-भिन्न अर्थों मे हो तो वहा यमक होता है, जैसे—

'ऊँचे घोर मन्दर के अन्दर रहनवारी' ऊँचे घोरमदर के अन्दर रहाती हैं।

यहा 'मन्दर' शब्द की आवृत्ति भिन्न अर्थों में है। पहले मन्दर का अर्थ महल हैं दूसरे मन्दर का अर्थ पहाड है।

(४) लाटानुप्रास—जहा पूरे वाक्य की आवृत्ति हो और केवल अन्वय भेद से दूसरा अर्थ लगे वहा लाटानुप्रास होता है जैसे—

'पूत सपूत तो क्यों धन सचय, पूत कपूत तो क्यो धन सचय।'

यहा दोनों पक्तियां एक सी हैं केवल सपूत और कपूत के अन्वय से अर्थ में अन्तर पडता है।

अर्थालंकार

अर्थालकार से काव्य मे अर्थ का चमत्कार होता है।

इन अलकारों की सख्या सो के लगभग है परन्तु हम केवल यहाँ कुछ का ही वर्णन करेंगे, जैसे—उपमा, रूपक, श्लेष और अतिशयोक्ति आदि।

(१) उपमा—में किसी की समानता दी जाती है। जिसको समानता दा

जाती है उसे उपमेय कहते हैं। जिससे समानता दी जाती है उसे उपमान कहते हैं। समानता प्रकट करने वाला शब्द वाचक कहलाता है। जो उपमेय और उपमान में एक गुण हो वह समान धर्म है। जैसे—

'नील गगन-सा शान्त हृदय था हो रहा' यहा हृदय उपमेय है, नील गगन उपमान है सो वाचक है, शान्त साधारण धर्म है।

(१) रूपक—रूपक मे उपमेय मे उपमान का आरोप किया जाता है, जैसे

उदित उदय गिरि मच पर, रघुवर वाल पतग।
विकसे सन्त सरोज मन, हर्षे लोचन भृग॥

यहा मच में उदयगिरि का, रघुवर मे वाल पतग का, सतों में कमलो का तथा नेत्रो मे भ्रमर का आरोप हैं। यही रूपकता है।

(२) श्लेष—जहा एक शब्द के अनेक अर्थ हो और पृथक्-पृथक् पक्षो मे उनका अर्थ लगे, जैसे—

माया महा ठगनी हम जानी।
त्रिगन फास लिए कर डोले बोले मधुरी वानी।

यहा त्रिगुण का अर्थ तीन गुण रजोगुण, तमोगुण सतोगुण माया पक्ष में है ठगनी के अर्थ में त्रिगुण से तीन गुण वाली रस्सी से अभिप्राय हैं अतः श्लेप हैं।

(४) अतिशयोक्ति—इस अलकार मे वढा-चढा कर वर्णन किया जाता है जैसे—

हनुमान की पूँछ मे, लगन न पाई आग।
लका सारी जल गई, गये निशाचर भाग॥

यहा पूँछ मे आग लगने से पहले ही लका का जलना प्रगट होने से अतिशयोक्ति है।

(५) सन्देह—सादृश्य के कारण अर्थ मे सन्देह रहे उसे सन्देह अलकार कहते हैं जैसे.—"कोई पुरन्दर की किंकरी है, या किसी सुर की सुन्दरी है।"

(६) दृष्टान्त—उपमेय और उपमान मे धर्म भिन्नता होते हुए भी अत्यन्त

हैं। (क) शब्दालंकार, अर्थालंकार।

(क) शब्दालंकार में वर्ण तथा शब्द का चमत्कार होता है। इसके दस भेद हैं जिनमे दो मुख्य हैं—अनुप्रास और यमक।

(१) अनुप्रास—एक या अधिक अक्षरों के एक बार आवृत्त होने से छेकानुप्रास होता है, जैसे—

'स्वच्छ चादनी बिछी हुई है अवनि और अम्बर तल में'।

यहाँ 'छ' और 'अ' वर्ण की एक बार आवृति है, अतः छेकानुप्रास है।

(२) वृत्यानुप्रास—जब एक या अनेक अक्षरों की अनेक बार आवृत्ति हो तब 'वृत्यनुप्रास' होता है, जैसे—

'धर्म धुरीन धीर नरनागर' सत्य सनेह सील सुखसागर'

यहा 'ध' और 'स' वर्ण कई बार आये हैं वृत्यनुप्रास है।

(३) यमक—एक शब्द की आवृत्ति कई बार भिन्न-भिन्न अर्थों में हो तो वहा यमक होता है, जैसे—

'ऊँचे घोर मन्दर के अन्दर रहनवारी' ऊँचे घोरमदर के अन्दर रहाती हैं।

यहा 'मन्दर' शब्द की आवृत्ति भिन्न अर्थों मे है। पहले मन्दर का अर्थ महल हैं दूसरे मन्दर का अर्थ पहाड है।

(४) लाटानुप्रास—जहां पूरे वाक्य की आवृत्ति हो और केवल अन्वय भेद से दूसरा अर्थ लगे वहा लाटानुप्रास होता है जैसे—

'पूत सपूत तो क्यों धन सचय, पूत कपूत तो क्यो धन सचय।'

यहा दोनों पक्तिया एक सी हैं केवल सपून और कपूत के अन्वय से अर्थ में अन्तर पडता है।

अर्थालंकार

अर्थालंकार से काव्य मे अर्थ का चमत्कार होता है।

इन अलंकारों की सख्या सो के लगभग है परन्तु हम केवल यहाँ कुछ का ही वर्णन करेंगे, जैसे—उपमा, रूपक, श्लेष और अतिशयोक्ति आदि।

(१) उपमा—में किसी की समानता दी जाती है। जिसको समानता दी

जाती है उसे उपमेय कहते हैं। जिससे समानता दी जाती है उसे उपमान कहते हैं। समानता प्रकट करने वाला शब्द वाचक कहलाता है। जो उपमेय और उपमान मे एक गुण हो वह समान धर्म है। जैसे—

'नील गगन-सा शान्त हृदय था हो रहा' यहा हृदय उपमेय है, नील गगन उपमान है सो वाचक है, शान्त साधारण धर्म है।

(१) रूपक—रूपक मे उपमेय मे उपमान का आरोप किया जाता है, जैसे

उदित उदय गिरि मच पर, रघुवर बाल पतग।
विकसे सन्त सरोज मन, हर्षे लोचन भृग॥

यहा मच में उदयगिरि का, रघुवर मे बाल पतग का, सतों में कमलो का तथा नेत्रो मे भ्रमर का आरोप हैं। यही रूपकता है।

(२) श्लेष—जहा एक शब्द के अनेक अर्थ हो और पृथक्-पृथक् पक्षो मे उनका अर्थ लगे, जैसे—

माया महा ठगनी हम जानी।
त्रिगन फास लिए कर डोले बोले मधुरी बानी।

यहा त्रिगुण का अर्थ तीन गुण रजोगुण, तमोगुण सतोगुण माया पक्ष में है ठगती के अर्थ में त्रिगुण से तीन गुण वाली रस्सी से अभिप्राय है अतः श्लेष हैं।

(४) अतिशयोक्ति—इस अलकार मे बढा-चढा कर वर्णन किया जाता है जैसे—

हनुमान की पुँछ मे, लगन न पाई आग।
लका सारी जल गई, गये निशाचर भाग॥

यहा पूँछ मे आग लगने से पहले ही लका का जलना प्रगट होने से अतिशयोक्ति है।

(५) सन्देह—सादृश्य के कारण अर्थ मे सन्देह रहे उसे सन्देह अलकार कहते हैं जैसे.—"कोई पुरन्दर की किंकरी है, या किसी सुर की सुन्दरी है।"

(६) दृष्टान्त—उपमेय और उपमान मे,धर्म भिन्नता होते हुए भी अत्यन्त

सादृश भाव के कारण अभेद की प्रतीति होने से दृष्टान्त अलकार होता है जैसे—

"करत-करत अभ्यास के जडमति होत सुजान।
रसरी आवत जात ते सिल पर परत निशान॥

उदाहरण—सामान्य रूप से एक अर्थ की पुष्टि के लिए उदाहरण देना जैसे —"जो रहीम गति दीप की, कुल कपूत गति सोय।
बाले उजियारो लगे बढे अन्धेरो होय॥"

(८) समासोक्ति—प्रस्तुत अर्थ के वर्णन से अप्रस्तुत अर्थ की प्रतीत होने से समासोक्ति अलकार होता है जैसे—

"देखि उदित रवि कमलिनी, लगी मुदित मुस्कान।" —(प्रतीति)

(९) विरोधाभास—विरोध न होने पर विरोध की प्रतीति होने पर 'विरोधाभास अलकार होता है जैसे —

"नैन लगे जब से सुखी, तब से लगत न नैन।"

(१०) अप्रस्तुत प्रशसा—जहाँ अप्रस्तुत के वर्णन द्वारा प्रस्तुत अर्थ को सूचित किया जाय वहा अप्रस्तुत प्रशंसा अलकार होता है—

"जिन दिन देखे वे कुसुम गई सुबीति बहार।
अलि! अब रही गुलाब मे अपत कटीलि डार॥

शब्द शक्ति

अभिधा

जिस शक्ति के द्वारा शब्द के सांकेतिक अर्थ का ज्ञान हो, उसे अभिधा शक्ति कहते हैं। सकेत ईश्वर प्राप्त पुरुष अथवा माता पिता आदि के द्वारा निश्चित किया जाता है। शक्ति के ज्ञान के लिए व्याकरण, कोप, प्राप्त और व्यवहार आदि अनेक उपाय हैं। शब्द का सकेत जिन-जिन अर्थों में होगा, वे सब उनके अर्थ होगे जो शब्द एकार्थक हैं उनके समझाने मे तो कठिनाई नहीं

होती, परन्तु जो अनेकार्थक हैं, उनका निर्णय सयोग आदि से किया जाता है।

अभिधा वृत्ति से बताये जाने वाले अर्थ का सकेत 'रामचरितमानस' नामक बड़ा ग्रन्थ छप रहा है। इस वाक्य मे 'रामचरितमानस' व्यक्तिवाचक बड़ा गुणवाचक, ग्रन्थ जातिवाचक तथा 'छप रहा' है क्रिया है। अभिधा वृत्ति प्रतीत होने वाले अर्थ को अभिधेयार्थ, वाच्यार्थ, मुख्यार्थ, साकेतिकार्थ और प्रसिद्धार्थ भी कहते है।

लक्षणा

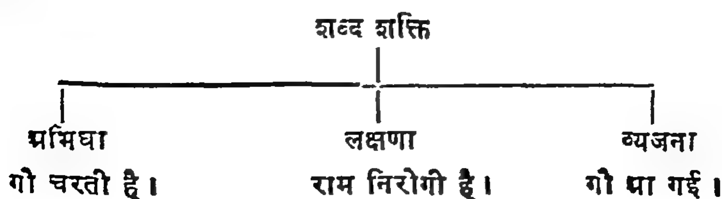
जब किसी शब्द का सीधा सादा अर्थ न लेकर उसके सम्बन्ध या लक्षण का अर्थ लिया जाता है, जैसे "गोविन्द निरा गौ है।" यहाँ गौ से अर्थ पशु न होकर गौ जैसे सरल स्वभाव लक्षण वाले से है ऐसा प्रकट करने वाली शक्ति को लक्षणा शक्ति कहते हैं।

जिन शब्दों के अर्थ लक्षण से सिद्ध होते हैं, उन शब्दो को लक्षक शब्द कहते हैं। यहाँ गौ शब्द लक्षक शब्द है।

व्यंजना

जब शब्द का अर्थ अभिधा तथा लक्षणा से भिन्न ही प्रकट हो तब व्यजना शक्ति होती है, जैसे, 'गौए आ गई'। यहाँ 'गौए आगई' से अभिप्राय 'सायकाल हो गया' से है, ब्राह्मण समझेगा सध्या करो, मजदूर समझेगा अब छुट्टी हुई, दूधिया समझेगा अब दूध निकालो। इस प्रकार इससे कई व्यगार्थ निकलते हैं, इस शब्द-शक्ति को व्यजना शक्ति कहते हैं।

देश, काल और परिस्थिति के अनुसार सिद्ध होने वाले अर्थ को व्यग्यार्थ कहते हैं।



रस

काव्य के अध्ययन में जो अलौकिक आनन्द आता है उसे रस कहते हैं। "रसो वै सः" अर्थात् परमात्मा स्वयं रसस्वरूप है। रस नौ हैं। दसवा रस वात्सल्य और माना जाने लगा है, जैसे शृंगार, हास्य, करुण, भयानक, वीर रौद्र, वीभत्स, अद्भुत, शांत तथा वात्सल्य।

रस का मुख्य भाव 'स्थायीभाव' कहलाता है, ये भी रस के अनुसार दस है —

रस	स्थायी भाव	रस	स्थायी भाव
(१) शृंगार	रति (प्रेम)	(२) हास्य	हसी
(३) करुण	शोक	(४) भयानक	भय
(५) वीर	उत्साह	(६) रौद्र	क्रोध
(७) वीभत्स	घृणा	(८) अद्भुत	विस्मय
(९) शांत	निर्वेद	(१०) वात्सल्य	बालस्नेह

ऊपर के रसों में से हम केवल छः का ही वर्णन करेंगे।

(१) शृंगार रस—में स्त्री पुरुष के परस्पर प्रेम भाव का ही वर्णन होता है। यह प्रेम दो प्रकार से वर्णन किया जाता है संयोग, वियोग (विप्रलम्भ) (१) जहाँ नायक नायिका का मिलन अवस्था का वर्णन हो वह संयोग शृंगार होता है जैसे :—

चितवन चकित चहु दिशि सीता। कहा गये नृप किशोर मन चीता।
लगा ओट तव सखिन लखाये। श्यामल गौर किशोर सुहाये।
देख रूप लोचन ललचाने। हरषे जन निज निधि पहचाने।

यहा सीता जी का प्रेम श्री राम के प्रति प्रकट हो रहा है। (संयोग शृंगार रस है)

अखिया हरि दरसन की भूखी।
कैसे रहें रूप रस राची ये बतिया सुन रूखी।

यहा कृष्ण प्रेमी गोपियो की विरही आखो का वर्णन है (वियोग शृंगार है)

(२) वीर रस—के काव्य में उत्साह, साहस और पराक्रम के कार्यों का वर्णन होता है, जैसे, कवित्त में उदाहरण में दिये गये हैं।

'इन्द्र जिमि जृम्भ पर, बाडव सुग्रम्ब पर, रावण सदम्भ पर रघुकुल राज हैं' यहा शिवाजी के पराक्रम का वर्णन होने से वीर रस है, इसका 'उत्साह' स्थायी भाव है।

(३) रौद्र रस—के काव्य में अन्याय, अपमान, अपकार के प्रति मन में (क्षोभ) क्रोध उत्पन्न होता है, जैसे :—

इस कार्य मे योग दिया भी होगा जिसने।
या सगर्व यह पाप किया भी होगा जिसने॥
या जिसने यह देख लिया हर धनु का खडन।
अभी करूँगा देख उसी के तनु का खडन॥

शिवजी के धनुष को खडित देख कर परशुराम की यह क्रोध भरी उक्ति रौद्ररस की है। 'क्रोध' इसका स्थायी भाव है।

(४) वीभत्स रस—के काव्य मे घृणा उत्पादक, रुधिर, मास, शव, दुर्गन्धि आदि का वर्णन होता है, जैसे—

कहूं शृगाल कोउ मृतक अग पर ताक लगावत।
कहु कोउ शव पर बैठ गिद्ध चट चोंच चलावत॥

यहाँ श्मशान में मुर्दे पर गीदड और गिद्ध का ताक लगाने, चोच चलाने आदि घृणा प्रकट की हैं, अत वीभत्स रस है।

(५) करुण रस—काव्य में जब किसी दिन की दुर्दशा या दुखी अथवा शोक की अवस्था का वर्णन हो तब करुण रस होता है, जैसे—

"दो टूक कलेजे के करता पछताता पथ पर आता।"

इस कविता में भी भिखारी की दीन दशा का बडा दुखपूर्ण वर्णन है, यहा करुण रस है और 'शोक' स्थायी भाव।

(६) हास्य रस—काव्य मे जब किसी के भद्दे रूप या विचित्र वेषभूषा या बातचीत को देखकर मन में हास्य भाव उत्पन्न होता है, तब हास्य रस

माना जाता है, जैसे—

'शक्ल और सूरत की क्या बात थी, उसे देखे भैंसे की माँ माल थी।'

यहाँ किसी काले मोटे आदमी का हास्य पूर्ण वर्णन है, 'हास्य' स्थायी भाव है।

छन्द रचना

मनुष्य अपने भावो को दो प्रकार से प्रगट कर सकता है एक तो गद्य द्वारा दूसरे पद्य के द्वारा। गद्य में लेखको को व्याकरण के कुछ नियमो के अतिरिक्त और किसी नियम का पालन नही करना पडता वे अपने भावों को कितने ही शब्दों से व्यक्त करें यह उनकी ही इच्छा पर निर्भर है। लेकिन पद्य मे कवियो को बहुत-सी सीमाओ मे बधकर लिखना पडता है और बहुत से नियमों का पालन करना पडता है उनका कम से कम शब्दो का प्रयोग करना पडता है। कवियो को छन्द और अलकार के नियमो का पालन करना पडता है।

छन्द या पद्य,—

छन्द वह रचना है। जिसमें अक्षरो अथवा मात्राओ की सख्या निर्धारित हो और गति (लय) तथा यति (विराम का विशेष नियम) हो।

अक्षर —

स्वर तथा स्वर वाले व्यजनो को अक्षर कहा जाता है। छन्द शास्त्र में स्वर हीन अर्थात् हलन्त अक्षर का कोई मूल्य नहीं माना जाता इसलिए अक्षरो की गिनती करते समय केवल स्वर सहित अक्षरो की ही गिनती होती है।

अक्षर दो प्रकार के होते हैं।

लघु और गुरु —

लघु —अ, इ, उ, ऋ यह चार अक्षर लघु हैं और इनका चिन्ह (।) है।

गुरु :—आ, ई, ऊ, ए, ऐ, ओ, औ, अं, अः यह अक्षर गुरु हैं इनका चिन्ह (ऽ) है।

इसका उच्चारण लघु के समान ही होता है जैसे—
फिरि आवहिं एहि बिरियां काली ।
यहा एहि का ए लघु है ।
अनुस्वार (ं) गुरु तथा चन्द्र बिन्दु (ँ) को लघु माना जाता है जैसे .—
हंस और मुंह ।
गुरु का विशेष नियम :—

दीर्घ अक्षर, सानुस्वर, सविसर्ग, सयुक्ताक्षर से पहिला तथा अवश्यकता अनुसार कहीं-कहीं पद के अन्त का अक्षर भी लघु होता हुए गुरु मान लिया जाता है । जैसा .—

दुखित है धनहीन धनी सुखी,
यह विचार परिष्कृत है, यदि ।

नोट—सयुक्ताक्षर से पहिला अक्षर (रि) लघु होता हुए भी दीर्घ मान लिया है । तथा पद के अन्त का अक्षर (दि) लघु होते हुए भी गुरु मान लिया गया हैं ।

मात्रा

मात्रा स्वरो की होती हैं । स्वर दो प्रकार के हैं:—लघु और गुरु इसलिए मात्रा भी दो प्रकार की हैं । (१) लघु और (२) गुरु

[१] लघु स्वर की एक मात्रा होती है इसका चिन्ह यह (|) है ।

अ इ उ ऋ ये लघु स्वर हैं, इन प्रत्येक की एक-एक मात्रा है ।

| | | |

[२] गुरु स्वर की दो मात्रा होती है जिन का चिन्ह यह (ऽ)

(1) है । आ, ई, ऊ, ए, ओ, औ, ये गुरु स्वर है, इनमें प्रत्येक की दो-दो मात्रा हैं । ऽ ऽ ऽ ऽ ऽ ऽ

व्यजन की मात्रा नही होती। जब व्यनज में लघुस्वर होता है तब उसकी लघु (एक) मात्रा होती है, जैसे :—

(i) क, कि, कु, इनकी लघु (एक) मात्रा है।

(ii) लघु स्वर यदि कई व्यजनो वाले अक्षर में हो तब भी एक मात्रा होती है, जैसे,—स्वल्प, अगस्त्य, इन दोनों शब्दो में यह स्व, ल्प, स्त्य, तीनों सयुक्त अक्षरो मे केवल 'अ' लघु स्वर है अतः इनमे प्रत्येक की एक-एक मात्रा है और इनका वर्ण भी एक-एक माना जायेगा।

(iii) जिस व्यजन में दीर्घ स्वर मिला हो तो उसकी दो मात्रा होती हैं।

जैसे—का, की, कू, के कै, को, कौ। यहाँ प्रत्येक व्यजन की दो मात्रा हैं। S S S S S S S

(iv) अनुस्वर ( ) और विसर्ग (:) की भी गुरु (दो) मात्रा होती हैं, जैसे बदर, अत व और त. की दो-दो मात्रा हैं। किन्तु अर्धचन्द्र की एक मात्रा होती है। जैसे, हंस।

(v) सयुक्त अक्षर का पहला लघु होने पर भी गुरु होता है उसकी भी दो मात्रा होती हैं जैसे :—

सत्य, भक्त में स और भ लघु होने पर भी गुरु हैं अत. इनकी दो-दो मात्रा हैं।

मात्रा

लघु	गुरु
। । । ।	S S S S S S S S S S
अ, इ, उ, ऋ	आ ई ऊ ए ऐ ओ औ अ अः
क कि कु कृ	का की कू के कै को कौ क कः

छन्द शास्त्र में स्वर तथा स्वर सहित व्यंजन को वर्ण माना है, जैसे, 'अगस्त्य' यह शब्द वर्ण है —

अ+ग+स्त्य। यहां 'स्त्य' वर्ण में तीन व्यंजन स्+त्+य होना पर भी स्वम 'अ' सब मे मिला होने से 'स्त्य' एक ही वर्ण है।

दग्धाक्षर—झ, ह, र, भ और ष ये पाँच अक्षर दग्धाक्षर कहलाते है। ग्रंथ के नाम के प्रारम्भ में इन अक्षरो का प्रयोग अशुभ माना जाता है।

दोषपरिहार—देव वाचक तथा मंगलसूचक शब्दों के प्रारम्भ में तथा

झार खण्ड मे बसत हैं वैजनाथ भगवान।

यति—ठहराव को यति कहते हैं। छंद मे किसी निश्चित मात्रा तथा गण संख्या पर विराम ठहराव होता है।

गति—छन्द की लय को गति कहते हैं। प्रत्येक छन्द एक विशेष प्रकार से बोला जाता है।

गतिभंग—लय के टूट जाने को गति भंग दोष कहते हैं यह ऐसा महान् दोष है कि इसके आ जाने पर किसी कविता को कविता नही कहा जा सकता चाहे उसमें कविता के सभी गुण विद्यमान हैं।

जैसे—आगे परा गीधपति देखा।

ऽ ऽ । ऽ ऽ । । । ऽ ऽ = १६ मात्रा

इस चौपाई में सोलह मात्रायें हैं और एक विशेष प्रकार की लय है यदि इसे बदल कर।

"परा देखा आगे गीधपति।"

इस प्रकार कह दिया जाये तो भी इसकी मात्राओं में कोई अन्तर नहीं आता परन्तु इसकी लय सर्वथा टूट जाती है अतः यहां गतिभग दोष माना जायेगा।

यति—कविता को उच्चारण करते समय बीच-बीच में कही कही कुछ देर रुकना पडता है। उस विराम वा ठहराव को ही यति कहते हैं। यति से कविता के उच्चारण मे सुन्दरता तो आ ही जाती है साथ ही बोलने में भी सुविधा रहती है।

यतिभग—यति सदा पद के अन्त मे आनी चाहिए। शब्द के बीच मे यति आने से यति भग दोष माना जाता है।

जैसे—हरिहर केशव मदन, मोहन घनश्याम सुजान।

गण

सामान्यतः गण का अर्थ समुदाय छन्द शास्त्रियो ने छन्द शास्त्र को सरल बनाने के लिए तीन-तीन अक्षरो के समुदाय को गण मान लिया है। तीन लघु तथा गुरु अक्षर एक साथ केवल आठ प्रकार के ही लिखे जा सकते है। इस लिए गण भी आठ माने जाते हैं।]

मगण	S S S	यगण	। S S
रगण	S । S	सगण	। । S
तगण	S S ।	जगण	। S ।
भगण	S । ।	नगण	। । ।

य माता राज भा न स ल गा।

विशेष—

गणों के लघु गुरु क्रम को याद रखने का सूत्र यह है—

'य माता राजभान सलगा' जिस गण का रूप जानना है। उस गण के प्रथम अक्षर को इस सूत्र मे देखो और उसके बाद आगे को दो अक्षर जोड़ दो उसी गण का रूप बन जायेगा।

जैसे—सगण का रूप 'सलगा' इसमें । । S क्रम है यहां सगण का रूप अन्त में (गुरु) हुआ।

पद या चरण—

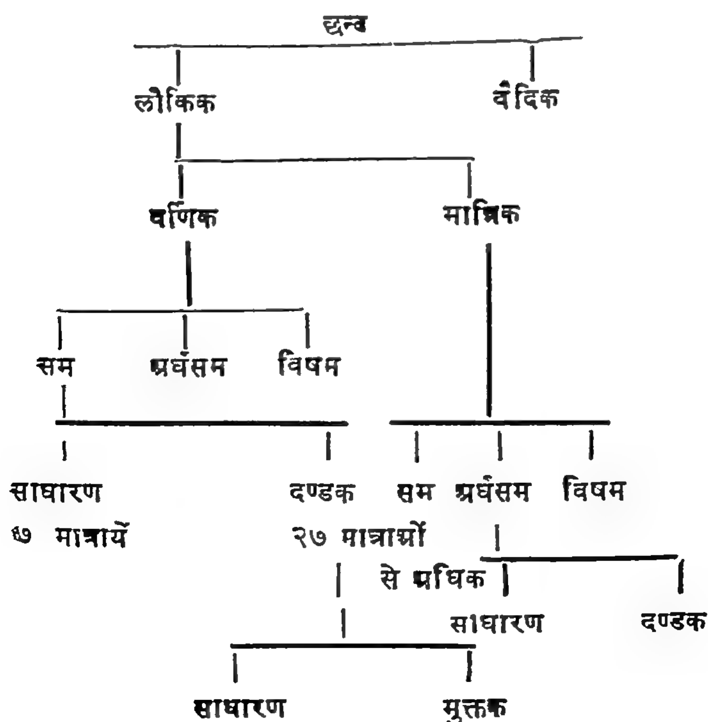
छन्द के टुकडों या पंक्तियों को पद या चरण कहते हैं। छन्द में प्रायः चार चरण होते हैं। पहले और तीसरे (१, ३) चरण को विषम तथा दूसरे चौथे (२, ४) को सम चरण कहते हैं।

तुक—छन्द के प्रत्येक चरण के अन्त में एक विशेष लय या स्वर बंधा होता है उसे तुक कहते हैं जैसे —

उदाहरण—शीश मुकुट कटि काछनी, कर मुरली उर माल।
यह बाजक मो मन बसो, सदा विहारी लाल॥

छन्द के भेद

छन्द के मुख्य रूप से निम्नांकित भेद होते हैं—



मात्रिक छन्द

दोहा—(क) दोहे में २४ मात्रामे होती हैं। इसके विषम चरणों (१-३) में १३-१३ मात्रायें होती हैं तथा सम चरणों (२-४) में ११-११ मात्राए होती हैं। विषम चरणों के आदि मे जगण (ISI) नही होता और समचरणों के अत में गुरु लघु (ISI) वर्ण आने चाहिएँ। जैसे, —

दोहा—जो रहीम गीत दीप की, कुल कपूत गति सोय।
बारे उजियारे करे, बढ़े अधरो होय॥

(ख) सोरठा—यह छन्द दोहे का उलटा होता है। इसमे भी २४ मात्रायें होती है। इसके पहले और तीसरे चरणों मे ११-११ मात्रायें होती हैं और अन्तिम तुक विषम चरणो मे होती हैं। सम चरणो मे १३-१३ मात्रायें होती हैं। यति ११ वीं मात्रा पर होती हैं। जैसे —

सोरठ—रहिमन मोहि न सुहाय, अमिय पियावत मान बिन।
जो विष देय बुलाय, मान सहित मरिवो भलो॥

रोला—इस छन्द में २४ मात्रायें होती हैं ११ वी मात्रा पर यति होती है। अंत में तुक होती है। इसकी गीत दोहे से भिन्न हैं जैसे, :—

रोला—कब प्रकटोगे श्याम, दीन भारत हित प्यारे।
जायेंगे अन्याय स्वार्थ, दानव कब मारे
है बन्दी यह मातृ-भूमि, कब मुक्त करोगे।
अपना प्यारा देश धर्म से युक्त करोगे।

चौपाई—इस छन्द के प्रत्येक चरण में १६ मात्रायें होती है।
चरण के अत में जगण (ISI) और तगण (SS) नहीं होना चाहिये। इसके चारो चरण समान मात्रा वाले होते हैं। जैसे —

चौपई—रघुकुल रीति सदा चलि आई। प्राण जाहि पर वचन न जाई॥
नहि असत्य सम पातक पुजा। गिरि सम होइ कि कोटिक गुजा॥

सूचना—जिन छन्दो के विषम (१-३) तथा सम (२-४) चरण क्रमशः मात्रा के हो वे अर्धसम छन्द कहलाते हैं : जैसे दोहा, सोरठा। जिन छन्दों के चारो चरण समान हो वे सम छन्द कहलाते हैं, जैसे, चौपाई।

(अर्धसम) दोहा, सोरठा, रोला। चौपाई (समछन्द)
२४ २४ २४ १६

वार्णिक छन्द

(१) जिन छन्दों की रचना वर्णों की सख्या या गणों के क्रम के अनुसार हो उसे वार्णिक (वृत्त) कहते है।

(२) दण्डक तथा मुक्तक—यदि वार्णिक छण्द २६ वर्णों से अधिक हो तो उसे दण्डक कहते हैं।

(३) मुक्तक—वह दण्डक जिसमें वर्ण सख्या ही नियत हो गुरु, लघु या गणों का नियम न हो वह मुक्तक है।

मत्त गयद—मत्त गयद के प्रत्येक चरण में सात भागण (ऽ।।) और अत में दो गुरु (ऽऽ) वर्ण होते हैं। यह २३ वर्ण का छन्द है, जैसे :—

मत्तगयद—जाल प्रपच पसार घने कुल गौरव का उर फाड रहा।
मानव मडल मे मिल दाहक दुष्ट दहाड रहा।।
जाति समुन्नति की जड को कर घोर कुकर्म उखाड रहा है।
जूल गया प्रभु शकर को जड जीवन जन्म बिगाड रहा है।।

सवैया—(१) सवैया कोई खास छन्द नहीं होता बल्कि २२ से २६ वर्ण तक के सब छन्द 'सवैया' कहलाते हैं।

विशेष—स्वछन्द—छन्द में मात्रा गण आदि का बन्धन नहीं होता, केवल यति का ही ध्यान रखा जाता है, जैसे :—

दो टूक कलेजे के करता पछताता पथ पर आता ।
पेट पीठ दोनो मिलकर है एक चल रहा लकुटिया टेक,
मुट्ठी भर दाने को भूख मिटाने को,
मुंह फटी पुरानी झोली को फैलाता—
दो टूक कलेजे के करता पछताता पथ पर आता ।

हिन्दी साहित्य का इतिहास

जननी जन्म भूमि भारत भूमि में अनेक भाषाएं प्रचलित हैं । हम लिखने तथा बोलने में जिस भाषा का व्यवहार करते हैं उसका नाम 'हिन्दी' है । हिन्दी का इतिहास मनोरंजन होने के साथ-साथ विज्ञान सम्मत भी है । हिन्दी भाषा की भाँति हिन्दी साहित्य का इतिहास भी अत्यंत रोचक और रंगीन है ।

हिन्दी तथा हिन्दी साहित्य के विषय में अनेक प्रामाणिक पुस्तकें इस समय उपलब्ध हैं । मिश्र बन्धुओं का 'मिश्रबन्धु विनोद' पं० रामचन्द्र शुक्ल का 'हिन्दी साहित्य का इतिहास,' डा० रामकुमार वर्मा का हिन्दी का आलोचनात्मक इतिहास, डा० सूर्यकान्त शास्त्री का 'विवेचनात्मक इतिहास,' आचार्य चतुरसेन शास्त्री का 'हिन्दी भाषा और साहित्य का इतिहास' सचमुच उच्चकोटि के ग्रन्थ हैं ।

आचार्य हजारीप्रसादद्विवेदी की 'हिन्दी साहित्य की भूमिका' एक अलौकिक खोजपूर्ण तथा नई दिशा का नया संकेत है । 'हिन्दी साहित्य का इतिहास' आचार्य तथा एम० ए० जैसी उच्च श्रेणियों को विधिवत् पढ़ाया जाता है । माध्यम श्रेणी के छात्रों के लिए भी गुलाब राय एम० ए०, व्रजरत्न लाल, डा० श्यामसुन्दर दास तथा अनेक सिद्धहस्त विद्वानों द्वारा सम्पादित संक्षिप्त संस्करण भी उपलब्ध हैं । हिन्दी तथा हिन्दी साहित्य का इतिहास मौलिक, प्रमाणित धुरी रूप में एक ही है—पं० रामचन्द्र शुक्ल द्वारा प्रणीत । शेष सभी इतिहास उक्त पुस्तक की व्यवस्थायें हैं अथवा ऊहापोहात्मक विचार मात्र हैं । हां, आचार्य द्विवेदी प्रणीत 'हिन्दी साहित्य की भूमिका' अवश्य आचार्य शुक्ल से एक दम विभिन्न मत प्रकाशित करती है ।

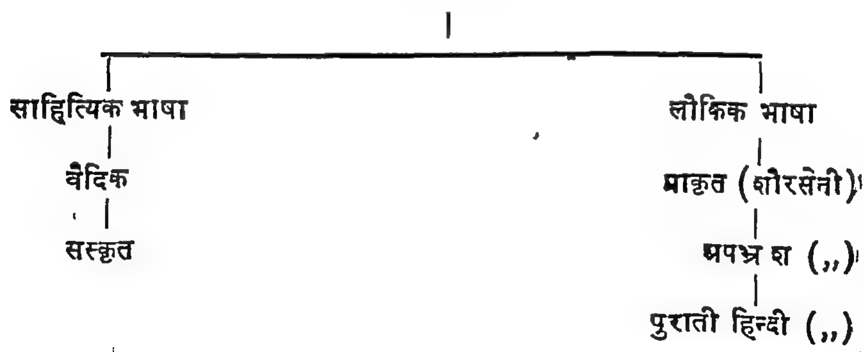
इन सभी प्रकार के इतिहास ग्रन्थो को सरलतम विधि में उपस्थित करने के लिए, पाठ्य विषय के ग्रन्थो को अधिकाधिक सुलझाने के लिए वह चित्रमय हिन्दी साहित्य छात्रो के विशेष उपकार के लिए प्रकाशित किया जा रहा है। मध्यम श्रेणी के छात्र इसके द्वारा विषय को अधिकाधिक हृदयगम कर सकेंगे, उच्च श्रेणी के छात्र भी इससे परम लाभ उठा सकेंगे, ऐसा लेखक का विश्वास है। आइये हिन्दी और साहित्य के विषय की गम्भीर तथा सूक्ष्म उलझनें सुलझाए, तथा विना प्रयत्न झंझट के पाठ्य विषय को अधिक सरलता पूर्वक हृदयगम करें।

हिन्दी भाषा

एक समय था, जब भारतवर्ष में एक ओर से दूसरी ओर तक केवल एक ही भाषा प्रयोग में लाई जाती थी। वह थी सस्कृत। अभी कुछ विद्वान इस बात को सवाश तो मानने के लिए तैयार न होगे। पर खोज और अध्ययन के आधार पर वे आज नही, कल इस निश्चय तक अवश्य पहुँच जायेंगे। यह सस्कृत तत्काल दो रूप में विभक्त हो गई—(१) बोलचाल की भाषा। (२) सहित्य की भाषा। साहित्य की भाषा पहले "वैदिक भाषा" कहलाई और बाद में व्याकरण द्वारा सस्कार कर देने पर उसका रूप बिल्कुल साफ-सुथरा हो गया, जो 'सस्कृत' के नाम से आज तक व्यवहृत हो रही है।

बोलचाल की भाषा का नाम 'प्राकृत पडा'। यह प्राकृत मानव प्रवृत्ति के ढाचे में ढाली जाकर प्राकृत कहलाई। मानव-प्रकृति के तीन अग हैं। यथा—१. समय, २ सभ्यता, तथा ३. जलवायु। इन तीन कारणों से प्राकृत पाच भागो मे विभक्त हो गई, यथा—शौरसेनी, मागधी, अर्धमागधी पैशाची तथा महाराष्ट्री—ये नाम वैज्ञानिक नहीं हैं। अपितु प्रादेशिक हैं। प्रदेशानुसार रंग-ढग बदल गया तथा उनके अनुरूप ही उसका नाम भी पड़ा। शौरसेनी का व्यवहार क्षेत्र सबसे बडा था।

समय, सभ्यता तथा जलवायु का उपक्रम यहीं समाप्त नहीं हो जाता। इनके भाषा में विकार भी पैदा होने लगा। भाषा के विगड़ने में 'समय' का बडा हाथ है। 'घर' एक शब्द है, 'गृह' का विगडा हुआ रूप है। 'गृह-ग्रह-गहर-गर-घर' इस एक लम्बी चौडी विकार-परम्पार में केवल 'समय' का हेर–फेर है। 'सभ्यता' की विषमता से भी भाषा बिगड जाति है। 'सुपठित' पढेगा—'मच', इसी को अनपढ कहेगा—'मज' या (मंझा) 'जल-वायु' के हेर-फेर उच्चारण बदल जाता है, पजाबी पढेगा– 'भ (प) वन' से राजस्थानी पढ़ेगा— भवण उच्चारण के बदल-बदल मे जलवायु का प्रभाव है। समय, सभ्यता तथा जलवायु के प्रभाव से प्राकृत से 'अपभ्र श' भाषा पैदा हुई। समय, सभ्यता तथा जलवायु के प्रभाव से अपभ्र श में फिर विकार पैदा हुआ, इससे नई भाषा पैदा हुई, जिसका नाम पुरानी हिन्दी रख सकते हैं, इसका चित्र यह उत्तरेगा।



मागधी, अर्धमागधी, तथा पैशाची का क्षेत्र जलवायु तथा सभ्यता के कारण एक दंम स्वतन्त्र हो गया, शौरसैनी—प्राकृत से शौरसेन—अपभ्रंश पैदा हुई। इसी से हमारी हिन्दी भाषा का जन्म माना जाता है। परन्तु—

शौरसेनी प्राकृत की अपभ्रंश से हिन्दी एक दम पैदा नहीं हुई। आज से १२०० वर्ष पूर्व यवनों के आक्रमण होने लग गये थे। वे अपने साथ अरबी, फारसी तथा अपभ्रंश भाषा लाए थे। अरबी-फारसी तथा अपभ्रंश के सम्पर्क से एक सुघटित तथा सुन्दर भाषा का जन्म हुआ।

जिसका नाम है—'हिन्दी।'

अरबी+फारसी+अपभ्रंश=हिन्दी अतः यह सुगमता से निकलता है कि—

१ हिन्दी का जन्म आज से १२०० वर्ष पूर्व हुआ।

२ अरबी, फारसी तथा शौरसेनी—अपभ्रंश के सम्पर्क से हुआ।

३ हिन्दी का क्षेत्र उत्तर-पश्चिमी सीमा तक रहा। हिन्दी के विकास में मुसलमानों के सहयोग की जो बात स्मरण की जाती है, यह इतनी है कि उनके सम्पर्क से अरबी-फारसी का रंग अपभ्रंश पर अवश्य चढ गया। यदि यवन—संक्रमण न हुआ होता तो अपभ्रंश से जो भाषा पैदा होता, उसका रूप रंग आज की हिन्दी से अलग-अलग ही रहता मुसलमान इसे 'उर्दू' कहते हैं। 'उर्दू' शब्द पडाव के अर्थ में आता है। विविध देश के सैनिक एक स्थान पर 'छावनी' डालकर पडे हो और उन की विभिन्न बोलियों के सम्पर्क से पैदा होने वाली भाषा 'उर्दू' है। भावो की समानता एक-सी है।

जलवायु, सभ्यता तथा समय का प्रभाव अमोघ है। अपभ्रंश तथा अरबी-फारसी के सम्पर्क से उत्पन्न हिन्दी ने जन्म से कुछ ही काल पीछे अनेक रूप ग्रहण किये।

जिनके नाम इस प्रकार से हैं।

१. खडी बोली

२. ब्रज।

३. अवधी।

४. राजस्थानी।

५. पजाबी।

६. लहड़ा (मुल्तानी)

७. मारवाडी।

८. छत्तीसगढ़ी (मैथली)।

काल संख्या नाम	भेद	गद्य पद्य	छन्द	कवि वृति	रचना	इतिहास	भाषा	समय	प्रमुख कवि
१. वीर गाथा काल	×	पद्य	वार्णिक	बहिर्मुखी	विषय प्रधान	यवन आक्रमण यवनराज्य	अपभ्रंश देश भाषा	सवत् १०५० से १३७५	चन्द्रबरदाई जगनिक नाल्ह खुसरो विद्यापति
२. भक्ति काल	निर्गुण प्रेम मार्गी राम भक्ति कृष्णभक्ति	पद्य	मात्रिक गीत	अन्तर्मुखी	भाव प्रधान	य [illegible] ज्य	ब्रज	१३७५ से १७००	कबीर, नानक, दादू, जायसी, कुतभन मझन गो॰ तुलसी-दास, भक्त रामू, सूरदास, मीरा
३. रीति काल		पद्य	वार्णिक	बहिर्मुखी	विषय प्रधान	यवन राज्य	ब्रज	१७०० से १९००	केशव, बिहारी, भूषण मतिराम, चिंतामणि, देव, पद्माकर ग्वाल कवि, इत्यादि
४. आधु-निक काल		गद्य पद्य	मात्रिक (प्रगति)	अन्तर्मुखी	भाव प्रधान	अंग्रेजी राज्य	खडी	१९०० से अब तक	भारतेन्दु प्रसाद युग के मुख्य साहित्यकार अनेक हैं जिनका विवरण आगे दिया गया है।

हिन्दी भाषा का वंश-वृक्ष

आदि भाषा वैदिक संस्कृत (वेद, वेदांगो की भाषा)

लौकिक संस्कृत (रामायण, महाभारत आदि की भाषा)

प्रथम प्राकृत (मूल भाषा या प्राकृत भी इसे ही कहते हैं)

दूसरी प्राकृत (यह चार भागो में बट गई)

अर्ध मागधी (कौशल की भाषा) | मागधी (मगध की भाषा) | शौर सेनी (मथुरा तथा ग्वालियर के निकट की भाषा) | महाराष्ट्री (महाराष्ट्र की भाषा)

इन सब ने अपभ्रंश का रूप ले लिया, जिसके तीन भाग हो गए।

नागर (राजस्थानी तथा गुजराती मूल आधार) | ब्राचड (यह सिंध मे प्रचलित थी) | उपनागर (यह नागर तथा ब्राचड का मिश्रण थी और राजपूताने तथा पंजाब मे बोली जाती थी)

पूर्वी हिन्दी (इससे अवधी निकली) | पश्चिमी हिन्दी (इससे ब्रज भाषा पैदा हुई)

इन दोनो का स्थान खड़ी बोली ने ले लिया, मेरठ, देहली इनके केन्द्र हैं। यही आज हमारे साहित्य की भाषा है।

हिन्दी- साहित्य के इतिहास में साहित्य की विभिन्न धारायें

(स० १०५० वि० से अब तक)

३२५ वर्ष | ३२५ वर्ष | २०० वर्ष

(१०५० से १३७५) वीरगाथा काल, (वीरगाथा प्रधान)

(१३७५-१७००) भक्ति काल (भक्ति प्रधान)

(१७००-१९००) रीतिकाल, (लक्षण तथा शृंगार प्रधान)

(१९००से-अब तक) आधुनिक काल (गद्य प्रधान)

निर्गुण भक्तिधारा

सगुण भक्तिधारा

ज्ञानाश्रयी शाखा, प्रेमाश्रयी शाखा रामभक्ति कृष्ण भक्ति शाख

सूफी शाखा

गद्यरूप

नाटक, कहानी, उपन्यास, निबन्ध, आलोचना जीवन चरित्र

पद्यरूप

पद्यगीत, भक्तिवाद, साम्यवाद रहस्यवाद, छायावाद, निराशावाद, प्रतीकवाद, प्रगतिवाद,

हिन्दी साहित्य के इतिहास के विभिन्न कालों की विशेषताएँ

वीर गाथा काल की विशेषताएँ—

१. इस काल की कविता राजाश्रित रही। राजाओं के आश्रित रहने वाले लोग अपने आश्रयदाताओं का यश बखान कर उनके दिए पुरस्कार के आधार पर अपना जीवन बिताते थे।

२ इस काल की भाषा बडी ओजपूर्ण है।

३ इस काल के सभी कवियो ने अपने ग्रथो मे युद्ध के वर्णन किये हैं। इस नारी कल्पना ने वीर-रस और युद्ध-कारण नारी को माना गया है। इस नारी कल्पना ने वीर-रस श्रृंगार की सुन्दर पुट दे दी है।

४. इस काल में कल्पना की बहुलता रही है। साधारण घटनाओ भी बहुत बढा चढा कर उपस्थित किया गया है। अत्युक्ति-पूर्ण प्रशसाएं युग की एक साधारण-सी बात है।

मुख चारण या भाट होते थे इसलिए कई विद्वान इस काल को चारण काल, कहने में भी नहीं हिचकते।

इस काल के प्रमुख कवि— (१) चन्दबरदाई, ( ) जगनिक (३) मधुकर (४) गोरखनाथ, (५) अमीर खुसरो तथा (६) नरपति नाल्हा विद्यापति।

(भक्तिकाल)

ज्ञानाश्रयी (सन्त) कवियों की विशेषताएँ

१ ज्ञानाश्रयी कवियों की सबसे प्रमुख विशेषता यही है कि वे प्राय सभी अनपढ़ और निरक्षर रहे हैं। प्राय सभी का ज्ञान केवल सुनी-सुनाई बातों पर आश्रित है।

२. इस काल के सभी कवि पहले उपदेशक हैं, पीछे कवि। उनका ध्येय तो केवल अपने सिद्धान्तों का प्रतिपादन है। कविता तो कथन का आधार मात्र है।

३ इस धारा के प्राय सभी सन्तों ने अपना अलग मत चलाया और अपने को भगवान का दूत बतलाया। एकेश्वर वाद का प्रचार किया गया और मूर्ति पूजा का विरोध किया गया है। नारी को माया मानकर उसकी आलोचना की गई है।

४ इस धारा के प्राय सूफी कवि नीची जाति के हैं। जाति पाँति के विरोधी हैं और हिन्दू मुसलमान का भेद अवांछनीय बताया गया है।

५ गुरु को ईश्वर से भी बढ़ कर स्थान दिया गया है।

हिन्दी साहित्य के इतिहास के विभिन्न कालों की विशेषताएँ

वीर गाथा काल की विशेषताएँ—

१. इस काल की कविता राजाश्रित रही। राजाओं के आश्रित रहने वाले लोग अपने आश्रयदाताओं का यश बखान कर उनके दिए पुरस्कार के आधार पर अपना जीवन बिताते थे।

२ इस काल की भाषा बड़ी ओजपूर्ण है।

३ इस काल के सभी कवियो ने अपने ग्रथो में युद्ध के वर्णन किये हैं। और युद्ध-कारण नारी को माना गया है। इस नारी कल्पना ने वीर-रस में शृंगार की सुन्दर पुट दे दी है।

४ इस काल में कल्पना की बहुलता रही है। साधारण घटनाओं को भी बहुत बढा चढा कर उपस्थित किया गया है। अत्युक्ति-पूर्ण प्रशसाएँ इस युग की एक साधारण-सी बात है।

५. यद्यपि इस काल के चारण-भाटो ने ऐतिहासिक आधार पर रचनाएँ की हैं लेकिन फिर भी ऐतिहासिक तत्वो को निभाया नही।

६. इस काल के कवियों की विशेष रचना 'डिंगल' में हुई है। वैसे इस काल मे भाषा का कोई स्थिर रूप नही आया था। सस्कृत, प्राकृत, अपभ्रंश के साथ अरबी, फारसी तक का मिश्रण चल रहा था।

७. इस काल की प्राय सभी रचनाओ में समय-समय पर मिलावटें होती रही हैं। इन क्षेपकों के मिश्रण के कारण वास्तविकता का भेद खुलना कठिन हो जाता।

८. इस काल के कवियो का आश्रय केवल राज दरबार में था। ये कवि

मुख चारण या भाट होते थे इसलिए कई विद्वान इस काल को चारण काल, कहने में भी नहीं हिचकते।

इस काल के प्रमुख कवि— (१) चन्दबरदाई, ( ) जगनिक (३) मधुकर (४) गोरखनाथ, (५) अमीर खुसरो तथा (६) नरपति नाल्हा विद्यापति।

(भक्तिकाल)

ज्ञानाश्रयी (सन्त) कवियों की विशेषताएँ

१ ज्ञानाश्रयी कवियों की सबसे प्रमुख विशेषता यही है कि वे प्राय सभी अनपढ़ और निरक्षर रहे हैं। प्रायः सभी का ज्ञान केवल सुनी-सुनाई बातों पर आश्रित है।

२. इस काल के सभी कवि पहले उपदेशक हैं, पीछे कवि। उनका ध्येय तो केवल अपने सिद्धांतों का प्रतिपादन है। कविता तो कथन का माध्यम मात्र है।

३ इस धारा के प्राय सभी संतों ने अपना अलग मत चलाया और अपने को भगवान का दूत बतलाया। एकेश्वर वाद का प्रचार किया गया और मूर्ति पूजा का विरोध किया गया है। नारी को माया मानकर उसकी आलोचना की गई है।

४ इस धारा के प्राय सूफी कवि नीची जाति के हैं। जाति पाँति के विरोधी हैं और हिन्दू मुसलमान का भेद अवांछनीय बताया गया है।

५ गुरु को ईश्वर से भी बढ़ कर स्थान दिया गया है।

६. इस धारा के कवियों की कविताओं मे रहस्य वाद की अच्छी पुट झलकती है। प्रेम की सात्विक पीर प्रभावोत्पादक रही है।

७. इन सन्त कवियो ने अपनी रहस्य भावनाओ को रूपक और उलट वासियो द्वारा प्रकट किया है, इसी के द्वारा उन्होंने अपने शिष्यों को प्रभावित करने का उद्योग किया है।

८. इस काल के सभी कवियों ने पडितो, मुल्लाओं ने वेद पुराण और बाह्याडम्बरो को खूब पेट भर कर कोसा है। और रूढ़ियो को नष्ट करने का उद्योग किया है।

९ भाषा और साहित्य से अपरिचित होने के कारण इस काल के कवियों की भाषा सयत नही रह सकी है। भाषा भी उनके सधुक्कडी अक्खड़पन की भाँति सधुक्कड़ी ही है।

इस धारा के प्रमुख कवि—(१) कबीर (२) नानक (३) रैदास (४) धर्मदास, (५) दादूदयाल, (६) सुन्दरदास, (७) और मलूकदास।

प्रेम मार्गी शाखा (सूफी कवि) की विशेषताएँ—

१ इस धारा के प्राय: सभी कवि मुसलमान सत हैं जिन्होने प्रमाण द्वारा हिन्दू धर्म का कुछ न कुछ ज्ञान प्राप्त किया था।

२ इस काल के सभी कवियों ने प्रेम कथानक लिखे हैं। कई स्थानों पर इन कथाओ में ऐतिहासिक आधार लिया गया है। परन्तु कल्पना भी उसमें कम नहीं है।

३ इन लौकिक कथाओं के आधार पर परमात्मा के प्रति प्रेम की सच्ची पीर की अनुभूति दी गई है। और ऐसा करने मे प्राय अन्योक्तियो का आधार लिया गया है।

५. इस काल के कवियो मे अपनी रचनाएँ फारसी मसनवियो के ढग पर की हैं।

५. इस काल के सभी कवियो ने अपनी रचना अवधी में की है।

६ इन प्रेम-मार्गी-कवियो ने प्रबन्ध काव्य ही लिखे हैं। ज्ञान मार्गी-शाखा वालो की तरह मुक्त रचना नहीं की है।

७ इस काल के कवि भी रहस्यवाद लेकर प्रस्तुत हुए हैं परन्तु इनका रहस्यवाद में ज्ञानमार्गी कवियो के रहस्यवाद से कुछ भिन्नता रहती है। भारतीय रहस्यवादी, जहाँ आत्मा को पत्नी और परमात्मा को पति के रूप में देखते हैं, वहा पर सूफी कवि अल्लाह मियाँ को बीवी बनाकर खुद खाविंद बन बैठते हैं।

प्रेम मार्गी शाखा के प्रमुख कवि

१. कुतबन २. मझन ३ जायसी ४ उसमान ५. शेखनबी ६ कासिमशाह।

राम भक्ति-शाखा (भक्त कवि) के कवियों की विशेषताएँ

१ इस धारा के कवियों ने वैष्णव के सिद्धान्त के अनुसार राम को विष्णु का अवतार मान कर सेवक सेव्य भाव की उपासना पर जोर दिया है।

२ राम-भक्त कवियो ने भक्ति को ज्ञान और कर्म से श्रेष्ठ माना है।

३. भक्ति में सगुण-भक्ति को ही स्थान दिया है और कहा गया है कि निर्गुण भक्ति मे ध्यान लगाना ही असम्भव है।

४ वर्ण और आश्रम व्यवस्था की मर्यादा पालन करने पर जोर दिया गया है।

५ इस धारा मे शुद्ध भारतीय साधना-पद्धति तथा रचना शैली को स्थान मिला है। ज्ञान मार्गी और प्रेम मार्गियो की रहस्य भावना और अटपटी वणी के लिये यहाँ कोई स्थान न था।

६ इस धारा के कवियों के द्वारा प्रमुख रूप से अवधो और गौण रूप से बृजभाषा ग्रहण की गई है।

७. "मुक्तक" और "प्रबन्ध' दोनो ही प्रकार की रचनाएँ इस युग मे हुई हैं।

इस धारा के प्रमुख कवि

१ तुलसीदास २ अग्रदास ३ नाभादास ४ प्राणचन्द चौहान ५ हृदयराम।

कृष्ण भक्ति शाखा के कवियों की विशेषताएँ

१ इस धारा के प्रमुख कवियो ने प्राय मुक्तक गीत ही लिखे हैं। प्रबन्ध काव्य या तो इस काल मे लिखे ही नही गये और यदि लिखे भी गये तो सफल नही हो सके।

२. कृष्ण भक्त कवियो ने भगवान कृष्ण के माधुर्य और वात्सल्य रूप का ही चित्रण किया है। कृष्ण के चरित्र को गौओ, ग्वालो गोपियो और मुरली तक ही परिमित रखा हैं। कृष्ण के जीवन मे यह व्यापकता नही आने दी जिस के आधार पर महाकाव्य का निर्माण हुआ करता हैं।

३ कृष्ण काव्य मुख्यत ब्रजभाषा मे ही लिखा गया क्योकि इस धारा के प्रवर्तक वल्लभाचार्य ने ब्रज में गद्दी स्थापित करके उस स्थान को प्रचार-केन्द्र बना लिया था। इसलिए ब्रज की भाषा से ही इस धारा का अधिक सम्बन्ध रहा।

४. रामभक्ति शाखा वालो की तरह इस शाखा के कवियो ने भी ज्ञान और कर्म की जगह भक्ति को ही प्रधानता दी।

५ इस काल के मुख्य कवियो ने भ्रमर-गीत लिख कर ज्ञान और योग की मिट्टी पलीत की हैं और सगुण भक्ति को श्रेष्ठ सिद्ध किया है।

६ इस धारा के कवियो मे सखा भाव की भक्ति रही हैं। भगवान कृष्ण को यहाँ पर एक-मात्र पुरुष माना गया हैं। शेष संसार उनकी उपासना करने वाली गोपियो के रूप मे है।

इस धारा के प्रमुख कवि

१ सूरदास २ नन्ददास ३. कुंभनदास ४ परमानन्द ५ कृष्णदास ६ मीरा ७ रसखान ८ नरोत्तमदास ९. रहीम खान खाना १० गंगाभाट ११. सेनापति १२ नरहरि 'बंदीजन' ताज ।

रीति काल के कवियों की विशेषताएँ

१ यह काल शृंगार के लिए प्रसिद्ध रहा है। जितनी विवेचना शृंगार रस की इस काल में हुई उतनी अन्य किसी भी रस की अन्य किसी भी काल में नहीं हुई।

२ इस काल के प्राय सभी प्रसिद्ध कवियों ने लक्षण ग्रन्थों का निर्माण किया। ये लक्षण ग्रन्थ छन्द अलंकार, रस तथा नायिका भेद पर आधारित हैं।

३. इस काल की कविता प्राय मुक्तक छन्दों में हुई है। प्रबन्ध काव्यों का प्राय अभाव-सा रहा है। दोहे, कवित्त और सवैये का इस काल में विशेष प्रयोग रहा है। प्राय शृंगार के लिये कवित्त और करुणा के लिये सवैये का प्रयोग किया गया है।

४ रीति काव्य की काव्य ब्रज भाषा रही है। यत्र तत्र अवधी का प्रयोग भी हुआ है। फारसी, अरबी के शब्द भी इस काव्य मे मिलाए गए हैं। शब्दों की तोड़ मरोड़ भी इसी काल में खूब हुई है।

५ इस काल के कवियों को राज्याश्रय प्राप्त रहे हैं और नर काव्य की रचना अधिक हुई हैं।

६ इस काल में आचार्यत्व जगा और हमारे कवियों के बीच में कई महान आचार्य हुए।

७. वीर रस और शृंगार अन्य रहे वैसे भक्ति, नीति आदि को लेकर भी रचनाएँ हुईं।

इस काल के प्रमुख कवि

केशव, मतिराम, देव, बिहारी, भूषण, वृन्द, ग्वाल, सेनापति।

आधुनिक काल की विशेषताएं

१. भारतेन्दु के आगमन से हिन्दी काव्य में नवीनता आई। उन्होंने नए लेखको को प्रोत्साहन दिया।

२. खडी बोली साहित्य मे उतारी। ब्रज भाषा और खड़ी बोली दोनों मे साहित्य लिखा गया। आगे द्विवेदी जी ने खडी बोली ही साहित्य की भाषा घोषित किया। इसके बाद प्रसाद ने काव्य को अन्तर्मुखी बनाया।

३ भाषा और छन्दो के परिवर्तन के साथ साथ काव्य के विषय भी बदल गए। और राष्ट्रीय विषय धीरे-धीरे काव्य का प्रमुख विषय बनाया गया।

इस काल मे पुरानी रूढियो और कुरीतियो के विरुद्ध भी कविताएँ लिखी गईं। साथ ही विदेशियो के प्रभाव से प्रभावित होने वाले बाबुओ की भी खूब खिल्ली उड़ाई गई।

५. प्रकृति वर्णन की ओर भी इस काल के कवियो का ध्यान गया और प्रकृति का केवल उद्दीपन रूप न रखकर प्रकृति का रूप में वर्णन किया गया। ये छायावाद रहस्यवाद इसी युग की सृष्टि है।

६. इस काल की कविता में केवल रसिकता और मन बहलाव का ही विषय नही रहा, अपितु देश प्रेम, समाज सुधार आदि की भावना भी इस युग में उत्पन्न हुई।

७ रीति का शृंगार भी इस युग मे चलता रहा किन्तु साहित्य के ससर्ग से उसमें बगला और पश्चिमी व्यजना भी बढने लगी।

८ इस युग में कविता का स्थान गद्य ने ले लिया और गद्य भी वह जो कि अपनी सभी धाराओ मे उन्मुक्त रूप से बहा।

९ आधुनिक युग हिन्दी प्रचार का युग कहा जा सकता है। हिन्दी का प्रचार हिन्दी के लिए जितना इस युग में हुआ उतना और किसी भी युग में नहीं हुआ।

१०. हिन्दी को राष्ट्र भाषा बनाने की प्रेरणा भी इसी काल मे जगी और उसके लिए अनेक प्रकार के आन्दोलन भी हुए।

११. इस युग मे हिन्दी पत्र-पत्रिकाओ की भरमार हो गई जिनके द्वारा हिन्दी प्रचार को बड़ा सहयोग प्राप्त हुआ।

१२. इस युग की एक अत्यन्त महत्वपूर्ण विशेषता यह है कि इस युग के कलाकार बहुमुखी प्रतिभा सम्पन्न हैं, एक ही व्यक्ति कवि, कहानीकार, उपन्यासकार, नाटककार पत्रकार और सभी कुछ हैं।

इस काल के कवि प्रसिद्ध कलाकार

१. लल्लू जी लाल, २, इंशाअल्ला खाँ, ३. भारतेन्दु बाबू हरिश्चन्द्र, ४ प्रतापनारायण मिश्र, ५ बद्रीनारायण चौधरी प्रेमघन, ६. महावीर प्रसाद द्विवेदी, ७ अयोध्यासिंह उपाध्याय ८ श्रीधर पाठक, ९ श्री निवास दास, १०. प्रेम चन्द, ११ श्यामसुन्दर दास, १२ रामचन्द्र शुक्ल, १३ देवकीनन्दन खत्री, १४. जगन्नाथ दास, १५ कामताप्रसाद गुरु, १६. मैथिली शरण गुप्त, १७. मिश्रबन्धु, १८. जयशंकर प्रसाद, १९ सूर्यकान्त त्रिपाठी निराला २० सुमित्रानन्दन पन्त, २१ सुभद्राकुमारी चौहान, २२ महादेवी वर्मा, २३ चतुरसेन शास्त्री, २४ जैनेन्द्र कुमार, २५ अज्ञेय, २६ इलाचन्द्र जोशी, २७. धर्मवीर भारती, २८ रांगेय राघव, २९. भगवाती चरण वर्मा ३० राम कुमार वर्मा, ३१ नरेन्द्र शर्मा, ३२ राहुल, ३३ नेपाली, ३४ रग, ३५. नीरज ३६ वीरेन्द्र मिश्र, ३७ कौल, ३८ नगेन्द्र, ३९ गुलाबराय, ४० नन्द दुलारे बाजपेयी, ४१ माखनलाल चतुर्वेदी, ४२ दिनकर, ४ . बच्चन, ४४. अचल ४५. अचल, ४६ यशपाल, ४७ विष्णु प्रभाकर, ४८ उदयशंकर भट्ट तथा दिनेश आदि।

हिन्दी के प्रसिद्ध नौ नवरत्न

१ तुलसी दास, २ कृष्ण, ३. केशवदास, ४ बिहारीलाल, ५ देवदत्त ६ भूषण तथा मतिराम, ७ चन्दबरदाई, ८ कबीर ९ भारतेन्दु हरिश्चन्द्र।

अष्टछाप के कवि

विट्ठलाचार्य द्वारा स्थापित अष्टछाप के कवि ये है :—

१ सूरदास, २ कृष्ण, ३ परमानन्द दास, ४. कुम्भनदास, ५ नन्ददास, ६ चतुर्भुजदास, ७ छीत स्वामी, ८ गोविन्द स्वामी।

इनमे से पहले चार तो वल्लभाचार्य के शिष्य थे और शेष चार उनके पुत्र विटठलाचार्य के।

सूचना—उपर्युक्त लेखक सूची मे कालक्रम का ध्यान न रखते हुए लेखकों की प्रसिद्धि और कृतित्व को महत्व दिया गया है। छात्र इतिहास की इस पुस्तक अथवा नालन्दा इतिहास प्रश्नोत्तरी द्वारा पूरा विवरण प्राप्त कर सकते हैं।

